१ ओं सतिगुर प्रसादि ।

आदि

श्री गुरु ग्रन्थ साहिब

(पोथी तीसरी)

[हिन्दी अनुवाद सहित नागरी लिप्यन्तरण]

प्रकाशक

भुवन वाणी ट्रस्ट

'प्रकाशन निलयम्', ५०५/१२७, [illegible] रोड, लखनऊ-२२६००३

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।

आदि

श्री गुरु ग्रन्थ साहिब

(चौथो सैंचो)

[हिन्दी अनुवाद सहित नागरी लिप्यन्तरण]

अनुवाद—

डॉ० मनमोहन सहगल

एम० ए०, पीएच्०डी०, डी०लिट्०

लिप्यन्तरण—

नन्दकुमार अवस्थी

प्रकाशक

भुवन वाणी ट्रस्ट

'प्रभाकर निलयम्', ४०५/१२८, चौपटियाँ रोड, लखनऊ-२२६००३

प्रथम संस्करण—

१९८२ ई०

पृष्ठसंख्या—१८×२२÷८= ८००

भेंट— ५०·०० रुपया

मुद्रक—

वाणी प्रेस

'प्रभाकर निलयम्', ४०५/१२८, चौपटियाँ रोड, लखनऊ-२२६००३

भुवन वाणी ट्रस्ट द्वारा प्रयुक्त

पंजाबी (गुरमुखी) वर्णमाला का देवनागरी रूपान्तर

पंजाबी (गुरमुखी)-देवनागरी वर्णमाला				
ਅ अ	ਆ आ	ਇ इ	ਈ ई	ਉ उ
ਊ ऊ	ਰੀ ऋ	ਏ ए	ਐ ऐ	ਓ ओ
	ਔ औ	ਅੰ अं	ਅ: अः	
ਕ क	ਖ ख	ਗ ग	ਘ घ	ਙ ङ
ਚ च	ਛ छ	ਜ ज	ਝ झ	ਞ ञ
ਟ ट	ਠ ठ	ਡ ड	ਢ ढ	ਣ ण
ਤ त	ਥ थ	ਦ द	ਧ ध	ਨ न
ਪ प	ਫ फ	ਬ ब	ਭ भ	ਮ म
ਯ य	ਰ र	ਲ ल	ਵ व	ਸ਼ श
	ਸ਼ ष	ਸ स	ਹ ह	

प्रत्येक क्षेत्र प्रत्येक सन्त की वाणी।
सम्पूर्ण विश्व में घर-घर है पहुँचानी॥

विश्ववाङ्मय से निःसृत अगणित भाषाई धारा।
पहन नागरी-पट, सबने अब भूतल-भ्रमण विचारा॥

अमर भारती सलिला की 'गुरमुखी' सुपावन धारा।
पहन नागरी पट, 'सुदेवि' ने भूतल-भ्रमण विचारा॥

प्रकाशकीय

ग्रन्थ सम्पूर्ण

श्रीपरमात्मने नमः। श्रीआदिगुरवे नमः। प्रस्तुत चौथी सैंची के प्रकाशन के बाद यह महान् ग्रन्थ सम्पूर्ण हुआ। पिछली तीन सैंचियों के प्रकाशकीय एवं अनुवादकीय प्राक्कथनों में नागरी लिप्यन्तरण की पद्धति, आदि गुरूग्रन्थ साहिब की पोथी का इतिहास तथा अन्य अनेक उपादेय विषयों पर सम्यक् प्रकाश डाला गया है। चौथी सैंची के "अनुवादकीय" में विद्वान् अनुवादक डॉ० सहगल ने ग्रन्थ के शाश्वत सत्यस्वरूप की अद्भुत झाँकी प्रस्तुत की है। सभी धर्मग्रन्थों और सन्तों की वाणी मानव मात्र की सम्पत्ति है; उनको किसी विशेष कटघरे में सीमित रखना मानव का अज्ञान है; विशेषकर "गुरूग्रन्थ साहिब" में निर्वैर और 'वसुधैव कुटुम्बकम्' आदर्श की यथार्थता का अद्वितीय रूप में परिलक्षण—डॉ० सहगल ने इसको इस प्रकार इतने स्वल्प कथन में प्रस्तुत कर दिया है कि अब और कुछ लिखने को शेष नहीं रहता। हम सानुवाद लिप्यन्तरण के चल रहे अपने अनवरत कार्य में यथावत् अग्रसर हो रहे हैं।

आभार-प्रदर्शन

सर्वप्रथम हम उन तपस्वी विद्वानों के कृतज्ञ हैं, जो उल्लेखनीय आर्थिक आकर्षण से रहित, ट्रस्ट द्वारा अर्पित पत्र-पुष्प मात्र को स्वीकार कर, सानुवाद लिप्यन्तरण-जैसे जटिल और गहन कार्य को राष्ट्रहित में अति श्रम से पूर्ण करते हैं। सर्वाधिक श्रेय उनको है। प्रस्तुत गुरूग्रन्थ साहिब की सर्वप्रथम सम्पूर्ण हिन्दी-टीका का तो सारा श्रेय डॉ० मनमोहन सहगल को है। उनका और हमारा संयोग भगवान की कृपा रही।

पश्चात्, सदाशय श्रीमानों और उत्तरप्रदेश शासन (राष्ट्रीय एकीकरण विभाग) के प्रति भी हम आभारी हैं कि उनकी अनवरत सहायता से 'भाषाई सेतुकरण' के अन्तर्गत अनेक ग्रन्थों का साथ-साथ प्रकाशन चलता रहता है।

सौभाग्य की बात है कि भारत सरकार के राजभाषा विभाग (गृह मंत्रालय) तथा शिक्षा एवं संस्कृति मंत्रालय ने राष्ट्रभाषा हिन्दी-सहित सभी भाषाओं की समृद्धि और व्यापकता के लिए एक जोड़लिपि "नागरी" के प्रसार पर उपयुक्त बल दिया। उनकी उल्लेखनीय सहायता से हमको विशेष बल मिला है और उसी के फलस्वरूप गुरुमुखी— श्री गुरूग्रन्थ साहिब की इस चौथी सैंची का प्रकाशन प्रस्तुत वर्ष में सम्पूर्ण हुआ। हम उनके अतिशय कृतज्ञ हैं। प्रतिदान में हम आश्वासन देते हैं कि भगवान् की कृपा से भुवन वाणी ट्रस्ट द्वारा नागरी लिपि के माध्यम से 'भाषाई सेतुबन्धन' का पुष्कल कार्य उत्तरोत्तर सफलता से भुवन में व्याप्त होता रहेगा।

नन्दकुमार अवस्थी

मुख्यन्यासी सभापति, भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ-३

अनुवादकीय

श्री गुरु ग्रंथ साहिब के हिन्दी अनुवाद की यह चौथी एवं अन्तिम जिल्द आपके सम्मुख प्रस्तुत है। गुरु ग्रंथ साहिब मध्यकालीन चेतना का ऐसा समग्र ग्रंथ है, जिसमें समाज को निर्भीक, निर्वैर एवं समन्वित बनाने का परोक्ष स्वर आद्यंत झंकृत होता है। गुरु साहिबान ने निर्भीकता तथा निर्वैरता को तो महत्त्व की दृष्टि से परात्पर ब्रह्म (अकालपुरुष) के गुणों में सम्मिलित कर लिया है। सत्य और प्रेम ऐसे गुण हैं, जिन्हें मानवतावादी तत्त्व मानकर वाणीकारों ने अपनी रचना में अपनाया था, और इन्हीं के प्रचारार्थ उपदेश रूपी इस वाणी को आकार दिया था। सन्तमत के ये सभी वाणीकार, जिनकी रचना समन्वित रूप में गुरु ग्रंथ साहिब कहलाई, मानवता के पैग़म्बर थे। पंथ, मज़हब या सम्प्रदाय उनकी बेड़ियाँ नहीं थे। उनकी मुक्त चेतना मनुष्य मात्र में उस परमज्योति का आलोक देखती थी, जो भेद की सीमाओं में कभी परिवलयित नहीं हो सकती। यही कारण है कि आज भी वाणी का प्रकाश उतना ही उजला और प्रदीप्त है, जितना आज से चार सौ वर्ष पूर्व था। आधुनिक सम्प्रदायवाद गुरुवाणी के शाश्वत मूल्यों को अंशतः भी क्षीण नहीं कर पाया है।

आजकल गुरुवाणी के महाप्राण परमत्व को सिक्ख-पंथ के साथ गाँठ कर जब अन्य पंथों-सम्प्रदायों के लोग अपने को अलग रखते एवं गुरु ग्रंथ साहिब के समृद्ध अध्यात्म ज्ञान को नहीं अपनाते, तो मेरी दृष्टि में वे अपने को सामने बहनेवाली अमृत-स्रोतस्विनी के अमर जल से वंचित रखते हैं। हस्तामलक-सम प्रभु-प्रेम के मोक्षदा तत्त्व को पराया कहनेवाले लोग निश्चय ही उस कोटि के होंगे, जिनके लिए महात्मा तुलसीदास ने कहा था, "कर्महीन नर पावत नाहीं"। गुरु ग्रंथ साहिब के वाणीकार मतों, पंथों, सम्प्रदायों के घेरे से बाहर मानवता के समर्थक थे, फिर भला उनकी वाणी, उनकी रचना किसी घेरे की मुहताज क्योंकर हो सकती है! ठीक है, खालसा पंथ ने गुरु ग्रंथ साहिब के मूल्यों को शिरोधार्य किया है, कोई खालसा पंथ से बाहर जीने वाला व्यक्ति भी यदि उन शाश्वत मूल्यों को ग्रहण करे, जीवन में अपना ले, तो बाधा कहाँ है? कोई मुस्लिम गीता का पाठ करे, कोई हिन्दू क़ुर्आन-शरीफ़ पढ़े, कोई सिक्ख बाइबिल् का पारायण करे और उन महान ग्रंथों में से महान मानवीय मूल्यों को जीवन में ढाल ले, तो मेरी समझ में उसके मुस्लिम, हिन्दू या सिक्ख होने पर कहाँ आघात पहुँचता है? हमारे महापुरुष धरती के वासियों को कभी तोड़ने नहीं आते, उनका चिरंजीवी लक्ष्य जीवों को जोड़ने का ही होता है। हम अल्पज्ञता-वश उनके बाद उनके नाम की क़िलाबंदियों के कारण भेद-भाव की ज्वालाओं में जलते रह जाते हैं। मानवीय स्तर की ऐसी ही नासमझियों को दूर करने के लिए पुनः महानात्माओं का अवतरण होता है। गुरु ग्रंथ के सभी वाणीकार ऐसी ही महानात्माएँ थे। उनके दिए

जीवन-मूल्य समन्वय का संदेश देते हैं, हमें प्यार और संगठन का पाठ पढ़ाते हैं, मनुष्यता का यथार्थ रूप दर्शाते हैं— गुरुग्रंथ साहिब के अध्ययन में यही हमारा लक्ष्य भी है। पाठक विद्वानों को हम दृढ़ता-पूर्वक बता देना चाहते हैं कि गुरु ग्रंथ साहिब पंथों-सम्प्रदायों की संकीर्णता से बहुत ऊँची रचना है। उसके अध्ययन में मूलतः हम शाश्वत जीवन मूल्यों की ही खोज कर रहे हैं।

इस भाग में गुरु साहिब की संस्कृतनुमा तथा बाबा फ़रीद की लहंदी भाषा की रचना भी शामिल है। उसकी टीका प्रस्तुत करते हुए हमने विशेष सावधानी अपनाई है। विद्वानों के मतों और दृष्टिकोणों का उचित विश्लेषण करने के उपरान्त, जिन निष्कर्षों को हमने समीचीन समझा है, उन्हें पुस्तक में प्रस्तुत किया है। मत-वैभिन्य हो सकता है, किन्तु भाव की गहराई अछूती नहीं रही है। कदाचित् ऐसे प्रश्न-चिह्न भी उभरे हैं, जिनका उत्तर साम्प्रदायिक दिशा में अलग होकर भी मानवीय दृष्टि से अद्वैत है। ऐसी स्थितियों में हमने मानवीय पक्ष अपनाया है। हमें इस बात का गौरव है कि हमने पंथ की परम्परित दृष्टि का भी अतिक्रमण कहीं नहीं किया।

इस विशाल कार्य की पूर्ति में स्वयं परमात्मा ही सहयोगी रहा है। अन्यथा आज तक गुरु ग्रंथ की सम्पूर्ण टीका किसी एक व्यक्ति के द्वारा नहीं हो सकी। प्रोफ़ेसर साहिबसिंह के पास भी सहायकों की पूरी एक जमात मौजूद थी। अन्य टीकाएँ संस्थाओं के द्वारा हुईं। हिन्दी में तो प्रस्तुत टीका प्रथम सम्पूर्ण टीका है। इससे पूर्व हिन्दी में गुरु ग्रंथ साहिब की सम्पूर्ण टीका कहीं उपलब्ध नहीं है। अतः टीका का सुखद सम्पन्न हो जाना ही हमारे लिए पुरस्कार है। टीका-यात्रा के मार्ग में कई दुर्गम घाटियाँ और साहस-हत स्थितियाँ आती रहीं। उन स्थितियों से उबारने का श्रेय पद्मश्री नन्दकुमार अवस्थी को है, जो निरन्तर ऐसे अवसरों पर प्रोत्साहन के शब्द कहते रहे और अपनी स्नेहल दुलार-पुचकार से मुझे आगे बढ़ाते रहे। मैं उनके प्रति विशेष आभारी हूँ।

गुरु ग्रंथ साहिब की वाणी, वाणीकारों एवं संकलन तथा संकलन-नियमों की विशद चर्चा हम प्रथम एवं द्वितीय जिल्दों की भूमिकाओं में कर चुके हैं। यहाँ हम इतना और कह देना चाहते हैं कि गुरुवाणी, सन्तों-महात्माओं की वाणी एवं गुरु-परिवार के कतिपय भक्त जीवों की रचना, जो भी गुरु ग्रंथ साहिब का अंग बन चुकी है, उसका महत्त्व गुरु सरीखा ही है। वह सब रचना हमारे लिए एक समान समादरणीय एवं विश्व-प्रतिष्ठित है। उसके भीतर की सोच में हमें कहीं भी कोई भेद-भाव दीख नहीं पड़ा। कभी-कभी विद्वज्जन गुरुवाणी, सन्तवाणी एवं भाट-वाणी आदि को जुदा-जुदा घेरों में बाँधकर देखने लगते हैं; हम ऐसी किसी भी दुःचेष्टा को गुरु अर्जुनदेव जी की समन्वयवादी चेतना के प्रति अन्याय मानते हैं और इस प्रकार के भ्रष्ट

प्रयास के विरुद्ध हैं। वाणी में शब्द को गुरु तथा ब्रह्म दोनों रूपों में स्वीकार किया गया है, और ग्रंथ की समूची वाणी उस महत् गौरव की अधिकारिणी है। अंशों में उसे नहीं बाँटा जा सकता। अतः विद्वान् पाठकों से भी मेरा यह विनम्र किन्तु साग्रह अनुरोध है कि समूचे ग्रंथ साहिब के लिए गुरु शब्द की सार्थकता को सही परिप्रेक्ष्य में अपनाएँ—यही मानवता की आवाज़ है।

अन्त में मैं अपनी पुत्रीवत् सुश्री उषा वोरा, सुपत्नी श्रीमती विजयलक्ष्मी सहगल तथा मित्रवर डॉ० रत्नसिंह जग्गी को धन्यवाद देता हूँ, जिनके सुयोग्य सहयोग के बिना यह विशाल कार्य कभी सम्पन्न नहीं हो पाता। लखनऊ के भुवन वाणी ट्रस्ट के मुख्यन्यासी श्री नन्दकुमार अवस्थी मेरे आभार के विशेष पात्र हैं, जो मुझ सरीखे साधारण व्यक्ति से गुरु ग्रंथ साहिब के हिन्दी अनुवाद-सा महान् कार्य करवा सके। यह उनकी निजी कला, शैली या स्नेह का परिणाम है।

आभार-स्वीकृति

प्रस्तुत टीका को आकार देने के लिए हमने पंजाबी में उपलब्ध निम्नलिखित टीकाओं का आश्रय लिया है। हम उन विद्वान् टीकाकारों का आभार स्वीकार करते हैं:—

१.	श्री गुरुग्रन्थ साहिब	टीकाकार प्रो० साहिबसिंह
२.	श्री गुरुग्रन्थ साहिब	फ़रीदकोट वाली टीका
३.	श्री गुरुग्रन्थ साहिब	शब्दार्थ (शि० गु० प्र० क०)

अनेक अन्य पंजाबी के विद्वानों को भी हम हार्दिक धन्यवाद देते हैं, जिनकी गुरु-वाणी टीकाओं से हम प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में सहायता लेते रहे हैं।

अध्यक्ष, हिन्दी विभाग,
पंजाबी विश्वविद्यालय,
पटियाला

(डॉ०) मनमोहन सहगल
एम. ए., पीएच्.डी., डी. लिट्.

सूचना

☞ कार्य सम्पन्न होने पर प्रस्तुत ग्रन्थ की प्रतियाँ, हम गुरुग्रन्थ साहिब के अधिकारी विद्वानों और संस्थाओं को निरीक्षणार्थ भेज रहे हैं। यदि उसमें कोई सुधार के सुझाव उनसे प्राप्त होंगे, तो पुस्तक के अन्त में उन्हें एक 'सुधार-पत्र' रूप में देकर हम प्रसन्न होंगे। लिप्यन्तरणकार, अनुवादक, प्रकाशक—सभी इसको सहायता और सहकार मानकर स्वीकार करेंगे।

॥ १ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

श्री गुरूग्रन्थ साहिब

(चौथी सैंची)

ततकरा रागों और सबदों का

'आदि ग्रन्थ' और 'ट्रस्ट के नागरी संस्करण' की समानान्तर पृष्ठ-संख्या

आदि श्री गुरूग्रन्थ साहिब की पावन पोथी का आद्योपांत एक-एक अक्षर परमगुरु परमात्मा का स्वरूप है। अतः उसके छोटे-बड़े कैसे ही आकार में संस्करण लिखे अथवा छापे जायँ, प्रत्येक पोथी १४३० पृष्ठों में ही सम्पूर्ण होती है। और पोथी के प्रत्येक पृष्ठ में आरम्भ से अन्त तक का समग्र पाठ भी जैसा का तैसा, उतना ही लिखा या छापा जाना चाहिए। किन्तु भुवन वाणी ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित संस्करण में मूलपाठ नागरी में देते हुए, साथ में हिन्दी अनुवाद भी दिया गया है। इस कारण समग्र ग्रन्थ को विस्तार में चार सैंचियों (जिल्दों) में छापा गया है। अतः उसमें आदि गुरूग्रन्थ साहिब के पृष्ठ और पाठ की क्रम-संख्या को तद्रूप रखना सम्भव नहीं था।

पाठकों की सुविधा के लिए यह निम्न समानान्तर पृष्ठसूची प्रस्तुत है। इसको देखकर हम सरलता से जान सकते हैं कि हमारे नागरी-संस्करण में मूल पाठ का कौन अंश, आदि गुरूग्रन्थ साहिब के मूल गुरुमुखी ग्रन्थ में कहाँ, किस पृष्ठ पर देखा जा सकता है।

पहली सैंची का उदाहरण

१ गावै—३५-८; अब इसमें मूल ग्रन्थ के पृष्ठ १ का अन्तिम शब्द "गावै" नागरी संस्करण में पृष्ठ ३५, पंक्ति ८ (३५-८) पर मुद्रित है। मूल ग्रन्थ साहिब के प्रथम पृष्ठ का पाठ ट्रस्ट के संस्करण के ३५ पृष्ठ पर, और ट्रस्ट की पहली सैंची के ३५ पृष्ठ का पाठ मूल ग्रन्थ साहिब के १ पृष्ठ पर देखकर मिलान किया जा सकता है। मूल का १ पृष्ठ हमारी पहली सैंची के ३५वें पृष्ठ की आठवीं पंक्ति में "गावै" शब्द पर समाप्त होता है।

दूसरी सैंची का उदाहरण

३४७ वडिआई—३४-४; अब इसमें मूल ग्रन्थ साहिब के ३४७वें पृष्ठ का पाठ ट्रस्ट के संस्करण के ३४ पृष्ठ, और ट्रस्ट की दूसरी सची के ३४ पृष्ठ का पाठ मूल ग्रन्थ साहिब के ३४७ पृष्ठ पर देखकर मिलान किया जा सकता है। मूल का ३४७ पृष्ठ हमारी दूसरी सैंची के ३४वें पृष्ठ की चौथी पंक्ति में "वडिआई" शब्द पर समाप्त होता है।

तीसरी सैंची का उदाहरण

७२१ लबि—३५-३; अब इसमें आदि ग्रन्थ साहिब के ७२१वें पृष्ठ का पाठ ट्रस्ट के संस्करण के ३५ पृष्ठ, और ट्रस्ट की तीसरी सैंची के ३५ पृष्ठ का पाठ मूल ग्रन्थ साहिब के ७२१ पृष्ठ पर देखकर मिलान किया जा सकता है। मूल का ७२१ पृष्ठ हमारी तीसरी सैंची के ३५वें पृष्ठ की तीसरी पंक्ति में "लबि" शब्द पर समाप्त होता है।

चौथी सैंची का उदाहरण

११०७ सुखावै—३४-७; अब इसमें आदि ग्रन्थ साहिब के ११०७वें पृष्ठ का पाठ ट्रस्ट के संस्करण के ३४ पृष्ठ, और ट्रस्ट की चौथी सैंची के ३४ पृष्ठ का पाठ मूल ग्रन्थ साहिब के ११०७ पृष्ठ पर देखकर मिलान किया जा सकता है। मूल का ११०७ पृष्ठ हमारी चौथी सैंची के ३४वें पृष्ठ की सातवीं पंक्ति में "सुखावै" शब्द पर समाप्त होता है।

पहली सैंची

१ गावै—३५-८; २ भगता—३६-६; ३ जोग—४४-२; ४ किव—४७-११; ५ तै—५१-७; ६ चलावहि—५५-३; ७ परचंडु—५९-३; ८ बीचारे—६२-१०; ९ दितु—६४-९; १० जी—६६-९; ११ समाइआ ॥ ३ ॥—६९-८; १२ केते—७२-५; १३ घरे ॥४॥ ॥ ५ ॥—७५-७; १४ आवऊ ना—७७-९; १५ बाहरा—८०-४; १६ परवारु—८२-१३; १७ रीसालू—८६-३; १८ ढोई—८९-४; १९ सची—९१-११; २० अंतर—९४-५; २१ पाइ—९७-७; २२ खोटै—१००-२; २३ करि—१०३-१; २४ तिन—१०६-२; २५ सेव—१०८-७; २६ तिलु न—११०-१०; २७ रतिआ—११३-११; २८ कवेन—११५-१२; २९ निदा—११८-७; ३० होइ ॥४॥११॥४४॥—१२१-२; ३१ गवाइ—१२४-४; ३२ कथनी—१२७-२; ३३ पाईऐ—१२९-९; ३४ जिउ—१३२-७; ३५ लए—१३५-३; ३६ प्रेम—१३८-२; ३७ सत—१४१-४; ३८ मनि—१४४-४; ३९ न—१४६-९; ४० लए—१४९-२; ४१ लिव—१५२-५; ४२ सभु—१५४-९; ४३ लाईआं—१५७-९; ४४ हरि—१६०-३; ४५ कुरबान—१५२-५; ४६ सोइ—१६४-८; ४७ सुआउ—१६६-१४; ४८ उह—१६९-११; ४९ भंजनु—१७२-४; ५० मुकलावणहार—१७४-१२; ५१ जानउ—१७७-५; ५२ सरेवणे—१८०-२; ५३ भंडार—१८१-२०; ५४ सिउ—१८५-४; ५५ जिहवा—१८८-१; ५६ सचो—१९०-१३; ५७ नाही—१९३-४; ५७ तिसु—१९५-१३; ५९ महि—१९८-३; ६० घणी—२०१-८; ६१ तूं—२०३-१४; ६२ वखसणहार—२०६-७; ६३ करि—२०८-१६; ६४ चलदिआ—२११-१०; ६५ पाईऐ—२१३-१६; ६६ चुकाइआ—२१७-१०; ७ जा—२१९-१८; ६८ आवई—२२१-२७; ६९ वारो—२२५-१४; ७० चिति—२२७-२४; ७१ परमगति—२३१-९; ७२ आपु—२३२-२०; ७३ दानु—२३६-९; ७४ हुकमि—२३९-७; ७५ कालि—२४२-२; ७६ संपै—२४४-१६; ७७ चालै—२४७-५; ७८ बाबुला—२४९-१९; ७९ जीउ—२५२-८; ८० जीउ—२५४-२०; ८१ जना—२५७-८; ८२ ॥ रहाउ ॥—२५८-२२; ८३ म० १—२६३-१; ८४ भाइ—२६६-२; ८५ पाइ

दूसरी सँची

३४७ वडिआई–३४-४;
किआ–४२-८; ३५१ सुभाई–४५-११; ३४८ वडा–३७-२; ३४९ चेला–४०-२; ३५०
५१-५; ३५४ जीवणु–५४-३; ३५२ अपनी–४८-१०; ३५३ पड़ावहि–
३५७ वेस ॥ २ ॥ ३० ॥–६२-११; ३५५ साजनी–५७-६; ३५६ ॥ रहाउ ॥–६०-३;
निधि–६८-३; ३६० वरतै–७१-३; ३५८ कैसी ॥ ४ ॥ १ ॥ ३३ ॥–६५-४; ३५९
३६३ होइ–७९-६; ३६४ जनु–८२-६; ३६१ तिन कै–७४-१; ३६२ अरपे–७६-९;
३६६ जीवाइआ–८७-६; ३६५ होइ ॥ ४ ॥ १ ॥ ५३ ॥–८४-१३;
९२-९; ३६९ रीझाई ॥ १ ॥–९५-३; ३६७ लागी ॥ ४ ॥ ८ ॥ ६० ॥–९०-३; ३६८ पाइ–
१००-६; ३७२ गुर–१०३-३; ३७० सोभावंता–९७-१२; ३७१ लाइ–
बिनसु–१०८-११; ३७५ रहे–१११-५; ३७३ मंझा ॥ ४ ॥ ११ ॥–१०५-१६; ३७४
११६-९; ३७८ प्रभु–११९-६; ३७६ साथि–११३-१३; ३७७ भउजलु–
४; ३८१ मिरतकु–१२७-४; ३७९ महि–१२१-९; ३८० ॥ रहाउ ॥–१२४-
३८४ अंतरि–१३५-७; ३८२ कीरतनु–१२९-१२; ३८३ तेरा–१३२-१३;
३८७ जाना–१४४-५; ३८५ आवैं–१३८-५; ३८६ हरिनामु–१४१-८;
५–१५२-१२; ३८८ सुखु–१४६-१४; ३८९ भाल–१४९-१३; ३९० महला
१६१-१; ३९१ अनरथ–५; ३९२ पवित्र–१५८-२; ३९३ चड़िआ ॥१॥–
३९७ भगत से–१७१-१०; ३९४ हरि–१६३-११; ३९५ पाई–१६६-८; ३९६ सोइ–१६९-१;
४०० नाउ–१८०-२; ३९८ माहि–१७४-६; ३९९ ना ही–१७७-४;
बहु–१८८-२; ४०१ जिसनो–१८२-१२; ४०२ माहि–१८५-४; ४०३
१९६-३; ४०४ तू–१९०-१०; ४०५ होइ–१९३-६; ४०६ चाही ॥ २ ॥–
४१० इकतुका–२०७-१; ४०७ प्रभ–१९९-२; ४०८ गोबिद–२०१-७; ४०९ प्रभ–२०४-५;
४१३ गुर ते–२१५-५; ४११ देखि–२०९-२; ४१२ गहीरु–२१२-१२;
॥ ८ ॥ १० ॥–२२४-११; ४१४ नामु–२१८-९; ४१५ दासनि–२२१-१; ४१६ पाई
सिञाणीऐ ॥ ४ ॥–२३२-८; ४१७ मंदर–२२७-६; ४१८ नामु न–२३०-३; ४१९
४२२ रहाउ–२४१-५; ४२० सेव–२३५-११; ४२१ महला १–२३९-१;
४२५ महला ॥ ३ ॥–२५०-१; ४२३ त्रिसना–२४४-४; ४२४ होई ॥ ७ ॥–२४६-१३;
४२८ नामु–२५८-१; ४२६ घरि–२५३-२; ४२७ जिना–२५६-१;
४३१ जाइ–२६६-१५; ४२९ जिउ–२६०-१६; ४३० देव ॥ ८ ॥ १ ॥–२६३-१२;
पड़ु–२७४-११; ४३२ पंडितु–२६८-१९; ४३३ जुगा–२७१-१५; ४३४
॥ ४ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ३ ॥–२८२-४; ४३५ रसि–२७७-३; ४३६ बुझाईऐ–२७९-११; ४३७ उदासा
१२; ४४० वसिआ–२८९-१८; ४३८ परता–२८५-४; ४३९ कामणि–२८७-
४४३ दुरमति–२९८-२; ४४१ इह–२९२-७; ४४२ झिमि–२९५-१;
चोकड़ि–३०४-१०; ४४४ निरबाणु–३००-११; ४४५ साधु–३०२-१९; ४४६
३१४-४; ४४७ कोइ–३०७-२३; ४४८ गुरमुखि–३११-३; ४४९ वसतु–
४५३ मीठा–३२४-२; ४५० पूज–३१६-८ ४५१ करे–३१९-७; ४५२ मिटाई–३२१-८;
४५६ आपि–३३१-१३; ४५४ सिउ–३२६-१०; ४५५ जै जै कार–३२९-१०;
३४०-३; ४५७ निरमल–३३४-७; ४५८ रवि–३३७-२; ४५९ करहि–
६; ४६० जपत–३४२-३; ४६१ खात–३४४-५; ४६२ महला २–३४६-
४६६ धिआइआ–३५७-२; ४६३ बिसमादु–३४९-३; ४६४ होवहि–३५१-१३; ४६५ करतारु–३५५-३;
मुहि–३६४-१८; ४६७ सतिगुरु–३५९-१३; ४६८ बहि–३६२-७; ४६९
३७२-११; ४७० आपणा–३६७-६; ४७१ करवाई–३७०-४; ४७२ बुझिआ–
४७३ धरि–३७५-१०; ४७४ कि नेही–३७८-३; ४७५ तग–३८०-१४;

४७६ तऊ–३८३-५; ४७७ घरी न–३८३-३; ४७८ नामु–३८६-५; ४७९ निबेरा ॥ ३ ॥–३९१-७; ४८० बसती–३९४-८; ४८१ ढालि–३९७-५; ४८२ साजु–४००-२; ४८३ टरिओ–४०२-७; ४८४ संसारा ॥ ४ ॥ ४ ॥ ३७ ॥–४०५-९; ४८५ रसाइन–४०८-४; ४८६ जनु–४१०-१२; ४८७ महि–४१३-७; ४८८ सहे ॥ ८ ॥ २ ॥–४१५-११; ४८९ निसतारा ॥ ४ ॥ २ ॥–४१७-८; ४९० रजाइ–४१९-९; ४९१ समाइ–४२१-१७; ४९२ नामु–४२४-७; ४९३ मोकळ–४२६-१५; ४९४ लाई ॥ ५ ॥ १ ॥ ७ ॥ १६ ॥–४२८-१०; ४९५ लाहिआ–४३१-४; ४९६ खिन–४३३-१०; ४९७ माता–४३५-१०; ४९८ रही–४३८-३; ४९९ आही–४४०-११; ५०० सवाई ॥ २ ॥ १६ ॥ २४ ॥–४४२-१४; ५०१ जावि ॥ ४ ॥ २ ॥ २८ ॥–४४५-३; ५०२ पारब्रहम–४४७-८; ५०३ सूरज–४५०-२; ५०४ रोग ॥ १ ॥–४५२-३; ५०५ पावनु–४५४-१६; ५०६ गुरमुखि–४५७-५; ५०७ सिधा–४५९-१५; ५०८ सुते–४६२-७; ५०९ मनु–४६४-१३; ५१० हंस–४६७-१; ५११ होइ ॥ १ ॥ म० ३ ॥–४६९-५; ५१२ लालचि–४७२-१; ५१३ खेलु–४७४-७; ५१४ तिसनो–४७७-२; ५१५ दइआ–४७९-५; ५१६ उपाइआ–४८१-८; ५१७ अपारीऐ–४८४-७; ५१८ सभु–४८६-१३; ५१९ जीवा–४८९-७; ५२० जिमी–४९२-२; ५२१ क्रिपालु–४९४-७; ५२२ सुधु–४९६-१२; ५२३–मथे–४९९-४; ५२४ रघुराई ॥ ४ ॥ २ ॥–५०१-११; ५२५ कमलु–५०४-३; ५२६ गतं ॥५॥१॥–५०६-४; ५२७ आई–५०८-४; ५२८ बलिहारी–५१०-१२; ५२९ रंगि–५१३-७; ५३० ठाकुर–५१६-२; ५३१ मन ते–५१८-८; ५३२ उधारु ॥ २ ॥ २३ ॥–५२०-१२; ५३३ साध–५२३-३; ५३४ ठाकुर–५२५-११; ५३५ जिसु–५२८-५; ५३६ गीत ॥२॥३॥६॥३८॥४७॥–५३०-१०; ५३७ जिबुड़ीए–५३२-३; ५३८ मनमुख–५३४-१२; ५३९ भउजलु–५३७-३; ५४० घते–५३९-२; ५४१ राम–५४१-३; ५४२ चल–५४४-४; ५४३ ओमाहा–५४६-८; ५४४ महला ५–५४९-१; ५४५ कारण–५५१-१०; ५४६ अधारा–५५३-२०; ५४७ संतारी ॥ १ ॥–५५६-६; ५४८ चलाइ–५५९-: ; ५४९ रहै–५६२-१; ५५० पकाव–५६४-९; ५५१ पुछहु–५६६-१३; ५५२ अंदरि–५६९-१०; ५५३ बेह–५७२-३; ५५४ तेरा–५७३-१५; ५५५ जाइ–५७६-६; ५५६ देवण हारु ॥२१॥ ॥ १ ॥ सुधु ॥–५७८-१०; ५५७ बूड़ा–५८१-१; ५५८ नदरि–५८३-८; ५५९ ततु–५८६-३; ५६० प्रभ–५८९-३; ५६१ सेव–५९१-१३; ५६२ सेवक की–५९४-२; ५६३ कुदरति–५९७-१; ५६४ सचा–५९९-५; ५६५ कमाईऐ–६०२-३; ५६६ बाणी–६०४-६; ५६७ निरगुणवंतणीए–६०७-३; ५६८ सबदे–६०९-९; ५६९ हरि–६१२-२; ५७० हउमै–६१५-३; ५७१ साचै–६१७-१४; ५७२ ढूढेदी–६२०-४; ५७३ जितु–६२२-१२; ५७४ तिन–६२४-१८; ५७५ वाधाई ॥ ४ ॥ ॥ १ ॥ ५ ॥–६२६-१५; ५७६ सदा–६२९-१०; ५७७ जगदीस–६३१-१९; ५७८ पुनी–६३५-३; ५७९ हकु है–६३७-१२; ५८० हउ–६३९-१८; ५८१ जगतु–६४३-५; ६८२ आपणा–६४६-६; ५८३ कामि–६४८-१३; ५८४ आई–६५२-४; ५८५ मै–६५४-११; ५८६ भेखी–६५७-१; ५८७ गुर–६५९-३; ५८८ पंनु है–६६१-१२; ५८९ जाहि–६६४-३; ५९० जंनी–६६६-९; ५९१ घट–५६८-८; ५९२ जो–६७१-४; ५९३ सादु–६७३-५; ५९४ लहीऐ ॥ २१ ॥ १ ॥ सुधु ॥–६७५-९; ५९५ लहहि–६७७-९; ५९६ नामु–६८०-५; ५९७ किरपा–६८३-६; ५९८ कुदरति–६८६-१; ५९९ तत–६८८-६; ६०० पाए–६९०-११; ६०१ विछुड़ि–६९३-२; ६०२ सेती–६९६-३; ६०३ वेयहु–६९८-८; ६०४ जेरज–७०१-१;

६०५ जलु–७०३-६; ६०६ आपि–७०५-१०; ६०७ वथु–७०८-७; ६०८ चारे–७११-६; ६०९ वडी–७१३-१४; ६१० सगल–७१६-११; ६११ जीउ–७१९-३; ६१२ सनेही–७२१-९; ६१३ अवरु–७२४-६; ६१४ लागा–७२६-१०; ६१५ करि–७२९-९; ६१६ बुआरी–७३२-६; ६१७ होई ॥ १ ॥–७३४-१०; ६१८ दइआ–७३७-८; ६१९ सरब–७४०-२; ६२० रखाई–७४२-१०; ६२१ आए–७४५-२; ६२२ सगला–७४७-८; ६२३ रखवाला–७५०-६; ६२४ प्रभ–७५२-७; ६२५ नामु–७५५-६; ६२६ पैज–७५८-२; ६२७ ॥ रहाउ ॥–७६०-८; ६२८ भगति–७६३-३; ६२९ प्रभ–७६५-११; ६३० जंत–७६८-५; ६३१ नानक–७७१-२; ६३२ किहि–७७३-८; ६३३ जग ते–७७६-१; ६३४ लेखु–७७७-२०; ६३५ भउ–७८०-१८; ६३६ मेरे–७८४-३; ६३७ माइआ–७८६-१३; ६३८ भाई–७८८-१७; ६३९ होवै–७९१-१३; ६४० सतिगुरू–७९४-३; ६४१ रहिओ–७९६-६; ६४२ कउ–७९८-१६ ६४३ गुरमुखि–८०१-३; ६४४ मन की–८०३-९; ६४५ सभि–८०६-१; ६४६ नानकु–८०८-११; ६४७ है–८११-१; ६४८ जम दरि–८१३-३; ६४९ मुख–८१५-७; ६५० हरि–८१७-१४; ६५१ सीगार–८२०-५; ६५२ हरि–८८२-१३; ६५३ सिरजीआ–८२५-६; ६५४ जानी ॥ ४ ॥–८२७-९; ६५५ घटि–८३०-८; ६५६ रे–८३३-३; ६५७ दुखु–८२५-९; ६५८ तीरथ–८३८-१०; ६५९ सोई ॥ २ ॥ २ ॥–८४१-५; ६६० बुआरि–८४२-११; ६६१ जिहवा–८४५-९; ६६२ संसारु ॥ १ ॥–८४८-५; ६६३ घटि–८५०-११; ६६४ धंनु–८५३-८; ६६५ सोइ–८५६-९; ६६६ जपउ–८५९-८; ६६७ हरि–८६१-९; ६६८ भीने ॥ २ ॥ १ ॥ ७ ॥–८६४-८; ६६९ जीअड़े–८६७-२; ६७० कीना–८६९-४; ६७१ त्रिपतानी ॥ २ ॥–८७१-७; ६७२ धनु–८७४-५; ६७३ खाटे ॥ ५ ॥ ११ ॥–८७६-१२; ६७४ क्रोधु–८७९-९; ६७५ माणु–८८१-१६; ६७६ धूरि ॥ ४ ॥ २ ॥ २३ ॥–८८४-९; ६७७ मति–८८६-१३; ६७८ साधू–८८९-८; ६७९ महला ५–८९१-१०; ६८० मंगल–८९४-४; ६८१ जो–८९६-११; ६८२ प्रभ–८९९-६; ६८३ भागि–९०१-११; ६८४ का–९०४-२; ६८५ मारि–९०६-२; ६८६ भ्रमि–९०९-५; ६८७ कउ–९११-८; ६८८ विकाणे–९१४-३; ६८९ रावे–९१६-२१; ६९० जीउ ॥ ५ ॥ १ ॥–९१९-५; ६९१ कालु–९२२-८; ६९२ देही–९२५-३; ६९३ मैजी–९२७-८; ६९४ तुहारे ॥ ४ ॥ ३ ॥–९२९-१३; ६९५ मंगी ॥ २ ॥ ४ ॥–९३२-६; ६९६ आखि–९३४-३; ६९७ गए–९३६-८; ६९८ सुणि–९३९-३; ६९९ राम ॥ ४ ॥ ५ ॥ ११ ॥–९४१-१०; ७०० फेरा ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥–९४३-१४; ७०१ नानक–९४६-९; ७०२ जन–९४९-१; ७०३ राविआ–९५०-२०; ७०४ होइ–९५३-३; ७०५ मन–९५६-४; ७०६ उलाहि ॥ २ ॥–९५९-२; ७०७ देवानिआ–९६१-१०; ७०८ सदा–९६४-७; ७०९ गई–९६७-३; ७१० लीजै ॥ ६ ॥ १ ॥–९६९-५; ७११ धोखा–९७१-२; ७१२ धूरा–९७३-३; ७१३ निधि–९७६-१; ७१४ माइआ–९७८-१०; ७१५ रे ॥ २ ॥ २ ॥ १९ ॥–९८०-१५; ७१६ गुणतास–९८३-८; ७१७ धुखु ॥ २ ॥–९८५-१३; ७१८ गोबिद गो ॥ ४ ॥ ३ ॥–९८८-८; ७१९ गावै–९९०-१; ७२० पाई ॥ २ ॥ १ ॥ ७ ॥–९९२-६ ।

तीसरी सैंची

७२१ लबि–३५-३; ७२२ सनाती–३७-६; ७२३ सदा–४०-३; ७२४ भाई–४२-८; ७२५ नानकु–४४-१८; ७२६ लउ–४८-१; ७२७ मुकंद ॥ ४ ॥ २ ॥ ॥ ३ ॥–५०-७; ७२८ सोइ ॥ ४ ॥ १ ॥ २ ॥–५२-५; ७२९ होइसी–५५-२; ७३० तेरा–५७-३; ७३१ मेरे–६०-३; ७३२ हरि–६२-१६; ७३३ धनु–६५-५; ७३४ साहिब–६८-३; ७३५ महला ४–७०-६; ७३६ करउ–७२-९; ७३७ कहु–७५-१०; ७३८ घर–७८-१; ७३९ हरि–८१-३; ७४० काची–८३-११; ७४१ करमु–८६-९; ७४२ दीनु–८९-१; ७४३ उधरु–९१-९; ७४४ दरसन–९४-५; ७४५ समाउ ॥२॥३॥४३॥–९६-१२; ७४६ जा–९९-६; ७४७ कलि–१०१-१०; ७४८ सफल–१०४-४; ७४९ तेरे–१०७-२; ७५० रावेसी ॥ ८। ११॥–१०८-१२; ७५१ जीवा–१११-६; ७५२ कह–११४-९; ७५३ समाए ॥ ६ ॥–११५-२४; ७५४ धारी ॥ ८ ॥ २ ॥–११८-२०; ७५५ दुख ही–१२२-२; ७५६ वडभागी–१२५-३; ७५७ गुर–१२६-२०; ७५८ हउ–१२९-१३; ७५९ दूजा ॥ १ ॥–१३१-१३; ७६० निरंकारु–१३३-१७; ७६१ बिनु–१३६-९; ७६२ गुणवंती–१३९-१; ७६३ गुर–१४१-२; ७६४ जनम–१४४-५; ७६५ गुण–१४६-१२; ७६६ भाइआ–१४८-२१; ७६७ खोई–१५२-१०; ७६८ नानक–१५४-१३; ७६९ एको–१५७-४; ७७० सफल–१५९-११; ७७१ राम–१६१-१५; ७७२ बलिराम–१६४-३; ७७३ हरि–१६६-९; ७७४ घर–१६८-१३; ७७५ मिलाई ॥ ४ ॥ १ ॥ ॥ ४ ॥–१७०-१७; ७७६ हरि–१७३-१०; ७७७ राखा–१७५-५; ७७८ जपत–१७७-१२; ७७९ तोली–१७९-१७; ७८० सुणि–१८२-८; ७८१ बसत–१८४-७; ७८२ सूही–१८७-१; ७८३ पाइआ–१८८-८; ७८४ सभहू–१९०-१६; ७८५ थीऐ–१९३-८; ७८६ सूहवीए–१९६-१; ७८७ आपे–१९८-८; ७८८ थीइ–२०१-७; ७८९ जिसु–२०४-१; ७९० सचा–२०७-१; ७९१ तू–२०९-१२; ७९२ कबीर–२११-१७; ७९३ दूरि–२१४-१२; ७९४ थीसी ॥ ३ ॥ २ ॥–२१७-४; ७९५ सुरता–२१९-२; ७९६ गहण–२२१-११; ७९७ हरि–२२४-९; ७९८ तंतु–२२७-२; ७९९ हरि–२२९-१४; ८०० नामु–२३२-२; ८०१ जिथै–२३४-५; ८०२ फीका–२३६-१; ८०३ वितारे–२३९-३; ८०४ मनोरथ–२४१-८; ८०५ जापे ॥ २ ॥–२४३-१३; ८०६ पर–२४६-३; ८०७ गुरि–२४८-११; ८०८ बोला ॥ ३ ॥–२५०-१६; ८०९ कीनो–२५३-५; ८१० मिलहु–२५६-२; ८११ हो–२५८-८; ८१२ बेवसी–२६०-१३; ८१३ साध–२६३-३; ८१४ दरबारे–२६५-१२; ८१५ लोच–२६८-५; ८१६ ॥ रहाउ ॥–२७१-१; ८१७ उचरत–२७३-६; ८१८ निंदक–२७५-१४; ८१९ आपि–२७८-७; ८२० कीनी–२८०-९; ८२१ मूड–२८३-१; ८२२ सूख–२८५-१०; ८२३ दुसट–२८८-२; ८२४ एहु–२९०-५; ८२५ बिसूरे–२९२-१०; ८२६ कंठि–२९५-४; ८२७ हेरा ॥ २ ॥ १ ॥ ११७ ॥–२९७-५; ८२८ निधान–२९९-१३; ८२९ उपजिओ–३०१-१२; ८३० बिना–३०४-१; ८३१ वसामं–३०५-१८; ८३२ साचा–३०८-१०; ८३३ चंदन–३११-२; ८३४ आगै–३१२-१२; ८३५ मन–३१५-२; ८३६ एक–३१७-१३; ८३७ रंग–३२०-१; ८३८ गुरपरसादि–३२२-५; ८३९ प्रभ–३२५-२; ८४० दासा ॥ २० ॥ १ ॥–३२६-५; ८४१ गुरमुखि–३२८-२८; ८४२ सतिगुरु–३३१-२३; ८४३ जाना–३३५-५; ८४४ जीवदे–३३७-७; ८४५ पूरन–३३९-११; ८४६ पीआ ॥ ४ ॥ २ ॥–३४१-२१; ८४७ सुखसागर–३४४-३; ८४८ राम ॥ ४ ॥ २ ॥ ॥ ५ ॥–३४६-१४; ८४९ ते–३४९-१; ८५० मरहि–३५१-५; ८५१ नामु–

९८३ छका १–६६९-४; ९८४ महला ४ ॥–६७१-१०; ९८५ माली–६७३-१२; ९८६ काम ॥१॥–६७६-२; ९८७ सरबत–६७८-५; ९८८ दासा रे ॥२॥३॥–६८०-११; ९८९ घुंमणवाणी–६८२-८; ९९० महला १–६८५-३; ९९१ पवन–६८७-८; ९९२ उदासी ॥ ५ ॥ ११ ॥–६८९-१२; ९९३ विकार–६९२-२; ९९४ नानक–६९४-८; ९९५ लइआ ॥ ४ ॥ २ ॥–६९६-१४; ९९६ मन–६९९-२; ९९७ हरि–७०१-३; ९९८ रूप–७०३-५; ९९९ एकंकारा ॥ ४ ॥–७०५-१०; १००० जारिओ ॥ १ ॥–७०७-१४; १००१ तिसु–७०९-१४; १००२ पाइआ–७१२-९; १००३ आवै–७१४-१०; १००४ आवत–७१६-१३; १००५ आहि–७१९-६; १००६ संगि–७२१-१४; १००७ नानक–७२४-२; १००८ भ्रमि–७२६-३; १००९ जाई–७२८-९; १०१० सचु–७३१-४; १०११ नही–७३३-१५; १०१२ भेख–७३६-७; १०१३ करउ–७३९-५; १०१४ गुणतासु–७४१-८; १०१५ भरमि–७४३-९; १०१६ जीउ ॥ १० ॥ १ ॥–७४५-११; १०१७ सागरु–७४८-५; १०१८ सद–७५१-२; १०१९ मुठे–७५३-३; १०२० तोलो–७५५-९; १०२१ पाई हे–७५७-१६; १०२२ सिरिआ–७६०-१६; १०२३ होई–७६३-८; १०२४ जोति–७६५-१४; १०२५ साकत–७६८-१२; १०२६ महि–७७१-५; १०२७ सनेही–७७३-८; १०२८ बीचारा हे–७७६-३; १०२९ नामु–७७७-११; १०३० प्राणी–७७९-२९; १०३१ किरपा–७८२-१२; १०३२ चूका–७८५-१; १०३३ वाइदा–७८७-१९; १०३४ सबदि–७९०-७; १०३५ ओपति–७९२-१८; १०३६ हुकमु–७९५-११; १०३७ अथरबणु–७९७-१७; १०३८ सेवक–८००-१२; १०३९ राम–८०२-१०; १०४० नानक–८०५-११; १०४१ मब्रिसट–८०७-९; १०४२ नामु–८१०-७; १०४३ बूझै को–८१२-५; १०४४ चउरासीह–८१५-३; १०४५ पतिसाही–८१७-२; १०४६ आपहु–८१८-२०; १०४७ जगजीवनु–८२१-४; १०४८ अंधे–८२३-२०; १०४९ रवीजै हे–८२६-७; १०५० पछाता–८२८-२४; १०५१ पाई–८३१-९; १०५२ करि–८३३-२४; १०५३ गुण गाहा–८३६-९; १०५४ सबदि–८३८-२१; १०५५ पूरा–८४१-४; १०५६ मोहु–८४३-१७; १०५७ महि–८४५-१५; १०५८ भरमु–८४८-१४; १०५९ किरपा–८५०-१३; १०६० मिलाइदा ॥ ५ ॥–८५३-७; १०६१ खोवै–८५५-१०; १०६२ करे–८५८-३; १०६३ कराइदा–८६०-७; १०६४ मिलाउ–८६२-४; १०६५ करता–८६५-२; १०६६ नामे ही–८६६-१४; १०६७ सची–८६८-३१; १०६८ करि–८७१-१५; १०६९ वखाणी–८७३-२९; १०७० भाणी हे–८७६-१८; १०७१ सिमरि–८७८-१७; १०७२ सिआना–८८१-९; १०७३ हे ॥ ४ ॥–८८३-१०; १०७४ सिमरत–८८६-५; १०७५ गुरमुखि–८८८-६; १०७६ उदासी–८९०-७; १०७७ व्रिड़ाए–८९३-२; १०७८ पउण–८९५-३; १०७९ गहिर–८९६-१३; १०८० किचना–८९८-२१; १०८१ कहाइआ–९०१-२; १०८२ मुखि–९०३-१४; १०८३ मका–९०६-९; १०८४ परकारी–९०८-९; १०८५ नाही–९११-६; १०८६ गाहकु–९१३-३; १०८७ सिर–९१५-९; १०८८ अमोलु–९१८-११; १०८९ पउड़ी–९२१-७; १०९० होइ–९२४-२; १०९१ करमा–९२६-११; १०९२ बूझहु–९२९-४; १०९३ आइआ–९३१-१३; १०९४ सफै–९३४-४; १०९५ आलकु–९३६-७; १०९६ फिरदा–९३९-२; १०९७ लगदीआ–९४१-११; १०९८ अलख–९४४-७; १०९९ घणी–९४६-१४; ११०० दिसटि–९४९-३; ११०१ धनु–९५१-११; ११०२ राम–९५४-३; ११०३ करे–९५६-७; ११०४ बैरागीअड़े–९५८-११; ११०५ पारि ॥ ४ ॥ १ ॥–९६१-१०; ११०६ भागी ॥ ३ ॥ २ ॥ १५ ॥–९६४-४ ।

चौथी सैंची

१२२६ एकु–३१७-११; १२२७ ग्रसत–३२०-२; १२२८ कहन–३२२-४; १२२६ राम–३२४-१०; १२३० मोकउ–३२७-१; १२३१ निस–३२६-७; १२३२ नामि–३३१-८; १२३३ मीठा–३३३-५; १२३४ वीचारा–३३५-१५; १२३५ पावक–३३८-४; १२३६ बेला–३४०-४; १२३७ बेक–३४२-७; १२३८ एकी–३४५-५; १२३६ नाइ–३४७-६; १२४० सजाइ–३५०-४; १२४१ जाइ–३५२-६; १२४२ संजमु–३५५-२; १२४३ बिरखु–३५७-१२; १२४४ मिलिऐ–३५६-१७; १२४५ बिसन्हि–३६२-६; १२४६ कतीफिआ–३६४-११; १२४७ किउ–३६७-८; १२४८ रखवालिआ ॥ ३० ॥–३६६-१२; १२४६ विणु–३७१-२०; १२५० सिआणप–३७४-४; १२५१ कउ–३७६-१०; १२५२ मोर्प–३७६-७; १२५३ बन का ॥२॥ ॥१॥–३८१-८; १२५४ सही ॥ ४ ॥–३८३-१०; १२५५ निंद–३८६-२; १२५६ दुख–३८६-१; १२५७ जल–३६१-६; १२५८ सतिगुरु–३६४-२; १२५६ जाणै–३६६-५; १२६० बासना–३६८-१५; १२६१ समाहा ॥ ४ ॥–४००-१२; १२६२ देखि–४०३-५; १२६३ सतिगुरु–४०५-१३; १२६४ लइआ–४०७-१५; १२६५ हमारो–४१०-३; १२६६ पेखे–४१२-४; १२६७ महला ५–४१४-६; १२६८ चितहि–४१७-२; १२६६ सेव–४१६-६; १२७० थाउ–४२१-७; १२७१ सींगार–४२३-६; १२७२ जनांके–४२५-१६; १२७३ मै को–४२८-२; १२७४ जाई ॥१०॥ ॥३॥–४३०-२; १२७५ मनमुखि–४३२-७; १२७६ सतिगुरु–४३४-७; १२७७ नामि ४३६-१५; १२७८ सभ–४३६-४; १२७६ अंतु न–४४२-१; १२८० उपाइ कै–४४४-८; १२८१ हरि–४४६-११; १२८२ सभ–४४६-२; १२८३ नदरि–४५१-१०; १२८४ बिकट–४५३-१७; १२८५ तिस कै–४५६-७; १२८६ आधारु ॥ १६ ॥–४५८-६; १२८७ सचु–४६१-८; १२८८ सलोक म० १–४६४-१; १२८६ जां–४६६-१२; १२६० घर–४६६-७; १२६१ सुधु–४७१-११; १२६२ पिछवारला ॥ ३ ॥ २ ॥–४७३-८; १२६३ देखिओ ॥ ३ ॥ १ ॥ ३ ॥–४७५-१५; १२६४ संत–४७७-५; १२६५ जाइ–४७६-५; १२६६ किरपीस–४८१-११; १२६७ तराधो ॥ २ ॥ ५ ॥ ११ ॥–४८३-६; १२६८ संगु–४८६-२; १२६६ पावउ–४८८-७; १३०० पेखि–४६०-१०; १३०१ जाईऐ–४६२-१५; १३०२ द्रिसटि–४६५-४; १३०३ गोबिंद–४६७-८; १३०४ गुन–४६६-१० १३०५ मोहु–५०१-१०; १३०६ गहेरो । २ ॥ ४ ॥ ४३ ॥–५०३-११; १३०७ घोर ॥ २ ॥ ३ ॥ ४८ ॥–५०५-१६; १३०८ अगिआनि–५०७-१८; १३०६ लोह–५१०-४; १३१० सबदु–५१२-४; १३११ बिखु–५१४-६; १३१२ वडभागी–५१६-५; १३१३ आपणे–५१८-८; १३१४ हरि–५२०-६; १३१५ हरि–५२२-१३; १३१६ जग–५२५-३; १३१७ उबरे–५२७-६; १३१८ ऐसा ॥२॥१॥–५२६-११; १३१६ करी–५३१-५; १३२० खोटे–५३३-६; १३२१ सफल–५३५-८; १३२२ रहाउ–५३७-१४; १३२३ फरीजै–५३६-१६; १३२४ भवन–५४२-४; १३२५ उठि–५४४-६; १३२६ छका१–५४६-७; १३२७ पुरीआ–५४८-४; १३२८ समानि–५५०-१०; १३२६ परवाणु–५५२-१५; १३३० गुरमुखि–५५५-८; १३३१ अंम्रितु–५५७-१०; १३३२ सुखु–५६०-३; १३३३ सरणाई–५६२-५; १३३४ अपणा–५६४-१२; १३३५ इकु–५६७-१; १३३६ जन–५६८-१४; १३३७ संगति–५७०-१८; १३३८ पहर–५७३-५; १३३६ बाणी–५७५-६; १३४० प्रीति–५७७-७; १३४१ अनेक ॥ २ ॥ २ ॥ १५ ॥–५७६-६; १३४२ गुरमति–५८१-११; १३४३ चिहन–५८४-२; १३४४ सबदु–५८६-१४; १३४५ भाइआ ॥ ८ ॥ ७ ॥–५८८-१७; १३४६ मनमुख–५६१-६; १३४७ इसनानु–५६३-६; १३४८ भए–५६५-१२; १३४६ खलक–५६८-३; १३५०

आदि

श्री गुरू ग्रंथ साहिब

(नागरी लिपि में)

हिन्दी व्याख्या सहित

तुखारी छंत महला १ बारह माहा

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

तू सुणि किरत करंमा पुरबि कमाइआ । सिरि सिरि सुख सहंमा देहि सु तू भला । हरि रचना तेरी किआ गति मेरी हरि बिनु घड़ी न जीवा । प्रिअ बाझु दुहेली कोइ न बेली गुरमुखि अंम्रितु पीवां । रचना राचि रहे निरंकारी प्रभ मनि करम सु करमा । नानक पंथु निहाले साधन तू सुणि आतमरामा ।। १ ।। बाबीहा प्रिउ बोले कोकिल बाणीआ । साधन सभि रस चोलै अंकि समाणीआ । हरि अंकि समाणी जा प्रभ भाणी सा सोहागणि नारे । नव घर थापि महल घरु ऊचउ निजघरि वासु मुरारे । सभ तेरी तू मेरा प्रीतमु निसिबासुर रंगि रावै । नानक प्रिउ प्रिउ चवै बबीहा कोकिल सबदि सुहावै ।।२।। तू सुणि हरि रस भिंने प्रीतम आपणे । मनि तनि रवत रवंने घड़ी न बीसरै । किउ घड़ी बिसारी हउ बलिहारी हउ जीवा

गुण गाए। ना कोई मेरा हउ किसु केरा हरि बिनु रहणु न जाए। ओट गही हरि चरण निवासे भए पवित्र सरीरा। नानक द्रिसटि दीरघ सुखु पावै गुरसबदी मनु धीरा ॥ ३ ॥ बरसै अंम्रित धार बूंद सुहावणी। साजन मिले सहजि सुभाइ हरि सिउ प्रीति बणी। हरि मंदरि आवै जा प्रभ भावै धन ऊभी गुण सारी। घरि घरि कंतु रवै सोहागणि हउ किउ कंति विसारी। उनवि घन छाए बरसु सुभाए मनि तनि प्रेमु सुखावै। नानक वरसै अंम्रित बाणी करि किरपा घरि आवै ॥ ४ ॥

[बारहमाहा काव्य की शैली है, जिसमें वर्ष के बारह महीनों में बदलते माहौल के अन्तर्गत जीवात्मा की आध्यात्मिक स्थिति का चित्रण गुरुजी ने किया है। इस वाणी में गुरु नानक ने विरह की तड़प से शुरू करके अन्ततः मिलन के परम सुख का आकर्षक वर्णन किया है। प्रथम चार छंदों में पहले विरह और फिर मिलन का साधारण चित्रण है, आगे विस्तार से १२ महीनों के माध्यम से यही विषय वर्णित है। अन्तिम छन्द समूचे विचार को समोए हुए है, जिसमें मिलन को रूपायित किया गया है।]

हे परमात्मा, सुनो; सब कोई अपने पूर्व कर्मों के अनुसार सुख, दुःख भोगता है (सबके हिस्से सुख और दुःख बँटे हैं); इसलिए जो तुम देते हो, वही भला है। हे परमात्मा, तुम्हारी ही यह सब रचना है, मेरी इसमें कोई गति नहीं; मैं तो तुम्हारे दर्शनों के बिना घड़ी भर जी नहीं सकता अर्थात् तुम्हारे विरह में हर घड़ी तड़पता हूँ। प्रियतम के बिना जीवात्मा विरहिणी (दुःखी) है, कोई उसका आश्रय नहीं, केवल गुरु-कृपा से ही वह अमृत-पान कर सकती है। परमात्मा की बनाई समूची सृष्टि में हम रचे हुए हैं, किन्तु सर्वोत्तम कर्म तो प्रभु को मन में बसा लेना ही है। गुरु नानक कहते हैं कि हे वाहिगुरु (आत्मा के मालिक), यह जीव-स्त्री नित्य तुम्हारा राह देखती है (दर्शन दो) ॥ १ ॥ पपीहा (मन रूपी) प्रिय-प्रिय पुकारता है और कोयल (जिह्वा रूपी) प्यार की मधुर वाणी बोलती है। पति (प्रभु) को हृदय में बसाकर जीव-स्त्री समस्त रसों में पगी मस्त है। हरि को मन में बसाकर जीव-स्त्री तभी सुहागिन होती है, जब प्रभु-पति को भी उसका आचरण पसन्द हो। वह नौ द्वारों के इस शरीर को पति के निवास के लिए महल बनाकर, वहाँ स्वस्वरूप के अन्तर्गत परमात्मा को रहते देखती है और महसूसती है कि सब कुछ प्रियतम का है तथा प्रियतम उसका अपना है; उसी के संग रात-दिन वह रमण करती है। गुरु नानक कहते हैं, उस विरहिणी जीवात्मा का हृदय रूपी पपीहा प्रिय-प्रिय पुकारता और जिह्वा रूपी कोकिल सुन्दर वाणी में गुणगान करती है ॥ २ ॥ अपने प्रियतम के मिलनानन्द में भीगी और तन-मन में हरि की अनुभूति लिये जो जीव-स्त्री नित्य अपने प्रिय के ध्यान

में मग्न है, हे प्रभु, तुम उसका हाल जानो (अर्थात् पति-प्रभु से प्रार्थना है कि वह अपने विरह में तड़पती जीवात्मा की सुधि ले)। तुम उसके तन-मन में रमे हुए हो, घड़ी भर के लिए भी विस्मृत नहीं होते। वह घड़ी भर भी तुम्हें क्योंकर विस्मृत कर सकती है! वह तुम पर बलिहार है, तुम्हारे ही गुण गाकर वह जीवित है। मेरा (विरहिणी जीवात्मा का) और कोई नहीं, कौन किसी का बनता है; हरि-प्रभु के बिना (मैं) रह ही नहीं सकती। मैंने हरि-चरणों का आश्रय लिया है, जिससे मेरा अंग-अंग पवित्र हो गया है। गुरु नानक कहते हैं कि (चरण-शरण लेने पर) जीवात्मा दीर्घ-दृष्टि वाली हो जाती है। और गुरु-उपदेश से उसके मन को धैर्य मिलता है ॥ ३ ॥ गुरु-उपदेश रूपी अमृत-वर्षण से हृदय में शीतलता छा गई है। सहज में ही प्रभु-साजन से मुलाक़ात हो गई है और उससे प्यार बढ़ने लगा है। जब प्रियतम को स्वीकार होता है, तो वह जीव-स्त्री के संग रमण करता है और वह खड़ी-खड़ी प्रतिक्षण उसके गुणों का स्मरण करती है। सब सुहागिन स्त्रियों के पति उनके संग विराजते हैं, (जीव-स्त्री दुःख-पूर्वक कहती है कि) मुझे क्यों प्रियतम ने भुला रखा है। घटाएँ छाकर बरस गई हैं, तन-मन में पति की याद और प्रेम आलोडित है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु के अमृत-सम उपदेश से ही परमात्मा कृपा-पूर्वक जीव-स्त्री के हृदय में आकर बस जाता है। (अभिप्राय यह कि विरहिणी जीवात्मा गुरु की अमृत-वाणी से हरि-पति से मिलाप पाती है।) ॥ ४ ॥

चेतु बसंतु भला भवर सुहावड़े। बन फूले मंझ बारि मै पिरु घरि बाहुड़ै। पिरु घरि नही आवै धन किउ सुखु पावै बिरहि बिरोध तनु छीजै। कोकिल अंबि सुहावी बोलै किउ दुखु अंकि सहीजै। भवरु भवंता फूली डाली किउ जीवा मरु माए। नानक चेति सहजि सुखु पावै जे हरि वरु घरि धन पाए ॥ ५ ॥ वैसाखु भला साखा वेस करे। धन देखै हरि दुआरि आवहु दइआ करे। घरि आउ पिआरे दुतर तारे तुधु बिनु अढु न मोलो। कीमति कउण करे तुधु भावां देखि दिखावै ढोलो। दूरि न जाना अंतरि माना हरि का महलु पछाना। नानक वैसाखीं प्रभु पावै सुरति सबदि मनु माना ॥ ६ ॥ माहु जेठु भला प्रीतमु किउ बिसरै। थल तापहि सर भार साधन बिनउ करै। धन बिनउ करेदी गुण सारेदी गुण सारी प्रभ भावा। साचै महलि रहै बैरागी आवण देहि त आवा। निमाणी निताणी

हरि बिनु किउ पावै सुख महली। नानक जेठि जाणै तिसु जैसी करमि मिलै गुण गहिली ॥ ७ ॥ आसाड़ु भला सूरजु गगनि तपै। धरती दूख सहै सोखै अगनि भखै। अगनि रसु सोखै मरीऐ धोखै भी सो किरतु न हारे। रथु फिरै छाइआ धन ताकै टीडु लवै मंझि बारे। अवगण बाधि चली दुखु आगै सुखु तिसु साचु समाले। नानक जिस नो इहु मनु दीआ मरणु जीवणु प्रभ नाले ॥ ८ ॥

चैत्र मास के आरम्भ से वसन्त ऋतु झूमने लगती है, भँवरे गुनगुनाने लगते हैं। ऐसे में यदि प्रियतम घर लौट आये, तो मेरे लिए मरुस्थल में भी बहार आ जाय। जब तक प्रियतम घर नहीं आते, तब तक स्त्री को क्योंकर सुख मिल सकता है! (अर्थात् प्रभु-मिलन के बिना आत्मा क्योंकर सुखी हो सकती है!) विरह की खींचातानी के कारण शरीर टूटता है। आम्र-वृक्षों पर कोकिल की मधुर ध्वनि के कारण हृदय का दुःख और भी असह्य हो जाता है (बाहर की रंगीनी के कारण भीतर का दुःख और बढ़ जाता है)। भँवरे गुंजार करते हैं, पेड़ों की शाखाएँ फूल रही हैं, ऐ माँ, ऐसे में मैं क्योंकर जी सकती हूँ? गुरु नानक कहते हैं कि जीवात्मा-स्त्री को सहज सुख तभी मिल सकेगा, यदि चैत्र मास में प्रियतम घर लौट आए ॥ ५ ॥ वैशाख मास आ गया है, वनस्पति ने सुन्दर वेश बना लिया है (वह व्यक्ति भला है जो वैशाख मास में वेदों की शाखाओं— शास्त्रों, उपनिषदों आदि —के अनुसार जीवन-यापन करता है); जीव-स्त्री प्रियतम का राह देखती है कि वह दया करके कब उसके हृदय रूपी घर में आए! हे प्रिय, घर आओ (मेरे हृदय में आन बसो), तुम्हारी सहायता से ही मैं संसार-सागर के कठिन बहाव से पार हो सकूँगी; तुम्हारे बिना मेरा कौड़ी भी मोल नहीं। हे प्रभु, यदि मैं तुम्हें पा लूँ, तो कोई मेरा मोल नहीं डाल सकेगा (अर्थात् मैं अमूल्य हो जाऊँगी)। (तुम हो तो भीतर ही, किन्तु) हे प्यारे, मुझे अपना रूप दिखाओ (जिससे मैं अपने को सधवा जानूँ)। मैं तुम्हें दूर न समझूँ, अपने ही भीतर परमात्मा को हृदय रूपी महल में पहचान लूँ। गुरु नानक कहते हैं कि जिन्होंने गुरु का शब्द सज्ञान मनन किया है, वे साक्षी-रूप प्रभु को पा जाते हैं ॥ ६ ॥ ज्येष्ठ मास भला है, इसमें प्रियतम से विछोड़ा क्यों है? मरुस्थल भट्ठी के समान तपने लगे हैं, हे प्रियतम, तुम्हारी स्त्री तुमसे (मिलने की) विनय करती है। जीव-स्त्री प्रभु-पति के गुण स्मरण करती हुई विनती करती है, ताकि प्रभु के गुण याद करते हुए वह पति का प्यार पा सके। हे निर्लिप्त प्रभु, तुम अपने सच्चे महलों में स्थित हो (स्वस्वरूप में स्थित हो), वहाँ मुझे भी आने दो, तो

मैं आ सकूँ (तुम्हारी कृपा हो, तो तुम्हारा सामीप्य पा जाऊँ। हे प्रभु, मैं अनाथ, अनाश्रित हूँ, तुम्हारे बिना तुम्हारे सुन्दर महलों में क्योंकर सुख प्राप्त कर सकती हूँ ! गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु की कृपा हो तो सुन्दर गुणों को ग्रहण करके जीव-स्त्री अपने स्वामी के ही रंग में रँग जाती है ।। ७ ।। आषाढ़ मास में आकाश में सूर्य तपता है। धरती दुःखों को सहन करती है, सूखकर अग्नि की तरह जलती है। सूर्य सब जल सोख लेता है; स्वयं भी जलता है, किन्तु अपने कर्म में अनवरत संलग्न रहता है। उसका (सूर्य का) रथ जब फिरता है, तो (जीव-) स्त्री छाया खोजती है और लवा (तीतर) शुष्क धरती पर चीख़ता है। ऐसे समय जो जीव-स्त्री यहाँ से अवगुण की गठरी लादती है, उसे आगे दुःख ही दुःख मिलता है; सुख केवल उसे प्राप्त होता है, जो सदा सत्य (परम) का स्मरण करती है। गुरु नानक कहते हैं कि जिसे सत्य को स्मरण करनेवाला मन प्राप्त है, उसका जीवन-मरण अपने स्वामी प्रभु की संगति में होता है ।। ८ ।।

सावणि सरस मना घण वरसहि रुति आए। मै मनि तनि सहु भावै पिर परदेसि सिधाए। पिरु घरि नही आवै मरीऐ हावै दामनि चमकि डराए। सेज इकेली खरी दुहेली मरणु भइआ दुखु माए। हरि बिनु नीद भूख कहु कैसी कापड़ु तनि न सुखावए। नानक सा सोहागणि कंती पिर कै अंकि समावए ॥९॥ भादउ भरमि भुली भरि जोबनि पछुताणी। जल थल नीरि भरे बरस रुते रंगु माणी। बरसै निसि काली किउ सुखु बाली दादर मोर लवंते। प्रिउ प्रिउ चवै बबीहा बोले भुइअंगम फिरहि डसंते। मछर डंग साइर भर सुभर बिनु हरि किउ सुखु पाईऐ। नानक पूछि चलउ गुर अपुने जह प्रभु तह ही जाईऐ ।। १० ।। असुनि आउ पिरा साधन झूरि मुई। ता मिलीऐ प्रभ मेले दूजै भाइ खुई। झूठि विगुती ता पिर मुती कुकह काह सि फुले। आगै घाम पिछै रुति जाडा देखि चलत मनु डोले। दहदिसि साख हरी हरीआवल सहजि पकै सो मीठा। नानक असुनि मिलहु पिआरे सतिगुर भए बसीठा ।। ११ ।। कतकि किरतु पइआ जो प्रभ भाइआ। दीपकु सहजि बलै तति जलाइआ। दीपक रस तेलो धन पिर मेलो धन ओमाहै सरसी। अवगण मारी मरै न सीझै गुणि मारी ता मरसी। नामु भगति

दे निजघरि बैठे अजहु तिनाड़ी आसा। नानक मिलहु कपट दर खोलहु एक घड़ी खटु मासा ॥ १२ ॥

सावन का महीना सरस होता है, बादलों के बरसने की ऋतु आ जाती है। मैं तन-मन से परदेस जानेवाले अपने प्रियतम को चाहती हूँ (विरहिणी आत्मा सुन्दर ऋतु के कारण प्रभु-पति को याद करती है, किन्तु वह उससे दूर है)। प्रियतम घर नहीं आता, उसकी जुदाई में मर रही हूँ; दूसरे यह बिजली चमक-चमककर मुझे डराती है। मेरी सेज अकेली है और हे माँ, मैं बड़ी दुःखी हूँ। यह दुःख मुझे मौत के बराबर सालता है। हरि-पति के बिना मुझे नींद, भूख कुछ नहीं रही, सुन्दर कपड़ा भी शरीर पर नहीं सुहाता। गुरु नानक कहते हैं कि सच्ची सुहागिन स्त्रियाँ वे ही हैं, जो अपने प्रियतम की भुजाओं में समाई रहती हैं अर्थात् मिलन में ही सुहाग है ॥ ९ ॥ भाद्रपद मास आ गया है, भ्रमों में पड़ी यौवन-माती मैं पछताती हूँ। सुख-भरी वर्षाऋतु में जल-थल सब जगह पानी भर गया है। काली रात्रि में बादल बरसता है, मेंढक-मोर बोलते हैं, ऐसी रुत में बेचारी स्त्री (जीव) को सुख कहाँ है? पपीहा पिउ-पिउ की आवाज़ लगाता है, साँप डसते फिरते हैं। मच्छर काटते हैं और सरोवर पूरी तरह भरे पड़े हैं, किन्तु मुझे प्रियतम के बग़ैर कहीं सुख नहीं। गुरु नानक कहते हैं कि अपने गुरु (पथ-प्रदर्शक) से राह जानकर वहीं पहुँच जाओ, जहाँ तुम्हारा प्रियतम बसता है ॥ १० ॥ आश्विन मास में हे प्रियतम, तुम शीघ्र चले आओ, तुम्हारी स्त्री (जीवात्मा) यातना से मर रही है। हे प्रिय, यदि तुम मिलाओ, तभी मिलाप सम्भव है, अन्यथा मैं तो द्वैत-मार्ग पर भटक गई हूँ। मैं मिथ्या के कारण विनाश को प्राप्त हुई हूँ, ऊपर से प्रियतम ने भी मुझे त्याग दिया है और अब तो सरकण्डे में भी फूल आ गए हैं (सरकण्डे के फूल सफ़ेद होते हैं— भाव यह है कि जवानी बीत गई है, बुढ़ापा आ गया है)। कभी गर्मी होती है और कभी जाड़ा पड़ने लगता है—यह सब देख-देखकर मन डोलता है। दसों दिशाओं में वनस्पति की हरितिमा छाई है, सहज में मीठे फल पक रहे हैं। गुरु नानक कहते हैं कि अब तो स्वयं सतिगुरु मध्यस्थ बने हैं, अतः आश्विन मास में, हे प्रियतम, तुम आकर मिलो ॥ ११ ॥ कार्तिक मास इस बात का प्रतीक है कि जो प्रभु को स्वीकार होता है, वही फल जीव को मिलता है। वही दीपक सहज में जलता है, जो ज्ञान-तत्त्व से जलाया जाता है अर्थात् जिसमें ज्ञान का स्नेह होता है। इस दिये में प्रेम का तत्त्व प्रधान है, जिसके कारण जीव-स्त्री पति-प्रभु से प्यार पाती है और उल्लसित होती है। वह अवगुणों (पापों) से मरकर मुक्त नहीं होती, गुणों के संग मरकर ही वह मोक्ष को प्राप्त होती है। जिनको,

हे स्वामी, तुम नाम और भक्ति प्रदान करते हो, वे अपने वास्तविक घर (परमात्मा की मौजूदगी) में बसते और सदैव तुम्हारे ही आशागत रहते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि हे स्वामी, द्वार खोलकर मिलो, (विरह में मेरे लिए) एक घड़ी छमाही के बराबर हो रही है ॥ १२ ॥

मंघर माहु भला हरि गुण अंकि समावए। गुणवंती गुण रवै मै पिरु निहचलु भावए। निहचलु चतुरु सुजाणु बिधाता चंचलु जगतु सबाइआ। गिआनु धिआनु गुण अंकि समाणे प्रभ भाणे ता भाइआ। गीत नाद कवित कवे सुणि राम नामि दुखु भागै। नानक साधन नाह पिआरी अभ भगती पिर आगै ॥१३॥ पोखि तुखारु पड़ै वणु त्रिणु रसु सोखै। आवत की नाही मनि तनि वसहि मुखे। मनि तनि रवि रहिआ जगजीवनु गुरसबदी रंगु माणी। अंडज जेरज सेतज उतभुज घटि घटि जोति समाणी। दरसनु देहु दइआपति दाते गति पावउ मति देहो। नानक रंगि रवै रसि रसीआ हरि सिउ प्रीति सनेहो ॥ १४ ॥ माघि पुनीत भई तीरथु अंतरि जानिआ। साजन सहजि मिले गुण गहि अंकि समानिआ। प्रीतम गुण अंके सुणि प्रभ बंके तुधु भावा सरि नावा। गंग जमुन तह बेणी संगम सात समुंद समावा। पुंन दान पूजा परमेसुर जुगि जुगि एको जाता। नानक माघि महारसु हरि जपि अठसठि तीरथ नाता ॥ १५ ॥ फलगुनि मनि रहसी प्रेमु सुभाइआ। अनदिनु रहसु भइआ आपु गवाइआ। मन मोहु चुकाइआ जा तिसु भाइआ करि किरपा घरि आओ। बहुते वेस करी पिर बाझहु महली लहा न थाओ। हार डोर रस पाट पटंबर पिरि लोड़ी सीगारी। नानक मेलि लई गुरि अपणै घरि वरु पाइआ नारी ॥ १६ ॥ बेदस माह रुती थिती वार भले। घड़ी मूरत पल साचे आए सहजि मिले। प्रभ मिले पिआरे कारज सारे करता सभ बिधि जाणै। जिनि सीगारी तिसहि पिआरी मेलु भइआ रंगु माणै। घरि सेज सुहावी जा पिरि रावी गुरमुखि मसतकि भागो। नानक अहिनिसि रावै प्रीतमु हरि वरु थिरु सोहागो ॥ १७ ॥ १ ॥

मगहर मास भला है कि इसमें प्रभु के गुण हृदय में बसते हैं। गुणवंती जीवात्मा विचारती है कि उसे भी अटल प्रभु के गुण गाने का

अवसर मिलता, वह भी उसका स्मरण करती। रचयिता स्वयं निश्चल, चतुर और विवेकी है, शेष समूचा जगत मायावी और चंचल है। प्रभु को स्वीकार हो तो चंचल जीव के मन में भी ज्ञान-ध्यान के गुण जगते हैं; कविजनों से राम-नाम आदि गीत-नाद सुनकर सांसारिक दुःख दूर हो जाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि जो स्त्री पति को प्रिय है, वह सदैव पति की हार्दिक भक्ति करती है (अर्थात् दिल से पति को चाहती है) ॥ १३ ॥ पौष मास में तुषार-पात होता है, जंगल की वनस्पतियों का भी रस सूख जाता है। ऐसे में, हे स्वामी, तुम, जो तन, मन तथा जिह्वा पर समा रहे हो, मेरे निकट क्यों नहीं आते! हे जगजीवन, तुम मन-तन में व्याप्त हो, गुरु-उपदेश के माध्यम से ही तुम्हारी संगति का आनन्द प्राप्य है। अंडज, जेरज, स्वेदज तथा उत्भुज, चारों प्रकार की योनियों में तुम्हारी ही ज्योति समाई है। हे दयानिधि दातार, दर्शन दो और ऐसी बुद्धि प्रदान करो कि जिससे मैं परमावस्था को प्राप्त कर सकूँ। गुरु नानक कहते हैं कि जिसे प्रभु-पति से प्यार है, वह उस रस तथा आनन्द को प्रसन्नतापूर्वक भोगती है ॥ १४ ॥ माघ मास में जीव-स्त्री पावन हो गई है और उसने अन्तर्मन में ही ज्ञान का तीर्थ-स्नान किया है। हरि-गुणों को हृदय में धारण करके सहज ही वह साजन से मिलाप करती है। हे मेरे सुन्दर स्वामी, तुम्हारे गुणों को हृदय में धारण करके जब मैं तुम्हें प्रिय लगने लगूँगी, तो वही मेरा सरोवर-स्नान होगा। गंगा, यमुना, त्रिवेणी-संगम तथा सातों सागरों की पावनता मेरे लिए वहीं प्राप्य होगी। पुण्य, दान, परमेश्वर-पूजन तथा युग-युग से उस एक प्रभु में मेरा विश्वास भी (हृदय में प्रभु के गुणों को धारण करने में) निहित है। गुरु नानक कहते हैं कि माघ महीने में हरि-नाम-जाप का महारस-पान अठसठ तीर्थों के स्नान के समान है ॥ १५ ॥ फाल्गुन मास में जिन्हें प्रभु से प्यार हुआ है, उनका मन विकसित हो गया है। उन्हें रात-दिन हर्षोल्लास प्राप्त है, वे अहम्-मुक्त हो जाते हैं। हे प्रभु, जब तुम्हें मेरा प्यार स्वीकार हुआ तो तुमने मेरे अन्तर से मोह का भाव मिटा दिया। अब कृपा करके मेरे हृदय में आन बसो। हे स्वामी, तुम्हारी कृपा के बिना यदि मैं अनेक रूप-आकार भी रचती फिरूँ, मुझे तुम्हारे महलों में निवास नहीं मिल सका; किन्तु जब तुमने मुझे चाहा, तो मैं हार, डोर, पाट-पटम्बर आदि से शृंगारित हो गई (हरि-हरि नाम रूपी हार, प्रेम-वृत्ति रूपी डोर, शुभ कर्म रूपी साड़ी तथा प्रेम रूपी रेशमी वस्त्र आदि)। गुरु नानक कहते हैं कि तब गुरु-कृपा से स्त्री अपने घर में ही पति को प्राप्त कर लेती है (जीवात्मा अपने अन्तर में ही परमात्मा को पा लेती है) ॥ १६ ॥ इन बारह महीनों में सब ऋतुएँ, तिथियाँ एवं दिन भले हैं। वह घड़ी, पल या मुहूर्त विशेष सराह्य है, जिसमें परमसत्य

से मुलाक़ात हो जाती है। प्यारे प्रभु से मेल होता है, सब कार्य सम्पन्न होते हैं, विधाता को यह सब ज्ञात है। जो प्रभु-पति शृंगारता है, वही प्यार भी करता है और उसी से मिलन पाकर जीव-स्त्री आनन्दित होती है। गुरु के द्वारा जब वह भाग्यवान हुई, तो अपनी सुहानी सेज पर उसने प्रभु-पति को पाया और उसके संग मिलन-सुख भोगने लगी। गुरु नानक कहते हैं कि तब वह रात-दिन हरि-प्रेम में रम गई और उसने प्रभु-पति को अटल सुहाग-रूप में पा लिया ।। १७ ।। १ ।।

।। तुखारी महला १ ।। पहिलै पहरै नैण सलोनड़ीए रैणि अंधिआरी राम। वखरु राखु मुईए आवै वारी राम। वारी आवै कवणु जगावै सूती जम रसु चूसए। रैणि अंधेरी किआ पति तेरी चोरु पड़ै घरु मूसए। राखणहारा अगम अपारा सुणि बेनंती मेरीआ। नानक मूरखु कबहि न चेतै किआ सूझै रैणि अंधेरीआ ।। १ ।। दूजा पहरु भइआ जागु अचेती राम। वखरु राखु मुईए खाजै खेती राम। राखहु खेती हरि गुर हेती जागत चोरु न लागै। जम मगि न जावहु ना दुखु पावहु जम का डरु भउ भागै। रवि ससि दीपक गुरमति दुआरै मनि साचा मुखि धिआवए। नानक मूरखु अजहु न चेतै किव दूजै सुखु पावए ।। २ ।। तीजा पहरु भइआ नीद विआपी राम। माइआ सुत दारा दूखि संतापी राम। माइआ सुत दारा जगत पिआरा चोग चुगै नित फासै। नामु धिआवै ता सुखु पावै गुरमति कालु न ग्रासै। जंमणु मरणु कालु नही छोडै विणु नावै संतापी। नानक तीजै त्रिबिधि लोका माइआ मोहि विआपी ।।३।। चउथा पहरु भइआ दउतु बिहागै राम। तिन घरु राखिअड़ा जुो अनदिनु जागै राम। गुर पूछि जागे नामि लागे तिना रैणि सुहेलीआ। गुर सबदु कमावहि जनमि न आवहि तिना हरिप्रभु बेलीआ। कर कंपि चरण सरीरु कंपै नैण अंधुले तनु भसम से। नानक दुखीआ जुग चारे बिनु नाम हरि के मनि वसे ।। ४ ।। खूली गंठि उठो लिखिआ आइआ राम। रस कस सुख ठाके बंधि चलाइआ राम। बंधि चलाइआ जा प्रभ भाइआ ना दीसै ना सुणीऐ। आपण वारी सभसै आवै पकी खेती लुणीऐ। घड़ी चसे का लेखा लीजै बुरा भला सहु जीआ। नानक सुरि नर सबदि मिलाए तिनि प्रभि कारणु कीआ ।। ५ ।। २ ।।

[इस पद में रात्रि के चार प्रहरों की सादृश्यता में गुरुजी ने आयु के चार प्रहरों की बात की है। बेसुध सोनेवालों के घर जैसे चोर लूट लेते हैं, वैसे ही प्रभु-नाम को विस्मृत करके रूप-जवानी में बेसुध होनेवाले मोह-माया द्वारा लुट जाते हैं।]

रात्रि का प्रथम प्रहर (जीवन का प्रथम भाग), हे सुन्दर नेत्रों वाली स्त्री (जीवात्मा), गहरा अन्धकारमय होता है। अन्ततः अन्तिम प्रहर में तुम्हें भी मरना है, इसलिए हरि-नाम रूपी सौदा सँभाल कर रखो (हरि-नाम हृदय में सँभालो)। समय आने पर तुम्हें अज्ञान की निद्रा से कौन जगाएगा? यमदूत तुम्हारा सब सुख छीन लेंगे। अँधेरी रात्रि में (अज्ञान में) तुम्हारी क्या गति होगी, कौन तुम्हें सहारा देगा? काम-क्रोधादि चोर तुम्हारा घर लूट लेंगे। तुम्हारा रक्षक परमात्मा अगम-अपार है, तुम मेरी विनती सुनो (और उसकी शरण लो)। गुरु नानक कहते हैं कि मूर्ख जीव कभी सचेत नहीं होता, उसे अँधेरी रात (अज्ञान) नहीं सूझती ॥ १ ॥ हे गँवार, अब तो रात्रि का (आयु का) दूसरा प्रहर शुरू हो गया है, अब तो जागो। हे मृत्यून्मुखी, हरि-नाम-धन को सम्हालो, तुम्हारी खेती पशु (कामादिक) चर रहे हैं। परमात्मा तथा गुरु-उपदेशों से प्यार लगाकर अपनी खेती की रक्षा करो—जागते रहने पर चोर नहीं लगते। इससे मृत्यु-पथ से मुक्त होगे और यमदूत का भय नष्ट हो जायगा। गुरु-उपदेश के सहारे रवि और चन्द्र (ज्ञान-गरिमा तथा स्नेह की शीतलता) के दो दीपक जल जायँगे और मन सच्चे सुख को पा लेगा। गुरु नानक कहते हैं कि गँवार जीव अभी भी सचेत नहीं होता, वह द्वैत-भाव में क्योंकर सुख पा सकता है! ॥ २ ॥ रात्रि के तीसरे प्रहर से निद्रा प्रगाढ़ हो जाती है (जीवन में तृतीय स्थिति उपलब्धियों की मस्ती है)। पुत्र, पत्नी आदि मायावी दुःखों में जीव संतप्त होता है। जीव रूपी पक्षी इस अवस्था में स्त्री-पुत्र, सांसारिक प्यार आदि का दाना चुगता (भोगता) है और माया के जाल में फँसता है। यदि इस प्रहार में जीव हरि-नाम का ध्यान करे तो सुखी हो जाय, क्योंकि गुरु के मतानुसार आचरण करनेवाले को काल नहीं ग्रसता। हरि-नाम के बिना जीव काल की परिधियों से नहीं बच पाता और जन्म-मरण के चक्र में पड़ा रहता है। गुरु नानक कहते हैं कि जीव तृतीय अवस्था में भी त्रिगुणमयी माया से व्याप्त मोह में ही फँसा रह गया ॥ ३ ॥ चतुर्थ प्रहर में प्रकाश की किरणें दिखने लगीं (दिन चढ़ आया अर्थात् आयु समाप्ति पर आ गई)। रात-दिन जाग्रत् रहनेवाला जीव ही अपने घर की रक्षा कर सकता है। जो जीव गुरु के उपदेशानुसार जाग्रतावस्था में आकर हरि-नाम जपते हैं, उनकी रात्रि भी सुखद होती है। वे गुरु के उपदेशों के अनुसार आचरण करते हैं, जन्म-मरण से मुक्त हो जाते हैं और हरि-प्रभु उनका परम मित्र बन जाता है। (अन्यथा, इस अवस्था में)

हाथ-पैर काँपने लगते हैं, शरीर शिथिल होता है, नेत्रों की ज्योति घट जाती है और शरीर मिट्टी के समान हो जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम को मन में बसाने के बग़ैर चारों युगों में दुःख ही दुःख है ॥ ४ ॥ अन्ततः कर्मों का लेखा-जोखा हुआ और चलने (मृत्यु) का आदेश आ गया। मीठा-कड़वा आदि छः रसास्वादों का अन्त हुआ, काल ने बाँधकर आगे चला लिया। जीव तभी बँधता है, जब परमात्मा को स्वीकार होता है —यह आदेश न दृष्टव्य है, न श्रव्य। अपनी-अपनी बारी से सब वहीं पहुँचते हैं और अपने कर्मों की पकी फ़सल काटते हैं (अर्थात् कर्मानुसार फल भोगते हैं)। तब घड़ी-पल का कर्मालेख प्रस्तुत होता है, सब जीवों को बुरा-भला सहना पड़ता है। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा ने शब्द द्वारा महात्मा पुरुषों को अपने में लीन कर लिया है, ऐसी अवस्था को पाने का कारण भी प्रभु ने स्वयं ही बनाया है ॥ ५ ॥ २ ॥

॥ तुखारी महला १ ॥ तारा चड़िआ लंमा किउ नदरि निहालिआ राम। सेवक पूर करंमा सतिगुर सबदि दिखालिआ राम। गुर सबदि दिखालिआ सचु समालिआ अहिनिसि देखि बीचारिआ। धावत पंच रहे घरु जाणिआ कामु क्रोधु बिखु मारिआ। अंतरि जोति भई गुर साखी चीने राम करंमा। नानक हउमै मारि पतीणे तारा चड़िआ लंमा ॥ १ ॥ गुरमुखि जागि रहे चूकी अभिमानी राम। अनदिनु भोरु भइआ साचि समानी राम। साचि समानी गुरमुखि मनि भानी गुरमुखि साबतु जागे। साचु नामु अंम्रितु गुरि दीआ हरि चरनी लिव लागे। प्रगटी जोति जोति महि जाता मनमुखि भरमि भुलाणी। नानक भोरु भइआ मनु मानिआ जागत रैणि विहाणी ॥ २ ॥ अउगण वीसरिआ गुणी घरु कीआ राम। एको रवि रहिआ अवरु न बीआ राम। रवि रहिआ सोई अवरु न कोई मनही ते मनु मानिआ। जिनि जल थल त्रिभवण घटु घटु थापिआ सो प्रभु गुरमुखि जानिआ। करणकारण समरथ अपारा त्रिबिधि मेटि समाई। नानक अवगण गुणह समाणे ऐसी गुरमति पाई ॥३॥ आवण जाण रहे चूका भोला राम। हउमै मारि मिले साचा चोला राम। हउमै गुरि खोई परगटु होई चूके सोग संतापै। जोती अंदरि जोति समाणी आपु पछाता आपै। पेईअड़ै घरि सबदि पतीणी

साहुरड़ै पिर भाणी । नानक सतिगुरि मेलि मिलाई चूकी काणि लोकाणी ॥ ४ ॥ ३ ॥

(आयु रूपी रात्रि के अँधेरे में प्रभु की कृपा-दृष्टि से प्रकाश होता है।) व्यापक परमात्मा का आलोक चतुर्दिक् प्रसरित है, प्रत्यक्ष है, किन्तु दिखाई किसे देता है ? जो गुरु के उपदेशानुसार आचरण करता एवं सत्य का स्मरण करता है, वही उस परमालोक को देखता है और रात-दिन उसी ज्योति का ध्यान करता है। (ऐसा हो जाने पर) उसकी पंच-इन्द्रियाँ चंचलता से विमुक्त हो गई हैं, वह अपने वास्तविक घर को पहचानता है और काम-क्रोधादि के विष को निकाल देता है। गुरु की शिक्षा द्वारा उसके अन्तर में प्रकाश होता है और वह परमात्मा के आश्चर्यजनक कार्यों को देख पाता है। गुरु नानक कहते हैं कि परमालोक (लम्बे सितारे) के उदय होने पर जीव अहम् का अन्त करके प्रभु में विश्वास बनाता है ॥ १ ॥ गुरुमुख जीव अभिमान को मिटाकर नित्य जाग्रतावस्था में रहते हैं। उन्हें सदैव ज्ञान का प्रकाश प्राप्त होता है और वे परमसत्य में समा जाते हैं। गुरु के द्वारा वे परमसत्य में समाते, परमात्मा की स्वीकृति प्राप्त करते और जाग्रतावस्था में विचरते हैं। गुरु उन्हें परमात्मा का नामामृत प्रदान करता है और वे हरि-चरणों में ध्यान लगाते हैं। गुरुमुख जीवों के मन में ज्योति (प्रभु का प्रकाश) प्रकट हुई है, जिससे वे परमात्मा को जान लेते हैं, जबकि मनमुख जीव भ्रम में भटकते रह जाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि उनकी रात्रि जागते बीतती है और अन्ततः भोर होता है और वे मन में प्रभु-प्यार को धारण करते हैं (अर्थात् उनकी आयु रूपी रात्रि भलीभाँति बीतती है और अन्ततः वे चिर-जागृति को प्राप्त होते हैं।) ॥ २ ॥ उसके अवगुण मिट जाते हैं और गुण उसके मन में घर कर लेते हैं। उसके लिए वही एक सर्व-रमण करता है, दूसरा अन्य कोई नहीं होता। वह प्रभु ही सर्वदा रमण करता है, दूसरा कोई नहीं। उसके मन को मन में से ही शान्ति मिल जाती है। जिस परमात्मा ने जल, थल, त्रिभुवन, सब कुछ रचा है, उसे गुरु द्वारा ही जाना जा सकता है। वह परमसमर्थ और सर्वकर्ता है, उसने त्रिगुणमयी माया को मिटा दिया। गुरु नानक कहते हैं कि (ऐसे में) जीव के अवगुण भी गुरुमतानुसार गुणों में समा जाते हैं ॥ ३ ॥ उस जीव का आवागमन मिट जाता है, भ्रम-भटकन समाप्त होती है। वह अहम् को मिटाकर सच्चे परमात्मा से मिलता और मनुष्य-जीवन सफल कर लेता है। गुरु द्वारा प्रभु के प्रकट होने से अहम्-भाव तो मिटता ही है, सब प्रकार का शोक-सन्ताप भी धुल जाता है। उसकी ज्योति परमज्योति ब्रह्म में समा जाती है और जीव स्वस्वरूप को पहचानने लगता है। इस लोक में वह गुरु-शब्दों पर आचरण करता है और परलोक में प्रियतम-प्रभु की शरण में रहता है।

गुरु नानक कहते हैं कि जिस जीव को गुरु ने प्रभु से मिला दिया है, उसके लिए दुनिया की मुहताजी समाप्त हो जाती है ॥ ४ ॥ ३ ॥

॥ तुखारी महला १ ॥ भोलावड़ै भुली भुलि भुलि पछोताणी। पिरि छोडिअड़ी सुती पिर की सार न जाणी। पिरि छोडी सुती अवगणि मुती तिसु धन विधण राते। कामि क्रोधि अहंकारि विगुती हउमै लगी ताते। उडरि हंसु चलिआ फुरमाइआ भसमै भसम समाणी। नानक सचे नाम विहूणी भुलि भुलि पछोताणी ॥ १ ॥ सुणि नाह पिआरे इक बेनंती मेरी। तू निजघरि वसिअड़ा हउ रुलि भसमै ढेरी। बिनु अपने नाहै कोइ न चाहै किआ कहीऐ किआ कीजै। अंम्रित नामु रसन रसु रसना गुरसबदी रसु पीजै। विणु नावै को संगि न साथी आवै जाइ घनेरी। नानक लाहा लै घरि जाईऐ साची सचु मति तेरी ॥ २ ॥ साजन देसि विदेसीअड़े सानेहड़े देदी। सारि समाले तिन सजणा मुंध नैण भरेदी। मुंध नैण भरेदी गुण सारेदी किउ प्रभ मिला पिआरे। मारगु पंथु न जाणउ विखड़ा किउ पाईऐ पिरु पारे। सतिगुर सबदी मिलै विछुंनी तनु मनु आगै राखै। नानक अंम्रित बिरखु महा रस फलिआ मिलि प्रीतम रसु चाखै ॥ ३ ॥ महलि बुलाइड़ीए बिलमु न कीजै। अनदिनु रतड़ीए सहजि मिलीजै। सुखि सहजि मिलीजै रोसु न कीजै गरबु निवारि समाणी। साचै राती मिलै मिलाई मनमुखि आवण जाणी। जब नाची तब घूघटु कैसा मटुकी फोड़ि निरारी। नानक आपै आपु पछाणै गुरमुखि ततु बीचारी ॥ ४ ॥ ४ ॥

जीवात्मा रूपी स्त्री भ्रम में पड़ी है और अपनी भूलों पर पछता रही है। अपने पति-परमात्मा से बिछुड़कर बेसुध सो रही है, पति का उसे ध्यान ही नहीं। वह पिया द्वारा त्यक्ता होकर अवगुणों में तल्लीन है, वह स्त्री वैधव्य का जीवन जीती है। काम, क्रोध, अहंकार आदि में वह नष्ट हो रही है और अहम् में सन्तप्त है। अन्ततः (समय आने पर) जीव (हंस) परमात्मा के आदेशानुसार चल पड़ा और मिट्टी (शरीर) मिट्टी में मिल गई। गुरु नानक कहते हैं कि जीवात्मा जब तक सच्चे प्रभु का नाम नहीं जपती, तब तक भ्रम में भूली पश्चात्ताप करती है ॥१॥ हे मेरे स्वामी, मेरी एक विनती सुनो। तुम अपने घर में बसते हो, मैं मिट्टी में

मिलती जा रही हूँ। भला अपने स्वामी के बिना कौन स्नेह देता है! क्या कहें, क्या करें? हरि-नामामृत, जो कि रसों का रस है, गुरु के उपदेश द्वारा पान करें। क्योंकि नाम के बिना कोई संगी-साथी नहीं, निरन्तर आवागमन बना रहता है। गुरु नानक कहते हैं कि हे प्रियतम, तुम्हारे द्वारा सद्विवेक पाकर गुणों का लाभ प्राप्त होगा, जो अपने वास्तविक घर (सचखण्ड) पहुँचने में सहायक होगा ॥ २ ॥ साजन परदेस में गया है, जीव-स्त्री उसे संदेश भेजती, उसके गुणों का स्मरण करती और आँखें भर-भर लाती है। स्त्री आँखें भरकर साजन के गुण याद करती है कि किसी प्रकार प्रभु का मिलन हो सके। मार्ग कठिन है, स्त्री के लिए अज्ञात भी है, वह परदेस में क्योंकर अपने पति को खोजे। बिछुड़ी जीव-स्त्री सतिगुरु के उपदेशों पर आचरण करने तथा तन-मन समर्पित करने से ही पुनर्मिलन प्राप्त कर सकती है। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नामामृत से सींचने पर ही प्रिय-मिलन का वृक्ष फलता है और तभी मिलन के सरस फल चखने को मिलते हैं ॥ ३ ॥ हे परमात्मा, विलम्ब न करो, मुझे शीघ्र अपने महलों में बुला लो। (उत्तर मिलता है—) हे नित्य प्रेम-मग्न रहनेवाली जीव-स्त्री, सहजावस्था में मिलन होगा (सहज अडोल अवस्था को प्राप्त करो)। सहजावस्था में सुख मिलता है, आतप-रोष समाप्त हो जाता है; गर्व (अहम्) निवारण करके तुम उसी (प्रभु-पति) में लीन हो जाओगी। सच्चे प्रभु से प्रेम करनेवाली जीव-स्त्री परमात्मा से मिलन को प्राप्त होती है, मनमुखी (स्वेच्छाचारिणी) आवागमन में पड़ी रह जाती है। जब प्रभु प्यार में लग ही गई तो लोक-लाज की मटकी फोड़कर अलग होना ही पड़ता है। (जब परमार्थ का नाच नाचने लगी तो घूँघट किस बात का?) गुरु नानक कहते हैं कि तब वह गुरु के द्वारा अध्यात्म-तत्त्व को समझकर स्वस्वरूप को पहचान सकती है ॥ ४ ॥ ४ ॥

॥ तुखारी महला १ ॥ मेरे लाल रंगीले हम लालन के लाले। गुर अलखु लखाइआ अवरु न दूजा भाले। गुरि अलखु लखाइआ जा तिसु भाइआ जा प्रभि किरपा धारी। जगजीवनु दाता पुरखु बिधाता सहजि मिले बनवारी। नदरि करहि तू तारहि तरीऐ सचु देवहु दीन दइआला। प्रणवति नानक दासनि दासा तू सरब जीआ प्रतिपाला ॥ १ ॥ भरिपुरि धारि रहे अति पिआरे। सबदे रवि रहिआ गुर रूपि मुरारे। गुर रूप मुरारे त्रिभवण धारे ता का अंतु न पाइआ। रंगी जिनसी जंत उपाए नित देवै चड़ै सवाइआ। अपरंपरु आपे थापि उथापे तिसु भावै सो होवै। नानक हीरा हीरै बेधिआ

गुण कै हारि परोवै ।। २ ।। गुण गुणहि समाणे मसतकि नाम नीसाणो । सच साचि समाइआ चूका आवण जाणो । सचु साचि पछाता साचै राता साचु मिलै मनि भावै । साचे ऊपरि अवरु न दीसै साचे साचि समावै । मोहनि मोहि लीआ मनु मेरा बंधन खोलि निरारे । नानक जोती जोति समाणी जा मिलिआ अति पिआरे ।। ३ ।। सच घरु खोजि लहे साचा गुर थानो । मनमुखि नह पाईऐ गुरमुखि गिआनो । देवै सचु दानो सो परवानो सद दाता वड दाणा । अमरु अजोनी असथिरु जापै साचा महलु चिराणा । दोति उचापति लेखु न लिखीऐ प्रगटी जोति मुरारी । नानक साचा साचै राचा गुरमुखि तरीऐ तारी ।। ४ ।। ५ ।।

मेरा स्वामी रँगीला है और मैं उस प्यारे का सेवक हूँ। गुरु ने मुझे वह अदृश्य स्वामी दिखा दिया है, अब मैं दूसरे किसी की खोज नहीं करती (जीव-स्त्री का कथन है)। गुरु ने तभी अदृश्य दिखलाया, जब स्वामी की अपनी कृपा हुई और उसे ऐसा मंजूर हुआ। तब वह जगत का जीवन-दाता परमेश्वर सहज में ही आन मिला। उस दीन-दयालु की कृपा-दृष्टि हुई कि जीवात्मा रूपी स्त्री संसार-सागर से पार हो गई और उसे सत्य की अनुभूति हुई। दासों के दास (विनम्रता) गुरु नानक विनती करते हैं कि हे स्वामी, तुम्हीं सब जीवों के प्रतिपालक हो (कृपा करो) ।। १ ।। भरपूर शब्द ब्रह्म में प्रिय गुरु अवस्थित है, गुरु परमात्मा का ही रूप है। गुरु वाहिगुरु का रूप है, त्रिभुवन का आधार है, उसका अन्त किसी ने नहीं पाया। प्रभु ने अनेक रंगों-प्रकारों के जीव पैदा किए हैं और नित्य उनको बढ़-चढ़कर भोग-पदार्थ भी प्रदान करता है। वह अपरंपर अपने-आप बनाता-बिगाड़ता है; जो उसे स्वीकार होता है, वही होता है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु प्रभु के गुणों की माला में अपने को पिरोकर हीरे में हीरे द्वारा (प्रभु-रूप में प्रभु द्वारा) बींधा जाता है ।। २ ।। गुण गुणों में समा गये और माथे की रेखाओं में हरिनाम-जाप का लेख लिखा गया। सत्य सत्य में समा गया, आवागमन मिट गया। सत्य अंशी ने सत्य अंश को पहचान लिया, जीव सत्य से प्रेम करने लगा और उसने सत्य को मिलकर मन को उसी में रमा दिया। सत्यस्वरूप प्रभु के ऊपर अन्य कुछ नहीं सूझता, बस अंश उसी अंशी में समा जाता है। उस मोहक प्रभु ने मेरा मन मोह लिया और मेरे बन्धनों को खोलकर मुझे स्वतन्त्र कर दिया। गुरु नानक कहते हैं कि अपने प्यारे स्वामी को मिलकर जीवात्मा की ज्योति परमज्योति में समा गयी ।। ३ ।। जिसे सत्य का आधार गुरु मिल जाता है,

वह सत्यस्वरूप परमात्मा को खोज लेता है। मनमुख को जो प्राप्त नहीं होता, वही ज्ञान गुरुमुख को उपलब्ध है। परमात्मा जिसे अपना नाम देता है, उसे वह परवाण कर लेता है; वह बड़ा दाता और ज्ञाता है। वह अमर, अयोनि, स्थिर है, उसका रूप सनातन है। अब परमात्मा की ज्योति प्रकट हो जाने से नित्य के कर्मों का लेख नहीं लिखा जाता। गुरु नानक कहते हैं कि जो पुरुष सत्य में रमता है, वही सत्य है और वही गुरु के सहारे संसार-समन्दर को पार करता है ॥ ४ ॥ ५ ॥

॥ तुखारी महला १ ॥ ए मन मेरिआ तू समझु अचेत इआणिआ राम। ए मन मेरिआ छडि अवगण गुणी समाणिआ राम। बहु साद लुभाणे किरत कमाणे विछुड़िआ नही मेला। किउ दुतरु तरीऐ जम डरि मरीऐ जम का पंथु दुहेला। मनि रामु नही जाता साझ प्रभाता अवघटि रुधा किआ करे। बंधनि बाधिआ इन बिधि छूटै गुरमुखि सेवै नरहरे ॥ १ ॥ ए मन मेरिआ तू छोडि आल जंजाला राम। ए मन मेरिआ हरि सेवहु पुरखु निराला राम। हरि सिमरि एकंकारु साचा सभु जगतु जिनि उपाइआ। पउणु पाणी अगनि बाधे गुरि खेलु जगति दिखाइआ। आचारि तू वीचारि आपे हरिनामु संजम जप तपो। सखा सैनु पिआरु प्रीतमु नामु हरि का जपु जपो ॥ २ ॥ ए मन मेरिआ तू थिरु रहु चोट न खावही राम। ए मन मेरिआ गुण गावहि सहजि समावही राम। गुण गाइ राम रसाइ रसीअहि गुर गिआन अंजनु सारहे। त्रै लोक दीपकु सबदि चानणु पंच दूत संघारहे। भै काटि निरभउ तरहि दुतरु गुरि मिलिऐ कारज सारए। रूपु रंगु पिआरु हरि सिउ हरि आपि किरपा धारए ॥ ३ ॥ ए मन मेरिआ तू किआ लै आइआ किआ लै जाइसी राम। ए मन मेरिआ ता छुटसी जा भरमु चुकाइसी राम। धनु संचि हरि हरि नाम वखरु गुर सबदि भाउ पछाणहे। मैलु परहरि सबदि निरमलु महलु घरु सचु जाणहे। पति नामु पावहि घरि सिधावहि झोलि अंम्रित पी रसो। हरिनामु धिआईऐ सबदि रसु पाईऐ वडभागि जपीऐ हरि जसो ॥४॥ ए मन मेरिआ बिनु पउड़ीआ मंदरि किउ चड़ै राम। ए मन मेरिआ बिनु बेड़ी पारि न अंबड़ै राम। पारि साजनु अपारु प्रीतमु गुर सबद सुरति लंघवाए। मिलि

साध संगति करहि रलीआ फिरि न पछोतावए। करि दइआ दानु दइआल साचा हरिनाम संगति पावओ। नानकु पइअंपै सुणहु प्रीतम गुर सबदि मनु समझावओ ॥ ५ ॥ ६ ॥

ऐ मेरे मूर्ख गँवार नासमझ मन, तुम जागो और समझो। तुम अपने अवगुणों का त्याग कर गुणों की वृद्धि द्वारा प्रभु में लीन हो जाओ। अनेकधा स्वादों के लोभ में पड़कर अपने कर्मों के फलानुसार तुम परमात्मा से बिछुड़े हो, तुम्हारा मिलाप नहीं हो पाता। यह दुस्तर संसार-सागर क्योंकर तिरा जा सकता है! यमों का भय हमें मार रहा है, क्योंकि यमों का मार्ग बड़ा कष्टकारक है। ऐ मन, तुमने साँझ-प्रभात, किसी समय भी राम-नाम नहीं जपा, यमों के कठोर मार्ग में उलझे तुम क्या करते हो? कर्मों के बंधन तो केवल गुरु के द्वारा प्रभु की सेवा से ही छूटते हैं ॥ १ ॥ ऐ मेरे मन, तुम घर के सब जंजाल को छोड़ो। ऐ मन, तुम परमपुरुष प्रभु की सेवा में लग्न लगाओ। सच्चे ओंकार का स्मरण करो, जिसने इस संसार की रचना की है। परम गुरु परमात्मा ने पवन, पानी, अग्नि तक को बाँध रखा है, सृष्टि का समूचा खेल वही दिखा रहा है। ऐ मन, यदि तुम हरिनाम-जाप को ही अपना जप-तप-संयम (कर्मकाण्ड) बना लो, तभी तुम आचार एवं विचारवान् हो सकते हो। हरिनाम-जाप ही मन का सच्चा सखा, सम्बन्धी और प्यारा प्रियतम है ॥ २ ॥ ऐ मेरे मन, स्थिर रहना, कहीं चोट न खा जाना; ऐ मेरे मन, तुम प्रभु के गुण गाते हुए पूर्ण अडोल और शान्ति की अवस्था में समा जाना। राम के गुण गाकर तुम प्रेम-पूर्ण सरसता को प्राप्त करो। गुरु-ज्ञान का अंजन लगाओ, जिससे विश्व-दीपक (प्रभु) का आलोक तुम्हें दीख पड़ने लगेगा। उस आलोक द्वारा तुम काम-क्रोधादि पाँच शत्रुओं को मार सकोगे। गुरु-मिलन से तुम्हारे भय कट जायँगे, निर्भय होकर दुस्तर संसार-सागर से पार पाओगे और तुम्हारे सब कार्य सम्पन्न होंगे। तुम जब हरि के प्यार में उसी का रूप-रंग धारण करोगे तो वह भी तुम पर समूची कृपा-वर्षण करेगा ॥ ३ ॥ ऐ मेरे मन, तुम यहाँ क्या लेकर आए थे और क्या ले जाओगे। ऐ मेरे मन, तुम्हारा छुटकारा तभी सम्भव है, जब परमात्मा स्वयं तुम्हें भ्रम-मुक्त करेगा। (यहाँ आकर तुम) हरिनाम-धन का संचय करो और गुरु-उपदेश द्वारा उस नाम-रूप सौदे का भाव निश्चित कर लो। गुरु-उपदेश द्वारा मैल दूर करके निर्मल हो जाओ और अपना वास्तविक प्रश्रय ढूँढ़ लो। हरि-नाम रूपी शोभा लेकर घर वापस जाओ और खुले हाथों अमृत-रस नाम का पान करो। शब्द द्वारा हरि-नाम का रसपान करो, प्रभु-नाम जपो; परमात्मा का यशोगान करने में ही ऊँचा भाग्य निहित है ॥ ४ ॥ ऐ मेरे मन, सीढ़ियों के बग़ैर महल में क्योंकर चढ़ा

जा सकता है ? ऐ मन, नाव के बग़ैर नदी के पार क्योंकर पहुँचा जा सकता है ? (संसार रूपी) नदी के उस पार साजन बसता है, गुरु-शब्द के ज्ञान से तुम पार जा सकते हो। साधु-संगति (सत्संगति) में मिलकर तुम आनन्द करो, जिसमें दोबारा पछताना नहीं पड़ेगा। हे दयालु, दया का सच्चा दान देकर तुम मुझे हरिनाम-संगति में डालो। गुरु नानक विनती करते हैं कि हे प्रियतम, मेरे मन को गुरु-उपदेश में रमा दो ॥ ५ ॥ ६ ॥

तुखारी छंत महला ४

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ अंतरि पिरी पिआरु किउ पिर बिनु जीवीऐ राम। जब लगु दरसु न होइ किउ अंम्रितु पीवीऐ राम। किउ अंम्रितु पीवीऐ हरि बिनु जीवीऐ तिसु बिनु रहनु न जाए। अनदिनु प्रिउ प्रिउ करे दिनु राती पिर बिनु पिआस न जाए। अपणी क्रिपा करहु हरि पिआरे हरि हरि नामु सद सारिआ। गुर कै सबदि मिलिआ मै प्रीतमु हउ सतिगुर विटहु वारिआ ॥ १ ॥ जब देखां पिरु पिआरा हरि गुण रसि रवा राम। मेरै अंतरि होइ विगासु प्रिउ प्रिउ सचु नित चवा राम। प्रिउ चवा पिआरे सबदि निसतारे बिनु देखे त्रिपति न आवए। सबदि सीगारु होवै नित कामणि हरि हरि नामु धिआवए। दइआ दानु मंगत जन दीजै मै प्रीतमु देहु मिलाए। अनदिनु गुरु गोपालु धिआई हम सतिगुर विटहु घुमाए ॥ २ ॥ हम पाथर गुरु नाव बिखु भवजलु तारीऐ राम। गुर देवहु सबदु सुभाइ मै मूड़ निसतारीऐ राम। हम मूड़ मुगध किछु मिति नही पाई तू अगंमु वड जाणिआ। तू आपि दइआलु दइआ करि मेलहि हम निरगुणी निमाणिआ। अनेक जनम पाप करि भरमे हुणि तउ सरणागति आए। दइआ करहु रखि लेवहु हरि जीउ हम लागह सतिगुर पाए ॥३॥ गुर पारस हम लोह मिलि कंचनु होइआ राम। जोती जोति मिलाइ काइआ गड़ु सोहिआ राम। काइआ गड़ु सोहिआ मेरै प्रभि मोहिआ किउ सासि गिरासि विसारीऐ। अद्रिसटु अगोचरु पकड़िआ गुरसबदी हउ सतिगुर कै बलिहारीऐ।

सतिगुर आगै सीसु भेट देउ जे सतिगुर साचे भावै । आपे दइआ करहु प्रभ दाते नानक अंकि समावै ।। ४ ।। १ ।।

मन में जब प्रभु-पति का उत्कट प्रेम हो, तो उसके बग़ैर क्योंकर जिया जा सकता है ? जब तक उसका प्यारा दर्शन न हो जाय, अमृत-पान क्योंकर सम्भव है ? (अर्थात् प्रिय का दर्शन जीवन-दायी है ।) प्रभु-पति के बिना अमृत नहीं, जीना दूभर है और उसके बिना रहा तो जा ही नहीं सकता । रात-दिन (पपीहे की तरह) जीव प्रिय-प्रिय पुकारता है, किन्तु प्रभु-पति (स्वाति नक्षत्र) के बिना प्यास नहीं बुझती (दर्शन के बिना तृप्ति नहीं होती) । हे प्यारे प्रियतम, मैंने सदा तुम्हारा नाम स्मरण किया है, मुझ पर अनुग्रह करो । गुरु के उपदेश से मैं अपने प्रियतम से मिल सका हूँ, इसलिए सतिगुरु पर क़ुर्बान हूँ ।। १ ।। जब प्रियतम के दर्शन हो जायँ तो और भी अधिक स्वाद से हरि-गुण का स्मरण करूँ । मेरे भीतर आनन्द हो और मैं नित्य प्रिय-प्रिय नामोच्चारण करूँ । हे प्यारे, मैं प्रियतम का नाम बोलूँ, उसका नाम संसार-सागर से तार देता है, उसके दर्शन किए बग़ैर तृप्ति नहीं होती । जीवात्मा रूपी कामिनी का वास्तविक शृंगार हरि-नाम ही है, इसलिए वह नित्य उसी का ध्यान करती है । इस सेवक को दया का दान देकर प्रियतम से मिला दो (यही प्रार्थना है) । (तब) हम रात-दिन अपने सतिगुरु द्वारा बताए परमात्मा का नाम जपें और गुरु पर बलिहार जायँ ।। २ ।। हम पत्थर के समान हैं, गुरु नौका है, विषय-विकारों का संसार-सागर उसी नौका में पार किया जाता है । हे प्रियतम, मुझे गुरु का उपदेश प्राप्त हो तो मुझ मूढ़ का भी निस्तार हो जाय । मैं मूढ़-गँवार हूँ, तुम अगम-अगाध हो, मुझे तुम्हारे रहस्यों का कुछ भी अनुमान नहीं । हे प्रभु, तुम स्वयं दयालु हो, दयापूर्वक मुझ-सरीखे गुण-हीन अकिंचन को अपने संग मिला लो । कई जन्मों तक अपने पापों के कारण भटकता रहा हूँ, अब (इस जन्म में) तुम्हारी शरण में आया हूँ । हे स्वामी, दया करके मेरी रक्षा करो, मैं सतिगुरु के चरणों में अर्पित हूँ (मुझे अपने में विलीन कर लो) ।। ३ ।। गुरु पारस-समान है और हम जीव लोहे के समान, गुरु का सत्संग पाकर हम कंचन हो गए हैं । हमारी जीवात्मा ज्योति प्रभु की परमज्योति में मिली है, शरीर रूपी सुन्दर गढ़ में यह पावन मिलन सम्पन्न हुआ है । मेरा मनमोहक प्रभु शरीर रूपी गढ़ में सुशोभित है, श्वास-श्वास पर खाते-पीते उसे क्योंकर विस्मृत किया जा सकता है ? मैंने सतिगुरु के उपदेश से उस अदृष्ट अगोचर प्रभु को पा लिया है, अतः मैं अपने गुरु पर बलिहार हूँ । वह मेरा सतिगुरु यदि चाहे तो मैं अपना शीश तक उसके चरणों में भेंट कर सकता हूँ । गुरु नानक

कहते हैं कि गुरु-कृपा से, हे प्रभु, स्वयं दया करो ताकि जीव तुम्हारी गोद में समा जाय ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ तुखारी महला ४ ॥ हरि हरि अगम अगाधि अपरंपर अपरपरा । जो तुम धिआवहि जगदीस ते जन भउ बिखमु तरा । बिखम भउ तिन तरिआ सुहेला जिन हरि हरि नामु धिआइआ । गुरवाकि सतिगुर जो भाइ चले तिन हरि हरि आपि मिलाइआ । जोती जोति मिलि जोति समाणी हरि क्रिपा करि धरणीधरा । हरि हरि अगम अगाधि अपरंपर अपरपरा ॥ १ ॥ तुम सुआमी अगम अथाह तू घटि घटि पूरि रहिआ । तू अलख अभेउ अगंमु गुर सतिगुर बचनि लहिआ । धनु धंनु ते जन पुरख पूरे जिन गुर संत संगति मिलि गुण रवे । बिबेक बुधि बीचारि गुरमुखि गुर सबदि खिनु खिनु हरि नित चवे । जा बहहि गुरमुखि हरि नामु बोलहि जा खड़े गुरमुखि हरि हरि कहिआ । तुम सुआमी अगम अथाह तू घटि घटि पूरि रहिआ ॥ २ ॥ सेवक जन सेवहि ते परवाणु जिन सेविआ गुरमति हरे । तिन के कोटि सभि पाप खिनु परहरि हरि दूरि करे । तिन के पाप दोख सभि बिनसे जिन मनि चिति इकु अराधिआ । तिन का जनमु सफलिओ सभु कीआ करतै जिन गुरबचनी सचु भाखिआ । ते धंनु जन वडपुरख पूरे जो गुरमति हरि जपि भउ बिखमु तरे । सेवक जन सेवहि ते परवाणु जिन सेविआ गुरमति हरे ॥ ३ ॥ तू अंतरजामी हरि आपि जिउ तू चलावहि पिआरे हउ तिवै चला । हमरै हाथि किछु नाहि जा तू मेलहि ता हउ आइ मिला । जिन कउ तू हरि मेलहि सुआमी सभु तिन का लेखा छुटकि गइआ । तिन की गणत न करिअहु को भाई जो गुर बचनी हरि मेलि लइआ । नानक दइआलु होआ तिन उपरि जिन गुर का भाणा मंनिआ भला । तू अंतरजामी हरि आपि जिउ तू चलावहि पिआरे हउ तिवै चला ॥ ४ ॥ २ ॥

परमात्मा अगम, अथाह, अनन्त और असीम है। जो जीव उस परमात्मा का भजन करते हैं, वे विषम भव-जल से पार हो जाते हैं। जो हरि-नाम का जाप करते हैं, वे सुगमतापूर्वक विषम भव-जल को तर जाते

हैं। जो जीव गुरु-उपदेशानुसार आचरण करते एवं सतिगुरु के प्यार में जीते हैं, प्रभु सहज ही उन्हें आन मिलता है। उनकी परिमित आत्मिक ज्योति परमज्योति में मिल जाती है और वे सृष्टि के नियंता की कृपा से उसी में विलीन होते हैं। हरि अगम, अगाध, अनन्त और असीम है (वे उसी की शरण में लीन हो जाते हैं) ॥ १ ॥ हे परमात्मा, तुम अगम और अथाह हो, सबमें तुम ही व्याप्त हो। तुम अदृश्य हो, रहस्यमय हो, अगम हो, केवल सतिगुरु के उपदेशों से ही तुम्हें पाया जा सकता है। वे लोग धन्य हैं, जो सन्तों एवं सतिगुरु की संगति में तुम्हारे गुण स्मरण करते हैं। गुरुमुख जीव लोक-विचार पूर्ण विवेक द्वारा गुरु के उपदेशों के अनुरूप पल-पल परमात्मा का स्मरण करते हैं। वे जब बैठते हैं तो हरि-नाम उच्चारते हैं, खड़े होते हैं तो भी हरि-हरि-नाम ही कहते हैं। हे प्रभु, तुम अगम अथाह हो, सर्वत्र व्याप्त हो ॥ २ ॥ गुरु-उपदेशानुसार जो जन प्रभु की सेवा में रत होते हैं, वे परमात्मा के दरबार में परवाण (स्वीकृत) होते हैं। उनके करोड़ों पाप एवं दुष्कर्म परमात्मा क्षण भर में ही दूर करता है। जो जीव मन से एक परमात्मा की ही आराधना करते हैं, उनके सब पाप और अवगुण दूर होते हैं। उनका जन्म सफल है, जो गुरु-उपदेश द्वारा सत्य को प्राप्त करते और समान जीवन जीते हैं। वे जन धन्य हैं, वे महान लोग हैं जो गुरुमतानुसार हरि-आराधना द्वारा कठोर भव-जल से पार उतरते हैं। जो गुरुमतानुसार सेवा करता है, उसकी सेवा प्रभु को स्वीकार होती है ॥ ३ ॥ हे भगवन्, तुम अन्तर्यामी हो; जैसा तुम मुझे चलाते हो, वैसे मैं चलता हूँ। हमारे हाथ कोई शक्ति नहीं, जब तुम स्वयं कृपापूर्वक मिलाते हो, तभी मैं तुम्हारी शरण पाता हूँ। हे हरि, जिन पर तुम्हारा वरद हस्त उठता है, उनका सब आलेख (हिसाब-किताब) समाप्त हो जाता है। उन जीवों के भले-बुरे कर्मों का हिसाब कोई नहीं देखता, जो गुरु-वचनों द्वारा सजग होकर परमात्मा में लीन होते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा उन्हीं पर दया करता है, जो गुरु की इच्छा मानकर जीते हैं। हे प्रभु, तुम अन्तर्यामी हो, जैसे तुम चलाते हो वैसा ही मैं यापन करता हूँ ॥ ४ ॥ २ ॥

॥ तुखारी महला ४ ॥ तू जगजीवनु जगदीसु सभ करता स्रिसटि नाथु। तिन तू धिआइआ मेरा रामु जिन कै धुरि लेखु माथु। जिन कउ धुरि हरि लिखिआ सुआमी तिन हरि हरि नामु अराधिआ। तिनके पाप इक निमख सभि लाथे जिन गुर बचनी हरि जापिआ। धनु धंनु ते जन जिन हरि नामु जपिआ तिन देखे हउ भइआ सनाथु। तू जगजीवनु

जगदीसु सभ करता त्रिसटि नाथु ॥ १ ॥ तू जलि थलि महीअलि भरपूरि सभ ऊपरि साचु धणी। जिन जपिआ हरि मनि चीति हरि जपि जपि मुकतु घणी। जिन जपिआ हरि ते मुकत प्राणी तिनके ऊजल मुख हरि दुआरि। ओइ हलति पलति जन भए सुहेले हरि राखि लीए रखन हारि। हरि संत संगति जन सुणहु भाई गुरमुखि हरि सेवा सफल बणी। तू जलि थलि महीअलि भरपूरि सभ ऊपरि साचु धणी ॥ २ ॥ तू थान थनंतरि हरि एकु हरि एको एकु रविआ। वणि त्रिणि त्रिभवणि सभ त्रिसटि मुखि हरि हरि नामु चविआ। सभि चवहि हरि हरि नामु करते असंख अगणत हरि धिआवए। सो धंनु धनु हरि संतु साधू जो हरि प्रभ करते भावए। सो सफलु दरसनु देहु करते जिसु हरि हिरदै नामु सद चविआ। तू थान थनंतरि हरि एकु हरि एको एकु रविआ ॥ ३ ॥ तेरी भगति भंडार असंख जिसु तू देवहि मेरे सुआमी तिसु मिलहि। जिस कै मसतकि गुर हाथु तिसु हिरदै हरि गुण टिकहि। हरिगुण हिरदै टिकहि तिस कै जिसु अंतरि भउ भावनी होई। बिनु भै किनै न प्रेम पाइआ बिनु भै पारि न उतरिआ कोई। भउ भाउ प्रीति नानक तिसहि लागै जिसु तू आपणी किरपा करहि। तेरी भगति भंडार असंख जिसु तू देवहि मेरे सुआमी तिसु मिलहि ॥ ४ ॥ ३ ॥

हे परमात्मा, तुम सृष्टि के स्वामी हो, जगत के प्राण हो और संसार के कर्ता एवं नियंता हो। मेरे प्यारे परमात्मा की आराधना वही कर पाता है, जिसका भाग्य उत्तम होता है। परमात्मा ने शुरू में ही जिनकी नियति में दखल रखा है, वे हरि-नाम की उपासना करते हैं। जो लोग गुरु के उपदेश से हरि-नाम जपते हैं, उनके सब पाप क्षण-मात्र में ही मिट जाते हैं। हरि-नाम जपनेवाले लोग धन्य हैं, उन्हीं के दर्शन करके मैं भी सनाथ हुआ हूँ। हे प्रभु, तुम जगत के जीवन, जगत के कर्ता एवं नियंता हो ॥ १ ॥ तुम जल, थल और आकाश, सब जगह व्याप्त हो, सबके स्वामी हो। जिन जीवों ने हरि का नाम जपा है, वे नाम जपकर मुक्ति को प्राप्त हुए हैं। हरि-नाम जपनेवाले प्राणी मुक्ति पाते हैं और प्रभु-कृपा से उज्ज्वल-मुख होते हैं। वे जीव इहलोक एवं परलोक दोनों जगह सुखी होते हैं, परमात्मा स्वयं उनका रक्षक है। हे सन्तजनो, सन्तों की संगति में आनेवाले भाग्यशाली लोगो, सुनो— गुरु

के आदेशानुसार आचरण करनेवालों की सेवा सदैव सफल होती है। हे परमात्मा, तुम जल, थल, आकाश, सब जगह व्याप्त हो; सबके स्वामी हो ।। २ ।। हे प्रभु, सब जगह और प्रत्येक अन्तराल में एकमात्र तुम्हीं व्याप्त हो। जंगलों की वनस्पति तथा तीनों भुवनों की समूची रचना मुख से तुम्हारा नाम उच्चरित करती है। सब हरिनाम-उच्चारण करते हैं, असंख्य अगणित जन हरि की आराधना में लीन हैं। वे साधुजन धन्य हैं, जिन्हें स्वयं सृष्टि का कर्ता स्नेह करता है (जो उसे भा जाते हैं)। हे हरि, मुझे वह सफल दर्शन कराओ (जिस दर्शन से अनिवार्य फल की प्राप्ति हो, गुरु का दर्शन), जिसने मन से सदा हरि-नाम-उच्चारण किया है। हे परमात्मा, सब जगह और प्रत्येक अन्तराल में एकमात्र तुम्हीं व्याप्त हो ।। ३ ।। तुम्हारी भक्ति के अनन्त कोष हैं, जिन्हें तुम देते हो, उन्हें ही (तुम्हारी भक्ति) प्राप्त है। जिसके माथे गुरु का हाथ है अर्थात् जिन्हें गुरु का संरक्षण मिलता है, उन्हीं के हृदय में हरि-गुण टिकते हैं। परमात्मा के गुण उन्हीं लोगों के हृदय में बसते हैं, जिनके मन में श्रद्धा है। परमात्मा के भय के बिना प्रीति नहीं उपजती और न ही प्रभु-भय के बिना कोई मुक्त हुआ है। तुम्हारा भय, श्रद्धा और प्रेम उसी जीव को प्राप्त होते हैं, (गुरु नानक कहते हैं कि) जिस पर तुम स्वयं कृपा करते हो। हे मेरे मालिक, तुम्हारी भक्ति के अखुट भण्डार उन्हीं को प्राप्त हैं, जिन्हें स्वयं कृपा-वश तुम प्रदान करते हो ।। ४ ।। ३ ।।

।। तुखारी महला ४ ।। नावणु पुरबु अभीचु गुर सतिगुर दरसु भइआ। दुरमति मैलु हरी अगिआनु अंधेरु गइआ। गुर दरसु पाइआ अगिआनु गवाइआ अंतरि जोति प्रगासी। जनम मरण दुख खिन महि बिनसे हरि पाइआ प्रभु अबिनासी। हरि आपि करतै पुरबु कीआ सतिगुरू कुलखेति नावणि गइआ। नावणु पुरबु अभीचु गुर सतिगुर दरसु भइआ ।। १ ।। मारगि पंथि चले गुर सतिगुर संगि सिखा। अनदिनु भगति बणी खिनु खिनु निमख विखा। हरि हरि भगति बणी प्रभ केरी सभु लोकु वेखणि आइआ। जिन दरसु सतिगुर गुरू कीआ तिन आपि हरि मेलाइआ। तीरथ उदमु सतिगुरू कीआ सभ लोक उधरण अरथा। मारगि पंथि चले गुर सतिगुर संगि सिखा ।।२।। प्रथम आए कुलखेति गुर सतिगुर पुरबु होआ। खबरि भई संसारि आए त्रैलोआ। देखणि आए तीनि लोक सुरि नर मुनि

जन सभि आइआ। जिन परसिआ गुरु सतिगुरू पूरा तिन के किलविख नास गवाइआ। जोगी दिगंबर संनिआसी खटु दरसन करि गए गोसटि ढोआ। प्रथम आए कुलखेति गुर सतिगुर पुरबु होआ ॥ ३ ॥ दुतीआ जमुन गए गुरि हरि हरि जपनु कीआ। जागाती मिले दे भेट गुर पिछै लंघाइ दीआ। सभ छुटी सतिगुरू पिछै जिनि हरि हरि नामु धिआइआ। गुर बचनि मारगि जो पंथि चाले तिन जमु जागाती नेड़ि न आइआ। सभ गुरू गुरू जगतु बोलै गुर कै नाइ लइऐ सभि छुटकि गइआ। दुतीआ जमुन गए गुरि हरि हरि जपनु कीआ ॥ ४ ॥ त्रितीआ आए सुरसरी तह कउतकु चलतु भइआ। सभ मोही देखि दरसनु गुर संत किनै आढु न दामु लइआ। आढु दामु किछु पइआ न बोलक जागातीआ मोहण मुंदणि पई। भाई हम करह किआ किसु पासि मांगह सभ भागि सतिगुर पिछै पई। जागातीआ उपाव सिआणप करि वीचारु डिठा भंनि बोलका सभि उठि गइआ। त्रितीआ आए सुरसरी तह कउतकु चलतु भइआ ॥ ५ ॥ मिलि आए नगर महाजना गुर सतिगुर ओट गही। गुरु सतिगुरु गुरु गोविदु पुछि सिम्रिति कीता सही। सिम्रिति सासत्र सभनी सही कीता सुकि प्रहिलादि स्री रामि करि गुर गोविदु धिआइआ। देही नगरि कोटि पंच चोर वटवारे तिन का थाउ थेहु गवाइआ। कीरतन पुराण नित पुंन होवहि गुर बचनि नानकि हरि भगति लही। मिलि आए नगर महाजना गुर सतिगुर ओट गही ॥ ६ ॥ ४ ॥ १० ॥

सतिगुरु का दर्शन अभिजित् नक्षत्र में कुरुक्षेत्र का तीर्थ-स्नान है। (कुरुक्षेत्र में सन्निहित सरोवर में अमावस को सूर्यग्रहण का पर्व-स्नान होता है, उसके विशेष पुण्य स्वीकार किया गया है, किन्तु गुरु-कथन है कि वह पुण्य तो गुरु-दर्शन में ही है।) इससे दुर्मति-मलिनता मिटती है और अज्ञान का अँधेरा छट जाता है। गुरु का दर्शन पाकर अज्ञान दूर हुआ और अन्तर्मन की ज्योति प्रकाशित हो उठी। क्षण भर में ही जन्म-मरण का दु:ख नष्ट हो गया, अविनाशी प्रभु से मिलन हुआ। प्रभु ने स्वयं इस पर्व का अवसर प्रदान किया, जो कि सतिगुरु कुरुक्षेत्र तीर्थ पर स्नानार्थ पहुँचा। (गुरु रामदास अपने गुरु अमरदासजी के लिए कह रहे हैं कि उनका वहाँ जाना तथा जनता को दर्शन देना ही कुरुक्षेत्र को अभिजित् में

तीर्थ बनाता है। याद रहे कि गुरु अमरदास गुरु-गद्दी पर बैठने के उपरान्त भी कुरुक्षेत्र में गए थे। तब उनका मंतव्य सम्भवतः तीर्थ-स्नान न होकर जनता का पथ-प्रदर्शन रहा होगा।) सतिगुरु का दर्शन ही अभिजित् नक्षत्र में कुरुक्षेत्र का तीर्थ-स्नान है ॥ १ ॥ (गुरु अमरदास जब तीर्थ पर गए तो अनेक सिक्ख भी उनके साथ थे, अनेक लोगों ने वहाँ उनकी शरण ग्रहण की और इस प्रकार शरण में आनेवाले अनेक जीवों का उद्धार हुआ।) मेरे सतिगुरु संग में सिक्खों को लेकर रास्ते में चले (ध्यान रहे कि चार थे, गुरु तीसरे गुरु के लिए कह रहे हैं), क़दम-क़दम पर क्षण-क्षण में भक्ति-चर्चा हुई और रात-दिन शिष्यजन गुरु की शरण में रहे। इन हरि-भक्तों के समूह को सब लोग देखते और आश्चर्य करते थे। जिन्होंने वहाँ मेरे सतिगुरु के दर्शन किए, वे प्रभु-मिलन के आनन्द से पराभूत हो गए। सतिगुरु ने तीर्थ पर जाने का उद्यम जन के उद्धार के लिए किया था, इसीलिए मेरे सतिगुरु अपने संग अनेक सिक्खों को लेकर उस (तीर्थ की ओर के) मार्ग चले ॥ २ ॥ सर्वप्रथम वे कुरुक्षेत्र में आए, जहाँ सच्चे गुरु के दर्शनों का पर्व हुआ। समूचे संसार को खबर हो गई और तीनों लोकों के जीव उनके दर्शनार्थ पधारे। तीनों लोकों के देवता, मनुष्य और मुनिजन, सब उन्हें देखने आए। जिन्होंने उस पूर्णगुरु के दर्शन किए (स्पर्श किया), उनके सब पाप धुल गए। योगीजन, निःवस्त्र तपस्वी एवं छः प्रकार के संन्यासी (योगी, संन्यासी, जंगम, सरेवड़े, बोधी, बैरागी) आ-आकर उनसे चर्चा (शास्त्रार्थ) करते एवं भेंट देकर (लोहा मानकर) ही जाते। प्रथम सतिगुरु कुरुक्षेत्र में आए, जहाँ सच्चे गुरु के दर्शनों का पर्व हुआ ॥ ३ ॥ तत्पश्चात् गुरुजी यमुना पर गए और वहाँ हरिनाम-जाप की धूनी रमाई। कराधिकारी भी भेंट लेकर मिले (बादशाह की आज्ञा थी कि गुरु अमरदासजी एवं उनके शिष्यों से तीर्थ-कर न लिया जाय) और अपने को गुरु का शिष्य प्रकट करनेवाले सब लोग बिना कर दिए ही आगे चले गए। सतिगुरु का दामन थामकर जिसने भी हरि-नाम जपा, वे सब छूट गए (मुक्त हो गए)। जो जीव गुरु के आदेशानुसार आचरण करते हैं, यमदूत-रूप कराधिकारी उन्हें नहीं सताते (उनके निकट नहीं आते)। (क्योंकि गुरु का सिक्ख घोषित होने पर कर-मुक्ति मिलती थी, इसलिए) सब जनता अपने को गुरु के संरक्षण में बताकर आसानी से आगे निकल गई (गुरु का नाम लेने से गति प्राप्त की)। दूसरे, सतिगुरु यमुना पर गये और वहाँ हरि-नाम-जाप का आह्वान किया ॥ ४ ॥ तीसरी जगह वे गंगा पर आए और वहाँ कौतुकपूर्ण चरित दर्शाया। सन्त गुरु के दर्शन करके सारा संसार मोहित हो गया, किसी ने आधी कौड़ी भी तीर्थ-कर के रूप में नहीं ली। कर एकत्रित करने वाली पेटी में छदाम भी नहीं पड़ा, कराधिकारियों के मुँह बन्द रह गए

अर्थात् आश्चर्य-चकित रह गए । (वे कहने लगे कि) भाई हम क्या करें, किससे माँगें, सब अपने को सतिगुरु के शरण में स्वीकार करते हैं। कराधिकारियों ने बुद्धिमत्ता से सब पेटियों को वहाँ से उठवा दिया (उनके पास यह उपाय था) । तीसरे स्थान वे गंगा पर आये और वहाँ कौतुक-पूर्ण चरित दर्शाया ॥ ५ ॥ तब नगर के प्रमुख व्यक्ति मिलकर गुरुजी के पास आये और उनका संरक्षण प्राप्त किया । मुखियाजनों ने गुरुजी के निकट अपनी उत्सुकता प्रकट की, तो उन्होंने स्मृतियों में से ही उद्धरण देकर बता दिया कि शुकदेव, प्रह्लाद एवं श्रीरामचन्द्र आदि ने भी क्योंकर गुरु को परमात्मा जानकर उसकी आराधना की और शरीर रूपी नगर और दुर्ग में से काम-क्रोधादि चोरों को जड़-मूल से उखाड़ दिया । पूर्वतः वहाँ नित्य कीर्तन, पुराण-कथा एवं पुण्य-दान होता था, गुरु नानक कहते हैं कि अब गुरु के उपदेश से उन्हें हरि-भक्ति मिली । (इस प्रकार) नगर के प्रमुख व्यक्ति मिलकर गुरुजी के पास आए और उनका संरक्षण प्राप्त किया ॥ ६ ॥ ४ ॥ १० ॥

तुखारी छंत महला ५

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ घोलि घुमाई लालना गुरि मनु दीना । सुणि सबदु तुमारा मेरा मनु भीना । इहु मनु भीना जिउ जल मीना लागा रंगु मुरारा । कीमति कही न जाई ठाकुर तेरा महलु अपारा । सगल गुणा के दाते सुआमी बिनउ सुनहु इक दीना । देहु दरसु नानक बलिहारी जीअड़ा बलि बलि कीना ॥ १ ॥ इहु तनु मनु तेरा सभि गुण तेरे । खंनीऐ वंञा दरसन तेरे । दरसन तेरे सुणि प्रभ मेरे निमख द्रिसटि पेखि जीवा । अंम्रित नामु सुनीजै तेरा किरपा करहि त पीवा । आस पिआसी पिर कै ताई जिउ चात्रिकु बूंदेरे । कहु नानक जीअड़ा बलिहारी देहु दरसु प्रभ मेरे ॥ २ ॥ तू साचा साहिबु साहु अमिता । तू प्रीतमु पिआरा प्रान हित चिता । प्रान सुखदाता गुरमुखि जाता सगल रंग बनि आए । सोई करमु कमावै प्राणी जेहा तू फुरमाए । जा कउ क्रिपा करी जगदीसुरि तिनि साध संगि मनु जिता । कहु नानक जीअड़ा बलिहारी जीउ पिंडु तउ दिता ॥ ३ ॥ निरगुणु राखि लीआ संतन का

सदका। सतिगुरि ढाकि लीआ मोहि पापी पड़दा। ढाकनहारे प्रभू हमारे जीअ प्रान सुखदाते। अबिनासी अबिगत सुआमी पूरन पुरख बिधाते। उसतति कहनु न जाइ तुमारी कउणु कहै तू कदका। नानक दासु ता कै बलिहारी मिलै नामु हरि निमका ॥ ४ ॥ १ ॥ ११ ॥

हे प्यारे, मैं तुम पर क़ुर्बान हूँ, गुरु की मध्यस्थता में मैंने अपना हृदय तुम्हें सौंपा है। तुम्हारा शब्द (नाद-ध्वनि) सुनकर अर्थात् तुम्हारी नाम-धुनि सुनकर मेरा मन भीग गया है। यह मन ऐसे भीगा है कि जैसे मीन जल से प्यार करती है— मुझे भी प्रभु से वैसा ही प्यार हुआ है। हे स्वामी, तुम्हारा स्थान अपार है, अमूल्य है। हे सर्वगुणों के देनेवाले स्वामी, मुझ दीन की विनती सुनो। गुरु नानक तुम पर क़ुर्बान हैं, मन से,तुम्हारे बलिहार जाते हैं, कृपा कर प्रत्यक्ष दर्शन दो ॥ १ ॥ यह मेरा तन-मन और इनके समस्त गुण तुम्हारे ही हैं। तुम्हारे दर्शनों के लिए मैं टुकड़े-टुकड़े हो जाने को तैयार हूँ। हे मेरे स्वामी, सुनो, मैं तो निमिष-मात्र तुम्हारे दर्शन पाकर ही जीवित हूँ। तुम्हारा अमृत-नाम तुम्हारी ही कृपा से पीने को मिलता है। अतः हे स्वामी, मैं तुम्हारी ही आशा में प्यासा रह रहा हूँ, जैसे चातक स्वाति-बूँद की आशा में रहता है। गुरु नानक कहते हैं कि हे प्रभु, दर्शन दो, मैं अपने प्राण तुम पर न्यौछावर करता हूँ ॥ २ ॥ तुम सबके सच्चे स्वामी हो, अनन्त शक्तियों वाले मालिक हो। हे प्रियतम, तुम मुझे प्राण और चित्त से प्रिय हो। हे प्राणों को सुख देनेवाले, सच्चे गुरु से मुझे तुम्हारा ज्ञान मिला है और अब तो खूब आनन्द है। जैसा तुम्हारा निर्देश होता है, जीव वैसे ही कर्म कमाता है। जिस पर जगदीश्वर की कृपा होती है, वह साधु-संगति में रहकर मन को संयत करने में सफलता प्राप्त कर लेता है। गुरु नानक कहते हैं कि उनके प्राण तुम पर न्यौछावर हैं, (यह) शरीर तुम्हारी ही देन है ॥ ३ ॥ सन्तों के सदक़े मुझ निर्गुण को तुमने प्रश्रय दिया है। मेरे सतिगुरु ने मेरा पापों का पर्दा ढक लिया है अर्थात् मुझे रुसवा होने से बचा लिया है। मेरा प्रभु आश्रयदाता एवं जीव-प्राण को सुख देनेवाला है। प्रभु अविनाशी, अनश्वर तथा पूर्णकर्ता (रचनहार) पुरुष है। तुम्हारी स्तुति में अनुकूल शब्द अनुपलब्ध हैं, कौन कह सकता है कि तुम कब से हो अर्थात् तुम अनादि और अनन्त हो। गुरु नानक कहते हैं कि वे तो उस जीव पर भी क़ुर्बान हैं, जो निमिष-मात्र के लिए भी प्रभु-नाम जपता है ॥ ४ ॥ १ ॥ ११ ॥

केदारा महला ४ घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

मेरे मन राम नाम नित गावीऐ रे। अगम अगोचरु न जाई हरि लखिआ गुरु पूरा मिलै लखावीऐ रे ॥ रहाउ ॥ जिसु आपे किरपा करे मेरा सुआमी तिसु जन कउ हरि लिव लावीऐ रे। सभु को भगति करे हरि केरी हरि भावै सो थाइ पावीऐ रे ॥ १ ॥ हरि हरि नामु अमोलकु हरि पहि हरि देवै ता नामु धिआवीऐ रे। जिसनो नामु देइ मेरा सुआमी तिसु लेखा सभु छडावीऐ रे ॥ २ ॥ हरिनामु अराधहि से धंनु जन कहीअहि तिन मसतकि भागु धुरि लिखि पावीऐ रे। तिन देखे मेरा मनु बिगसै जिउ सुतु मिलि मात गलि लावीऐ रे ॥ ३ ॥ हम बारिक हरि पिता प्रभ मेरे मो कउ देहु मती जितु हरि पावीऐ रे। जिउ बछुरा देखि गऊ सुखु मानै तिउ नानक हरि गलि लावीऐ रे ॥ ४ ॥ १ ॥

ऐ मन, नित्य राम-नाम (परमात्मा का नाम) गाओ। हरि अगम, अगोचर है, पूरे गुरु के बग़ैर उसका साक्षात्कार नहीं किया जा सकता ॥ रहाउ ॥ जिस पर मेरा स्वामी स्वयं कृपा करता है, उस व्यक्ति को हरि-नाम की प्रीति में संलग्न कर देता है। यों तो सब जीव हरि की भक्ति करते हैं, किन्तु जो हरि को प्रिय होती है, वही स्वीकृत मानी जाती है ॥ १ ॥ हरि-नाम अमूल्य है, स्वयं प्रभु के पास ही इसका भण्डार है; वह प्रदान करे तभी उसका नाम जपा जा सकता है। मेरा स्वामी परमात्मा जिसे हरि-नाम प्रदान करता है, उसका सब हिसाब-किताब चुका देता है अर्थात् उसी की गति होती है ॥ २ ॥ हरि-नाम की आराधना करनेवाले जन धन्य हैं, गुरु से ही उनके मस्तक पर सौभाग्य की रेखा होती है। उनके दर्शन-मात्र से मेरा मन उसी प्रकार विकसित होता है, जैसे पुत्र को गले लगाकर माता का मन प्रफुल्लित हो जाता है ॥ ३ ॥ हम बालक हैं, हे हरि, तुम हमारे पिता हो। हमें ऐसी बुद्धि दो कि जिससे हम प्रभु-मिलन को पा सकें। गुरु नानक कहते हैं कि ज्यों बछड़ा देखकर गाय को सुख मिलता है, वैसे ही प्रभु के गले लगकर उन्हें परम आनन्द होता है ॥ ४ ॥ १ ॥

केदारा महला ४ घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ मेरे मन हरि हरि गुन कहु रे । सतिगुरू के चरन धोइ धोइ पूजहु इन बिधि मेरा हरि प्रभु लहु रे ॥ रहाउ ॥ कामु क्रोधु लोभु मोहु अभिमानु बिखै रस इन संगति ते तू रहु रे । मिलि सतसंगति कीजै हरि गोसटि साधू सिउ गोसटि हरि प्रेम रसाइणु राम नामु रसाइणु हरि राम नाम राम रमहु रे ॥ १ ॥ अंतर का अभिमानु जोरु तू किछु किछु किछु जानता इहु दूरि करहु आपन गहु रे । जन नानक कउ हरि दइआल होहु सुआमी हरि संतन की धूरि करि हरे ॥ २ ॥ १ ॥ २ ॥

हे मन, तुम हरि-प्रभु के गुण गाओ । सतिगुरु के चरण धो-धोकर पूजो और इस प्रकार (उसके माध्यम से) हरिप्रभु को खोज लो ॥ रहाउ ॥ तुम काम, क्रोध, लोभ, मोह, अभिमान एवं विषय-रसादि से सदा बचो । सत्संगति में बैठकर परमात्मा की चर्चा करो । सज्जन जीवों से की गई गोष्ठी में रस-राज हरि-प्रेम-रस मिलता है; अतः ऐ मन, तुम रामनाम-रस का पान करो और सदैव परमात्मा के नाम का स्मरण करो ॥ १ ॥ तुम्हारे भीतर जो अभिमान भरा है, उसे दूर करो और नित्य अपने को संयत रखो । गुरु नानक कहते हैं कि हे प्रभु, मुझे तो तुम अपने सन्तों की चरण-धूल-समान बना दो ॥ २ ॥ १ ॥ २ ॥

केदारा महला ५ घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ माई संत संगि जागी । प्रिअ रंग देखै जपती नामु निधानी ॥ रहाउ ॥ दरसन पिआस लोचन तार लागी । बिसरी तिआस बिडानी ॥ १ ॥ अब गुरु पाइओ है सहज सुखदाइक दरसनु पेखत मनु लपटानी । देखि दमोदर रहसु मनि उपजिओ नानक प्रिअ अंम्रित बानी ॥ २ ॥ १ ॥

हे माँ, मुझे सन्तों की संगति में ही अज्ञान की निद्रा से जागृति प्राप्त होती है । मैं तभी अपने प्रिय के रंग देखती तथा सर्वसुख-दाता हरि-नाम को जपती हूँ ॥ रहाउ ॥ दर्शन-पिपासा के कारण मेरे नेत्र अपलक

उधर ही प्रतीक्षा में हैं— अब मुझे पराए पदार्थों की आकांक्षा नहीं रही ॥ १ ॥ अब मुझे परमानन्द का सुख देनेवाला गुरु प्राप्त हुआ है, उसका दर्शन देखते ही मेरा मन उसमें रम गया है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु प्यारे की अमृत वाणी द्वारा वाहिगुरु के दर्शनों का आनन्द मिला है ॥ २ ॥ १ ॥

केदारा महला ५ घरु ३

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ दीन बिनउ सुनु दइआल । पंच दास तीनि दोखी एक मनु अनाथ नाथ । राखु हो किरपाल ॥ रहाउ ॥ अनिक जतन गवनु करउ । खटु करम जुगति धिआनु धरउ । उपाव सगल करि हारिओ नह नह हुटहि बिकराल ॥ १ ॥ सरणि बंदन करुणापते । भव हरण हरि हरि हरि हरे । एक तूही दीन दइआल । प्रभ चरन नानक आसरो । उधरे भ्रम मोह सागर । लगि संतना पग पाल ॥ २ ॥ १ ॥ २ ॥

हे दयालु प्रभु, मुझ दीन की विनती सुनो। हे अनाथों के स्वामी, मेरा मन एक है और पाँच दस्यु (काम-क्रोधादि) इसके लूटनेवाले और तीन गुण इसे कष्ट पहुँचानेवाले हैं। इसलिए, ऐ कृपा-निधान, मेरी रक्षा करो ॥ रहाउ ॥ तीर्थादि-गमन के अनेक यत्न करता हूँ; शास्त्रानुसार छः कर्मों को सम्पन्न करने में ध्यान देता हूँ (छः कर्म— वेद पढ़ना-पढ़ाना, यज्ञ करना-कराना तथा दान देना-लेना)। समस्त उपाय करके देखे हैं, ये भयानक दस्यु दूर ही नहीं होते ॥ १ ॥ हे करुणापति, मैं तुम्हारी शरण में हूँ और तुम्हारा वंदन करता हूँ। हे परमात्मा, तुम संसार के बन्धनों को तोड़नेवाले हो, केवल तुम ही दीनों पर दया करते हो। (इसलिए) हे प्रभु, नानक को तुम्हारे चरणों का ही आश्रय है। भ्रम और मोह के सागर से मेरा उद्धार सन्तों का (गुरु का) दामन पकड़कर एवं उनके चरणों से लगकर ही हुआ है ॥ २ ॥ १ ॥ २ ॥

केदारा महला ५ घरु ४

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सरनी आइओ नाथ निधान । नाम प्रीति लागी मन भीतरि मागन कउ हरि दान ॥ १ ॥

रहाउ ।। सुखदाई पूरन परमेसुर करि किरपा राखहु मान । देहु प्रीति साधू संगि सुआमी हरि गुन रसन बखान ।। १ ।। गोपाल दइआल गोबिद दमोदर निरमल कथा गिआन । नानक कउ हरि कै रंगि रागहु चरन कमल संगि धिआन ।। २ ।। १ ।। ३ ।।

हे स्वामी, हे सुख-निधान, मैं तुम्हारी शरण में आया हूँ। मेरे मन में तुम्हारे नाम की प्रीति जगी है, तुमसे उसी का दान माँगता हूँ ।। १ ।। रहाउ ।। हे सुखदायी परमेश्वर, कृपा करके मेरी लाज रख लो। हे स्वामी, प्रेम-पूर्वक साधु-संगति प्रदान करो और शक्ति दो कि मैं जिह्वा से सदा हरि-गुणों का बखान करूँ ।। १ ।। हे परमात्मा, गोविन्द, गोपाल वाहिगुरु, तुम्हारी ज्ञान-कथा निर्मल है, (गुरु) नानक को हरि-रंग में रँग दो और उसका ध्यान सदैव अपने चरण-कमल में लीन रखो ।। २ ।। १ ।। ३ ।।

।। केदारा महला ५ ।। हरि के दरसन को मनि चाउ । करि किरपा सत संगि मिलावहु तुम देवहु अपनो नाउ ।। रहाउ ।। करउ सेवा सतपुरख पिआरे जत सुनीऐ तत मनि रहसाउ । वारी फेरी सदा घुमाई कवनु अनूपु तेरो ठाउ ।। १ ।। सरब प्रतिपालहि सगल समालहि सगलिआ तेरी छाउ । नानक के प्रभ पुरख बिधाते घटि घटि तुझहि दिखाउ ।। २ ।। २ ।। ४ ।।

मेरे मन में हरि-दर्शन का चाव है। हे प्रभु, कृपा-पूर्वक मुझे सत्संगति प्रदान करो और अपना नाम दो ।। रहाउ ।। प्यारे सत्पुरुष की सेवा में लीन रहो, जब-जब उसका नाम सुनते हैं, तभी मन में आनन्द पैदा होता है। मैं सदा-सदा तुम पर क़ुर्बान हूँ, तुम्हारा अनुपम स्थान कौन-सा है ? (जहाँ तुम विराजते हो) ।। १ ।। तुम सबका पोषण करते हो, सबकी रक्षा करते हो, सबको तुम्हारा ही आश्रय है। गुरु नानक कहते हैं कि हे कर्तापुरुष, मैं घट-घट में तुम्हें ही देखूँ ।। २ ।। २ ।। ४ ।।

।। केदारा महला ५ ।। प्रिअ की प्रीति पिआरी । मगन मनै महि चितवउ आसा नैनहु तार तुहारी ।। रहाउ ।। ओइ दिन पहर मूरत पल कैसे ओइ पल घरी किहारी । खूले कपट धपट बुझि त्रिसना जीवउ पेखि दरसारी ।। १ ।। कउनु सु जतनु उपाउ किनेहा सेवा कउन बीचारी । मानु अभिमानु मोहु तजि नानक संतह संगि उधारी ।। २ ।। ३ ।। ५ ।।

मुझे अपने प्रियतम की प्रीति प्यारी है। मन में मग्न रहकर मैं तुम्हारी आशा लगाता हूँ और मेरी आँखों में तुम्हीं समाए रहते हो ।।रहाउ।।

वे दिन, प्रहर, मुहूर्त, घड़ी, पल कैसे होंगे, जब तुम्हारा दर्शन होगा और मन के द्वार झटपट खुल जायँगे। दर्शन देखकर मेरी तृष्णा बुझेगी एवं मैं जीवन पाऊँगा ॥ १ ॥ वह यत्न कैसा होगा, कौन-सा उपाय सहायक होगा, कैसी सेवा परवाण होगी, जिससे (गुरु) नानक का मान-अभिमान नष्ट होकर सन्तों की संगति में जीवनोद्धार हो सकेगा ॥ २ ॥ ३ ॥ ५ ॥

॥ केदारा महला ५ ॥ हरि हरि हरि गुन गावहु। करहु क्रिपा गोपाल गोबिदे अपना नामु जपावहु ॥ रहाउ ॥ काढि लीए प्रभ आन बिखै ते साध संगि मनु लावहु। भ्रमु भउ मोहु कटिओ गुर बचनी अपना दरसु दिखावहु ॥ १ ॥ सभ की रेन होइ मनु मेरा अहंबुधि तजावहु। अपनी भगति देहि दइआला वडभागी नानक हरि पावहु ॥ २ ॥ ४ ॥ ६ ॥

हे साधो ! हरि के गुण गाओ। उसकी (वाहिगुरु की— गोपाल, गोविंद की) कृपा होगी तो वह अपना नाम जपाएगा ॥ रहाउ ॥ प्रभु ने हमें अन्य विषय-विकारों से हटा लिया है, अब सन्तों की संगति में मन लगाओ। गुरु के उपदेश से भ्रम, भय आदि दूर हो गए हैं, हे प्रभु, अब अपना दर्शन दो ॥ १ ॥ मेरा मन सबकी चरण-धूल बनकर रहे, मेरी अहम्-बुद्धि का नाश करो। हे दयालु, अपनी भक्ति प्रदान करो; गुरु नानक कहते हैं कि भाग्यशाली जीव ही परमात्मा को पाते हैं ॥२॥४॥६॥

॥ केदारा महला ५ ॥ हरि बिनु जनमु अकारथ जात। तजि गोपाल आन रंगि राचत मिथिआ पहिरत खात ॥ रहाउ ॥ धनु जोबनु संपै सुख भोगवै संगि न निबहत मात। म्रिग त्रिसना देखि रचिओ बावर द्रुम छाइआ रंगि रात ॥ १ ॥ मान मोह महा मद मोहत काम क्रोध कै खात। करु गहि लेहु दास नानक कउ प्रभ जीउ होइ सहात ॥ २ ॥ ५ ॥ ७ ॥

हे प्राणी, परमात्मा के बिना तुम्हारा जन्म निरर्थक जा रहा है। प्रभु को छोड़ अन्य रंगों में लीन रहने से तो तुम्हारा खाना-पहनना भी व्यर्थ है ॥ रहाउ ॥ धन, यौवन, संपत्ति, भोग-विलास आदि सुखद हैं, किन्तु किंचित् मात्र भी साथ नहीं देते। ये सब मृग-तृष्णा हैं और द्रुम-छाया की नाईं अस्थिर हैं ॥ १ ॥ मान, मोह, काम, क्रोधादि के गढ़े में पड़ा हूँ; दास नानक की विनती है कि हे प्रभु, अपने दास का हाथ थामकर (गढ़े से निकलने में) सहायता करो ॥ २ ॥ ५ ॥ ७ ॥

॥ केदारा महला ५ ॥ हरि बिनु कोइ न चालसि साथ।

दीनानाथ करुणापति सुआमी अनाथा के नाथ ॥ रहाउ ॥ सुत संपति बिखिआ रस भोगवत नह निबहत जम कै पाथ । नामु निधानु गाउ गुन गोबिद उधरु सागर के खात ॥ १ ॥ सरनि समरथ अकथ अगोचर हरि सिमरत दुख लाथ । नानक दीन धूरि जन बांछत मिलै लिखत धुरि माथ ॥ २ ॥ ६ ॥ ८ ॥

परमात्मा के अतिरिक्त अन्त समय कोई साथ नहीं देता । हे दीनानाथ, तुम करुणापति हो, अनाथों के नाथ हो (तुम्हीं दया करके साथ देते हो) ॥ रहाउ ॥ पुत्र, संपत्ति, विषय-विकारों के रस-भोग, सब यम के मार्ग पर छोड़ते हैं, साथ नहीं निभाते । सुखद हरि-नाम के जाप और गोविन्द के गुण-गान से संसार-सागर रूपी गढ़े से बच सकते हैं ॥ १ ॥ समर्थ प्रभु की शरण लो, उस अकथनीय, अगोचर प्रभु के स्मरण से सब दुःख दूर हो जाते हैं । (गुरु) नानकदास हरि-सेवकों की चरण-धूल माँगते हैं, शर्त यह है कि भाग्य में पहले से यह बदा होना चाहिए ॥ २ ॥ ६ ॥ ८ ॥

केदारा महला ५ घरु ५

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ बिसरत नाहि मन ते हरी । अब इह प्रीति महा प्रबल भई आन बिखै जरी ॥ रहाउ ॥ बूंद कहा तिआगि चात्रिक मीन रहत न घरी । गुन गोपाल उचारु रसना टेव एह परी ॥ १ ॥ महा नाद कुरंक मोहिओ बेधि तीखन सरी । प्रभ चरन कमल रसाल नानक गाठि बाधि धरी ॥ २ ॥ १ ॥ ९ ॥

मन से प्रभु-मूर्ति दूर नहीं होती (भुलाई नहीं जाती) । अब यह प्रीति अति उत्कट हो गई है तथा अन्य सब विषय-विकार जल गए हैं ॥ रहाउ ॥ (यह ऐसी दशा हुई है, जैसे) चातक स्वाति-बूंद को नहीं त्याग सकता और मछली जल के बिना घड़ी भर भी नहीं रह पाती । अब तो जिह्वा को प्रभु के गुण गाने की टेव पड़ गई है ॥ १ ॥ महा-संगीत के स्वर से मृग मोहित होता है तो तीरों से बिंधता है; यहाँ गुरु नानक को प्रभु-चरण से रसात्मक ऐक्य है, जो गाँठ बाँध लिया है (अर्थात् वह ऐक्य अब विलगता में नहीं बदल सकता) ॥ २ ॥ १ ॥ ९ ॥

॥ केदारा महला ५ ॥ प्रीतम बसत रिद महि खोर । भरम भीति निवारि ठाकुर गहि लेहु अपनी ओर ॥ १ ॥ रहाउ ॥

अधिक गरत संसार सागर करि दइआ चारहु धोर। संत संगि हरि चरन बोहिथ उधरते लै मोर ॥ १ ॥ गरभ कुंट महि जिनहि धारिओ नही बिखै बन महि होर। हरि सकत सरन समरथ नानक आन नही निहोर ॥ २ ॥ २ ॥ १० ॥

हे प्रियतम, मेरे हृदय में (भ्रमों के कारण) कठोरता बढ़ रही है। अतः, ऐ स्वामी, कृपा करके मेरे भ्रम-भय को दूर करो और अपनी ओर प्रवृत्त कर लो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संसार-सागर में बड़ी-बड़ी खाइयाँ हैं, कृपा करके किनारे चढ़ा दो। सन्तों के चरणों का जहाज़ देकर मेरा उद्धार करो ॥ १ ॥ गर्भ के नरक में जिसने बचाया, विषय-विकारों के सागर में भी कोई और नहीं (वही बचाएगा)। परमात्मा की शरण सबल है, समर्थ है और किसी का कोई निहोरा नहीं ॥ २ ॥ २ ॥ १० ॥

॥ केदारा महला ५ ॥ रसना राम राम बखानु। गुन गोपाल उचारु दिनु रैनि भए कलमल हान ॥ रहाउ ॥ तिआगि चलना सगल संपत कालु सिरपरि जानु। मिथन मोह दुरंत आसा झूठु सरपर मानु ॥ १ ॥ सति पुरख अकाल मूरति रिदै धारहु धिआनु। नामु निधानु लाभु नानक बसतु इह परवानु ॥ २ ॥ ३ ॥ ११ ॥

ऐ मेरी जिह्वा, तुम राम-राम का उच्चारण करो। रात-दिन प्रभु का गुण-गान करने से विषयों की मलिनता दूर हो जाती है ॥ रहाउ ॥ सब सांसारिक सम्पत्ति को यहीं त्याग जाना है, मृत्यु हर समय सिर पर विद्यमान है। झूठे मोह और बुरे अन्त वाली तृष्णा को निश्चय ही झूठा मानो ॥ १ ॥ हृदय में सत्पुरुष, अकाल ब्रह्म की मूर्ति का ध्यान धारण करो। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम समस्त निधियों का मूल है, इसी वस्तु का लाभ उठाओ, यही परम स्वीकार्य है ॥ २ ॥ ३ ॥ ११ ॥

॥ केदारा महला ५ ॥ हरि के नाम को आधारु। कलि कलेस न कछु बिआपै संत संगि बिउहारु ॥ रहाउ ॥ करि अनुग्रहु आपि राखिओ नह उपजतउ बेकारु। जिसु परापति होइ सिमरै तिसु दहत नह संसारु ॥ १ ॥ सुख मंगल आनंद हरि हरि प्रभ चरन अंम्रित सारु। नानक दास सरनागती तेरे संतना की छारु ॥ २ ॥ ४ ॥ १२ ॥

मुझे केवल हरि-नाम का ही आश्रय है। सन्त की संगति में विहार

करनेवाले को मृत्यु तक का दुःख भी व्याप्त नहीं होता ॥ रहाउ ॥ जिस पर स्वयं अनुग्रह करके प्रभु रक्षक होता है, उसे कोई विकार नहीं सालता। जिसे प्रभु का स्मरण प्राप्त है, उसे संसार की जलन कष्ट नहीं पहुँचाती ॥ १ ॥ परमात्मा सुख एवं मंगलदायक है, उसके चरणों को अमृत-समान मानो। गुरु नानक कहते हैं कि वे तुम्हारे शरणागत हैं, सन्तों की चरण-धूल हैं (विनम्रता) ॥ २ ॥ ४ ॥ १२ ॥

॥ केदारा महला ५ ॥ हरि के नाम बिनु ध्रिगु स्रोत। जीवन रूप बिसारि जीवहि तिह कत जीवन होत ॥ रहाउ ॥ खात पीत अनेक बिंजन जैसे भार बाहक खोत। आठ पहर महा स्रमु पाइआ जैसे बिरख जंती जोत ॥ १ ॥ तजि गुोपाल जि आन लागे से बहु प्रकारी रोत। कर जोरि नानक दानु मागै हरि रखउ कंठि परोत ॥ २ ॥ ५ ॥ १३ ॥

हरिनाम-श्रवण के बिना कानों को धिक्कार है। जीवन-रूप हरि को विस्मृत करके जो लोग जीते हैं, उनका क्या जीना है? ॥ रहाउ ॥ अनेक सुन्दर व्यंजन खाते-पीते भी वे बोझ ढोनेवाले गधे के समान हैं। आठों प्रहर कोल्हू में जुते बैल की तरह महाश्रम करते हैं (प्राप्त कुछ भी नहीं होता) ॥ १ ॥ परमात्मा को त्यागकर जो लोग अन्य विश्वासों में लीन होते हैं, वे अन्ततः बहु-विधि दुःखी होते हैं (रोते हैं)। गुरु नानक हाथ जोड़कर यह दान माँगते हैं कि हे परमात्मा, गले लगाकर रखो ॥ २ ॥ ५ ॥ १३ ॥

॥ केदारा महला ५ ॥ संतह धूरि ले मुखि मली। गुणा अचुत सदा पूरन नह दोख बिआपहि कली ॥ रहाउ ॥ गुर बचनि कारज सरब पूरन ईत ऊत न हली। प्रभ एक अनिक सरबत पूरन बिखै अगनि न जली ॥ १ ॥ गहि भुजा लीनो दासु अपनो जोति जोती रली। प्रभ चरन सरन अनाथु आइओ नानक हरि संगि चली ॥ २ ॥ ६ ॥ १४ ॥

(जिसने) सन्तों की चरण-धूल शिरोधार्य की। वह सदा पूर्ण अनश्वर ब्रह्म के गुण-गान से कलियुग के दोषों से मुक्त रहता है ॥ रहाउ ॥ गुरु के उपदेशों पर ध्यान देने से सब कार्य सम्पन्न हो जाते हैं और मन इधर-उधर नहीं डोलता। जो सबमें एक परमात्मा को ही व्याप्त समझता है, उसे विषय-विकारों की अग्नि नहीं जलाती ॥ १ ॥ हे प्रभु, अपने सेवक को भुजा थामकर सहारा दो और आत्म-ज्योति को अपनी

परम-ज्योति में मिला लो। गुरु नानक विनती करते हैं, हे दाता, मैं अनाथ तुम्हारी शरण में आया हूँ, मुझे हरि-संगति (प्रभु-दर्शन) प्रदान करो ॥ २ ॥ ६ ॥ १४ ॥

॥ केदारा महला ५ ॥ हरि के नाम की मन रुचै। कोटि सांति अनंद पूरन जलत छाती बुझै ॥ रहाउ ॥ संत मारगि चलत प्रानी पतित उधरे मुचै। रेनु जन की लगी मसतकि अनिक तीरथ सुचै ॥ १ ॥ चरन कमल धिआन भीतरि घटि घटहि सुआमी सुझै। सरनि देव अपार नानक बहुरि जमु नही लुझै ॥ २ ॥ ७ ॥ १५ ॥

मन में हरि-नाम की रुचि हो, तो करोड़ों शान्तियाँ और आनन्द हस्तामलक-सम होते हैं और हृदय की जलन बुझ जाती है ॥ रहाउ ॥ सत्संग-मार्ग पर चलनेवाले समूह पतित प्राणियों का उद्धार हुआ। सन्तों की चरण-धूल जिनके माथे चढ़ी, उन्हें अनेक तीर्थों की पावनता प्राप्त हुई ॥ १ ॥ जिनके ध्यान में नित्य प्रभु के चरण विराजते हैं, उन्हें घट-घट में (सर्व जगह) परमात्मा व्याप्त दिखता है। गुरु नानक कहते हैं कि हे स्वामी, अपनी शरण में ग्रहण करो, ताकि पुनः यमदूत तंग न कर सकें ॥ २ ॥ ७ ॥ १५ ॥

केदारा छंत महला ५

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ मिलु मेरे प्रीतम पिआरिआ ॥ रहाउ ॥ पूरि रहिआ सरबत्र मै सो पुरखु बिधाता। मारगु प्रभ का हरि कीआ संतन संगि जाता। संतन संगि जाता पुरखु बिधाता घटि घटि नदरि निहालिआ। जो सरनी आवै सरब सुख पावै तिलु नही भंनै घालिआ। हरि गुणनिधि गाए सहज सुभाए प्रेम महा रस माता। नानक दास तेरी सरणाई तू पूरन पुरखु बिधाता ॥ १ ॥ हरि प्रेम भगति जन बेधिआ से आन कत जाही। मीनु बिछोहा ना सहै जल बिनु मरि पाही। हरि बिनु किउ रहीऐ दूख किनि सहीऐ चात्रिक बूंद पिआसिआ। कब रैनि बिहावै चकवी सुखु पावै सूरज किरणि प्रगासिआ। हरि दरसि मनु लागा दिनसु सभागा अनदिनु हरि गुण गाही। नानक दासु कहै बेनंती कत हरि

बिनु प्राण टिकाही ।। २ ।। सास बिना जिउ देहुरी कत सोभा पावै । दरस बिहूना साध जनु खिनु टिकणु न आवै । हरि बिनु जो रहणा नरकु सो सहणा चरन कमल मनु बेधिआ । हरि रसिक बैरागी नामि लिव लागी कतहु न जाइ निखेधिआ । हरि सिउ जाइ मिलणा साध संगि रहणा सो सुखु अंकि न मावै । होहु क्रिपाल नानक के सुआमी हरि चरनह संगि समावै ।। ३ ।। खोजत खोजत प्रभ मिले हरि करुणा धारे । निरगुणु नीचु अनाथु मै नही दोख बीचारे । नही दोख बीचारे पूरन सुख सारे पावन बिरदु बखानिआ । भगति वछलु सुनि अंचलुो गहिआ घटि घटि पूर समानिआ । सुख सागरो पाइआ सहज सुभाइआ जनम मरन दुख हारे । करु गहि लीने नानक दास अपने राम नाम उरि हारे ।। ४ ।। १ ।।

हे मेरे प्रिय साजन, कृपा कर आन मिलो ।। रहाउ ।। जो सर्वत्र व्याप्त है, वही सबका रचयिता कर्ता-पुरुष है । उस तक (प्रभु तक) पहुँचने का मार्ग हरि के सन्तों की संगति में ज्ञात होता है । उस कर्ता-पुरुष की जानकारी सन्तों की संगति में ही मिलती है (और फिर) दृष्टि भरकर जीव उसे सबमें ही देख सकता है । जो उसकी शरण लेता है, वह समस्त सुखों को उपलब्ध करता है; उसकी दिशा में किंचित भी प्रगति (थोड़ा भी प्रभु-नाम जपा) वृथा नहीं जाता । जो व्यक्ति सहज भाव से हरि का गुण गाता है, वह प्रेम के मधुर-रस में लीन रहता है । गुरु नानक भी, हे पूर्णकर्ता पुरुष, तुम्हारी ही शरण में हैं (दया करना) ।। १ ।। जो व्यक्ति हरि की प्रेमा-भक्ति (मधुरा-भक्ति) से बिंधा है, वह और कहाँ जा सकता है । मछली जैसे पानी के बिना मर जाती है, वियोग नहीं सह सकती; वैसे ही वह भी हरि के बिना क्योंकर रहेगा, चातक प्यासा मर जाता है (दूसरा जल ग्रहण नहीं करता अर्थात् जीव रूपी पपीहे को प्रभु-दर्शन-बूंद की प्यास है) । यह अज्ञान की रात्रि कब समाप्त होगी और कब चकवा-चकवी को मिलन-सुख मिलेगा—(इसके लिए) ज्ञान रूपी सूर्य की किरणों को प्रकाशित होना है । हरि-दर्शनों की आकांक्षा में मन रमा है, भाग्यशाली दिन है यह, जबकि रात-दिन मन में हरि-गुण-गान हो रहा है । गुरु नानक निवेदन करते हैं कि हरिगुण-गान के बिना प्राण क्योंकर बना रहेगा ! ।। २ ।। जिस प्रकार श्वास के बिना शरीर कोई शोभा नहीं पाता, प्रभु-दर्शनों के बिना साधु-जन क्षण भर भी टिक नहीं पाते । मन परमात्मा के चरण-कमल में बींधा है (भँवर के समान रमा है), ऐसे में परमात्मा के बिना रहना

नरक भोगने के समान है। परमात्मा रसिक भी है, निर्लिप्त भी, उसकी निन्दा असम्भव है। प्रभु से मिल लेना और साधु-संगति प्राप्त करने का परमसुख हृदय में समा नहीं पाता। अतः, ऐ गुरु नानक के स्वामी, हे परमात्मा, कृपापूर्वक मुझे सन्तों का सम्पर्क प्रदान करो ॥ ३ ॥ खोजते-खोजते करुणा-निधि परमात्मा के दर्शन हो गए हैं; मैं गुणहीन, नीच और अनाथ हूँ, उसका (परमात्मा का) क्या दोष है? परमात्मा का कोई दोष नहीं, उसने सब सुख पहुँचाए हैं, उसकी कीर्ति पवित्र और निष्कलंक है। हे भक्त-वत्सल, मैंने तुम्हारा दामन थामा है और तुम घट-घट में एक-समान व्याप्त हो, मेरी विनती सुनो। अब मैंने सुख-सागर परमात्मा को सहज स्वाभाविक ही प्राप्त कर लिया है, मेरे जन्म-मरण के दुःख कट गए हैं। गुरु नानक कहते हैं कि हे प्रभु, अपने दास को हाथ पकड़कर संरक्षण दो और हरि-नाम का हार उसके गले में डाल दो (अर्थात् उसे हरि-नाम जपने का सामर्थ्य प्रदान करो) ॥ ४ ॥ १ ॥

रागु केदारा बाणी कबीर जीउ की

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ उसतति निंदा दोऊ बिबरजित तजहु मानु अभिमाना। लोहा कंचनु सम करि जानहि ते मूरति भगवाना ॥ १ ॥ तेरा जनु एकु आधु कोई। कामु क्रोधु लोभु मोहु बिबरजित हरि पदु चीन्है सोई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रज गुण तम गुण सत गुण कहीऐ इह तेरी सभ माइआ। चउथे पद कउ जो नरु चीन्है तिन्ह ही परम पदु पाइआ ॥ २ ॥ तीरथ बरत नेम सुचि संजम सदा रहै निहकामा। त्रिसना अरु माइआ भ्रमु चूका चितवत आतम रामा ॥ ३ ॥ जिह मंदरि दीपकु परगासिआ अंधकारु तह नासा। निरभउ पूरि रहे भ्रमु भागा कहि कबीर जन दासा ॥ ४ ॥ १ ॥

स्तुति और निन्दा दोनों त्याज्य हैं, (इन्हें छोड़ो) और मान-अभिमान का भी त्याग कर दो। जो लोहे और कंचन को एक-समान मानता है, वह प्रभु की मूर्ति के समान है अर्थात् स्तुति-निन्दा, मान-अभिमान, धन-निर्धनता आदि से ऊपर उठ आनेवाला जीव प्रभु का ही रूप हो जाता है ॥ १ ॥ हे परमात्मा, (इस कसौटी पर पूरा उतरने वाला) कोई बिरला ही तुम्हारा योग्य सेवक होता है। जो काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि को त्याग देता है, वही हरि-पद को पहचानता

है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु, जिसे रजोगुण, तमोगुण और सतोगुण कहा जाता है, वह सब तुम्हारी ही माया (लीला) है। जो मनुष्य इन तीनों गुणों से अतीत चौथे पद तक पहुँचता है, वही परम-पद को प्राप्त होता है ॥ २ ॥ (वह मनुष्य) तीर्थ, व्रत, नियम, शुचि, संयम से जीवन जीता और इनके फल से निष्काम रहता है। उसकी तृष्णा और माया का भ्रम चुक जाता है, वह वाहिगुरु को पहचान लेता है ॥ ३ ॥ जिस घर में दीपक जलता है, वहाँ अँधेरा दूर हो जाता है—इसी प्रकार जिस मनुष्य के भीतर परमात्मा की ज्योति आलोकित हो, उसके सब भ्रम दूर हो जाते हैं, ऐसा कबीरजी कहते हैं ॥ ४ ॥ १ ॥

किनही बनजिआ कांसी तांबा किन ही लउग सुपारी। संतहु बनजिआ नामु गोबिद का ऐसी खेप हमारी ॥ १ ॥ हरि के नाम के बिआपारी। हीरा हाथि चड़िआ निरमोलकु छूटि गई संसारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साचे लाए तउ सच लागे साचे के बिउहारी। साची बसतु के भार चलाए पहुचे जाइ भंडारी ॥ २ ॥ आपहि रतन जवाहर मानिक आपै है पासारी। आपै दहदिस आप चलावै निहचलु है बिआपारी ॥ ३ ॥ मनु करि बैलु सुरति करि पैडा गिआन गोनि भरि डारी। कहतु कबीरु सुनहु रे संतहु निबही खेप हमारी ॥ ४ ॥ २ ॥

कोई काँसे-ताँबे का व्यापार करता है, कोई लौंग-सुपारी का सौदा उठाता है। सन्तजन हरि-नाम का व्यापार करते हैं, हमारा सौदा भी ऐसा ही है ॥ १ ॥ हम तो हरि-नाम के व्यापारी हैं। जबसे यह अमूल्य हीरा (प्रभु-नाम) हाथ लगा है, हमारी सांसारिक वृत्तियाँ छूट गई हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सच्चा परमात्मा जब सच्चे नाम से जोड़ता है, तभी कोई सत्य का व्यापारी बन पाता है। वह सत्य का सौदा लादता और अन्ततः सत्य के ही भण्डार में (ख़ज़ाने में) जा मिलता है ॥ २ ॥ परमात्मा स्वयं ही मूल्यवान् रत्न, जवाहर, माणिक्य-मोती है और वह स्वयं ही सबका जौहरी भी है। वही दसों दिशाओं में हरि-नाम रूपी रत्नों का व्यापार चलाता है और स्वयं निश्चल इस व्यापार में मग्न रहता है ॥ ३ ॥ हमने मन रूपी बैल को ज्ञान से भरी गठरी लादकर प्रभु-प्रेम के मार्ग पर चला दिया है। कबीरजी कहते हैं कि ऐ सज्जनो, इसीलिए हमारा सौदा निभ जायगा (पूरा उतरेगा) ॥ ४ ॥ २ ॥

री कलवारि गवारि मूढ मति उलटो पवनु फिरावउ। मनु मतवार मेर सर भाठी अंम्रित धार चुआवउ ॥ १ ॥

बोलहु भईआ राम की दुहाई। पीवहु संत सदा मति दुरलभ सहजे पिआस बुझाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भै बिचि भाउ भाइ कोऊ बूझै हरि रसु पावै भाई। जेते घट अंम्रितु सभ ही महि भावै तिसहि पीआई ॥ २ ॥ नगरी एकै नउ दरवाजे धावतु बरजि रहाई। त्रिकुटी छूटै दसवा दरु खूल्है ता मनु खीवा भाई ॥ ३ ॥ अभै पद पूरि ताप तह नासे कहि कबीर बीचारी। उबट चलंते इहु मदु पाइआ जैसे खोंद खुमारी ॥ ४ ॥ ३ ॥

हे अनेक कलों वाली (चंचल) बुद्धि, तुम मूढ़ और गँवार हो, पहले वासना रूपी पवन को संसार की ओर से हटाओ। फिर मन को दशम द्वार की भट्ठी में से रिसते अमृत का पान करवाओ ॥ १ ॥ हे भाई, राम की दुहाई है, सन्तजन नित्य सहज भाव से इसी अमृत का पान करते हैं और आशाओं-तृष्णाओं की समूची प्यास बुझा लेते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु के भय में रहकर ही कोई इस प्रेम-भाव को समझता और हरि-रस प्राप्त करता है। सबके मन में अमृत विद्यमान है, जिसे अनुकूल समझता है (परमात्मा) उसी के पी सकने का सामर्थ्य देता है ॥ २ ॥ शरीर रूपी नगरी के नौ द्वारों में चंचलता-पूर्वक दौड़ते हुए मन को संयत करो। तीनों गुणों की उलझन से निकलो, दसवाँ द्वार खोलो, तब यह मन शब्दामृत-पान करके मस्त होगा ॥ ३ ॥ कबीरजी कहते हैं कि अभय-पद की पूर्णता से त्रैताप आधि, व्याधि, उपाधि (दैहिक, दैविक, भौतिक) का नाश होता है। माया के उलटे मार्ग पर चलते हुए यह खोंद-जैसी मदिरता मिली है। (खोंदे डालना पशु के लिए प्रयुक्त होता है। पशु को बैठे-बिठाए पौष्टिक भोजन खिलाकर जब पोषित किया जाता है, तो वह मदमाता-सा हो जाता है —ऐसी ही मस्ती मन को लब्ध होती है।) ॥४॥३॥

काम क्रोध त्रिसना के लीने गति नही एकै जानी। फूटी आखै कछू न सूझै बूडि मूए बिनु पानी ॥ १ ॥ चलत कत टेढे टेढे टेढे। असति चरम बिसटा के मूंदे दुरगंध ही के बेढे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ राम न जपहु कवन भ्रम भूले तुम ते कालु न दूरे। अनिक जतन करि इह तनु राखहु रहै अवसथा पूरे ॥ २ ॥ आपन कीआ कछू न होवै किआ को करै परानी। जा तिसु भावै सतिगुरु भेटै एको नामु बखानी ॥ ३ ॥ बलूआ के घरूआ महि बसते फुलवत देह अइआने। कहु कबीर जिह रामु न चेतिओ बूडे बहुतु सिआने ॥ ४ ॥ ४ ॥

जन-मानस काम-क्रोध-तृष्णा आदि में ग्रसित रहता है, प्रभु की गति को नहीं समझता। उनकी आँखें फूटी हैं (अज्ञानांध हैं), उन्हें कुछ सुझाई नहीं पड़ता, वे पानी के बिना ही डूब मरते हैं अर्थात् अनाश्रित रहते हैं ॥ १ ॥ वे सदैव विकृत चाल चलते हैं, अस्थि-चर्म और विष्ठा से ढके हुए वे दुर्गन्ध में लिपटे हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ (पुनः कबीर ऐसे कुचालियों से सम्बोधित करते हैं—) तुम प्रभु का नाम नहीं जपते, जाने किस भ्रम में भटक रहे हो; तुम नहीं जानते कि मृत्यु तुमसे दूर नहीं है। अनेक यत्न-पूर्वक शरीर का पोषण करते हो, किन्तु आयु चुक जाने पर इसका क्या होगा ? ॥ २ ॥ हे प्राणी, अपना किया कुछ नहीं होता, तुम क्या करते हो ? यदि प्रभु को रुचे तो सतिगुरु से तुम्हारी भेंट होगी और वही तुम्हें हरिनाम-रहस्य का ज्ञान देगा ॥३॥ बालू के घर में रहकर यह मूर्ख शरीर का अभिमान करता है ! कबीरजी कहते हैं कि जिसने कभी हरिनाम नहीं जपा, वह कितना भी सयाना और ज्ञानवान् बने, उसका अन्त खेदजनक ही होगा ॥ ४ ॥ ४ ॥

टेढी पाग टेढे चले लागे बीरे खान। भाउ भगति सिउ काजु न कछूऐ मेरो कामु दीवान ॥ १ ॥ रामु बिसारिओ है अभिमानि। कनिक कामनी महा सुंदरी पेखि पेखि सचु मानि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ लालच झूठ बिकार महा मद इंह बिधि अउध बिहानि। कहि कबीर अंत की बेर आइ लागो कालु निदानि ॥ २ ॥ ५ ॥

(यौवनावस्था में) मनुष्य टेढ़ी पगड़ी पहनकर झूमते चलते और पान-बीड़ा खाने लगते हैं। भाव-भक्ति से उनका कोई वास्ता नहीं रहता, वे सोचते हैं कि उनका कार्य तो शासन करना है ॥ १ ॥ वे अभिमान में राम-नाम को विस्मृत कर देते हैं और कनक-कामिनी एवं सुन्दर नारियों को देख-देखकर ही अपना लक्ष्य सिद्ध मानते हैं ॥१॥रहाउ॥ लोभ, मिथ्या की विकृत प्रवृत्तियों एवं अभिमान में ही उनकी समूची आयु बीत जाती है। कबीरजी कहते हैं कि अन्ततः मृत्यु आकर उन्हें घेर लेती है (वे अध्यात्म की साधना में पूर्णतः असफल रह जाते हैं।) ॥ २ ॥ ५ ॥

चारि दिन अपनी नउबति चले बजाइ। इतनकु खटीआ गठीआ मटीआ संगि न कछु लै जाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दिहरी बैठी मिहरी रोवै दुआरै लउ संग माइ। मरहट लगि सभु लोगु कुटंबु मिलि हंसु इकेला जाइ ॥ १ ॥ वै सुत वै बित वै

पुर पाटन बहुरि न देखै आइ। कहतु कबीरु राम की न सिमरहु जनमु अकारथ जाइ ॥ २ ॥ ६ ॥

चार दिन वे लोग अपना डंका बजाकर चल देते हैं और सैकड़ों यत्नों से एकत्रित एवं गठरियों (धरती में छिपाकर रखी दौलत) का अंश भी साथ नहीं जाता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बाद में दहलीज़ में बैठकर पत्नी बिलखती है और द्वार के संग लगी माँ रोती रह जाती है। कुटुम्ब के अन्य नातेदार श्मशान भूमि तक साथ देते हैं, आगे तो समूची यात्रा हंस (आत्मा) को अकेले ही करनी होती है ॥ १ ॥ जीव को अपने पुत्र, वह धन, वह नगर और वे गलियाँ पुनः देखने को नहीं मिलतीं। कबीरजी कहते हैं कि यदि राम-नाम का स्मरण नहीं किया तो समूचा जीवन व्यर्थ है ॥ २ ॥ ६ ॥

रागु केदारा बाणी रविदास जीउ की

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ खटु करम कुल संजुगतु है हरि भगति हिरदै नाहि। चरनारबिंद न कथा भावै सुपच तुलि समानि ॥ १ ॥ रे चित चेति चेत अचेत। काहे न बालमीकहि देख। किसु जाति ते किह पदहि अमरिओ राम भगति बिसेख ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सुआन सत्रु अजातु सभ ते क्रिस्न लावै हेतु। लोगु बपुरा किआ सराहै तीनि लोक प्रवेस ॥ २ ॥ अजामलु पिंगुला लुभतु कुंचरु गए हरि कै पास। ऐसे दुरमति निसतरे तू किउ न तरहि रविदास ॥ ३ ॥ १ ॥

यदि कोई षट्कर्म करनेवाला व्यक्ति हो, उच्च कुल से संयुक्त भी हो, किन्तु उसके हृदय में हरि-भक्ति न हो, उसे हरि-चरणों की कथा न रुचती हो, तो वह चाण्डाल के समान त्याज्य है ॥ १ ॥ हे मेरे मन, तू क्यों गँवारपन छोड़कर होश में नहीं आता, क्यों वाल्मीकि-सरीखे ऋषि के संदर्भ को नहीं देखता— जो विशेष रामभक्ति के कारण ही गर्हित-विशेष जाति से किस अमर पद को पाने में सफल रहा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वह कुत्ते मारने वाला भंगी, नीची जाति का था, किन्तु उसे परमात्मा (कृष्ण) से प्यार था। परिणामतः बेचारे लोग उसकी क्या प्रशंसा करेंगे, उसकी स्तुति तो तीनों लोकों में प्रसारित है ॥ २ ॥ अजामिल (वेश्या-प्रेमी ब्राह्मण), पिंगुला (वेश्या), लुब्धक (शिकारी), कुंचर (अभिशप्त गन्धर्व), सब हरि की शरण पा गए। सन्त रविदास कहते हैं कि जब ऐसे दुष्कृत्य

करनेवाले दुर्मति जीव मुक्त हो गए, तो प्रभु-नाम जपनेवाला कोई भी अन्य जीव क्यों नहीं तर जायगा ? ।। ३ ।। १ ।।

रागु भैरउ महला १ घरु १ चउपदे

१ ओं सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ।।

तुझ ते बाहरि किछू न होइ । तू करि करि देखहि जाणहि सोइ ।। १ ।। किआ कहीऐ किछु कही न जाइ । जो किछु अहै सभ तेरी रजाइ ।। १ ।। रहाउ ।। जो किछु करणा सु तेरै पासि । किसु आगै कीचै अरदासि ।। २ ।। आखणु सुनणा तेरी बाणी । तू आपे जाणहि सरब विडाणी ।। ३ ।। करे कराए जाणै आपि । नानक देखै थापि उथापि ।। ४ ।। १ ।।

हे परमात्मा, तुम्हारी इच्छा से बाहर कुछ नहीं होता । तुम स्वयं सबकी रचना करते हो, उन्हें बनाकर देखते और उनके कर्मों का आलेख रखते हो ।। १ ।। क्या कहें, (तुम्हारे रहस्यों के सम्बन्ध में) कुछ कहा नहीं जाता । जो कुछ अस्तित्व में है, वह सब तुम्हारी ही इच्छा से है ।। १ ।। रहाउ ।। जो भी प्रार्थना हमें करनी है, वह तुम्हारे ही सम्मुख करनी है, अन्य किसके आगे विनती की जा सकती है ? ।।२।। जो कुछ भी हमें बोलना या सुनना है, वह तुम्हारी ही वाणी है । हे सर्वलीला-धारी, तुम स्वयं सब कुछ जानते हो ।। ३ ।। तुम स्वयं सब कुछ करते, कराते और ध्यान रखते हो । गुरु नानक कहते हैं कि तुम स्वयं सबको बनाते-मिटाते हो और उनका अपेक्षित पोषण भी करते हो ।। ४ ।। १ ।।

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। रागु भैरउ महला १ घरु २ ।।

गुर कै सबदि तरे मुनि केते इंद्रादिक ब्रहमादि तरे । सनक सनंदन तपसी जन केते गुरपरसादी पारि परे ।। १ ।। भवजलु बिनु सबदै किउ तरीऐ । नाम बिना जगु रोगि बिआपिआ दुबिधा डुबि डुबि मरीऐ ।। १ ।। रहाउ ।। गुरु देवा

गुर अलख अभेवा त्रिभवण सोझी गुर की सेवा। आपे दाति करी गुरि दातै पाइआ अलख अभेवा ॥ २ ॥ मनु राजा मनु मन ते मानिआ मनसा मनहि समाई। मनु जोगी मनु बिनसि बिओगी मनु समझै गुण गाई ॥ ३ ॥ गुर ते मनु मारिआ सबदु वीचारिआ ते विरले संसारा। नानक साहिबु भरिपुरि लीणा साच सबदि निसतारा ॥ ४ ॥ १ ॥ २ ॥

अनेक ऋषि-मुनि एवं इन्द्र-ब्रह्मादि देवता, सब गुरु के उपदेश से तिर गए। सनक-सनन्दन-सरीखे तपस्वी जन गुरु-कृपा से ही मुक्त हो पाए हैं ॥ १ ॥ बिना गुरु-उपदेश के संसार-सागर को क्योंकर पार किया जा सकता है; प्रभु-नाम के बिना सारा संसार रुग्ण है, द्वैत-भाव में भटक कर मर रहा है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु दैवी शक्ति है, गुरु अदृश्य है तथा उसका भेद नहीं जाना जा सकता। गुरु की सेवा करने से तीनों लोकों का ज्ञान उपलब्ध हो जाता है। अदृश्य, रहस्यमय प्रभु को गुरु की दया से ही पाया है ॥ २ ॥ मन ही राजा है (रजोगुण प्रधानता), मन ही मन में प्रभु-प्रेम उपजाता और मन में परमात्मा को समोए रहता है। मन योगी के समान हरि से जुड़ा है और उससे बिछुड़कर नष्ट हो जाता है। यदि मन सूझवान् हो, तो वही प्रभु का गुण-गान भी करता है ॥ ३ ॥ ऐसे लोग संसार में विरले ही होते हैं, जो गुरु द्वारा मन को मारने तथा गुरु-उपदेशों को विचारने की दृष्टि प्राप्त करते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा ने ऐसा संदर्भ प्रस्तुत किया है कि सच्चे शब्द से व्यक्ति को मोक्ष प्राप्त हो जाता है ॥ ४ ॥ १ ॥ २ ॥

॥ भैरउ महला १ ॥ नैनी द्रिसटि नही तनु हीना जरि जीतिआ सिरि कालो। रूपु रंगु रहसु नही साचा किउ छोडै जम जालो ॥ १ ॥ प्राणी हरि जपि जनमु गइओ। साच सबद बिनु कबहु न छूटसि बिरथा जनमु भइओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तन महि कामु क्रोधु हउ ममता कठिन पीर अति भारी। गुरमुखि राम जपहु रसु रसना इन बिधि तरु तू तारी ॥ २ ॥ बहरे करन अकलि भई होछी सबद सहजु नही बूझिआ। जनमु पदारथु मनमुखि हारिआ बिनु गुर अंधु न सूझिआ ॥ ३ ॥ रहै उदासु आस निरासा सहज धिआनि बैरागी। प्रणवति नानक गुरमुखि छूटसि राम नामि लिव लागी ॥ ४ ॥ २ ॥ ३ ॥

आँखों में ज्योति नहीं, शरीर निर्बल हो गया है और काले सिर पर बुढ़ापे का प्रभाव हुआ है अर्थात् बाल सफ़ेद हो गए हैं। रूप, रंग और

आनन्द भी मिथ्या होने के कारण शेष नहीं रहे; अतः यम का जाल इसे क्योंकर छोड़ सकता है (अर्थात् मृत्यु आने ही वाली है) ॥ १ ॥ हे प्राणी, मनुष्य-जन्म व्यर्थ जा रहा है, परमात्मा का भजन कर लो। सच्चे शब्द के बिना मुक्ति सम्भव नहीं, जन्म व्यर्थ हो रहा है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ शरीर में काम, क्रोध, अभिमान और ममत्व कठोर कष्ट पहुँचाते हैं। गुरु के द्वारा उपदेश पाकर यदि तुम्हारी जिह्वा नित्य हरि-नाम का जाप करे, तो इस विधि से तुम संसार-सागर से पार हो सकते हो ॥ २ ॥ कान बहरे हो गए हैं, मति मन्द पड़ गई है, शब्द का ज्ञान प्राप्त नहीं हुआ; स्वेच्छाचारी (मनमुख) जीव गुरु के उपदेशों से ज्ञान पाए बिना इसी प्रकार वृथा जन्म गँवा देते हैं ॥ ३ ॥ जो आशा में निराश (निर्लिप्त) रहते और माया से विमुख होकर स्थिर समाधि में तल्लीन होते हैं, गुरु नानक का उनके लिए मत है कि वे गुरु के माध्यम से परमात्मा के नाम की प्रीति लगाकर मुक्ति को प्राप्त होते हैं ॥ ४ ॥ २ ॥ ३ ॥

॥ भैरउ महला १ ॥ भूंडी चाल चरण कर खिसरे तुचा देह कुमलानी। नेत्री धुंधि करन भए बहरे मनमुखि नामु न जानी ॥ १ ॥ अंधुले किआ पाइआ जगि आइ। रामु रिदै नही गुर की सेवा चाले मूलु गवाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिहवा रंगि नही हरि राती जब बोलै तब फीके। संत जना की निंदा विआपसि पसू भए कदे होहि न नीके ॥ २ ॥ अंम्रित का रसु विरली पाइआ सतिगुर मेलि मिलाए। जब लगु सबद भेदु नही आइआ तब लगु कालु संताए ॥ ३ ॥ अन को दरु घरु कबहू न जानसि एको दरु सचिआरा। गुरपरसादि परम पदु पाइआ नानकु कहै विचारा ॥ ४ ॥ ३ ॥ ४ ॥

चाल भद्दी हो गई है, हाथ-पाँव शिथिल पड़ गए हैं, शरीर की चमड़ी भी ढीली पड़ी है, आँखों की ज्योति मन्द हुई है, कान बहरे हो गए हैं, किन्तु मनमुख जीव ने फिर भी हरि-नाम को नहीं पहचाना ॥ १ ॥ ऐसे अन्धे जीव ने ससार में आकर क्या पाया? गुरु की सेवा नहीं की, राम का भजन नहीं कमाया, मूल (जो सम्पत्ति बची थी) भी गँवाकर यहाँ से चलते बने (अर्थात् मनमुखी जीव सदैव ज्ञानांध रहते हैं, कभी मोक्ष नहीं पाते) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उनकी जिह्वा परमात्मा के प्रेम में नहीं पगी, जब बोलते है तभी फीका बोलते हैं। सन्तजनों की निन्दा करते हैं, वे पशु हैं, कभी अनुकूल नहीं हो पाते ॥ २ ॥ हरि-नामामृत-रस किसी विरले जीव को ही सतिगुरु से भेंट होने पर प्राप्त होता है। जीव जब तक शब्द के रहस्य को नहीं जान लेता, तब तक काल उसे सताया करता है

अर्थात् वह काल की शक्तियों से पीड़ित रहता है ॥ ३ ॥ जो अन्य किसी द्वार से परिचित नहीं, केवल सच्चे परमात्मा के द्वार पर ही नमित है, गुरु नानक का विश्वास है कि वह गुरु की कृपा से परमपद को प्राप्त होता है ॥ ४ ॥ ३ ॥ ४ ॥

॥ भैरउ महला १ ॥ सगली रैणि सोवत गलि फाही दिनसु जंजालि गवाइआ । खिनु पलु घड़ी नही प्रभु जानिआ जिनि इहु जगतु उपाइआ ॥ १ ॥ मन रे किउ छूटसि दुखु भारी । किआ ले आवसि किआ ले जावसि राम जपहु गुणकारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऊंधउ कवलु मनमुख मति होछी मनि अंधै सिरि धंधा । कालु बिकालु सदा सिरि तेरै बिनु नावै गलि फंधा ॥२॥ डगरी चाल नेत्र फुनि अधुले सबद सुरति नही भाई । सासत्र बेद त्रै गुण है माइआ अंधुलउ धंधु कमाई ॥ ३ ॥ खोइओ मूलु लाभु कह पावसि दुरमति गिआन विहूणे । सबदु बीचारि राम रसु चाखिआ नानक साचि पतीणे ॥ ४ ॥ ४ ॥ ५ ॥

सारी रात सोकर तथा सारा दिन सांसारिक फन्दों में पड़कर बिता दिया; क्षण, पल, घड़ी भर के लिए भी उस परमात्मा का नाम नहीं लिया, जिसने इस समूचे जगत की रचना की है ॥ १ ॥ हे मन, इस प्रकार संसार के इन भारी दुःखों से क्योंकर छुटकारा हो सकेगा ! क्या लेकर आए हो, क्या ले जाओगे ? राम का नाम जपो, उसी में लाभ है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनमुख जीव का हृदय-कमल औंधा है, बुद्धि ओछी है और मन अन्धा है, इसलिए उसके सिर पर सांसारिक धन्धों का बोझ बना रहता है। वह सदा जन्म-मरण के चक्र में रहता है, हरि-नाम के बिना गले में फन्दा पड़ा ही रहता है ॥ २ ॥ अस्थिर चाल है, नेत्र भी अन्धे हैं, गुरु-शब्द का ज्ञान नहीं सूझता। (शास्त्रों-वेदों में विश्वास करके चलता है, किन्तु उसे नहीं मालूम कि) शास्त्र-वेद तो त्रिगुणमयी मायायुक्त हैं, वह उनका अन्धानुसरण करता है ॥ ३ ॥ मन्द-मति एवं ज्ञान-विहीन होने के कारण वह लाभ तो क्या कमाता, मूल भी गँवा देता है। (इसके विपरीत) गुरु नानक कहते हैं कि जिन्होंने शब्द को पहचाना और हरिनाम-रस का पान किया, वे सत्य को साक्षात् करने में सफल हो गए ॥ ४ ॥ ४ ॥ ५ ॥

॥ भैरउ महला १ ॥ गुर कै संगि रहै दिन राती रामु रसनि रंगि राता । अवरु न जाणसि सबदु पछाणसि अंतरि जाणि पछाता ॥ १ ॥ सो जनु ऐसा मै मनि भावै । आपु

मारि अपरंपरि राता गुर की कार कमावै ।। १ ।। रहाउ ।। अंतरि बाहरि पुरखु निरंजनु आदि पुरख आदेसो । घट घट अंतरि सरब निरंतरि रवि रहिआ सचु वेसो ।। २ ।। साचि रते सचु अंम्रितु जिहवा मिथिआ मैलु न राई । निरमल नामु अंम्रित रसु चाखिआ सबदि रते पति पाई ।। ३ ।। गुणी गुणी मिलि लाहा पावसि गुरमुखि नामि वडाई । सगले दूख मिटहि गुर सेवा नानक नामु सखाई ।। ४ ।। ५ ।। ६ ।।

जो दिन-रात गुरु के सम्पर्क में रहते हैं और जिनकी जिह्वा राम-रस में पगी रहती है, वे अन्य सबको त्यागकर शब्द की पहचान करते और अन्तर्ज्ञान के रहस्य को समझते हैं ।। १ ।। ऐसे जन मेरे मन को बहुत रुचते हैं । वे अहम्-भाव का त्याग कर अपार प्रभु में रमते और गुरु के उपदेश को कमाते हैं ।। १ ।। रहाउ ।। माया-रहित प्रभु अन्तर-बाहर सब जगह रम रहा है, उसी आदिपुरुष को प्रणाम है । वह अपने सच्चे वेश में घट-घट में विराजता है, अतः सर्वव्यापक है ।। २ ।। सच्चे के रंग में पगे जीवों की जिह्वा हरिनामामृत का पान करती है, उसमें किंचित भी मलिनता नहीं रह जाती । उन्होंने निर्मल नामामृत चखा होता है, वे शब्द में मग्न रहते और प्रतिष्ठित बनते हैं ।। ३ ।। गुरु के बड़े नाम की महिमा के कारण गुणवान शिष्य गुणगार गुरु को मिलकर लाभ प्राप्त करता है । गुरु नानक कहते हैं कि गुरु-सेवा से उसके समस्त दुःख मिट जाते हैं, प्रभु-नाम सदा उसका सहयोगी होता है ।। ४ ।। ५ ।। ६ ।।

।। भैरउ महला १ ।। हिरदै नामु सरब धनु धारणु गुरपरसादी पाईऐ । अमर पदारथ ते किरतारथ सहज धिआनि लिव लाईऐ ।। १ ।। मन रे राम भगति चितु लाईऐ । गुरमुखि राम नामु जपि हिरदै सहज सेती घरि जाईऐ ।। १ ।। रहाउ ।। भरमु भेदु भउ कबहु न छूटसि आवत जात न जानी । बिनु हरिनाम को मुकति न पावसि डूबि मुए बिनु पानी ।। २ ।। धंधा करत सगली पति खोवसि भरमु न मिटसि गवारा । बिनु गुर सबद मुकति नही कबही अंधुले धंधु पसारा ।। ३ ।। अकुल निरंजन सिउ मनु मानिआ मन ही ते मनु मूआ । अंतरि बाहरि एको जानिआ नानक अवरु न दूआ ।। ४ ।। ६ ।। ७ ।।

गुरु की कृपा से हृदय में प्राप्त हरिनाम-धन सर्वोच्च है और सबका आश्रय है । पूर्ण शान्ति एवं सहज अवस्था में प्रभु का ध्यान करने से इस

अमर पदार्थ (नाम) की उपलब्धि होती है ॥ १ ॥ हे मन, इसलिए राम की भक्ति (परमात्मा का ध्यान) में लगो। गुरु के द्वारा सहज ही हृदय में प्रभु-नाम जपकर जीव अपने वास्तविक घर जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ (अब तक) भ्रम, भेद, भय आदि की प्रवृत्तियाँ हमसे दूर नहीं हो पाईं, जन्म-मरण के चक्र में ज्ञान की प्राप्ति नहीं हुई। प्रभु-नाम के बिना किसी को मुक्ति प्राप्त नहीं— भटकते जीव, यों ही बिना पानी डूब मरते हैं ॥ २ ॥ सांसारिक धंधों में मनुष्य अपना समूचा सम्मान खो देता है, फिर भी मूर्ख गँवार का भ्रम नहीं मिटता। वह अज्ञानांध है, सांसारिक धंधों के प्रसार में (भूल गया है कि) गुरु के बिना कभी मुक्ति प्राप्त नहीं होती ॥ ३ ॥ मनुष्य का मन जब मायातीत परमात्मा में रमता है, तब मन के द्वारा ही उसके मनोविकार दूर होते हैं, तब गुरु नानक कहते हैं कि वह बाहर-भीतर सब ओर एक परमात्मा को ही साक्षात् करता है, दूसरे का अस्तित्व उसके लिए नहीं रह जाता ॥ ४ ॥ ६ ॥ ७ ॥

॥ भैरउ महला १ ॥ जगन होम पुंन तप पूजा देह दुखी नित दूख सहै। राम नाम बिनु मुकति न पावसि मुकति नामि गुरमुखि लहै ॥ १ ॥ राम नाम बिनु बिरथे जगि जनमा। बिखु खावै बिखु बोली बोलै बिनु नावै निहफलु मरि भ्रमना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पुसतक पाठ बिआकरण वखाणै संधिआ करम तिकाल करै। बिनु गुर सबद मुकति कहा प्राणी राम नाम बिनु उरझि मरै ॥ २ ॥ डंड कमंडल सिखा सूतु धोती तीरथि गवनु अति भ्रमनु करै। रामनाम बिनु सांति न आवै जपि हरि हरि नामु सु पारि परै ॥ ३ ॥ जटा मुकटु तनि भसम लगाई बसत्र छोडि तनि नगनु भइआ। रामनाम बिनु त्रिपति न आवै किरत कै बांधै भेखु भइआ ॥ ४ ॥ जेते जीअ जंत जलि थलि महीअलि जत्र कत्र तू सरब जीआ। गुर परसादि राखि ले जन कउ हरि रसु नानक झोलि पीआ ॥ ५ ॥ ७ ॥ ८ ॥

होम, यज्ञों आदि के पुण्य तथा पूजा-तपस्या आदि में मनुष्य शरीर को कष्ट देता है और नित्य दुःख सहन करता है। (किन्तु) हरिनाम के बिना मुक्ति नहीं मिलती और नाम का रहस्य गुरु से प्राप्त होता है ॥ १ ॥ प्रभु-नाम के बिना तो संसार में जन्म लेना ही व्यर्थ है। उसका खाना, बोलना विष के समान है, हरिनाम के बिना मन के भ्रम बेकार हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो पुस्तकों तथा व्याकरण की व्याख्या करता है (विद्वान् है), तीनों समय संध्या-वन्दन करता है, वह भी गुरु के बिना मुक्ति नहीं पाता,

बल्कि राम-नाम के बिना यों ही उलझ-उलझकर मरता है ॥ २ ॥ जो यतियों की नाईं दण्ड, कमण्डल, शिखा, धोती आदि धारण कर तीर्थ-गमन एवं बहुत भ्रमण करता है, उसे भी प्रभु-नाम के बिना शान्ति नहीं मिलती; अतः प्रभु का नाम जपो, तभी मोक्ष मिलेगा ॥ ३ ॥ जो योगियों की तरह जटाओं को लपेटकर, शरीर में भस्म रमाकर, वस्त्र त्यागकर दिग्वसन घूमते हैं, उन्हें भी प्रभु-नाम के बिना तृप्ति नहीं मिलती, वे तो कर्म-फल-रूप में उक्त वेश बनाए रहते हैं ॥ ४ ॥ जल, थल, आकाश में जितने भी जीव-जन्तु हैं, हे प्रभु, जहाँ कहीं भी तुम सबमें बसे हो। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु-कृपा से हरि-नाम-रस का खुले हाथों पान करो (तभी मोक्ष सम्भव है।) ॥ ५ ॥ ७ ॥ ८ ॥

रागु भैरउ महला ३ चउपदे घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ जाति का गरबु न करीअहु कोई। ब्रहमु बिंदे सो ब्राहमणु होई ॥ १ ॥ जाति का गरबु न करि मूरख गवारा। इसु गरब ते चलहि बहुतु विकारा ॥१॥ रहाउ ॥ चारे वरन आखै सभु कोई। ब्रहमु बिंदु ते सभ ओपति होई ॥ २ ॥ माटी एक सगल संसारा। बहु बिधि भांडे घड़ै कुम्हारा ॥ ३ ॥ पंच ततु मिलि देही का आकारा। घटि वधि को करै बीचारा ॥ ४ ॥ कहतु नानक इहु जीउ करम बंधु होई। बिनु सतिगुर भेटे मुकति न होई ॥ ५ ॥ १ ॥

हे लोगो, जाति का गर्व न करो; ब्राह्मण वही हो सकता है जो ब्रह्म को पहचाने ॥ १ ॥ ऐ मूर्ख गँवार मनुष्य, जाति का गर्व मत करो, इस प्रकार के अभिमान से अनेक विकार बढ़ते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सब लोग चार वर्णों की बात करते हैं, समूची उत्पत्ति परमात्मा ने की है (इसलिए सब एक पिता की सन्तान होने के कारण अलग वर्ण-जाति के नहीं हो सकते)। (यहाँ ब्रह्म-बिन्दु शब्द का प्रयोग वीर्य के लिए भी माना जा सकता है।) ॥ २ ॥ समूचे संसार की संरचना में एक ही मिट्टी (मूल वस्तुगत कारण) लगी है, यह तो कुम्हार ने अलग-अलग प्रकार के बर्तनों को रूप दिया है। (परमात्मा ने एक मिट्टी से जीवों को बनाकर अलग रूप-रंग दे दिया है।) ॥ ३ ॥ पाँच तत्त्वों को मिलाकर शरीर को आकार दिया गया है, कौन कह सकता है कि किसमें कोई तत्त्व कम या अधिक है ॥ ४ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि यह जीव कर्मों का बँधा हुआ है, सतिगुरु के मिलाप के बिना इसकी मुक्ति नहीं होती ॥ ५ ॥ १ ॥

॥ भैरउ महला ३ ॥ जोगी ग्रिही पंडित भेख धारी। ए सूते अपणै अहंकारी ॥ १ ॥ माइआ मदि माता रहिआ सोइ। जागतु रहै न मूसै कोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सो जागै जिसु सतिगुरु मिलै। पंच दूत ओहु वसगति करै ॥ २ ॥ सो जागै जो ततु बीचारै। आपि मरै अवरा नह मारै ॥ ३ ॥ सो जागै जो एको जाणै। परकिरति छोडै ततु पछाणै ॥ ४ ॥ चहु वरना विचि जागै कोइ। जमै कालै ते छूटै सोइ ॥ ५ ॥ कहत नानक जनु जागै सोइ। गिआन अंजनु जा की नेत्री होइ ॥ ६ ॥ २ ॥

योगी, गृहस्थ एवं वेषधारी पण्डित, ये सब अज्ञानता की निद्रा में सो रहे हैं ॥ १ ॥ मनुष्य माया के मद में सोया रहता है, यदि जाग्रत् हो तो कोई लूटा नहीं जा सकता (अभिप्राय मायातीत होकर मनुष्य काम-क्रोधादि लुटेरों से बच जाता है) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जाग्रत् वही रहता है, जो सच्चे गुरु को पा लेता है। वह पाँचों दूतों (काम-क्रोधादि) को भी वश में कर लेता है ॥ २ ॥ जो ज्ञान-तत्त्व को समझता है, वही जाग्रत् है। वह स्वयं को मारता है (अहम् को नाश करता है), औरों को प्रताड़ित नहीं करता ॥ ३ ॥ जो एक परमात्मा को पहचानता है, वही जाग्रत् है। वह दूसरों की दासता छोड़कर तत्त्व को पहचान लेता है अर्थात् द्वैत-भाव का त्याग कर एक प्रभु में लीन होता है ॥ ४ ॥ चारों वर्णों में से कोई विरला ही (उपरोक्तानुसार) जागृति प्राप्त करता है और अन्ततः वह यम के बन्धनों से छूट जाता है ॥ ५ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि वही मनुष्य जाग्रत् है, जिसकी आँखों में ज्ञान का अंजन लगा हुआ है अर्थात् ज्ञान-प्राप्ति ही जागृति है ॥ ६ ॥ २ ॥

॥ भैरउ महला ३ ॥ जा कउ राखै अपणी सरणाई। साचे लागै साचा फलु पाई ॥ १ ॥ रे जन कै सिउ करहु पुकारा। हुकमे होआ हुकमे वरतारा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ एहु आकारु तेरा है धारा। खिन महि बिनसै करत न लागै बारा ॥ २ ॥ करि प्रसादु इकु खेलु दिखाइआ। गुर किरपा ते परमपदु पाइआ ॥ ३ ॥ कहत नानकु मारि जीवाले सोइ। ऐसा बूझहु भरमि न भूलहु कोइ ॥ ४ ॥ ३ ॥

ऐ भाई, वाहिगुरु स्वयं जिसे अपनी शरण में लेता है, वह सच्चे परमात्मा में रमता और अपने सच्चे स्वरूप को पहचानता है ॥ १ ॥ रे लोगो, किसके पास पुकार करोगे ? यह सब सृष्टि परमात्मा के ही

हुकुम से पैदा हुई है और उसी की इच्छा से सक्रिय है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस प्रभु ने तुम्हारा यह आकार रचा है, वह इसे अविलम्ब नष्ट कर देता है ॥ २ ॥ यह तो उसने कृपा-वश एक खेल बनाया है, यदि इस स्थिति में गुरु की दया हो जाय तो परम-पद प्राप्त हो सकता है ॥ ३ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि वही प्रभु सबको मारता और पुनः जन्म देता है। यह सत्य जान लेना अनिवार्य है, किसी को व्यर्थ के मिथ्या भ्रमों में नहीं पड़ना चाहिए ॥ ४ ॥ ३ ॥

॥ भैरउ महला ३ ॥ मै कामणि मेरा कंतु करतारु। जेहा कराए तेहा करी सीगारु ॥ १ ॥ जां तिसु भावै तां करे भोगु। तनु मनु साचे साहिब जोगु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उसतति निंदा करे किआ कोई। जां आपे वरतै एको सोई ॥ २ ॥ गुरपरसादी पिरम कसाई। मिलउगी दइआल पंच सबद वजाई ॥ ३ ॥ भनति नानकु करे किआ कोइ। जिसनो आपि मिलावै सोइ ॥ ४ ॥ ४ ॥

(जीवात्मा की ओर से कथन है।) मैं स्त्री हूँ, परमात्मा मेरा पति है। जैसा उसे रुचता है, वैसा शृंगार मैं करती हूँ ॥ १ ॥ जब उसकी इच्छा होती है, वह मुझे प्यार करता है; मेरा तो तन-मन उसी सच्चे स्वामी के लिए है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उसकी स्तुति-निन्दा कोई क्या कर सकता है, वही तो एकमात्र सब जगह व्याप्त है ॥ २ ॥ गुरु की कृपा से मुझे प्रियतम का प्रेम मिला है। मैं पूर्ण आनन्द व्यक्त करती हुई (उल्लास एवं हुलासपूर्वक) अपने दयावान् कंत को मिलूँगी ॥ ३ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि कोई अन्य क्या कर सकता है, जिसे वह स्वयं अपने अंग लगाता है (वही उल्लसित होती है) ॥ ४ ॥ ४ ॥

॥ भैरउ महला ३ ॥ सो मुनि जि मन की दुबिधा मारे। दुबिधा मारि ब्रहमु बीचारे ॥ १ ॥ इसु मन कउ कोई खोजहु भाई। मनु खोजत नामु नउनिधि पाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मूलु मोहु करि करतै जगतु उपाइआ। ममता लाइ भरमि भुोलाइआ ॥ २ ॥ इसु मन ते सभ पिंड पराणा। मन कै वीचारि हुकमु बुझि समाणा ॥ ३ ॥ करमु होवै गुरु किरपा करै। इहु मनु जागै इसु मन की दुबिधा मरै ॥ ४ ॥ मन का सुभाउ सदा बैरागी। सभ महि वसै अतीतु अनरागी ॥ ५ ॥ कहत नानकु जो जाणै भेउ। आदि पुरखु निरंजन देउ ॥ ६ ॥ ५ ॥

मुनि (सही अर्थों में) वही है, जो मन के द्वैत-भाव का नाश कर लेता है और दुबिधा का अन्त करके परब्रह्म के सम्बन्ध में विचार करता है ।। १ ।। ऐ लोगो, मन के भीतर ही खोज करो, मन की खोज से ही हरि-नाम रूपी निधियाँ प्राप्य हैं ।। १ ।। रहाउ ।। मोह का बीज डालकर ही स्रष्टा ने जगत की उत्पत्ति की है। उपरांत ममता के भाव से सबको भ्रमित कर दिया है ।। २ ।। मन से ही शरीर और प्राण हैं (अर्थात् मन के संस्कारों के परिणामस्वरूप ही जन्म-मरण होता है)। मन के रहस्यों को समझकर ही प्रभु-इच्छा की पहचान होती है ।। ३ ।। परमात्मा की कृपा हो, तभी गुरु दया करता है और मन की दुबिधा का अन्त होकर उसमें जागृति उपजती है ।। ४ ।। मन का मूल स्वभाव निर्लिप्ति का है। मन में ही वह राग-विराग से अतीत रहनेवाला प्रभु बसता है ।। ५ ।। गुरु नानक कहते हैं कि जो इस तथ्य का भेद जानता है, वह स्वयं आदि-पुरुष मायातीत परमात्मा के समान होता है ।। ६ ।। ५ ।।

।। भैरउ महला ३ ।। राम नामु जगत निसतारा। भवजलु पारि उतारणहारा ।। १ ।। गुरपरसादी हरि नामु सम्हालि। सद ही निबहै तेरै नालि ।। १ ।। रहाउ ।। नामु न चेतहि मनमुख गावारा। बिनु नावै कैसे पावहि पारा ।। २ ।। आपे दाति करे दातारु। देवणहारे कउ जैकारु ।। ३ ।। नदरि करे सतिगुरू मिलाए। नानक हिरदै नामु वसाए ।। ४ ।। ६ ।।

परमात्मा के नाम से जगत का निस्तार होता है। संसार-सागर से इसी के द्वारा (प्रभु-नाम से) मोक्ष मिलता है ।। १ ।। गुरु की कृपा से प्रभु-नाम का स्मरण सम्भव है। यह सदा तुम्हारे साथ निभता है अर्थात् प्रभु-नाम ही मृत्यूपरान्त भी सहायक होता है ।। १ ।। रहाउ ।। मनमुख गँवार जीव हरि-नाम का स्मरण नहीं करते, (वे नहीं जानते कि) नाम के बिना उन्हें मुक्ति क्योंकर मिलेगी? ।। २ ।। परमात्मा स्वयं हरि-नाम की बख्शिश करता है, वही नाम का दाता है, उसकी जय है ।। ३ ।। वह कृपा करे तो सतिगुरु से भेंट होती है और (गुरु नानक कहते हैं कि) गुरु प्रभु-नाम को हृदय में बसा देता है ।। ४ ।। ६ ।।

।। भैरउ महला ३ ।। नामे उधरे सभि जितने लोअ। गुरमुखि जिना परापति होइ ।। १ ।। हरि जीउ अपणी क्रिपा करेइ। गुरमुखि नामु वडिआई देइ ।।१।।रहाउ।। राम नामि जिन प्रीति पिआरु। आपि उधरे सभि कुल उधारणहारु ।। २ ।। बिनु नावै मनमुख जमपुरि जाहि। अउखे होवहि चोटा

खाहि ॥ ३ ॥ आपे करता देवै सोइ । नानक नामु परापति होइ ॥ ४ ॥ ७ ॥

जितने भी खण्ड-ब्रह्माण्ड या लोक हैं, प्रभु-नाम से ही सबका उद्धार होता है और उन सबको गुरु के द्वारा ही (प्रभु-नाम की) प्राप्ति होती है ॥ १ ॥ हरि-प्रभु ने स्वयं कृपापूर्वक जीव को गुरु के द्वारा नाम की बड़ाई प्रदान की है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिनको परमात्मा के नाम से प्रीति होती है, वे स्वयं तो मोक्ष पाते ही हैं, समूचे कुल का उद्धार कराते हैं ॥ २ ॥ प्रभु-नाम के बिना मनमुख जीव जमपुरी (नरकों में) जाते हैं और दण्डित होकर कष्ट उठाते हैं ॥ ३ ॥ परमात्मा स्वयं हरि-नाम का दाता है, गुरु नानक कहते हैं कि उसी से नाम प्राप्त होता है ॥ ४ ॥ ७ ॥

॥ भैरउ महला ३ ॥ गोविंद प्रीति सनकादिक उधारे । राम नाम सबदि बीचारे ॥ १ ॥ हरि जीउ अपणी किरपा धारु । गुरमुखि नामे लगै पिआरु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अंतरि प्रीति भगति साची होइ । पूरै गुरि मेलावा होइ ॥ २ ॥ निजघरि वसै सहजि सुभाइ । गुरमुखि नामु वसै मनि आइ ॥ ३ ॥ आपे वेखै वेखणहारु । नानक नामु रखहु उरधारि ॥ ४ ॥ ८ ॥

परमात्मा से प्रीति होने के कारण सनक-सनन्दन आदि (ब्रह्मा-पुत्र) का उद्धार हुआ, उन्होंने प्रभु-नाम का ज्ञान प्राप्त किया ॥ १ ॥ परमात्मा स्वयं कृपा करे, तभी गुरु-कृपा से हरि-नाम में प्यार बनता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मन में सच्ची प्रीति से भक्ति होती है और तभी पूर्णगुरु से भेंट सम्भव हो पाती है ॥ २ ॥ (तब) जीव स्वतः ही अपने वास्तविक घर (परमात्मा के निकट) जा बसता है और गुरु की कृपा से उसके मन में हरि-नाम प्रकटता है ॥ ३ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु-नाम हृदय में धारण किए रहो, परमात्मा स्वयं रक्षक होगा ॥ ४ ॥ ८ ॥

॥ भैरउ महला ३ ॥ कलजुग महि राम नामु उरधारु । बिनु नावै माथै पावै छारु ॥ १ ॥ राम नामु दुलभु है भाई । गुर परसादि वसै मनि आई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ राम नामु जन भालहि सोइ । पूरे गुर ते प्रापति होइ ॥ २ ॥ हरि का भाणा मंनहि से जन परवाणु । गुर कै सबदि नाम नीसाणु ॥ ३ ॥ सो सेवहु जो कल रहिआ धारि । नानक गुरमुखि नामु पिआरि ॥ ४ ॥ ९ ॥

कलियुग में प्रभु-नाम को मन में धारण करो। प्रभु-नाम के बिना तो सिर में धूल ही पड़ती है ॥ १ ॥ हे भाई, यह प्रभु का नाम दुर्लभ है, केवल गुरु की कृपा से ही यह मन में स्थिर होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वही जीव राम-नाम को पहचानता है, जो सच्चे गुरु से प्राप्त कर लेता है ॥ २ ॥ जो जीव परमात्मा की इच्छा को स्वीकार करते हैं, वे ही परमात्मा की सेवा में अपना लिये जाते हैं। गुरु के उपदेश से उपलब्ध हरि-नाम ही उनकी चेतना (होती) है ॥ ३ ॥ जिसकी लीला चतुर्दिक् द्रष्टव्य है, उसी की सेवा में संलग्न रहो, यही हमारा अनुरोध है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु के द्वारा ही प्रभु-नाम में प्यार बनता है ॥ ४ ॥ ९ ॥

॥ भैरउ महला ३ ॥ कलजुग महि बहु करम कमाहि। ना रुति न करम थाइ पाहि ॥ १ ॥ कलजुग महि राम नामु है सारु। गुरमुखि साचा लगै पिआरु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तनु मनु खोजि घरै महि पाइआ। गुरमुखि राम नामि चितु लाइआ ॥२॥ गिआन अंजनु सतिगुर ते होइ। राम नामु रवि रहिआ तिहु लोइ ॥ ३ ॥ कलिजुग महि हरि जीउ एकु होर रुति न काई। नानक गुरमुखि हिरदै राम नामु लेहु जमाई ॥ ४ ॥ १० ॥

कलियुग में लोग अनेक कर्म कमाते हैं; कलियुग कर्मकाण्ड की साधना का समय नहीं, अतः कोई कर्म सफल नहीं होता ॥ १ ॥ कलियुग में तो प्रभु के नाम की भक्ति ही श्रेष्ठ है। गुरु के द्वारा सच्चे परमात्मा से प्यार पाना ही ग्राह्य है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तन-मन को खोजकर प्रभु को घर में ही (अन्तर से ही) प्राप्त किया जाता है; गुरु के द्वारा प्रभु-नाम में चित्त स्थिर करके ही यह (सम्भव होता है) ॥ २ ॥ सतिगुरु जीव के नेत्रों में ज्ञान का अंजन रचाता है, तभी उसे यह सूझ मिलती है कि राम-नाम तीनों लोकों में व्याप्त है ॥ ३ ॥ कलियुग में केवल परमात्मा की भक्ति स्वीकार्य है, कोई द्वैत नहीं चल सकता। (इसलिए) गुरु नानक कहते हैं कि गुरु के द्वारा हृदय में राम-नाम को स्थिर करो ॥ ४ ॥ १० ॥

भैरउ महला ३ घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ दुबिधा मनमुख रोगि विआपे त्रिसना जलहि अधिकाई। मरि मरि जंमहि ठउर न पावहि

बिरथा जनमु गवाई ।। १ ।। मेरे प्रीतम करि किरपा देहु बुझाई । हउमै रोगी जगतु उपाइआ बिनु सबदै रोगु न जाई ।। १ ।। रहाउ ।। सिम्रिति सासत्र पड़हि मुनि केते बिनु सबदै सुरति न पाई । त्रैगुण सभे रोगि विआपे ममता सुरति गवाई ।। २ ।। इकि आपे काढि लए प्रभि आपे गुर सेवा प्रभि लाए । हरि का नामु निधानो पाइआ सुखु वसिआ मनि आए ।। ३ ।। चउथी पदवी गुरमुखि वरतहि तिन निजघरि वासा पाइआ । पूरै सतिगुरि किरपा कीनी विचहु आपु गवाइआ ।। ४ ।। एकसु की सिरिकार एक जिनि ब्रहमा बिसनु रुद्रु उपाइआ । नानक निहचलु साचा एको ना ओहु मरै न जाइआ ।। ५ ।। १ ।। ११ ।।

मनमुख (स्वेच्छाचारी, जो गुरुमतानुसार आचरण नहीं करता) जीव को दुविधा का रोग सताता है और तृष्णा की अग्नि उसे अधिक जलाती है। वह बार-बार मरता-जन्मता है, कहीं ठिकाना नहीं मिलता, उसका जीवन निरर्थक होता है ।। १ ।। मुझ पर मेरे स्वामी की कृपा है, उसने मुझे ज्ञान दिया है कि अहम्-भाव से ही यह रुग्ण संसार उपजता है और गुरु के उपदेश (शब्द) के बिना जीव उस रोग से मुक्त नहीं हो सकता ।। १ ।। रहाउ ।। ऋषियों-मुनियों ने शास्त्रों-स्मृतियों का अध्ययन किया, किन्तु शब्द-रहस्य को जाने बिना उन्हें प्रभु-प्रीति प्राप्त नहीं हुई। वे तीन गुणों के घेरे में रहे, इसलिए अहम् के रोग से नहीं बच पाए; ममता-भाव के कारण अन्ततः वे प्रभु-लग्न को गँवा बैठे ।। २ ।। कुछ जीवों (भाग्यशाली जीवों) को परमात्मा स्वयं अपने संग रमाता और गुरु की सेवा में संलग्न करता है। परिणामतः जीव को प्रभु-नाम की सम्पत्ति मिलती है और मन में सुख व्यापता है ।। ३ ।। गुरु के सम्पर्क में उन्हें चौथे पद (तुरीया या परम पद) की प्राप्ति होती है और वे अपने वास्तविक घर में विराजते हैं। उन पर पूर्णगुरु की कृपा होती है और उनके भीतर से अभिमान का भाव चुक जाता है ।। ४ ।। एक ब्रह्म की ही समूची लीला है, उसी ने ब्रह्मा, विष्णु और महादेव को बनाया है। गुरु नानक कहते हैं कि वही एक निश्चल और सत्य है, अतः वह मरने-जन्मने से अतीत है ।। ५ ।। १ ।। ११ ।।

।। भैरउ महला ३ ।। मनमुखि दुबिधा सदा है रोगी रोगी सगल संसारा । गुरमुखि बूझहि रोगु गवावहि गुर सबदी वीचारा ।। १ ।। हरि जीउ सतसंगति मेलाइ । नानक

तिसनो देइ वडिआई जो राम नामि चितु लाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ममता कालि सभि रोगि विआपे तिन जम की है सिरिकारा। गुरमुखि प्राणी जमु नेड़ि न आवै जिन हरि राखिआ उरिधारा ॥ २ ॥ जिन हरि का नामु न गुरमुखि जाता से जग महि काहे आइआ। गुर की सेवा कदे न कीनी बिरथा जनमु गवाइआ ॥ ३ ॥ नानक से पूरे वडभागी सतिगुर सेवा लाए। जो इछहि सोई फलु पावहि गुरबाणी सुखु पाए ॥ ४ ॥ २ ॥ १२ ॥

स्वेच्छाचार में सदा दुविधा रहती है और समूचा संसार इस रोग से पीड़ित है। गुरु के द्वारा ज्ञान पाकर और गुरु के उपदेशानुसार आचरण करके इस रोग से बचा जाता है ॥ १ ॥ परमात्मा स्वयं कृपावश जीव को सत्संगति में लाता है। गुरु नानक का कथन है कि जो जीव प्रभु-नाम-जाप का अभ्यास करता है, परमात्मा उसी को बड़ाई देता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ममता में रत जीवों में मृत्यु और रोग व्याप्त होता है और सिर पर नित्य यमदूतों का दण्ड बना रहता है। (किन्तु) यमदूत गुरु-मतानुसार आचरण करनेवाले जीवों के समीप नहीं फटकता, क्योंकि वे तो परमात्मा को हृदय में बसाकर रखते हैं ॥ २ ॥ जिसने गुरु के द्वारा परमात्मा का नाम नहीं पहचाना, वह जगत में क्यों आया अर्थात् उसका जीवन व्यर्थ है। ऐसे जीव सदैव गुरु की सेवा से वंचित रहते तथा जीवन को निरर्थक गँवाते हैं ॥ ३ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि सतिगुरु की सेवा में रत जीव पूर्ण भाग्यशाली हैं; वे गुरु-उपदेश से नित्य सुख पाते और मनोवांछित फल प्राप्त करते हैं ॥ ४ ॥ २ ॥ १२ ॥

॥ भैरउ महला ३ ॥ दुख विचि जंमै दुखि मरै दुख विचि कार कमाइ। गरभ जोनी विचि कदे न निकलै बिसटा माहि समाइ ॥ १ ॥ ध्रिगु ध्रिगु मनमुखि जनमु गवाइआ। पूरे गुर की सेव न कीनी हरि का नामु न भाइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुर का सबदु सभि रोग गवाए जिसनो हरि जीउ लाए। नामे नामि मिलै वडिआई जिसनो मंनि वसाए ॥ २ ॥ सतिगुरु भेटै ता फलु पाए सचु करणी सुख सारु। से जन निरमल जो हरि लागे हरि नामे धरहि पिआरु ॥ ३ ॥ तिन की रेणु मिलै तां मसतकि लाई जिन सतिगुरु पूरा धिआइआ। नानक तिन की रेणु पूरै भागि पाईऐ जिनी राम नामि चितु लाइआ ॥ ४ ॥ ३ ॥ १३ ॥

(मनमुखी जीव) दुःख में जन्मते, मरते और दुःखों में ही जीवन व्यतीत करते हैं। उन्हें गर्भ-योनि से निकलना कभी नसीब नहीं होता, वे नित्य मलिनता में ही लिप्त रहते हैं ॥ १ ॥ ऐसे मनमुख को धिक्कार है, उसका जीवन व्यर्थ है। वह गुरु-सेवा से वंचित रहता है, उसे परमात्मा का नाम भी प्रिय नहीं होता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु जिसे गुरु के शब्द के प्रति सजग करता है, उसके सब रोग-शोक दूर हो जाते हैं। जो प्रभु-नाम को मन में बसा लेता है, उसे ही बड़ाई मिलती है ॥ २ ॥ सतिगुरु के मिलन में ही समस्त फल प्राप्त होते हैं; सत्याचरण ही मूल कर्म है, सब सुखों का आधार है। वे लोग निर्मल होते हैं, जो प्रभु-नाम की प्रीति में तल्लीन रहते हैं ॥ ३ ॥ पूर्णसतिगुरु से जिनकी भेंट हुई है, उनके चरण की धूल मिले तो मैं मस्तक पर चढ़ा लूँ। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु-नाम में चित्त धरनेवालों की चरणधूल भी भाग्य से ही मिलती है ॥ ४ ॥ ३ ॥ १३ ॥

॥ भैरउ महला ३ ॥ सबदु बीचारे सो जनु साचा जिन कै हिरदै साचा सोई। साची भगति करहि दिनु राती तां तनि दूखु न होई ॥ १ ॥ भगतु भगतु कहै सभु कोई। बिनु सतिगुर सेवे भगति न पाईऐ पूरै भागि मिलै प्रभु सोई ॥१॥ रहाउ ॥ मनमुख मूलु गवावहि लाभु मागहि लाहा लाभु किदू होई। जमकालु सदा है सिर ऊपरि दूजै भाइ पति खोई ॥ २ ॥ बहले भेख भवहि दिनु राती हउमै रोगु न जाई। पड़ि पड़ि लूझहि बादु वखाणहि मिलि माइआ सुरति गवाई ॥ ३ ॥ सतिगुरु सेवहि परमगति पावहि नामि मिलै वडिआई। नानक नामु जिना मनि वसिआ दरि साचै पति पाई ॥ ४ ॥ ४ ॥ १४ ॥

ब्रह्मनाद के रहस्य को समझनेवाला व्यक्ति ही सच्चा है और सच्चा (परमात्मा) उसी के हृदय में निवास करता है। वह रात-दिन सच्चे (परमात्मा) की सच्ची भक्ति करता है, अतः उसे कोई दुःख नहीं होता ॥१॥ भक्ति की चर्चा तो सब करते हैं, किन्तु सतिगुरु की सेवा के बिना भक्ति नहीं मिलती और उच्च सौभाग्य एवं प्रभु-कृपा के बिना गुरु से भेंट नहीं होती ॥१॥ रहाउ ॥ मनमुख जीव मूल (मनुष्य-जन्म) गँवाते हैं, लाभ की आशा करते हैं किन्तु लाभ कहाँ से हो! उनके सिर पर सदैव यमों का दण्ड रहता है, वह द्वैत-भाव में अपना सम्मान स्वयं खो बैठते हैं ॥ २ ॥ वे दिन-रात अनेक वेषों का अनुकरण (दिखावे के कार्य) करते हैं, किन्तु उनका अहम्-रोग दूर नहीं होता। विद्या प्राप्त करके शास्त्रार्थ में फँसते, वाद-विवाद एवं व्याख्याओं में लीन रहते हैं, माया के चक्र में वे प्रभु-प्रेम

से दूर हो जाते हैं ॥ ३ ॥ सतिगुरु की सेवा में लीन रहनेवाले परमगति पा जाते हैं और हरि-नाम से बड़ाई प्राप्त करते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि जिन जीवों के मन में परमात्मा का नाम स्थिर है, वे सच्चे परमात्मा के सम्मुख प्रतिष्ठा प्राप्त करते हैं ॥ ४ ॥ ४ ॥ १४ ॥

॥ भैरउ महला ३ ॥ मनमुख आसा नही उतरै दूजै भाइ खुआए। उदरु नैसाणु न भरीऐ कबहू त्रिसना अगनि पचाए ॥ १ ॥ सदा अनंदु राम रसि राते। हिरदै नामु दुबिधा मनि भागी हरि हरि अंम्रितु पी त्रिपताते ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आपे पारब्रहमु स्रिसटि जिनि साजी सिरि सिरि धंधै लाए। माइआ मोहु कीआ जिनि आपे आपे दूजै लाए ॥ २ ॥ तिसनो किहु कहीऐ जे दूजा होवै सभि तुधै माहि समाए। गुरमुखि गिआनु ततु बीचारा जोती जोति मिलाए ॥ ३ ॥ सो प्रभु साचा सद ही साचा साचा सभु आकारा। नानक सतिगुरि सोझी पाई सचि नामि निसतारा ॥ ४ ॥ ५ ॥ १५ ॥

मनमुख जीव की आशा-तृष्णा कभी शान्त नहीं होती, वह सदा द्वैत-भाव में ख्वार होता है। नदी की नाईं उनका पेट कभी नहीं भरता, वे नित्य तृष्णा-अग्नि में जलते हैं ॥ १ ॥ जो जीव राम-रस (परमात्मा के आनन्द) में मग्न हैं, वे नित्य आनन्दमय हैं। उनके हृदय में हरि-नाम बसता है, मन की दुविधा नष्ट हो जाती है और वे हरिनामामृत पीकर तृप्त हो जाते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सृष्टि-रचना करनेवाले परमात्मा ने स्वयं सबको बना-बनाकर विभिन्न कार्यों में रत किया है। माया-मोह भी उसी की रचना है, वही द्वैत-भाव में लगाता है ॥ २ ॥ उसे तो कुछ तभी कहें, यदि वह अलग हो, वह तो जीव में ही समाया हुआ है। गुरु के द्वारा जो ज्ञान-तत्त्व पाकर इस रहस्य को जान लेता है, वह परम ज्योति में लीन हो जाता है ॥ ३ ॥ वह प्रभु ही एकमात्र सत्य है, उसकी समूची रचना भी सत्य है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु द्वारा ज्ञान पाकर ही जीव हरि-नाम में निस्तार पाता है ॥ ४ ॥ ५ ॥ १५ ॥

॥ भैरउ महला ३ ॥ कलि महि प्रेत जिन्ही रामु न पछाता सतजुगि परमहंस बीचारी। दुआपुरि त्रेतै माणस वरतहि विरलै हउमै मारी ॥ १ ॥ कलि महि राम नामि वडिआई। जुगि जुगि गुरमुखि एको जाता विणु नावै मुकति न पाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हिरदै नामु लखै जनु साचा गुरमुखि मंनि वसाई। आपि तरे सगले कुल तारे जिनी राम नामि

लिव लाई ॥ २ ॥ मेरा प्रभु है गुण का दाता अवगण सबदि जलाए। जिन मनि वसिआ से जन सोहे हिरदै नामु वसाए ॥३॥ घरु दरु महलु सतिगुरू दिखाइआ रंग सिउ रलीआ माणै। जो किछु कहै सु भला करि मानै नानक नामु वखाणै ॥४॥६॥१६॥

सतियुग में विचारवान् एवं परमहंस पद को प्राप्त जीव भी कलियुग में परमात्मा के ज्ञान के बिना प्रेत के समान हैं। द्वापर एवं त्रेता युगों में वे मनुष्य (मध्यम पद) के रूप में व्याप्त रहे, किन्तु चारों युगों में कोई एकाध जीव ही अहम् और ममता पर विजय पा सका ॥ १ ॥ कलियुग में प्रभु का नाम जपने में प्रतिष्ठा है। गुरु के द्वारा चारों युगों में व्याप्त एक ही परमात्मा की जानकारी पाकर यह निश्चित हुआ कि प्रभु-नाम के बिना किसी भी युग में मुक्ति उपलब्ध नहीं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो गुरु-कृपा से मन में ही परमात्मा को खोजता और हृदय में हरि-नाम को बसाता है, वह व्यक्ति सत्य का पारखी है। प्रभु-नाम में प्रीति लगानेवाला स्वयं तो मुक्त होता है, साथ ही समूचे वंश को मुक्त करवा लेता है ॥ २ ॥ परमात्मा गुणागार है, शब्द की शक्ति द्वारा वह सब अवगुण भस्म कर देता है। जिन जीवों ने उसे हृदय में बसाया है, उसी के नाम में रत हैं, वे सब जगह सुशोभित होते हैं ॥ ३ ॥ सतिगुरु का दामन पकड़नेवाला जीव परमात्मा के घर-दर को पहचानता और प्रेम-मय आनन्द में मग्न होता है। गुरु नानक कहते हैं कि वह हरिनामोच्चारण में रत रहता और परमात्मा के समस्त कृत्यों को सहर्ष स्वीकार करता है (भला मानता है) ॥ ४ ॥ ६ ॥ १६ ॥

॥ भैरउ महला ३ ॥ मनसा मनहि समाइ लै गुर सबदी वीचार। गुर पूरे ते सोझी पवै फिरि मरै न वारोवार ॥ १ ॥ मन मेरे राम नामु आधारु। गुरपरसादि परमपदु पाइआ सभ इछ पुजावणहारु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सभ महि एको रवि रहिआ गुर बिनु बूझ न पाइ। गुरमुखि प्रगटु होआ मेरा हरि प्रभु अनदिनु हरि गुण गाइ ॥ २ ॥ सुखदाता हरि एकु है होरथै सुखु न पाहि। सतिगुरु जिनी न सेविआ दाता से अंति गए पछुताहि ॥ ३ ॥ सतिगुरु सेवि सदा सुखु पाइआ फिरि दुखु न लागै धाइ। नानक हरि भगति परापति होई जोती जोति समाइ ॥ ४ ॥ ७ ॥ १७ ॥

गुरु के उपदेश को विचारकर जो समूची दुविधा मन के भीतर ही निपटा देता है, वह सच्चे गुरु से ज्ञान पाकर आवागमन से मुक्त हो जाता

है ॥ १ ॥ मेरे मन को एकमात्र परमात्मा के नाम का आश्रय है। गुरु की कृपा से मुझे मनोवांछित उपलब्धियाँ देनेवाला परमपद प्राप्त हुआ है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सब घटों में एक परमात्मा ही व्याप्त है, किन्तु गुरु के बिना उसकी पहचान नहीं होती। गुरु के द्वारा परमात्मा प्रकट में साक्षात् होता है; मैं रात-दिन उसके गुण गाता हूँ ॥ २ ॥ सुख देनेवाला एक परमात्मा ही है, और किसी से सुख नहीं मिलता। जिन्होंने अपने सतिगुरु की सेवा द्वारा प्रभु को नहीं पहचाना, वे अन्ततः पश्चात्ताप करते रह जाते हैं ॥ ३ ॥ सतिगुरु की सेवा में रत रहने से नित्य सुख उपजता है, पुनः दुःख नहीं लगता। गुरु नानक कहते हैं कि इससे (गुरु-सेवा से) हरि-भक्ति मिलती है और जीव परम-ज्योति में लीन हो जाता है ॥ ४ ॥ ७ ॥ १७ ॥

॥ भैरउ महला ३ ॥ बाझु गुरू जगतु बउराना भूला चोटा खाई। मरि मरि जंमै सदा दुखु पाए दर की खबरि न पाई ॥ १ ॥ मेरे मन सदा रहहु सतिगुर की सरणा। हिरदै हरि नामु मीठा सद लागा गुर सबदे भवजलु तरणा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भेख करै बहुतु चितु डोलै अंतरि कामु क्रोधु अहंकारु। अंतरि तिसा भूख अति बहुती भउकत फिरै दरबारु ॥ २ ॥ गुर कै सबदि मरहि फिरि जीवहि तिन कउ मुकति दुआरि। अंतरि सांति सदा सुखु होवै हरि राखिआ उरधारि ॥ ३ ॥ जिउ तिसु भावै तिवै चलावै करणा किछू न जाई। नानक गुरमुखि सबदु सम्हाले राम नामि वडिआई ॥ ४ ॥ ८ ॥ १८ ॥

गुरु की अनुपस्थिति में जगत दीवाना हुआ भटकता है; सब बार-बार मरते-जन्मते हैं, किन्तु प्रभु के द्वार की सूझ नहीं होती ॥ १ ॥ हे मेरे मन, सदा सतिगुरु की शरण लो। हृदय में मधुर हरि-नाम को बसाकर गुरु-उपदेश द्वारा संसार-सागर से मुक्त होना है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो मनुष्य बनावटी वेष बनाता है, उसका चित्त अस्थिर रहता है और उसके भीतर काम, क्रोध, अहंकारादि प्रवृत्तियाँ घर किए रहती हैं। उसके अन्दर अनन्त तृष्णा होती है और वह दर-ब-दर बकवाद करता फिरता है ॥ २ ॥ यदि वह गुरु के उपदेश द्वारा मरकर जी ले (जीवन्मुक्ति पा ले), तो प्रभु के द्वार पर उसे पूर्ण मुक्ति मिल जाती है। परमात्मा को हृदय में धारण किए रहने से उसके मन में नित्य सुख-शान्ति प्राप्त होती है ॥ ३ ॥ (सच तो यह है कि) जैसा प्रभु को रुचता है, वैसे ही वह चलाता है—उसको निर्देश नहीं दिया जा सकता। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु-पथ

पर चलते हुए शब्द का स्मरण करनेवाला प्रभु-नाम से ही प्रतिष्ठा पा लेता है ॥ ४ ॥ ८ ॥ १८ ॥

॥ भैरउ महला ३ ॥ हउमै माइआ मोहि खुआइआ दुखु खटे दुख खाइ । अंतरि लोभ हलकु दुखु भारी बिनु बिबेक भरमाइ ॥ १ ॥ मनमुखि ध्रिगु जीवणु सैसारि । राम नामु सुपनै नही चेतिआ हरि सिउ कदे न लागै पिआरु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पसूआ करम करै नही बूझै कूड़ु कमावै कूड़ो होइ । सतिगुरु मिलै त उलटी होवै खोजि लहै जनु कोइ ॥ २ ॥ हरि हरि नामु रिदै सद वसिआ पाइआ गुणी निधानु । गुर परसादी पूरा पाइआ चूका मन अभिमानु ॥ ३ ॥ आपे करता करे कराए आपे मारगि पाए । आपे गुरमुखि दे वडिआई नानक नामि समाए ॥ ४ ॥ ९ ॥ १९ ॥

अहंकार और माया-मोह में भटका हुआ जीव दुःख उठाता और दुःख भोगता है। उसके भीतर लोभ व्याप्त होता है, वह विवेक-हीन होने के कारण भ्रमों में पड़ा दुःख उठाता है ॥ १ ॥ संसार में मनमुख के जीने को धिक्कार है। वह सपने में परमात्मा का नाम स्मरण नहीं करता, प्रभु से उसे कोई आसक्ति नहीं होती ॥ १ ॥ रहाउ ॥ (मनमुखी जीव) पशु-कर्म करता है, प्रभु-नाम को नहीं पहचानता, मिथ्या जीवन जीता और मिथ्या आचरण करता है। सतिगुरु से भेंट हो जाय तो वह संसार से विरत होकर प्रभु को खोज सकता है ॥ २ ॥ (तब उसके) मन में हरि-नाम स्थिर होता है और वह गुणागार प्रभु-पति को पा लेता है। गुरु की कृपा से उसे वाहिगुरु मिल जाता है और उसके मन का अभिमान नष्ट हो जाता है ॥ ३ ॥ परमात्मा स्वयं ही सब कुछ करता और सबको यथेष्ट राह पर डालता है। गुरु नानक कहते हैं, वही गुरु के द्वारा जीव को प्रतिष्ठा देता और स्वयं उसे हरि-नाम में लीन करता है ॥ ४ ॥ ९॥ १९ ॥

॥ भैरउ महला ३ ॥ मेरी पटीआ लिखहु हरि गोबिंद गोपाला । दूजै भाइ फाथे जम जाला । सतिगुरु करे मेरी प्रतिपाला । हरि सुखदाता मेरै नाला ॥ १ ॥ गुर उपदेसि प्रहिलादु हरि उचरै । सासना ते बालकु गमु न करै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ माता उपदेसै प्रहिलाद पिआरे । पुत्र राम नामु छोडहु जीउ लेहु उबारे । प्रहिलादु कहै सुनहु मेरी माइ । राम नामु न छोडा गुरि दीआ बुझाइ ॥ २ ॥ संडा मरका सभि

जाइ पुकारे । प्रहलादु आपि विगड़िआ सभि चाटड़े विगाड़े । दुसट सभा महि मंत्रु पकाइआ । प्रहलाद का राखा होइ रघुराइआ ॥ ३ ॥ हाथि खड़गु करि धाइआ अति अहंकारि । हरि तेरा कहा तुझु लए उबारि । खिन महि भैआन रूपु निकसिआ थंम्ह उपाड़ि । हरणाखसु नखी बिदारिआ प्रहलादु लीआ उबारि ॥ ४ ॥ संत जना के हरि जीउ कारज सवारे । प्रहलाद जन के इकीह कुल उधारे । गुर कै सबदि हउमै बिखु मारे । नानक राम नामि संत निसतारे ॥ ५ ॥ १० ॥ २० ॥

(प्रह्लाद भक्त का उद्धरण देते हुए गुरुजी समझाते हैं— प्रह्लाद अपने अध्यापक से कहते हैं।) मेरी पट्टी पर गोविन्द प्रभु का नाम लिख दो। उस प्रभु को छोड़ किसी दूसरे में प्रीति लगाने से मृत्यु के फन्दे में फँसना होता है। सतिगुरु अंग-संग मेरा रक्षक है, वह सुखदाता परमात्मा सदैव मेरे संग है ॥ १ ॥ गुरु के उपदेश से प्रह्लाद ने हरि-नाम का उच्चारण किया था, अतः दण्ड का उसे (बालक को) कोई भय न रह गया था ॥ १ ॥ रहाउ ॥ माता ने प्रह्लाद को समझाया कि हे प्रिय पुत्र, प्रभु-नाम को छोड़कर तुम अपनी प्राण-रक्षा करो। किन्तु प्रह्लाद ने कहा, हे माता, मुझे गुरु ने यही सिखाया है, मैं राम-नाम को कदापि नहीं छोड़ सकता ॥ २ ॥ (शुक्र-पुत्र) शण्ड एवं अमरक (जो प्रह्लाद को पढ़ाते थे) ने जाकर राजा (हिरण्यकशिपु) के पास शिकायत की; कहा कि प्रह्लाद स्वयं तो बिगड़ा है, उसने अन्य सब विद्यार्थी भी बिगाड़ दिए हैं। दुष्ट राजा के दरबार में मन्त्रणा की गई, किन्तु प्रह्लाद का रक्षक तो स्वयं वाहिगुरु था ॥ ३ ॥ (राजा) अहंकार-मद में चूर हाथ में तलवार लेकर आया, (बोला) कहाँ है तेरा भगवान, जो तुझे बचा लेगा ? तभी क्षण भर में ही स्तम्भ फोड़कर एक भयानक रूप (नृसिंह) निकला, जिसने हिरण्यकशिपु को नाख़ूनों से चीर दिया और प्रह्लाद को बचा लिया ॥ ४ ॥ परमात्मा स्वयं अपने भक्तजनों के कार्य सँवारता है। प्रह्लाद भक्त के तो उस प्रभु ने इक्कीस कुलों का उद्धार कर दिया (क्योंकि प्रह्लाद-जैसा भक्त उस कुल में पैदा हुआ)। गुरु नानक कहते हैं कि जीव यदि गुरु के उपदेश से अहम् रूपी विष मार दे, तो प्रभु के नाम से ही भक्तों का मोक्ष हो जाता है ॥ ५ ॥ १० ॥ २० ॥

॥ भैरउ महला ३ ॥ आपे दैत लाइ दिते संत जना कउ आपे राखा सोई । जो तेरी सदा सरणाई तिन मनि दुखु न होई ॥ १ ॥ जुगि जुगि भगता की रखदा आइआ । दैत पुत्रु प्रहलादु गाइत्री तरपणु किछू न जाणै सबदे मेलि मिलाइआ ॥१॥

रहाउ ।। अनदिनु भगति करहि दिन राती दुबिधा सबदे खोई । सदा निरमल है जो सचि राते सचु वसिआ मनि सोई ।। २ ।। मूरख दुबिधा पढ़हि मूलु न पछाणहि बिरथा जनमु गवाइआ । संत जना की निंदा करहि दुसटु दैतु चिड़ाइआ ।। ३ ।। प्रहलादु दुबिधा न पड़ै हरि नामु न छोडै डरै न किसै दा डराइआ । संत जना का हरि जीउ राखा दैतै कालु नेड़ा आइआ ।। ४ ।। आपणी पैज आपे राखै भगतां देइ वडिआई । नानक हरणाखसु नखी बिदारिआ अंधै दर की खबरि न पाई ।। ५ ।। ११ ।। २१ ।।

परमात्मा स्वयं अपने भक्तों के पीछे (परीक्षा लेने के लिए) दैत्य (शत्रु) लगाता है और ख़ुद ही उनकी रक्षा भी करता है। अतः, हे प्रभु, जो तुम्हारी शरण लेते हैं, उन्हें कभी कोई कष्ट नहीं होता ।। १ ।। वह स्वामी, युग-युग से भक्तों की लाज बचाता रहा है, जैसे दैत्य-पुत्र (हिरण्यकशिपु का पुत्र) प्रह्लाद, यद्यपि गायत्री-तर्पण आदि कुछ भी नहीं जानता था, फिर भी उसे परमात्मा ने अपनी शरण में लिया ।। १ ।। रहाउ ।। सदा, रात-दिन भक्ति करनेवाला जीव प्रभु-शब्द से सब दुविधाओं से मुक्त हो जाता है। वह सत्य को पहचानता है, परम सत्य उसके भीतर बसता है, इसलिए वह परम पावन हो जाता है ।। २ ।। मूर्ख जीव (मनमुख) दुविधा में पड़ा अपने मूल को नहीं पहचानता, व्यर्थ में जन्म गँवा देता है। ऐसा जीव सन्तजनों की निन्दा द्वारा दुष्ट राक्षसी वृत्ति के लोगों को भड़काते रहते हैं ।। ३ ।। किन्तु प्रह्लाद-सरीखा भक्त जीव दुविधा में नहीं पड़ता, न ही किसी के डराने से डरता है। सन्तजनों का रक्षक तो प्रभु स्वयं होता है, अन्ततः राक्षसी वृत्ति वाला (हिरण्यकशिपु) ही मृत्यु का शिकार होता है ।। ४ ।। परमात्मा अपनी लीला स्वयं ही जानता है, किन्तु यश भक्तों को देता है। गुरु नानक कहते हैं कि उस मालिक ने नाख़ूनों से हिरण्यकशिपु को चीर डाला, किन्तु उस अज्ञानांध को प्रभु के द्वार की ख़बर न हुई ।। ५ ।। ११ ।। २१ ।।

रागु भैरउ महला ४ चउपदे घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। हरि जन संत करि किरपा पगि लाइणु । गुर सबदी हरि भजु सुरति समाइणु ।। १ ।। मेरे मन हरि भजु नामु नराइणु । हरि हरि क्रिपा करे सुखदाता गुरमुखि भवजलु हरि नामि तराइणु ।। १ ।। रहाउ ।। संगति साध मेलि

हरि गाइणु। गुरमती ले राम रसाइणु ॥ २ ॥ गुर साधू अंम्रित गिआन सरि नाइणु। सभि किलविख पाप गए गवाइणु ॥ ३ ॥ तू आपे करता स्रिसटि धराइणु। जनु नानकु मेलि तेरा दास दसाइणु ॥ ४ ॥ १ ॥

प्रभु-भक्तों एवं सन्तजनों (सच्चे गुरु) की कृपा से ही परमात्मा के चरणों में लीन हुआ जाता है। गुरु के उपदेश से परमात्मा पर ध्यान केन्द्रित करके उसका स्मरण करो ॥ १ ॥ ऐ मेरे मन, परमात्मा का पावन नाम जपो। यदि सुखदाता हरि की कृपा हो, तो गुरु के द्वारा हरि-नाम के माध्यम से संसार-सागर को तिरा जा सकता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साधु-संगति मिले तो प्रभु की स्तुति गाओ; गुरु के उपदेश से हरि-नाम रूपी सर्वरोग-निदान ओषधि को पा लो ॥ २ ॥ यदि गुरु-ज्ञान रूपी अमृत-सरोवर में स्नान कर सको, तो सब पाप धुल जाते हैं ॥ ३ ॥ हे प्रभु, तुम स्वयं कर्ता हो, सृष्टि का आश्रय हो। गुरु नानक कहते हैं कि अपने दासानुदास को आन मिलो ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ भैरउ महला ४ ॥ बोलि हरि नामु सफल सा घरी। गुर उपदेसि सभि दुख परहरी ॥ १ ॥ मेरे मन हरि भजु नामु नरहरी। करि किरपा मेलहु गुरु पूरा सतसंगति संगि सिंधु भउ तरी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जगजीवनु धिआइ मनि हरि सिमरी। कोट कोटंतर तेरे पाप परहरी ॥ २ ॥ सत संगति साध धूरि मुखि परी। इसनानु कीओ अठसठि सुरसरी ॥ ३ ॥ हम मूरख कउ हरि किरपा करी। जनु नानकु तारिओ तारण हरी ॥ ४ ॥ २ ॥

जिस पल (कालावधि) में जीव परमात्मा का नाम लेता है, वही समय सफल है। गुरु के उपदेश से सब दुःख नष्ट हो जाते हैं ॥ १ ॥ ऐ मेरे मन, तुम परमात्मा का नाम जपो। उसकी कृपा होगी तो पूर्ण-गुरु से भेंट होगी और सत्संगति में विचरण करने से भवसागर से पार हो जाओगे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संसार को जीवन देनेवाले परमात्मा का ध्यान करने से तुम्हारे करोड़ों पाप नष्ट हो जायँगे ॥ २ ॥ सत्संगति में साधु-जनों की चरणधूल मुख लगती है, वह ऐसा है जैसे अठासठ तीर्थों (गंगा) का स्नान कर लिया हो ॥ ३ ॥ हम तो मूर्ख गँवार हैं, परमात्मा की जब कृपा हुई तो गुरु नानक कहते हैं कि उस तारनहार परमात्मा ने हमें मोक्ष प्रदान कर दिया ॥ ४ ॥ २ ॥

॥ भैरउ महला ४ ॥ सुक्रितु करणी सारु जप माली । हिरदै फेरि चलै तुधु नाली ॥ १ ॥ हरि हरि नामु जपहु बनवाली । करि किरपा मेलहु सतसंगति तूटि गई माइआ जम जाली ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमुखि सेवा घाल जिनि घाली । तिसु घड़ीऐ सबदु सची टकसाली ॥ २ ॥ हरि अगम अगोचरु गुरि अगम दिखाली । विचि काइआ नगर लधा हरि भाली ॥३॥ हम बारिक हरि पिता प्रतिपाली । जन नानक तारहु नदरि निहाली ॥ ४ ॥ ३ ॥

उत्तम कर्म ही माला है। उसे हृदय में फेरो (सुकृत कमाओ), उसी का फल तुम्हारा साथ देगा ॥ १ ॥ ऐ मन, परमात्मा (प्रकृति के स्वामी) का नाम जपो। वह कृपा-पूर्वक तुम्हें सत्संगति में विचरण का सुअवसर प्रदान करेगा, जिससे तुम्हारा माया-जाल भंग हो जायगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसने गुरु के द्वारा प्रभु की सेवा में संलग्नता प्राप्त की, उसी दम से परमात्मा के दरबार से उसकी शब्द-तार जुड़ जाती है ॥ २ ॥ परमात्मा अपहुँच और अतीन्द्रिय है, गुरु उस अपहुँच को दिखाता है; वह शरीर के भीतर ही वह नगर बता देता है, जहाँ परमात्मा की खोज होती है ॥ ३ ॥ हम बालक हैं, प्रभु हमारा प्रतिपालक पिता है, अतः गुरु नानक कहते हैं कि वह कृपा की एक दृष्टि से ही मुक्त कर देता है ॥ ४ ॥ ३ ॥

॥ भैरउ महला ४ ॥ सभि घट तेरे तू सभना माहि । तुझ ते बाहरि कोई नाहि ॥ १ ॥ हरि सुखदाता मेरे मन जापु । हउ तुधु सालाही तू मेरा हरि प्रभु बापु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जह जह देखा तह हरि प्रभु सोइ । सभ तेरै वसि दूजा अवरु न कोइ ॥ २ ॥ जिस कउ तुम हरि राखिआ भावै । तिस कै नेड़ै कोइ न जावै ॥ ३ ॥ तू जलि थलि महीअलि सभतै भरपूरि । जन नानक हरि जपि हाजरा हजूरि ॥ ४ ॥ ४ ॥

हे प्रभु, सब जीव तुम्हारे हैं, तुम सबमें व्याप्त हो, तुमसे इतर कुछ भी नहीं ॥ १ ॥ ऐ मेरे मन, सुखदाता प्रभु का नाम जपो। मैं तुम्हारी स्तुति करता हूँ, तुम मेरे स्वामी और जनक हो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिधर-जिधर मैं देखता हूँ, उधर परमात्मा ही दीख पड़ता है। सब तुम्हारे वश में है, दूसरा अन्य कोई नहीं ॥ २ ॥ हे प्रभु, जिसकी रक्षा तुम्हें मंज़ूर होती है, कोई हानिकारक शक्ति उसके निकट भी नहीं फटकती ॥ ३ ॥ हे मालिक, तुम जल, थल, आकाश, सब जगह भरपूर

हो, इसीलिए गुरु नानक कहते हैं कि हे दाता, नाम-जाप से तुम प्रत्यक्ष द्रष्टव्य हो ॥ ४ ॥ ४ ॥

भैरउ महला ४ घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ हरि का संतु हरि की हरि मूरति जिसु हिरदै हरि नामु मुरारि । मसतकि भागु होवै जिसु लिखिआ सो गुरमति हिरदै हरि नामु सम्हारि ॥ १ ॥ मधुसूदनु जपीऐ उरधारि । देही नगरि तसकर पंच धातू गुरसबदी हरि काढे मारि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिन का हरि सेती मनु मानिआ तिन कारज हरि आपि सवारि । तिन चूकी मुहताजी लोकन की हरि अंगीकारु कीआ करतारि ॥ २ ॥ मता मसूरति तां किछु कीजै जे किछु होवै हरि बाहरि । जो किछु करे सोई भल होसी हरि धिआवहु अनदिनु नामु मुरारि ॥३॥ हरि जो किछु करे सु आपे आपे ओहु पूछि न किसै करे बीचारि । नानक सो प्रभु सदा धिआईऐ जिनि मेलिआ सतिगुरु किरपा धारि ॥ ४ ॥ १ ॥ ५ ॥

हरि का भक्त, जिसके मन में परमात्मा का नाम बसा है, स्वयं परमात्मा की मूर्ति-सरीखा होता है। जिसके भाग्य में बदा हो, वही गुरु के उपदेश से हरि-नाम का स्मरण करता है ॥ १ ॥ हृदय में धारण कर प्रभु का नाम जपें तो शरीर-नगर में बसे काम-क्रोधादि लुटेरों को गुरु-उपदेश से मारकर भगाया जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो जीव प्रभु में मन रमाते हैं, परमात्मा स्वयं उनके कार्य सँवारता है। उन्हें लोगों की मुहताजी नहीं रह जाती, स्वयं परमात्मा ने उन्हें अंगीकार कर लिया होता है ॥ २ ॥ मनोवांछित परामर्श तो तब करें, यदि कुछ प्रभु की अनन्त सीमाओं से बाहर हो। रात-दिन परमात्मा का नाम जपने से जो भी किया जायगा, वही भला होगा ॥ ३ ॥ हरि जो कुछ भी करता है, वह स्वयं अपना उत्तरदायी है, उसे कोई नहीं पूछ सकता। गुरु नानक कहते हैं कि कृपा-वश सतिगुरु से भेंट करवा देनेवाले प्रभु का सदा ध्यान करें ॥ ४ ॥ १ ॥ ५ ॥

॥ भैरउ महला ४ ॥ ते साधू हरि मेलहु सुआमी जिन जपिआ गति होइ हमारी । तिन का दरसु देखि मनु बिगसै खिनु

खिनु तिन कउ हउ बलिहारी ॥ १ ॥ हरि हिरदै जपि नामु मुरारी । क्रिपा क्रिपा करि जगत पित सुआमी हम दासनि दास कीजै पनिहारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तिन मति ऊतम तिन पति ऊतम जिन हिरदै वसिआ बनवारी । तिन की सेवा लाइ हरि सुआमी तिन सिमरत गति होइ हमारी ॥ २ ॥ जिन ऐसा सतिगुरु साधु न पाइआ ते हरि दरगह काढे मारी । ते नर निंदक सोभ न पावहि तिन नक काटे सिरजनहारी ॥ ३ ॥ हरि आपि बुलावै आपे बोलै हरि आपि निरंजनु निरंकारु निराहारी । हरि जिसु तू मेलहि सो तुधु मिलसी जन नानक किआ एहि जंत विचारी ॥ ४ ॥ २ ॥ ६ ॥

हे परमात्मा, हे मेरे स्वामी, किसी ऐसे सन्तजन गुरु से मिला दो, जिसके स्मरण-मात्र से मेरी मुक्ति हो जाय। जिसका दर्शन करके मन विकसित हो उठे, उस पर मैं प्रतिक्षण बलिहार जाता हूँ ॥ १ ॥ ऐ मन, तुम परमात्मा का नाम जपो। ऐ जगत के स्वामी, हम पर कृपा करो और इस दास को अपने यहाँ जल भर लानेवाला सेवक बना लो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिनके हृदय में परमात्मा बसता है, उनकी बुद्धि एवं प्रतिष्ठा दोनों उत्तम होती हैं। हे प्रभु, हमें उनकी सेवा में संलग्न कर दो, जिनके स्मरण से मुक्ति हो जाती है ॥ २ ॥ जिन जीवों को ऐसा सच्चा गुरु प्राप्त नहीं, वे प्रभु के दरबार में तिरस्कृत करके निकाल दिए जाते हैं। वे निन्दक जन होते हैं, उनकी कोई शोभा नहीं, सृजनहार के द्वार पर वे अपमानित होते हैं ॥ ३ ॥ हरि स्वयं बुलाता है, स्वयं बोलता है, वही मायातीत, निराकार एवं भौतिक आवश्यकताओं से परे है। हे प्रभु, जिसे तुम मिलाओगे, वही तुमसे मिलता है; अन्यथा गुरु नानक का मत है, बेचारे जीव क्या कर सकते हैं ? ॥ ४ ॥ २ ॥ ६ ॥

॥ भैरउ महला ४ ॥ सत संगति साई हरि तेरी जितु हरि कीरति हरि सुनणे । जिन हरिनामु सुणिआ मनु भीना तिन हम स्रेवह नित चरणे ॥ १ ॥ जगजीवनु हरि धिआइ तरणे । अनेक असंख नाम हरि तेरे न जाही जिहवा इतु गनणे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरसिख हरि बोलहु हरि गावहु ले गुरमति हरि जपणे । जो उपदेसु सुणे गुर केरा सो जनु पावै हरि सुख घणे ॥ २ ॥ धंनु सु वंसु धंनु सो पिता धंनु सु माता जिनि जन जणे । जिन सासि गिरासि धिआइआ मेरा हरि हरि

से साची दरगह हरि जन बणे ॥ ३ ॥ हरि हरि अगम नाम हरि तेरे विचि भगता हरि धरणे । नानक जनि पाइआ मति गुरमति जपि हरि हरि पारि पवणे ॥ ४ ॥ ३ ॥ ७ ॥

हे परमात्मा, वही तुम्हारी सत्संगति (साधु-सभा) है, जहाँ तुम्हारे ही नाम का कीर्तन होता और सुना जाता है। हरि-नाम सुनकर जिसका मन सन्तुष्ट हो गया हो, हम नित्य उसके चरणों की सेवा में रत रहेंगे ॥१॥ ऐ जीवो, मुक्ति पाने के लिए जगत के जीवन-दाता परमात्मा का ध्यान करो। परमात्मा के अनेक, असंख्य नाम हैं, इस जिह्वा से गिने नहीं जा सकते ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऐ गुरु-सिक्खो, परमात्मा की स्तुति गाओ, परमात्मा का नाम बोलो और गुरु-उपदेशानुसार प्रभु का नाम जपो। जो गुरु का उपदेश सुनता है, वह व्यक्ति परमसुख प्राप्त करता है ॥ २ ॥ वह वंश धन्य है, वे माता-पिता भी धन्य हैं, जिनके यहाँ प्रभु-भक्त पैदा होता है। जो श्वास-श्वास हरि-नाम जपता है, वह सच्चे परमात्मा के दरबार में सम्मानित होता है ॥ ३ ॥ हे प्रभु, भक्तों ने तुम्हारे अनेक नाम रखे हुए हैं। गुरु नानक कहते हैं कि जो गुरु-मतानुसार तुम्हारा नाम जपता है, वह मुक्त (पार) हो जाता है ॥ ४ ॥ ३ ॥ ७ ॥

भैरउ महला ५ घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सगली थीति पासि डारि राखी। असटम थीति गोविंद जनमासी ॥ १ ॥ भरमि भूले नर करत कचराइण । जनम मरण ते रहत नाराइण ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करि पंजीरु खवाइओ चोर। ओहु जनमि न मरै रे साकत ढोर ॥ २ ॥ सगल पराध देहि लोरोनी। सो मुखु जलउ जितु कहहि ठाकुरु जोनी ॥ ३ ॥ जनमि न मरै न आवै न जाइ। नानक का प्रभु रहिओ समाइ ॥ ४ ॥ १ ॥

(यहाँ कृष्ण-जन्माष्टमी के पर्व पर टिप्पणी की गई है— परमात्मा ने सभी तिथियाँ समान बनाई हैं, फिर अष्टमी को ही महत्त्व क्यों दिया जाय ? गोविन्द-जन्म········?) समस्त तिथियाँ एक ओर करके रख दीं और अष्टमी की तिथि को प्रभु का जन्म मानने लगे ॥ १ ॥ भ्रम-भूले लोग कच्चापन कर रहे हैं, (वे नहीं जानते कि) प्रभु तो जन्म-मरण से परे है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ फल-ज़ीरा (पंजीरी) करके, चोरी-चोरी (ठाकुर को) भोग लगाते हैं। ऐ गँवार पशु, वह तो जन्मता-मरता नहीं ॥ २ ॥ उसे

(परमात्मा को) लोरी देते हो, यह तो सब अपराधों का मूल है; वह मुख जल जाए, जो परमात्मा को योनि-भ्रमण में आया बताता है ॥ ३ ॥ परमात्मा तो न जन्मता है, न मरता है, न कहीं आता-जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि मेरा प्रभु तो सर्वव्यापक है ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ ऊठत सुखीआ बैठत सुखीआ । भउ नही लागै जां ऐसे बुझीआ ॥ १ ॥ राखा एकु हमारा सुआमी । सगल घटा का अंतरजामी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सोइ अचिंता जागि अचिंता । जहा कहां प्रभु तूं वरतंता ॥ २ ॥ घरि सुखि वसिआ बाहरि सुखु पाइआ । कहु नानक गुरि मंत्रु द्रिड़ाइआ ॥ ३ ॥ २ ॥

जो यह जान लेता है (कि परमात्मा जन्म-मरण से परे है), वह उठते-बैठते सुख को प्राप्त करता है ॥ १ ॥ सबका रक्षक एक हमारा परमात्मा ही है, वह समस्त जीवों के भीतर की जाननेवाला है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वह निश्चिन्त भाव से सोता-जागता है, क्योंकि (वह जानता है कि) जहाँ कहीं भी प्रभु स्वयं व्याप्त है ॥ २ ॥ वह घर में सुखी रहता है, बाहर भी उसे सुख प्राप्त होता है, जब वह गुरु नानक के मतानुसार प्रभु-नाम का मन्त्र दृढ़ाता (बार-बार जपता) है ॥ ३ ॥ २ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ वरत न रहउ न मह रमदाना । तिसु सेवी जो रखै निदाना ॥ १ ॥ एकु गुसाई अलहु मेरा । हिंदू तुरक दुहां नेबेरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हज काबै जाउ न तीरथ पूजा । एको सेवी अवरु न दूजा ॥ २ ॥ पूजा करउ न निवाज गुजारउ । एक निरंकार ले रिदै नमसकारउ ॥ ३ ॥ ना हम हिंदू न मुसलमान । अलह राम के पिंडु परान ॥ ४ ॥ कहु कबीर इहु कीआ वखाना । गुर पीर मिलि खुदि खसमु पछाना ॥ ५ ॥ ३ ॥

मैं व्रत-उपवास का अनुष्ठान नहीं करता, रमज़ान के महीने में रोज़े भी नहीं रखता। मैं तो केवल ओट देनेवाले परमात्मा का नाम सिमरन करता हूँ ॥ १ ॥ केवल परमात्मा ही मेरा एकमात्र स्वामी है; मैंने हिन्दू-मुसलमान दोनों से दामन छुड़ा लिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मैं हज्ज के लिए काबा अथवा पूजन के लिए तीर्थों पर नहीं जाता। उसी एक की सेवा में रत हूँ, अन्य कोई नहीं स्वीकारता ॥ २ ॥ मैं न तो पूजा (दिखावे की) करता हूँ, न नमाज़ पढ़ता हूँ; केवल निरंकार परमात्मा

को ही हृदय में नमन करता हूँ ।। ३ ।। न मैं हिन्दू हूँ, न मुसलमान, हमारे (यहाँ सबकी ओर से कहा जा रहा है) तो देह-प्राण सब अल्लाह या राम के हैं ।। ४ ।। कबीरजी कहते हैं कि इसकी क्या व्याख्या करें, हमने तो गुरु से मिलकर स्वामी प्रभु को पहचान लिया है (आप भी पहचान लें) ।। ५ ।। ३ ।।

।। भैरउ महला ५ ।। दस मिरगी सहजे बंधि आनी । पांच मिरग बेधे सिव की बानी ।। १ ।। संत संगि ले चड़िओ सिकार । म्रिग पकरे बिनु घोर हथीआर ।। १ ।। रहाउ ।। आखेर बिरति बाहरि आइओ धाइ । अहेरा पाइओ घर कै गांइ ।। २ ।। म्रिग पकरे घरि आणे हाटि । चुख चुख ले गए बांढे बाटि ।। ३ ।। एहु अहेरा कीनो दानु । नानक कै घरि केवल नामु ।। ४ ।। ४ ।।

हमने दस इन्द्रियाँ रूपी मृगियाँ सहज में ही बाँध ली हैं, पाँच कामादि मृग शिव-बाण (न चूकनेवाले) तीरों से बेध दिए हैं (शिव-बाण = गुरु-शब्द) ।। १ ।। सन्तों की संगति में जीव जब शिकार को निकला, तो उसने बिना घोड़े-हथियारों के ही पाँच मृग पकड़ लिये ।। १ ।। रहाउ ।। शिकारी की वृत्ति पहले बाहर (जंगलों आदि में) दौड़ती थी, किन्तु शिकार तो गाँव-घर में ही मिला ।। २ ।। मृग पकड़कर हम घर लौट आए और सत्संगी साथियों को थोड़ा-थोड़ा हिस्सा भी बाँट दिया ।।३।। गुरु नानक कहते हैं कि हमें उस शिकार में हरि-नाम का ही हिस्सा मिला ।। ४ ।। ४ ।।

।। भैरउ महला ५ ।। जे सउ लोचि लोचि खावाइआ । साकत हरि हरि चीति न आइआ ।। १ ।। संत जना की लेहु मते । साध संगि पावहु परमगते ।। १ ।। रहाउ ।। पाथर कउ बहु नीरु पवाइआ । नह भीगै अधिक सूकाइआ ।। २ ।। खटु सासत्र मूरखै सुनाइआ । जैसे दहदिस पवनु झुलाइआ ।। ३ ।। बिनु कण खलहानु जैसे गाहन पाइआ । तिउ साकत ते को न बरासाइआ ।। ४ ।। तित ही लागा जितु को लाइआ । कहु नानक प्रभि बणत बणाइआ ।। ५ ।। ५ ।।

जो बड़े चाव से सैकड़ों तरह वह (नाम रूपी शिकार) खिलाया, तो भी माया-बिद्ध जीव के मन में हरि-नाम स्थिर नहीं हो सका ।। १ ।। ऐ लोगो, सन्तजन का उपदेश प्राप्त करो और साधु-संगति में परमगति को

प्राप्त करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पत्थर को कितना भी जल चढ़ाओ, अत्यन्त शुष्क होने के कारण वह नहीं भीगता ॥ २ ॥ यदि मूर्ख-गँवार व्यक्ति को छः शास्त्र भी सुनाओ, तो वह (इस प्रकार अप्रभावित रहता है, जैसे) दसों दिशाओं से आकर पवन गुज़र जाता है ॥ ३ ॥ जैसे अन्न-हीन खलिहान के गाहन से (कुछ हाथ नहीं लगता), वैसे ही मायाधारी जीव से किसी को कोई लाभ नहीं पहुँचता ॥ ४ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि इस परमात्मा की बनाई रचना में जिसे वह (प्रभु-नाम की ओर) लगाता है, वही लग पाता है ॥ ५ ॥ ५ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ जीउ प्राण जिनि रचिओ सरीर । जिनहि उपाए तिस कउ पीर ॥ १ ॥ गुरु गोबिंदु जीअ कै काम । हलति पलति जाकी सद छाम ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु आराधन निरमल रीति । साध संगि बिनसी बिपरीति ॥ २ ॥ मीत हीत धनु नह पारणा । धंनि धंनि मेरे नाराइणा ॥ ३ ॥ नानकु बोलै अंम्रित बाणी । एक बिना दूजा नही जाणी ॥४॥६॥

परमात्मा ने शरीर रचकर उसमें जीव-प्राण दिए हैं; जिसने हमें पैदा किया है, उसी को हमारी पीड़ा भी है ॥ १ ॥ गुरु और परमात्मा, दोनों जीव के रक्षक है, लोक-परलोक में सदैव उनकी ही छाँव (सहारा) है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु की आराधना बड़ी निर्मल पद्धति है, सत्संगति में विचरने से सब वैपरीत्य (उलटा व्यवहार) नष्ट हो जाता है ॥ २ ॥ मित्र, हितचिन्तक एवं धन, इनका सब आश्रय व्यर्थ है। नारायण (का सहारा ही) धन्य है (वही उत्तम आश्रय है) ॥ ३ ॥ गुरु नानक अमृत-वचन कहते हैं कि एक परमात्मा को जानो, द्वैत-भाव को विस्मृत कर दो ॥ ४ ॥ ६ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ आगै दयु पाछै नाराइण । मधि भागि हरि प्रेम रसाइण ॥ १ ॥ प्रभू हमारै सासत्र सउण । सूख सहज आनंद ग्रिह भउण ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रसना नामु करन सुणि जीवे । प्रभ सिमरि सिमरि अमर थिरु थीवे ॥ २ ॥ जनम जनम के दूख निवारे । अनहद सबद वजे दरबारे ॥ ३ ॥ करि किरपा प्रभि लीए मिलाए । नानक प्रभ सरणागति आए ॥ ४ ॥ ७ ॥

आगे-पीछे स्वयं प्रभु रक्षक है, बीच के भाग में भी प्रभु-प्रेम का ही रस है (अर्थात् मध्य में भी वही है) ॥ १ ॥ हमारे लिए परमात्मा ही शास्त्र-कथन और शगुन-मुहूर्त है। उसी से सहज-सुख प्राप्य है और

घर में आनन्द भरता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जीभ से हरि-नामोच्चारण एवं कानों से नाम-श्रवण ही जीवन है। प्रभु का स्मरण करके जीव अमर एवं स्थिर होता है ॥ २ ॥ वह परमात्मा जन्म-जन्म के दुःखों को दूर करता है और जीव अनाहत नाद का आत्मिक आनन्द लेता है ॥ ३ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु की शरण लेने से वह कृपा-पूर्वक अपने संग मिला लेता है ॥ ४ ॥ ७ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ कोटि मनोरथ आवहि हाथ । जम मारग कै संगी पांथ ॥ १ ॥ गंगाजलु गुर गोबिंद नाम । जो सिमरै तिस की गति होवै पीवत बहुड़ि न जोनि भ्रमाम ॥१॥ रहाउ ॥ पूजा जाप ताप इसनान । सिमरत नाम भए निहकाम ॥ २ ॥ राज माल सादन दरबार । सिमरत नाम पूरन आचार ॥ ३ ॥ नानक दास इहु कीआ बीचारु । बिनु हरि नाम मिथिआ सभ छारु ॥ ४ ॥ ८ ॥

(हरिनाम-स्मरण से) करोड़ों मनोकामनाएँ पूर्ण होती हैं और आगे मृत्यु-पथ पर एक साथी मिल जाता है ॥ १ ॥ गुरु का बताया प्रभु-नाम गंगा-जल के समान पावन है; जो इसका स्मरण करता है, उसकी गति होती है। जो इसका पान करता है, वह कभी भ्रमों में नहीं भटकता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कर्मकाण्डी पूजन, जप, तप, स्नान, सब हरि-नाम-जाप के सम्मुख व्यर्थ है ॥ २ ॥ प्रभु के दरबार में सम्मान एवं राज, माल की लाखों उपलब्धियाँ हरिनाम-स्मरण से मिलती हैं, जीव का आचरण पूर्ण हो जाता है ॥ ३ ॥ गुरु नानक का विचार है कि हरि-नाम के अतिरिक्त सर्वस्व मिथ्या है, राख है ॥ ४ ॥ ८ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ लेपु न लागो तिल का मूलि । दुसटु ब्राहमणु मूआ होइ कै सूल ॥ १ ॥ हरि जन राखे पारब्रहमि आपि । पापी मूआ गुर परतापि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अपणा खसमु जनि आपि धिआइआ । इआणा पापी ओहु आपि पचाइआ ॥ २ ॥ प्रभ मात पिता अपणे दास का रखवाला । निंदक का माथा ईहां ऊहा काला ॥ ३ ॥ जन नानक की परमेसरि सुणी अरदासि । मलेछु पापी पचिआ भइआ निरासु ॥ ४ ॥ ९ ॥

[एक समय गुरु अर्जुनदेव के सुपुत्र (बाद में गुरु) हरगोविन्द को उसके ब्राह्मण नौकर ने वैरी पृथ्वीचंद के कहने से विष दे दिया। बालक

हरगोविन्द प्रभु-कृपा से विष के प्रभाव से बच गया, किन्तु ब्राह्मण नौकर उदर-पीड़ा से मर गया। उसी सन्दर्भ में प्रभु को धन्यवाद देते हुए गुरुजी कहते हैं।] विष का ज़रा भी प्रभाव नहीं हुआ, बल्कि दुष्ट ब्राह्मण पीड़ा से मर गया ॥ १ ॥ परब्रह्म अपने भक्तों की स्वयं रक्षा करता है, पापी गुरु के प्रताप से नष्ट हो गया ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भक्तजन अपने स्वामी का ध्यान करते हैं, मूर्ख पापी को वह स्वयं ध्वंस कर देता है ॥ २ ॥ परमात्मा हमारा माता-पिता है, अपने दासों का रक्षक है। निन्दक जीव लोक-परलोक, सब जगह मुँह काला करवाता है ॥ ३ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि परमेश्वर ने अपने सेवक की विनती सुनी और बुरी इच्छा वाले पापी को निराश होना पड़ा ॥ ४ ॥ ९ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ खूबु खूबु खूबु खूबु खूबु तेरो नामु। झूठु झूठु झूठु झूठु दुनी गुमानु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नगज तेरे बंदे दीदारु अपारु। नाम बिना सभ दुनीआ छारु ॥ १ ॥ अचरजु तेरी कुदरति तेरे कदम सलाह। गनीव तेरी सिफति सचे पातिसाह ॥ २ ॥ नीधरिआ धर पनह खुदाइ। गरीब निवाज दिनु रैणि धिआइ ॥ ३ ॥ नानक कउ खुदि खसम मिहरवान। अलहु न विसरै दिल जीअ परान ॥ ४ ॥ १० ॥

हे प्रभु, तुम्हारा नाम भी ख़ूब-ख़ूब आश्चर्यजनक है। सांसारिक बड़प्पन का अभिमान बिलकुल झूठा है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुम्हारे सेवक भले हैं और तुम्हारे दर्शन सुन्दरतर हैं; तुम्हारे नाम के बिना शेष सारा संसार ख़ाक है ॥ १ ॥ तुम्हारी लीला आश्चर्यजनक है, तुम्हारे चरण प्रशंसनीय हैं; हे सच्चे वाहिगुरु, तुम्हारी महत्ता अमूल्य है ॥ २ ॥ तुम निराश्रितों के आश्रय हो, सबका प्रश्रय हो। निर्धनों पर कृपा करनेवाले तुम्हीं हो, मैं दिन-रात तुम्हारा ही ध्यान करता हूँ ॥ ३ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि जब प्रभु स्वयं कृपा करता है तो हृदय से हरि-नाम कभी विस्मृत नहीं होता ॥ ४ ॥ १० ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ साच पदारथु गुरमुखि लहहु। प्रभ का भाणा सति करि सहहु ॥ १ ॥ जीवत जीवत जीवत रहहु। राम रसाइणु नित उठि पीवहु। हरि हरि हरि हरि रसना कहहु ॥१॥रहाउ॥ कलिजुग महि इक नामि उधारु। नानकु बोलै ब्रहम बीचारु ॥ २ ॥ ११ ॥

हरि-नाम रूपी सच्चा पदार्थ गुरु के द्वारा उपलब्ध होता है, तभी जीव प्रभु-इच्छा को सहज में शिरोधार्य करता है ॥ १ ॥ तब मनुष्य

नित्य अमरता पाकर जीवंत होता है और राम-नाम की महौषधि का पान करता है। जिह्वा से सदा हरि-हरि-नाम उच्चारता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कलियुग में मात्र हरि-नाम से उद्धार सम्भव है, गुरु नानक का यह कथन ब्रह्म का सही विचार है ॥ २ ॥ ११ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ सतिगुरु सेवि सरब फल पाए। जनम जनम की मैलु मिटाए ॥ १ ॥ पतित पावन प्रभ तेरो नाउ। पूरबि करम लिखे गुण गाउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साधू संगि होवै उधारु। सोभा पावै प्रभ कै दुआर ॥ २ ॥ सरब कलिआण चरण प्रभ सेवा। धूरि बाछहि सभि सुरि नर देवा ॥ ३ ॥ नानक पाइआ नाम निधानु। हरि जपि जपि उधरिआ सगल जहानु ॥ ४ ॥ १२ ॥

सतिगुरु की सेवा में रत रहने से समस्त फल प्राप्त होते हैं, जन्म-जन्म के पापों की मलिनता दूर हो जाती है ॥ १ ॥ हे प्रभु, तुम्हारा नाम पतितों को भी पवित्र करनेवाला है; पूर्व कर्मों से ही उसके गुण गा सकने का सामर्थ्य मिलता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सत्संगति में रहने पर उद्धार होता है और जीव को प्रभु के द्वार पर सेवा-संलग्न होने का अवसर प्राप्त होता है ॥ २ ॥ प्रभु-चरणों की सेवा में रत रहने से सब प्रकार से कल्याण होता है और ऋषि-मुनि तथा देवता भी उसकी चरणधूल की याचना करते हैं ॥ ३ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम की निधि पाकर जब जीव उसका जाप करने लगते हैं तो समूचा जहान मुक्त हो जाता है ॥ ४ ॥ १२ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ अपणे दास कउ कंठि लगावै। निंदक कउ अगनि महि पावै ॥ १ ॥ पापी ते राखे नाराइण। पापी की गति कतहू नाही पापी पचिआ आप कमाइण ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दास राम जीउ लागी प्रीति। निंदक की होई बिपरीति ॥ २ ॥ पारब्रहमि अपणा बिरदु प्रगटाइआ। दोखी अपणा कीता पाइआ ॥ ३ ॥ आइ न जाई रहिआ समाई। नानक दास हरि की सरणाई ॥ ४ ॥ १३ ॥

परमात्मा अपने सेवकों को गले लगाता और निन्दकों को ध्वंस कर देता है (अग्नि में जलाता है) ॥ १ ॥ पापी से प्रभु रक्षा करता है, पापी की कहीं गति नहीं, वह अपने कर्मों में जलता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सेवक (भक्त) प्रभु से प्रीति लगाता है, जबकि निन्दक दुर्मति में लगता

है ॥ २ ॥ परमात्मा तो अपने विरद को प्रकटता है, दोषी को कर्मों का दण्ड मिलता है ॥ ३ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि हरि की शरण लेनेवाला आवागमन से मुक्त होकर प्रभु में ही लीन होता है ॥ ४ ॥ १३ ॥

रागु भैरउ महला ५ चउपदे घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ स्रीधर मोहन सगल उपावन निरंकार सुखदाता । ऐसा प्रभु छोडि करहि अन सेवा कवन बिखिआ रस माता ॥ १ ॥ रे मन मेरे तू गोविद भाजु । अवर उपाव सगल मै देखे जो चितवीऐ तितु बिगरसि काजु ॥१॥ रहाउ ॥ ठाकुरु छोडि दासी कउ सिमरहि मनमुख अंध अगिआना । हरि की भगति करहि तिन निंदहि निगुरे पसू समाना ॥ २ ॥ जीउ पिंडु तनु धनु सभु प्रभ का साकत कहते मेरा । अहंबुधि दुरमति है मैली बिनु गुर भवजलि फेरा ॥ ३ ॥ होम जग जप तप सभि संजम तटि तीरथि नही पाइआ । मिटिआ आपु पए सरणाई गुरमुखि नानक जगतु तराइआ ॥ ४ ॥ १ ॥ १४ ॥

वाहिगुरु सबका रचयिता, मायातीत एवं सुखों का दाता है। ऐसे महान स्वामी को छोड़कर अन्यों की सेवा करनेवाला जीव कैसे विचित्र और विषैले भोगों में मस्त है ! ॥ १ ॥ ऐ मेरे मन, तुम गोविन्द का भजन करो। अन्य सब उपाय करके मैंने देख लिये हैं, यदि उन्हें अपनाएँ तो काम बिगड़ता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ स्वामी (परमात्मा) को छोड़कर मनमुख अज्ञानी जीव दासी (माया) का स्मरण करता है। वह हरि-भक्तों की निन्दा करता और गुरु-विहीन पशु-सम जीवन जीता है ॥ २ ॥ शरीर, प्राण, धन, सब परमात्मा की देन है, माया-प्रिय जीव इन्हें अपना मानते हैं। अहंकार-पूर्ण बुद्धि मलिन दुर्मति मात्र है, गुरु के बिना संसार-सागर में आवागमन बना रहता है ॥ ३ ॥ होम, यज्ञ, जप, तप, संयम, तट-तीर्थ आदि के अनुष्ठानों से परमात्मा नहीं मिलता। गुरु नानक कहते हैं, जो अहम् को त्यागकर गुरु की शरण लेते हैं, वे ही जगत में मुक्ति प्राप्त करते हैं ॥ ४ ॥ १ ॥ १४ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ बन महि पेखिओ त्रिण महि पेखिओ ग्रिहि पेखिओ उदासाए । दंडधार जटधारै पेखिओ वरत नेम तीरथाए ॥ १ ॥ संत संगि पेखिओ मन माएं । ऊभ

पइआल सरब महि पूरन रसि मंगल गुण गाए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जोग भेख संनिआसै पेखिओ जति जंगम कापड़ाए । तपी तपीसुर मुनि महि पेखिओ नट नाटिक निरताए ॥ २ ॥ चहु महि पेखिओ खट महि पेखिओ दसअसटी सिम्रिताए । सभ मिलि एको एकु वखानहि तउ किस ते कहउ दुराए ॥ ३ ॥ अगह अगह बेअंत सुआमी नह कीम कीम कीमाए । जन नानक तिन कै बलि बलि जाईऐ जिह घटि परगटीआए ॥ ४ ॥ २ ॥ १५ ॥

उस परमात्मा को वन में देखा, वनस्पति में खोजा, गृहस्थी अथवा उदासीनता में ढूँढ़ा, दण्डी और जटाधारी योगी बनकर एवं व्रत, नियम और तीर्थयात्राओं में उसकी खोज की ॥ १ ॥ (किन्तु वह नहीं मिला— और जब) सच्चे गुरु की संगति प्राप्त हुई तो वह मन में ही मिल गया । तब मैंने आकाश-पाताल सबमें व्याप्त परमात्मा के गुण सहर्ष गाए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ योगियों, वेषधारियों एवं संन्यासियों के रूप में, यति, कापड़िए एवं जंगम योगियों के रूप धारण करके भी प्रभु को खोजा; तपस्वी, तपीश्वर, मुनियों एवं नाट्य तथा नृत्यों (लीलाओं) में भी उसे ढूँढ़ा ॥२॥ चार (वेदों) में देखा, छः (शास्त्रों) में खोजा, अठारह (पुराण) में ढूँढ़ा, स्मृतियों की पड़ताल भी की, सब उसी एक रूप का बखान करते हैं, तब वह किससे छिपा हुआ कहा जाय ॥३॥ वह अन्तहीन अथाह मालिक है, उसकी कोई क़ीमत नहीं डाली जा सकती । गुरु नानक कहते हैं कि वे उस पर क़ुर्बान हैं, जिसके हृदय में प्रभु प्रकट है ॥ ४ ॥ २ ॥ १५ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ निकटि बुझै सो बुरा किउ करै । बिखु संचै नित डरता फिरै । है निकटे अरु भेदु न पाइआ । बिनु सतिगुर सभ मोही माइआ ॥ १ ॥ नेड़ै नेड़ै सभु को कहै । गुरमुखि भेदु विरला को लहै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ निकटि न देखै पर ग्रिहि जाइ । दरबु हिरै मिथिआ करि खाइ । पई ठगउरी हरि संगि न जानिआ । बाझु गुरू है भरमि भुलानिआ ॥ २ ॥ निकटि न जानै बोलै कूड़ु । माइआ मोहि मुठा है मूड़ु । अंतरि वसतु दिसंतरि जाइ । बाझु गुरू है भरमि भुलाइ ॥ ३ ॥ जिसु मसतकि करमु लिखिआ लिलाट । सतिगुरु सेवे खुल्हे कपाट । अंतरि बाहरि निकटे सोइ । जन नानक आवै न जावै कोइ ॥ ४ ॥ ३ ॥ १६ ॥

जो परमात्मा को निकट जानता है, वह बुराई क्योंकर कर सकता

है ? किन्तु जो माया रूपी विष एकत्रित करता है, वह डरता रहता है। वह तो सबसे निकट है, किन्तु उसका रहस्य ज्ञात नहीं। सतिगुरु के बिना सब लोग माया द्वारा मोहित हैं ॥ १ ॥ परमात्मा को सब निकट ही बताते हैं, किन्तु इस रहस्य का ज्ञान गुरु के द्वारा किसी विरले जीव को ही मिलता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो लोग परमात्मा को समीप ही नहीं देख पाते, वे द्वैत-भाव से पीड़ित होते हैं। वे दूसरों का द्रव्य हरण करते एवं मिथ्या आचरण करके जीते हैं। वे (माया-कारण) ऐसे ठगे-से हैं कि अंग-संग परमात्मा को भी नहीं पहचानते, गुरु के बिना वे भ्रमों में भूले फिरते हैं ॥ २ ॥ निकटतम परमात्मा को न जानकर जीव मिथ्या वचन बोलता है, वह मूढ़, मोह-माया द्वारा ठगा हुआ है। यथार्थ वस्तु मन के भीतर है, उसकी खोज में वह दिशा-दिशा में घूमता है— गुरु के बिना वह भ्रमों में भूला फिरता है ॥ ३ ॥ जिसके भाग्य में ऐसी उपलब्धि लिखित है, वही सतिगुरु की सेवा करता है, जिससे उसका मनःद्वार खुल जाता है (आत्मा जाग्रत् होती है)। अन्तर-बाहर, सब जगह वह परमात्मा ही निकटतम है, (जो इस तथ्य को पहचानता है) गुरु नानक का कथन है कि उसका आवागमन चुक जाता है ॥ ४ ॥ ३ ॥ १६ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ जिसु तू राखहि तिसु कउनु मारै। सभ तुझ ही अंतरि सगल संसारै। कोटि उपाव चितवत है प्राणी। सो होवै जि करै चोज विडाणी ॥ १ ॥ राखहु राखहु किरपा धारि। तेरी सरणि तेरै दरवारि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिनि सेविआ निरभउ सुखदाता। तिनि भउ दूरि कीआ एकु पराता। जो तू करहि सोई फुनि होइ। मारै न राखै दूजा कोइ ॥ २ ॥ किआ तू सोचहि माणस बाणि। अंतरजामी पुरखु सुजाणु। एक टेक एको आधारु। सभ किछु जाणै सिरजणहारु ॥ ३ ॥ जिसु ऊपरि नदरि करे करतारु। तिसु जन के सभि काज सवारि। तिस का राखा एको सोइ। जन नानक अपड़ि न साकै कोइ ॥ ४ ॥ ४ ॥ १७ ॥

हे परमात्मा, जिसके रक्षक तुम स्वयं हो, उसको कौन मार सकता है ? समस्त संसार तुम्हारे ही नियन्त्रण में है। जीव करोड़ों उपाय सोचता है, किन्तु होता वही है, जो लीलाधर प्रभु चाहता है ॥ १ ॥ हे प्रभु, कृपा-पूर्वक मेरी रक्षा करो, मैं तुम्हारे दरबार में, तुम्हारी शरण में आया हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस व्यक्ति ने उस निर्भय और सुखदाता परमात्मा की आराधना की है, वह उस एक ब्रह्म को पहचानता और सब प्रकार के भयों से मुक्त हो जाता है। हे प्रभु, जो तुम करते हो,

वही होता है, अन्य कोई न मार सकता है, न बचा सकता है ॥ २ ॥ ऐ मनुष्य, तुम स्वभाव-वश क्या सोचते हो ? वह प्रभु अन्तर्यामी और विवेकी है । उस एक का सहारा लो, उसी का आश्रय पकड़ो, क्योंकि वह सृजनकर्ता सब कुछ स्वयं जानता है ॥ ३ ॥ परमात्मा जिस पर कृपा-दृष्टि करता है, उस व्यक्ति के वह सब कार्य सँवार देता है। गुरु नानक कहते हैं कि उस व्यक्ति की रक्षक वह एकमात्र शक्ति बनती है, जिस तक अन्य किसी की पहुँच नहीं होती ॥ ४ ॥ ४ ॥ १७ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ तउ कड़ीऐ जे होवै बाहरि । तउ कड़ीऐ जे विसरै नरहरि । तउ कड़ीऐ जे दूजा भाए । किआ कड़ीऐ जां रहिआ समाए ॥ १ ॥ माइआ मोहि कड़े कड़ि पचिआ । बिनु नावै भ्रमि भ्रमि भ्रमि खपिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तउ कड़ीऐ जे दूजा करता । तउ कड़ीऐ जे अनिआइ को मरता । तउ कड़ीऐ जे किछु जाणै नाही । किआ कड़ीऐ जां भरपूरि समाही ॥ २ ॥ तउ कड़ीऐ जे किछु होइ धिङाणै । तउ कड़ीऐ जे भूलि रंञाणै । गुरि कहिआ जो होइ सभु प्रभ ते । तब काड़ा छोडि अचिंत हम सोते ॥ ३ ॥ प्रभ तू है ठाकुरु सभु को तेरा ॥ जिउ भावै तिउ करहि निबेरा । दुतीआ नासति इकु रहिआ समाइ । राखहु पैज नानक सरणाइ ॥ ४ ॥ ५ ॥ १८ ॥

दुःखी तो तब हों, यदि परमात्मा हमसे कहीं बाहर हो; या दुःखी तब हैं, यदि परमात्मा विस्मृत हो जाय । यदि द्वैत-भाव पैदा हो, तब भी दुःख होगा, किन्तु जब वह सर्वत्र व्याप्त है, तो दुःख कैसा ? (अर्थात् जब जीव उसी में रमा है तो दुःख क्योंकर होगा) ॥ १ ॥ जीव मोह-माया में कठोरता से फँसा है और वहीं सड़ रहा है । हरि-नाम के बिना अनेक भ्रमों में खप रहा है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दुःखी तो तब हों यदि कर्ता कोई और हो । दुःखी तो तब हों यदि बिन आई मौत कोई मरे या दुःखी तब हों यदि वह कुछ जानता न हो; जब वह परमात्मा ही सर्वत्र व्याप्त है, तो फिर दुःखी क्यों हों ? ॥ २ ॥ दुःखी तो तब हों, यदि कुछ बलात् हो जाय या दुःख तब होता है यदि वह ग़लती से किसी को कष्ट पहुँचाता हो । सतिगुरु का कथन है कि जो कुछ भी होता है, सब परमात्मा द्वारा ही होता है, इसीलिए सब प्रकार की चिन्ताओं के दुःख से मुक्त हम निश्चिन्त जीते हैं ॥ ३ ॥ हे मालिक, तुम सबके स्वामी हो, सब तुम्हारे हैं; जैसा तुम्हें रुचता है, तुम सबको निबाहते हो । दूसरा

अन्य कोई नहीं, वही एक सर्वत्र व्याप्त है; गुरु नानक विनती करते हैं कि हे प्रभु, शरण में आनेवाले की लाज रख लो (रक्षा करो) ॥ ४ ॥ ५ ॥ १८ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ बिनु बाजे कैसो निरतिकारी । बिनु कंठै कैसे गावनहारी । जील बिना कैसे बजै रबाब । नाम बिना बिरथे सभि काज ॥ १ ॥ नाम बिना कहहु को तरिआ । बिनु सतिगुर कैसे पारि परिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बिनु जिहवा कहा को बकता । बिनु स्रवना कहा को सुनता । बिनु नेत्रा कहा को पेखै । नाम बिना नरु कही न लेखै ॥ २ ॥ बिनु बिदिआ कहा कोई पंडित । बिनु अमरै कैसे राज मंडित । बिनु बूझे कहा मनु ठहराना । नाम बिना सभु जगु बउराना ॥ ३ ॥ बिनु बैराग कहा बैरागी । बिनु हउ तिआगि कहा कोऊ तिआगी । बिनु बसि पंच कहा मन चूरे । नाम बिना सद सद ही झूरे ॥ ४ ॥ बिनु गुर दीखिआ कैसे गिआनु । बिनु पेखे कहु कैसो धिआनु । बिनु भै कथनी सरब बिकार । कहु नानक दर का बीचार ॥ ५ ॥ ६ ॥ १९ ॥

जैसे बिना वादन-संगीत के नृत्य व्यर्थ है, बिना मधुर कण्ठ के गायन बेकार है, बिना तार के जैसे रबाब (तन्त्री) है, वैसे ही हरि-नाम के बिना संसार का सब कार्य-व्यवहार है ॥ १ ॥ कहो, भला नाम के बिना कौन मुक्त हुआ है, सतिगुरु के बिना कोई क्योंकर गति पा सका है ! ॥१॥ रहाउ ॥ बिना जिह्वा के कौन बोल सकता है ? बिना कानों के कौन सुन सकता है ? बिना नेत्रों के कहो कौन देख सकता है ? ऐसे ही हरि-नाम के बिना मनुष्य की कोई बिसात नहीं ॥ २ ॥ जैसे बिना विद्या के कोई पण्डित नहीं होता, बिना अधिकार के कोई शासक नहीं होता, बिना ज्ञान के मन में स्थिरता नहीं आती, वैसे ही हरि-नाम के बिना सारा संसार पगलाया फिरता है ॥ ३ ॥ जैसे वैराग्य के बिना कोई विरागी नहीं होता, बिना अहम्-त्याग के कोई त्यागी नहीं कहलाता; पाँचों इन्द्रियों (काम-क्रोधादि) को वश में किए बग़ैर जैसे मन स्थिर नहीं होता, वैसे ही प्रभु-नाम के बिना व्यक्ति सदैव दुःखी रहता है ॥ ४ ॥ गुरु की दीक्षा के बिना ज्ञान कहाँ ? देखे बिना ध्यान कहाँ ? बिना भय के कथनी-करनी में विकार रहता है, वैसे ही, गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम के बिना प्रभु-दरबार का विचार (ज्ञान) नहीं मिलता ॥ ५ ॥ ६ ॥ १९ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ हउमै रोगु मानुख कउ दीना । काम रोगि मैगलु बसि लीना । द्रिसटि रोगि पचि मुए पतंगा ।

नाद रोगि खपि गए कुरंगा ॥ १ ॥ जो जो दीसै सो सो रोगी। रोग रहित मेरा सतिगुरु जोगी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिहवा रोगि मीनु ग्रसिआनो। बासन रोगि भवरु बिनसानो। हेत रोग का सगल संसारा। त्रिबिधि रोग महि बधे बिकारा ॥ २ ॥ रोगे मरता रोगे जनमै। रोगे फिरि फिरि जोनी भरमै। रोग बंध रहनु रती न पावै। बिनु सतिगुर रोगु कतहि न जावै ॥ ३ ॥ पारब्रहमि जिसु कीनी दइआ। बाह पकड़ि रोगहु कढि लइआ। तूटे बंधन साध संगु पाइआ। कहु नानक गुरि रोगु मिटाइआ ॥ ४ ॥ ७ ॥ २० ॥

अहंकार का रोग (यहाँ रोग शब्द का प्रयोग विकारयुक्त प्रवृत्ति के लिए हुआ है) मनुष्य को दुःखी करता है, कामाग्नि के रोग से हाथी बन्दी बनता है, दृष्टि के रोग से पतंगा जल मरता है और नाद-श्रवण के रोग से मृग मारा जाता है ॥ १ ॥ जो भी दीख पड़ता है, किसी न किसी रोग में ग्रस्त है, यदि कोई रोग-रहित है तो वह मेरा योगेश्वर सतिगुरु है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिह्वा के रोग से मछली फँसती है, सुगन्धि-लोभ के रोग से भँवर नष्ट हो जाता है, मोह रूपी रोग में समूचा संसार विकल है। त्रिगुणात्मक (मायायुक्त) रोग में समस्त विकार निहित हैं ॥ २ ॥ रोग (विकार) से ही जीव जन्म-मरण के चक्र में पड़ता है, रोग के ही कारण विभिन्न योनियों में भ्रमता है; रोग में बँधा जीव रत्ती भर भी स्थिरता नहीं पाता, सतिगुरु के बिना यह रोग कभी दूर नहीं हो सकता ॥ ३ ॥ परब्रह्म जिस पर कृपा करता है, उसे बाँह से पकड़कर रोग-मुक्त कर देता है। सत्संगति में विचरण करते हुए जीव के समस्त बंधन टूट जाते हैं, गुरु नानक कहते हैं कि सतिगुरु सब रोगों को मिटा देता है ॥ ४ ॥ ७ ॥ २० ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ चीति आवै तां महा अनंद। चीति आवै तां सभि दुख भंज। चीति आवै तां सरधा पूरी। चीति आवै तां कबहि न झूरी ॥ १ ॥ अंतरि रामराइ प्रगटे आइ। गुरि पूरै दीओ रंगु लाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चीति आवै तां सरब को राजा। चीति आवै तां पूरे काजा। चीति आवै तां रंगि गुलाल। चीति आवै तां सदा निहाल ॥ २ ॥ चीति आवै तां सद धनवंता। चीति आवै तां सद निभरंता। चीति आवै तां सभि रंग माणे। चीति आवै तां चूकी काणे ॥ ३ ॥ चीति आवै तां सहज घरु पाइआ। चीति

आवै तां सुंनि समाइआ। चीति आवै सद कीरतनु करता। मनु मानिआ नानक भगवंता ॥ ४ ॥ ८ ॥ २१ ॥

मन में परमात्मा का ध्यान हो तो महान आनन्द होता है, हृदय में प्रभु का भजन हो तो सब दुःख दूर हो जाते हैं, हृदय में उसका स्वरूप स्थिर हो तो पूर्ण श्रद्धा होती है, मन में नित्य उसका ध्यान होने से कभी कोई दुःख नहीं होता ॥ १ ॥ जब मन में प्रभु प्रकट होता है, तो पूरे गुरु के उपदेशों से अपरिमित प्रीति उपजती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मन में हरि बसे तो मनुष्य पुरुषोत्तम हो, मन में प्रभु का वास हो तो मनुष्य के समस्त कार्य सम्पन्न हों, मन में ईश्वर का ध्यान हो तो प्रगाढ़ प्रेम की लालिमा छा जाय और यदि वह हृदय में स्थिर हो जाय तो मनुष्य सदैव आनन्दपूर्ण रहे ॥ २ ॥ मन में उसका ध्यान पके तो जीव परम धन का भागी हो, मन में ईश्वर का ध्यान हो तो मनुष्य भ्रम-रहित हो जाय, मन में परमात्मा स्थिर हो तो सब ओर प्रेमपूर्ण वातावरण बने और हृदय में प्रभु का स्वरूप आने से सब प्रकार की विवशताएँ नष्ट हों ॥ ३ ॥ परमात्मा का ध्यान मन में उपजने से जीव तुरीया पद को प्राप्त करता है; मन में प्रभु का स्वरूप हो तो जीव निर्वाण पद को पाता है; मन में परमात्मा का ध्यान हो तो मनुष्य सदैव उसका गुणगान करता है, गुरु नानक कहते हैं कि मन में प्रभु को धारण करने से जीव प्रभु के ही समान हो जाता है ॥ ४ ॥ ८ ॥ २१ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ बापु हमारा सद चरंजीवी। भाई हमारे सदही जीवी। मीत हमारे सदा अबिनासी। कुटंबु हमारा निजघरि वासी ॥ १ ॥ हम सुखु पाइआ तां सभहि सुहेले। गुरि पूरै पिता संगि मेले ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मंदर मेरे सभ ते ऊचे। देस मेरे बेअंत अपूछे। राजु हमारा सद ही निहचलु। मालु हमारा अखूटु अबेचलु ॥ २ ॥ सोभा मेरी सभ जुग अंतरि। बाज हमारी थान थनंतरि। कीरति हमरी घरि घरि होई। भगति हमारी सभनी लोई ॥ ३ ॥ पिता हमारे प्रगटे माझ। पिता पूत रलि कीनी सांझ। कहु नानक जउ पिता पतीने। पिता पूत एकै रंगि लीने ॥ ४ ॥ ९ ॥ २२ ॥

हम सबका पिता (वाहिगुरु) चिरंजीवी है, हमारे सब सम्बन्धी भी प्रभु-कृपा से अमर हो गए हैं (परमात्मा जब मन में आ बसा तो सभी कुटुम्बीजन भी मुक्त हो गए)। हमारे मित्र-बन्धु भी अनश्वर हुए और समूचा कुटुम्ब परमपद को प्राप्त हुआ ॥ १ ॥ हमें भी सुख मिला,

अन्य भी सब सुखी हुए; सच्चे गुरु ने हमें पिता (परमात्मा) के साथ मिला दिया ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरा घर सर्वोच्च हो गया, मेरा देश यमदूतों की पहुँच से बाहर हो गया; हमारा राज्य निश्चल हुआ और हमारी समूची सामग्री अविचलित हो गई है (अर्थात् परमात्मा के मिल जाने से हमें अपना समूचा माहौल ही निश्चल, स्थिर और परमोत्तम दीख पड़ रहा है) ॥ २ ॥ समूचे युग में मेरी शोभा होने लगी, जगह-जगह हमारी ख्याति हुई, घर-घर में हमारा यश प्रसरित हुआ, बल्कि सब लोकों में हमारी भक्ति प्रचारित हो गई ॥ ३ ॥ मेरे भीतर ही पिता (प्रभु) प्रकट हुए हैं, पिता-पुत्र का सुखद मिलन हुआ है। गुरु नानक कहते हैं, यदि पिता प्रसन्न हो जाय, तो वह पुत्र को भी अपने रंग में रँग लेता है ॥ ४ ॥ ९ ॥ २२ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ निरवैर पुरख सतिगुर प्रभ दाते। हम अपराधी तुम्ह बखसाते। जिसु पापी कउ मिलै न ढोई। सरणि आवै तां निरमलु होई ॥ १ ॥ सुखु पाइआ सतिगुरू मनाइ। सभ फल पाए गुरू धिआइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पारब्रहम सतिगुर आदेसु। मनु तनु तेरा सभु तेरा देसु। चूका पड़दा तां नदरी आइआ। खसमु तूहै सभना के राइआ ॥ २ ॥ तिसु भाणा सूके कासट हरिआ। तिसु भाणा तां थल सिरि सरिआ। तिसु भाणा तां सभि फल पाए। चिंत गई लगि सतिगुर पाए ॥ ३ ॥ हरामखोर निरगुण कउ तूठा। मनु तनु सीतलु मनि अंम्रितु वूठा। पारब्रहम गुर भए दइआला। नानक दास देखि भए निहाला ॥ ४ ॥ १० ॥ २३ ॥

सतिगुरु निर्वैर और परमात्मा का प्रतिनिधि होता है। हम अपराधी हैं, तुम (उसी के माध्यम से) हमें बख़्श लेते हो। जिस पापी को कोई सहारा नहीं मिलता, वह भी यदि तुम्हारी शरण में आए तो निर्मल हो जाता है ॥ १ ॥ सतिगुरु की आराधना से हमने सुख पाया है, गुरु का ध्यान करने से सब फल मिल जाते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे परब्रह्म, हे सतिगुरु, तुम्हें वन्दन है; यह तन, मन और निवास, सब तुम्हारा दिया हुआ है। पर्दा दूर होने पर सत्य प्रकट होता है कि तुम सबके स्वामी और शासक हो ॥ २ ॥ उसकी इच्छा हो तो सूखी लकड़ी भी हरी हो जाती है; यदि उसे स्वीकार हो तो सूखी धरती पर सरोवर बन जायँ, उसे मंज़ूर हो तो सब फल प्राप्त हों और यदि (उसे स्वीकार हो तो) सतिगुरु से भेंट हो जाय और समस्त चिन्ताएँ मिट जायँ ॥ ३ ॥ परमात्मा यदि दुष्ट (हरामख़ोर) एवं गुणहीन व्यक्ति पर भी कृपा करे

तो उसे तन-मन से शीतल कर दे और उसके हृदय में अमृत-वर्षण हो। गुरु नानक दयालु परब्रह्म की असीम कृपाओं को देख-देखकर अति आनन्दित हैं ॥ ४ ॥ १० ॥ २३ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ सतिगुरु मेरा बे मुहताजु । सतिगुर मेरे सचा साजु । सतिगुरु मेरा सभस का दाता । सतिगुरु मेरा पुरखु बिधाता ॥ १ ॥ गुर जैसा नाही को देव । जिसु मसतकि भागु सु लागा सेव ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतिगुरु मेरा सरब प्रतिपालै । सतिगुरु मेरा मारि जीवालै । सतिगुर मेरे की वडिआई । प्रगटु भई है सभनी थाई ॥ २ ॥ सतिगुरु मेरा ताणु निताणु । सतिगुरु मेरा घरि दीबाणु । सतिगुर कै हउ सद बलि जाइआ । प्रगटु मारगु जिनि करि दिखलाइआ ॥ ३ ॥ जिनि गुरु सेविआ तिसु भउ न बिआपै । जिनि गुरु सेविआ तिसु दुखु न संतापै । नानक सोधे सिम्रिति बेद । पारब्रहम गुर नाही भेद ॥ ४ ॥ ११ ॥ २४ ॥

मेरा सतिगुरु स्वाश्रित है, मेरा सतिगुरु सत्य की सज्जा वाला है। वह सबका दाता है, मेरा सतिगुरु खुद खुदा (पुरुष-विधाता) है ॥ १ ॥ गुरु के समान कोई इष्ट नहीं, केवल वही व्यक्ति उसकी सेवा में रत होता है, जिसका ऊँचा भाग्य होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरा सतिगुरु सबका प्रतिपालक है, मेरा सतिगुरु मारकर भी जिला लेनेवाला है; मेरे सतिगुरु की बड़ाई प्रकट में सब जगह उज्ज्वल है ॥ २ ॥ मेरा सतिगुरु बेसहारों का सहारा है, मेरा सतिगुरु मेरी प्रार्थना को सुनता है (घर में दीवान से तात्पर्य है, जिसके सम्मुख फ़रियाद की जा सकती है।) अपने सतिगुरु पर मैं सदा क़ुर्बान हूँ, जिसने सही मार्ग प्रकट करके मुझे उस पर लगाया है ॥ ३ ॥ जो गुरु की सेबा करता है, उसे कोई भय नहीं रह जाता, जो गुरु-सेवा में रत है उसे कोई दुःख-संताप नहीं होता। गुरु नानक कहते हैं कि स्मृतियों और वेदों का अवलोकन करके भी मैंने यही पाया है कि गुरु और ब्रह्म में कोई भेद नहीं होता ॥ ४ ॥ ११ ॥ २४ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ नामु लैत मनु परगटु भइआ । नामु लैत पापु तन ते गइआ । नामु लैत सगल पुरबाइआ । नामु लैत अठसठि मजनाइआ ॥ १ ॥ तीरथु हमरा हरि को नामु । गुरि उपदेसिआ ततु गिआनु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नामु लैत दुखु दूरि पराना । नामु लैत अति मूड़ सुगिआना । नामु लैत

परगटि उजीआरा । नामु लैत छुटे जंजारा ।। २ ।। नामु लैत जमु नेड़ि न आवै । नामु लैत दरगह सुखु पावै । नामु लैत प्रभु कहै साबासि । नामु हमारी साची रासि ।। ३ ।। गुरि उपदेसु कहिओ इहु सारु । हरि कीरति मन नामु अधारु । नानक उधरे नाम पुनहचार । अवरि करम लोकह पतीआर ।। ४ ।। १२ ।। २५ ।।

हरि-नाम जपने से परमात्मा अन्तर में ही प्रकट हो जाता है, हरि-नाम-जाप से शरीर के सब पाप धुल जाते हैं, नाम-स्मरण से सभी पर्वों का फल हस्तामलक-सम होता है और नाम जपने से अठासठ तीर्थों में स्नान का फल होता ।। १ ।। हमारा पुण्य तीर्थ परमात्मा का नाम ही है, गुरु के उपदेश का यही तत्त्व-ज्ञान है ।। १ ।। रहाउ ।। प्रभु-नाम लेने से दुःख दूर होते हैं, प्रभु-नाम से मूढ़ भी ज्ञानवान् हो जाते हैं; नाम जपने से अन्तर्मन में उजाला होता है और नाम-स्मरण से सब बन्धन छूट जाते हैं ।। २ ।। हरिनाम-जाप से यमदूत निकट नहीं फटकते, नाम के कारण जीव को मृत्यूपरान्त प्रभु-दरबार में सुख मिलता है, परमात्मा के नाम के कारण व्यक्ति प्रशंसा का पात्र होता है, नाम-स्मरण ही हमारी सच्ची राशि है ।। ३ ।। गुरु ने उपदेश द्वारा यह तत्त्व-ज्ञान दिया है, हरि का यशोगान ही मन का आधार है । गुरु नानक कहते हैं कि हरिनाम-जाप सब पापों का प्रायश्चित्त है, अन्य सब कर्म-काण्ड लोगों को दिखाने के हैं । (नाम-जाप ही उपयुक्त कर्म है) ।। ४ ।। १२ ।। २५ ।।

।। भैरउ महला ५ ।। नमसकार ता कउ लख बार । इहु मनु दीजै ता कउ वारि । सिमरनि ता कै मिटहि संताप । होइ अनंदु न विआपहि ताप ।। १ ।। ऐसो हीरा निरमल नाम । जासु जपत पूरन सभि काम ।। १ ।। रहाउ ।। जा की द्रिसटि दुख डेरा ढहै । अंम्रित नामु सीतलु मनि गहै । अनिक भगत जा के चरन पूजारी । सगल मनोरथ पूरनहारी ।। २ ।। खिन महि ऊणे सुभर भरिआ । खिन महि सूके कीने हरिआ । खिन महि निथावे कउ दीनो थानु । खिन महि निमाणे कउ दीनो मानु ।। ३ ।। सभ महि एकु रहिआ भरपूरा । सो जापै जिसु सतिगुरु पूरा । हरि कीरतनु ता को आधारु । कहु नानक जिसु आपि दइआरु ।। ४ ।। १३ ।। २६ ।।

उस परमात्मा को लाखों बार नमस्कार है, यह मन उस पर क़ुर्बान

कर दो। उस प्रभु के सिमरन से दुःख-सन्ताप दूर होते हैं, त्रैताप नष्ट होकर पूर्ण आनन्द हो जाता है ॥ १ ॥ प्रभु का नाम ऐसा निर्मल अमूल्य हीरा है, जिसके स्मरण से सब कार्य सम्पन्न हो जाते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस परमात्मा की कृपा-दृष्टि से दुःख कूच कर जाते हैं, मन उसका अमृत-समान शीतल नाम ग्रहण करता है। अनेक भक्तजन जिसके चरणों के पुजारी हैं, वह (प्रभु) समस्त मनोरथों को पूर्ण करनेवाला है ॥ २ ॥ (परमात्मा) क्षण भर ही खाली को पूरा भर देता है, वह क्षण में ही सूखे पेड़ों को हरा कर सकता है, क्षण भर में ही वह निराश्रितों को आश्रय देता है और क्षण में ही वह तिरस्कृत-जन को मान प्रदान करता है ॥ ३ ॥ वही एक परमात्मा सबमें बसता है, उसका स्मरण भी वही कर सकता है, जो पूर्णसतिगुरु की शरण लेता है। गुरु नानक कहते हैं कि जिस पर वह स्वयं दया करता है, परमात्मा का यशोगान उसका मूल सहारा बन जाता है ॥ ४ ॥ १३ ॥ २६ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ मोहि दुहागनि आपि सीगारी। रूप रंग दे नामि सवारी। मिटिओ दुखु अरु सगल संताप। गुर होए मेरे माई बाप ॥ १ ॥ सखी सहेरी मेरै ग्रसति अनंद। करि किरपा भेटे मोहि कंत ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तपति बुझी पूरन सभ आसा। मिटे अंधेर भए परगासा। अनहद सबद अचरज बिसमाद। गुरु पूरा पूरा परसाद ॥ २ ॥ जा कउ प्रगट भए गोपाल। ता कै दरसनि सदा निहाल। सरब गुणा ता कै बहुतु निधान। जा कउ सतिगुरि दीओ नाम ॥ ३ ॥ जा कउ भेटिओ ठाकुरु अपना। मनु तनु सीतलु हरि हरि जपना। कहु नानक जो जन प्रभ भाए। ता की रेनु बिरला को पाए ॥ ४ ॥ १४ ॥ २७ ॥

मैं तो गुण-हीन जीव-स्त्री हूँ, मुझे मेरे स्वामी ने स्वयं शृंगारा है; मुझे हरि-नाम का रूप-रंग प्रदान किया है। जबसे गुरु मेरे माई-बाप (आश्रयदाता) बने हैं, मेरा सब दुःख-संताप मिट गया है ॥ १ ॥ हे सखियो, सहेलियो, जबसे प्रभु-पति ने मुझ पर कृपा-दृष्टि की है और मुझे मिलन-प्रेम प्रदान किया है, मेरे घर परमानन्द व्याप्त हो गया है ॥१॥ रहाउ ॥ मेरी सब आशाएँ पूर्ण हुई हैं और मनस्ताप बुझ गया है। मेरे जीवन का अन्धकार दूर होकर उजाला हो गया है। अनाहत शब्द का श्रवण मेरे लिए अति आनन्द-दायी है, यदि मुझ पर पूर्णसतिगुरु की पूर्ण कृपा हुई हो ॥ २ ॥ जिस पर परमात्मा प्रकट होता है, उसके दर्शनों में भी परम सुख है। उनके पास सर्व प्रकार के गुणों के अनेक कोष

एकत्रित हो जाते हैं, जिन्हें सतिगुरु सन्तुष्ट होकर हरि-नाम बख्शता है ॥ ३ ॥ जो अपने ठाकुर से भेंट कर लेते हैं, हरि-नाम जपने से उनका मन-तन शीतल हो जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि जो भक्तजन प्रभु को प्रिय हैं, उनकी चरण-धूल किसी विरले व्यक्ति को ही मिलती है ॥ ४ ॥ १४ ॥ २७ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ चितवत पाप न आलकु आवै। बेसुआ भजत किछु नह सरमावै। सारो दिनसु मजूरी करै। हरि सिमरन की वेला बजर सिरि परै ॥ १ ॥ माइआ लगि भूलो संसारु। आपि भुलाइआ भुलावणहारै राचि रहिआ बिरथा बिउहार ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पेखत माइआ रंग बिहाइ। गड़बड़ करै कउडी रंगु लाइ। अंध बिउहार बंध मनु धावै। करणैहारु न जीअ महि आवै ॥ २ ॥ करत करत इव ही दुखु पाइआ। पूरन होत न कारज माइआ। कामि क्रोधि लोभि मनु लीना। तड़फि मूआ जिउ जल बिनु मीना ॥ ३ ॥ जिस के राखे होए हरि आपि। हरि हरि नामु सदा जपु जापि। साध संगि हरि के गुण गाइआ। नानक सतिगुरु पूरा पाइआ ॥ ४ ॥ १५ ॥ २८ ॥

(जिन जीवों को) पाप करते हुए आलस्य नहीं होता, वेश्या-भोग करते कोई शर्म नहीं आती, सारा दिन (माया की) मजदूरी करते हैं, उन्हें हरि-स्मरण के समय मौत पड़ती है (अर्थात् वे सब कुछ करते हैं, किन्तु प्रभु-नाम-स्मरण से दूर रहते हैं) ॥ १ ॥ सारा संसार माया की दासता में भूला पड़ा है। उस भुलावनहारे परमात्मा ने स्वयं सबको भुला रखा है और निकम्मे कार्यों में व्यस्त किया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ माया के रंग देखते हुए उसकी (जीव की) समूची आयु बीत जाती है। कौड़ियों में प्रीति लगाकर हिसाब में गड़बड़ करता है (अर्थात् निकम्मी रक़म के लोभ में हिसाब में गड़बड़ करता है)। अन्ध-व्यवहार में बँधा उसका मन इधर-उधर दौड़ता है। जो कुछ (हरिनाम-स्मरण) करना चाहिए, वह कभी मन में नहीं आता ॥ २ ॥ ऐसा ही करते-करते वह दुःख पाता है, किन्तु माया-बन्धनों में जकड़ा होने के कारण एक भी कार्य पूर्ण नहीं हो पाता। मन काम-क्रोध में लिप्त रहता है और प्राण जल-विहीन मीन की नाईं तड़पते रहते हैं ॥ ३ ॥ जिसका रक्षक परमात्मा स्वयं होता है, वह सदैव हरि-हरिनाम का जाप करता है। गुरु नानक कहते हैं कि सतिगुरु की संगति में जीव नित्य हरि-गुण गाता है ॥ ४ ॥ १५ ॥ २८ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ अपणी दइआ करे सो पाए। हरि का नामु मंनि वसाए। साच सबदु हिरदे मन माहि। जनम जनम के किलविख जाहि ॥ १ ॥ राम नामु जीअ को आधारु। गुरपरसादि जपहु नित भाई तारि लए सागर संसारु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिन कउ लिखिआ हरि एहु निधानु। से जन दरगह पावहि मानु। सूख सहज आनंद गुण गाउ। आगै मिलै निथावे थाउ ॥ २ ॥ जुगह जुगंतरि इहु ततु सारु। हरि सिमरणु साचा बीचारु। जिसु लड़ि लाइ लए सो लागै। जनम जनम का सोइआ जागै ॥ ३ ॥ तेरे भगत भगतन का आपि। अपणी महिमा आपे जापि। जीअ जंत सभि तेरै हाथि। नानक के प्रभ सद ही साथि ॥ ४ ॥ १६ ॥ २९ ॥

जिस पर परमात्मा अपनी दया करता है, वही हरि-नाम को मन में धारण करके उसे पाता है। जिसके हृदय में सच्चा शब्द स्थिर है, उसके जन्म-जन्म के पाप धुल जाते हैं ॥ १ ॥ परमात्मा का नाम आत्मा का सहारा है। ऐ भाई, गुरु की कृपा से उस नाम का जाप करो और संसार-सागर से पार हो जाओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परमात्मा ने जिनके भाग्य में यह निधि (नाम) प्राप्त होना लिखा है, वे लोग प्रभु के दरबार में प्रतिष्ठित होते हैं। सहज पद में निश्चल होकर प्रभु के गुण गाओ तो आगे बे-आसरों को भी आसरा मिल जाता है ॥ २ ॥ युग-युगांतर से ज्ञान-तत्त्व है कि हरिनाम-स्मरण ही एकमात्र सत्य विचार है। परमात्मा जिसे अपने सम्पर्क में लेता है, वही उसकी संगति में जन्म-जन्म की निद्रा (अज्ञान) त्यागकर जाग्रतावस्था प्राप्त करता है ॥ ३ ॥ हे प्रभु, भक्त तुम्हारे हैं, तुम स्वयं भक्तों के हो; तुम उन भक्तों से अपनी महिमा का जाप करवाते हो। गुरु नानक कहते हैं कि हे प्रभु, सब जीव-जन्तु तुम्हारे हाथ हैं, तुम अपने भक्तों का सदा साथ देते हो ॥ ४ ॥ १६ ॥ २९ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ नामु हमारै अंतरजामी। नामु हमारै आवै कामी। रोमि रोमि रविआ हरि नामु। सतिगुर पूरै कीनो दानु ॥ १ ॥ नामु रतनु मेरै भंडार। अगम अमोला अपर अपार ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नामु हमारै निहचल धनी। नाम की महिमा सभ महि बनी। नामु हमारै पूरा साहु। नामु हमारै बेपरवाहु ॥ २ ॥ नामु हमारै भोजन भाउ। नामु हमारै मन का सुआउ। नामु न विसरै संत प्रसादि। नामु लैत अनहद पूरे नाद ॥ ३ ॥ प्रभ किरपा ते

नामु नउनिधि पाई। गुर किरपा ते नाम सिउ बनि आई। धनवंते सेई परधान। नानक जाकै नामु निधान ॥४॥१७॥३०॥

हरि-नाम हमारे लिए अन्तर की बातें जाननेवाला है (यहाँ 'हरि-नाम' से स्वयं 'हरि' का अभिप्राय है), हरि-नाम ही सदैव हमारे काम आता है। यह प्रभु का नाम हमारे रोम-रोम में रमा है, पूर्णसतिगुरु से ही इस नाम का दान प्राप्त हुआ है ॥ १ ॥ हरिनाम-रत्न ही मेरा अमूल्य संग्रह है, जो कि अपहुँच और अपरंपार है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परमात्मा स्वयं हमारा निश्चल स्वामी है, उसकी महिमा सर्वत्र प्रसारित है। परमात्मा हमारा नियन्ता है, वह बड़ा बे-परवाह मालिक है ॥ २ ॥ हमारा भाव-भोजन हरि-नाम ही है, हरि-नाम से हमारे मन के सब प्रयोजन पूरे होते हैं। सन्त (गुरु) की कृपा से नाम कभी विस्मृत नहीं होता, उसके जपने से अनाहत नाद-श्रवण का सुख मिलता है ॥ ३ ॥ प्रभु-कृपा से जीव को नवनिधि-समान हरि-नाम प्राप्त होता है, गुरु की कृपा से नाम की उपलब्धि होती है। गुरु नानक कहते हैं कि जिनके पास हरिनाम-धन का कोष है, वे ही धनवान हैं ॥ ४ ॥ १७ ॥ ३० ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ तू मेरा पिता तू है मेरा माता। तू मेरे जीअ प्रान सुखदाता। तू मेरा ठाकुरु हउ दासु तेरा। तुझ बिनु अवरु नही को मेरा ॥ १ ॥ करि किरपा करहु प्रभ दाति। तुम्हरी उसतति करउ दिन राति ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हम तेरे जंत तू बजावनहारा। हम तेरे भिखारी दानु देहि दातारा। तउ परसादि रंग रस माणे। घट घट अंतरि तुमहि समाणे ॥ २ ॥ तुम्हरी क्रिपा ते जपीऐ नाउ। साध संगि तुमरे गुण गाउ। तुम्हरी दइआ ते होइ दरद बिनासु। तुमरी मइआ ते कमल बिगासु ॥ ३ ॥ हउ बलिहारि जाउ गुरदेव। सफल दरसनु जा की निरमल सेव। दइआ करहु ठाकुर प्रभ मेरे। गुण गावै नानकु नित तेरे ॥ ४ ॥ १८ ॥ ३१ ॥

हे प्रभु, तुम मेरे माता-पिता हो, तुम मेरे पिण्ड-प्राण को सुख देने वाले हो; तुम मेरे स्वामी हो, मैं तुम्हारा सेवक हूँ, तुम्हारे सिवा मेरा अन्य कोई नहीं ॥ १ ॥ हे दाता, कृपा करके मुझे बख़्श दो, मैं रात-दिन तुम्हारी स्तुति करता हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हम तुम्हारे यन्त्र हैं, तुम बजानेवाले हो; हम तुम्हारे भिखारी हैं, तुम दान देनेवाले दाता हो। हम तुम्हारी ही कृपा से सुख-आनन्द भोगते हैं, तुम हर-एक में समाए हुए हो ॥ २ ॥ तुम्हारी कृपा से ही जीव नाम जपते हैं, सत्संगति

में रहकर तुम्हारा गुणगान करते हैं। हे प्रभु, तुम्हारी दया से सब कष्ट दूर होते हैं, तुम्हारी ही कृपा से हृदय रूपी कमल खिलता है ॥ ३ ॥ हे सच्चे गुरुदेव, मैं तुम पर क़ुर्बान हूँ, तुम्हारा दर्शन फलदायी और तुम्हारी सेवा निर्मल है। हे मेरे स्वामी, मुझ पर दया करो, मैं (गुरु नानक) नित्य तुम्हारे ही गुण गाता हूँ ॥ ४ ॥ १८ ॥ ३१ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ सभ ते ऊच जा का दरबारु। सदा सदा ता कउ जोहारु। ऊचे ते ऊचा जा का थान। कोटि अघा मिटहि हरि नाम ॥ १ ॥ तिसु सरणाई सदा सुखु होइ। करि किरपा जा कउ मेलै सोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जा के करतब लखे न जाहि। जा का भरवासा सभ घट माहि। प्रगट भइआ साधू कै संगि। भगत अराधहि अनदिनु रंगि ॥२॥ देदे तोटि नही भंडार। खिन महि थापि उथापनहार। जा का हुकमु न मेटै कोइ। सिरि पातिसाहा साचा सोइ ॥ ३ ॥ जिस की ओट तिसै की आसा। दुखु सुखु हमरा तिस ही पासा। राखि लीनो सभु जन का पड़दा। नानकु तिस की उसतति करदा ॥ ४ ॥ १९ ॥ ३२ ॥

जिस (प्रभु) का दरबार सर्वोच्च है, उस (परमात्मा) को सदा नमस्कार है। जिसका स्थान सबसे ऊँचा है, उस हरि के नाम से करोड़ों पाप मिट जाते हैं ॥ १ ॥ उसकी शरण लेने में सदा सुख है; जिस पर उसकी कृपा होती है, वह उसे पा लेता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसकी लीलाएँ दीख नहीं पड़तीं (अर्थात् जो रहस्यमयी लीलाएँ करता है), जिसका भरोसा सभी जीवों को है, वह सत्संगति में रहने से प्रगट हो जाता है। भक्तजन उसकी दिन-रात आराधना करते और उसके प्रेम में लीन रहते हैं ॥ २ ॥ सबको देकर भी उसके भण्डार में कभी कमी नहीं आती, वह क्षण में ही स्थापित को विस्थापित करने की क्षमता रखता है। जिसका हुकुम कोई नहीं टाल सकता, वह शासकों का भी शासक सच्चा स्वामी है ॥ ३ ॥ जिसका सहारा सब लेते हैं, हमें भी उसी की आशा है। हमारा सुख-दुःख उसी के वश में है। गुरु नानक कहते हैं कि जो उस (प्रभु) की स्तुति करते हैं, वह उन सेवकों की लाज बचाता है ॥ ४ ॥ १९ ॥ ३२ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ रोवन हारी रोजु बनाइआ। बलन बरतन कउ सनबंधु चिति आइआ। बूझि बैरागु करे जे

कोइ । जनम मरण फिरि सोगु न होइ ॥ १ ॥ बिखिआ का सभु धंधु पसारु । विरलै कीनो नाम अधारु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ त्रिबिधि माइआ रही बिआपि । जो लपटानो तिसु दूख संताप । सुखु नाही बिनु नाम धिआए । नाम निधानु बडभागी पाए ॥२॥ स्वांगी सिउ जो मनु रीझावै । स्वागि उतारिऐ फिरि पछुतावै । मेघ की छाइआ जैसे बरतनहार । तैसो परपंचु मोह बिकार ॥ ३ ॥ एक वसतु जे पावै कोइ । पूरन काजु ताही का होइ । गुरप्रसादि जिनि पाइआ नामु । नानक आइआ सो परवानु ॥ ४ ॥ २० ॥ ३३ ॥

संसार में माया ने लोगों को रुलाने का नियम बना रखा है, जीवन के छल-छन्द का व्यवहार ही जीवों को रुलाता है। जो विवेकी मोह-रहित होते हैं, उनको जन्म-मरण में फिर कभी शोक नहीं सताता ॥ १ ॥ संसार में विषय-विकारों का समस्त प्रसार है, कोई विरला व्यक्ति ही हरि-नाम का आधार लेता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ त्रिगुणमयी माया चतुर्दिक् व्याप्त है, जो उससे लिपटता है, वह दुःखों-सन्तापों को झेलता है। हरि-नाम की आराधना के बिना कहीं सुख नहीं, कोई भाग्यशाली जीव ही प्रभु-नाम की निधि को प्राप्त करता है ॥ २ ॥ जैसे स्वांग करके कोई मन बहलाता है, वह स्वांग हटा दिए जाने पर पुनः पछताता रह जाता है। जैसे कोई मेघ की छाया का सहारा लेता है, वैसा ही मोह-विकार आदि का प्रपंच है। (अर्थात् यह सब अस्थिर तत्त्व हैं, इनका आश्रय लेनेवाला अन्ततः पछताता है।) ॥ ३ ॥ एक वस्तु (हरि-नाम) यदि किसी को मिल जाय तो उसके सब कार्य सम्पन्न हो जाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि जिसे गुरु-कृपा से हरि-नाम मिल जाता है, वह परमात्मा के दरबार में परवाण हो जाता है ॥ ४ ॥ २० ॥ ३३ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ संत की निंदा जोनी भवना । संत की निंदा रोगी करना । संत की निंदा दूख सहाम । डानु दैत निंदक कउ जाम ॥ १ ॥ संत संगि करहि जो बादु । तिन निंदक नाही किछु सादु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भगत की निंदा कंधु छेदावै । भगत की निंदा नरकु भुंचावै । भगत की निंदा गरभ महि गलै । भगत की निंदा राज ते टलै ॥ २ ॥ निंदक की गति कतहू नाहि । आपि बीजि आपे ही खाहि । चोर जार जूआर ते बुरा । अणहोदा भारु निंदकि सिरि

धरा ॥ ३ ॥ पारब्रहम के भगत निरवैर । सो निसतरै जो पूजै पैर । आदि पुरखि निंदकु भोलाइआ । नानक किरतु न जाइ मिटाइआ ॥ ४ ॥ २१ ॥ ३४ ॥

जो जीव सन्तों की निन्दा करते हैं, वे जन्म-मरण के चक्र में पड़ते हैं; सन्तों की निन्दा विकृत प्रवृत्ति पैदा करती है, सन्तों की निन्दा के परिणामस्वरूप दुःख सहन करने पड़ते हैं, निन्दक जीव को यमदूत दण्ड देते हैं ॥ १ ॥ जो सन्तों के साथ झगड़ा खड़ा करते हैं, उन निन्दकों को कोई सुख-प्रसन्नता नहीं मिलती ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भक्तों की निन्दा से शरीर टूटता है, भक्तों की निन्दा से नरक भोगना पड़ता है। भक्तों की निन्दा के कारण पुनःपुनः गर्भ-दुःख सहने पड़ते हैं, भक्तों की निन्दा से सुखोल्लास नष्ट हो जाता है ॥ २ ॥ निन्दक मनुष्य की कहीं गति नहीं, जो कुछ वह स्वयं बीजता है, वही वह खाता है (कर्मों का फल भोगता है)। निन्दक चोर, जुआरी और दुष्कर्मियों से भी बुरा है, अनस्तित्व का बोझ उसके सिर पर रखा रहता है। (अनस्तित्व इसलिए कि बिना कारण वह निन्दा कर-करके अपने लिए सन्ताप पैदा करता है।) ॥ ३ ॥ परब्रह्म की भक्ति करनेवाले निर्वैर होते हैं, जो उनके चरणों की पूजा करता है, वह भी मुक्त हो जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा ने स्वयं निन्दक को भ्रमाया है, कर्मानुसार बना उसका स्वभाव कभी नहीं मिटता ॥ ४ ॥ २१ ॥ ३४ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ नामु हमारै बेद अरु नाद । नामु हमारै पूरे काज । नामु हमारै पूजा देव । नामु हमारै गुर की सेव ॥ १ ॥ गुरि पूरै द्रिड़िओ हरि नामु । सभ ते ऊतमु हरि हरि कामु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नामु हमारै मजन इसनानु । नामु हमारै पूरन दानु । नामु लैत ते सगल पवीत । नामु जपत मेरे भाई मीत ॥ २ ॥ नामु हमारै सउण संजोग । नामु हमारै त्रिपति सु भोग । नामु हमारै सगल आचार । नामु हमारै निरमल बिउहार ॥ ३ ॥ जा कै मनि वसिआ प्रभु एकु । सगल जना की हरि हरि टेक । मनि तनि नानक हरिगुण गाउ । साध संगि जिसु देवै नाउ ॥ ४ ॥ २२ ॥ ३५ ॥

हमारे लिए हरि-नाम ही वैदिक ज्ञान एवं मन्त्र-नाद है, हरि-नाम से हमारे समस्त कार्य सम्पन्न होते हैं। हरि-नाम ही हमारी इष्ट-पूजा है, नाम ही हमारे लिए सतिगुरु की सेवा के समान है ॥ १ ॥ पूरे गुरु ने

हरि-नाम दृढ़ाया है, हरिनाम जपना सबसे उत्तम कार्य है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरिनाम-जाप ही हमारे लिए पर्वों का स्नान है, नाम ही हमारे लिए दान का अनुष्ठान है। हरि-नाम जपने मात्र से सब पवित्र होता है, नाम जपनेवाले सब मेरे भाई और मित्र हैं ॥ २ ॥ हरि-नाम ही हमारे लिए शगुन तथा उत्तम ग्रह है, हरि-नाम ही हमारे लिए पूर्णतृप्ति और सन्तोष है। हमारा समूचा आचरण हरि-नाम में निहित है, हमारे व्यवहार की निर्मलता भी हरि-नाम से होती है ॥ ३ ॥ जिसके हृदय में स्वयं प्रभु निवास करता है, परमात्मा उन समस्त भक्तों का एकमात्र सहारा है। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा जिन्हें साधु-संगति में नाम-प्राप्ति का सामर्थ्य देता है, वे ही सदैव तन-मन से उसका गुणगान करते हैं ॥ ४ ॥ २२ ॥ ३५ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ निरधन कउ तुम देवहु धना। अनिक पाप जाहि निरमल मना। सगल मनोरथ पूरन काम। भगत अपुने कउ देवहु नाम ॥ १ ॥ सफल सेवा गोपालराइ। करन करावनहार सुआमी ता ते बिरथा कोइ न जाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रोगी का प्रभ खंडहु रोगु। दुखीए का मिटावहु प्रभ सोगु। निथावे कउ तुम्ह थानि बैठावहु। दास अपने कउ भगती लावहु ॥ २ ॥ निमाणे कउ प्रभ देतो मानु। मूड़ मुगधु होइ चतुर सुगिआनु। सगल भइआन का भउ नसै। जन अपने कै हरि मनि बसै ॥ ३ ॥ पारब्रहम प्रभ सूख निधान। ततु गिआनु हरि अंम्रित नाम। करि किरपा संत टहलै लाए। नानक साधू संगि समाए ॥ ४ ॥ २३ ॥ ३६ ॥

हे परमात्मा, यदि तुम अपने भक्त को नाम-दान दो, तो वह निर्धन भी धनवान हो जाता है; उसके सब पाप दूर होते और उसका मन निर्मल हो जाता है। उसके समस्त मनोरथ तथा कार्य पूरे होते हैं॥ १ ॥ परमात्मा की सेवा का फल मधुर होता है; परमात्मा सब कुछ करने योग्य है, उसकी सेवा वृथा नहीं जाती ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परमात्मा विकृत जीवों के विकार दूर करता है, दुःखी जीव का दुःख हरण करता है, बे-सहारा को प्रभु सहारा देता है और अपने सेवक को भक्ति में प्रवृत्त करता है ॥ २ ॥ तिरस्कृत जीव को परमात्मा प्रतिष्ठा प्रदान करता है, जीव मूर्ख और अज्ञानी से सुयोग्य और ज्ञानवान् हो जाता है। सब भयानक चीज़ों का भय उसके लिए दूर हो जाता है, परमात्मा अपने भक्तों के मन में स्वयं बसता है॥ ३ ॥ परब्रह्म परमात्मा स्वयं सुखों का ख़ज़ाना है, परमात्मा का अमृत-नाम ही तत्त्व-ज्ञान है। गुरु नानक कहते

हैं कि परमात्मा जिन पर कृपा करके अपनी सेवा में लेता है, वे सत्संगति के कारण प्रभु में ही समा जाते हैं ॥ ४॥ २३ ॥ ३६ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ संत मंडल महि हरि मनि वसै । संत मंडल महि दुरतु सभु नसै । संत मंडल महि निरमल रीति । संत संगि होइ एक परीति ॥ १ ॥ संत मंडलु तहा का नाउ । पारब्रहम केवल गुण गाउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संत मंडल महि जनम मरणु रहै । संत मंडल महि जमु किछू न कहै । संत संगि होइ निरमल बाणी । संत मंडल महि नामु वखाणी ॥२॥ संत मंडल का निहचल आसनु । संत मंडल महि पाप बिनासनु । संत मंडल महि निरमल कथा । संत संगि हउमै दुख नसा ॥ ३ ॥ संत मंडल का नही बिनासु । संत मंडल महि हरि गुणतासु । संत मंडल ठाकुर बिस्रामु । नानक ओति पोति भगवानु ॥ ४ ॥ २४ ॥ ३७ ॥

सन्तों की संगति में रहने से प्रभु मन में आ बसता है । सन्तों की संगति में सब पाप नष्ट हो जाते हैं, सन्त-संगति में सब कार्य-व्यापार निर्मल रहता है, सन्तों के सम्पर्क में रहने से ही प्रभु में प्रीति उपजती है ॥ १ ॥ सत्संगति उस जगह का नाम है, जहाँ केवल परमात्मा के गुण गाए जाते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सत्संगति में जन्म-मरण चुक जाता है, सत्संगति में रहनेवाले को यमदूत कुछ नहीं कह पाते । सन्तों की संगति में रहने से वाणी निर्मल हो जाती है, सत्संगति में केवल हरि-नाम का बखान-मात्र होता है ॥ २ ॥ साधु-संगति का आसन निश्चल है, साधु-संगति पापों की नाशक है । सन्तों के घेरे में निर्मल प्रभु-कथा कही जाती है, सन्तों के सम्पर्क में अहम्-भाव का दुःख नष्ट हो जाता है ॥ ३ ॥ सन्तों के घेरे का कभी नाश नहीं होता, गुणागार परमात्मा सन्तों की संगति में ही प्राप्य है । गुरु नानक कहते हैं कि वह (सन्त-मण्डल) परमात्मा के रहने की जगह है, परमात्मा वहीं बसता है ॥ ४ ॥ २४ ॥ ३७ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ रोगु कवन जां राखै आपि । तिसु जन होइ न दूखु संतापु । जिसु ऊपरि प्रभु किरपा करै । तिसु ऊपर ते कालु परहरै ॥ १ ॥ सदा सखाई हरि हरि नामु । जिसु चीति आवै तिसु सदा सुखु होवै निकटि न आवै ता कै जामु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब इहु न सो तब किनहि उपाइआ । कवन मूल ते किआ प्रगटाइआ । आपहि मारि आपि जीवालै ।

अपने भगत कउ सदा प्रतिपालै ॥ २ ॥ सभ किछु जाणहु तिस कै हाथ । प्रभु मेरो अनाथ को नाथ । दुख भंजनु ता का है नाउ । सुख पावहि तिस के गुण गाउ ॥ ३ ॥ सुणि सुआमी संतन अरदासि । जीउ प्रान धनु तुम्हरै पासि । इहु जगु तेरा सभ तुझहि धिआए । करि किरपा नानक सुखु पाए ॥ ४ ॥ २५ ॥ ३८ ॥

परमात्मा जिसकी स्वयं रक्षा करता है, उसे कौन-सा रोग प्रताड़ित कर सकता है ? ऐसे व्यक्ति को तो कोई दुःख-सन्ताप होता ही नहीं। जिस पर प्रभु कृपा करता है, उस पर से तो मृत्यु भी टल जाती है ॥ १ ॥ हरि का नाम सदैव शुभचिन्तक मित्र के समान है। जिसके मन में यह (हरि-नाम) बसता है, उसे सदा सुख मिलता है— यमदूत भी उसके निकट नहीं आते ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब जीव नहीं था, तो उसे किसने पैदा किया था ? किस मूल (शक्ति) से वह प्रकट हुआ था। परमात्मा ही मारता और परमात्मा ही जिलाता है। वह अपने भक्तों का सदैव प्रतिपालक है ॥ २ ॥ सब कुछ उसी के हाथ समझो, मेरा प्रभु अनाथों का स्वामी है। उसका नाम दुःखों को दूर करनेवाला है, इसका (हरि-नाम का) गुणगान करके सदैव सुख मिलता है ॥ ३ ॥ हे स्वामी, अपने भक्तों की प्रार्थना सुनो, उनका जीवन, प्राण, धन सब तुम्हारे आश्रय है। गुरु नानक कहते हैं कि यह सारा संसार तुम्हारी आराधना करता है, कृपा करके सुख-वर्तन करो ॥ ४ ॥ २५ ॥ ३८ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ तेरी टेक रहा कलि माहि । तेरी टेक तेरे गुण गाहि । तेरी टेक न पोहै कालु । तेरी टेक बिनसै जंजालु ॥ १ ॥ दीन दुनीआ तेरी टेक । सभ महि रविआ साहिबु एक ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तेरी टेक करउ आनंद । तेरी टेक जपउ गुर मंत । तेरी टेक तरीऐ भउ सागरु । राखनहारु पूरा सुखसागरु ॥ २ ॥ तेरी टेक नाही भउ कोइ । अंतरजामी साचा सोइ । तेरी टेक तेरा मनि ताणु । ईहां ऊहां तू दीबाणु ॥ ३ ॥ तेरी टेक तेरा भरवासा । सगल धिआवहि प्रभ गुणतासा । जपि जपि अनदु करहि तेरे दासा । सिमरि नानक साचे गुणतासा ॥ ४ ॥ २६ ॥ ३९ ॥

कलियुग के घोर समय में मुझे, हे प्रभु, तुम्हारा ही सहारा है। तुम्हारा ही सहारा है, मैं तुम्हारे ही गुण गाता हूँ। तुम्हारे सहारे के

कारण काल भी मुझे नहीं छू सकता, तुम्हारे सहारे से माया का जाल विनष्ट होता है ॥ १ ॥ हे मेरे परमात्मा, मेरी दीन-दुनिया का तुम्हीं एक सहारा हो, सबमें हे स्वामी, तुम्हीं एक रमण करते हो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुम्हारे सहारे मैं आनन्द करता हूँ, तुम्हारे ही आश्रय गुरु-मन्त्र जपता हूँ। तुम्हारे ही सहारे भव-सागर से पार उतरता हूँ, तुम्हीं मेरे सुख-सागर रक्षक हो ॥ २ ॥ तुम्हारा सहारा लेने से कोई भय नहीं रहता, तुम स्वयं परमसत्य और अन्तर्यामी हो। तेरा सहारा ही मेरा एकमात्र आधार है। इहलोक और परलोक, दोनों जगह तुम्हारा ही शासन चलता है ॥ ३ ॥ हमें तुम्हारा सहारा है, तुम्हारा ही भरोसा है, सब तुम्हें गुणागार मानकर तुम्हारा ध्यान करते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि तुम्हारे दासों को सच्चे गुण-निधि प्रभु का नाम जप-जपकर आनन्द होता है ॥ ४ ॥ २६ ॥ ३९ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ प्रथमे छोडी पराई निंदा। उतरि गई सभ मन की चिंदा। लोभु मोहु सभु कीनो दूरि। परम बैसनो प्रभ पेखि हजूरि ॥ १ ॥ ऐसो तिआगी विरला कोइ। हरि हरि नामु जपै जनु सोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अहंबुधि का छोडिआ संगु। काम क्रोध का उतरिआ रंगु। नाम धिआए हरि हरि हरे। साध जना कै संगि निसतरे ॥२॥ बैरी मीत होए संमान। सरब महि पूरन भगवान। प्रभ की आगिआ मानि सुखु पाइआ। गुरि पूरै हरि नामु द्रिड़ाइआ ॥३॥ करि किरपा जिसु राखै आपि। सोई भगतु जपै नाम जाप। मनि प्रगासु गुर ते मति लई। कहु नानक ताकी पूरी पई ॥ ४ ॥ २७ ॥ ४० ॥

सर्वप्रथम यदि जीव पराई निन्दा में प्रवृत्त होना छोड़ दे तो मन की सब चिन्ताएँ दूर हो जाती हैं। यदि जीव सब लोभ-मोह दूर कर दे तो वह प्रभु को सदैव प्रत्यक्ष देखनेवाला वैष्णव कहलवाता है ॥ १ ॥ ऐसा त्यागी कोई विरला ही होता है, और वही भक्त हरि-नाम जप सकता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब जीव अहम् बुद्धि का साथ छोड़ देता है, तो काम-क्रोध का रंग अपने-आप उतर जाता है। साधु-संगति में रहकर जो जीव हरि-हरि-नाम की आराधना करता है, वह संसार से मुक्त हो जाता है ॥ २ ॥ उसके लिए वैरी और मित्र समान होते हैं, वह सबमें पूर्ण परमात्मा को ही देखता है। परमात्मा की आज्ञा मानकर वह परम सुख को प्राप्त करता है और पूरे गुरु की शरण में परमात्मा का नाम जपता है ॥ ३ ॥ परमात्मा कृपा करके जिसे अपनी शरण में रखता है, वही

भक्त प्रभु-नाम जपता है। गुरु नानक कहते हैं कि जो भक्त गुरु से उपदेश लेकर अपने मन में उजाला कर लेते हैं, उन्हीं को परमगति प्राप्त होती है ॥ ४ ॥ २७ ॥ ४० ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ —सुखु नाही बहुतै धनि खाटे। सुखु नाही पेखे निरति नाटे। सुखु नाही बहु देस कमाए। सरब सुखा हरि हरि गुण गाए ॥ १ ॥ सूख सहज आनंद लहहु। साध संगति पाईऐ वडभागी गुरमुखि हरि हरि नामु कहहु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बंधन मात पिता सुत बनिता। बंधन करम धरम हउ करता। बंधन काटनहारु मनि वसै। तउ सुख पावै निजघरि बसै ॥ २ ॥ सभि जाचिक प्रभ देवनहार। गुण निधान बेअंत अपार। जिस नो करमु करे प्रभु अपना। हरि हरि नामु तिनै जनि जपना ॥ ३ ॥ गुर अपने आगै अरदासि। करि किरपा पुरख गुणतासि। कहु नानक तुमरी सरणाई। जिउ भावै तिउ रखहु गुसाई ॥ ४ ॥ २८ ॥ ४१ ॥

अधिक धन की कमाई करने में सुख नहीं है, अधिक नाच-तमाशे देखने में भी सुख नहीं है, अनेक देशों पर विजय पा लेने में भी सुख नहीं— वास्तव में समस्त सुख केवल हरि-हरि-नाम का गान करने में ही है ॥ १ ॥ सौभाग्यपूर्वक जो जीव गुरु के द्वारा हरि-नाम का रहस्य जानकर प्रभु-नाम का जाप करते हैं, वे ही पूर्ण सुख (सहज आनन्द) प्राप्त करते एवं मन की अडोल अवस्था में पहुँचते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ माता-पिता, पुत्र, पत्नी, सब जीव के बन्धन हैं; धार्मिक कर्म एवं अहम्-भावपूर्ण किए गए पुण्य भी बन्धन हैं। इन बन्धनों को काटनेवाला हृदय में बसता है, (यदि उसे पहचानकर जीव) अपने वास्तविक घर (प्रभु में लीनता) में रहने लगे, तो वह परम सुखी हो सकता है ॥ २ ॥ परमात्मा दाता है, अन्य सब उसके द्वार के याचक हैं; वह अनन्त अपार गुणों का खज़ाना है। जिस पर परमात्मा विशेष कृपा करता है, वे ही सेवक हरि-हरि-नाम जपते हैं ॥ ३ ॥ मैं अपने सतिगुरु के सम्मुख प्रार्थना करता हूँ कि हे गुणों के आगार, मुझ पर कृपा करो। गुरु नानक कहते हैं कि मैं तो तुम्हारी शरण में हूँ, हे स्वामी, जैसा चाहो, वैसा रखो ॥ ४ ॥ २८ ॥ ४१ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ गुर मिलि तिआगिओ दूजा भाउ। गुरमुखि जपिओ हरि का नाउ। बिसरी चिंत नामि रंगु लागा। जनम जनम का सोइआ जागा ॥ १ ॥ करि किरपा अपनी

सेवा लाए। साधू संगि सरब सुख पाए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रोग दोख गुर सबदि निवारे। नाम अउखधु मन भीतरि सारे। गुर भेटत मनि भिइआ अनंद। सरब निधान नाम भगवंत ॥२॥ जनम मरण की मिटी जम त्रास। साध संगति ऊंध कमल बिगास। गुण गावत निहचलु बिस्राम। पूरन होए सगले काम ॥ ३ ॥ दुलभ देह आई परवानु। सफल होई जपि हरि हरि नामु। कहु नानक प्रभि किरपा करी। सासि गिरासि जपउ हरि हरी ॥ ४ ॥ २९ ॥ ४२ ॥

गुरु के सम्पर्क में आकर जीव ने द्वैत-भाव त्याग दिया है। गुरु के उपदेशानुसार उसने हरि का नाम जपा है। सब चिन्ताओं से मुक्त होकर जीव हरि-नाम से प्यार करने लगा है और जन्म-जन्म के निद्रा छोड़कर जाग्रतावस्था में आ गया है ॥ १ ॥ कृपा-पूर्वक गुरु ने जीव को अपनी सेवा में अपना लिया है और वह साधु-संगति में समस्त सुखों को भोगने लगा है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उसके सब शोक, विकार मन में हरिनाम-औषध के रमने और गुरु-उपदेश द्वारा नष्ट हो गए हैं। गुरु से भेंट हो जाने के कारण मन हर्षित हो गया है। प्रभु का नाम सब खज़ानों के समान है ॥ २ ॥ उनकी जन्म-मरण तथा यमदूतों की त्रास दूर हो गई है। सत्संगति के कारण उसका औंधा पड़ा हृदय-कमल विकसित होकर अमृत से भरने लगा है। वह निश्चल-भाव से प्रभु के गुण गाता है; उसके समस्त कार्य सम्पन्न हुए हैं ॥ ३ ॥ मनुष्य की दुर्लभ देह उसे सुखद बन पड़ी है, क्योंकि अब वह हरि-हरि-नाम का जाप करता है। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु ने ऐसी कृपा की है कि जीव अब श्वास-श्वास परमात्मा का नाम जपता है ॥ ४ ॥ २९ ॥ ४२ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ सभ ते ऊचा जा का नाउ। सदा सदा ता के गुण गाउ। जिसु सिमरत सगला दुखु जाइ। सरब सूख वसहि मनि आइ ॥ १ ॥ सिमरि मना तू साचा सोइ। हलति पलति तुमरी गति होइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पुरख निरंजन सिरजनहार। जीअ जंत देवै आहार। कोटि खते खिन बखसनहार। भगति भाइ सदा निसतार ॥ २ ॥ साचा धनु साची वडिआई। गुर पूरे ते निहचल मति पाई। करि किरपा जिसु राखनहारा। ता का सगल मिटै अंधिआरा ॥ ३ ॥ पारब्रहम सिउ लागो धिआन। पूरन पूरि

रहिओ निरबान । भ्रम भउ मेटि मिले गोपाल । नानक कउ गुर भए दइआल ॥ ४ ॥ ३० ॥ ४३ ॥

जिस परमात्मा का नाम सर्वोच्च है, नित्य उसका गुणगान करो। जिसके स्मरण से सब दुःख नष्ट हो जाते हैं और समस्त सुख मन में आकर बसते हैं (उस प्रभु का नाम जपो) ॥ १ ॥ हे मन, तुम सच्चे परमात्मा का नाम स्मरण करो। इससे इहलोक और परलोक में तुम्हारी गति होगी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परमात्मा मायातीत और सबका स्रष्टा है, सब जीव-जन्तुओं को आहार देनेवाला है। करोड़ों ख़ताएँ (अपराध) वह क्षण में क्षमा कर देता है; अपने प्रति भक्ति-भाव रखनेवाले का मुक्तिदाता वही परमात्मा है ॥ २ ॥ जिन जीवों को पूर्णगुरु से सद्बुद्धि प्राप्त हुई है, उनके लिए वही सच्चा धन है और वही प्रतिष्ठा है। कृपापूर्वक जिनकी वह रक्षा करता है, उनका समस्त अज्ञानांधकार दूर हो जाता है ॥ ३ ॥ जिसका ध्यान निरन्तर परब्रह्म में लीन रहता है, उनमें पूर्ण परमात्मा स्वयं रम रहा है। गुरु नानक कहते हैं कि जब गुरु दया करता है, तो सब भय-भ्रम आदि मिट जाते हैं और जीव साक्षात् परमात्मा को पा लेता है ॥ ४ ॥ ३० ॥ ४३ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ जिसु सिमरत मनि होइ प्रगासु । मिटहि कलेस सुख सहजि निवासु । तिसहि परापति जिसु प्रभु देइ । पूरे गुर की पाए सेव ॥ १ ॥ सरब सुखा प्रभ तेरो नाउ । आठ पहर मेरे मन गाउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो इछै सोई फलु पाए । हरि का नामु मंनि वसाए । आवण जाण रहे हरि धिआइ । भगति भाइ प्रभ की लिव लाइ ॥ २ ॥ बिनसे काम क्रोध अहंकार । तूटे माइआ मोह पिआर । प्रभ की टेक रहै दिनु राति । पारब्रहमु करे जिसु दाति ॥ ३ ॥ करन करावनहार सुआमी । सगल घटा के अंतरजामी । करि किरपा अपनी सेवा लाइ । नानक दास तेरी सरणाइ ॥ ४ ॥ ३१ ॥ ४४ ॥

जिस प्रभु का स्मरण करने से हृदय में उजाला होता है, सब क्लेश दूर होते और परमसुख प्राप्त होता है। वह परमात्मा पूर्णगुरु की सेवा द्वारा उसी को प्राप्त होता है, जिस पर परमात्मा स्वयं प्रकट होता है ॥ १ ॥ हे परमात्मा, तुम्हारे नाम में सर्वसुख निहित हैं, इसलिए मेरा मन आठों प्रहर तुम्हारे गुण गाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परमात्मा

का नाम मन में बसाकर मनोवांछित फल की प्राप्ति होती है। जो भक्ति-भाव से प्रभु में लीन रहते हैं, नाम जपने के कारण उनका आवागमन चुक जाता है ॥ २ ॥ परमात्मा जिस पर दया करता है, उसे रात-दिन प्रभु का आश्रय होता है, उसका मोह-माया का बन्धन टूटता एवं काम-क्रोधादि वृत्तियाँ नष्ट हो जाती हैं ॥ ३ ॥ परमात्मा स्वयं सर्वकर्ता स्वामी है, सबके अन्तर्मन की वह जानता है। गुरु नानक कहते हैं कि मैं तुम्हारी शरण में हूँ, हे मालिक, कृपा-पूर्वक अपनी सेवा में ले लो ॥ ४ ॥ ३१ ॥ ४४ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ लाज मरै जो नामु न लेवै। नाम बिहून सुखी किउ सोवै। हरि सिमरनु छाडि परमगति चाहै। मूल बिना साखा कत आहै ॥ १ ॥ गुरु गोविंदु मेरे मन धिआइ। जनम जनम की मैलु उतारै बंधन काटि हरि संगि मिलाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तीरथि नाइ कहा सुचि सैलु। मन कउ बिआपै हउमै मैलु। कोटि करम बंधन का मूलु। हरि के भजन बिनु बिरथा पूलु ॥ २ ॥ बिनु खाए बूझै नही भूख। रोगु जाइ तां उतरहि दूख। काम क्रोध लोभ मोहि बिआपिआ। जिनि प्रभि कीना सो प्रभु नही जापिआ ॥ ३ ॥ धनु धनु साध धंनु हरि नाउ। आठ पहर कीरतनु गुण गाउ। धनु हरि भगति धनु करणैहार। सरणि नानक प्रभ पुरख अपार ॥ ४ ॥ ३२ ॥ ४५ ॥

जो परमात्मा का नाम नहीं जपता, वह लज्जा से मरता है; हरि-नाम के बिना कोई सुख से क्योंकर जी सकता है? प्रभु-स्मरण के बिना परमगति की इच्छा करता है— भला जड़ के बिना शाखाएँ कहाँ से होंगी ॥ १ ॥ ऐ मेरे मन, गुरु तथा परमात्मा का ध्यान करो, जन्म-जन्म की मलिनता दूर करके, बन्धन काटकर परमात्मा से मिल सकोगे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तीर्थों पर नहाने से मैल-भरे पत्थर दिल में निर्मलता नहीं होती; मन में तो अहम् का मैल लगा ही रहता है। करोड़ों कर्म बन्धन का मूल हैं, हरि-नाम के बिना यह कर्मों की गठरी व्यर्थ है ॥२॥ भोजन खाए बिना भूख नहीं बुझती, रोग के दूर होने पर ही पीड़ा से मुक्ति मिलती है। (समस्त जीव) काम, क्रोध, लोभ, मोह में बँधे हैं, जिस परमात्मा ने उन्हें बनाया है, वे उसे भी नहीं पहचानते ॥ ३ ॥ वह साधु-संगति धन्य है, वह हरि-नाम धन्य है, जहाँ आठों पहर हरि-कीर्तन एवं प्रभु-गुणगान होता है। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु-भक्ति और

भक्ति करनेवाले धन्य हैं, परमपुरुष परमात्मा की शरण भी धन्य है ॥ ४ ॥ ३२ ॥ ४५ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ गुर सुप्रसंन होए भउ गए। नाम निरंजन मन महि लए। दीन दइआल सदा किरपाल। बिनसि गए सगले जंजाल ॥ १ ॥ सूख सहज आनंद घने। साध संगि मिटे भै भरमा अंम्रितु हरि हरि रसन भने ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चरन कमल सिउ लागो हेतु। खिन महि बिनसिओ महा परेतु। आठ पहर हरि हरि जपु जापि। राखनहार गोबिद गुर आपि ॥ २ ॥ अपने सेवक कउ सदा प्रतिपारै। भगत जना के सास निहारै। मानस की कहु केतक बात। जम ते राखै दे करि हाथ ॥ ३ ॥ निरमल सोभा निरमल रीति। पारब्रहमु आइआ मनि चीति। करि किरपा गुरि दीनो दानु। नानक पाइआ नामु निधानु ॥ ४ ॥ ३३ ॥ ४६ ॥

सतिगुरु के प्रसन्न होने से भय नष्ट हो जाता है और मायातीत ब्रह्म का नाम मन में आकर बसता है। दीन-दयालु प्रभु की कृपा से सब जंजाल-बन्धन दूर हो जाते हैं ॥ १ ॥ सत्संगति में जीव को सहज पद में परमानन्द की प्राप्ति होती है और भ्रम-भय के मिटने से वह जिह्वा द्वारा हरि-नाम का जाप करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब प्रभु के चरण-कमल से प्यार होता है, तो क्षण भर में ही बड़ा प्रेत (अहंकार) छोड़ जाता है। अतः आठों पहर हरि-नाम का जाप करो, प्रभु स्वयं रक्षा करनेवाला है ॥ २ ॥ वह अपने सेवकों का सदैव प्रतिपालक है, भक्त-जनों का श्वास-श्वास ध्यान रखता है। मनुष्य की तो क्या बिसात, वह यमदूतों से भी हाथ देकर रक्षा करता है ॥ ३ ॥ मन में परब्रह्म का ध्यान आने से जीव की शोभा निर्मल होती है, उसका व्यवहार निर्मल हो जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु-कृपा से उन्हें हरि-नाम की निधि प्राप्त हुई है ॥ ४ ॥ ३३ ॥ ४६ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ करणकारण समरथु गुरु मेरा। जीअ प्राण सुखदाता नेरा। भैभंजन अबिनासी राइ। दरसनि देखिऐ सभु दुखु जाइ ॥ १ ॥ जत कत पेखउ तेरी सरणा। बलि बलि जाई सतिगुर चरणा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पूरन काम मिले गुरदेव। सभि फलदाता निरमल सेव। करु गहि लीने अपुने दास। राम नामु रिद दीओ निवास ॥ २ ॥ सदा

अनंदु नाही किछु सोगु। दूखु दरदु नह बिआपै रोगु। सभु किछु तेरा तू करणैहारु। पारब्रहम गुर अगम अपार ॥ ३ ॥ निरमल सोभा अचरज बाणी। पारब्रहम पूरन मनि भाणी। जलि थलि महीअलि रविआ सोइ। नानक सभु किछु प्रभ ते होइ ॥ ४ ॥ ३४ ॥ ४७ ॥

मेरा सतिगुरु सर्वस्व कर सकने में समर्थ है, जीव-प्राण को सदा सुख देनेवाला है; वह भय को दूर करनेवाला अविनाशी शासक है, जिसके दर्शन-मात्र से सब दुःख दूर हो जाते हैं ॥ १ ॥ मैं जहाँ कहीं भी तुम्हारा सहारा चाहता हूँ, हे सतिगुरु, मैं तुम्हारे चरणों पर बलिहार जाता हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अपने सतिगुरु से भेंट होने से सब कार्य सम्पन्न हो जाते हैं। उसकी निर्मल सेवा से सब प्रकार के फल प्राप्त हैं। उसने अपने दास को हाथ पकड़कर बचाया और उसके हृदय में प्रभु का नाम स्थापित किया है ॥ २ ॥ (तुम्हारे भक्तों को) सदा आनन्द होता है, कोई शोक नहीं होता; कोई दुःख-दर्द या रोग नहीं सालता। हे प्रभु, सब कुछ तुम्हारा है, तुम स्वयं करने योग्य हो, परब्रह्म-रूप गुरु अपरंपार है ॥ ३ ॥ सतिगुरु की शोभा निर्मल है, वाणी आश्चर्यमयी है, स्वयं परब्रह्म के मन को भी वह (वाणी) रुचती है (अर्थात् गुरु परब्रह्म का रूप है, उसकी शोभा और वाणी निर्मल और विस्मयकारी हैं)। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा जल, थल, आकाश, सब जगह व्याप्त है और सब कुछ स्वयं कर रहा है ॥ ४ ॥ ३४ ॥ ४७ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ मनु तनु राता राम रंगि चरणे। सरब मनोरथ पूरन करणे। आठ पहर गावत भगवंतु। सतिगुरि दीनो पूरा मंतु ॥ १ ॥ सो वडभागी जिसु नामि पिआरु। तिस कै संगि तरै संसारु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सोई गिआनी जि सिमरै एक। सो धनवंता जिसु बुधि बिबेक। सो कुलवंता जि सिमरै सुआमी। सो पतिवंता जि आपु पछानी ॥ २ ॥ गुर परसादि परमपदु पाइआ। गुण गोपाल दिनु रैनि धिआइआ। तूटे बंधन पूरन आसा। हरि के चरण रिद माहि निवासा ॥ ३ ॥ कहु नानक जा के पूरन करमा। सो जनु आइआ प्रभ की सरना। आपि पवितु पावन सभि कीने। राम रसाइणु रसना चीन्हे ॥ ४ ॥ ३५ ॥ ४८ ॥

राम के चरणों के प्यार में मेरा तन-मन रँगा है, जो कि सब मनोरथ

पूर्ण करने में समर्थ हैं। सतिगुरु ने मुझे उपयुक्त मन्त्र (उपदेश) दिया है कि आठों पहर सदा परमात्मा की नामाराधना करो ॥ १ ॥ हरि-नाम से प्रीति लगानेवाला जीव सौभाग्यपूर्ण है, उसके साथ सारा संसार तिर जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वही जीव ज्ञानवान् है, जो एक परमात्मा का सिमरन करता है; वही जीव धनवान है, जिसके पास विवेक-बुद्धि है। अपने स्वामी का स्मरण करनेवाला ही कुलीन है और आत्मज्ञान पा जानेवाला जीव ही प्रतिष्ठित है ॥ २ ॥ गुरु की कृपा से जीव को परम पद प्राप्त हुआ तो उसने रात-दिन परमात्मा का गुण गाया। इससे उसके बन्धन टूट गए, आशाएँ पूर्ण हुईं और हृदय में हरि-चरण स्थिर हुए ॥ ३ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि जिसके प्रारब्ध उत्तम हैं, वही प्रभु की शरण में आता है। वह स्वयं पवित्र होता है, अन्य सबको भी पावन कर लेता है; वह जिह्वा से नित्य हरि-नाम महौषध का पान करता है ॥४॥३५॥४८॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ नामु लैत किछु बिघनु न लागै। नामु सुणत जमु दूरहु भागै। नामु लैत सभ दूखह नासु। नामु जपत हरि चरण निवासु ॥ १ ॥ निरबिघन भगति भजु हरि हरि नाउ। रसकि रसकि हरि के गुण गाउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि सिमरत किछु चाखु न जोहै। हरि सिमरत दैत देउ न पोहै। हरि सिमरत मोहु मानु न बधै। हरि सिमरत गरभ जोनि न रुधै ॥ २ ॥ हरि सिमरन की सगली बेला। हरि सिमरनु बहु माहि इकेला। जाति अजाति जपै जनु कोइ। जो जापै तिस की गति होइ ॥ ३ ॥ हरि का नामु जपीऐ साध संगि। हरि के नाम का पूरन रंगु। नानक कहु प्रभ किरपा धारि। सासि सासि हरि देहु चितारि ॥ ४ ॥ ३६ ॥ ४९ ॥

हरि-नाम की उपासना से जीव को कोई बाधा नहीं रहती, प्रभु-नाम सुनकर तो यमदूत दूर से ही भाग जाते हैं। हरि-नाम की आराधना से सब दुःखों का नाश होता है और नाम जपने से जीव प्रभु के चरणों में निवास करता है ॥ १ ॥ विघ्न-रहित भक्ति के लिए हरि-हरि-नाम का जाप करो, खूब मज़ा ले-लेकर परमात्मा के गुण गाओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि-सिमरन से कोई बुरी नज़र बाधा नहीं बनती, हरि के सिमरन के कारण दैत्य, भूत-प्रेत, कोई कष्ट नहीं पहुँचा सकता। हरि-स्मरण से मोह-मान के बन्धन नहीं रहते, हरि-स्मरण से जीव पुनः गर्भ-योनि में नहीं फँसता ॥ २ ॥ हरि के जपने के लिए सभी समय समान है (अर्थात् प्रत्येक समय हरि-स्मरण का समय है), हरि-स्मरण करनेवाला अनेकों में

कोई एक होता है। ऊँची-नीची जाति का कोई भी व्यक्ति, जो प्रभु का नाम जपता है, उसकी गति होती है (अर्थात् वह मुक्त हो जाता है) ॥ ३ ॥ परमात्मा का नाम साधु-संगति में जपना चाहिए, क्योंकि इस प्रकार हरि-नाम का पूरा रंग चढ़ता है। (हरि-नाम का रंग तो सब तरह चढ़ता है, किन्तु सत्संगति में अधिक प्रभाव होता है— क्योंकि मन बुराइयों के सम्पर्क से बचा रहता है।) गुरु नानक कहते हैं कि जिस पर परमात्मा की कृपा होती है, वह श्वास-श्वास प्रभु को याद करता है ॥ ४ ॥ ३६ ॥ ४९ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ आपे सासतु आपे बेदु। आपे घटि घटि जाणै भेदु। जोति सरूप जा की सभ वथु। करणकारण पूरन समरथु ॥ १ ॥ प्रभ की ओट गहहु मन मेरे। चरन कमल गुरमुखि आराधहु दुसमन दूखु न आवै नेरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आपे वणु त्रिणु त्रिभवण सारु। जा कै सूति परोइआ संसारु। आपे सिव सकती संजोगी। आपि निरबाणी आपे भोगी ॥ २ ॥ जत कत पेखउ तत तत सोइ। तिसु बिनु दूजा नाही कोइ। सागरु तरीऐ नाम कै रंगि। गुण गावै नानकु साध संगि ॥ ३ ॥ मुकति भुगति जुगति वसि जा कै। ऊणा नाही किछु जन ता कै। करि किरपा जिसु होइ सुप्रसंन। नानक दास सेई जन धंन ॥ ४ ॥ ३७ ॥ ५० ॥

(परमात्मा के ध्यान में ही) अपने-आप शास्त्र-वेद सम्मिलित हैं। वह स्वयं घट-घट का भेद जानता है। रूपवान् वस्तुओं का वह मालिक है, स्वयं भी वह ज्योतिस्वरूप है; वह सब कुछ कर सकने में समर्थ है ॥ १ ॥ ऐ मेरे मन, प्रभु का सहारा लो। गुरु के द्वारा उसके चरण-कमलों की आराधना करने से शत्रु और दुःख निकट नहीं आते ॥१॥ रहाउ ॥ वह परमात्मा अपने-आप समूची प्रकृति एवं त्रिभुवन का मूल है, सारा संसार उसी के सूत्र में पिरोया हुआ है। वह स्वयं शिव और शक्ति अर्थात् जड़ और चेतन का संयोग करवाता है, वह स्वयं निर्लिप्त भी है, दुनिया को भोगता भी है ॥ २ ॥ जहाँ कहीं भी देखता हूँ, वहाँ-वहाँ वही है, उसके बग़ैर दूसरा अन्य कोई नहीं। उसके नाम-संग प्रीति लगाकर संसार-सागर तिर जाते हैं, गुरु नानक सत्संगति में इसीलिए उसके गुण गाते हैं ॥ ३ ॥ (जीवन के तीनों मनोरथ) मुक्ति, भुक्ति और युक्ति, ये तीनों जिसके वश में हैं, उसके सेवक को कोई कमी नहीं रहती। गुरु नानक कहते हैं कि वह कृपा-पूर्वक जिस पर प्रसन्न होता है, वह व्यक्ति धन्य है ॥ ४ ॥ ३७ ॥ ५० ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ भगता मनि आनंदु गोबिंद। असथिति भए बिनसी सभ चिंद। भै भ्रम बिनसि गए खिन माहि। पारब्रहमु वसिआ मनि आइ ॥ १ ॥ राम राम संत सदा सहाइ। घरि बाहरि नाले परमेसरु रवि रहिआ पूरन सभ ठाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ धनु मालु जोबनु जुगति गोपाल। जीअ प्राण नित सुख प्रतिपाल। अपने दास कउ दे राखै हाथ। निमख न छोडै सद ही साथ ॥ २ ॥ हरि सा प्रीतमु अवरु न कोइ। सारि सम्हाले साचा सोइ। मात पिता सुत बंधु नराइणु। आदि जुगादि भगत गुण गाइणु ॥ ३ ॥ तिस की धर प्रभ का मनि जोरु। एक बिना दूजा नही होरु। नानक कै मनि इहु पुरखारथु। प्रभू हमारा सारे सुआरथु ॥ ४ ॥ ३८ ॥ ५१ ॥

परमात्मा भक्तों के मन में रहता और आनन्द पहुँचाता है। इससे वे स्थिर-चित्त होते हैं और उनकी चिन्ताएँ दूर हो जाती हैं। क्षण भर में ही उनके भय-भ्रमादि नष्ट होते हैं, जब परब्रह्म स्वयं उनके हृदय में बस जाता है ॥ १ ॥ परमात्मा अपने सन्तों का सदा सहायक होता है, घर-बाहर हर जगह उनका साथ देता है, वह सब जगह रमा हुआ है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरे धन, माल, यौवन और जीवन की युक्ति परमात्मा स्वयं है, वह नित्य मेरे जीवन-प्राणों का प्रतिपालक है। वह हाथ देकर अपने सेवक की रक्षा करता है, क्षण भर भी वह अपने भक्तों का साथ नहीं छोड़ता ॥ २ ॥ परमात्मा-सरीखा अन्य कोई स्वामी नहीं, वह सत्यस्वरूप ही मेरा ख़याल रखता और मेरी सम्हाल करता है। नारायण स्वयं मेरे माता-पिता, पुत्र, बन्धु सब कुछ हैं, (तभी तो) युग-युग से भक्तजन उसका गुणगान करते हैं ॥ ३ ॥ मुझे उसी का आश्रय है, मेरे मन को प्रभु का ही बल है। उस एक प्रभु के अलावा दूसरा कोई नहीं। गुरु नानक के मन में यह स्थायी भरोसा है कि परमात्मा उसका काम सदा सँवारेगा ॥ ४ ॥ ३८ ॥ ५१ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ भै कउ भउ पड़िआ सिमरत हरि नाम। सगल बिआधि मिटी त्रिहु गुण की दास के होए पूरन काम ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि के लोक सदा गुण गावहि तिन कउ मिलिआ पूरन धाम। जन का दरसु बांछै दिन राती होइ पुनीत धरमराइ जाम ॥ १ ॥ काम क्रोध लोभ मद निंदा साध

संगि मिटिआ अभिमान । ऐसे संत भेटहि वडभागी नानक तिन कै सद कुरबान ॥ २ ॥ ३९ ॥ ५२ ॥

हरिनाम-स्मरण से भय भी डरता है, समस्त त्रिगुणात्मक व्याधियाँ मिट गईं और दास के सब कार्य सम्पन्न हो गए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो लोग सदा हरि के गुण गाते हैं, उन्हें पूर्ण वैकुण्ठ-वास मिलता है। पवित्र होने के लिए यमराज भी रात-दिन हरि के भक्तों का दर्शन चाहता है ॥१॥ साधु-संगति में जन की काम, क्रोध, लोभ, अहंकार, निन्दा आदि की प्रवृत्तियाँ मिट गईं। गुरु नानक कहते हैं कि इस प्रकार जिनकी भेंट सच्चे सन्तों से हो जाती है, वे उन पर सदा क़ुर्बान जाते हैं ॥२॥३९॥५२॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ पंच मजमी जो पंच न राखै । मिथिआ रसना नित उठि भाखै । चक्र बणाइ करै पाखंड । झुरि झुरि पचै जैसे त्रिअ रंड ॥ १ ॥ हरि के नाम बिना सभ झूठु । बिनु गुर पूरे मुकति न पाईऐ साची दरगहि साकत मूठु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सोई कुचीलु कुदरति नही जानै । लीपिऐ थाइ न सुचि हरि मानै । अंतरु मैला बाहरु नित धोवै । साची दरगहि अपनी पति खोवै ॥ २ ॥ माइआ कारणि करै उपाउ । कबहि न घालै सीधा पाउ । जिनि कीआ तिसु चीति न आणै । कूड़ी कूड़ी मुखहु वखाणै ॥ ३ ॥ जिसनो करमु करे करतारु । साध संगि होइ तिसु बिउहारु । हरिनाम भगति सिउ लागा रंगु । कहु नानक तिसु जन नही भंगु ॥ ४ ॥ ४० ॥ ५३ ॥

जो काम-क्रोधादि पाँचों के समूह को धारण करता है, जिह्वा से नित्य झूठ बोलता है। चक्रादि बनाकर पूजन का पाखण्ड करता है, वह विधवा स्त्री की तरह दुःखों में मरता है ॥ १ ॥ परमात्मा के नाम के अतिरिक्त सब झूठ है, सच्चे गुरु के बिना मुक्ति नहीं मिलती, साकत (मायावी) व्यक्ति प्रभु के दरबार में लुट जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो प्रकृति को नहीं पहचानता, वही मलिन है; जगह पर लेपन (गोबर) कर लेने से प्रभु उसे पवित्रता नहीं मानता। जिसके भीतर मैल है और जो बाहर दिखावा करता है, वह परमात्मा के दरबार में नित्य तिरस्कृत होता है ॥ २ ॥ वह सब प्रकार के मायायुक्त उपाय करता है, कभी सीधा पाँव नहीं रखता (अर्थात् कभी उचित कार्य नहीं करता)। जिसने जन्म दिया है, उसे कभी याद नहीं करता और मुख से नित्य झूठ ही झूठ बोलता है ॥ ३ ॥ (किन्तु) जिस पर परमात्मा कृपा करता है,

उसे सत्संगति में विचरण का अवसर मिलता है। गुरु नानक कहते हैं कि जिन्हें प्रभु-भक्ति का रंग चढ़ता है, उन्हें कभी कोई बाधा नहीं रह जाती ॥ ४ ॥ ४० ॥ ५३ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ निंदक कउ फिटके संसारु। निंदक का झूठा बिउहारु। निंदक का मैला आचारु। दास अपुने कउ राखनहारु ॥ १ ॥ निंदकु मुआ निंदक कै नालि। पारब्रहम परमेसरि जन राखे निंदक कै सिरि कड़किओ कालु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ निंदक का कहिआ कोइ न मानै। निंदक झूठु बोलि पछुताने। हाथ पछोरहि सिरु धरनि लगाहि। निंदक कउ दई छोडै नाहि ॥ २ ॥ हरि का दासु किछु बुरा न मागै। निंदक कउ लागै दुख सांगै। बगुले जिउ रहिआ पंख पसारि। मुख ते बोलिआ तां कढिआ बीचारि ॥ ३ ॥ अंतरजामी करता सोइ। हरि जनु करै सु निहचलु होइ। हरि का दासु साचा दरबारि। जन नानक कहिआ ततु बीचारि ॥ ४ ॥ ४१ ॥ ५४ ॥

निन्दक को संसार लानत भेजता है, निन्दक का व्यवहार नित्य मिथ्या होता है; निन्दक का आचरण मलिन होता है, किन्तु परमात्मा अपने सेवक की सदैव रक्षा करता है ॥ १ ॥ निन्दक निन्दा करनेवालों के संग मारा जाता है। परब्रह्म परमेश्वर अपने भक्तों का रखवाला है, जबकि निन्दक के सिर सदैव काल गर्जता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ निन्दक का कहा कोई नहीं मानता, निन्दक झूठ बोल-बोलकर पछताता है, हाथ पटकता और सिर धरती पर लगाता है। निन्दक को परमात्मा कभी नहीं छोड़ता ॥ २ ॥ हरि का दास कोई बुरी बात नहीं कहता, (यह देखकर) निन्दक को तीखी पीड़ा होती है। वह दिखावे के लिए बगुले के समान पंख पसारता है (सफ़ेदपोश बनता है), किन्तु ज्योंही मुँह से बोलता है, सत्संगति में से लोग विचार-पूर्वक उसे बाहर निकाल देते हैं ॥ ३ ॥ परमात्मा स्वयं अन्तर्यामी है, परमात्मा के भक्तों की बात निश्चित होती है। गुरु नानक तत्त्व-विचार-पूर्वक कहते हैं कि हरि की दासता स्वीकार करनेवाला सदा उसके ही दरबार में रहता है (अर्थात् प्रभु की शरण में रहता है) ॥ ४ ॥ ४१ ॥ ५४ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ दुइ कर जोरि करउ अरदासि। जीउ पिंडु धनु तिस की रासि। सोई मेरा सुआमी करनैहारु।

कोटि बार जाई बलिहार ।। १ ।। साधू धूरि पुनीत करी । मन के बिकार मिटहि प्रभ सिमरत जनम जनम की मैलु हरी ।। १ ।। रहाउ ।। जा कै ग्रिह महि सगल निधान । जा की सेवा पाईऐ मानु । सगल मनोरथ पूरन हार । जीअ प्रान भगतन आधार ।। २ ।। घटि घटि अंतरि सगल प्रगास । जपि जपि जीवहि भगत गुनतास । जा की सेव न बिरथी जाइ । मन तन अंतरि एकु धिआइ ।। ३ ।। गुर उपदेसि दइआ संतोखु । नामु निधानु निरमलु इहु थोकु । करि किरपा लीजै लड़ि लाइ । चरन कमल नानक नित धिआइ ।। ४ ।। ४२ ।। ५५ ।।

दोनों हाथ जोड़कर प्रार्थना करो (परमात्मा के हुजूर में), आत्मा, शरीर और धन सब उसी की देन हैं। वह मेरा स्वामी सब कुछ करने योग्य है, मैं उस पर कोटि-कोटि बलिहार जाता हूँ ।। १ ।। सन्तजनों की चरण-धूल पावन-कर्त्री है। प्रभु-स्मरण से मन के सब विकार मिट जाते हैं और जन्म-जन्म का मैल धुल जाता है ।। १ ।। रहाउ ।। जिसके पास सब सुखों की निधियाँ हैं, जिसकी सेवा में सम्मान मिलता है, जो समस्त मनोरथ पूर्ण करने में समर्थ है, वही भक्तों के जीव-प्राण का एकमात्र आश्रय है ।। २ ।। जो समस्त जीवों के अन्तर्मन को आलोकित करता है, उस गुणागार का सिमरन करते हुए भक्तजन जीते हैं। जिसकी सेवा कभी वृथा नहीं जाती, तन-मन से एकाग्र होकर उसकी आराधना करो ।।३।। गुरु के उपदेश से दया, सन्तोष-सरीखे गुण उपजते हैं, हरि-नाम की निर्मल निधि उपलब्ध होती है। गुरु नानक नित्य उसके चरण-कमलों में ध्यान लगाते हैं, हे प्रभु, कृपा करके अब अपनी शरण में ले लो ।।४।।४२।।५५।।

।। भैरउ महला ५ ।। सतिगुर अपुने सुनी अरदासि । कारजु आइआ सगला रासि । मन तन अंतरि प्रभू धिआइआ । गुर पूरे डरु सगल चुकाइआ ।। १ ।। सभ ते वड समरथ गुर देव । सभि सुख पाई तिस की सेव ।। रहाउ ।। जा का कीआ सभु किछु होइ । तिस का अमरु न मेटै कोइ । पारब्रहमु परमेसरु अनूपु । सफल मूरति गुरु तिस का रूपु ।। २ ।। जा कै अंतरि बसै हरि नामु । जो जो पेखै सु ब्रहम गिआनु । बीस बिसुए जा कै मनि परगासु । तिसु जन कै पारब्रहम का निवासु ।। ३ ।। तिसु गुर कउ सद करी नमसकार । तिसु

गुर कउ सद जाउ बलिहार। सतगुर के चरन धोइ धोइ पीवा। गुर नानक जपि जपि सद जीवा ॥ ४ ॥ ४३ ॥ ५६ ॥

सतिगुरु ने हमारी प्रार्थना सुन ली, हमारे सब कार्य समुचित सम्पन्न हुए हैं। तन-मन से हमने प्रभु का ध्यान किया और सच्चे गुरु ने हमारे सब भय दूर कर दिए ॥ १ ॥ हमारे गुरुदेव सबसे अधिक समर्थ हैं, उनकी सेवा में सब सुख प्राप्त हैं ॥ रहाउ ॥ जिसका किया सब कुछ होता है (अर्थात् वाहिगुरु का किया), उसका हुकुम कोई टाल नहीं सकता, वह स्वयं अनुपम परब्रह्म परमेश्वर है। गुरु उसी का मूर्त्त-रूप है, जिसका दर्शन सर्वफलदायी है ॥ २ ॥ जिसके अन्तर्मन में हरि-नाम बसा है, वह सेवक जो कुछ भी देखता है, उसमें से उसे हरि-ज्ञान प्राप्त होता है। जिसके मन में पूर्ण आलोक है (बीस बिसुए = पूर्णतः), उसके भीतर परब्रह्म का निवास है ॥ ३ ॥ उस पूर्णगुरु को सदा वन्दन है, उस गुरु पर मैं सदा क़ुर्बान हूँ। गुरु नानक कहते हैं कि वे उस सतिगुरु के चरण धो-धोकर पीते और उसका नाम जप-जपकर जीते हैं ॥ ४ ॥ ४३ ॥ ५६ ॥

रागु भैरउ महला ५ पड़ताल* घरु ३

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ परतिपाल प्रभ क्रिपाल कवन गुन गनी। अनिक रंग बहु तरंग सरब को धनी ॥१॥रहाउ॥ अनिक गिआन अनिक धिआन अनिक जाप जाप ताप। अनिक गुनित धुनित ललित अनिक धार मुनी ॥ १ ॥ अनिक नाद अनिक बाज निमख निमख अनिक स्वाद अनिक दोख अनिक रोग मिटहि जस सुनी। नानक सेव अपार देव तटह खटह बरत पूजा गवन भवन जात्र करन सगल फल पुनी ॥ २ ॥ १ ॥ ५७ ॥

हे प्रतिपाल कृपालु प्रभु, मैं तुम्हारे कौन-कौन से गुण गिनूँ; हे स्वामी, तुम्हारे अनेक रंग हैं, अनेक तरंगें हैं (मैं किसे विशेष मानूँ ?) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुम्हारी राह पर अनेक ध्यान, ज्ञान, जप-तप करते हैं; अनेक तुम्हारी गणना का प्रयास करते हैं; अन्य सुन्दर ध्वनियों में तुम्हें बाँधते हैं और अनेक तुम्हें पाने के लिए मौन साधना करते हैं ॥ १ ॥ अनेक

* "पड़ताल" गायन की एक शैली है, जिसमें ताल को बार-बार दोहराया जाता है।

तुम्हारे लिए गाते हैं, अनेक बजाते हैं; क्षण-क्षण में अनेक स्वाद ले-लेकर कई तुम्हारा नाम लेते हैं। तुम्हारा यशोगान सुनने से कई तरह के दुःख-रोग दूर हो जाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि परमदेव (वाहिगुरु) की पूजा में ही तीर्थाटन, षट्कर्म, व्रत-पूजा, यात्रा आदि सब कर्मकाण्ड समाहित हैं ॥ २ ॥ १ ॥ ५७ ॥

भैरउ असटपदीआ महला १ घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ आतम महि रामु राम महि आतमु चीनसि गुर बीचारा। अंम्रित बाणी सबदि पछाणी दुख काटै हउ मारा ॥ १ ॥ नानक हउमै रोग बुरे। जह देखां तह एका बेदन आपे बखसै सबदि धुरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आपे परखे परखणहारै बहुरि सूलाकु न होई। जिन कउ नदरि भई गुरि मेले प्रभ भाणा सचु सोई ॥ २ ॥ पउणु पाणी बैसंतरु रोगी रोगी धरति सभोगी। मात पिता माइआ देह सि रोगी रोगी कुटंब संजोगी ॥ ३ ॥ रोगी ब्रहमा बिसनु सरुद्रा रोगी सगल संसारा। हरि पदु चीनि भए से मुकते गुर का सबदु बीचारा ॥ ४ ॥ रोगी सात समुंद सनदीआ खंड पताल सि रोगि भरे। हरि के लोक सि साचि सुहेले सरबी थाई नदरि करे ॥ ५ ॥ रोगी खट दरसन भेखधारी नाना हठी अनेका। बेद कतेब करहि कह बपुरे नह बूझहि इक एका ॥ ६ ॥ मिठ रसु खाइ सु रोगि भरीजै कंद मूलि सुखु नाही। नामु विसारि चलहि अनमारगि अंत कालि पछुताही ॥ ७ ॥ तीरथि भरमै रोगु न छूटसि पड़िआ बादु बिबादु भइआ। दुबिधा रोगु सु अधिक वडेरा माइआ का मुहताजु भइआ ॥ ८ ॥ गुरमुखि साचा सबदि सलाहै मनि साचा तिसु रोगु गइआ। नानक हरिजन अनदिनु निरमल जिन कउ करमि नीसाणु पइआ ॥९॥१॥

जीवात्मा में परमात्मा विद्यमान है और परमात्मा ही जीवात्मा है, यह रहस्य गुरु के उपदेश द्वारा ही जाना जा सकता है। हरि का अमृत-नाम भी गुरु के द्वारा ही प्राप्त होता है, जो दुःखों को काटता और अहंता को मारता है ॥ १ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि अहंकार का विकार बुरा है। जिधर देखता हूँ, लोगों को यही एक अहंकार की पीड़ा खा रही है,

परमात्मा ही बख्श ले, तो बचाव सम्भव है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वह परमात्मा एक बार उन्हें परखता है, दुबारा उन्हें परख-कसौटी के सूए पर नहीं चढ़ना पड़ता। प्रभु की इच्छा से जिन पर कृपा हुई, गुरु से उनकी भेंट हो गई ॥ २ ॥ पवन, पानी, अग्नि आदि मूल तत्त्व रोगी (विकारग्रस्त) हैं, यह समूची धरती अपने समस्त भोग-विलासों-सहित रोगिनी है। मायाग्रस्त माता-पिता एवं कुटुम्ब से जुड़े सब सगे सम्बन्धी भी काम-क्रोधादि रोगों के शिकार हैं ॥ ३ ॥ ब्रह्मा, विष्णु और शिव एवं इनके द्वारा नियन्त्रित सारा संसार रोगी है। जिन जीवों ने गुरु के उपदेशानुसार प्रभु-चरणों में शरण ली है, केवल वे ही मुक्त हुए हैं ॥ ४ ॥ सातों समुद्र, नदियाँ तथा खण्ड-पाताल सब रोगों (विकारों) से भरे पड़े हैं (अभिप्राय यह कि संसार का अंग-अंग विकारयुक्त है)। मात्र परमात्मा के भक्त ही सुखी हैं, क्योंकि वह हर जगह उन पर कृपा की दृष्टि डालता है ॥ ५ ॥ षट्-दर्शनों को माननेवाले, वेषधारी और अनेक प्रकार के हठी-तपस्वी, सब रोगी हैं। जब तक उस एक सर्वांतक इकाई को न पहचानें, तो ये वेद-कतेब (क़ुर्आन-इञ्जील आदि) बेचारे क्या करेंगे ॥ ६ ॥ मधुर रस-भोग भी रोग-युक्त हैं और जंगलों में जाकर कन्दमूल-भोजन भी रोग-रहित नहीं। जो हरि-नाम को भुलाकर कुपथ पर चलते हैं, वे अन्ततः पछताते हैं ॥ ७ ॥ तीर्थों के भ्रमण में ये रोग नहीं छूटते, पढ़-लिखकर वाद-विवाद में ग्रस्त होने में भी विकार है। दुविधा-रोग सबसे बड़ा है, जिसमें जीव माया का आश्रित हो जाता है ॥८॥ जो सच्चे मन से गुरु के उपदेशानुसार आचरण करता है, उसका रोग दूर हो जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि हरिजन (प्रभु-भक्त) सदैव निर्मल हैं, क्योंकि स्वयं परमात्मा ने उन पर स्वीकृति का चिह्न कर दिया होता है ॥ ९ ॥ १ ॥

भैरउ महला ३ घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ तिनि करतै इकु चलतु उपाइआ। अनहद बाणी सबदु सुणाइआ। मनमुखि भूले गुरमुखि बुझाइआ। कारणु करता करदा आइआ ॥ १ ॥ गुर का सबदु मेरै अंतरि धिआनु। हउ कबहु न छोडउ हरि का नामु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पिता प्रहलादु पड़ण पठाइआ। लै पाटी पाधे कै आइआ। नाम बिना नह पड़उ अचार। मेरी पटीआ लिखि देहु गोबिंद मुरारि ॥ २ ॥ पुत्र प्रहिलाद सिउ

कहिआ माइ । परविरति न पड़हु रही समझाइ । निरभउ दाता हरि जीउ मेरै नालि । जे हरि छोडउ तउ कुलि लागै गालि ।। ३ ।। प्रहलादि सभि चाटड़े विगारे । हमारा कहिआ न सुणै आपणे कारज सवारे । सभ नगरी महि भगति द्रिड़ाई । दुसट सभा का किछु न वसाई ।। ४ ।। संडै मरकै कीई पूकार । सभे दैत रहे झख मारि । भगत जना की पति राखै सोई । कीते कै कहिऐ किआ होई ।। ५ ।। किरत संजोगी दैति राजु चलाइआ । हरि न बूझै तिनि आपि भुलाइआ । पुत्र प्रहलाद सिउ वादु रचाइआ । अंधा न बूझै कालु नेड़ै आइआ ।। ६ ।। प्रहलादु कोठे विचि राखिआ बारि दीआ ताला । निरभउ बालकु मूलि न डरई मेरै अंतरि गुर गोपाला । कीता होवै सरीकी करै अनहोदा नाउ धराइआ । जो धुरि लिखिआ सुो आइ पहुता जन सिउ वादु रचाइआ ।। ७ ।। पिता प्रहलाद सिउ गुरज उठाई । कहां तुम्हारा जगदीस गुसाई । जगजीवनु दाता अंति सखाई । जह देखा तह रहिआ समाई ।। ८ ।। थंम्हु उपाड़ि हरि आपु दिखाइआ । अहंकारी दैतु मारि पचाइआ । भगता मनि आनंदु वजी वधाई । अपने सेवक कउ दे वडिआई ।। ९ ।। जंमणु मरणा मोहु उपाइआ । आवणु जाणा करतै लिखि पाइआ । प्रहलाद कै कारजि हरि आपु दिखाइआ । भगता का बोलु आगै आइआ ।। १० ।। देव कुली लखिमी कउ करहि जैकारु । माता नरसिंघ का रूपु निवारु । लखिमी भउ करै न साकै जाइ । प्रहलादु जनु चरणी लागा आइ ।। ११ ।। सतिगुरि नामु निधानु द्रिड़ाइआ । राजु मालु झूठी सभ माइआ । लोभी नर रहे लपटाइ । हरि के नाम बिनु दरगह मिलै सजाइ ।। १२ ।। कहै नानकु सभु को करे कराइआ । से परवाणु जिनी हरि सिउ चितु लाइआ । भगता का अंगीकारु करदा आइआ । करतै अपणा रूपु दिखाइआ ।। १३ ।। १ ।। २ ।।

(यहाँ गुरुजी प्रह्लाद भक्त का सन्दर्भ लेकर बताते हैं कि परमात्मा सदा अपने भक्तों की रक्षा करता है ।) परमात्मा ने एक लीला (चरित) की और गुरु के उपदेश-रूप में अनाहत नाद सुनाया । गुरु से विमुख जीव इस नाद के प्रति उपेक्षा करते रहे, गुरुमुख जीवों ने इस ज्ञान को

जान लिया— यह तो कर्ता स्वयं करता है, वह समूची वस्तु-स्थिति का नियन्ता है ॥१॥ गुरु का उपदेश मेरे अन्तर्मन में बस गया है, अतः अब मैं हरि-नाम को कभी नहीं छोड़ता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पिता (हिरण्यकशिपु) ने प्रह्लाद को पढ़ने भेजा, वह पट्टी लेकर पण्डित के पास (पढ़ने के लिए) आया। हरि-नाम के बिना अन्य कोई बात नहीं पढ़ूँगा, ऐसा उसने कहा। मेरी पट्टी पर तो केवल परमात्मा का नाम लिख दो ॥ २ ॥ माँ ने पुत्र प्रह्लाद से कहा, दूसरों की रस्मों में न पड़ो (उनके परिवार में परमात्मा का नाम लेने की रीति न थी), तो (वह बोला), निर्भय सबका जीवनदाता हरि मेरे साथ है, यदि मैं उसका नाम त्याग दूँ, तो कुल में कलंक लगेगा ॥ ३ ॥ प्रह्लाद ने सब सहपाठियों को बिगाड़ दिया, (अध्यापक ने यह शिकायत उसके पिता से की,) वह हमारी बात नहीं मानता, अपने ही रास्ते चलता जाता है। नगर भर में वह भक्ति की चर्चा करता रहा, दुष्टों के समूह का कोई वश न चला ॥ ४ ॥ प्रह्लाद के अध्यापक शण्डे, मरके आदि ने पुकार की, सभी दैत्य अपना बल लगाकर पराजित हुए, किन्तु परमात्मा तो अपने भक्तों की रक्षा स्वयं करता है— परमात्मा के बनाए जीवों के किए क्या होता है ? (परमात्मा के मुक़ाबले) ॥ ५ ॥ यह तो कर्म-फलानुसार दैत्य को राज्य प्राप्त हुआ है, किन्तु उसने परमात्मा को भुला दिया और प्रजा को अपने में ही रमा लिया। पुत्र प्रह्लाद से ही झगड़ा हो गया, अन्धा हिरण्यकशिपु नहीं जानता कि (इस झगड़े के माध्यम से) मृत्यु उसके निकट आ रही है ॥६॥ प्रह्लाद को घर के भीतर रखकर द्वार पर ताला लगा दिया, निर्भीक बालक के भीतर तो परमात्मा विराजता था, अतः वह तद्दिन नहीं डरा। परमात्मा का बनाया जीव ही यदि प्रभु का शरीक (प्रतिद्वंद्वी) बने और अपना नाम ऊँचा कहलवाए, तो अन्ततः कर्मों का फल मिलेगा (नष्ट हो जायगा), तभी तो प्रभु के भक्त से उसने झगड़ा कर लिया ॥ ७ ॥ पिता हिरण्यकशिपु ने प्रह्लाद को मारने के लिए स्वयं गुर्ज उठाया और चीख़कर पूछा कि तुम्हारा जगदीश परमात्मा कहाँ है ? वह संसार को जीवन देनेवाला, अन्ततः सबका सहायक तो जिधर देखें, सब जगह व्याप्त है ॥ ८ ॥ तभी स्तम्भ फाड़कर परमात्मा प्रकट हो गया, अहंकारी दैत्य को उसने मारकर समाप्त कर दिया। भक्तों के मन में इससे ख़ुशियों के वाद्य बजने लगे; परमात्मा सदैव अपने सेवक को सम्मान दिलाता है ॥९॥ जन्म-मरण के चक्र में मोह पैदा हुआ है, कर्ता ने स्वयं आवागमन का आलेख तैयार किया है। प्रह्लाद के कारण परमात्मा ने स्वयं को प्रकट किया, भक्तों के वचन की रक्षा की ॥ १० ॥ सब देवताओं ने लक्ष्मी को प्रणाम करके विनती की, हे माता, नरसिंह को यह भयानक रूप त्यागने को कहो। लक्ष्मी भी डरती थी और नरसिंह के निकट नहीं जाती थी,

किन्तु जब भक्त प्रह्लाद नरसिंह के चरणों से लिपट गया (तो उसने वह भयानक रूप त्याग दिया) ॥ ११ ॥ सच्चे गुरु ने जिसे हरि-नाम का भेद समझाया है, उसके लिए राज्य, सम्पत्ति सब मिथ्या मायाजाल-समान है। लोभी मनुष्य उसी से उलझा रहता है, किन्तु हरिनाम-भजन के बिना प्रभु के निकट वह दण्ड का भागी बनता है ॥ १२ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा ही सब कुछ करता-कराता है; उसके दरबार में वही स्वीकार है जो परमात्मा में मन रमाता है। कर्तार सदैव भक्तों के पक्ष में है और आवश्यकता होने पर अपने को प्रकट करता रहा है ॥ १३ ॥ १ ॥ २ ॥

॥ भैरउ महला ३ ॥ गुर सेवा ते अंम्रित फलु पाइआ हउमै त्रिसन बुझाई। हरि का नामु हिरदै मनि वसिआ मनसा मनहि समाई ॥ १ ॥ हरि जीउ क्रिपा करहु मेरे पिआरे। अनदिनु हरि गुण दीन जनु मांगै गुर कै सबदि उधारे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संत जना कउ जमु जोहि न साकै रती अंच दूख न लाई। आपि तरहि सगले कुल तारहि जो तेरी सरणाई ॥ २ ॥ भगता की पैज रखहि तू आपे एह तेरी वडिआई। जनम जनम के किलविख दुख काटहि दुबिधा रती न राई ॥ ३ ॥ हम मूड़ मुगध किछु बूझहि नाही तू आपे देहि बुझाई। जो तुधु भावै सोई करसी अवरु न करणा जाई ॥ ४ ॥ जगतु उपाइ तुधु धंधै लाइआ भूंडी कार कमाई। जनमु पदारथु जूऐ हारिआ सबदै सुरति न पाई ॥ ५ ॥ मनमुखि मरहि तिन किछू न सूझै दुरमति अगिआन अंधारा। भवजलु पारि न पावहि कबही डूबि मुए बिनु गुर सिरि भारा ॥ ६ ॥ साचै सबदि रते जन साचे हरि प्रभि आपि मिलाए। गुर की बाणी सबदि पछाती साचि रहे लिव लाए ॥ ७ ॥ तूं आपि निरमलु तेरे जन है निरमल गुर कै सबदि वीचारे। नानकु तिन कै सद बलिहारै राम नामु उरि धारे ॥ ८ ॥ २ ॥ ३ ॥

गुरु की सेवा से नामामृत रूपी अमृत-फल प्राप्त हुआ और अहम् एवं तृष्णा की कुवृत्तियों का नाश हुआ। हृदय में परमात्मा का नाम बसने से मन की सब तृष्णाएँ समाप्त हो गईं ॥ १ ॥ हे मेरे प्रियतम प्रभु, कृपा करो। तुम्हारा यह दीन भक्त रात-दिन तुमसे गुणगान का सामर्थ्य माँगता है। गुरु के उपदेश से उद्धार की कामना है (वह पूर्ण करो) ॥१॥ रहाउ ॥ सन्तजनों (प्रभु की शरण लेनेवाले जीवों) को यमदूत कुदृष्टि से नहीं देख सकता, रत्ती भर भी उन्हें आँच नहीं आती। जो तुम्हारी

शरण में आते हैं, वे स्वयं मोक्ष पाते हैं, साथ ही अपने समूचे कुल की मुक्ति का साधन बनते हैं ॥ २ ॥ तुम्हारा विरद है कि तुम भक्तों की लाज रखते हो। उनके जन्म-जन्म के पाप काटते हो, रत्ती भर भी दुविधा उन्हें शेष नहीं रह जाती ॥ ३ ॥ हम मूर्ख गँवार हैं, कोई सूझ-बूझ नहीं— तुम्हीं सब ज्ञान के ज्ञाता हो। जो तुम्हें प्रिय है, वही होता है; कोई अन्य कुछ नहीं कर सकता ॥ ४ ॥ संसार को बनाकर तुमने धन्धे (कार्य-व्यापार) से लगा रखा है, वे जीव मन्दे कर्म करते हैं। वे जुए में मनुष्य-जन्म को हार देते हैं, गुरु के शब्द में मन नहीं लगाते ॥ ५ ॥ मनमुख (स्वेच्छाचारी) दुर्मति, अज्ञान एवं अन्धकार में भटकता है, उसे कुछ नहीं सूझता। वे संसार-सागर से कभी पार नहीं होते, गुरु की शरण लिये बिना पापों का बोझ लादे, वे मँझधार में डूब मरते हैं ॥ ६ ॥ सच्चे भक्त, जिन्हें स्वयं परमात्मा अपने संग मिला लेता है, सच्चे शब्द (आकाशवाणी, कलाम-ए-इलाही या अनाहत नाद) में रम जाते हैं। वे गुरु की वाणी द्वारा शब्द-रहस्य को समझते और सत्यस्वरूप में ध्यान लगाए रहते हैं ॥ ७ ॥ हे प्रभु, तुम निर्मल हो, गुरु का शब्द पहचानने वाले तुम्हारे सेवक भी निर्मल हैं। गुरु नानक ऐसे सेवकजन पर, जो हरि-नाम को मन में धारण करते हैं, क़ुर्बान जाते हैं ॥ ८ ॥ २ ॥ ३ ॥

भैरउ महला ५ असटपदीआ घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ जिसु नामु रिदै सोई वड राजा। जिसु नामु रिदै तिसु पूरे काजा। जिसु नामु रिदै तिनि कोटि धन पाए। नाम बिना जनमु बिरथा जाए ॥ १ ॥ तिसु सालाही जिसु हरि धनु रासि। सो वडभागी जिसु गुर मसतकि हाथु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसु नामु रिदै तिसु कोट कई सैना। जिसु नामु रिदै तिसु सहज सुखैना। जिसु नामु रिदै सो सीतलु हूआ। नाम बिना ध्रिगु जीवणु मूआ ॥ २ ॥ जिसु नामु रिदै सो जीवन मुकता। जिसु नामु रिदै तिसु सभ ही जुगता। जिसु नामु रिदै तिनि नउनिधि पाई। नाम बिना भ्रमि आवै जाई ॥ ३ ॥ जिसु नामु रिदै सो वेपरवाहा। जिसु नामु रिदै तिसु सद ही लाहा। जिसु नामु रिदै तिसु वड परवारा। नाम बिना मनमुख गावारा ॥४॥ जिसु नामु रिदै तिसु निहचल आसनु। जिसु नामु रिदै तिसु तखति निवासनु। जिसु नामु रिदै सो साचा साहु। नाम हीण नाही पति

वेसाहु ।। ५ ।। जिसु नामु रिदै सो सभ महि जाता । जिसु नामु रिदै सो पुरखु बिधाता । जिसु नामु रिदै सो सभ ते ऊचा । नाम बिना भ्रमि जोनी मूचा ।। ६ ।। जिसु नामु रिदै तिसु प्रगटि पहारा । जिसु नामु रिदै तिसु मिटिआ अंधारा । जिसु नामु रिदै सो पुरखु परवाणु । नाम बिना फिरि आवण जाणु ।। ७ ।। तिनि नामु पाइआ जिसु भइओ क्रिपाल । साध संगति महि लखे गुोपाल । आवण जाण रहे सुखु पाइआ । कहु नानक ततै ततु मिलाइआ ।। ८ ।। १ ।। ४ ।।

जिसके हृदय में राम-नाम विराजता है, वही बड़ा प्रतिष्ठित है। जिसके मन में हरि-नाम है, उसके सब कार्य सम्पन्न होते हैं। हृदय में हरि-नाम जपनेवाला करोड़ों प्रकार के धन का स्वामी होता है; हरि-नाम के बिना मनुष्य-जन्म वृथा है ।। १ ।। जिसके पास हरि-नाम रूपी राशि है, वह स्तुत्य है; जिसके माथे सतिगुरु का हाथ है (जो गुरु द्वारा शरण में लिया गया है), वही सौभाग्यशाली है ।। १ ।। रहाउ ।। हृदय में प्रभु-नाम को धारण करनेवाले के पास अनेक दुर्ग और सेनाएँ (शक्तियाँ) हैं; जिसके मन में हरि-नाम है, वह सहज सुख को पाता है। हृदय में प्रभु-नाम स्थिर करनेवाला शान्त जीवन जीता है; हरि-नाम के बिना जीवन धिक्कार योग्य है ।। २ ।। जिसके अन्तर में प्रभु का नाम है, वह जीवन्मुक्त होता है, हरि-नाम को धारण करनेवाला समस्त युक्तियों में पारंगत होता है। राम-नाम को हृदय में स्थिर करने से नव-निधि प्राप्त होती है, नाम के बिना जीव भ्रम में पड़ा आवागमन भोगता है ।। ३ ।। हृदय में हरि-नाम लेनेवाला बेपरवाह होता है, उसे सदा लाभ ही लाभ होता है। हरि-नाम को मन में स्थिर करनेवाले जीव का परिवार भी सुखी होता है, नाम के बिना जीव गँवार और स्वेच्छाचारी होता है ।। ४ ।। हृदय में परमात्मा का नाम जपनेवाले का आसन अडोल होता है, वह सिंहासनारूढ़ होता है। प्रभु-नाम को हृदय में स्थिर करनेवाला यथार्थ में धनवान् होता है। नाम-विहीन जीवों का कोई सम्मान या विश्वास नहीं होता ।। ५ ।। जिसके हृदय में नाम है, वे सब जगह प्रतिष्ठित होते हैं, वह तो स्वयं कर्ता-पुरुष बन जाते हैं (अर्थात् वे परमात्मा-रूप हो जाते हैं)। हृदय में प्रभु-नाम को धारण करनेवाला सबसे ऊँचा है। नाम-विहीन वह अनेक योनियों में भ्रमता है ।। ६ ।। जिसके हृदय में राम-नाम विराजता है, उसका अज्ञान-अन्धकार दूर होता है और उसे सर्वस्व में परमात्मा प्रत्यक्ष व्याप्त दीखता है। हृदय में प्रभु-नाम वाला व्यक्ति परमात्मा के दरबार में स्वीकृत होता है, किन्तु नाम-विहीन लोग जन्मते-मरते हैं ।। ७ ।। जिन पर प्रभु की कृपा हुई, वे ही हरि-नाम को पहचानते

हैं, वे सत्संगति में रहकर परमात्मा को प्रकट देखते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि उनका आवागमन चुक जाता है, उन्हें सुख मिलता और वे तत्त्व-अभेद के कारण परमात्मा में ही विलीन हो जाते हैं ॥ ८ ॥ १ ॥ ४ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ कोटि बिसन कीने अवतार। कोटि ब्रहमंड जाके ध्रमसाल। कोटि महेस उपाइ समाए। कोटि ब्रहमे जगु साजण लाए ॥१॥ ऐसो धणी गुविंदु हमारा। बरनि न साकउ गुण बिसथारा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कोटि माइआ जा कै सेवकाइ। कोटि जीअ जा की सिहजाइ। कोटि उपारजना तेरै अंगि। कोटि भगत बसत हरि संगि ॥ २ ॥ कोटि छत्रपति करत नमसकार। कोटि इंद्र ठाढे है दुआर। कोटि बैकुंठ जाकी द्रिसटी माहि। कोटि नाम जा की कीमति नाहि ॥ ३ ॥ कोटि पूरीअत है जा कै नाद। कोटि अखारे चलित बिसमाद। कोटि सकति सिव आगिआकार। कोटि जीअ देवै आधार ॥ ४ ॥ कोटि तीरथ जा के चरन मझार। कोटि पवित्र जपत नाम चार। कोटि पूजारी करते पूजा। कोटि बिसथारनु अवरु न दूजा ॥ ५ ॥ कोटि महिमा जा की निरमल हंस। कोटि उसतति जा की करत ब्रहमंस। कोटि परलउ ओपति निमख माहि। कोटि गुणा तेरे गणे न जाहि ॥ ६ ॥ कोटि गिआनी कथहि गिआनु। कोटि धिआनी धरत धिआनु। कोटि तपीसर तप ही करते। कोटि मुनीसर मुोनि महि रहते ॥ ७ ॥ अविगत नाथु अगोचर सुआमी। पूरि रहिआ घट अंतरजामी। जत कत देखउ तेरा वासा। नानक कउ गुरि कीओ प्रगासा ॥ ८ ॥ २ ॥ ५ ॥

जिसने करोड़ों विष्णु-अवतार बनाए, करोड़ों ब्रह्माण्ड जिसकी धर्मशालाएँ हैं, जिसने करोड़ों शिव पैदा किए और मिटा दिए, करोड़ों ब्रह्माओं को संसार बनाने में लगा रखा है ॥ १ ॥ ऐसा परम स्वामी हमारा प्रभु है, उसके गुणों का विस्तार करने में मैं समर्थ नहीं हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसकी सेवा में करोड़ों मायाएँ संलग्न हैं, करोड़ों जीव जिसके प्रतिबिम्ब हैं (करोड़ों में व्याप्त है), करोड़ों सृष्टियाँ जिसके अंगों में समाई हैं और करोड़ों भक्त उसकी शरण में बसते हैं ॥ २ ॥ उसे करोड़ों छत्रपति नमन करते हैं, करोड़ों इन्द्र उसके द्वार पर हाथ बाँधे खड़े हैं, करोड़ों वैकुण्ठ जिसकी दृष्टि (आँख के इशारे) में रहते हैं,

करोड़ों नाम जिसके रखे जाते हैं किन्तु वह सदव निर्मूल्य है ॥ ३ ॥ करोड़ों वादन जिसके नाद को स्वर देते हैं, करोड़ों विस्मय-भरे चरित्र जिसको प्रकटित करते हैं; करोड़ों शिव और शक्तियाँ जिसके आज्ञाकारी हैं और जो करोड़ों जीवों का आश्रय है ॥ ४ ॥ जिसके चरणों में करोड़ों तीर्थ विद्यमान हैं, करोड़ों जिसके पवित्र और सुन्दर नाम को जपते हैं, करोड़ों पुजारी उसकी पूजा करते हैं। करोड़ों विस्तार उसी (परमात्मा) के हैं, अन्य कोई दूसरा नहीं ॥ ५ ॥ करोड़ों निर्मल आत्माएँ जिसकी महिमा-गान करती हैं, ब्रह्मा के अंश (सनक, सनन्दन आदि ब्रह्मा की सन्तानें) उसकी करोड़ों स्तुतियाँ करते हैं, वह एक निमिष में करोड़ों उत्पत्तियाँ और प्रलय करने में समर्थ है। हे प्रभु, इस प्रकार तुम्हारे करोड़ों गुण गिने नहीं जा सकते ॥ ६ ॥ करोड़ों ज्ञानीजन ज्ञान-चर्चा करते हैं, करोड़ों समाधिस्थ जीव उसी का ध्यान करते हैं, करोड़ों तपस्वी उसके लिए तप करते हैं। करोड़ों मुनिवर उसे पाने के लिए मौन धारण किए रखते हैं ॥ ७ ॥ वह अपहुँच, इन्द्रियातीत सर्वात्मा का स्वामी है और घट-घट का अन्तर्यामी और सबमें व्याप्त है। गुरु नानक को गुरु-उपदेश का प्रकाश मिला है, जिससे जहाँ-तहाँ वे प्रभु को ही विराजता देखते हैं ॥ ८ ॥ २ ॥ ५ ॥

॥ भैरउ महला ५ ॥ सतिगुरि मोकउ कीनो दानु। अमोल रतनु हरि दीनो नामु। सहज बिनोद चोज आनंता। नानक कउ प्रभु मिलिओ अचिंता ॥ १ ॥ कहु नानक कीरति हरि साची। बहुरि बहुरि तिसु संगि मनु राची ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अचिंत हमारै भोजन भाउ। अचिंत हमारै लीचै नाउ। अचिंत हमारै सबदि उधार। अचिंत हमारै भरे भंडार ॥ २ ॥ अचिंत हमारै कारज पूरे। अचिंत हमारे लथे विसूरे। अचिंत हमारै बैरी मीता। अचिंतो ही इहु मनु वसि कीता ॥३॥ अचिंत प्रभू हम कीआ दिलासा। अचिंत हमारी पूरन आसा। अचिंत हम्हा कउ सगल सिधांतु। अचिंतु हम कउ गुरि दीनो मंतु ॥ ४ ॥ अचिंत हमारे बिनसे बैर। अचिंत हमारे मिटे अंधेर। अचिंतो ही मनि कीरतनु मीठा। अचिंतो ही प्रभु घटि घटि डीठा ॥ ५ ॥ अचिंत मिटिओ है सगलो भरमा। अचिंत वसिओ मनि सुख बिस्रामा। अचिंत हमारै अनहत वाजै। अचिंत हमारै गोबिंदु गाजै ॥ ६ ॥ अचिंत हमारै मनु पतीआना। निहचल धनी अचिंतु पछाना। अचिंतो

उपजिओ सगल बिबेका । अचिंत चरी हथि हरि हरि टेका ।।७।। अचिंत प्रभू धुरि लिखिआ लेखु । अचिंत मिलिओ प्रभु ठाकुरु एकु । चिंत अचिंता सगली गई । प्रभ नानक नानक नानक मई ।। ८ ।। ३ ।। ६ ।।

गुरु ने मुझ पर प्रसन्न होकर हरि-नाम रूपी अमोल रत्न का दान दिया है। मन को स्थिर रखनेवाला सहज आनन्द एवं अनन्त सुन्दर आचरण मुझे प्राप्त हुए। गुरु नानक कहते हैं कि मुझे अकस्मात् साक्षात् प्रभु ही प्राप्त हो गया है ।। १ ।। गुरु नानक परमात्मा की सच्ची स्तुति करते हैं, बार-बार उनका मन उसी में रमता है ।। १ ।। रहाउ ।। हमारे यहाँ स्वतः ही प्रेम का भोजन होता है, स्वतः ही हम हरि-नाम जपते हैं। अचिन्त-भाव से शब्द द्वारा हमारा उद्धार होता है और स्वतः ही (बिना प्रयास) हमारे भण्डार भरे रहते हैं ।। २ ।। (भाव यह कि जब गुरु ने हरि-नाम दिया, प्रभु की कृपा हुई तो बिना चेष्टा ही सब कुछ प्राप्त हो गया।) अकस्मात् ही हमारे सब कार्य सम्पन्न हो गए, ऐसे ही स्वतः हमारे सब दुःख मिट गए। अकस्मात् हमारे शत्रु मित्र बन गए और यह मन भी स्वतः ही वश में आ गया ।। ३ ।। परमात्मा ने स्वयं ही हमारी चिन्ताओं को दूर कर हमें सान्त्वना (धैर्य) दी है और स्वतः ही हमारी आशाएँ पूर्ण हो गई हैं। अपने-आप ही हमें तत्त्व-ज्ञान मिल गया। गुरु ने भी हमें स्वतः गुरु-मन्त्र दिया है ।। ४ ।। जिससे अपने-आप हमारी शत्रुता दूर हुई है, हमारा अज्ञान मिट गया है, मन अकस्मात् मधुर कीर्तन में मग्न हुआ है, परमात्मा भी स्वतः ही सर्वव्याप्त दीख पड़ने लगा है ।। ५ ।। अकस्मात् हमारे सब भ्रम दूर हो गए हैं, मन स्वतः ही सुखपूर्वक श्रम-रहित हो गया है। अकस्मात् हमें अनाहतनाद-श्रवण का सामर्थ्य मिला है; (यों कहिए कि) स्वतः ही परमात्मा हम पर प्रकट हो गया है ।। ६ ।। अकस्मात् ही हमारे मन में विश्वास जगा है, हमने अपने अटल और अविनाशी स्वामी को पहचान लिया है। आकस्मिक ही हममें विवेक जाग्रत् हुआ है और स्वतः ही हमें हरि का सहारा मिल गया है ।। ७ ।। परमात्मा ने स्वतः ही हमारे भाग्य में ऐसा उल्लेख कर दिया है, जिससे अकस्मात् हमारी भेंट साक्षात् परमात्मा से हुई है। गुरु नानक कहते हैं कि हमारी चिन्ता-अचिन्ता अकस्मात् सब दूर हो गई हैं, हम तो प्रभु-मयी हो गए हैं— उसी में विलीन हो गए हैं। (गुरुजी का संकल्प यह है कि जब जीव अपने को पूर्णतः परमात्मा पर आश्रित छोड़ देता है, अर्थात् मार्जार-न्याय की भक्ति करता है, तो उसके लिए सब कुछ प्रभु-कृपा से स्वतः हो जाता है।) ।। ८ ।। ३ ।। ६ ।।

भैरउ बाणी भगता की ।। कबीर जीउ घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। इहु धनु मेरे हरि को नाउ । गांठि न बाधउ बेचि न खाउ ।। १ ।। रहाउ ।। नाउ मेरे खेती नाउ मेरे बारी । भगति करउ जनु सरनि तुम्हारी ।। १ ।। नाउ मेरे माइआ नाउ मेरे पूंजी । तुमहि छोडि जानउ नही बूजी ।। २ ।। नाउ मेरे बंधिप नाउ मेरे भाई । नाउ मेरे संगि अंति होइ सखाई ।। ३ ।। माइआ महि जिसु रखै उदासु । कहि कबीर हउ ता को दासु ।। ४ ।। १ ।।

हरि-नाम मेरा ऐसा अमोल धन है, जिसे न गाँठ बाँधने की आवश्यकता है, न कोई बेचकर खा सकता है ।। १ ।। रहाउ ।। हरि-नाम ही मेरी खेती-बाड़ी है, हे प्रभु, यह सेवक तुम्हारी शरण में आकर तुम्हारी भक्ति करता है ।। १ ।। हरि-नाम मेरा धन है, हरि-नाम ही मेरी पूंजी है, मैं, ऐ प्रभु, तुम्हें छोड़ अन्य किसी दूसरे को नहीं पहचानता ।। २ ।। हरि-नाम मेरा सम्बन्धी है, हरि-नाम ही मेरा भाई है, हरि-नाम ही अन्तिम समय मेरा सहायक होता है ।। ३ ।। कबीरजी कहते हैं कि जो माया में भी निर्लिप्त रहता है, मैं उसका दास हूँ (अर्थात् वे उसका परम महत्त्व स्वीकार करते हैं) ।। ४ ।। १ ।।

नांगे आवनु नांगे जाना । कोइ न रहिहै राजा राना ।।१।। रामु राजा नउनिधि मेरै । संपै हेतु कलतु धनु तेरै ।। १ ।। रहाउ ।। आवत संग न जात संगाती । कहा भइओ दरि बांधे हाथी ।। २ ।। लंका गढु सोने का भइआ । मूरखु रावनु किआ ले गइआ ।। ३ ।। कहि कबीर किछु गुनु बीचारि । चले जुआरी दुइ हथ झारि ।। ४ ।। २ ।।

संसार में जीव ख़ाली आता है, ख़ाली ही चला जाता है। कोई राजा, शक्तिमान् बचा नहीं रहता ।। १ ।। प्रभु राम ही मेरे लिए नव-निधि-सम हैं, ये सम्पत्ति का मोह, स्त्री तथा धन सब तेरे (परमात्मा के) हैं ।। १ ।। रहाउ ।। धन आते हुए साथ नहीं होता, जाते समय भी साथ नहीं देता, फिर यहाँ (जगत में) द्वार पर हाथी बाँध लेने से भी क्या होता है ? ।। २ ।। लंका का दुर्ग सोने का था, किन्तु मूर्ख रावण (लंका का शासक) वहाँ से साथ क्या ले जा सका ? ।। ३ ।। कबीरजी कहते हैं कि ऐ जीव, प्रभु के गुणों का विचार करो (गुण-स्तुति करो) अन्यथा तो हाथ झाड़कर चले जाओगे ।। ४ ।। २ ।।

मैला ब्रहमा मैला इंदु । रवि मैला मैला है चंदु ॥ १ ॥ मैला मलता इहु संसारु । इकु हरि निरमलु जा का अंतु न पारु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मैले ब्रहमंडाइ कै ईस । मैले निसिबासुर दिन तीस ॥ २ ॥ मैला मोती मैला हीरु । मैला पउनु पावकु अरु नीरु ॥ ३ ॥ मैले सिव संकरा महेस । मैले सिध साधिक अरु भेख ॥ ४ ॥ मैले जोगी जंगम जटा सहेति । मैली काइआ हंस समेति ॥ ५ ॥ कहि कबीर ते जन परवान । निरमल ते जो रामहि जान ॥ ६ ॥ ३ ॥

संसार में (प्रभु के अतिरिक्त) सब मलिन है । ब्रह्मा मलिन है, इन्द्र मलिन है, सूर्य और चन्द्र मलिन हैं ॥ १ ॥ यह समूचा संसार मैला है, केवल एक परमात्मा ही निर्मल है, जिसका कोई अन्त या पार नहीं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ब्रह्माण्डों के शासक मलिन हैं, रात, दिन और महीने के तीसों दिन मैले हैं ॥ २ ॥ मोती में मलिनता है, हीरा भी मैला है; पवन, अग्नि और जल, सभी मलिन हैं ॥ ३ ॥ शिव शंकर महादेव भी मलिन हैं, सिद्ध, साधक और भेसी साधु, सब मैले हैं ॥ ४ ॥ योगी, जंगम और जटाधारी साधु मलिन हैं, शरीर और आत्मा दोनों में मैल है ॥ ५ ॥ कबीरजी कहते हैं कि केवल वे ही सेवक प्रभु के दरबार में स्वीकृत हैं, जो राम का परिचय पाकर निर्मल हो जाते हैं ॥ ६ ॥ ३ ॥

मनु करि मका किबला करि देही । बोलनहारु परम गुरु एही ॥ १ ॥ कहु रे मुलां बांग निवाज । एक मसीति दसै दरवाज ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मिसिमिलि तामसु भरमु कदूरी । भाखि ले पंचै होइ सबूरी ॥ २ ॥ हिंदू तुरक का साहिबु एक । कह करै मुलां कह करै सेख ॥ ३ ॥ कहि कबीर हउ भइआ दिवाना । मुसि मुसि मनूआ सहजि समाना ॥ ४ ॥ ४ ॥

मन को मक्का बनाओ और शरीर को क़ाबा समझो । उसमें आत्मा को ही बड़ा पीर मानो ॥ १ ॥ ऐ मुल्ला, इस दस द्वार के शरीर रूपी मस्जिद में ही बाँग दो और नमाज़ पढ़ो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मन की तामसिकता, गन्दगी तथा भ्रमों को 'बिस्मिल्लाह' कहकर ज़िबह कर दो (मार दो) । कामादि पाँचों विकारों को खाकर सन्तुष्ट और धैर्यवान् बन जाओ ॥ २ ॥ हिन्दू और मुसलमान, दोनों का परमात्मा एक ही है, इसमें मुल्ला या शेख़ क्या कर सकते हैं ॥ ३ ॥ कबीरजी कहते हैं कि मैं तो प्यारे प्रभु का आशिक़ हूँ । मेरा मन मारा जाकर (ज़िबह होकर) सहज में ही समा गया है ॥ ४ ॥ ४ ॥

गंगा के संग सलिता बिगरी। सो सलिता गंगा होइ निबरी ॥ १ ॥ बिगरिओ कबीरा राम दुहाई। साचु भइओ अन कतहि न जाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चंदन कै संगि तरवरु बिगरिओ। सो तरवरु चंदनु होइ निबरिओ ॥ २ ॥ पारस के संग तांबा बिगरिओ। सो तांबा कंचनु होइ निबरिओ ॥३॥ संतन संगि कबीरा बिगरिओ। सो कबीरु रामै होइ निबरिओ ॥ ४ ॥ ५ ॥

गंगा में मिलनेवाली छोटी नदिया का रूप बदला और फिर वह नदिया गंगा में मिलकर गंगा ही हो गई ॥ १ ॥ कबीर भी राम पुकार-पुकारकर बिगड़ा (बदला) है, अब सत्यस्वरूप ही हो गया है, कहीं और नहीं जाता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चन्दन के निकट उपजनेवाले पेड़ बिगड़ते हैं, तो स्वयं चन्दन-जैसे सुगन्धित हो जाते हैं ॥ २ ॥ पारस के संग ताँबा (लोहा यहाँ) बिगड़ता है, तो वह ताँबा सोना बन जाता है ॥ ३ ॥ सन्तों के संग रह-रहकर कबीर बिगड़ा है, तो कबीर स्वयं राममय ही हो गया है। (कबीरजी का तात्पर्य है कि उत्तम संगति में अपना रूप खोकर भी ऊँची स्थिति की ही उपलब्धि होती है।) ॥ ४ ॥ ५ ॥

माथे तिलकु हथ माला बानां। लोगन रामु खिलउना जानां ॥ १ ॥ जउ हउ बउरा तउ राम तोरा। लोगु मरमु कह जानै मोरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तोरउ न पाती पूजउ न देवा। राम भगति बिनु निहफल सेवा ॥ २ ॥ सतिगुरु पूजउ सदा सदा मनावउ। ऐसी सेव दरगह सुखु पावउ ॥३॥ लोगु कहै कबीरु बउराना। कबीर का मरमु राम पहिचानां ॥४॥६॥

माथे पर तिलक लगाकर हाथ में माला ले ली है, लोग ऐसे भेस बनाते हैं; वे जैसे राम (परमात्मा) को खिलौना मानते हों ॥ १ ॥ हे मेरे स्वामी राम, यदि मैं दीवाना हूँ तो भी तुम्हारा ही हूँ; लोग भला मेरा भेद क्या जानें ? ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मैं पूजा करने के लिए पत्ते नहीं तोड़ता, न ही देव-देवी की पूजा करता हूँ, मेरे लिए तो राम-भक्ति के सिवा अन्य सब सेवा बेकार है ॥ २ ॥ मैं तो सतिगुरु का सेवक हूँ, उसी की आराधना करता हूँ और सदैव उसी के सम्मुख अपनी अभिलाषा पेश करता हूँ; ऐसी सेवा से परमात्मा के दरबार में सुख प्राप्त होता है ॥३॥ कबीरजी कहते हैं कि लोग मुझे पगलाया हुआ कहते हैं, किन्तु कबीर का भेद तो उसका राम (प्रभु) ही जानता है ॥ ४ ॥ ६ ॥

उलटि जाति कुल दोऊ बिसारी। सुंन सहज महि बुनत हमारी ॥ १ ॥ हमरा झगरा रहा न कोऊ। पंडित मुलां छाडे दोऊ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बुनि बुनि आप आपु पहिरावउ। जह नही आपु तहा होइ गावउ ॥ २ ॥ पंडित मुलां जो लिखि दीआ। छाडि चले हम कछू न लीआ ॥ ३ ॥ रिदै इखलासु निरखि ले मीरा। आपु खोजि खोजि मिले कबीरा ॥ ४ ॥ ७ ॥

कबीर कहते हैं कि मन को माया की ओर से उलटकर उन्होंने जाति, कुल आदि सब विचार छोड़ दिए हैं। शून्य में समाधिस्थ होकर अब वे सहज आनन्द को पाते हैं ॥ १ ॥ हमारा कोई झगड़ा अब मायावी संसार से नहीं; हमने पंडित और मुल्ला, दोनों के कर्म और प्रवृत्ति त्याग दिए हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अब मैं अपने लिए बुनता और स्वयं पहनता हूँ, जहाँ अहम् नहीं रहता, वहाँ का यश गाता हूँ ॥ २ ॥ पंडितों, मुल्लाओं ने धार्मिक पुस्तकों में जो लिख दिया है, कबीर कहते हैं कि उन्होंने उसमें से कुछ नहीं लिया, सब छोड़ दिया है (अभिप्राय यह कि उनका मार्ग परम्परित धर्म-पुस्तकों द्वारा नियन्त्रित नहीं है) ॥ ३ ॥ कबीरजी कहते हैं कि ऐ सेवकजन, हृदय में पवित्रता लाओ, अपने भीतर खोजो और प्रभु से मिल जाओ ॥ ४ ॥ ७ ॥

निरधन आदरु कोई न देइ। लाख जतन करै ओहु चिति न धरेइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जउ निरधनु सरधन कै जाइ। आगै बैठा पीठि फिराइ ॥ १ ॥ जउ सरधनु निरधन कै जाइ। दीआ आदरु लीआ बुलाइ ॥ २ ॥ निरधन सरधनु दोनउ भाई। प्रभ की कला न मेटी जाई ॥ ३ ॥ कहि कबीर निरधन है सोई। जा के हिरदै नामु न होई ॥ ४ ॥ ८ ॥

संसार में निर्धन को कोई आदर नहीं देता; चाहे वह लाख यत्न करे, अमीर लोग उसकी ओर ध्यान नहीं देते ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यदि निर्धन व्यक्ति धनवान के यहाँ जाए तो आगे से वह उपेक्षा से पेश आता है ॥ १ ॥ किन्तु यदि धनवान निर्धन के यहाँ जाय, तो वह आदर-भाव से उसे बिठाता है ॥ २ ॥ यों तो निर्धन और धनवान दोनों भाई हैं, किन्तु परमात्मा की इच्छा तो अमित है ॥ ३ ॥ कबीरजी कहते हैं कि असली निर्धन तो वह है, जिसके हृदय में प्रभु का नाम नहीं है ॥ ४ ॥ ८ ॥

गुर सेवा ते भगति कमाई। तब इह मानस देही पाई। इस देही कउ सिमरहि देव। सो देही भजु हरि की सेव ॥ १ ॥

भजहु गुोबिंद भूलि मत जाहु। मानस जनम का एही लाहु ॥१॥ रहाउ ॥ जब लगु जरा रोगु नही आइआ। जब लगु कालि ग्रसी नही काइआ। जब लगु बिकल भई नही बानी। भजि लेहि रे मन सारिगपानी ॥ २ ॥ अब न भजसि भजसि कब भाई। आवै अंतु न भजिआ जाई। जो किछु करहि सोई अब सारु। फिरि पछुताहु न पावहु पारु ॥ ३ ॥ सो सेवकु जो लाइआ सेव। तिन ही पाए निरंजन देव। गुर मिलि ता के खुल्हे कपाट। बहुरि न आवै जोनी बाट ॥ ४ ॥ इहा तेरा अउसरु इह तेरी बार। घट भीतरि तू देखु बिचारि। कहत कबीरु जीति कै हारि। बहु बिधि कहिओ पुकारि पुकारि ॥ ५ ॥ १ ॥ ६ ॥

गुरु-सेवा द्वारा यदि जीव भक्ति की कमाई करे, तभी उसकी मनुष्य-योनि सफल मानी जाना चाहिए। यह मनुष्य-शरीर ऐसा अनमोल है कि देवता भी इसकी प्राप्ति की इच्छा करते हैं; अतः इस शरीर में रहते हुए सदा हरि-सेवा करते रहो ॥ १ ॥ गोविन्द का भजन करना मत भूलो, मनुष्य-जन्म का यही एकमात्र लाभ है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब तक इस शरीर को बुढ़ापा और रोग नहीं सालता, जब तक शरीर को मृत्यु नहीं ग्रस लेती, जब तक मनुष्य की वाणी निर्बल नहीं पड़ती, तब तक, ऐ मन, सदा परमात्मा का भजन करो ॥ २ ॥ यदि अब (मनुष्य-जन्म में) भजन नहीं करोगे, तो फिर कब कर सकोगे, अन्तकाल आ जाने पर भजन को अवकाश नहीं मिलेगा। जो कुछ भी करना है, अब कर लो, बाद में पछताने से कुछ न बनेगा ॥ ३ ॥ सच्चा सेवक वही है, जो निरन्तर सेवा-रत रहता है और वही परमात्मा को साक्षात् करता है। गुरु से भेंट हो जाने से उसके अन्तःद्वार खुल जाते हैं और वह पुनः जन्म के चक्र में नहीं पड़ता ॥ ४ ॥ यह मनुष्य-जीवन ही तुम्हारे लिए सुअवसर है, इसी वेला में तुम्हें (प्रभु पाना है); मन में विचार कर इस तथ्य को समझो। कबीरजी कहते हैं कि मैंने तुम्हें पुकार-पुकार कर समझा दिया है, अब तुम जीवन के खेल जीतो, चाहे हारो (अर्थात् जीवन को ऐसे बिताओ कि तुम्हारी जीत हो या ऐसे रहो कि जन्म विफल हो जाय ॥ ५ ॥ १ ॥ ९ ॥

सिव की पुरी बसै बुधि सारु। तह तुम्ह मिलि कै करहु बिचारु। ईत ऊत की सोझी परै। कउनु करम मेरा करि करि मरै ॥ १ ॥ निजपद ऊपरि लागो धिआनु। राजा राम

नामु मोरा ब्रहम गिआनु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मूल दुआरै बंधिआ बंधु । रवि ऊपर गहि राखिआ चंदु । पछम दुआरै सूरजु तपै । मेर डंड सिर ऊपरि बसै ॥ २ ॥ पसचम दुआरे की सिल ओड़ । तिह सिल ऊपरि खिड़की अउर । खिड़की ऊपरि दसवा दुआरु । कहि कबीर ता का अंतु न पारु ॥३॥२॥१०॥

चेतना की नगरी में श्रेष्ठ बुद्धि का वास है, उसे प्राप्त कर विवेक-पूर्ण विचार करो; उससे तुम्हें यहाँ-वहाँ (लोक-परलोक) की सूझ पड़ेगी । व्यर्थ मेरा-मेरा करके मरने का क्या लाभ ? ॥ १ ॥ स्व-स्वरूप पर ध्यान एकाग्र किया है, प्रभु का नाम ही मेरे लिए ब्रह्मज्ञान है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सबके मूल प्रभु के द्वार पर हमने अपना मन बाँधा है । रवि (तमोगुण) पर चन्द्र (सतोगुण) को ऊपर उठाया है (भाव यह कि तमोगुण दूर कर दिया है) । पश्चिम में (अज्ञानता वाले स्थान पर) सूरज तीखा जल रहा है, किन्तु परमात्मा की लग्न सर्वोत्तम है (मेरु-दण्ड में सुषुम्ना का निम्न मस्तिष्क को स्पर्शित करना) ॥ २ ॥ पश्चिम द्वार की ओट में एक पत्थर है (अज्ञानता के पीछे जड़ वस्तुओं की लग्न है), उस पत्थर के ऊपर एक अन्य खिड़की है (जड़ता की लग्न के भी ऊपर एक अन्य मानसिक लग्न है) । उस खिड़की पर दसवाँ द्वार है (मानसिक लग्न के भी ऊपर परमात्मा की लग्न है) । कबीरजी कहते हैं कि उस परम लग्न का कोई अन्त नहीं ॥ ३ ॥ २ ॥ १० ॥

सो मुलां जो मन सिउ लरै । गुर उपदेसि काल सिउ जुरै । काल पुरख का मरदै मानु । तिसु मुला कउ सदा सलामु ॥ १ ॥ है हजूरि कत दूरि बतावहु । दुंदर बाधहु सुंदर पावहु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काजी सो जु काइआ बीचारै । काइआ की अगनि ब्रहमु परजारै । सुपनै बिंदु न देई झरना । तिसु काजी कउ जरा न मरना ॥ २ ॥ सो सुरतानु जु दुइ सर तानै । बाहरि जाता भीतरि आनै । गगन मंडल महि लसकरु करै । सो सुरतानु छत्रु सिरि धरै ॥ ३ ॥ जोगी गोरखु गोरखु करै । हिंदू राम नामु उचरै । मुसलमान का एकु खुदाइ । कबीर का सुआमी रहिआ समाइ ॥ ४ ॥ ३ ॥ ११ ॥

वास्तविक मुल्ला वही है, जो मन से लड़कर उस पर विजय पाता है और गुरु के उपदेश से काल का भी दमन करता है । यमराज के अभिमान का मर्दन कर दे । ऐसे मुल्ला को मेरा सदैव नमस्कार है ॥ १ ॥ परमात्मा अंग-संग है, उसे दूर क्यों बताते हो— वसे कामादि द्वन्द्वों को

बाँधों और सुन्दर परमात्मा को पा लो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वास्तविक क़ाज़ी वही है, जो शरीर के रहस्य को समझता है, शरीर की अग्नि में ब्रह्म को आलोकित करता है (अर्थात् शारीरिक रुचियों में से आध्यात्मिकता का ज्ञान प्राप्त करे)। स्वप्न में वीर्य गिरने नहीं देता (विषय-वासना का ध्यान नहीं करता); ऐसे क़ाज़ी को कभी बुढ़ापा या मृत्यु नहीं आते ॥२॥ वास्तविक सुलतान वह है, जो दो तीर (ज्ञान और वैराग्य को) मन की प्रत्यंचा पर खींचे और बाहर खिचते हुए मन को भीतर की ओर मोड़ ले। गगनमण्डल (दशम द्वार) में शुभ गुणों की सेना एकत्रित करे, वही सुलतान सिर पर छत्र धारण करने योग्य है ॥ ३ ॥ योगी गोरख (धरती का रक्षक अथवा इन्द्रियजित्) गोरख नाम से परमात्मा को पुकारते हैं, हिन्दू राम-नाम से पुकारते हैं, मुसलमान उसे ख़ुदा कहते हैं किन्तु कबीर अपने मालिक को सर्वव्यापक देखते हैं (सबके रंग में वही समाया हुआ है) ॥ ४ ॥ ३ ॥ ११ ॥

॥ महला ५ ॥ जो पाथर कउ कहते देव। ता की बिरथा होवै सेव। जो पाथर की पांई पाइ। तिस की घाल अजांई जाइ ॥ १ ॥ ठाकुरु हमरा सद बोलंता। सरब जीआ कउ प्रभु दानु देता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अंतरि देउ न जानै अंधु। भ्रम का मोहिआ पावै फंधु। न पाथरु बोलै ना किछु देइ। फोकट करम निहफल है सेव ॥ २ ॥ जे मिरतक कउ चंदनु चड़ावै। उसते कहहु कवन फल पावै। जे मिरतक कउ बिसटा माहि रुलाई। तां मिरतक का किआ घटि जाई ॥ ३ ॥ कहत कबीर हउ कहउ पुकारि। समझि देखु साकत गावार। दूजै भाई बहुतु घर गाले। राम भगत है सदा सुखाले ॥ ४ ॥ ४ ॥ १२ ॥

जो लोग पत्थर की मूर्तियों को ही परमात्मा मानकर उनकी सेवा में रत होते हैं, उनकी सेवा विफल रहती है। जो पत्थर की मूर्तियों के चरण छूते हैं, उनका समूचा श्रम वृथा होता है ॥ १ ॥ हमारा स्वामी तो चिर चेतन है, वह समस्त जीवों को सर्वस्व देनेवाला है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अज्ञानी मनुष्य अन्तर्मन में बसनेवाले परमात्मा को नहीं जानता, इसीलिए भ्रम और मोह के फन्दों में फँसा रहता है। पत्थर की मूर्तियाँ न तो बोलती हैं, न कुछ दे सकती हैं; उनके सम्बन्ध में कमाया कर्म और उनकी सेवा सब व्यर्थ और निष्फल है ॥ २ ॥ यदि कोई मुर्दे को (पत्थर की मूर्ति निर्जीव होने के कारण मुर्दा कही गई है) चन्दन लगाए, तो भला

सोचो, वह उससे क्या फल पा सकता है ? (इसके विपरीत यदि मुर्दे को गन्दगी में लिपटा दो, तो भला उसका क्या घट जायगा) ॥३॥ कबीरजी कहते हैं कि ऐ मायाधारी गँवार जीव, समझ-बूझकर काम करो। द्वैत-भाव से तो जीवन में हानि ही उठानी होती है, केवल राम-भक्ति ही सुखदायी है ॥ ४ ॥ ४ ॥ १२ ॥

जल महि मीन माइआ के बेधे। दीपक पतंग माइआ के छेदे। काम माइआ कुंचर कउ बिआपै। भुइअंगम भ्रिग माइआ महि खापे ॥ १ ॥ माइआ ऐसी मोहनी भाई। जेते जीअ तेते डहकाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पंखी म्रिग माइआ महि राते। साकर माखी अधिक संतापे। तुरे उसट माइआ महि भेला। सिध चउरासीह माइआ महि खेला ॥२॥ छिअ जती माइआ के बंदा। नवै नाथ सूरज अरु चंदा। तपे रखीसर माइआ महि सूता। माइआ महि कालु अरु पंच दूता ॥ ३ ॥ सुआन सिआल माइआ महि राता। बंतर चीते अरु सिंघाता। मांजार गाडर अरु लूबरा। बिरख मूल माइआ महि परा ॥४॥ माइआ अंतरि भीने देव। सागर इंद्रा अरु धरतेव। कहि कबीर जिसु उदरु तिसु माइआ। तब छूटे जब साधू पाइआ ॥ ५ ॥ ५ ॥ १३ ॥

जल में रहनेवाली मछलियाँ भी माया की बँधी हैं, दीपक पर मँड़राने वाले पतिंगे भी माया के बिंधे हुए हैं। हाथी में कामवासना की माया व्याप्त है; साँप और भँवरा भी माया में खप गए हैं ॥ १ ॥ माया ऐसी मधुर और मोहिनी शक्ति है कि सब जीवों में अलग-अलग रूप में डहकती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पक्षी और पशु, सब माया में रत हैं, शक्कर मक्खी को सन्ताप पहुँचाती है, घोड़े और ऊँट सब माया में मिले हैं— यहाँ तक कि चौरासी सिद्धों का समूचा जीवन मायामय था ॥ २ ॥ छः यती (भैरव, हनुमान, लक्ष्मण, गोरख, भीष्म तथा दत्त) माया के जकड़े हुए थे, नौ नाथ और सूर्य-चन्द्र आदि सब माया में घिरे थे; तपस्वी, ऋषीश्वर सब माया में अचेत हैं, समस्त काल एवं पंच दूत (काम-क्रोधादि) भी माया की ही देन हैं ॥ ३ ॥ कुत्ते, शृगाल, सब माया में रत हैं; बन्दरों, चीतों और सिंहों, बिल्लों, भेड़ों और लूमड़ों तथा वृक्षों के मूल में माया ही व्याप्त है ॥ ४ ॥ देवगण भी माया में संलग्न हैं। सागर, इन्द्र, धरती भी माया में विचरते हैं। कबीरजी कहते हैं कि जिसे पेट लगा है, वह माया से बँधा है। केवल वही जीव माया से छूटता है, जिसे सतिगुरु से भेंट हो जाती है ॥ ५ ॥ ५ ॥ १३ ॥

जब लगु मेरी मेरी करै । तब लगु काजु एकु नही सरै । जब मेरी मेरी मिटि जाइ । तब प्रभ काजु सवारहि आइ ॥१॥ ऐसा गिआनु बिचारु मना । हरि की न सिमरहु दुख भंजना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब लग सिंघु रहै बन माहि । तब लगु बनु फूलै ही नाहि । जब ही सिआरु सिंघ कउ खाइ । फूलि रही सगली बनराइ ॥ २ ॥ जीतो बूडै हारो तिरै । गुर परसादी पारि उतरै । दासु कबीरु कहै समझाइ । केवल राम रहहु लिव लाइ ॥ ३ ॥ ६ ॥ १४ ॥

मनुष्य जब तक मेरी-मेरी (अहंकारपूर्ण अधिकार-भावना) करता है, तब तक एक भी कार्य सम्पन्न नहीं हो पाता। जब मेरी-मेरी की वृत्ति मिट जाती है, तब परमात्मा स्वयं सब कार्य सँवार देता है ॥ १ ॥ ऐ मन, ऐसा तत्त्व-विचार करो। क्यों दुःख-भंजन प्रभु का नाम-स्मरण नहीं करते ! ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब तक बन में सिंह रहता है, बन फलता-फूलता नहीं (अहंकार रूपी सिंह शरीर रूपी बन)। जब सियार सिंह को खा जाता है (विनम्रता रूपी सियार अहम् रूपी सिंह), तो सारी वनस्पति (समस्त जीव) सुविकसित हो जाती है ॥ २ ॥ जो अहंकार के कारण अपने को विजयी मानते हैं, वे संसार-सागर में डूबते हैं और जो विनम्रतापूर्वक पराजय स्वीकार कर लेता है, वे संसार-सागर से तिर जाते हैं। गुरु की कृपा से वे मुक्त होते हैं। इसीलिए कबीरदासजी समझाकर कहते हैं कि सदा परमात्मा में ध्यान-मग्न रहो ॥ ३ ॥ ६ ॥ १४ ॥

सतरि सैइ सलार है जाके । सवा लाखु पैकाबर ता के । सेख जु कहीअहि कोटि अठासी । छपन कोटि जा के खेल खासी ॥ १ ॥ मो गरीब की को गुजरावै । मजलसि दूरि महलु को पावै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तेतीस करोड़ी है खेलखाना । चउरासी लख फिरै दिवानां । बाबा आदम कउ किछु नदरि दिखाई । उनि भी भिसति घनेरी पाई ॥ २ ॥ दिल खलहलु जा कै जरद रू बानी । छोडि कतेब करै सैतानी । दुनीआ दोसु रोसु है लोई । अपना कीआ पावै सोई ॥ ३ ॥ तुम दाते हम सदा भिखारी । देउ जबाबु होइ बजगारी । दासु कबीरु तेरी पनह समानां । भिसतु नजीकि राखु रहमाना ॥ ४ ॥ ७ ॥ १५ ॥

जिसके साथ सात हज़ार सेनापति हैं (ख़ुदा ने जिब्रील के साथ सात हज़ार फ़िरिश्ते भेजे थे ताकि बड़ी आयत मुहम्मद साहिब तक सुरक्षित पहुँच सके), उसके सवा लाख पैगम्बर हैं (कहते हैं कि हज़रत आदम से मुहम्मद साहिब तक सवा लाख पैग़म्बर हो चुके थे), अठासी करोड़ शेख हैं और जिसके छप्पन करोड़ ख़ास मुसाहिब हैं ॥ १ ॥ उस तक मुझ ग़रीब की पुकार कौन पहुँचाए ? उसका सिक्का दूर-दूर तक चलता है, उसके महलों तक कौन पहुँचे ? ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तेंतीस कोटि देवता उसके घर के सेवक हैं, चौरासी लाख योनियों के जीव उसी के कारण भटके फिरते हैं। बाबा आदम (आदिपुरुष) ने भी जब अवज्ञा की और ख़ुदा ने उसे आँखें दिखाई, तो उसने भी ख़ूब स्वर्ग पाया (अर्थात् स्वर्ग से निकाल दिया गया) ॥ २ ॥ जिसके मन में द्वैत की खलबली रहती है, उसका मुख पीला पड़ा रहता है। वह क़ुर्आनादि ग्रन्थों को छोड़कर स्वेच्छाचारी व्यवहार करता है, वह दुनिया को दोष देता और लोगों पर रोष करता है, अतः सदा अपना किया पाता है ॥ ३ ॥ हे प्रभु, तुम दाता हो, हम तुम्हारे द्वार के भिखारी हैं। यदि मैं तुम्हारे दिए दान की उपेक्षा करूँ तो पाप होगा। कबीरजी कहते हैं, हे करुणानिधि, मुझे अपने संरक्षण में ले लो, यही मेरे लिए बिहिश्त है ॥ ४ ॥ ७ ॥ १५ ॥

सभु कोई चलन कहत है ऊहां। ना जानउ बैकुंठु है कहां ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आप आप का मरमु न जानां। बातन ही बैकुंठु बखानां ॥ १ ॥ जब लगु मन बैकुंठ की आस। तब लगु नाही चरन निवास ॥ २ ॥ खाई कोटु न परलपगारा। ना जानउ बैकुंठ दुआरा ॥ ३ ॥ कहि कमीर अब कहीऐ काहि। साध संगति बैकुंठै आहि ॥ ४ ॥ ८ ॥ १६ ॥

सब कोई वहाँ (वैकुण्ठ में) चलने की बात कहते हैं, मैं नहीं जानता कि वैकुण्ठ कहाँ है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वे तो अपने यथार्थ को भी नहीं जानते, बातों-बातों में वैकुण्ठ की व्याख्या करते हैं ॥ १ ॥ जब तक मन में वैकुण्ठ की आशा बनी रहती है, तब तक प्रभु-चरणों में वास सम्भव नहीं है ॥ २ ॥ वहाँ की खाइयों, क़िलों, लिपी दीवारों तथा वकुण्ठ के द्वारों को मैं नहीं जानता ॥ ३ ॥ कबीरजी कहते हैं कि इस पर इससे अधिक क्या कह सकता हूँ कि सत्संगति ही वैकुण्ठ है ॥ ४ ॥ ८ ॥ १६ ॥

किउ लीजै गढु बंका भाई। दोवर कोट अरु तेवर खाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पांच पचीस मोह मद मतसर आडी परबल माइआ। जन गरीब को जोरु न पहुचै कहा करउ रघुराइआ ॥ १ ॥ कामु किवारी दुखु सुखु दरवानी पापु पुंनु

दरवाजा। क्रोधु प्रधानु महा बड दुंदर तह मनु मावासी राजा ॥ २ ॥ स्वाद सनाह टोपु ममता को कुबुधि कमान चढाई। तिसना तीर रहे घट भीतर इउ गढु लीओ न जाई ॥३॥ प्रेम पलीता सुरति हवाई गोला गिआनु चलाइआ। ब्रहम अगनि सहजे परजाली एकहि चोट सिझाइआ ॥ ४ ॥ सतु संतोखु लै लरने लागा तोरे दुइ दरवाजा। साध संगति अरु गुर की क्रिपा ते पकरिओ गढ को राजा ॥ ५ ॥ भगवत भीरि सकति सिमरन की कटी काल भै फासी। दासु कमीरु चड़िओ गढ़ ऊपरि राजु लीओ अबिनासी ॥ ६ ॥ ९ ॥ १७ ॥

इस पक्के क़िले पर क्योंकर विजय पाएँ ! इस क़िले में द्वैत की दोहरी दीवार है और त्रिगुणात्मक खाई है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पाँच तत्त्व, पचीस प्रकृतियाँ, मोह, अहंकार, ईर्ष्या, ये सब प्रबल माया का आश्रय लिये हुए हैं। हे परमात्मा, मुझ निर्बल का इन पर कोई ज़ोर नहीं चलता, क्या करूँ ? ॥ १ ॥ काम-वासना की खिड़की लगी है, दुःख-सुख पहरेदार हैं और पाप-पुण्य के किवाड़ हैं। क्रोध प्रधान तथा भयानक योद्धा है और मन सबका स्वामी बना बैठा है ॥ २ ॥ स्वाद का कवच, ममता का टोप और कुबुद्धि की कमान लिये हुए, तृष्णा के तीर चलाकर पक्के क़िले को नहीं जीता जा सकता ॥ ३ ॥ इसमें तो प्रेम की सुरंग लगाकर अच्छे विचारों का बारूद तथा ज्ञान का गोला डालना होगा। उसे सहज भाव से ब्रह्म-अग्नि प्रज्वलित करके एक ही चोट से नष्ट कर देना होगा ॥ ४ ॥ सत्य और सन्तोष की शक्तियों को धारण करके लड़ते हुए पूर्वोक्त दोनों द्वारों को तोड़ना होगा और सत्संगति एवं गुरु की कृपा से क़िले के राजा को बन्दी बनाना होगा ॥ ५ ॥ सत्संगति की उत्तम जीवात्माओं और प्रभु-स्मरण की शक्ति से काल की फाँसी कटेगी। तब कबीरजी कहते हैं कि जीव गढ़ पर विजय पा लेगा और सदैव अनश्वर राज्य को प्राप्त कर लेगा ॥ ६ ॥ ९ ॥ १७ ॥

गंग गुसाइनि गहिर गंभीर। जंजीर बांधि करि खरे कबीर ॥ १ ॥ मनु न डिगै तनु काहे कउ डराइ। चरन कमल चितु रहिओ समाइ ॥ रहाउ ॥ गंगा की लहरि मेरी टुटी जंजीर। म्रिगछाला पर बैठे कबीर ॥ २ ॥ कहि कंबीर कोऊ संग न साथ। जल थल राखन है रघुनाथ ॥३॥१०॥१८॥

गंगा माता बड़ी गम्भीर है, महान है। वहाँ कबीर को ज़ंजीरों से बाँधकर (डुबाने के लिए) ले गए ॥ १ ॥ उनका मन दृढ़ है, अडोल

है, अतः शरीर क्यों डरता? वे प्रभु के चरणों में मन को रमाए रहे ॥ रहाउ ॥ गंगा की लहरों ने मेरी ज़ंजीरें तोड़ दीं और माता ने दया पूर्वक मृगछाला पर बिठाकर ऊपर तैरा दिया ॥ २ ॥ कबीरजी कहते हैं कि वहाँ मेरा संगी-साथी कोई न था, फिर भी परमात्मा जल-थल में सबका रक्षक है। (यह प्रसंग कबीरजी को गंगा में डुबाने के प्रयास से सम्बन्धित है। बादशाह सिकन्दर लोदी ने कबीर को गंगा में फिकवा दिया था।) ॥ ३ ॥ १० ॥ १८ ॥

भैरउ कबीर जीउ असटपदी घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ अगम द्रुगम गड़ि रचिओ बास। जा महि जोति करे परगास। बिजुली चमकै होइ अनंदु। जिह पउढ़े प्रभ बाल गोबिंद ॥ १ ॥ इहु जीउ राम नाम लिव लागै। जरा मरनु छूटै भ्रमु भागै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अबरन बरन सिउ मन ही प्रीति। हउमै गावनि गावहि गीत। अनहद सबद होत झुनकार। जिह पउढ़े प्रभ स्री गोपाल ॥२॥ खंडल मंडल मंडल मंडा। त्रिअ असथान तीनि त्रिअ खंडा। अगम अगोचरु रहिआ अभ अंत। पारु न पावै को धरनीधर मंत ॥ ३ ॥ कदली पुहप धूप परगास। रज पंकज महि लीओ निवास। दुआदस दल अभ अंतरि मंत। जह पउड़े स्री कमलाकंत ॥ ४ ॥ अरध उरध मुखि लागो कासु। सुंन मंडल महि करि परगासु। ऊहां सूरज नाही चंद। आदि निरंजनु करै अनंद ॥ ५ ॥ सो ब्रहमंडि पिंडि सो जानु। मानसरोवरि करि इसनानु। सोहं सो जा कउ है जाप। जा कउ लिपत न होइ पुंन अरु पाप ॥ ६ ॥ अबरन बरन घाम नही छाम। अवर न पाईऐ गुर की साम। टारी न टरै आवै न जाइ। सुंन सहज महि रहिओ समाइ ॥ ७ ॥ मन मधे जानै जे कोइ। जो बोलै सो आपै होइ। जोति मंत्रि मनि असथिरु करै। कहि कबीर सो प्रानी तरै ॥८॥१॥

परमात्मा ने पहुँच-रहित दुर्गम क़िले (दशम द्वार) में निवास किया है, वहाँ ज्योति का प्रकाश है। जिस जगह वह छबीला गोविन्द बसता है, वहाँ प्रकाश रूपी बिजली चमकती और चिर-आनन्द रहता है ॥ १ ॥ इस जीव की राम-नाम में लग्न लग जाय तो इसका बुढ़ापा और मृत्यु का

भय दूर हो, तथा सब भ्रम छूट जायँ ।। १ ।। रहाउ ।। जिनके मन में जाति-वर्णादि की ही प्रीति है, वे अहम्-भाव में लीन अपने ही गीत गाते हैं। किन्तु जहाँ परमात्मा का वास है, वहाँ अनाहत नाद झंकृत होता है ।। २ ।। वह प्रभु खण्डों, मण्डलों को बनानेवाला है, तथा तीनों भवनों, त्रिदेवता एवं त्रिगुण को खण्डित करनेवाला है। वह परमात्मा अगम, अगोचर है, हृदय के अन्तर में बसा है; कोई भी उस धरती के अवलम्ब का भेद नहीं पा सकता ।। ३ ।। कदली के फूल तथा धूप में उस प्रभु का प्रकाश है; कमल के सौरभ में उसका निवास है। द्वादश-दल-कमल (हृदय) में उसी की प्रेरणा सजीव है। (इन्हीं सब जगहों में) लक्ष्मीपति (प्रभु) विद्यमान है ।। ४ ।। नीचे, ऊपर तथा मुख में जो आकाशवत् ज्योति प्रकाशित है, वह शून्य (दशम द्वार) में उसी की उपस्थिति का प्रमाण है। जहाँ सूर्य या चन्द्र नहीं है, वहाँ भी वह आदि मायातीत ब्रह्म का प्रकाश मौजूद है ।। ५ ।। जो कुछ ब्रह्माण्ड में दृश्य हो, वह सूक्ष्म रूप में पिण्ड में भी मौजूद जानो और हरि रूपी मानसरोवर में स्नान करो। मैं वही हूँ, जिसका जाप मैं करता हूँ। उसमें लिप्त रहने पर पाप या पुण्य की कथा का कोई आधार नहीं रहता (अर्थात् उसमें लिप्त रहने से कर्म-फल नहीं बनता) ।। ६ ।। वह प्रभु वर्ण-अवर्ण, धूप या छाँव में नहीं। उसे गुरु की शरण के अतिरिक्त और कहीं नहीं पाया जा सकता। उसमें लगी वृत्ति अडोल होती है, उससे मनुष्य का आवागमन चुक जाता है और वह सहज ही शून्य (दशम द्वार) में मग्न होता है ।। ७ ।। यदि कोई उसे मन में जान ले, तो जो कुछ भी भीतर बोलता है, वही परमात्मा है। कबीरजी कहते हैं कि जो प्राणी ज्योति को गुरु-मन्त्र द्वारा स्थिर कर लेता है, वह संसार से मुक्त हो जाता है ।। ८ ।। १ ।।

कोटि सूर जा कै परगास। कोटि महादेव अरु कबिलास। दुरगा कोटि जाकै मरदनु करै। ब्रहमा कोटि बेद उचरै ।। १ ।। जउ जाचउ तउ केवल राम। आन देव सिउ नाही काम ।।१।। रहाउ ।। कोटि चंद्रमे करहि चराक। सुर तेतीसउ जेवहि पाक। नव ग्रह कोटि ठाढे दरबार। धरम कोटि जाकै प्रतिहार ।। २ ।। पवन कोटि चउबारे फिरहि। बासक कोटि सेज बिसथरहि। समुंद कोटि जा के पानीहार। रोमावलि कोटि अठारह भार ।। ३ ।। कोटि कमेर भरहि भंडार। कोटिक लखिमी करै सीगार। कोटिक पाप पुंन बहु हिरहि। इंद्र कोटि जा के सेवा करहि ।। ४ ।। छपन कोटि जा कै

प्रतिहार। नगरी नगरी खिअत अपार। लट छूटी वरतै बिकराल। कोटि कला खेलै गोपाल ॥ ५ ॥ कोटि जग जाकै दरबार। गंध्रब कोटि करहि जैकार। बिदिआ कोटि सभै गुन कहै। तऊ पारब्रहम का अंतु न लहै ॥ ६ ॥ बावन कोटि जाकै रोमावली। रावन सैना जह ते छली। सहस कोटि बहु कहत पुरान। दुरजोधन का मथिआ मानु ॥ ७ ॥ कंद्रप कोटि जाकै लवै न धरहि। अंतर अंतरि मनसा हरहि। कहि कबीर सुनि सारिगपान। देहि अभै पदु मांगउ दान ॥ ८ ॥ २ ॥ १८ ॥ २० ॥

जिसमें करोड़ों सूर्यों का प्रकाश है, जिसमें करोड़ों महादेव और कैलास पर्वत विद्यमान हैं। करोड़ों दुर्गाएँ जिसके चरण सहलाती हैं, करोड़ों ब्रह्मा उसकी स्तुति में वेदों का उच्चारण करते हैं ॥ १ ॥ (किन्तु) मैं तो केवल प्रभु के नाम की याचना करता हूँ, मुझे अन्य किसी देवता से कोई सरोकार नहीं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उसके द्वार पर करोड़ों चन्द्रमा प्रकाश करते हैं, तेंतीस कोटि देवता उसकी पाकशाला में खाते-खिलाते हैं। करोड़ों नव-ग्रह उसके दरबार में खड़े रहते हैं और करोड़ों धर्म जिसकी दरबानी करते हैं ॥ २ ॥ करोड़ों पवनें उसके चौबारे (चारों तरफ़) फहराती हैं, करोड़ों वासुकि (नागराज) उसकी सेज के लिए बिछते हैं; करोड़ों समुद्र जिसका पानी भरते हैं और अठारह भार की वनस्पति उसके शरीर के रोमों के समान है। (एक भार सवा दो मन का होता है— पुराने विचारानुसार समूची वनस्पति का यदि एक-एक पत्र लेकर तोला जाय, तो उसका वज़न अठारह भार होता है) ॥ ३ ॥ करोड़ों कुबेर उसके भण्डार भरते हैं, करोड़ों लक्ष्मियाँ उसके लिए श्रृंगार करती हैं। जिसके देखने मात्र से करोड़ों पाप दूर हो जाते हैं और जिसकी सेवा में करोड़ों देवराज इन्द्र निमग्न हैं ॥ ४ ॥ छप्पन करोड़ जिसके प्रतिहारी हैं, जो नगर-नगर (जगह-जगह) जाकर उसी का डंका बजाते हैं, करोड़ों छुटी लटों वाले भयानक रूप उसी के हैं (चुड़ैलें, भूत, बेताल आदि); वह प्रभु करोड़ों लीलाएँ करता और शक्तियाँ प्रदर्शित करता है ॥ ५ ॥ जिसके दरबार में करोड़ों संसार हैं, करोड़ों गन्धर्व जिसका जय-जयकार करते हैं, विद्या स्वयं जिसके करोड़ों गुणों का बखान करती है। ऐसे परब्रह्म का रहस्य कोई नहीं जानता, उसके अन्त को कोई नहीं पहुँचता ॥ ६ ॥ वह राम, जिसकी बावन सहस्र वानर-सेना थी, जिसने रावण-सेना को छल लिया था, और पुराणों में जिसकी सहस्रों कथाएँ विद्यमान हैं— वह परमात्मा का ही रूप था। दुर्योधन का मान-मर्दन भी उसी ने किया था ॥ ७ ॥ वह परमात्मा इतना सुन्दर है कि

करोड़ों कामदेव भी उसकी तुलना में कुछ नहीं, वह भीतर ही भीतर सबका मन मोह लेता है। कबीरजी कहते हैं कि हे परमात्मा, मेरी विनती सुनो, मैं तुमसे एक ही दान माँगता हूँ कि मुझे निर्भय-पद (मोक्ष) प्रदान करना ॥ ८ ॥ २ ॥ १८ ॥ २० ॥

भैरउ बाणी नामदेउ जीउ की घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ रे जिहबा करउ सत खंड। जामि न उचरसि स्री गोबिंद ॥ १ ॥ रंगीले जिहबा हरि कै नाइ। सुरंग रंगीले हरि हरि धिआइ ॥१॥रहाउ॥ मिथिआ जिहबा अवरें काम। निरबाण पदु इकु हरि को नामु ॥ २ ॥ असंख कोटि अनपूजा करी। एक न पूजसि नामै हरी ॥ ३ ॥ प्रणवै नामदेउ इहु करणा। अनंत रूप तेरे नाराइणा ॥४॥१॥

अरी जीभ, यदि तुम परमात्मा का नाम नहीं उच्चारण करोगी, तो तुम्हारे सौ टुकड़े कर दूँगा ॥ १ ॥ जिह्वा को हरि-नाम में रँग लो, हरि-हरि-नाम की आराधना द्वारा सुन्दर रंगों में इसे रँग लो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अरी जिह्वा, अन्य सब बातें मिथ्या हैं, केवल हरि-नाम से निर्वाण-पद की प्राप्ति होती है ॥ २ ॥ असंख्य प्रकार की अन्य पूजाएँ करने पर भी हरिनामोपासना की तुलना नहीं होती ॥ ३ ॥ नामदेवजी विनती करते हैं कि (हे जीभ,) परमात्मा के अनन्त रूपों का नाम उच्चारण करती रहो ॥ ४ ॥ १ ॥

परधन परदारा परहरी। ता कै निकटि बसै नरहरी ॥ १ ॥ जो न भजंते नाराइणा। तिन का मै न करउ दरसना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिन कै भीतरि है अंतरा। जैसे पसु तैसे ओइ नरा ॥ २ ॥ प्रणवति नामदेउ नाकहि बिना। ना सोहै बतीस लखना ॥ ३ ॥ २ ॥

जो जीव पराई स्त्री तथा पराए धन का विचार त्यागकर जीता है, स्वयं परमात्मा उसके निकट बसता है ॥ १ ॥ जो नारायण का भजन नहीं करते, मैं उनका दर्शन नहीं करना चाहता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिनके मन में द्वैत-भाव विद्यमान है, वे नर तो पशु के समान ही हैं ॥ २ ॥ नामदेवजी कहते हैं कि ऐसा व्यक्ति (प्रभु-भजन न करनेवाला) सुन्दरता के बत्तीस लक्षणों वाला होकर भी नाक-विहीन दीखता है ॥ ३ ॥ २ ॥

दूधु कटोरै गडवै पानी । कपल गाइ नामै दुहि आनी ॥१॥ दूधु पीउ गोबिंदे राइ । दूधु पीउ मेरो मनु पतीआइ । नाही त घर को बापु रिसाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सुोइन कटोरी अंम्रित भरी । लै नामै हरि आगै धरी ॥ २ ॥ एकु भगतु मेरे हिरदे बसै । नामे देखि नराइनु हसै ॥ ३ ॥ दूधु पीआइ भगतु घरि गइआ । नामे हरि का दरसनु भइआ ॥ ४ ॥ ३ ॥

[सन्त नामदेव के पिता ने एक बार उन्हें देवता पर दूध चढ़ाने को बोला, तो वे अपनी सच्ची भक्ति के कारण सचमुच परमात्मा को दूध पिलाकर आ गए । इस पद में इसी सन्दर्भ को इंगित किया है । धन्ना भक्त के जीवन में भी ऐसा प्रसंग कहा जाता है ।] लोटे में पानी लेकर नामदेव कपिला गाय दुहकर कटोरे में दूध डालकर ले आए ॥ १ ॥ हे मेरे गोविन्द, दूध पियो, ऐसा पुकारने लगे । तुम दूध पी लो, तो मेरे मन को सन्तोष हो । (तुम दूध नहीं पियोगे तो) घर में पिता नाराज़ हो जायँगे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ स्वर्ण-पात्र में अमृत-समान दूध भरकर नामदेव ने हरि-मूर्ति के सामने रख दी ॥ २ ॥ हरि ने नामदेव को देखकर और मुस्कराकर कहा कि एक भक्त ही तो मेरे हृदय में बसता है ॥ ३ ॥ नामदेव इस प्रकार हरि को दूध पिलाकर घर लौटे, उन्हें हरि का दर्शन हो गया ॥ ४ ॥ ३ ॥

मै बउरी मेरा रामु भतारु । रचि रचि ता कउ करउ सिंगारु ॥ १ ॥ भले निंदउ भले निंदउ भले निंदउ लोगु । तनु मनु राम पिआरे जोगु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बादु बिबादु काहू सिउ न कीजै । रसना राम रसाइनु पीजै ॥ २ ॥ अब जीअ जानि ऐसी बनि आई । मिलउ गुपाल नीसानु बजाई ॥ ३ ॥ उसतति निंदा करै नरु कोई । नामे स्रीरंगु भेटल सोई ॥४॥४॥

मैं अपने प्रभु-पति की दीवानी हूँ । उसके लिए अनेक प्रकार का शृंगार करती हूँ ॥ १ ॥ लोग भले ही मेरी बार-बार निन्दा करें, किन्तु मेरा तो तन-मन सब अपने प्यारे प्रियतम के लिए ही है (उसी पर समर्पित है) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरी जिह्वा किसी से वाद-विवाद करने की अपेक्षा दत्त-चित्त प्रभु-नामामृत का पान करती है ॥ २ ॥ ऐ मन, अब तो ऐसी स्थिति आ गई है कि मैं (जीवात्मा) प्रियतम को खुले आम मिलने जाऊँगी ॥ ३ ॥ कोई स्तुति करे या निन्दा करे, मुझे तो (नामदेव को) परमात्मा-पति मिल गया है ॥ ४ ॥ ४ ॥

कबहू खीरि खाड घीउ न भावै । कबहू घर घर टूक

मगावै । कबहू कूरनु चने बिनावै ।। १ ।। जिउ रामु राखै तिउ रहीऐ रे भाई । हरि की महिमा किछु कथनु न जाई ।।१।। रहाउ ।। कबहू तुरे तुरंग नचावै । कबहू पाइ पनहीओ न पावै ।। २ ।। कबहू खाटु सुपेदी सुवावै । कबहू भूमि पैआरु न पावै ।। ३ ।। भनति नामदेउ इकु नामु निसतारै । जिह गुरु मिलै तिह पारि उतारै ।। ४ ।। ५ ।।

(प्रभु की लीला अनन्त है) कभी वह किसी को इतना घमण्डी बना देता है कि उसे खीर, शक्कर और घी भी पसन्द नहीं आते, और कभी वह किसी को इतना दीन-हीन कर देता है कि वह घर-घर टुकड़ा माँगता फिरता या कूड़े में से चने वीनता है ।। १ ।। ऐ भाई, जिस दशा में परमात्मा रखे, उसी में रहना होता है, हरि की महिमा कही नहीं जा सकती ।। १ ।। रहाउ ।। कभी वह इतना धनवान बनाता है कि घर-द्वार पर घोड़े नाचते हैं और कभी इतना विपन्न करता है कि पाँव में जूता तक नहीं होता ।। २ ।। कभी वह पलंग पर सफ़ेद बिस्तर पर सुलाता है और कभी धरती पर पुआल भी नहीं मिलती ।। ३ ।। नामदेवजी कहते हैं कि इन सब स्थितियों में केवल हरि-नाम ही निस्तार देता है, जिसे गुरु मिल जाता है, वह संसार-सागर से पार उतर जाता है ।। ४ ।। ५ ।।

हसत खेलत तेरे देहुरे आइआ । भगति करत नामा पकड़ि उठाइआ ।। १ ।। हीनड़ी जाति मेरी जादिम राइआ । छीपे के जनमि काहे कउ आइआ ।। १ ।। रहाउ ।। लै कमली चलिओ पलटाइ । देहुरै पाछै बैठा जाइ ।। २ ।। जिउ जिउ नामा हरि गुण उचरै । भगत जनां कउ देहुरा फिरै ।।३।।६।।

हँसते-खेलते अर्थात् ख़ुशी से तुम्हारे (प्रभु के) पूजा-स्थान पर आया था । वहाँ बैठकर जब भक्ति करने लगा तो मुझे (नामदेव को) पुजारियों ने बाँह पकड़कर उठा दिया ।। १ ।। हे प्रभु, मेरी निम्न जाति के कारण (मुझे वहाँ से उठाया गया), क्यों मैं छीपी जाति में पैदा हुआ ! ।। १ ।। रहाउ ।। अपनी चादर उठाकर मैं पीछे चल पड़ा और पूजा-स्थान (देवल या मन्दिर) के पीछे की ओर जाकर बैठ गया ।।२।। वहाँ बैठे-बैठे ज्यों-ज्यों मैंने (नामदेव ने) हरि-नाम का उच्चारण किया, त्यों-त्यों (उच्च जाति वाले) भक्तजनों का देवल ही फिर गया (मन्दिर का मुँह फिर गया, नामदेव मन्दिर के पीछे बैठे थे, मन्दिर-द्वार चलित होकर उनके सामने आ गया) ।। ३ ।। ६ ।।

भैरउ नामदेउ जीउ घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। जैसी भूखे प्रीति अनाज। त्रिखावंत जल सेती काज। जैसी मूड़ कुटंब पराइण। ऐसी नामे प्रीति नराइण ।। १ ।। नामे प्रीति नाराइण लागी। सहज सुभाइ भइओ बैरागी ।। १ ।। रहाउ ।। जैसी पर पुरखा रत नारी। लोभी नरु धन का हितकारी। कामी पुरख कामनी पिआरी। ऐसी नामे प्रीति मुरारी ।। २ ।। साई प्रीति जि आपे लाए। गुरपरसादी दुबिधा जाए। कबहु न तूटसि रहिआ समाइ। नामे चितु लाइआ सचि नाइ ।। ३ ।। जैसी प्रीति बारिक अरु माता। ऐसा हरि सेती मनु राता। प्रणवै नामदेउ लागी प्रीति। गोबिदु बसै हमारै चीति ।।४।।१।।

जिस प्रकार भूखे व्यक्ति की अन्न से प्रीति होती है, प्यासे जन को जल की इच्छा होती है, जैसे मूढ़ जीव कुटुम्ब के प्यार में लीन होता है, वैसे ही नामदेव को परमात्मा से प्यार है ।। १ ।। नामदेव को नारायण से प्रीति हुई तो वह सहज स्वभाव से ही वैरागी बन गया ।। १ ।। रहाउ ।। जैसे कुलटा नारी पर-पुरुष में रत होती है, लोभी व्यक्ति को धन से प्यार होता है, कामीजन को कामिनी की आसक्ति होती है, ऐसी ही प्रीति नामदेव की प्रभु में है ।। २ ।। वही प्रीति उत्तम है, जो परमात्मा की प्रेरणा से उपजती है, गुरु की कृपा से उसमें सब दुविधा नष्ट हो जाती है। ऐसी प्रीति कभी नहीं टूटती, प्रेमी प्रेमिका में ही मग्न रहता है। नामदेव ने भी इसी दिशा में सच्चे नाम के साथ पक्की प्रीति लगाई है ।। ३ ।। जैसा प्रेम बालक और माता में होता है, ऐसा ही मेरा मन भी हरि में रत है। नामदेवजी कहते हैं कि उन्हें ऐसी प्रीति लगी है कि प्रभु हर समय उनके चित्त में बसते हैं ।। ४ ।। १ ।।

घर की नारि तिआगै अंधा। परनारी सिउ घालै धंधा। जैसे सिंबलु देखि सूआ बिगसाना। अंत की बार मूआ लपटाना ।। १ ।। पापी का घरु अगने माहि। जलत रहै मिटवै कब नाहि ।। १ ।। रहाउ ।। हरि की भगति न देखै जाइ। मारगु छोडि अमारगि पाइ। मूलहु भूला आवै जाइ। अंम्रितु डारि लादि बिखु खाइ ।। २ ।। जिउ बेस्वा के परै अखारा। कापरु पहिरि करहि सींगारा। पूरे ताल निहाले

सास । वा के गले जम का है फास ।। ३ ।। जाके मसतकि लिखिओ करमा । सो भजि परिहै गुर की सरना । कहत नामदेउ इहु बीचारु । इन बिधि संतहु उतरहु पारि ।।४।।२।।

अज्ञान में अन्धे पुरुष अपनी पत्नी को छोड़कर पर-स्त्री में आसक्त होते हैं । (किन्तु उनकी दशा ऐसी होती है) जैसे सेमल को देखकर तोता प्रसन्न होता है, किन्तु अन्ततः उसी के चिपकनेवाले रस में पीड़ित होकर मर जाता है ।। १ ।। पापी का घर तो सदा अग्नि में होता है, वह सदैव जलता है, कभी उसकी जलन नहीं मिटती ।। १ ।। रहाउ ।। पापी जन हरि-भक्ति की ओर प्रवृत्त नहीं होता, सदैव सुमार्ग त्याग कुमार्ग पर लगा रहता है । वह मूलतः भटका हुआ जीव है, इसलिए नित्य आवागमन का शिकार होता है । वह अमृत (हरिनाम) को छोड़कर विष (विषय-विकार) का सेवन करता है ।। २ ।। ज्यों वेश्या के घर मुजरा देखनेवालों का संगठन होता है, वह कपड़े पहनती और श्रृंगार करती है । वह नृत्य की फिरकी लेती है तो कामीजन उसके वक्ष का उतार-चढ़ाव ताकता है, ऐसी कामी के गले काल की फाँसी पड़ती है ।। ३ ।। जिसके माथे उत्तम भाग्य-रेखाएँ मौजूद हैं, वे भाग-भागकर गुरु की शरण में आते हैं । नामदेवजी विचारपूर्वक कहते हैं कि इसी प्रकार साधुजन संसार-सागर से मुक्ति पाते हैं ।। ४ ।। २ ।।

संडा मरका जाइ पुकारे । पड़ै नही हम ही पचि हारे । राम कहै कर ताल बजावै चटीआ सभै बिगारे ।। १ ।। राम नामा जपिबो करै । हिरदै हरि जी को सिमरनु धरै ।। १ ।। रहाउ ।। बसुधा बसि कीनी सभ राजे बिनती कहै पटरानी । पूतु प्रहिलादु कहिआ नहा मानै तिनि तउ अउरै ठानी ।। २ ।। दुसट सभा मिलि मंतर उपाइआ करसह अउध घनेरी । गिरि तर जल जुआला भै राखिओ राजा रामि माइआ फेरी ।। ३ ।। काढि खड़गु कालु भै कोपिओ मोहि बताउ जु तुहि राखै । पीत पीतांबर त्रिभवण धणी थंभ माहि हरि भाखै ।। ४ ।। हरनाखसु जिनि नखह बिदारिओ सुरि नर कीए सनाथा । कहि नामदेउ हम नरहरि धिआवहि रामु अभै पद दाता ।। ५ ।। ३ ।।

सण्डा तथा मरका (प्रह्लाद के अध्यापक) ने जाकर हिरण्यकशिपु के पास पुकार की कि प्रह्लाद नहीं पढ़ता, वे प्रयत्न कर-करके हार गए हैं । वह हाथ से ताली बजाता हुआ राम-राम कहता है, उसने सभी सहपाठियों को भी बिगाड़ दिया है ।। १ ।। वह राम-नाम जपा करता

है, हृदय में केवल हरि का सिमरन ही धारण करता है ।। १ ।। रहाउ ।। माँ (पटरानी) कहती है कि पिता हिरण्यकशिपु ने तो सारी पृथ्वी वश में कर रखी है, किन्तु एक पुत्र ही उसकी आज्ञा में नहीं, उसने मन में कुछ और ही ठान रखी है ।। २ ।। दुष्टों की सभा ने मन्त्रणा की, प्रह्लाद की आयु बढ़ा दी जाय (अर्थात् उसे मार दिया जाय)। पहाड़ से गिराने, पानी में डुबाने तथा अग्नि में जलाने की स्थितियों से परमात्मा ने उसकी रक्षा की। प्रभु ने उन तत्त्वों का स्वभाव ही उलट दिया (अर्थात् आग जला नहीं सकी, पानी डुबा नहीं सका आदि) ।। ३ ।। तब राजा स्वयं खड्ग निकालकर उस पर कुपित हुआ कि बता तेरी रक्षा कौन करता है ? तीनों भुवनों का स्वामी वह पीताम्बर इस स्तम्भ में भी है (ऐसा प्रह्लाद ने कहा) ।। ४ ।। उसने हिरण्यकशिपु को अपने नाखूनों से चीर दिया और अनाथ को सनाथ बनाया। नामदेवजी कहते हैं कि वे तो अभय पद देनेवाले प्रभु नरहरि की आराधना करते हैं ।। ५ ।। ३ ।।

सुलतानु पूछै सुनु बे नामा। देखउ राम तुम्हारे कामा ।। १ ।। नामा सुलताने बाधिला। देखउ तेरा हरि बीठुला ।। १ ।। रहाउ ।। बिसमिलि गऊ देहु जीवाइ। नातरु गरदनि मारउ ठांइ ।। २ ।। बादिसाह ऐसी किउ होइ। बिसमिलि कीआ न जीवै कोइ ।। ३ ।। मेरा कीआ कछू न होइ। करिहै रामु होइ है सोइ ।। ४ ।। बादिसाहु चढ़िओ अहंकारि। गज हसती दीनो चमकारि ।। ५ ।। रुदनु करै नामे की माइ। छोडि रामु की न भजहि खुदाइ ।। ६ ।। न हउ तेरा पूंगड़ा न तू मेरी माइ। पिंडु पड़ै तउ हरि गुन गाइ ।। ७ ।। करै गजिंदु सुंड की चोट। नामा उबरै हरि की ओट ।। ८ ।। काजी मुलां करहि सलामु। इनि हिंदू मेरा मलिआ मानु ।। ९ ।। बादिसाह बेनती सुनेहु। नामे सर भरि सोना लेहु ।। १० ।। मालु लेउ तउ दोजकि परउ। दीनु छोडि दुनीआ कउ भरउ ।। ११ ।। पावहु बेड़ी हाथहु ताल। नामा गावै गुन गोपाल ।। १२ ।। गंग जमुन जउ उलटी बहै। तउ नामा हरि करता रहै ।। १३ ।। सात घरी जब बीती सुणी। अजहु न आइओ त्रिभवन धणी ।। १४ ।। पाखंतण बाज बजाइला। गरुड़ चढ़े गोबिंद आइला ।। १५ ।। अपने भगत परि की प्रतिपाल। गरुड़ चढ़े आए गोपाल ।। १६ ।। कहहि त धरणि इकोडी करउ। कहहि त ले करि ऊपरि

धरउ ॥ १७ ॥ कहहि त मुई गऊ देउ जीआइ । सभु कोई देखै पतीआइ ॥ १८ ॥ नामा प्रणवै सेलमसेल । गऊ दुहाई बछरा मेलि ॥ १९ ॥ दूधहि दुहि जब मटुकी भरी । ले बादिसाह के आगे धरी ॥ २० ॥ बादिसाहु महल महि जाइ । अउघट की घट लागी आइ ॥ २१ ॥ काजी मुलां बिनती फुरमाइ । बखसी हिंदू मै तेरी गाइ ॥ २२ ॥ नामा कहै सुनहु बादिसाह । इहु किछु पतीआ मुझै दिखाइ ॥ २३ ॥ इस पतीआ का इहै परवानु । साचि सीलि चालहु सुलितान ॥२४॥ नामदेउ सभ रहिआ समाइ । मिलि हिंदू सभ नामे पहि जाहि ॥ २५ ॥ जउ अब की बार न जीवै गाइ । त नामदेव का पतीआ जाइ ॥ २६ ॥ नामे की कीरति रही संसारि । भगत जनां ले उधरिआ पारि ॥ २७ ॥ सगल कलेस निंदक भइआ खेदु । नामे नाराइन नाही भेदु ॥ २८ ॥ १ ॥ घरु २ ॥

सुलतान (मुहम्मद तुग़लक) नामदेव से कहता है कि देखें तुम्हारा राम क्या कर सकता है ॥ १ ॥ सुलतान ने नामदेव को बँधवा लिया, ताकि वह अपने भगवान द्वारा चमत्कार दिखला सके ॥ १ ॥ रहाउ ॥ (सुलतान ने कहा—) मरी हुई गाय को जिला दो, नहीं तो यहीं तुम्हारी गर्दन कटवा दूंगा ॥ २ ॥ (नामदेव ने कहा—) बादशाह, ऐसा भी कभी होता है, एक बार जो मर जाता है, वह दुबारा जीवित नहीं होता ॥ ३ ॥ मेरे किए कुछ नहीं होता, जो प्रभु करता है वही होता है ॥ ४ ॥ बादशाह ने अहंकार में आकर मस्त हाथी को नामदेव पर छोड़ दिया ॥५॥ नामदेव की माता रुदन करने लगी कि क्यों वह राम को छोड़कर ख़ुदा का भजन करना स्वीकार नहीं कर लेता ॥ ६ ॥ (नामदेव कुपित होकर माँ से कहते हैं—) मैं तुम्हारा पुत्र नहीं, तुम मेरी माता नहीं। मेरा शरीर नष्ट भी कर दिया जायगा तो भी मैं हरि का गुण गाऊँगा ॥ ७ ॥ हाथी जब-जब सूँड़ की चोट करता है, नामदेव प्रभु के सहारे बच जाता है ॥८॥ (बादशाह कहता है कि) क़ाज़ी, मुल्ला आदि धार्मिक नेता भी मुझे सलाम करते हैं, किन्तु इस हिन्दू ने मेरा अभिमान चूर कर दिया है ॥ ९ ॥ लोगों ने बादशाह से विनती की कि नामदेव के वज़न के बराबर सोने का दण्ड दे दो, किन्तु उसे मुक्त कर दो ॥१०॥ बादशाह का उत्तर है कि यदि वह धन लेता है तो नरक में जाता है, धर्म की उपेक्षा करके धन-दौलत की लालसा करता है ॥ ११ ॥ नामदेव के पाँव में बेड़ी थी, अतः वह हाथ से ताली बजा-बजाकर प्रभु का गुण गाने लगा ॥ १२ ॥ यदि गंगा और यमुना भी उलटी बहने लगे, तो भी नामदेव परमात्मा का नाम जपता

रहेगा ॥ १३ ॥ सात घड़ी की मुहलत का समय जब बीत गया, तो भी त्रिभुवन का स्वामी उसकी मदद को नहीं आया ॥ १४ ॥ तभी पंखों को खड़खड़ाते हुए गरुड़ की सवारी पर विष्णु भगवान आ पहुँचे ॥ १५ ॥ अपने भक्त के प्रण का पालन करने के लिए स्वयं हरि गरुड़ पर चढ़कर आए ॥ १६ ॥ तुम कहो तो तुम्हारी ख़ातिर धरती उलट दूँ, कहो तो हवा में टाँग दूँ ॥ १७ ॥ कहो तो मृत गाय जिला दूँ, जिससे सब किसी को विश्वास हो जाय ॥ १८ ॥ नामदेव ने रस्सी डाल कर तथा बछड़ा छोड़कर गाय दुहन करवा दी ॥ १९ ॥ दूध दुहन करके मटकी भरी और बादशाह के सामने रख दी ॥ २० ॥ बादशाह महल में गया, तब उसकी कठिन घड़ी आ गई (स्वयं बीमार पड़ गया) ॥ २१ ॥ बादशाह ने क़ाज़ी-मुल्लाओं द्वारा प्रार्थना भिजवाई कि ऐ हिन्दू (श्रेष्ठ), मुझे क्षमा कर दो, मैं तुम्हारी गाय के समान हूँ ॥ २२ ॥ नामदेव ने बादशाह से कहा कि ऐ बादशाह, मुझे तसल्ली दो ॥ २३ ॥ इस तसल्ली का यही प्रमाण होगा कि भविष्य में तुम सदैव सत्य और शील के संग चलोगे ॥ २४ ॥ नामदेव की चर्चा सब स्थानों पर होने लगी। तब सब हिन्दू इकट्ठे होकर उसके पास आए ॥ २५ ॥ (कहने लगे कि) यदि इस बार गाय जीवित न होती, तो हमें भय था कि तुम्हारा विश्वास जाता रहेगा ॥ २६ ॥ नामदेव की कीर्ति संसार में अविचल हो गई, भक्तजनों का उद्धार (परमात्मा) इसी प्रकार करता है ॥ २७ ॥ निंदकों को खेद हुआ कि वे नामदेव को क्यों क्लेश पहुँचाते रहे, वास्तव में नामदेव और परमात्मा में तो कोई भेद ही नहीं ॥ २८ ॥ १ ॥ घरु २ ॥

जउ गुरदेउ त मिलै मुरारि। जउ गुरदेउ त उतरै पारि। जउ गुरदेउ त बैकुंठ तरै। जउ गुरदेउ त जीवत मरै ॥ १ ॥ सति सति सति सति सति गुरदेव। झूठु झूठु झूठु झूठु आन सभ सेव ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जउ गुरदेउ त नामु द्रिड़ावै। जउ गुरदेउ न दहदिस धावै। जउ गुरदेउ पंच ते दूरि। जउ गुरदेउ न मरिबो झूरि ॥ २ ॥ जउ गुरदेउ त अंम्रित बानी। जउ गुरदेउ त अकथ कहानी। जउ गुरदेउ त अंम्रित देह। जउ गुरदेउ नामु जपि लेहि ॥ ३ ॥ जउ गुरदेउ भवन त्रै सूझै। जउ गुरदेउ ऊच पद बूझै। जउ गुरदेउ त सीसु अकासि। जउ गुरदेउ सदा साबासि ॥ ४ ॥ जउ गुरदेउ सदा बैरागी। जउ गुरदेउ पर निंदा तिआगी। जउ गुरदेउ बुरा भला एक। जउ गुरदेउ लिलाटहि लेख ॥५॥ जउ गुरदेउ कंधु नही हिरै। जउ गुरदेउ देहुरा फिरै। जउ

गुरदेउ त छापरि छाई । जउ गुरदेउ सिहज निकसाई ।। ६ ।। जउ गुरदेउ त अठसठि नाइआ । जउ गुरदेउ तनि चक्र लगाइआ । जउ गुरदेउ त दुआदस सेवा । जउ गुरदेउ सभै बिखु मेवा ।। ७ ।। जउ गुरदेउ त संसा टूटै । जउ गुरदेउ त जम ते छूटै । जउ गुरदेउ त भउजल तरै । जउ गुरदेउ त जनमि न मरै ।। ८ ।। जउ गुरदेउ अठदस बिउहार । जउ गुरदेउ अठारह भार । बिनु गुरदेउ अवर नही जाई । नामदेउ गुर की सरणाई ।। ९ ।। १ ।। २ ।।

यदि गुरु-कृपा हो जाय, तो परमात्मा मिल जाता है; यदि गुरु-कृपा हो तो मुक्ति हो जाती है। यदि गुरु कृपालु हो तो जीव वैकुण्ठ में जाता है और गुरुदेव की कृपा से ही जीव जीवन्मुक्ति को प्राप्त करता है ।। १ ।। गुरुदेव सदा-सदा सत्यस्वरूप है, अन्य सब देवताओं की सेवा मिथ्या है ।।१।। रहाउ ।। यदि गुरु मिले, तो हरि-नाम का सिमरन करवाता है; गुरु मिल जाय तो मन दसों दिशाओं में नहीं भटकता है। गुरु की कृपा हो तो जीव पाँच विकारों से बचा रहता है; गुरुदेव मिल जाय तो दुःख सहते हुए मरना नहीं पड़ता ।। २ ।। गुरु-कृपा हो तो वाणी अमृत-सी मीठी हो जाती है, गुरु मिले तो अकथनीय रहस्यों का ज्ञान होता है। गुरु मिले तो शरीर भी अमृत-सम होता है, गुरु-कृपा हो जाय तो जीव परमात्मा का नाम जप लेता है ।। ३ ।। गुरु-मिलन हो जाय तो जीव को तीनों लोकों का ज्ञान होता है, गुरु-कृपा हो तो ऊँचा पद (मोक्ष) प्राप्त होता है। गुरु-मिलन हो तो जीव ऊँचे स्तर पर रहता है, गुरु-कृपा हो तो शिष्य की सदैव शोभा होती है ।।४।। यदि गुरुदेव से भेंट हो जाय तो जीव में वैराग्य उपजता है और वह गुरु-कृपा से पर-निन्दा का त्याग कर देता है। गुरु-कृपा हो तो जीव बुरे-भले को एक समान देखता है, गुरु-कृपा हो तो भाग्य उत्तम होता है ।।५।। गुरु-मिलन हो तो शरीर नहीं नष्ट होता, गुरु-कृपा हो तो देवल भी फिर जाता है। गुरु की दया हो तो परमात्मा स्वयं झोंपड़ी बनाने आता है (नामदेव के जीवन-प्रसंग हैं— देवल घूमना तथा परमात्मा द्वारा झोंपड़ी बनाई जाना), गुरु-कृपा हो तो जल में डूबी सेज भी निकल आती है (बादशाह ने नामदेव को खटोली दी थी, उसने उसे नदी में फेंक दिया था। बाद में बादशाह के कहने पर नदी से सूखी खटोली निकाल दी) ।। ६ ।। गुरु से भेंट हो जाय तो अठसठ तीर्थों के स्नान का पुण्य मिलता है, गुरु-कृपा हो तो शरीर पर स्वतः चक्र लग जाते हैं (वैष्णव जन शरीर पर निर्मलता के प्रतीक-रूप में चन्दन के चिह्न लगाते हैं), गुरु-मिलन में बारह प्रकार की शारीरिक सेवाएँ (३ पद-सेवाएँ, ३ कर-सेवाएँ, १ वाणी-सेवा, कर्ण-सेवा, नेत्र-सेवा, २ शिर-सेवाएँ, नासिका-सेवा)

स्वतः सम्पन्न हो जाती हैं, यदि गुरु-कृपा है तो सब प्रकार का विष भी अमृत-समान हो जाता है ॥ ७ ॥ गुरु की कृपा हो तो सब संशय चुक जाते हैं, गुरु-मिलन हो तो यमदूतों के बन्धन टूट जाते हैं, गुरु मिले तो जीव संसार-सागर से पार होता है, गुरु-कृपा हो तो जन्म-मरण से मुक्ति मिल जाती है ॥ ८ ॥ गुरु की कृपा में अठारह पुराणों का आचरण-व्यवहार निहित है, यदि गुरु-कृपा हो तो अठारह भार की वनस्पति की पूजा-भेंट सम्पन्न समझो, गुरुदेव के बिना अन्य कोई जगह नहीं, अतः नामदेव केवल गुरु की शरण में हैं ॥ ९ ॥ १ ॥ २ ॥

भैरउ बाणी रविदास जीउ की घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ बिनु देखे उपजै नही आसा । जो दीसै सो होइ बिनासा । बरन सहित जो जापै नामु । सो जोगी केवल निहकामु ॥ १ ॥ परचै रामु रवै जउ कोई । पारसु परसै दुबिधा न होई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सो मुनि मन की दुबिधा खाइ । बिनु दुआरे त्रै लोक समाइ । मन का सुभाउ सभु कोई करै । करता होइ सु अनभै रहै ॥ २ ॥ फल कारन फूली बनराइ । फलु लागा तब फूलु बिलाइ । गिआनै कारन करम अभिआसु । गिआनु भइआ तह करमह नासु ॥ ३ ॥ घ्रित कारन दधि मथै सइआन । जीवत मुकत सदा निरबान । कहि रविदास परम बैराग । रिदै रामु की न जपसि अभाग ॥ ४ ॥ १ ॥

प्रभु को देखे बिना मिलने की आशा नहीं बनती, और जो कुछ दृश्य है, वह नश्वर होता है (अतः प्रभु को कैसे मिलें ? वह अनश्वर भी है और अदृश्य भी !) जो जीव उसकी स्तुति-सहित उसका नाम जपता है, वही निष्काम भावी विरक्त जीव है ॥ १ ॥ जो गुरु द्वारा परिचय प्राप्त करके राम का स्मरण करता है, वह पारस रूपी गुरु को मिलकर दुविधा को मिटा लेता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वही जीव मुनि है, जो मन की दुविधा का अन्त करके अपनी आत्मा में त्रिलोकी को समा लेता है अर्थात् मन से आशा-तृष्णा मिटा देता है । मन के स्वभाव (प्रकृति) के अनुसार सब कोई कर्ता होता है (सभी रचना करते हैं), किन्तु जो वास्तविक कर्ता है, वह अभय स्थिति (ज्ञान-स्थिति) में रहता ॥ २ ॥ फल उपजाने के लिए ही समूची वनस्पति में फूल लगते हैं, किन्तु जब

फल उगते हैं तो फूल झड़ जाते हैं। ठीक इसी प्रकार ज्ञानोपलब्धि के लिए कर्म-काण्ड का अभ्यास किया जाता है, जब ज्ञान होता है तो कर्म-काण्ड का नाश हो जाता है, उसकी अपेक्षा नहीं रहती ॥ ३ ॥ समझदार लोग घृत-प्राप्ति के लिए दही मथते हैं, जीवन्मुक्त (पूर्ण ज्ञानावस्था को पानेवाला) अन्ततः निर्वाण को प्राप्त करते हैं। रविदासजी परम वैराग्य की बात कहते हैं कि हे अभागे, हृदय में राम का नाम क्यों नहीं जपते (यही परम वैराग्य है) ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ नामदेव ॥ आउ कलंदर केसवा। करि अबदाली भेसवा ॥ रहाउ ॥ जिनि आकास कुलह सिरि कीनी कउसै सपत पयाला। चमरपोस का मंदरु तेरा इह बिधि बने गुपाला ॥ १ ॥ छपन कोटि का पेहनु तेरा सोलह सहस इजारा। भार अठारह मुदगरु तेरा सहनक सभ संसारा ॥ २ ॥ देही महजिदि मनु मउलाना सहज निवाज गुजारै। बीबी कउला सउ काइनु तेरा निरंकार आकारै ॥ ३ ॥ भगति करत मेरे ताल छिनाए किह पहि करउ पुकारा। नामे का सुआमी अंतरजामी फिरे सगल बेदेसवा ॥ ४ ॥ १ ॥

(यहाँ परमात्मा की महिमा का वर्णन फ़क़ीर-रूप में किया गया है।) ऐ परमात्मा, तुम्हारा सुन्दर फ़क़ीरी वेष बड़ा मनमोहक है ॥ रहाउ ॥ तुमने सिर पर आकाश की टोपी लगाई है, सात पाताल तुम्हारी जूतियाँ हैं। चमड़ा देनेवाले पशु तुम्हारा घर हैं, इसी प्रकार हे सृष्टि-पालक, तुम जँचते हो ॥ १ ॥ छप्पन करोड़ बादलों का तुम्हारा चोला है और सोलह हज़ार गोपिकाएँ तुम्हारा इज़ार (कमरबन्द) हैं। अठारह भार की वनस्पति तुम्हारा चँवर है और समूचा संसार तुम्हारी थाली है ॥ २ ॥ शरीर ही मस्जिद है, मन मुल्ला है और सहज-भाव ही नमाज है। माया (कमला = लक्ष्मी) से तुम्हारा निकाह हुआ है, जो तुम्हारे निर्गुण रूप को साकार बना देती है ॥ ३ ॥ तुमने भक्ति करते हुए मेरे खड़ताल छीन लिये हैं, अब मैं किस पर पुकार करूँ। नामदेव का स्वामी परमात्मा अन्तर्यामी और लाभ-काम है ॥ ४ ॥ १ ॥

राग़ु बसंतु महला १ घरु १ चउपदे दुतुके

१ ओं सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥

माहा माह मुमारखी चड़िआ सदा बसंतु । परफड़ु चित समालि सोइ सदा सदा गोबिंदु ॥ १ ॥ भोलिआ हउमै सुरति विसारि । हउमै मारि बीचारि मन गुण विचि गुणु लै सारि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करम पेडु साखा हरी धरमु फुलु फलु गिआनु । पत परापति छाव घणी चूका मन अभिमानु ॥ २ ॥ अखी कुदरति कंनी बाणी मुखि आखणु सचु नामु । पति का धनु पूरा होआ लागा सहजि धिआनु ॥ ३ ॥ माहा रुती आवणा वेखहु करम कमाइ । नानक हरे न सूकही जि गुरमुखि रहे समाइ ॥ ४ ॥ १ ॥

(हे मन ! यदि तुम अहंकार त्याग दो तो) तेरे भीतर अत्यन्त उत्साह बना रहे और सदैव प्रफुल्लित रहनेवाला प्रभु प्रकट हो जाए । (इसलिए) हे मेरे मन ! सृष्टि का निर्वाह करनेवाले प्रभु को स्मरण रखो और सुखी रहो ॥ १ ॥ हे भोले मन ! अहंकार की वृत्ति का विस्मरण करो और अहंकार को समाप्त कर दो, (क्योंकि अहंकार-रहित होना सर्वोत्तम गुण है इसलिए) इस सर्वोत्तम गुण को अपनाओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अहंकार त्याग के कारण (तेरे भीतर) एक ऐसा वृक्ष उग जायगा जिसे हरि-नाम की शाखाएँ, धार्मिक जीवन (सदाचरण) का पुष्प और प्रभु-ज्ञान का फल लगेगा । प्रभु-प्राप्ति उस वृक्ष के पत्ते और अहंकार-रहित स्थिति (उस वृक्ष की) घनी छाँव होगी ॥ २ ॥ (प्रभु-स्मरण करनेवाले प्राणी को) प्रकृति में व्याप्त परमात्मा अपनी आँखों से दृष्टिगत होगा, उसके कानों में प्रभु की गुणस्तुति गूँजती रहेगी, उसके मुख में सत्यस्वरूप प्रभु-नाम अपने-आप उच्चरित होता रहेगा । उसे लोक-परलोक की प्रतिष्ठा का सम्पूर्ण धन उपलब्ध हो जायगा और सहजावस्था में उसकी सुरति टिक जायगी ॥ ३ ॥ (अहंकार को समाप्त करनेवाले) समस्त कार्य सम्पन्न करके देख लो, ये लौकिक ऋतुएँ और महीने तो सदा आने-जानेवाले हैं । गुरु नानकदेवजी का कथन है, जो जीव गुरु द्वारा प्रदर्शित मार्ग का आचरण कर प्रभु-स्मरण में लीन रहते हैं, उनकी आत्मा

सर्वदा प्रसन्न रहती है (और उनकी यह प्रसन्नता कभी समाप्त नहीं होती) ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ महला १ बसंतु ॥ रुति आईले सरस बसंत माहि। रंगि राते रवहि सि तेरै चाइ। किसु पूज चड़ावउ लगउ पाइ ॥ १ ॥ तेरा दासनिदासा कहउ राइ। जगजीवन जुगति न मिलै काइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तेरी मूरति एका बहुतु रूप। किसु पूज चड़ावउ देउ धूप। तेरा अंतु न पाइआ कहा पाइ। तेरा दासनिदासा कहउ राइ ॥ २ ॥ तेरे सठि संबत सभि तीरथा। तेरा सचु नामु परमेसरा। तेरी गति अविगति नही जाणीऐ। अणजाणत नामु वखाणीऐ ॥ ३ ॥ नानकु वेचारा किआ कहै। सभु लोकु सलाहे एकसै। सिरु नानक लोका पाव है। बलिहारी जाउ जेते तेरे नाव है ॥ ४ ॥ २ ॥

हे प्रभु ! जो व्यक्ति तुम्हारे प्रेम-रंग में रँग जाते हैं, जो तुम्हें स्मरण करते हैं, वे तुम्हारे मिलन की ख़ुशी में (मस्त) रहते हैं, उनके लिए (यह मनुष्य-जन्म मानो) वसन्त ऋतु है। वे इस मनुष्य-जन्म की ऋतु में सदा प्रफुल्लित रहते हैं। (इसलिए) मैं तुम्हारे अतिरिक्त किसकी पूजा के लिए पूजन-सामग्री भेंट करूँ ? तुम्हारे अतिरिक्त मैं किसके चरण स्पर्श करूँ ? ॥ १ ॥ हे प्रकाशस्वरूप प्रभु ! मैं तुम्हारे दासों का दास बनकर तुम्हें स्मरण करता रहूँ। हे विश्व के जीवन प्रभु ! तुम्हारे मिलन की युक्ति किसी अन्य स्थान से नहीं मिल सकती ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु ! तुम्हारी मूर्ति एक है (लेकिन) तुम्हारे रूप अनेक हैं। तुम्हें त्यागकर मैं किस दूसरे को धूप चढ़ाऊँ ? तुम्हें छोड़कर किस दूसरे की पूजा के लिए भेंट अर्पित करूँ ? हे प्रभु ! तुम्हारे गुणों का अन्त नहीं पाया जा सकता। मैं तो तुम्हारे दासों का दास बनकर तुम्हें स्मरण करता हूँ ॥ २ ॥ हे परमेश्वर ! तुम्हारा शाश्वत नाम ही मेरे लिए (तुम्हारे द्वारा दिए) साठ साल हैं और समस्त तीर्थ हैं। तुम कैसे हो ? —यह बात अगम्य और अकथ्य है। यह बात जानने के प्रयास से अलग हटकर तुम्हारा स्मरण करना चाहिए ॥ ३ ॥ बेचारा नानक (तुम्हारे सम्बन्ध में) क्या कह सकता है ? समस्त विश्व तुम्हारी (एक प्रभु) की प्रशंसा कर रहा है। जो व्यक्ति तुम्हारी गुणस्तुति करते हैं, मुझ नानक का शीश उनके क़दमों पर झुका है। तुम्हारे जितने भी नाम हैं, मैं उन पर बलिहारी जाता हूँ ॥ ४ ॥ २ ॥

॥ बसंतु महला १ ॥ सुइने का चउका कंचन कुआर।

रुपे कीआ कारा बहुतु बिसथारु। गंगा का उदक करंते की आगि। गरुड़ा खाणा दुध सिउ गाडि ॥ १ ॥ रे मन लेखै कबहू न पाइ। जामि न भीजै साच नाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दसअठ लीखे होवहि पासि। चारे बेद मुखागर पाठि। पुरबी नावै वरनां की दाति। वरत नेम करे दिन राति ॥ २ ॥ काजी मुलां होवहि सेख। जोगी जंगम भगवे भेख। को गिरही करमा की संधि। बिनु बूझे सभ खड़ीअसि बंधि ॥ ३ ॥ जेते जीअ लिखी सिरि कार। करणी उपरि होवगि सार। हुकमु करहि मूरख गावार। नानक साचे के सिफति भंडार ॥ ४ ॥ ३ ॥

यदि कोई मनुष्य सोने का चौका तैयार करे, सोने के बर्तन (चौके पर इस्तेमाल करे), चाँदी की लकीरें (पवित्रता रखने की दृष्टि) खींचे और (तदनन्तर भी) ऐसे ही कई कर्म करे; (भोजन तैयार करने के लिए) गंगाजल और अरणी की लकड़ी (प्रयुक्त करे) तदनन्तर वह दूध में मिलाकर पके हुए चावलों का भोजन करे ॥ १ ॥ (तो भी) हे मन ! ऐसी पवित्रता के सूचक, कोई भी आडम्बर ईश्वर को स्वीकृत नहीं होते। जब तक मनुष्य प्रभु के सत्य नाम में अनुरक्त नहीं होता (तब तक उनका प्रत्येक कर्म व्यर्थ है) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यदि किसी पंडित ने अठारह पुराण लिखकर पास रखे हों, यदि वह चारों वेदों का पाठ ज़बानी (कण्ठस्थ) पढ़े, यदि वह पवित्र तिथियों पर तीर्थस्नान करे, शास्त्रों की मर्यादा के अनुसार भिन्न-भिन्न वर्णों के व्यक्तियों को दान-पुण्य करे, यदि वह दिन-रात व्रत रखता रहे और अन्य दूसरे नियमों का निर्वाह करता रहे (तो भी प्रभु की दृष्टि में सब व्यर्थ है) ॥ २ ॥ यदि कोई व्यक्ति क़ाज़ी, मुल्ला, शेख़ बन जाए, कोई योगी बनकर गेरुए वस्त्र धारण कर ले, कोई गृहस्थी बनकर पूर्णकर्म-काण्डी हो जाए, (तो भी) इनमें प्रत्येक दोषियों की तरह बाँधकर (प्रभु-दरबार में) हाज़िर किया जायगा, जब तक वह प्रभु के नाम-स्मरण की महत्ता को नहीं समझेगा ॥ ३ ॥ (वास्तव में) जितने भी जीव हैं सभी के शीश पर प्रभु का यही हुक्म रूपी लेखा अंकित है कि सफलता का निर्णय उसके कृत कर्मों पर आश्रित होगा। जो व्यक्ति पवित्र कर्म-काण्ड, वेश आदि पर अहंकार करते हैं, वे बड़े मूर्ख हैं, गुरु नानक का कथन है कि प्रभु के शाश्वत गुणों के भण्डार अनन्त हैं (इसलिए प्रभु का नाम-स्मरण करो) ॥ ४ ॥ ३ ॥

॥ बसंतु महला ३ तीजा ॥ बसत्र उतारि दिगंबरु होगु। जटा धारि किआ कमावै जोगु। मनु निरमलु नही दसवै

दुआर। भ्रमि भ्रमि आवै मूढ़ा वारो वार ॥ १ ॥ एकु धिआवहु मूढ़ मना। पारि उतरि जाहि इक खिनां ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सिम्रिति सासत्र करहि वखिआण। नादी बेदी पढ़हि पुराण। पाखंड द्रिसटि मनि कपटु कमाहि। तिन कै रमईआ नेड़ि नाहि ॥ २ ॥ जेको ऐसा संजमी होइ। क्रिआ विसेख पूजा करेइ। अंतरि लोभु मनु बिखिआ माहि। ओइ निरंजनु कैसे पाहि ॥ ३ ॥ कीता होआ करे किआ होइ। जिसनो आपि चलाए सोइ। नदरि करे तां भरमु चुकाए। हुकमै बूझै तां साचा पाए ॥ ४ ॥ जिसु जीउ अंतरु मैला होइ। तीरथ भवै दिसंतर लोइ। नानक मिलीऐ सतिगुर संग। तउ भवजल के तूटसि बंध ॥ ५ ॥ ४ ॥

यदि कोई मनुष्य निर्वसन होकर नग्न साधु बन जाए (तो भी व्यर्थ है), जटा धारण करने पर भी योगसाधना सम्पन्न नहीं होती। दसवें द्वार में समाधि लगाने से भी मन पवित्र नहीं होता, (ऐसे साधनों में व्यस्त) मूर्ख भटक-भटककर बार-बार जन्मता है ॥१॥ हे मूर्ख मन! एक परमात्मा का स्मरण करो। इससे तू एक पल में ही पार उतर जायगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पंडित स्मृतियाँ और शास्त्र (पढ़कर) सुनाते हैं, योगी नाद बजाते हैं, पंडित वेद पढ़ते हैं और कितने ही पुराण पढ़ते हैं, लेकिन उनकी दृष्टि पाखण्डी है, वे भीतर से दोषी हैं। प्रभु ऐसे व्यक्तियों के समीप नहीं आता ॥ २ ॥ यदि कोई ऐसा व्यक्ति भी हो जो अपनी इन्द्रियों को नियंत्रित करने का यत्न करता हो, किसी विशेष प्रकार की क्रिया भी करता हो, देवपूजन भी करता हो; लेकिन यदि उसके भीतर लोभ है, यदि उसका मन माया-मोह में लिप्त है, तो ऐसे व्यक्ति भी निर्लिप्त परमात्मा की प्राप्ति नहीं कर सकते ॥ ३ ॥ (लेकिन जीव विवश हैं) सब कुछ परमात्मा द्वारा क्रियान्वित है, जीव के द्वारा कुछ नहीं हो सकता। जब प्रभु आप कृपादृष्टि करता है तो उस (जीव) की दुविधा दूर करता है। जब जीव प्रभु के आदेश को पहचानता है, तब वह उसका मिलाप प्राप्त कर लेता है ॥ ४ ॥ जिस मनुष्य का हृदय विकृत हो जाता है, यदि वह तीर्थयात्रा भी करता है, (यदि वह) देश-देशान्तरों की यात्रा करता है (तो सब व्यर्थ है)। नानकदेव का कथन है कि यदि गुरु का सान्निध्य प्राप्त हो तो ही परमात्मा की प्राप्ति होती है, और तभी संसार-समुद्र वाले बन्धन विच्छिन्न होते हैं ॥ ५ ॥ ४ ॥

॥ बसंतु महला १ ॥ सगल भवन तेरी माइआ मोह। मै अवरु न दीसै सरब तोह। तू सुरि नाथा देवा देव।

हरिनामु मिले गुर चरन सेव ।। १ ।। मेरे सुंदर गहिर गंभीर लाल। गुरमुखि राम नाम गुन गाए तू अपरंपरु सरब पाल ।। १ ।। रहाउ ।। बिनु साध न पाईऐ हरि का संगु । बिनु गुर मैल मलीन अंगु । बिनु हरि नाम न सुधु होइ । गुर सबदि सलाहे साचु सोइ ।। २ ।। जा कउ तू राखहि रखनहार । सतिगुरू मिलावहि करहि सार । बिखु हउमै ममता परहराइ । सभि दूख बिनासे रामराइ ।। ३ ।। ऊतम गति मिति हरि गुन सरीर । गुरमति प्रगटे राम नाम हीर । लिव लागी नामि तजि दूजा भाउ । जन नानक हरि गुरु गुर मिलाउ ।। ४ ।। ५ ।।

हे प्रभु ! समस्त लोकों में तुम्हारी माया के मोह का प्रसार है । मुझे तुम्हारे अतिरिक्त कोई दूसरा नहीं दिखता । समस्त जीवों में तुम्हारा ही प्रकाश है । तुम देवताओं के, नाथपंथियों के देव हो । हे हरि ! गुरु के चरणों की सेवा से तुम्हारा नाम प्राप्त होता है ।। १ ।। हे मेरे सुन्दर गहन गम्भीर, सर्वपालक प्रभु ! तुम अत्यन्त अपरम्पार हो । जो मनुष्य गुरु की शरण लेता है, वही तुम्हारी गुणस्तुति करता है ।। १ ।। रहाउ ।। गुरु की शरण के बिना प्रभु का सान्निध्य नहीं मिलता । गुरु के बिना मनुष्य का शरीर विकृत रहता है । प्रभु के नाम-स्मरण के बिना यह देह पवित्र नहीं हो सकती । जो मनुष्य गुरु की शिक्षा के अनुसार प्रभु की गुणस्तुति करता है, वह सत्यस्वरूप प्रभु-रूप हो जाता है ।। २ ।। हे रक्षक प्रभु ! जिसे तुम विकारों से बचाते हो, जिसे गुरु से मिलाते हो और जिसकी देखभाल करते हो, वह मनुष्य अपने भीतर से अहंकार और धनसंग्रह के विष को दूर कर लेता है । हे प्रकाश-रूप प्रभु ! तुम्हारी कृपा से उसके समस्त दुःख नष्ट हो जाते हैं ।। ३ ।। जिस मनुष्य के भीतर प्रभु के गुण समाहित हो जाते हैं उसकी आत्मिक अवस्था उत्तम हो जाती है, वह विशालमना हो जाता है, गुरु के उपदेश को स्वीकार कर उसके भीतर प्रभु-नाम का हीरा चमक पड़ता है और माया का लगाव त्यागकर उसकी सुरति प्रभु-नाम में लीन हो जाती है । हे प्रभु ! मुझ दास नानक की भेंट गुरु से कराएँ, उस (मिलाप करानेवाले) गुरु से मिलाएँ ।। ४ ।। ५ ।।

।। बसंतु महला १ ।। मेरी सखी सहेली सुनहु भाइ । मेरा पिरु रीसालू संगि साइ । ओहु अलखु न लखीऐ कहहु काइ । गुरि संगि दिखाइओ रामराइ ।। १ ।। मिलु सखी सहेली हरि गुन बने । हरि प्रभ संगि खेलहि वर कामनि

गुरमुखि खोजत मन मने ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनमुखी दुहागणि नाहि भेउ । ओहु घटि घटि रावै सरब प्रेउ । गुरमुखि थिरु चीनै संगि देउ । गुरि नामु द्रिड़ाइआ जपु जपेउ ॥ २ ॥ बिनु गुर भगति न भाउ होइ । बिनु गुर संत न संगु देइ । बिनु गुर अंधुले धंधु रोइ । मनु गुरमुखि निरमलु मलु सबदि खोइ ॥ ३ ॥ गुरि मनु मारिओ करि संजोगु । अहिनिसि रावे भगति जोगु । गुर संत सभा दुखु मिटै रोगु । जन नानक हरि वरु सहज जोगु ॥ ४ ॥ ६ ॥

हे मेरी सहेलियो ! प्रेमपूर्वक सुनो । जिस सहेली के साथ-साथ मेरा सुन्दर पति-प्रभु है, वही सहेली सौभाग्यवती है । वह प्रभु अवर्णनीय है, उसका स्वरूप व्यक्त नहीं किया जा सकता । उस (प्रभु) के मिलाप का तरीक़ा बताएँ । गुरु ने वह प्रकाशरूप प्रभु जिस सहेली को दिखाया है (उसी सहेली को वह प्रभु मिले हैं) ॥ १ ॥ हे मेरी सहेलियो ! मिलकर बैठो (बैठकर) प्रभु का गुणगान करना ही शोभनीय है । प्रभु-पति की जो जीव-स्त्रियाँ उस प्रभु परमेश्वर के साथ क्रीडा करती हैं, गुरु के माध्यम से प्रभु की खोज करते हुए उनके मन विश्वस्त हो जाते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ स्वेच्छाचारिणी भाग्यहीन जीव-स्त्रियों को यह रहस्यमयी बात समझ नहीं आती कि वह सर्वप्रिय प्रभु प्रत्येक शरीर के भीतर विद्यमान है । गुरु की शिक्षा पर आचरण करनेवाली जीव-स्त्री उस सत्यस्वरूप प्रभु को अपने इर्द-गिर्द देखती है । गुरु ने उसके हृदय में प्रभु का नाम दृढ़ कर दिया है और वह उसी का नाम जपती है ॥ २ ॥ गुरु की शरण लिये बिना न तो परमात्म-प्रेम सम्भव है और न प्रभु-भक्ति । सन्त (रूप) गुरु का शरणागत हुए बिना वह प्रभु अपना साहचर्य प्रदान नहीं करता । गुरु के द्वार पर आए बिना माया-मोह में अन्धे हुए जीव को दुनियावी जाल-जंजाल घेरे रहता है और वह सदा दुःखी ही रहता है ॥३॥ गुरु ने परमात्म-प्रेम द्वारा जिसके मन को निस्संग कर दिया है, वह दिन-रात प्रभु के सामीप्य को प्राप्त करता है । दास नानक का कथन है कि सन्त-गुरु के संसर्ग में बैठने से दुःख मिट जाते हैं एवं रोग विनष्ट हो जाते हैं, क्योंकि उसे प्रभु-पति का साहचर्य प्राप्त हो जाता है ॥ ४ ॥ ६ ॥

॥ बसंतु महला १ ॥ आपे कुदरति करे साजि । सचु आपि निबेड़े राजु राजि । गुरमति ऊतम संगि साथि । हरि नामु रसाइणु सहजि आथि ॥ १ ॥ मत बिसरसि रे मन राम बोलि । अपरंपरु अगम अगोचरु गुरमुखि हरि आपि तुलाए अतुलु तोलि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुर चरन सरेवहि गुर सिख

हरिनामु मिलै गुर चरन सेव ।। १ ।। मेरे सुंदर गहिर गंभीर लाल । गुरमुखि राम नाम गुन गाए तू अपरंपरु सरब पाल ।। १ ।। रहाउ ।। बिनु साध न पाईऐ हरि का संगु । बिनु गुर मैल मलीन अंगु । बिनु हरि नाम न सुधु होइ । गुर सबदि सलाहे साचु सोइ ।। २ ।। जा कउ तू राखहि रखनहार । सतिगुरू मिलावहि करहि सार । बिखु हउमै ममता परहराइ । सभि दूख बिनासे रामराइ ।। ३ ।। ऊतम गति मिति हरि गुन सरीर । गुरमति प्रगटे राम नाम हीर । लिव लागी नामि तजि दूजा भाउ । जन नानक हरि गुरु गुर मिलाउ ।। ४ ।। ५ ।।

हे प्रभु ! समस्त लोकों में तुम्हारी माया के मोह का प्रसार है । मुझे तुम्हारे अतिरिक्त कोई दूसरा नहीं दिखता । समस्त जीवों में तुम्हारा ही प्रकाश है । तुम देवताओं के, नाथपंथियों के देव हो । हे हरि ! गुरु के चरणों की सेवा से तुम्हारा नाम प्राप्त होता है ।। १ ।। हे मेरे सुन्दर गहन गम्भीर, सर्वपालक प्रभु ! तुम अत्यन्त अपरम्पार हो । जो मनुष्य गुरु की शरण लेता है, वही तुम्हारी गुणस्तुति करता है ।। १ ।। रहाउ ।। गुरु की शरण के बिना प्रभु का सान्निध्य नहीं मिलता । गुरु के बिना मनुष्य का शरीर विकृत रहता है । प्रभु के नाम-स्मरण के बिना यह देह पवित्र नहीं हो सकती । जो मनुष्य गुरु की शिक्षा के अनुसार प्रभु की गुणस्तुति करता है, वह सत्यस्वरूप प्रभु-रूप हो जाता है ।। २ ।। हे रक्षक प्रभु ! जिसे तुम विकारों से बचाते हो, जिसे गुरु से मिलाते हो और जिसकी देखभाल करते हो, वह मनुष्य अपने भीतर से अहंकार और धनसंग्रह के विष को दूर कर लेता है । हे प्रकाश-रूप प्रभु ! तुम्हारी कृपा से उसके समस्त दुःख नष्ट हो जाते हैं ।। ३ ।। जिस मनुष्य के भीतर प्रभु के गुण समाहित हो जाते हैं उसकी आत्मिक अवस्था उत्तम हो जाती है, वह विशालमना हो जाता है, गुरु के उपदेश को स्वीकार कर उसके भीतर प्रभु-नाम का हीरा चमक पड़ता है और माया का लगाव त्यागकर उसकी सुरति प्रभु-नाम में लीन हो जाती है । हे प्रभु ! मुझ दास नानक की भेंट गुरु से कराएँ, उस (मिलाप करानेवाले) गुरु से मिलाएँ ।। ४ ।। ५ ।।

।। बसंतु महला १ ।। मेरी सखी सहेली सुनहु भाइ । मेरा पिरु रीसालू संगि साइ । ओहु अलखु न लखीऐ कहहु काइ । गुरि संगि दिखाइओ रामराइ ।। १ ।। मिलु सखी सहेली हरि गुन बने । हरि प्रभ संगि खेलहि वर कामनि

गुरमुखि खोजत मन मने ।। १ ।। रहाउ ।। मनमुखी दुहागणि नाहि भेउ । ओहु घटि घटि रावै सरब प्रेउ । गुरमुखि थिरु चीनै संगि देउ । गुरि नामु द्रिड़ाइआ जपु जपेउ ।। २ ।। बिनु गुर भगति न भाउ होइ । बिनु गुर संत न संगु देइ । बिनु गुर अंधुले धंधु रोइ । मनु गुरमुखि निरमलु मलु सबदि खोइ ।। ३ ।। गुरि मनु मारिओ करि संजोगु । अहिनिसि रावे भगति जोगु । गुर संत सभा दुखु मिटै रोगु । जन नानक हरि वरु सहज जोगु ।। ४ ।। ६ ।।

हे मेरी सहेलियो ! प्रेमपूर्वक सुनो । जिस सहेली के साथ-साथ मेरा सुन्दर पति-प्रभु है, वही सहेली सौभाग्यवती है । वह प्रभु अवर्णनीय है, उसका स्वरूप व्यक्त नहीं किया जा सकता । उस (प्रभु) के मिलाप का तरीक़ा बताएँ । गुरु ने वह प्रकाशरूप प्रभु जिस सहेली को दिखाया है (उसी सहेली को वह प्रभु मिले हैं) ।। १ ।। हे मेरी सहेलियो ! मिलकर बैठो (बैठकर) प्रभु का गुणगान करना ही शोभनीय है । प्रभु-पति की जो जीव-स्त्रियाँ उस प्रभु परमेश्वर के साथ क्रीडा करती हैं, गुरु के माध्यम से प्रभु की खोज करते हुए उनके मन विश्वस्त हो जाते हैं ।। १ ।। रहाउ ।। स्वेच्छाचारिणी भाग्यहीन जीव-स्त्रियों को यह रहस्यमयी बात समझ नहीं आती कि वह सर्वप्रिय प्रभु प्रत्येक शरीर के भीतर विद्यमान है । गुरु की शिक्षा पर आचरण करनेवाली जीव-स्त्री उस सत्यस्वरूप प्रभु को अपने इर्द-गिर्द देखती है । गुरु ने उसके हृदय में प्रभु का नाम दृढ़ कर दिया है और वह उसी का नाम जपती है ।। २ ।। गुरु की शरण लिये बिना न तो परमात्म-प्रेम सम्भव है और न प्रभु-भक्ति । सन्त (रूप) गुरु का शरणागत हुए बिना वह प्रभु अपना साहचर्य प्रदान नहीं करता । गुरु के द्वार पर आए बिना माया-मोह में अन्धे हुए जीव को दुनियावी जाल-जंजाल घेरे रहता है और वह सदा दुःखी ही रहता है ।।३।। गुरु ने परमात्म-प्रेम द्वारा जिसके मन को निस्संग कर दिया है, वह दिन-रात प्रभु के सामीप्य को प्राप्त करता है । दास नानक का कथन है कि सन्त-गुरु के संसर्ग में बैठने से दुःख मिट जाते हैं एवं रोग विनष्ट हो जाते हैं, क्योंकि उसे प्रभु-पति का साहचर्य प्राप्त हो जाता है ।। ४ ।। ६ ।।

।। बसंतु महला १ ।। आपे कुदरति करे साजि । सचु आपि निबेड़े राजु राजि । गुरमति ऊतम संगि साथि । हरि नामु रसाइणु सहजि आथि ।। १ ।। मत बिसरसि रे मन राम बोलि । अपरंपरु अगम अगोचरु गुरमुखि हरि आपि तुलाए अतुलु तोलि ।। १ ।। रहाउ ।। गुर चरन सरेवहि गुर सिख

तोर। गुर सेव तरे तजि मेर तोर। नर निंदक लोभी मनि कठोर। गुर सेव न भाई सि चोर चोर ॥ २ ॥ गुरु तुठा बखसे भगति भाउ। गुरि तुठै पाईऐ हरि महलि ठाउ। परहरि निंदा हरि भगति जागु। हरि भगति सुहावी करमि भागु ॥ ३ ॥ गुरु मेलि मिलावै करे दाति। गुर सिख पिआरे दिनसु राति। फलु नामु परापति गुरु तुसि देइ। कहु नानक पावहि विरले केइ ॥ ४ ॥ ७ ॥

प्रभु स्वयं ही सृष्टि का निर्माण करता है, तदनन्तर शाश्वत प्रभु अपने हुक्म-अनुसार जीवों के कृत कर्मों के फ़ैसले करता है; जिन्हें गुरु द्वारा सुबुद्धि प्राप्त होती है, उन्हें प्रभु अपने साथ-साथ दृष्टिगत होता है। सर्वोपरि नाम-रस सहज अवस्था में स्थिर रहने के कारण मिल जाता है ॥ १ ॥ रे मन ! परमात्मा का नाम उच्चरित करो, कहीं यह तुम्हें विस्मृत न हो जाए ! वह प्रभु अपरम्पार, अगम्य और अगोचर है। लेकिन जो मनुष्य गुरु की शरण लेते हैं, उनके हृदय में प्रभु स्वयं (कृपा करके अपने गुणों का) स्मरण कराता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु ! जो गुरमुख गुरु के चरणों की सेवा करते हैं, वे तुम्हारे सेवक बन जाते हैं। गुरु की सेवा के प्रभाव से वे अपने-पराए की वृत्ति त्यागकर पार उतर जाते हैं; लेकिन जो व्यक्ति दूसरों की निन्दा करते हैं, माया-मोह में ग्रस्त एवं क्रूरवृत्ति के हैं, उन्हें गुरु द्वारा प्रदर्शित सेवा रुचिकर नहीं लगती और (वास्तव में) वे अत्यन्त बड़े चोर हैं ॥ २ ॥ जिन पर गुरु कृपालु होता है, वह उन्हें प्रभु-भक्ति और प्रभु-प्रेम प्रदान करता है। गुरु के प्रसन्न होने पर ही प्रभु-द्वार पर स्थान मिलता है। वे परनिन्दा त्यागकर प्रभु-भक्ति में नैपुण्य प्राप्त करते हैं (और) प्रभु-कृपा द्वारा ही प्रभु की शोभायमान भक्ति उनके (जीवन का) भाग बन जाती है ॥ ३ ॥ गुरु जिन्हें सान्निध्य में बिठाता है, जिन्हें नाम की देन देता है, वे प्यारे गुरमुख रात-दिन (नाम-स्मरण में लीन रहते हैं)। गुरु, जिन्हें प्रसन्न होकर नाम प्रदान करता है, उन्हें मानवीय ज़िन्दगी के वास्तविक मन्तव्य की प्राप्ति हो जाती है। लेकिन, हे नानक ! कहो— यह नाम की देन कुछ विरले सौभाग्यशाली जीव प्राप्त करते हैं ॥ ४ ॥ ७ ॥

॥ बसंतु महला ३ इक तुका ॥ साहिब भावै सेवकु सेवा करै। जीवतु मरै सभि कुल उधरै ॥ १ ॥ तेरी भगति न छोडउ किआ को हसै। साचु नामु मेरै हिरदै वसै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जैसे माइआ मोहि प्राणी गलतु रहै। तैसे संत जन

राम नाम रवत रहै ।। २ ।। मै मूरख मुगध ऊपरि करहु दइआ । तउ सरणागति रहउ पइआ ।। ३ ।। कहतु नानकु संसार के निहफल कामा । गुरप्रसादि को पावै अंम्रित नामा ।। ४ ।। ८ ।।

यदि मालिक को उपयुक्त लगे, तभी सेवक प्रभु-भक्ति कर सकता है। वह सेवक लौकिक व्यवहार का निर्वाह करता हुआ (भी) माया-मोह से निर्लिप्त रहता है, (अपने साथ-साथ) अपने समस्त वंश को भी माया-मोह से बचा लेता है ।। १ ।। हे प्रभु ! मैं तुम्हारी भक्ति नहीं छोड़ूंगा। (इसके लिए) मैं किसी की हँसी की परवाह भी नहीं करूँगा, (इसलिए कृपा कीजिए कि) तुम्हारा शाश्वत नाम मेरे हृदय में बस जाए ।। १ ।। रहाउ ।। जिस प्रकार कोई प्राणी माया-मोह में ग्रस्त रहता है, (उसी प्रकार सब तरफ़ से उदासीन हो) सन्त पुरुष परमात्मा के नाम-स्मरण में दत्तचित्त रहता है ।। २ ।। हे प्रभु ! मुझ मूर्ख पर कृपा कीजिए, ताकि मैं तुम्हारा शरणागत रहूँ ।। ३ ।। नानक का कथन है कि समस्त लौकिक काम-काज (अन्त में) निरर्थक सिद्ध होते हैं (प्रभु-प्रेम ही केवल सार्थक होता है)। गुरु-कृपा से कोई विरला व्यक्ति ही प्रभु का आत्मिक जीवन देनेवाला नाम प्राप्त करता है ।। ४ ।। ८ ।।

महला १ बसंतु हिंडोल घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। सालग्राम बिप पूजि मनावहु सुक्रितु तुलसी माला । राम नामु जपि बेड़ा बांधहु दइआ करहु दइआला ।। १ ।। काहे कलरा सिंचहु जनमु गवावहु । काची ढहगि दिवाल काहे गचु लावहु ।। १ ।। रहाउ ।। कर हरिहट माल टिंड परोवहु तिसु भीतरि मनु जोवहु । अंम्रितु सिंचहु भरहु किआरे तउ माली के होवहु ।। २ ।। कामु क्रोधु दुइ करहु बसोले गोडहु धरती भाई । जिउ गोडहु तिउ तुम्ह सुख पावहु किरतु न मेटिआ जाई ।। ३ ।। बगुले ते फुनि हंसुला होवै जे तू करहि दइआला । प्रणवति नानकु दासनिदासा दइआ करहु दइआला ।। ४ ।। १ ।। ९ ।।

हे ब्राह्मण ! उस दयालु प्रभु की पूजा करो, उसे प्रसन्न करो, (वास्तव में) यही शालिग्राम-पूजन है। सदाचरण करो, (क्योंकि) यही तुलसीमाला है। प्रभु का नाम-स्मरण कर (संसार-सागर से पार होने के लिए) जहाज़ तैयार करो (और कहो कि) हे दयालु प्रभ ! दया

कीजिए ॥ १ ॥ हे ब्राह्मण ! (बाह्याचरण में) तू व्यर्थ ही जन्म गँवा रहा है। तू व्यर्थ ही बंजर पृथ्वी को सींच रहा है। यह तेरी कच्ची दीवार (शुद्धाचरण के स्थान तुलसी आदि की पूजा है) ढह जाएगी। तू तो (कच्ची दीवार पर) चूने का पलस्तर व्यर्थ कर रहा है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे ब्राह्मण ! अपने हाथों से सेवा करने को रहट और रहट की माल तथा उस माल में बाल्टियों को जोड़ना बना। (हाथ से सेवा करनेवाले बाल्टियों के कुएँ) में अपना मन जोत, आत्मिक जीवन देनेवाला नाम-जल सींच और अपनी ज्ञानेन्द्रियों की क्यारियों को इस नाम-जल से लबालब भर। (ऐसा करने पर ही) तू इस जगत-बाग़ के पालक-प्रभु का प्यारा बनेगा ॥ २ ॥ हे भाई ! अपनी देह रूपी पृथ्वी की गुड़ाई कर, प्रेम और क्रोध —ये दो खुरपे बना (दैवी गुणों की स्नेह से रक्षा और विकारों को क्रोध द्वारा जड़ से उखाड़ते जाना)। इस प्रकार जैसे-जैसे तू गुड़ाई करेगा, तैसे-तैसे तुझे आत्मिक सुख प्राप्त होगा। तुम्हारे द्वारा की गई यह मेहनत व्यर्थ नहीं जायगी ॥ ३ ॥ हे दयालु प्रभु ! यदि तुम कृपा करो, तो मनुष्य बगुले से सुन्दर हंस बन सकता है। तुम्हारे दासों का दास नानक विनती करता है कि हे प्रभु ! कृपा करो ॥ ४ ॥ १ ॥ ९ ॥

॥ बसंतु महला १ हिंडोल ॥ साहुरड़ी वथु सभु किछु साझी पेवकड़ै धन वखे। आपि कुचजी दोसु न देऊ जाणा नाही रखे ॥ १ ॥ मेरे साहिबा हउ आपे भरमि भुलाणी। अखर लिखे सेई गावा अवर न जाणा बाणी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कढि कसीदा पहिरहि चोली तां तुम्ह जाणहु नारी। जे घरु राखहि बुरा न चाखहि होवहि कंत पिआरी ॥ २ ॥ जे तूं पड़िआ पंडितु बीना दुइ अखर दुइ नावा। प्रणवति नानकु एकु लंघाए जे करि सचि समावां ॥ ३ ॥ २ ॥ १० ॥

आत्मिक जीवन की जो देन प्रभु-पति से मिली थी, वह सबके साथ विभाजित की जा सकती थी, लेकिन जगत रूपी पीहर में रहते हुए मैं जीव-स्त्री भेदभाव में पड़ी रही। मैं आप ही मूर्ख रही (इसलिए) किसी पर दोषारोपण नहीं कर सकती। (प्रभु-पति से मिली देन को) सँभालकर रखने की समझ नहीं आई ॥ १ ॥ हे मेरे मालिक प्रभु ! मैं स्वयं ही दुविधाग्रस्त होकर जीवन के सन्मार्ग से विचलित हूँ। जो संस्कार मेरे मन में चित्रित हुए हैं, उन्हें कहती चली आ रही हूँ। (उनके अतिरिक्त) कोई दूसरी कल्पना कल्पित करना नहीं जानती हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो जीव-स्त्रियाँ शुभ गुणों के सुन्दर चित्र बनाकर प्रेम की चोली पहनती हैं, उन्हें ही बुद्धिमान स्त्रियाँ समझो। जो स्त्रियाँ अपना घर सँभालकर रखती हैं,

कोई विकृति अपने भीतर नहीं रखती हैं, वे (जीव-स्त्रियाँ) प्रभु-पति को अत्यन्त प्रिय लगती हैं ॥२॥ हे भाई ! यदि तू शिक्षित है, बुद्धिमान है (तब संसार-सागर से पार होने के लिए) हरि-नाम ही जहाज़ है। गुरु नानक का कथन है कि प्रभु-नाम ही पार करता है, यदि मैं शाश्वत प्रभु के नाम में संलिप्त रहूँ ॥ ३ ॥ २ ॥ १० ॥

॥ बसंत हिंडोल महला १ ॥ राजा बालकु नगरी काची दुसटा नालि पिआरो। दुइ माई दुइ बापा पड़ीअहि पंडित करहु बीचारो ॥ १ ॥ सुआमी पंडिता तुम्ह देहु मती। किन बिधि पावउ प्रानपती ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भीतरि अगनि बनासपति मउली सागरु पंडै पाइआ। चंदु सूरजु दुइ घर ही भीतरि ऐसा गिआनु न पाइआ ॥ २ ॥ राम रवंता जाणीऐ इक माई भोगु करेइ। ता के लखण जाणीअहि खिमा धनु संग्रहेइ ॥ ३ ॥ कहिआ सुणहि न खाइआ मानहि तिन्हा ही सेती वासा। प्रणवति नानकु दासनिदासा खिनु तोला खिनु मासा ॥४॥३॥११॥

हे पंडित ! यह बात विचारणीय है कि शरीर-नगरी पर राज्य करनेवाला मन मूर्ख है, यह शरीर-नगर भी कच्चा है। इस मूर्ख मन का लगाव भी कामादिक दुष्ट साथियों के साथ है। इसकी दो माताएँ हैं (विद्या तथा अविद्या), इसके पिता भी दो बतलाए गए हैं (परमात्मा तथा मायाग्रस्त जीवात्मा) ॥ १ ॥ हे पंडित ! आप तो अन्य प्रकार की शिक्षा दे रहे हो। (ऐसी शिक्षा द्वारा) मैं अपने प्राणों के मालिक परमात्मा को किस प्रकार मिल सकता हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ (तुम्हारी शिक्षा से) यह समझ नहीं आती कि चन्द्र और सूर्य दोनों मनुष्य-शरीर के भीतर अवस्थित हैं। शरीर के भीतर विकारों की अग्नि प्रज्वलित है, यौवन भी चरम उत्कर्ष पर है। सांसारिक वासनाओं का समुद्र इस शरीर के भीतर ठाठें मार रहा है (लगता है समुद्र एक गठरी में निहित है, इसलिए भीतरी प्रवाह को रोकनेवाली शिक्षा की ज़रूरत है) ॥२॥ वही मनुष्य प्रभु का स्मरण करनेवाला समझा जाएगा, जो (विद्या तथा अविद्या —दो माताओं में से) एक माँ को समाप्त कर दे। (अविद्या माँ को समाप्त करनेवाले) जीव के लक्षण यह हैं कि वह दूसरों के अन्याय को शान्त हृदय से सहन करने का आत्मिक धन एकत्रित करता है ॥ ३ ॥ दासों का दास नानक विनती करता है कि मन का साथ उन इन्द्रियों के साथ रहता है, जो कोई शिक्षा नहीं सुनतीं और जो विषय-विकारों से तृप्त भी नहीं होतीं। (मन अत्यन्त डाँवाडोल है क्योंकि) कभी यह तोला हो जाता है और कभी यह माशा रह जाता है ॥ ४ ॥ ३ ॥ ११ ॥

।। बसंतु हिंडोल महला १ ।। साचा साहु गुरू सुखदाता हरि मेले भुख गवाए। करि क्रिपा हरि भगति द्रिड़ाए अनदिनु हरिगुण गाए ।। १ ।। मत भूलहि रे मन चेति हरी। बिनु गुर मुकति नाही त्रै लोई गुरमुखि पाईऐ नामु हरी ।। १ ।। रहाउ ।। बिनु भगती नही सतिगुरु पाईऐ बिनु भागा नही भगति हरी। बिनु भागा सतसंगु न पाईऐ करमि मिलै हरिनामु हरी ।। २ ।। घटि घटि गुपतु उपाए वेखै परगटु गुरमुखि संत जना। हरि हरि करहि सु हरि रंगि भीने हरि जलु अंम्रित नामु मना ।। ३ ।। जिन कउ तखति मिलै वडिआई गुरमुखि से परधान कीए। पारसु भेटि भए से पारस नानक हरि गुर संगि थीए ।। ४ ।। ४ ।। १२ ।।

गुरु ऐसा शाह है, जिसके पास प्रभु के नाम का धन टिका रहता है। इसलिए गुरु सुख देने में समर्थ है, वह प्रभु के साथ भेंट करा देता है और माया एकत्रित करने की भूख मन से निकाल देता है। गुरु कृपा करके शिष्य के मन में प्रभु-मिलन की इच्छा दृढ़ करता है, क्योंकि वह आप प्रत्येक पल प्रभु की गुण-स्तुति करता रहता है ।। १ ।। हे मन ! परमात्मा को स्मरण रख। मायाग्रस्त होकर कहीं उसे विस्मृत न कर देना। (वास्तव में) गुरु का शरणागत होकर ही प्रभु का नाम प्राप्त होता है, शरणागत हुए बिना माया की भूख से मुक्ति नहीं हो सकती, चाहे तीनों लोकों में भाग-दौड़कर देख लो ।। १ ।। रहाउ ।। हार्दिक लगाव के बिना सतिगुरु से भेंट नहीं होती और बिना सौभाग्य प्रभु-मिलन की आकांक्षा उत्पन्न नहीं होती। इसके अतिरिक्त बिना सौभाग्य गुरमुखों की संगति नहीं होती। प्रभु-कृपा द्वारा ही उस प्रभु का नाम प्राप्त होता है ।। २ ।। जो प्रभु स्वयं तमाम सृष्टि का सृजन करता है और उसकी देखभाल करता है, वह प्रत्येक शरीर में निहित है। गुरु के शरणागत सन्तों को वह सर्वत्र दृष्टिगत होने लगता है। वे सन्तजन सदैव प्रभु का नाम-स्मरण करते हैं और उसके प्रेम-रंग में मस्त रहते हैं। उनके मन में आत्मिक ज़िन्दगी का देनेवाला नाम-जल हमेशा विद्यमान रहता है ।। ३ ।। गुरु की शरण लेकर जिन व्यक्तियों को हृदयसिंहासन पर बैठे रहने का सम्मान मिलता है, उन्हें परमात्मा विश्व में प्रसिद्ध कर देता है। नानक का कथन है कि गुरु-पारस को पाकर वे स्वयं पारस हो जाते हैं। वे व्यक्ति हमेशा के लिए प्रभु और गुरु के साथी बन जाते हैं ।। ४ ।। ४ ।। १२ ।।

बसंतु महला ३ घरु १ दुतुके

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ माहा रुती महि सद बसंतु। जितु हरिआ सभु जीअ जंतु। किआ हउ आखा किरम जंतु। तेरा किनै न पाइआ आदि अंतु ॥ १ ॥ तै साहिब की करहि सेव। परमसुख पावहि आतमदेव ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करमु होवै तां सेवा करै। गुरपरसादी जीवत मरै। अनदिनु साचु नामु उचरै। इन बिधि प्राणी दुतरु तरै ॥ २ ॥ बिखु अंम्रितु करतारि उपाए। संसार बिरख कउ दुइ फल लाए। आपे करता करे कराए। जो तिसु भावै तिसै खवाए ॥ ३ ॥ नानक जिसनो नदरि करेइ। अंम्रित नामु आपे देइ। बिखिआ की बासना मनहि करेइ। अपणा भाणा आपि करेइ ॥४॥१॥

हे प्रभु ! समस्त महीनों, ऋतुओं में हमेशा प्रफुल्लित रहनेवाले तुम स्वयं ही सर्वत्र अवस्थित हो, जिसके परिणामस्वरूप प्रत्येक जीव प्राणवान है। मैं तुच्छ-सा जीव क्या कह सकता हूँ ? किसी को न तुम्हारे आदि का ज्ञान है और न अन्त का ॥ १ ॥ हे मालिक प्रभु ! जो मनुष्य तुम्हारी सेवा-भक्ति करते हैं, वे सर्वोपरि आत्मिक आनन्द महसूस करते हैं॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! जब (जीव पर प्रभु की) कृपा होती है, तब वह प्रभु की सेवा-भक्ति करता है। गुरु-कृपा से वह लौकिक काम-काज करता हुआ भी विकारों से बचा रहता है। वह मनुष्य प्रतिपल प्रभु का शाश्वत नाम उच्चरित करता रहता है, इस प्रकार वह मनुष्य संसार-सागर से पार उतर जाता है जिससे पार उतरना अत्यन्त दुस्साध्य है ॥ २ ॥ हे भाई ! आत्मिक मृत्यु लानेवाली माया और आत्मिक जीवन का दाता नाम —ये दोनों कर्तार प्रभु ने ही पैदा किए हैं। जगत रूपी वृक्ष को उस प्रभु ने ये दोनों फल दिए हैं। कर्तार प्रभु आप ही सब कुछ कर रहा है और आप ही जीवों से करा रहा है। जिस जीव को जो फल प्रभु खिलाना चाहते हैं, वही फल उसे खिला देते हैं ॥ ३ ॥ नानक का कथन है कि जिस मनुष्य पर प्रभु कृपादृष्टि करता है, उसे स्वयं ही आत्मिक जीवन देनेवाला अपना नाम देता है, उसके भीतर से उठने वाली माया की लालसा पर प्रतिबन्ध लगा देता है। (लेकिन) अपनी रज़ा के स्वामी प्रभु स्वयं ही हैं ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ बसंतु महला ३ ॥ राते साचि हरि नामि निहाला। दइआ करहु प्रभ दीन दइआला। तिसु बिनु अवरु नही मै

काइ । जिउ भावै तिउ राखै सोइ ।। १ ।। गुर गोपाल मेरै मनि भाए । रहि न सकउ दरसन देखे बिनु सहजि मिलउ गुरु मेलि मिलाए ।। १ ।। रहाउ ।। इहु मनु लोभी लोभि लुभाना । राम बिसारि बहुरि पछुताना । बिछुरत मिलाइ गुर सेव रांगे । हरि नामु दीओ मसतकि वडभागे ।। २ ।। पउण पाणी की इह देह सरीरा । हउमै रोगु कठिन तनि पीरा । गुरमुखि राम नाम दारू गुण गाइआ । करि किरपा गुरि रोगु गवाइआ ।।३।। चारि नदीआ अगनी तनि चारे । त्रिसना जलत जले अहंकारे । गुरि राखे वडभागी तारे । जन नानक उरि हरि अंम्रितु धारे ।। ४ ।। २ ।।

हे प्रभु ! जो मनुष्य तुम्हारे शाश्वत नाम में रँग जाते हैं, वे सदैव प्रसन्नचित्त रहते हैं। हे दीनदयालु प्रभु ! कृपा कीजिए (नाम दीजिए)। हे भाई ! उस प्रभु के अतिरिक्त मुझे कोई दूसरा साथी नहीं दिखता। जिस प्रकार उसकी रज़ा होती है, उसी प्रकार वह जीवों की रक्षा करता है ।। १ ।। हे भाई ! मुझे गुरु परमेश्वर प्रिय लगते हैं। मैं उनका दर्शन किए बिना नहीं रह सकता। जब गुरु मुझे अपने सान्निध्य में लेते हैं, तब मैं आत्मिक रूप से संयमित होकर उन्हें मिलता हूँ ।। १ ।। रहाउ ।। जिस मनुष्य का लालची मन लोभग्रस्त रहता है, वह मनुष्य प्रभु का नाम विस्मृत कर हाथ मलता है। जो मनुष्य गुरु द्वारा बतलाई हरि-भक्ति में रँग जाते हैं, उन प्रभु से बिछुड़े हुए जीवों को गुरु दुबारा मिला देता है। जिनके मस्तक पर सौभाग्य उदय हो गया, उन्हें गुरु ने परमात्मा का नाम प्रदान कर दिया ।। २ ।। हे भाई ! यह शरीर हवा, पानी आदि तत्त्वों से निर्मित है। जिस मनुष्य के शरीर में अहंकार का रोग है, उसके भीतर अहंकार की कठोर पीड़ा टिकी रहती है। गुरु के समक्ष होकर जो मनुष्य प्रभु का गुणगान करता है, उसके लिए प्रभु का नाम औषध बन जाता है। जो मनुष्य गुरु की शरण में आता है, गुरु कृपा करके उसका यह रोग दूर कर देता है ।। ३ ।। हे भाई ! विश्व में अग्नि की चार नदियाँ (काम, क्रोध, लोभ, मद) प्रवाहित हैं; जिनके शरीर में ये चारों अग्नियाँ प्रज्वलित हैं, वे मनुष्य तृष्णा में जलते हैं। नानक का कथन है कि जिन सौभाग्यशाली जीवों की गुरु ने रक्षा की, उन्हें (नदियों से) पार उतार दिया। उन जीवों ने आत्मिक जीवन देनेवाले प्रभु-नाम को हृदय में अवस्थित कर लिया ।। ४ ।। २ ।।

।। बसंतु महला ३ ।। हरि सेवे सो हरि का लोगु । साचु सहजु कदे न होवै सोगु । मनमुख मुए नाही हरि मन

माहि । मरि मरि जंमहि भी मरि जाहि ॥ १ ॥ से जन जीवे जिन हरि मन माहि । साचु सम्हालहि साचि समाहि ॥१॥ रहाउ ॥ हरि न सेवहि ते हरि ते दूरि । दिसंतरु भवहि सिरि पावहि धूरि । हरि आपे जन लीए लाइ । तिन सदा सुखु है तिलु न तमाइ ॥ २ ॥ नदरि करे चूकै अभिमानु । साची दरगह पावै मानु । हरि जीउ वेखै सद हजूरि । गुर कै सबदि रहिआ भरपूरि ॥ ३ ॥ जीअ जंत की करे प्रतिपाल । गुरपरसादी सद सम्हाल । दरि साचै पति सिउ घरि जाइ । नानक नामि वडाई पाइ ॥ ४ ॥ ३ ॥

हे भाई ! जो मनुष्य परमात्मा का स्मरण करता है, वह परमात्मा का भक्त है । उसे सत्यस्वरूप सहज-अवस्था मिली रहती है, उसे कभी कोई दुःख स्पर्श नहीं करता । परन्तु, हे भाई ! स्वेच्छाचारी मनुष्य आत्मिक मृत्यु को संग लिये रहते हैं, (क्योंकि) उनके मन में प्रभु का नाम स्मरण नहीं होता । वे मनुष्य आत्मिक मृत्यु को प्राप्त कर जन्म-चक्र में पड़े रहते हैं और बार-बार आत्मिक मृत्यु पाते रहते हैं ॥ १ ॥ हे भाई ! जिन मनुष्यों के मन में परमात्मा का नाम अवस्थित होता है, जो मनुष्य सत्यस्वरूप प्रभु को हृदय में विराजमान रखते हैं, जो सत्यस्वरूप प्रभु में लीन रहते हैं, वे मनुष्य आत्मिक जीवन वाले हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! जो मनुष्य प्रभु का नाम-स्मरण नहीं करते, वे परमात्मा से बिछुड़े रहते हैं । वे मनुष्य अन्य देश-देशान्तरों में भटकते फिरते हैं और अपने सिर में मिट्टी डालते हैं (दुःखी होते रहते हैं) । हे भाई ! अपने भक्तों को प्रभु स्वयं अपने चरणों में जगह देते हैं । उन्हें (भक्तों को) हमेशा आत्मिक आनन्द प्राप्त रहता है और उन्हें कभी रत्ती भर भी लालच नहीं होता ॥ २ ॥ हे भाई ! जिस मनुष्य पर प्रभु कृपादृष्टि करता है, उसके भीतर से अहंकार विनष्ट हो जाता है, वह मनुष्य सत्यस्वरूप प्रभु की सेवा में सत्कृत होता है । गुरु की शिक्षा के प्रभाव से वह मनुष्य सदैव परमात्मा को अपने इर्द-गिर्द देखता है, प्रभु उसे सर्वत्र अवस्थित दृष्टिगत होता है ॥ ३ ॥ हे भाई ! जो मनुष्य गुरु-कृपा से उस प्रभु को सदैव स्मरण रखता है और समस्त जीवों की देखभाल करता है, वह मनुष्य सत्यस्वरूप प्रभु के द्वार और गृह में सादर प्रवेश करता है । नानक का कथन है कि नाम के प्रभाव से वह मनुष्य (सर्वत्र) सम्मानित होता है ॥ ४ ॥ ३ ॥

॥ बसंतु महला ३ ॥ अंतरि पूजा मन ते होइ । एको वेखै अउरु न कोइ । दूजै लोकी बहुतु दुखु पाइआ । सतिगुरि

मैनो एकु दिखाइआ ।। १ ।। मेरा प्रभु मउलिआ सद बसंतु । इहु मनु मउलिआ गाइ गुण गोबिंद ।। १ ।। रहाउ ।। गुर पूछउ तुम्ह करहु बीचारु । तां प्रभ साचे लगै पिआरु । आपु छोडि होहि दासत भाइ । तउ जगजीवनु वसै मनि आइ ।। २ ।। भगति करे सद वेखै हजूरि । मेरा प्रभु सद रहिआ भरपूरि । इसु भगती का कोई जाणै भेउ । सभु मेरा प्रभु आतम देउ ।।३।। आपे सतिगुरु मेलि मिलाए । जगजीवन सिउ आपि चितु लाए । मनु तनु हरिआ सहजि सुभाए । नानक नामि रहे लिव लाए ।। ४ ।। ४ ।।

हे भाई ! (भक्त जीव के) भीतर प्रभुगुण-गान के कारण, प्रभु की भक्ति स्वयं ही होती रहती है । वह सर्वत्र केवल परमात्मा को देखता है, किसी अन्य को नहीं । हे भाई ! दुनिया ने माया-मोह में ग्रस्त होकर बहुत दुःख पाया है, लेकिन गुरु ने मुझे केवल परमात्मा ही दिखा दिया है (अतः दुःखों से बच गया हूँ) ।। १ ।। हे भाई ! सच्चिदानन्द-रूप मेरा प्रभु सर्वत्र प्रकाशमान है । उस प्रभु के गुण गा-गाकर यह मन प्रफुल्लित रहता है ।। १ ।। रहाउ ।। हे भाई ! गुरु के उपदेश ग्रहण करो और परमात्मा के गुणों को अपने भीतर विद्यमान रखो (इस प्रकार) सत्य-स्वरूप परमात्मा के साथ प्रेम-सम्बन्ध दृढ़ हो जायगा । हे भाई ! यदि तू अहंकार त्यागकर सेवक-स्वभाव ग्रहण करे, तो जगत का सर्जक परमात्मा तेरे भीतर अवस्थित हो जायगा ।। २ ।। जो मनुष्य प्रभु की भक्ति करता है, वह प्रभु को सदैव अपने इर्द-गिर्द देखता है, प्यारा प्रभु उसे सर्वत्र व्यापक दृष्टिगत होता है । हे भाई ! जो मनुष्य प्रभु की इस भक्ति के रहस्य को समझ लेता है उसे प्रभु सर्वत्र दृष्टिगत होता है ।। ३ ।। लेकिन, हे भाई ! जगज्जीवन प्रभु स्वयं ही गुरु से भेंट कराकर जीव को अपने चरणों में जगह देता है, वह स्वयं ही मनुष्य का हृदय अपनी तरफ़ संलिप्त करता है । नानक का कथन है कि जो मनुष्य प्रभु के नाम में सुरति लगाए रखते हैं, वे सहजावस्था में टिके रहते हैं; वे प्रभु-प्रेम में दृढ़ रहते हैं और उनका तन-मन आत्मिक आनन्द से आपूरित रहता है ।। ४ ।। ४ ।।

।। बसंतु महला ३ ।। भगति वछलु हरि वसै मनि आइ । गुर किरपा ते सहज सुभाइ । भगति करे विचहु आपु खोइ । तदही साचि मिलावा होइ ।। १ ।। भगत सोहहि सदा हरि प्रभ दुआरि । गुर कै हेति साचै प्रेम पिआरि ।। १ ।। रहाउ ।।

भगति करे सो जनु निरमलु होइ । गुर सबदी विचहु हउमै खोइ । हरि जीउ आपि वसै मनि आइ । सदा सांति सुखि सहजि समाइ ।। २ ।। साचि रते तिन सद बसंत । मनु तनु हरिआ रवि गुण गुविंद । बिनु नावै सूका संसारु । अगनि त्रिसना जलै वारोवार ।। ३ ।। सोई करे जि हरि जीउ भावै । सदा सुखु सरीरि भाणै चितु लावै । अपणा प्रभु सेवे सहजि सुभाइ । नानक नामु वसै मनि आइ ।। ४ ।। ५ ।।

हे भाई ! जो मनुष्य गुरु-कृपा द्वारा सहजावस्था के अन्तर्गत प्रभु-प्रेम में लीन रहता है, भक्ति से प्रेम करनेवाला प्रभु उसके मन में अवस्थित हो जाता है। हे भाई ! जब मनुष्य अपने भीतर से अहंत्व-भाव दूर कर प्रभु-भक्ति करता है, तब ही सत्यस्वरूप परमात्मा से उसका मिलाप हो जाता है ।। १ ।। हे भाई ! परमात्मा की प्रार्थना करनेवाले मनुष्य सदैव उसके द्वार पर शोभित होते हैं। वे हमेशा गुरु तथा सत्य-स्वरूप प्रभु के प्रेम में लीन रहते हैं ।। १ ।। रहाउ ।। हे भाई ! जो मनुष्य गुरु के ज्ञान द्वारा अपने भीतर से अहंत्व दूर कर परमात्मा की भक्ति करता है, वह पवित्र जीवन वाला हो जाता है। प्रभु स्वयं उसके भीतर अवस्थित हो जाता है, उसके भीतर शान्ति विद्यमान रहती है और वह सदा सहजावस्था में लीन रहता है ।।२।। हे भाई ! जो मनुष्य सत्यस्वरूप प्रभु-प्रेम में रँग जाते हैं, उनके भीतर आनन्द बना रहता है। गोविन्द के गुण स्मरण कर उनका तन-मन आत्मिक जीवन वाला हो जाता है। हे भाई ! प्रभु के नाम के बिना जगत सूखा अर्थात् आत्मिक जीवन के बिना हुआ रहता है और बार-बार तृष्णा की अग्नि में जलता रहता है ।। ३ ।। जो मनुष्य वही करता है, जो प्रभु को भला लगता है; जो मनुष्य परमात्मा के भाणे को स्वीकार करता है, उसके हृदय में आत्मिक आनन्द बना रहता है। गुरु नानक का कथन है कि जो मनुष्य सहजावस्था में टिककर, प्रभु-प्रेम में रँगकर, प्रभु की भक्ति करता है, उसके मन में का नाम अवस्थित हो जाता है ।। ४ ।। ५ ।।

।। बसंतु महला ३ ।। माइआ मोहु सबदि जलाए । मनु तनु हरिआ सतिगुर भाए । सफलिओ बिरखु हरि कै दुआरि । साची बाणी नाम पिआरि ।। १ ।। ए मन हरिआ सहज सुभाइ । सच फलु लागै सतिगुर भाइ ।। १ ।। रहाउ ।। आपे नेड़ै आपे दूरि । गुर कै सबदि वेखै सद हजूरि । छाव घणी फूली बनराइ । गुरमुखि बिगसै सहजि सुभाइ ।। २ ।।

अनदिनु कीरतनु करहि दिन राति। सतिगुरि गवाई विचहु जूठि भरांति। परपंच वेखि रहिआ विसमादु। गुरमुखि पाईऐ नाम प्रसादु ॥ ३ ॥ आपे करता सभि रस भोग। जो किछु करे सोई परु होग। वडा दाता तिलु न तमाइ। नानक मिलीऐ सबदु कमाइ ॥ ४ ॥ ६ ॥

हे भाई ! जो मनुष्य गुरु की शिक्षा द्वारा माया-मोह जला देता है, गुरु-प्रेम के प्रभाव से उसका तन-मन आत्मिक जीवन से आपूरित हो जाता है। हे भाई ! जो मनुष्य सत्यस्वरूप प्रभु की गुणस्तुति में, हरि-नाम के प्रेम में अभिभूत होकर प्रभु-द्वार पर टिका रहता है, उस शरीर रूपी वृक्ष सफल हो जाता है ॥ १ ॥ हे मन ! आत्मिक स्थिरता देनेवाले (गुरु-) प्रेम में टिका रह। इससे तू आत्मिक जीवन की ताज़गी से आपूरित हो जायगा। (क्योंकि) गुरु-प्रेम के प्रभाव से सत्यस्वरूप प्रभु का नाम-फल लगता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! जो गुरु की शिक्षा के प्रभाव से प्रभु को इर्द-गिर्द देखता है, (गुरु-प्रेम के प्रभाव से) उसे प्रभु के निकट एवं दूर महसूस होने का (रहस्य अवगत हो जाता है)। हे भाई ! गुरु के सान्निध्य में रहनेवाला, प्रभु-प्रेम में रँगकर सदा आनन्दित रहता है, (उसे लगता है कि) समस्त वनस्पति घनी छाया वाली और खिली हुई है ॥ २ ॥ हे भाई ! जो मनुष्य दिन-रात प्रभु की गुणस्तुति करते हैं, गुरु ने उनके भीतर से दुविधा का मैल दूर कर दी है। हे भाई ! गुरु के सान्निध्य में रहकर प्रभु के नाम की देन मिलती है ॥ ३ ॥ हे भाई ! प्रभु आप ही समस्त रसों का भोक्ता है। जो कुछ वह प्रभु करना चाहता है, वही घटित होता है। वह प्रभु सर्वोपरि दाता है, उसे तनिक मात्र भी लालच नहीं है। हे भाई ! गुरु की शिक्षा को जीवन में व्यवहृत कर उसे मिला जा सकता है ॥ ४ ॥ ६ ॥

॥ बसंतु महला ३ ॥ पूरै भागि सचु कार कमावै। एको चेतै फिरि जोनि न आवै। सफल जनमु इसु जग महि आइआ। साचि नामि सहजि समाइआ ॥ १ ॥ गुरमुखि कार करहु लिव लाइ। हरिनामु सेवहु विचहु आपु गवाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तिसु जन की है साची बाणी। गुर कै सबदि जग माहि समाणी। चहु जुग पसरी साची सोइ। नामि रता जनु परगटु होइ ॥ २ ॥ इकि साचै सबदि रहे लिव लाइ। से जन साचे साचै भाइ। साचु धिआइनि देखि हजूरि। संत जना की पग पंकज धूरि ॥ ३ ॥ एको करता अवरु न कोइ।

गुर सबदी मेलावा होइ । जिनि सचु सेविआ तिनि रसु पाइआ । नानक सहजे नामि समाइआ ॥ ४ ॥ ७ ॥

हे भाई ! जो मनुष्य सौभाग्यवश सत्यस्वरूप हरि-नाम के स्मरण की किरत करता है, जो मनुष्य केवल एक परमात्मा को हृदय में अवस्थित करता है, वह बार-बार योनियों में नहीं पड़ता । इस जगत में आया वह व्यक्ति सफल ज़िन्दगी वाला है, जो सत्यस्वरूप हरि-नाम में, सहजावस्था में टिका रहता है ॥ १ ॥ हे भाई ! अपने भीतर से अहंत्व दूर कर परमात्मा का नाम-स्मरण किया करो । गुरु का शरणागत होकर, सुरति टिकाकर किरत करते रहा करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! जो मनुष्य सदा गुरु के उपदेश में लीन रहता है, उस मनुष्य का स्वर सत्यस्वरूप प्रभु की गुणस्तुति की वह वाणी बन जाता है, जो समस्त विश्व में व्याप्त है। परमात्मा के नाम में रँगा हुआ मनुष्य लोकप्रिय हो जाता है । उसकी अटल शोभा चारों युगों में बिखरी रहती है ॥ २ ॥ हे भाई ! कितने मनुष्य ऐसे हैं जो सत्यस्वरूप प्रभु की गुणस्तुति में सुरति लगाए रखते हैं । सत्यस्वरूप प्रभु के प्रेम में रँगकर वे सत्यस्वरूप प्रभु के तुल्य हो जाते हैं । वे मनुष्य सत्यस्वरूप प्रभु को अपने इर्द-गिर्द अवस्थित देख उसका नाम स्मरण करते रहते हैं और सन्तों के सुन्दर चरणों की धूल अपने मस्तक पर लगाते हैं ॥ ३ ॥ गुरु नानक का कथन है कि जिस मनुष्य ने हरि का नाम-स्मरण किया है, उसने आत्मिक आनन्द प्राप्त किया है; वह सदैव आत्मिक स्थिरता में, हरि-नाम में लीन रहता है। गुरु के उपदेश द्वारा प्रभु के साथ उसका मिलाप हो जाता है । उसे सर्वत्र कर्तार प्रभु ही दिखता है, कोई अन्य दृष्टिगत नहीं होता ॥ ४ ॥ ७ ॥

॥ बसंतु महला ३ ॥ भगति करहि जन देखि हजूरि । संत जना की पग पंकज धूरि । हरि सेती सद रहहि लिव लाइ । पूरै सतिगुरि दीआ बुझाइ ॥ १ ॥ दासा का दासु विरला कोई होइ । ऊतम पदवी पावै सोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ एको सेवहु अवरु न कोइ । जितु सेविऐ सदा सुखु होइ । ना ओहु मरै न आवै जाइ । तिसु बिनु अवरु सेवी किउ माइ ॥२॥ से जन साचे जिनी साचु पछाणिआ । आपु मारि सहजे नामि समाणिआ । गुरमुखि नामु परापति होइ । मनु निरमलु निरमल सचु सोइ ॥ ३ ॥ जिनि गिआनु कीआ तिसु हरि तू जाणु । साच सबदि प्रभु एकु सिञाणु । हरि रसु चाखै तां सुधि होइ । नानक नामि रते सचु सोइ ॥ ४ ॥ ८ ॥

हे भाई ! भक्तजन प्रभु को आपपास अवस्थित देख उसकी भक्ति करते हैं, सन्तों के चरणों की धूल (मस्तक पर) लगाते हैं, वे सदा परमात्मा से लौ लगाए रखते हैं। पूर्णगुरु द्वारा उन्हें यह सूझ प्राप्त होती है ॥ १ ॥ कोई विरला मनुष्य ही प्रभु के सेवकों का सेवक बनता है। (जो सेवक बनता है) वह उत्तम आत्मिक स्थान प्राप्त कर लेता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! उस एक प्रभु की भक्ति किया करो। वह प्रभु अनुपम है और उसकी भक्ति करने से आत्मिक आनन्द बना रहता है। हे माँ ! वह परमात्मा न कभी मरता है, न जन्म-मरण के चक्र में पड़ता है। मैं उसके अतिरिक्त किसी दूसरे की भक्ति क्यों करूँ ? ॥ २ ॥ हे भाई ! जिन मनुष्यों ने सत्यस्वरूप प्रभु से मेल कर लिया, वे स्थिर जीवन वाले हो गए। वे मनुष्य अहंत्व-भाव त्यागकर सहजावस्था में, हरि-नाम में लीन रहते है। हे भाई ! प्रभु का नाम गुरु का शरणागत होकर मिलता है, (भक्त का) मन पवित्र हो जाता है और उसे सत्य-स्वरूप पवित्र प्रभु सर्वत्र दृष्टिगत होता है ॥ ३ ॥ हे भाई ! जिस प्रभु ने आत्मिक जीवन की सूझ पैदा की है, उसके साथ घनिष्ठ सम्बन्ध बनाए रख। उस सत्यस्वरूप प्रभु की गुणस्तुति की वाणी से एक परमात्मा से परिचय बनाए रख। गुरु नानक का कथन है कि जब मनुष्य परमात्मा के नाम का आस्वादन करता है, तब आत्मिक जीवन की सूझ होती है। नाम में रँगकर वह प्रभु सर्वत्र दृष्टिगत होता है ॥ ४ ॥ ८ ॥

॥ बसंतु महला ३ ॥ नामि रते कुलां का करहि उधारु। साची बाणी नाम पिआरु। मनमुख भूले काहे आए। नामहु भूले जनमु गवाए ॥ १ ॥ जीवत मरै मरि मरणु सवारै। गुर कै सबदि साचु उरधारै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमुखि सचु भोजनु पवितु सरीरा। मनु निरमलु सद गुणी गहीरा। जंमै मरै न आवै जाइ। गुरपरसादी साचि समाइ ॥ २ ॥ साचा सेवहु साचु पछाणै। गुर कै सबदि हरि दरि नीसाणै। दरि साचै सचु सोभा होइ। निज घरि वासा पावै सोइ ॥ ३ ॥ आपि अभुलु सचा सचु सोइ। होरि सभि भूलहि दूजै पति खोइ। साचा सेवहु साची बाणी। नानक नामे साचि समाणी ॥ ४ ॥ ९ ॥

हे भाई ! परमात्मा के नाम में रँगे मनुष्य अपने वंश का भी उद्धार कर लेते हैं। सत्यस्वरूप प्रभु की गुणस्तुति एवं नाम-प्रेम उनके भीतर विद्यमान रहते हैं, लेकिन स्वेच्छाचारी मनुष्य कुमार्गगामी हुए रहते हैं; नाम से ख़ाली हो वे जीवन व्यर्थ गँवा लेते हैं और जगत में आकर भी

न आए के बराबर हैं ॥ १ ॥ जो मनुष्य गुरु के ज्ञान द्वारा सत्यस्वरूप हरि-नाम को अपने हृदय में टिकाता है, वह मनुष्य लौकिक कामकाज करता हुआ भी माया-मोह से बचा रहता है। विकारहीन हो वह मनुष्य अपने पवित्र जीवन को सुन्दर बना लेता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु का शरणागत हो जो मनुष्य सत्य-स्वरूप हरि-नाम को अपनी ख़ुराक बनाता है, उसका तन-मन पवित्र हो जाता है। गुणी, गम्भीर हरि सदा उसके भीतर अवस्थित हो जाता है। वह मनुष्य जन्म-मरण के चक्र में नहीं पड़ता और गुरु-कृपा से वह सत्यस्वरूप हरि-नाम में लीन रहता है ॥ २ ॥ हे भाई ! सत्यस्वरूप प्रभु की भक्ति किया करो। जो मनुष्य गुरु के ज्ञान द्वारा सत्यस्वरूप प्रभु के साथ मेल करता है, परमात्मा के द्वार पर उसे सत्कार मिलता है। सत्यस्वरूप हरि-नाम में रँगकर सत्यस्वरूप प्रभु के द्वार पर उसकी शोभा होती है। वह मनुष्य अपने घर में टिका रहता है अर्थात् दुविधा से बचा रहता है ॥ ३ ॥ हे भाई ! वह सत्य-स्वरूप प्रभु आप ग़लतियाँ नहीं करता। शेष सब जीव माया-मोह में भटककर कुमार्गगामी हुए रहते हैं। हे भाई ! सत्यस्वरूप प्रभु की भक्ति करते रहा करो। गुरु नानक का कथन है कि सत्यस्वरूप प्रभु की गुणस्तुति द्वारा उस मनुष्य की सुरति सत्यस्वरूप नाम में लीन रहती है ॥ ४ ॥ ९ ॥

॥ बसंतु महला ३ ॥ बिनु करमा सभ भरमि भुलाई। माइआ मोहि बहुतु दुखु पाई। मनमुख अंधे ठउर न पाई। बिसटा का कीड़ा बिसटा माहि समाई ॥ १ ॥ हुकमु मंने सो जनु परवाणु। गुर कै सबदि नामि नीसाणु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साचि रते जिन्हा धुरि लिखि पाइआ। हरि का नामु सदा मनि भाइआ। सतिगुर की बाणी सदा सुखु होइ। जोती जोति मिलाए सोइ ॥ २ ॥ एकु नामु तारे संसारु। गुरपरसादी नाम पिआरु। बिनु नामै मुकति किनै न पाई। पूरे गुर ते नामु पलै पाई ॥ ३ ॥ सो बूझै जिसु आपि बुझाए। सतिगुर सेवा नामु द्रिढ़ाए। जिन इकु जाता से जन परवाणु। नानक नामि रते दरि नीसाणु ॥ ४ ॥ १० ॥

हे भाई ! प्रभु-कृपा के बिना समस्त दुनिया को दुविधा ने कुमार्ग-गामी बना दिया है, माया-मोह में फँसकर दुनिया बहुत दुःख पाती है। स्वेच्छाचारी मनुष्य अन्धे हुए रहते हैं। मायाग्रस्त मनुष्य आत्मिक शान्ति का ठिकाना प्राप्त नहीं कर सकता, जैसे गन्दगी का कीड़ा गन्दगी में ही मस्त रहता है (बाहर नहीं निकल पाता) ॥ १ ॥ जो मनुष्य प्रभु

की रज़ा को स्वीकार करता है, वह गुरु-ज्ञान द्वारा प्रभु-नाम में लीन रहता है। (इसी कारण) वह मनुष्य (प्रभु-द्वार पर) सत्कृत होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! जिनके मस्तक पर प्रभु द्वारा भक्ति का लेख लिखा होता है, वे सत्यस्वरूप हरि-नाम में रँगे रहते हैं। प्रभु का नाम उन्हें मन में प्रिय लगता है। गुरु की वाणी के प्रभाव से उनके भीतर आत्मिक आनन्द बना रहता है, वाणी उनकी आत्मा को परमात्मा की ज्योति में मिला देती है ॥ २ ॥ हे भाई ! प्रभु का नाम ही जगत को पार उतारता है, लेकिन नाम का प्रेम गुरु-कृपा द्वारा बनता है। हे भाई ! परमात्मा के नाम के बिना किसी मनुष्य ने विकारों से मुक्ति प्राप्त नहीं की। नाम पूर्णगुरु से मिलता है ॥ ३ ॥ हे भाई ! वह मनुष्य जीवन का सन्मार्ग समझता है, जिसे प्रभु आप समझाए। परमात्मा उसे गुरु की शरण दिलाकर उसके हृदय में अपना नाम दृढ़ करता है। गुरु नानक का कथन है कि जिन मनुष्यों ने एक प्रभु से ऐक्य भाव कर लिया, वे प्रभु के द्वार पर सत्कृत हो गए। वे मनुष्य प्रभु-नाम में रँगे गए और प्रभु-द्वार पर उन्हें सम्मान प्राप्त हुआ ॥ ४ ॥ १० ॥

॥ बसंतु महला ३ ॥ क्रिपा करे सतिगुरू मिलाए। आपे आपि वसै मनि आए। निहचल मति सदा मन धीर। हरिगुण गावै गुणी गहीर ॥ १ ॥ नामहु भूले मरहि बिखु खाइ। ब्रिथा जनमु फिरि आवहि जाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बहु भेख करहि मनि सांति न होइ। बहु अभिमानि अपणी पति खोइ। से वडभागी जिन सबदु पछाणिआ। बाहरि जावा घर महि आणिआ ॥ २ ॥ घर महि वसतु अगम अपारा। गुरमति खोजहि सबदि बीचारा। नामु नवनिधि पाई घर ही माहि। सदा रंगि राते सचि समाहि ॥ ३ ॥ आपि करे किछु करणु न जाइ। आपे भावै लए मिलाइ। तिस ते नेड़ै नाही को दूरि। नानक नामि रहिआ भरपूरि ॥ ४ ॥ ११ ॥

हे भाई ! जिस मनुष्य पर प्रभु कृपा-दृष्टि करता है, उसे वह गुरु से मिलाता है, (तदनन्तर गुरु द्वारा) आप उसके भीतर अवस्थित हो जाता है। वह मनुष्य गुणी, गम्भीर प्रभु के गुण गाता रहता है, जिससे उसकी बुद्धि स्थिर बनी रहती है और उसे धैर्य महसूस होता रहता है ॥ १ ॥ हे भाई ! प्रभु के नाम से रहित मनुष्य माया-मोह का विष खाकर आत्मिक मृत्यु को प्राप्त करते हैं, उनकी ज़िन्दगी व्यर्थ बीतती है और वे पुनःपुनः योनियों के चक्र में पड़े रहते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! नाम-रहित मनुष्य कितने ही प्रकार के वेश करते हैं (लेकिन) उनके भीतर

शान्ति नहीं होती। (ऐसा मनुष्य) बहुत अहंकार के कारण अपनी प्रतिष्ठा गँवा लेता है। हे भाई! वे मनुष्य सौभाग्यशाली हैं, जिन्होंने गुरु के उपदेश को स्वीकार लिया है और बहिर्मुखी भटकते मन को अन्तर्मुखी बना लिया है॥ २॥ हे भाई! अगम्य और अपार प्रभु का नाम-पदार्थ हृदय में ही अवस्थित होता है। गुरु की शिक्षा को आत्मसात् कर जो नाम-पदार्थ की खोज करते हैं, वे पृथ्वी की नौ निधियों के तुल्य हरि-नाम को अपने हृदय में प्राप्त कर लेते हैं। वे सदा प्रभु के प्रेम-रंग में रँगे रहते हैं और प्रभु-नाम में लीन रहते हैं॥ ३॥ लेकिन, हे भाई! सब कुछ प्रभु ही करता है, जीव के द्वारा कुछ नहीं होता। जिस पर प्रभु आप कृपा करता है, उसे अपने में मिला लेता है। (अपनी साधना के बल पर) न कोई मनुष्य उसके निकट है, न उससे दूर है। गुरु नानक का कथन है कि जो मनुष्य उसके नाम में रम जाता है, उसे वह प्रभु सर्व-व्यापक दृष्टिगत होता है॥ ४॥ ११॥

॥ बसंतु महला ३ ॥ गुरसबदी हरि चेति सुभाइ। राम नाम रसि रहै अघाइ। कोट कोटंतर के पाप जलि जाहि। जीवत मरहि हरि नामि समाहि॥ १॥ हरि की दाति हरि जीउ जाणै। गुर कै सबदि इहु मनु मउलिआ हरि गुण दाता नामु वखाणै॥ १॥ रहाउ॥ भगवै वेसि भ्रमि मुकति न होइ। बहु संजमि सांति न पावै कोइ। गुरमति नामु परापति होइ। वडभागी हरि पावै सोइ॥ २॥ कलि महि राम नामि वडिआई। गुर पूरे ते पाइआ जाई। नामि रते सदा सुखु पाई। बिनु नामै हउमै जलि जाई॥ ३॥ वडभागी हरि नामु बीचारा। छूटै राम नामि दुखु सारा। हिरदै वसिआ सु बाहरि पासारा। नानक जाणै सभु उपावणहारा॥४॥१२॥

हे भाई! गुरु-शिक्षा द्वारा प्रेमपूर्वक प्रभु को स्मरण कर मनुष्य हरि-नाम के आस्वादन से तृप्त रहता है। जो मनुष्य हरि-नाम में लीन रहते हैं, वे लौकिक कामकाज करते हुए भी माया-मोह से बचे रहते हैं और उनके जन्म-जन्मांतरों के पाप भी जल जाते हैं॥ १॥ हे भाई! प्रभु आप ही जानता है कि नाम की देन किसे देनी है! जो मनुष्य गुरु-ज्ञान के द्वारा प्रभु-गुणों की देन देनेवाला हरि-नाम उच्चरित करता है, उसका यह मन आत्मिक जीवन प्राप्त कर लेता है॥ १॥ रहाउ॥ हे भाई! भगवे वेष धारण करके भ्रमण करने से विकारों से छुटकारा नहीं मिल सकता। शरीर के द्वारा कठिन तप करने मात्र से भी कोई

मनुष्य आत्मिक शान्ति नहीं प्राप्त कर सकता। जिस मनुष्य ने गुरु-उपदेश का आश्रय लिया है, उसी को प्रभु-नाम की प्राप्ति होती है और वही सौभाग्यशाली मनुष्य परमात्मा को प्राप्त करता है॥ २॥ इस झंझटों से भरे विश्व में प्रभु-नाम के द्वारा ही प्रतिष्ठा मिलती है। यह नाम पूर्णगुरु द्वारा प्राप्त होता है। हरि-नाम में रँगकर मनुष्य सदा सुख पाता है। नाम के बिना मनुष्य अहंकार की अग्नि में (जलकर) अपना आत्मिक जीवन राख कर लेता है॥ ३॥ हे भाई! जो सौभाग्यशाली मनुष्य प्रभु के नाम को अपने मस्तिष्क में अवस्थित करता है, नाम के प्रभाव से उसका समस्त दुःख सूख जाता है। गुरु नानक का कथन है कि वह मनुष्य सर्वत्र सृजनहार प्रभु को विद्यमान मानता है। उसकी दृष्टि में प्रभु हृदय में भी विद्यमान है और बाहर भी वही प्रसरित है॥ ४॥ १२॥

॥ बसंतु महला ३ इक तुके ॥ तेरा कीआ किरम जंतु। देहि त जापी आदि मंतु॥ १॥ गुण आखि वीचारी मेरी माइ। हरि जपि हरि कै लगउ पाइ॥ १॥ रहाउ॥ गुरप्रसादि लागे नाम सुआदि। काहे जनमु गवावहु वैरि वादि॥ २॥ गुरि किरपा कीन्ही चूका अभिमानु। सहज भाइ पाइआ हरि नामु॥ ३॥ ऊतमु ऊचा सबद कामु। नानकु वखाणै साचु नामु॥ ४॥ १॥ १३॥

हे प्रभु! मैं तुम्हारे द्वारा उत्पादित तुच्छ जीव हूँ। यदि तुम आप प्रदान करो, तो ही मैं तुम्हारा नाम-मन्त्र जप सकता हूँ॥ १॥ (मेरी इच्छा है कि) मैं प्रभु के गुण उच्चरित कर मन में विद्यमान रखूँ और हरि-नाम जपकर प्रभु के चरणों में मन लगाए रहूँ॥ १॥ रहाउ॥ हे भाई! मनुष्य गुरु-कृपा द्वारा ही नाम-रस में लग सकता है। वैर-विरोध में अपनी ज़िन्दगी क्यों गँवा रहे हो?॥ २॥ जिस मनुष्य पर गुरु ने कृपा की उसके अन्तर्मन से अहंकार समाप्त हुआ (समझो)। उसने सहजावस्था देनेवाले प्रेम में लीन रहकर परमात्मा का नाम प्राप्त कर लिया॥ ३॥ हे भाई! प्रभु की गुणस्तुति की वाणी पढ़नेवाला काम सर्वोपरि है, (इसलिए) गुरु नानक सत्यस्वरूप प्रभु का नाम उच्चरित करता रहता है॥ ४॥ १॥ १३॥

॥ बसंतु महला ३॥ बनसपति मउली चड़िआ बसंतु। इहु मनु मउलिआ सतिगुरू संगि॥ १॥ तुम्ह साचु धिआवहु मुगध मना। तां सुखु पावहु मेरे मना॥ १॥ रहाउ॥ इतु मनि मउलिऐ भइआ अनंदु। अंम्रित फलु पाइआ नामु

गोबिंद ॥ २ ॥ एको एकु सभु आखि वखाणै । हुकमु बूझै तां एको जाणै ॥ ३ ॥ कहत नानकु हउमै कहै न कोइ । आखणु वेखणु सभु साहिब ते होइ ॥ ४ ॥ २ ॥ १४ ॥

हे भाई ! ज्यों-ज्यों वसन्त ऋतु चढ़ती है, त्यों-त्यों वनस्पति हरी-भरी हो जाती है; उसी प्रकार गुरु के सान्निध्य में रहकर यह मन हरा-भरा हो जाता है ॥ १ ॥ हे मूर्ख मन ! तू शाश्वत परमात्मा को स्मरण किया कर, तब ही तू आनन्द महसूस कर सकेगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! जिसने गोविन्द का नाम, आत्मिक जीवन देनेवाला नाम-फल प्राप्त कर लिया, उसका भीतर प्रफुल्लित हो गया और उसके भीतर आत्मिक आनन्द पैदा हो गया ॥ २ ॥ हे भाई ! यों तो प्रत्येक आदमी परमात्मा को सर्वव्यापक स्वीकारता है, लेकिन जब मनुष्य परमात्मा की रज़ा को समझता है, तब ही उस प्रभु से गहन सम्बन्ध होता है ॥ ३ ॥ हे भाई ! नानक का कथन है कि जीव 'मैं', 'मैं' नहीं करता (वही यह रहस्य समझता है कि) जीव वही कुछ देखता, कहता है जो उसे मालिक प्रभु की प्रेरणा होती है ॥ ४ ॥ २ ॥ १४ ॥

॥ बसंतु महला ३ ॥ सभि जुग तेरे कीते होए । सतिगुरु भेटै मति बुधि होए ॥ १ ॥ हरि जीउ आपे लैहु मिलाइ । गुर कै सबदि सच नामि समाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनि बसंतु हरे सभि लोइ । फलहि फुलीअहि राम नामि सुखु होइ ॥ २ ॥ सदा बसंतु गुर सबदु वीचारे । राम नामु राखै उरधारे ॥ ३ ॥ मनि बसंतु तनु मनु हरिआ होइ । नानक इहु तनु बिरखु राम नामु फलु पाए सोइ ॥ ४ ॥ ३ ॥ १५ ॥

हे प्रभु ! समस्त युग तुम्हारे द्वारा निर्मित हैं, (तुम्हारी कृपा से जिसे) गुरु प्राप्त होता है, उसके भीतर नाम जपनेवाली बुद्धि उत्पन्न होती है ॥ १ ॥ हे प्रभु ! तुम स्वयं ही अपने चरणों में जगह देते हो। (शरणागत मनुष्य) गुरु-शिक्षा द्वारा सत्यस्वरूप नाम में लीन रहता है ॥१॥ रहाउ ॥ हे भाई ! जिनके मन में सत्यस्वरूप प्रभु अवस्थित हो जाता है, वे इस जगत में आत्मिक जीवन से सम्पन्न हो जाते हैं। वे दुनिया में सफल रहते हैं और प्रभु-नाम के प्रभाव से उनके भीतर आत्मिक आनन्द बना रहता है ॥ २ ॥ हे भाई ! जो मनुष्य गुरु-शिक्षा को स्वीकारता है, प्रभु के नाम को हृदय में स्मरण करता रहता है, उसके भीतर हमेशा आत्मिक प्रसन्नता बनी रहती है ॥ ३ ॥ गुरु नानक का कथन है कि जिस मनुष्य के मन में सत्यस्वरूप हरि अवस्थित हो जाता है, उसका तन-मन आत्मिक जीवन वाला हो जाता है। यह शरीर (एक) वृक्ष है

इसलिए उस मनुष्य का यह शरीर रूपी वृक्ष हरि-नाम रूपी फल प्राप्त कर लेता है ॥ ४ ॥ ३ ॥ १५ ॥

॥ बसंतु महला ३ ॥ तिन्ह बसंतु जो हरि गुण गाइ । पूरै भागि हरि भगति कराइ ॥ १ ॥ इसु मन कउ बसंत की लगै न सोइ । इहु मनु जलिआ दूजै दोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इहु मनु धंधै बांधा करम कमाइ । माइआ मूठा सदा बिललाइ ॥ २ ॥ इहु मनु छूटै जां सतिगुरु भेटै । जम काल की फिरि आवै न फेटै ॥ ३ ॥ इहु मनु छूटा गुरि लीआ छडाइ । नानक माइआ मोहु सबदि जलाइ ॥ ४ ॥ ४ ॥ १६ ॥

हे भाई ! जो मनुष्य प्रभु का गुणगान करते हैं, उनके भीतर आत्मिक विकास बना रहता है । (लेकिन) परमात्मा सौभाग्यवश ही जीव से अपनी भक्ति कराता है ॥ १ ॥ हे भाई ! जिसका मन माया-मोह में, अपने-पराए के चक्र में फँसकर आत्मिक मृत्यु प्राप्त कर लेता है, उसके मन को आत्मिक प्रफुल्लता का संस्पर्श नहीं होता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसका मन माया के धन्धे में आबद्ध रहता है और ऐसी स्थिति में ही कर्म करता है, उसके आत्मिक जीवन को माया-मोह लूट लेता है और वह सदा दु:खी रहता है ॥ २ ॥ हे भाई ! जब मनुष्य को गुरु मिल जाता है, तब मनुष्य का यह मन माया-मोह से बच निकलता है । तदनन्तर वह आत्मिक मृत्यु की मार के वश में नहीं आता ॥ ३ ॥ लेकिन हे भाई ! जिस मनुष्य को गुरु ने माया से मुक्त करा लिया है, उसी का यह मन माया-मोह से बचा है । गुरु नानक का कथन है कि वह मनुष्य माया-मोह को गुरु के ज्ञान के द्वारा जला देता है ॥ ४ ॥ ४ ॥ १६ ॥

॥ बसंतु महला ३ ॥ बसंतु चड़िआ फूली बनराइ । एहि जीअ जंत फूलहि हरि चितु लाइ ॥ १ ॥ इन बिधि इहु मनु हरिआ होइ । हरि हरि नामु जपै दिनु राती गुरमुखि हउमै कढै धोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतिगुर बाणी सबदु सुणाए । इहु जगु हरिआ सतिगुर भाए ॥ २ ॥ फल फूल लागे जां आपे लाए । मूलि लगै तां सतिगुरु पाए ॥ ३ ॥ आपि बसंतु जगतु सभु वाड़ी । नानक पूरै भागि भगति निराली ॥४॥५॥१७॥

हे भाई ! जब वसन्त का मौसम शुरू होता है, तब समस्त वनस्पति खिल पड़ती है । उसी प्रकार ये समस्त जीव परमात्म-लीन होकर आत्मिक जीवन द्वारा प्रसन्न हो जाते हैं ॥ १ ॥ हे भाई ! जो मनुष्य गुरु की शरण लेकर अपने भीतर से अहंकार धोकर निकाल देता है और

रात-दिन प्रभु का नाम जपता है, उसका तन-मन इस प्रकार आत्मिक जीवन से परिपूरित हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! जब यह विश्व गुरु की शिक्षा का श्रवण करता है और गुरु के प्रेम में लीन होता है, तब यह आत्मिक जीवन द्वारा हरा-भरा हो जाता है ॥ २ ॥ हे भाई ! मनुष्य-जीवन के वृक्ष पर आत्मिक गुणों के फल तब लगते हैं, जब प्रभु स्वयं लगाता है। जब मनुष्य को गुरु मिलता है, तब मनुष्य सृजनहार प्रभु में मन लगाता है ॥ ३ ॥ हे भाई ! यह सारा जगत प्रभु की वाटिका है, इसे हरा-भरा रखनेवाला वसन्त भी वह आप ही है। गुरु नानक का कथन है कि निर्लिप्त करनेवाली हरि-भक्ति सौभाग्यवश ही मिलती है ॥ ४ ॥ ५ ॥ १७ ॥

बसंतु हिंडोल महला ३ घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ गुर की बाणी विटहु वारिआ भाई गुर सबद विटहु बलि जाई। गुरु सालाही सद अपणा भाई गुर चरणी चितु लाई ॥ १ ॥ मेरे मन राम नामि चितु लाइ। मनु तनु तेरा हरिआ होवै इकु हरि नामा फलु पाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरि राखे से उबरे भाई हरि रसु अंम्रितु पीआइ। विचहु हउमै दुखु उठि गइआ भाई सुखु वुठा मनि आइ ॥ २ ॥ धुरि आपे जिन्हा नो बखसिओनु भाई सबदे लइअनु मिलाइ। धूड़ि तिन्हा की अघुलीऐ भाई सतसंगति मेलि मिलाइ ॥ ३ ॥ आपि कराए करे आपि भाई जिनि हरिआ कीआ सभु कोइ। नानक मनि तनि सुखु सद वसै भाई सबदि मिलावा होइ ॥ ४ ॥ १ ॥ १८ ॥ १२ ॥ १८ ॥ ३० ॥

हे भाई ! मैं गुरु की वाणी पर, गुरु की शिक्षा पर बलिहार हूँ, मैं हमेशा अपने गुरु की सराहना करता हूँ, मैं अपने गुरु के चरणों में मन लगाता हूँ ॥ १ ॥ हे मेरे मन ! प्रभु के नाम में लगाव रख। हे भाई ! प्रभु का नाम-फल प्राप्त कर तुम्हारा मन-तन प्रफुल्लित रहेगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! गुरु ने जिन मनुष्यों की रक्षा की, वे बच गए (क्योंकि) गुरु ने उन्हें आत्मिक जीवन देनेवाला नाम-रस पिलाकर बचा लिया। उनके भीतर अहंकार का दुःख दूर हो गया और उनके मन में आनन्द आ बसा ॥ २ ॥ हे भाई ! प्रभु ने प्रारम्भ से जिन पर कृपा की, उन्हें प्रभु ने गुरु-शिक्षा का अनुसर्ता बना दिया। उनकी चरण-धूल के प्रभाव से माया से निर्लिप्त हो जाते हैं। (जिन पर प्रभु कृपा

करता है उन्हें) सत्संगति में मिलाकर अपने चरणों में जगह देता है ॥ ३ ॥ हे भाई ! जिस प्रभु ने हर एक जीव को प्राण दिए हैं, वह प्रभु आप ही सबसे कराता है और आप ही सब कुछ करता है। गुरु नानक का कथन है कि गुरु-शिक्षा द्वारा जिस मनुष्य का प्रभु से मिलाप हो जाता है, उसके तन-मन में हमेशा आनन्द बना रहता है ॥ ४ ॥ १ ॥ १८ ॥ १२ ॥ १८॥ ३० ॥

रागु बसंतु महला ४ घरु १ इक तुके

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ जिउ पसरी सूरज किरणि जोति। तिउ घटि घटि रमईआ ओति पोति ॥ १ ॥ ऐको हरि रविआ स्रब थाइ। गुर सबदी मिलीऐ मेरी माइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ घटि घटि अंतरि एको हरि सोइ। गुरि मिलिऐ इकु प्रगटु होइ ॥ २ ॥ एको एकु रहिआ भरपूरि। साकत नर लोभी जाणहि दूरि ॥ ३ ॥ ऐको एकु वरतै हरि लोइ। नानक हरि एको करे सु होइ ॥ ४ ॥ १ ॥

हे मेरी माँ ! जिस प्रकार सूर्य की किरणों का प्रकाश सर्वत्र प्रकाशित है, उसी प्रकार सुन्दर राम प्रत्येक शरीर में ओत-प्रोत है ॥ १ ॥ एक प्रभु ही सर्वत्र अवस्थित है, (लेकिन) गुरु की शिक्षा द्वारा ही उसे मिला जा सकता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वह एक प्रभु ही प्रत्येक शरीर में अवस्थित है। यदि गुरु से भेंट हो जाए, तो वह प्रभु प्रत्यक्ष दृष्टिगत हो जाता है ॥ २ ॥ एक प्रभु ही सर्वत्र कण-कण में अवस्थित है, लेकिन प्रभु से बिछुड़े हुए माया के लोभ-ग्रस्त जीव समझते हैं कि वह कहीं दूर विद्यमान है ॥ ३ ॥ गुरु नानक का कथन है कि एक प्रभु ही समस्त जगत में विद्यमान है। वह सर्वव्यापक प्रभु जो करता है, वही होता है ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ बसंतु महला ४ ॥ रैणि दिनसु दुइ सदे पए। मन हरि सिमरहु अंति सदा रखि लए ॥ १ ॥ हरि हरि चेति सदा मन मेरे। सभु आलसु दूख भंजि प्रभु पाइआ गुरमति गावहु गुण प्रभ केरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनमुख फिरि फिरि हउमै मुए। कालि दैति संघारे जमपुरि गए ॥ २ ॥ गुरमुखि हरि हरि हरि लिव लागे। जनम मरण दोऊ दुख भागे ॥ ३ ॥ भगत जना कउ हरि किरपा धारी। गुरु नानकु तुठा मिलिआ बनवारी ॥ ४ ॥ २ ॥

हे मेरे मन ! रात और दिन, दोनों मृत्यु का निमन्त्रण दे रहे हैं। हे मन ! प्रभु का नाम स्मरण किया कर, यही अन्तिम समय में सदा रक्षा करता है ॥ १ ॥ हे मन ! सदा प्रभु को स्मरण किया कर। गुरु की शिक्षा स्वीकार करके प्रभु का गुणगान किया कर और सारा आलस्य दूर कर, अपने दुःख नष्ट कर प्रभु का मिलाप करो ॥१॥रहाउ॥ हे भाई ! स्वेच्छाचारी मनुष्य बार-बार अहंत्व के कारण आत्मिक मृत्यु पाते रहते हैं। जब मृत्यु रूपी दैत्य ने उन्हें समाप्त कर दिया, तब ही वे यमों के वश में हो गए ॥ २ ॥ हे भाई ! गुरु के सान्निध्य में रहनेवाले मनुष्यों के भीतर प्रभु के नाम का लगाव पैदा होता है और उनके जन्म-मरण के दोनों दुःख विनष्ट हो जाते हैं ॥ ३ ॥ हे भाई ! प्रभु अपने भक्तों पर स्वयं कृपा करता है। हे भाई ! जिस मनुष्य पर गुरु नानक दयालु हुए, उसे प्रभु की प्राप्ति हो जाती है ॥ ४ ॥ २ ॥

बसंतु हिंडोल महला ४ घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ राम नामु रतन कोठड़ी गड़ मंदरि एक लुकानी। सतिगुरु मिलै त खोजीऐ मिलि जोती जोति समानी ॥ १ ॥ माधो साधू जन देहु मिलाइ। देखत दरसु पाप सभि नासहि पवित्र परमपदु पाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पंच चोर मिलि लागे नगरीआ राम नाम धनु हिरिआ। गुरमति खोज परे तब पकरे धनु साबतु रासि उबरिआ ॥ २ ॥ पाखंड भरम उपाव करि थाके रिद अंतरि माइआ माइआ। साधू पुरखु पुरखपति पाइआ अगिआन अंधेरु गवाइआ ॥ ३ ॥ जगंनाथ जगदीस गुसाई करि किरपा साधु मिलावै। नानक सांति होवै मन अंतरि नित हिरदै हरि गुण गावै ॥४॥१॥३॥

हे भाई ! प्रभु का नाम श्रेष्ठ आत्मिक गुणों का सुन्दर भण्डार है। यह भण्डार शरीर-क़िले में, शरीर-मन्दिर में गुप्त पड़ा होता है, गुरु मिलने पर ही इसकी छानबीन की जा सकती है। गुरु को मिलकर मनुष्य की आत्मा प्रभु की ज्योति में लीन हो जाती है ॥ १ ॥ हे माया-पति प्रभु ! मुझे गुरु से मिलाइएगा। गुरु का दर्शन करने से सारे पाप नष्ट हो जाते हैं। (गुरु से भेंट करनेवाला) पवित्र और सर्वोच्च आत्मिक स्थान प्राप्त कर लेता है॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! शरीर-नगर में पाँच चोर लगे रहते हैं और प्रभु का नाम-धन चुरा लेते हैं। जब कोई मनुष्य गुरु की शिक्षा-अनुसार इनका चिह्न प्राप्त करता है, तब ये पकड़े

करता है उन्हें) सत्संगति में मिलाकर अपने चरणों में जगह देता है ॥ ३ ॥ हे भाई ! जिस प्रभु ने हर एक जीव को प्राण दिए हैं, वह प्रभु आप ही सबसे कराता है और आप ही सब कुछ करता है। गुरु नानक का कथन है कि गुरु-शिक्षा द्वारा जिस मनुष्य का प्रभु से मिलाप हो जाता है, उसके तन-मन में हमेशा आनन्द बना रहता है ॥ ४ ॥ १ ॥ १८ ॥ १२ ॥ १८॥ ३० ॥

रागु बसंतु महला ४ घरु १ इक तुके

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ जिउ पसरी सूरज किरणि जोति । तिउ घटि घटि रमईआ ओति पोति ॥ १ ॥ ऐको हरि रविआ स्रब थाइ । गुर सबदी मिलीऐ मेरी माइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ घटि घटि अंतरि एको हरि सोइ । गुरि मिलिऐ इकु प्रगटु होइ ॥ २ ॥ एको एकु रहिआ भरपूरि । साकत नर लोभी जाणहि दूरि ॥ ३ ॥ ऐको एकु वरतै हरि लोइ । नानक हरि एको करे सु होइ ॥ ४ ॥ १ ॥

हे मेरी माँ ! जिस प्रकार सूर्य की किरणों का प्रकाश सर्वत्र प्रकाशित है, उसी प्रकार सुन्दर राम प्रत्येक शरीर में ओत-प्रोत है ॥ १ ॥ एक प्रभु ही सर्वत्र अवस्थित है, (लेकिन) गुरु की शिक्षा द्वारा ही उसे मिला जा सकता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वह एक प्रभु ही प्रत्येक शरीर में अवस्थित है। यदि गुरु से भेंट हो जाए, तो वह प्रभु प्रत्यक्ष दृष्टिगत हो जाता है ॥ २ ॥ एक प्रभु ही सर्वत्र कण-कण में अवस्थित है, लेकिन प्रभु से बिछुड़े हुए माया के लोभ-ग्रस्त जीव समझते हैं कि वह कहीं दूर विद्यमान है ॥ ३ ॥ गुरु नानक का कथन है कि एक प्रभु ही समस्त जगत में विद्यमान है। वह सर्वव्यापक प्रभु जो करता है, वही होता है ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ बसंतु महला ४ ॥ रैणि दिनसु दुइ सदे पए । मन हरि सिमरहु अंति सदा रखि लए ॥ १ ॥ हरि हरि चेति सदा मन मेरे । सभु आलसु दूख भंजि प्रभु पाइआ गुरमति गावहु गुण प्रभ केरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनमुख फिरि फिरि हउमै मुए । कालि दैति संघारे जमपुरि गए ॥ २ ॥ गुरमुखि हरि हरि हरि लिव लागे । जनम मरण दोऊ दुख भागे ॥ ३ ॥ भगत जना कउ हरि किरपा धारी । गुरु नानकु तुठा मिलिआ बनवारी ॥ ४ ॥ २ ॥

हे मेरे मन ! रात और दिन, दोनों मृत्यु का निमन्त्रण दे रहे हैं। हे मन ! प्रभु का नाम स्मरण किया कर, यही अन्तिम समय में सदा रक्षा करता है ।। १ ।। हे मन ! सदा प्रभु को स्मरण किया कर। गुरु की शिक्षा स्वीकार करके प्रभु का गुणगान किया कर और सारा आलस्य दूर कर, अपने दुःख नष्ट कर प्रभु का मिलाप करो ।।१।।रहाउ।। हे भाई ! स्वेच्छाचारी मनुष्य बार-बार अहंत्व के कारण आत्मिक मृत्यु पाते रहते हैं। जब मृत्यु रूपी दैत्य ने उन्हें समाप्त कर दिया, तब ही वे यमों के वश में हो गए ।। २ ।। हे भाई ! गुरु के सान्निध्य में रहनेवाले मनुष्यों के भीतर प्रभु के नाम का लगाव पैदा होता है और उनके जन्म-मरण के दोनों दुःख विनष्ट हो जाते हैं ।। ३ ।। हे भाई ! प्रभु अपने भक्तों पर स्वयं कृपा करता है। हे भाई ! जिस मनुष्य पर गुरु नानक दयालु हुए, उसे प्रभु की प्राप्ति हो जाती है ।। ४ ।। २ ।।

बसंतु हिंडोल महला ४ घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। राम नामु रतन कोठड़ी गड़ मंदरि एक लुकानी। सतिगुरु मिलै त खोजीऐ मिलि जोती जोति समानी ।। १ ।। माधो साधू जन देहु मिलाइ। देखत दरसु पाप सभि नासहि पवित्र परमपदु पाइ ।। १ ।। रहाउ ।। पंच चोर मिलि लागे नगरीआ राम नाम धनु हिरिआ। गुरमति खोज परे तब पकरे धनु साबतु रासि उबरिआ ।। २ ।। पाखंड भरम उपाव करि थाके रिद अंतरि माइआ माइआ। साधू पुरखु पुरखपति पाइआ अगिआन अंधेरु गवाइआ ।। ३ ।। जगंनाथ जगदीस गुसाई करि किरपा साधु मिलावै। नानक सांति होवै मन अंतरि नित हिरदै हरि गुण गावै ।।४।।१।।३।।

हे भाई ! प्रभु का नाम श्रेष्ठ आत्मिक गुणों का सुन्दर भण्डार है। यह भण्डार शरीर-क़िले में, शरीर-मन्दिर में गुप्त पड़ा होता है, गुरु मिलने पर ही इसकी छानबीन की जा सकती है। गुरु को मिलकर मनुष्य की आत्मा प्रभु की ज्योति में लीन हो जाती है ।। १ ।। हे माया-पति प्रभु ! मुझे गुरु से मिलाइएगा। गुरु का दर्शन करने से सारे पाप नष्ट हो जाते हैं। (गुरु से भेंट करनेवाला) पवित्र और सर्वोच्च आत्मिक स्थान प्राप्त कर लेता है ।। १ ।। रहाउ ।। हे भाई ! शरीर-नगर में पाँच चोर लगे रहते हैं और प्रभु का नाम-धन चुरा लेते हैं। जब कोई मनुष्य गुरु की शिक्षा-अनुसार इनका चिह्न प्राप्त करता है, तब ये पकड़े

जाते हैं और उस मनुष्य का नाम-धन बच जाता है ।। २ ।। हे भाई ! धार्मिक आडम्बर और भ्रमों के अन्य तरीक़े कर-करके मनुष्य थक जाते हैं, लेकिन उनके हृदय में सदा माया (का प्रभाव रहता है) । (लेकिन) जिस मनुष्य को उत्तम पुरुष गुरु की प्राप्ति हो जाती है, वह मनुष्य अपने भीतर से आत्मिक जीवन के विलगाव से उपजे अँधेरे को दूर कर लेता है ।। ३ ।। गुरु नानक का कथन है कि जगत का स्वामी प्रभु कृपा करके जिस मनुष्य को गुरु से मिलाता है, उस मनुष्य के भीतर सहजावस्था बनी रहती है और वह हमेशा हृदय में प्रभु का गुणगान करता रहता है ।। ४ ।। १ ।। ३ ।।

।। बसंतु महला ४ हिंडोल ।। तुम्ह वड पुरख वड अगम गुसाई हम कीरे किरम तुमनछे । हरि दीन दइआल करहु प्रभ किरपा गुर सतिगुर चरण हम बनछे ।। १ ।। गोबिद जीउ सतसंगति मेलि करि क्रिपछे । जनम जनम के किलविख मलु भरिआ मिलि संगति करि प्रभ हनछे ।। १ ।। रहाउ ।। तुम्हरा जनु जाति अविजाता हरि जपिओ पतित पवीछे । हरि कीओ सगल भवन ते ऊपरि हरि सोभा हरि प्रभ दिनछे ।। २ ।। जाति अजाति कोई प्रभ धिआवै सभि पूरे मानस तिनछे । से धंनि वडे वड पूरे हरि जन जिन्ह हरि धारिओ हरि उरछे ।। ३ ।। हम ढींढे ढीम बहुतु अति भारी हरि धारि क्रिपा प्रभ मिलछे । जन नानक गुरु पाइआ हरि तूठे हम कीए पतित पवीछे ।। ४ ।। २ ।। ४ ।।

हे प्रभु ! तुम अपहुँच हो, जगत के मालिक हो और सर्वोपरि हो । हम तुम्हारे द्वारा उत्पादित तुच्छ जीव हैं । हे दीनदयालु हरि ! कृपा कीजिए । मैं सतिगुरु के चरणों में जगह पाना चाहता हूँ ।। १ ।। हे गोविन्द प्रभु ! कृपा करो । मुझे सत्संगति प्रदान करो । मैं अनेक जन्मों के पापों के मैल में लिपटा हूँ । हे प्रभु ! मुझे सत्संगति में मिलाकर पवित्र जीवन वाला बना ।। १ ।। रहाउ ।। हे हरि ! तुम्हारा उच्च या निम्न किसी भी जाति का हो, लेकिन जिसने भी विकारों से मुक्ति दिलानेवाले तुम्हारे नाम को जपा है, तुमने उसे समस्त जगत के जीवों से ऊँचा कर दिया । हे प्रभु ! तुमने उसे लोक-परलोक में महानता प्रदान की ।। २ ।। कोई मनुष्य उच्च जाति से हो या निम्न जाति से, (लेकिन) जो मनुष्य प्रभु का नाम-स्मरण करते हैं, उनके मनोरथ पूर्ण हो जाते हैं । हे भाई ! प्रभु के जिन सेवकों ने हरि-प्रभु को अपने भीतर अवस्थित कर लिया, वे सौभाग्यशाला हैं, सर्वोपरि हैं और पूर्णपुरुष

हैं ॥ ३ ॥ हे हरि ! हम नीच जीव हैं, हम मूर्ख हैं और पापों के भार से दबे हैं। हे प्रभु ! कृपा करके दर्शन दीजिएगा। दास नानक का कथन है कि प्रभु के दयालु होने पर हमें गुरु मिला है। गुरु ने हमें विकारों से मुक्त कर पवित्र बना लिया ॥ ४ ॥ २ ॥ ४ ॥

॥ बसंतु हिंडोल महला ४ ॥ मेरा इकु खिनु मनूआ रहि न सकै नित हरि हरि नाम रसि गीधे। जिउ बारिकु रसकि परिओ थनि माता थनि काढे बिलल बिलीधे ॥ १ ॥ गोबिंद जीउ मेरे मन तन नाम हरि बीधे। वडै भागि गुरु सतिगुरु पाइआ विचि काइआ नगर हरि सोधे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जन के सास सास है जेते हरि बिरहि प्रभू हरि बीधे। जिउ जल कमल प्रीति अति भारी बिनु जल देखे सुकलीधे ॥ २ ॥ जन जपिओ नामु निरंजनु नरहरि उपदेसि गुरू हरि प्रीधे। जनम जनम की हउमै मलु निकसी हरि अंम्रिति हरि जलि नीधे ॥ ३ ॥ हमरे करम न बिचरहु ठाकुर तुम्ह पैज रखहु अपनीधे। हरि भावै सुणि बिनउ बेनती जन नानक सरणि पवीधे ॥ ४ ॥ ३ ॥ ५ ॥

हे भाई ! मेरा मन हमेशा प्रभु के नामास्वादन में मस्त रहता है। अब यह मन क्षण भर के लिए आस्वादन से अलग नहीं रह सकता। जैसे शिशु अत्यन्त प्रेम से माँ के स्तनों का पान करता है, लेकिन यदि स्तन उसके मुँह से निकाल लें तो वह रोने लगता है ॥ १ ॥ हे गोविन्द हरि ! मेरा तन, मन सदैव तुम्हारे नामास्वादन में लगे हैं। सौभाग्यवश मुझे सतिगुरु की प्राप्ति हुई है। (अब) मैंने शरीर-नगर में ही प्रभु को पा लिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! प्रभु-भक्त के समस्त श्वास परमात्मा के विरह में बँधे होते हैं। जैसे कमलपुष्प और जल का अत्यन्त गहरा सम्बन्ध होता है। पानी का दर्शन किए बिना कमलपुष्प सूख जाता है (भक्तजनों की स्थिति ऐसी ही होती है) ॥ २ ॥ हे भाई ! परमात्मा के सेवक प्रभु का पवित्र नाम जपते हैं। गुरु ने अपनी शिक्षा से उन्हें प्रभु स्पष्ट दिखा दिया है। (नाम-स्मरण से) उनके जन्म-जन्मान्तरों के अहंत्व का मैल दूर हो जाता है। वे आत्मिक जीवन देनेवाले हरिनाम-जल में स्नान करते रहते हैं ॥ ३ ॥ हे मालिक प्रभु ! हम जीवों के कर्मों पर विचार न करें। अपने सेवक की प्रतिष्ठा तुम्हें स्वयं निभानी है। गुरु नानक का कथन है (ऐसा कहो) कि जैसा तुम्हें उपयुक्त लगे मेरी प्रार्थना सुनिए। मैं तुम्हारा शरणागत हूँ ॥ ४ ॥ ३ ॥ ५ ॥

॥ बसंतु हिंडोल महला ४ ॥ मनु खिनु खिनु भरमि

भरमि बहु धावै तिलु घरि नही वासा पाईऐ। गुरि अंकसु सबदु दारू सिरि धारिओ घरि मंदरि आणि वसाईऐ ॥ १ ॥ गोबिंद जीउ सतसंगति मेलि हरि धिआईऐ। हउमै रोगु गइआ सुखु पाइआ हरि सहजि समाधि लगाईऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ घरि रतन लाल बहु माणक लादे मनु भ्रमिआ लहि न सकाईऐ। जिउ ओडा कूपु गुहज खिन काढै तिउ सतिगुरि वसतु लहाईऐ ॥ २ ॥ जिन ऐसा सतिगुरु साधु न पाइआ ते ध्रिगु ध्रिगु नर जीवाईऐ। जनमु पदारथु पुंनि फलु पाइआ कउडी बदलै जाईऐ ॥ ३ ॥ मधुसूदन हरि धारि प्रभ किरपा करि किरपा गुरू मिलाईऐ। जन नानक निरबाण पदु पाइआ मिलि साधू हरि गुण गाईऐ ॥ ४ ॥ ४ ॥ ६ ॥

हे भाई ! मन हर एक क्षण भटक-भटककर बहुत दौड़ता फिरता है, यह तनिक मात्र भी अपने शरीर-घर में नहीं टिकता। इसके लिए गुरु-शिक्षा औषध है। (नियन्त्रित करने के लिए) गुरु ने जिस मनुष्य के सिर पर अपना शब्द रूपी अंकुश रख दिया, उसके मन को हृदय-घर में लाकर टिका दिया ॥ १ ॥ हे गोविन्दजी ! मुझे सत्संगति दीजिए। (तभी) तुम्हारा नाम स्मरण किया जा सकता है। हे हरि ! जो मनुष्य आत्मिक स्थिरता में सुरति लगाता है, उसके अहंत्व का रोग दूर हो जाता है और वह आत्मिक आनन्द प्राप्त करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! हृदय-घर में अनेक रत्न-मोती भरे पड़े हैं, लेकिन मन माया की एषणा में भटकता फिरता है, इसलिए उन्हें प्राप्त नहीं किया जा सकता। हे भाई ! जिस प्रकार कोई 'ओडा' (पृथ्वी के अन्दर के भेद को जाननेवाला) पृथ्वी में दबा हुआ कुआँ तुरन्त प्राप्त कर लेता है, उसी प्रकार भीतर अवस्थित नाम-पदार्थ गुरु के द्वारा प्राप्त हो जाता है ॥ २ ॥ हे भाई ! जिन मनुष्यों को संयमित मन वाला ऐसा गुरु नहीं मिला, उन मनुष्यों का जीना धिक्कार योग्य ही होता है। हे भाई ! बहुमूल्य जन्म पूर्वकृत कर्मों के फलस्वरूप प्राप्त किया था, लेकिन अब वह जन्म कौड़ी के तुल्य बीत रहा है ॥ ३ ॥ हे दुष्टदमन हरि ! कृपा कीजिए। मुझे गुरु से मिलाइए। दास नानक का कथन है कि जो मनुष्य गुरु को मिलकर प्रभु के गुण गाता है, वह मनुष्य ऐसी आत्मिक अवस्था प्राप्त कर लेता है, जहाँ कोई वासना स्पर्श नहीं कर सकती ॥ ४ ॥ ४ ॥ ६ ॥

॥ बसंतु हिंडोल महला ४ ॥ आवण जाणु भइआ दुखु बिखिआ देह मनमुख सुंञी सुंञु। राम नामु खिनु पलु नही

चेतिआ जमि पकरे कालि सलुंञु ॥ १ ॥ गोबिंद जीउ बिखु हउमै ममता मुंञु । सत संगति गुर की हरि पिआरी मिलि संगति हरि रसु भुंञु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतसंगति साध दइआ करि मेलहु सरणागति साधू पंञु । हम डुबदे पाथर काढि लेहु प्रभ तुम्ह दीनदइआल दुख भंञु ॥ २ ॥ हरि उसतति धारहु रिद अंतरि सुआमी सतसंगति मिलि बुधि लंञु । हरि नामै हम प्रीति लगानी हम हरि विटहु घुमि वंञु ॥ ३ ॥ जन के पूरि मनोरथ हरि प्रभ हरि नामु देवहु हरि लंञु । जन नानक मनि तनि अनदु भइआ है गुरि मंत्रु दीओ हरि भंञु ॥ ४ ॥ ५ ॥ ७ ॥ १२ ॥ १८ ॥ ७ ॥ ३७ ॥

हे भाई ! माया के कारण स्वेच्छाचारी बने मनुष्यों का जन्म-मरण का चक्र बना रहता है, उन्हें क्लेश रहता है, उनका शरीर नाम-रहित रहता है, नाम के बिना उनके भीतर रिक्तता बनी रहती है। वह मनुष्य प्रभु का नाम एक क्षण के लिए भी स्मरण नहीं करते। आत्मिक मृत्यु उन्हें प्रतिपल सिर से पकड़े रहती है ॥ १ ॥ हे गोविन्द प्रभु ! अहंत्व और ममत्व का विष दूर कीजिए। हे हरि ! सत्संगति तुम्हें और गुरु दोनों को प्यारी है। मैं सत्संगति में मिलकर तुम्हारे नाम का रस-आस्वादन करता रहूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु ! कृपा करके गुरु की सत्संगति में बिठाए रखें। मैं गुरु का शरणागत रहूँ। हे प्रभु ! हम पत्थर हुए जीवों को, जो डूब रहे हैं, निकाल लीजिए। हे प्रभु ! तुम दीनदयालु हो, तुम दुःखभंजन हो ॥ २ ॥ हे हरि ! मेरे हृदय में अपनी गुणस्तुति टिकाएँ, ताकि तुम्हारी सत्संगति में मिलकर मेरी बुद्धि प्रकाशमान हो जाए। हे भाई ! परमात्मा के नाम में मेरा लगाव हो गया है, अब मैं परमात्मा पर बलिहारी जाता हूँ ॥ ३ ॥ हे हरि प्रभु ! मुझ सेवक के मनोरथ पूर्ण करें; मुझे अपना नाम दीजिए, जो प्रकाशतुल्य है। दास नानक का कथन है कि जिस मनुष्य को गुरु ने प्रभु का नाम-मन्त्र प्रदान किया है। उसका मन, तन आत्मिक रूप से विकसित हो गया ॥ ४ ॥ ५ ॥ ७ ॥ १२ ॥ १८ ॥ ७ ॥ ३७ ॥

बसंतु महला ५ घरु १ दुतुके

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ गुरु सेवउ करि नमसकार । आजु हमारै मंगलचार । आजु हमारै महा अनंद । चित लथी भेटे गोबिंद ॥ १ ॥ आजु हमारै ग्रिहि बसंत । गुन गाए प्रभ

तुम्ह बेअंत ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आजु हमारै बने फाग । प्रभ संगी मिलि खेलन लाग । होली कीनी संत सेव । रंगु लागा अति लाल देव ॥ २ ॥ मनु तनु मउलिओ अति अनूप । सूकै नाही छाव धूप । सगली रुती हरिआ होइ । सद बसंत गुर मिले देव ॥ ३ ॥ बिरखु जमिओ है पारजात । फूल लगे फल रतन भांति । त्रिपति अघाने हरि गुणह गाइ । जन नानक हरि हरि हरि धिआइ ॥ ४ ॥ १ ॥

हे भाई ! मुझे गोविन्द प्रभु मिल गए हैं, मेरी प्रत्येक चिन्ता दूर हो गई है, अब मेरे हृदय में अत्यन्त आनन्द उपजा है। अब मेरे भीतर खुशियाँ ही खुशियाँ हैं। (इसलिए) मैं नतमस्तक हो गुरु की सेवा करता हूँ ॥ १ ॥ हे अनन्त प्रभु ! जबसे मैंने तुम्हारी गुणस्तुति के गीत गाने शुरू किए हैं, तबसे मेरे हृदय-घर में आत्मिक आनन्द बना रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! प्रभु की गुणस्तुति से मेरे भीतर फाल्गुन की होली बन पड़ी है। प्रभु के सन्तजन सत्संगति में मिलकर होली खेलने लगे हैं। मैंने सन्तों की सेवा को होली के रूप में स्वीकार लिया है, (इसलिए) मेरे भीतर ईश्वर-प्रेम का गहरा रंग चढ़ गया है ॥ २ ॥ हे प्रभु ! मेरा तन, मन भली प्रकार से प्रफुल्लित हो गया है। अब सुख हों, चाहे दुःख हों, मेरे भीतर आत्मिक आनन्द की ताजगी कभी समाप्त नहीं होती। अब यह हमेशा आत्मिक जीवन से परिपूरित रहता है। मुझे गुरुदेव मिल गए हैं और मेरे भीतर सदैव आत्मिक आनन्द बना रहता है ॥ ३ ॥ हे भाई ! मेरे भीतर पारिजात वृक्ष अंकुरित हो गया है, जिस पर तरह-तरह के फल-फूल लगे हैं। दास नानक का कथन है कि सदा प्रभु का नाम-स्मरण, सदा हरि का गुणगान कर पूर्णतः तृप्त हो जाते हैं ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ बसंतु महला ५ ॥ हटवाणी धन माल हाटु कीतु । जूआरी जूए माहि चीतु । अमली जीवै अमलु खाइ । तिउ हरि जनु जीवै हरि धिआइ ॥ १ ॥ अपनै रंगि सभु को रचै । जितु प्रभि लाइआ तितु तितु लगै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेघ समै मोर निरतिकार । चंद देखि बिगसहि कउलार । माता बारिक देखि अनंद । तिउ हरि जन जीवहि जपि गोबिंद ॥ २ ॥ सिंघ रुचै सद भोजनु मास । रणु देखि सूरे चित उलास । किरपन कउ अति धन पिआरु । हरि जन कउ हरि हरि अधारु ॥ ३ ॥ सरब रंग इक रंग माहि । सरब सुखा सुख

हरि कै नाइ। तिसहि परापति इहु निधानु। नानक गुरु जिसु करे दानु ॥ ४ ॥ २ ॥

हे भाई ! जैसे दूकानदार अपने इच्छित सामान की दुकान चलाता है, जैसे जुआरिए का मन जूए में लीन रहता है, जैसे कोई अफ़ीमची अफ़ीम खाकर सुख महसूसता है, उसी प्रकार प्रभु का भक्त नाम-स्मरण कर आत्मिक जीवन प्राप्त करता है ॥ १ ॥ हे भाई ! प्रत्येक जीव मनपसन्द आस्वादन में लगा रहता है; (लेकिन) प्रभु ने ही उसे जिस ओर प्रवृत्त किया है, वह उसी ओर प्रवृत्त रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! जिस प्रकार गरजती हुई घटा देखकर मोर नृत्य करते हैं, चाँद को देखकर कमलिनी प्रसन्न होती हैं, बच्चे को देखकर माँ ख़ुश होती है, उसी प्रकार प्रभु का नाम जपकर भक्तजन आत्मिक रूप से उल्लसित होते हैं ॥ २ ॥ हे भाई ! जैसे मांस का भोजन मिलने पर सिंह प्रसन्न होता है, युद्ध देखकर शूरवीर का हृदय जोश में आता है, कंजूस को धन का बहुत अधिक लोभ होता है, उसी प्रकार प्रभु-भक्त को प्रभु के नाम का अवलम्ब होता है ॥ ३ ॥ लेकिन, हे भाई ! तमाम लौकिक आस्वादन प्रभु के नामास्वादन में ही आ जाते हैं, (अर्थात्) बड़े से बड़े सुख प्रभु-नाम में समाहित हैं। गुरु नानक का कथन है कि यह नाम-ख़ज़ाना उसे प्राप्त होता है, जिसे गुरु प्रदान करता है ॥ ४ ॥ २ ॥

॥ बसंतु महला ५ ॥ तिसु बसंतु जिसु प्रभु क्रिपालु। तिसु बसंतु जिसु गुरु दइआलु। मंगलु तिस कै जिसु एकु कामु। तिसु सद बसंतु जिसु रिदै नामु ॥ १ ॥ ग्रिहि ता के बसंतु गनीं। जा कै कीरतनु हरि धुनी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रीति पारब्रहम मउलि मना। गिआनु कमाईऐ पूछि जनां। सो तपसी जिसु साध संगु। सद धिआनी जिसु गुरहि रंगु ॥ २ ॥ से निरभउ जिन्ह भउ पइआ। सो सुखीआ जिसु भ्रमु गइआ। सो इकांती जिसु रिदा थाइ। सोई निहचलु साच ठाइ ॥ ३ ॥ एका खोजै एक प्रीति। दरसन परसन हीत चीति। हरि रंग रंगा सहजि माणु। नानक दास तिसु जन कुरबाणु ॥ ४ ॥ ३ ॥

हे भाई ! आत्मिक उल्लास उस मनुष्य को प्राप्त होता है, जिस पर प्रभु दयालु होता है। हे भाई ! उस मनुष्य के भीतर आत्मिक उल्लास होता है, जिसे एक हरि के नाम-स्मरण का धन्धा लगा रहता है। उस मनुष्य को सदैव ही आत्मिक उल्लास मिलता है, जिसके हृदय में प्रभु का नाम अवस्थित होता है ॥ १ ॥ मैं तो उस मनुष्य के हृदय

में आत्मिक उल्लास मानता हूँ, जिसके हृदय में प्रभु की गुणस्तुति होती है, जिसके भीतर प्रभु के नाम की लौ (लगन) है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे मेरे मन ! प्रभु के साथ प्रेम करके सदैव प्रसन्न रह। सन्तों के माध्यम से आत्मिक जीवन की सूझ प्राप्त की जाती है। (वास्तविक) तपस्वी वह मनुष्य है, जिसे गुरु की संगति प्राप्त होती है। वह मनुष्य हमेशा जुड़ी हुई सुरति वाला है, मानो जिसके भीतर गुरु-चरणों का स्नेह होता है ॥ २ ॥ हे भाई ! वे मनुष्य भय से ऊपर हैं, जिनके भीतर प्रभु का भय है। वही मनुष्य सुखी है, जिसकी दुविधा मिट गई है। केवल वह मनुष्य एकान्त में रहता है, जिसका हृदय शान्त है। वही मनुष्य स्थिरचित्त वाला है, जो सत्यस्वरूप प्रभु के चरणों में जगह पाता है ॥ ३ ॥ दास नानक का कथन है कि मैं उस मनुष्य पर बलिहारी हूँ, जो एक प्रभु की खोज करता है, जिसके मन में एक प्रभु का स्नेह है, जिसके हृदय में एक प्रभु के दर्शनों की आकांक्षा है और जो मनुष्य सहजावस्था में टिककर समस्त रसों से श्रेष्ठ हरि के नाम-रस को पाता रहता है ॥ ४ ॥ ३ ॥

॥ बसंतु महला ५ ॥ जीअ प्राण तुम्ह पिंड दीन्ह। मुगध सुंदर धारि जोति कीन्ह। सभि जाचिक प्रभ तुम्ह दइआल। नामु जपत होवत निहाल ॥ १ ॥ मेरे प्रीतम कारण करण जोग। हउ पावउ तुम ते सगल थोक ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नामु जपत होवत उधार। नामु जपत सुख सहज सार। नामु जपत पति सोभा होइ। नामु जपत बिघनु नाही कोइ ॥ २ ॥ जा कारणि इह दुलभ देह। सो बोलु मेरे प्रभू देहि। साध संगति महि इहु बिस्रामु। सदा रिदै जपी प्रभ तेरो नामु ॥ ३ ॥ तुझ बिनु दूजा कोइ नाहि। सभु तेरो खेलु तुझ महि समाहि। जिउ भावै तिउ राखि ले। सुखु नानक पूरा गुरु मिले ॥ ४ ॥ ४ ॥

हे प्रभु ! आत्मा, प्राण, देह सब तुम्हारी ही देन हैं। तुमने अपनी ज्योति शरीरों में ज्योतिर्मान कर मूर्खों को सुन्दर बना दिया है। हे प्रभु ! समस्त जीव तुम्हारे याचक हैं और तुम सब पर दया करनेवाले हो। तुम्हारा नाम जपने से जीव प्रसन्नचित्त हो जाते हैं ॥ १ ॥ हे सामर्थ्यवान् प्रभु, हे मेरे प्रियतम ! मैं तुम्हारे पास से समस्त पदार्थ प्राप्त करता हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! प्रभु का नाम जपने से जगत से उद्धार होता है, सहजावस्था के उत्तम सुख प्राप्त हो जाते हैं, सर्वत्र प्रतिष्ठा

मिलती है और विकारों से कोई बाधा नहीं होती ॥ २ ॥ हे मेरे प्रभु! जिस हरि-नाम के जपने के लिए यह दुर्लभ मनुष्य-शरीर मिला है, वह हरि-नाम मुझे प्रदान करो। (ताकि) मन सत्संगति में रमा रहे और मैं सदा तुम्हारा नाम जपता रहूँ ॥ ३ ॥ हे प्रभु! तुम्हारे अतिरिक्त मुझे दूसरा कोई आसरा नहीं है। यह समस्त जगत-तमाशा तुम्हारे द्वारा ही निर्मित है। सारे जीव तुझमें ही लीन हो जाते हैं। जैसे तुम्हें उपयुक्त लगे, वैसे मेरी रक्षा करो। गुरु नानक का कथन है कि जिस मनुष्य को पूर्णगुरु मिल जाता है, उसे आत्मिक आनन्द प्राप्त होता है ॥ ४ ॥ ४ ॥

॥ बसंतु महला ५ ॥ प्रभ प्रीतम मेरै संगि राइ। जिसहि देखि हउ जीवा माइ। जा कै सिमरनि दुखु न होइ। करि दइआ मिलावहु तिसहि मोहि ॥ १ ॥ मेरे प्रीतम प्रान अधार मन। जीउ प्रान सभु तेरो धन ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जा कउ खोजहि सुरि नर देव। मुनि जन सेख न लहहि भेव। जा की गति मिति कही न जाइ। घटि घटि घटि घटि रहिआ समाइ ॥ २ ॥ जा के भगत आनंद मै। जा के भगत कउ नाही खै। जा के भगत कउ नाही भै। जा के भगत कउ सदा जै ॥ ३ ॥ कउन उपमा तेरी कही जाइ। सुखदाता प्रभु रहिओ समाइ। नानकु जाचै एकु दानु। करि किरपा मोहि देहु नामु ॥ ४ ॥ ५ ॥

हे माँ! प्रियतम प्रभु मेरे साथ-साथ ही अवस्थित है। कृपा करके मुझे उस प्रभु के साथ मिला दीजिए। जिसे देखकर मैं आत्मिक जीवन प्राप्त कर सकूँ, जिसके स्मरण से कोई दुःख स्पर्श नहीं कर सकता ॥ १ ॥ हे मेरे प्रियतम प्रभु! हे तन-मन के अवलम्ब प्रभु! मेरी यह आत्मा, यह प्राण सब कुछ तुम्हारा दिया धन है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे माँ! जिस प्रभु को देवत्व गुणों से सम्पन्न मनुष्य और देवगण खोजते रहते हैं, जो मुनियों और शेषनाग द्वारा भी अप्राप्य है, जिसकी उच्च आत्मिक अवस्था और महानता अवर्णनीय है, वह परमात्मा हर एक शरीर में व्याप्त है ॥ २ ॥ जिस प्रभु के भक्त आनन्दयुक्त रहते हैं, जिसके भक्तों की आत्मिक मृत्यु कभी नहीं आती, जिसके भक्तों को लौकिक भय स्पर्श नहीं कर सकते और जिसके भक्तों की हमेशा जीत होती है ॥ ३ ॥ हे प्रभु! तुम अप्रतिम हो, तुम सबको सुख देनेवाले मालिक हो, तुम सर्वत्र अवस्थित हो। गुरु नानक प्रभु से एक दान माँगते हैं कि कृपा करके मुझे अपना नाम प्रदान कीजिए ॥ ४ ॥ ५ ॥

॥ बसंतु महला ५ ॥ मिलि पाणी जिउ हरे बूट । साध संगति तिउ हउमै छूट । जैसी दासे धीर मीर । तैसे उधारन गुरह पीर ॥ १ ॥ तुम दाते प्रभ देनहार । निमख निमख तिसु नमसकार ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसहि परापति साध संगु । तिसु जन लागा पारब्रहम रंगु । ते बंधन ते भए मुकति । भगत अराधहि जोग जुगति ॥ २ ॥ नेत्र संतोखे दरसु पेखि । रसना गाए गुन अनेक । त्रिसना बूझी गुर प्रसादि । मनु आघाना हरि रसहि सुआदि ॥ ३ ॥ सेवकु लागो चरण सेव । आदि पुरख अपरंपर देव । सगल उधारण तेरो नामु । नानक पाइओ इहु निधानु ॥ ४ ॥ ६ ॥

हे भाई ! जिस प्रकार पानी के स्पर्श से वृक्ष हरे-भरे हो जाते हैं, जिस प्रकार सत्संगति में मिलकर अहंभावना समाप्त हो जाती है, जिस प्रकार किसी सेवक को अपने स्वामी के बल पर धैर्य होता है, उसी प्रकार गुरु रूपी पीर का जीवों को पार उतरने के लिए सहारा होता है ॥ १ ॥ हे प्रभु ! तुम सर्वस्व देने में समर्थ दानी हो। (ऐसे प्रभु को) मैं प्रत्येक पल नमस्कार करता हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस मनुष्य को गुरु की संगति प्राप्त होती है, उस मनुष्य को प्रभु का प्रेम-रंग चढ़ जाता है। वे (प्रभु-भक्त) माया-मोह के बन्धनों से मुक्ति प्राप्त कर लेते हैं। परमात्मा के भक्त प्रभु का नाम स्मरण करते हैं —यही उस प्रभु के साथ मिलाप का सही तरीक़ा है ॥ २ ॥ हे भाई ! प्रभु का दर्शन करके आँखों को संतुष्टि होती है। (जब) जिह्वा परमात्मा के अनेक गुणों का गान करती है, (तब) गुरु की कृपा से उसके भीतर से तृष्णा की अग्नि बुझ जाती है और उसका मन हरिनाम-रस के आस्वादन से तृप्त हो जाता है ॥ ३ ॥ हे आदि, सर्वव्यापक, अपरम्पार प्रभु ! तुम्हारा नाम सब जीवों का उद्धार करनेवाला है। गुरु नानक का कथन है कि जो सेवक तुम्हारे चरणों में जगह पाता है, उसे यह तुम्हारा नाम-ख़ज़ाना प्राप्त हो जाता है ॥ ४ ॥ ६ ॥

॥ बसंतु महला ५ ॥ तुम बड दाते दे रहे । जीअ प्राण महि रवि रहे । दीने सगले भोजन खान । मोहि निरगुन इकु गुनु न जान ॥ १ ॥ हउ कछू न जानउ तेरी सार । तू करि गति मेरी प्रभ दइआर ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जाप न ताप न करम कीति । आवै नाही कछू रीति । मन महि राखउ आस एक । नाम तेरे की तरउ टेक ॥ २ ॥ सरब कला प्रभ तुम्ह

प्रबीन। अंतु न पावहि जलहि मीन। अगम अगम ऊचह ते ऊच। हम थोरे तुम बहुत मूच॥ ३॥ जिन तू धिआइआ से गनी। जिन तू पाइआ से धनी। जिनि तू सेविआ सुखी से। संत सरणि नानक परे॥ ४॥ ७॥

हे प्रभु! तुम सबसे बड़े दानी हो, सबको देन दे रहे हो। तुम सबकी आत्मा और प्राणों में व्याप्त हो। तुम खाने के लिए समस्त पदार्थ दे रहे हो, परन्तु मुझ गुणहीन ने तुम्हारा कोई उपकार नहीं माना॥ १॥ हे दयालु प्रभु! मैं तुम्हारी तनिक भी क़ीमत नहीं जानता। मुझे उच्च आत्मिक अवस्था प्रदान करो॥ १॥ रहाउ॥ हे प्रभु! मैंने जप-तप नहीं किए, मैंने धार्मिक कर्म नहीं किए, कोई धार्मिक रीति-रस्म मुझे नहीं आती। लेकिन, मैं अपने मन में यही उम्मीद रखे हुए हूँ कि तुम्हारे नाम के सहारे संसार-सागर से पार उतर जाऊँगा॥ २॥ हे प्रभु! तुम सर्वशक्तिमान् हो। पानी की मछलियों की तरह तुम्हारा भेद नहीं पा सकते। हे प्रभु! तुम अगम्य, अपहुँच और सर्वोच्च हो। हम जीव उथले हैं, तुम गहन-गम्भीर हो॥ ३॥ हे भाई! जिन मनुष्यों ने तुम्हारा नाम-स्मरण किया है, वे सम्पन्न हैं। जिन्होंने तुम्हें पा लिया, वे वास्तविक रूप से सम्पन्न हैं। गुरु नानक का कथन है कि जिस-जिसने तुम्हारी भक्ति की, वे सब सुखी हैं। वे सब तुम्हारे सन्तों की शरण में रहते हैं॥ ४॥ ७॥

॥ बसंतु महला ५॥ तिसु तू सेवि जिनि तू कीआ। तिसु अराधि जिनि जीउ दीआ। तिस का चाकरु होहि फिरि डानु न लागै। तिस की करि पोतदारी फिरि दूखु न लागै॥१॥ एवड भाग होहि जिसु प्राणी। सो पाए इहु पदु निरबाणी॥१॥ रहाउ॥ दूजी सेवा जीवनु बिरथा। कछू न होईहै पूरन अरथा। माणस सेवा खरी दुहेली। साध की सेवा सदा सुहेली॥ २॥ जे लोड़हि सदा सुखु भाई। साधू संगति गुरहि बताई। ऊहा जपीऐ केवल नाम। साधू संगति पारगराम॥ ३॥ सगल तत महि ततु गिआनु। सरब धिआन महि एकु धिआनु। हरि कीरतन महि ऊतम धुना। नानक गुर मिलि गाइ गुना॥ ४॥ ८॥

हे भाई! जिस परमात्मा ने तुम्हें उत्पादित किया है, उसकी सेवा-भक्ति किया करो। जिसने तुम्हें आत्मा (प्राण) प्रदान की है, उसका नाम-स्मरण किया करो। यदि तुम उसका दास बने रहो, तो तुम्हें दण्ड

नहीं लग सकता। तुम उस प्रभु के केवल भण्डारी बने रहो, (इससे) तुम्हें कभी भी कोई दुःख स्पर्श नहीं करेगा ॥ १ ॥ हे भाई! जो मनुष्य सौभाग्यशाली हो, उसे वह आत्मिक अवस्था प्राप्त हो जाती है, जहाँ कोई वासना स्पर्श नहीं कर सकती ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई! प्रभु के अतिरिक्त किसी दूसरे की सेवा में जिन्दगी व्यर्थ ही बीत जाती है और कोई ज़रूरत भी पूर्ण नहीं होती। मनुष्य की सेवा अत्यन्त दुःखदायक होती है और गुरु की सेवा हमेशा सुखदायक होती है ॥ २ ॥ हे भाई! यदि तू चाहता है कि सदैव आत्मिक आनन्द बना रहे, तो गुरु के उपदेशानुसार सत्संगति में रह। सत्संगति में केवल प्रभु का नाम जपा जाता है और वहाँ रहकर संसार-सागर से पार उतरने योग्य हो जाते हैं ॥ ३ ॥ हे भाई! प्रभु के साथ मेल-मिलाप बनाना सर्वोत्तम विचार है। परमात्मा में सुरति लगानी समस्त समाधियों में श्रेष्ठ समाधि है। प्रभु की गुणस्तुति में सुरति लगाना सर्वोत्तम कर्म है। गुरु नानक का कथन है कि गुरु को मिलकर प्रभु का गुणगान करता रह ॥ ४ ॥ ८ ॥

॥ बसंतु महला ५ ॥ जिसु बोलत मुखु पवितु होइ। जिसु सिमरत निरमल है सोइ। जिसु अराधे जमु किछु न कहै। जिस की सेवा सभु किछु लहै ॥ १ ॥ राम राम बोलि राम राम। तिआगहु मन के सगल काम ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस के धारे धरणि अकासु। घटि घटि जिस का है प्रगासु। जिसु सिमरत पतित पुनीत होइ। अंतकाल फिरि फिरि न रोइ ॥२॥ सगल धरम महि ऊतम धरम। करम करतूति कै ऊपरि करम। जिस कउ चाहहि सुरि नर देव। संत सभा की लगहु सेव ॥३॥ आदि पुरखि जिसु कीआ दानु। तिस कउ मिलिआ हरि निधानु। तिस की गति मिति कही न जाइ। नानक जन हरि हरि धिआइ ॥ ४ ॥ ९ ॥

हे भाई! (उस प्रभु-नाम का स्मरण कर) जिसके उच्चारण करने से मुँह पवित्र हो जाता है, जिसके स्मरण से निष्कलंक शोभा मिलती है, जिसकी आराधना करने से यमराज भी कुछ नहीं कहता और जिसकी सेवा-भक्ति से मनुष्य प्रत्येक चीज प्राप्त कर लेता है ॥ १ ॥ हे भाई! सदा प्रभु का नाम उच्चरित किया कर। अपने मन की दूसरी वासनाएँ त्याग दे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई! धरती और आकाश जिसके द्वारा टिकाए हुए हैं, जिसका प्रकाश हर एक शरीर में है, जिसके स्मरण करने से मनुष्य पवित्र जीवन वाला हो जाता है और अन्तिम समय में मनुष्य बार-बार दुःखी नहीं होता ॥ २ ॥ हे भाई! नाम-स्मरण सब धर्मों में श्रेष्ठ

धर्म है, यही कर्म सर्वोच्च कर्म है। उस प्रभु से मिलने के लिए दैवी गुणों वाले मनुष्य और देवता भी आकांक्षा करते हैं। (इसलिए) सत्संगति की सेवा किया कर ॥ ३ ॥ हे भाई! सबके मूल तथा सर्वव्यापक प्रभु ने जिस मनुष्य को देन दी, उसे हरि-नाम का खज़ाना मिल गया। दास नानक का कथन है कि सदा परमात्मा का स्मरण किया कर। उसके विषय में यह नहीं कहा जा सकता कि वह कैसा है और कितना बड़ा है! ॥ ४ ॥ ९ ॥

॥ बसंतु महला ५ ॥ मन तन भीतरि लागी पिआस। गुरि दइआलि पूरी मेरी आस। किलविख काटे साध संगि। नामु जपिओ हरि नाम रंगि ॥ १ ॥ गुरपरसादि बसंतु बना। चरन कमल हिरदै उरिधारे सदा सदा हरि जसु सुना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ समरथ सुआमी कारण करण। मोहि अनाथ प्रभ तेरी सरण। जीअ जंत तेरे आधारि। करि किरपा प्रभ लेहि निसतारि ॥ २ ॥ भवखंडन दुखनास देव। सुरि नर मुनि जन ताकी सेव। धरणि अकासु जा की कला माहि। तेरा दीआ सभि जंत खाहि ॥ ३ ॥ अंतरजामी प्रभ दइआल। अपणे दास कउ नदरि निहालि। करि किरपा मोहि देहु दानु। जपि जीवै नानकु तेरो नामु ॥ ४ ॥ १० ॥

हे भाई! दयालु गुरु ने मेरी कामना पूर्ण कर दी है। अब मेरे मन-तन में हरि-नाम की लगन है। गुरु की संगति में सारे पाप समाप्त हो गए हैं, (अब) मैं प्रेम-रंग में रँगकर प्रभु का नाम जप रहा हूँ ॥ १ ॥ हे भाई! गुरु-कृपा से मेरे भीतर वसन्त ऋतु बन गयी है। मैंने प्रभु के सुन्दर चरणों में अपना मन रमा लिया है। अब मैं प्रतिपल प्रभु की गुणस्तुति सुनता हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे सर्वशक्तिमान्, स्वामी, जगत के आधार प्रभु! मैं अनाथ तुम्हारा शरणागत हूँ। सब जीव-जन्तु तुम पर ही आश्रित हैं। कृपया इन्हें संसार-समुद्र से पार कर लो ॥ २ ॥ हे जन्म-मरण का चक्र समाप्त करनेवाले, दुःखनाशक, प्रकाशरूप प्रभु! सब जीव तुम्हारा दिया खाते हैं। हे भाई! धरती और आकाश जिस प्रभु के सहारे स्थिर हैं, दैवी गुणोंवाले मनुष्य और मुनि लोग उसकी सेवा-भक्ति करते हैं ॥ ३ ॥ हे अन्तर्यामी दयालु प्रभु! अपने दास को कृपा-दृष्टि से देखो। कृपा करके मुझे यह दान दो कि तुम्हारा दास नानक तुम्हारा नाम जपकर आत्मिक जीवन प्राप्त करे ॥ ४ ॥ १० ॥

॥ बसंतु महला ५ ॥ राम रंगि सभ गए पाप। राम

जपत कछु नही संताप। गोबिंद जपत सभि मिटे अंधेर। हरि सिमरत कछु नाहि फेर॥ १॥ बसंतु हमारै राम रंगु। संत जना सिउ सदा संगु॥ १॥ रहाउ॥ संत जनी कीआ उपदेसु। जह गोबिंद भगतु सो धंनि देसु। हरि भगति हीन उदिआन थानु। गुरप्रसादि घटि घटि पछानु॥ २॥ हरि कीरतन रस भोग रंगु। मन पाप करत तू सदा संगु। निकटि पेखु प्रभु करणहार। ईत ऊत प्रभ कारज सार॥ ३॥ चरन कमल सिउ लगो धिआनु। करि किरपा प्रभि कीनो दानु। तेरिआ संत जना की बाछउ धूरि। जपि नानक सुआमी सद हजूरि॥ ४॥ ११॥

हे भाई! परमात्मा के प्रेम में लीन रहने से सारे पाप नष्ट हो जाते हैं। परमात्मा का नाम जपते हुए कोई दुःख-क्लेश स्पर्श नहीं कर सकते। गोविन्द का नाम जपते हुए सब अँधेरे मिट जाते हैं और हरि-नाम स्मरण करते हुए जन्म-मरण के चक्र नहीं रह जाते॥१॥ हे भाई! गुरु-कृपा से सन्तों के साथ सदा सान्निध्य बना रहता है। अब मेरे भीतर प्रभु-प्रेम जाग्रत् हो गया है और आत्मिक आनन्द उत्पन्न हो गया है॥ १॥ रहाउ॥ हे भाई! सन्तों ने यह शिक्षा दी है कि जहाँ प्रभु का भक्त रहता है, वह देश भाग्यशाली है और नास्तिकों का देश उजाड़ है। गुरु-कृपा से हर शरीर में तू उस प्रभु को अवस्थित समझ॥ २॥ हे मन! प्रभु की गुणस्तुति को ही दुनियावी रसों-भोगों की मौज-बहार समझ। हे मन! पाप करते हुए झिझका कर। सब कुछ कर सकनेवाले प्रभु को अपने निकट अवस्थित देख। लोक तथा परलोक के समस्त कार्य प्रभु ही सँवारनेवाला है॥ ३॥ प्रभु ने कृपा करके जिसे अपनी देन दी उसकी सुरति प्रभु के चरणों में लग गई। गुरु नानक का कथन है कि मैं तुम्हारे सन्तों के चरणों की धूल माँगता हूँ, ताकि तुम्हें अपने इर्द-गिर्द समझकर स्मरण करता रहूँ॥ ४॥ ११॥

॥ बसंतु महला ५॥ सचु परमेसरु नित नवा। गुर किरपा ते नितचवा। प्रभ रखवाले माई बाप। जाकै सिमरणि नही संताप॥ १॥ खसमु धिआई इक मनि इक भाइ। गुर पूरे की सदा सरणाई साचै साहिबि रखिआ कंठि लाइ॥ १॥ रहाउ॥ अपणे जन प्रभि आपि रखे। दुसट दूत सभि भ्रमि थके। बिनु गुर साचे नही जाइ। दुखु देस दिसंतरि रहे धाइ॥ २॥ किरतु ओन्हा का मिटसि नाहि। ओइ अपणा

बीजिआ आपि खाहि । जन का रखवाला आपि सोइ । जन कउ पहुचि न सकसि कोइ ।। ३ ।। प्रभि दास रखे करि जतनु आपि । अखंड पूरन जाको प्रतापु । गुण गोबिद नित रसन गाइ । नानकु जीवै हरि चरण धिआइ ।। ४ ।। १२ ।।

हे भाई ! प्रभु सत्यस्वरूप एवं नित्यनवीन है। गुरु-कृपा से मैं उसका नाम उच्चरित करता हूँ। माँ-बाप के तुल्य ही प्रभुजी सदैव मेरे रक्षक हैं (इसलिए) उनके स्मरण से दुःख-क्लेश स्पर्श नहीं कर सकते ।।१।। हे भाई ! मैं पूर्णगुरु का शरणागत हूँ। उसकी कृपा से ही सत्यस्वरूप मालिक-प्रभु ने अपने कण्ठ लगाकर रक्षा की है। अब मैं एकाग्रचित्त हो, उसके प्रेम में लीन हो, उस पति-प्रभु को स्मरण करता रहता हूँ ।। १ ।। रहाउ ।। हे भाई ! प्रभु ने अपने सेवकों की रक्षा स्वयं की है। उनके शत्रु भटक-भटककर हार जाते हैं। सत्यस्वरूप प्रभु-रूप गुरु के बिना अन्य कोई आश्रय नहीं होता। जो दूसरे स्थानों पर भटकते फिरते हैं, उन्हें दुःख प्राप्त होता है ।। २ ।। हे भाई ! ऐसे मनुष्यों के कृत कर्मों (से उत्पन्न संस्कार) समाप्त नहीं होते। वे अपने कृत कर्मों का फल स्वयं खाते हैं। अपने सेवकों का रक्षक प्रभु स्वयं बनता है। कोई अन्य मनुष्य प्रभु के सेवक के समान नहीं होता ।। ३ ।। हे भाई ! जिस प्रभु का प्रताप अक्षुण्ण एवं पूर्ण है, उसने यत्न करके अपने सेवकों की रक्षा स्वयं की है। इसलिए उस गोविन्द के गुण अपनी जिह्वा द्वारा गाया करो। गुरु नानक भी उस परमात्मा के चरणों का स्मरण कर आत्मिक जीवन प्राप्त करता रहता है ।। ४ ।। १२ ।।

।। बसंतु महला ५ ।। गुर चरण सरेवत दुखु गइआ । पारब्रहमि प्रभि करी मइआ । सरब मनोरथ पूरन काम । जपि जीवै नानकु राम नाम ।। १ ।। सा रुति सुहावी जितु हरि चिति आवै । बिनु सतिगुर दीसै बिललांती साकतु फिरि फिरि आवै जावै ।। १ ।। रहाउ ।। से धनवंत जिन हरि प्रभु रासि । काम क्रोध गुर सबदि नासि । भै बिनसे निरभै पदु पाइआ । गुर मिलि नानकि खसमु धिआइआ ।। २ ।। साध संगति प्रभि कीओ निवास । हरि जपि जपि होई पूरन आस । जलि थलि महीअलि रवि रहिआ । गुर मिलि नानकि हरि हरि कहिआ ।। ३ ।। असट सिधि नवनिधि एह । करमि परापति जिसु नामु देह । प्रभ जपि जपि जीवहि तेरे दास । गुर मिलि नानक कमल प्रगास ।। ४ ।। १३ ।।

हे भाई ! जिस मनुष्य पर परब्रह्म ने कृपा की, गुरु के चरणों के स्मरण से उस मनुष्य का प्रत्येक दुःख दूर हो जाता है; उसकी सब कामनाएँ, उसके समस्त कार्य पूर्ण हो जाते हैं। नानक भी उस प्रभु का नाम जपकर आत्मिक जीवन प्राप्त कर रहा है ॥ १ ॥ हे भाई ! उस मनुष्य के लिए वह ऋतु सुन्दर होती है, जब वह परमात्मा का स्मरण करता है। गुरु की शरण के बिना दुनिया रोती फिरती है। परमात्मा से बिछुड़ा हुआ मनुष्य पुनःपुन: जन्मता-मरता रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिन मनुष्यों के भीतर प्रभु का नाम-धन मौजूद है, वे धनाढ्य हैं। गुरु के उपदेश से उनके भीतर अवस्थित काम, क्रोध आदि विकार नष्ट हो जाते हैं। उनके समस्त भय दूर हो जाते हैं; वे ऐसा आत्मिक स्थान प्राप्त कर लेते हैं, जहाँ कोई भय स्पर्श नहीं कर सकता। हे भाई ! गुरु को पाकर नानक ने भी उस पति-प्रभु का स्मरण किया है ॥ २ ॥ परमात्मा ने जिस मनुष्य का ठिकाना सत्संगति में बना दिया है, प्रभु का नाम जपकर उनकी प्रत्येक कामना पूर्ण हो जाती है। वह प्रभु पानी, धरती, आकाश में सर्वत्र व्यापक है। गुरु के माध्यम से नानक ने भी उसका स्मरण किया है ॥ ३ ॥ हे भाई ! यह हरि-नाम ही आठ सिद्धियाँ और नौ निधियाँ है। जिसे भी प्रभु नाम देता है, उस देन के मूल में प्रभु-कृपा ही होती है। गुरु नानक का कथन है कि प्रभु के दास नाम जप-जपकर आत्मिक जीवन प्राप्त करते हैं; गुरु को पाकर उनका हृदय-कमल प्रफुल्लित रहता है ॥ ४ ॥ १३ ॥

बसंतु महला ५ घरु १ इक तुके

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सगल इछा जपि पुंनीआ। प्रभि मेले चिरी विछुंनिआ ॥ १ ॥ तुम रवहु गोबिंदै रवण जोगु। जितु रविऐ सुख सहज भोगु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करि किरपा नदरि निहालिआ। अपणा दासु आपि सम्हालिआ ॥२॥ सेज सुहावी रसि बनी। आइ मिले प्रभ सुख धनी ॥ ३ ॥ मेरा गुणु अवगणु न बीचारिआ। प्रभ नानक चरण पूजारिआ ॥ ४ ॥ १ ॥ १४ ॥

हे भाई ! स्मरण करने पर प्रभु ने चिरकाल से बिछुड़े हुए मनुष्यों को अपने चरणों में जगह दे दी। प्रभु के नाम-स्मरण से उनकी सब कामनाएँ पूर्ण हो गईं ॥ १ ॥ तुम स्मरणीय गोविन्द का नाम स्मरण किया करो। यदि स्मरण किया जाए, तो सहजावस्था के सुखों का

आनन्द प्राप्त होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु ने अपने सेवक की रक्षा स्वयं की है। उसे कृपा करके कृपादृष्टि से देखा है ॥ २ ॥ हे भाई ! सुखों के मालिक प्रभु जिस मनुष्य को मिल जाते हैं, प्रभु-मिलन के आस्वाद से उनकी हृदय-सेज सुन्दर बन जाती है ॥ ३ ॥ गुरु नानक का कथन है कि प्रभु ने मेरे किसी गुण-अवगुण पर विचार नहीं किया। उसने मुझे (कृपा करके) अपने चरणों का पुजारी बना लिया है ॥४॥१॥१४॥

॥ बसंतु महला ५ ॥ किलबिख बिनसे गाइ गुना। अनदिनु उपजी सहज धुना ॥ १ ॥ मनु मउलिओ हरि चरन संगि। करि किरपा साधू जन भेटे नित रातौ हरि नाम रंगि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करि किरपा प्रगटे गुोपाल। लड़ि लाइ उधारे दीन दइआल ॥ २ ॥ इहु मनु होआ साध धूरि। नित देखै सुआमी हजूरि ॥ ३ ॥ काम क्रोध त्रिसना गई। नानक प्रभ किरपा भई ॥ ४ ॥ २ ॥ १५ ॥

हे भाई ! प्रभु-गुणगान से मनुष्य के सारे पाप नष्ट हो जाते हैं, उसके भीतर सहजावस्था की ध्वनि उत्पन्न हो जाती है ॥ १ ॥ प्रभु कृपा करके जिस सेवक को गुरु से मिलाता है, वह सेवक सदैव हरि-नाम के रंग में रँगा रहता है; उसका मन प्रभु-चरणों में प्रवृत्त हो आत्मिक जीवन वाला हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! कृपा द्वारा जिसके भीतर हरि प्रभु प्रकट होता है, दीनदयालु प्रभु उसे अपने साथ बाँधकर संसार-सागर से पार उतार देता है ॥ २ ॥ जिस मनुष्य का मन गुरु-चरणों की धूल बनता है, वह मनुष्य स्वामी प्रभु को सदा अपने साथ-साथ देखता है ॥ ३ ॥ गुरु नानक का कथन है कि जिस मनुष्य पर प्रभु-कृपा होती है, उसके भीतर से काम, क्रोध, तृष्णा आदि विकार मिट जाते हैं ॥ ४ ॥ २ ॥ १५ ॥

॥ बसंतु महला ५ ॥ रोग मिटाए प्रभू आपि। बालक राखे अपने कर थापि ॥ १ ॥ सांति सहज ग्रिहि सद बसंतु। गुर पूरे की सरणी आए कलिआण रूप जपि हरि हरि मंतु ॥१॥ रहाउ ॥ सोग संताप कटे प्रभि आपि। गुर अपुने कउ नित नित जापि ॥ २ ॥ जो जनु तेरा जपे नाउ। सभि फल पाए निहचल गुण गाउ ॥ ३ ॥ नानक भगता भली रीति। सुखदाता जपदे नीत नीति ॥ ४ ॥ ३ ॥ १६ ॥

परमात्मा गुरु के शरणागतों के समस्त रोग मिटा देता है, उन बच्चों को अपने हाथों से थपथपी देकर (उत्साहित कर) उनकी रक्षा

करता है ॥ १ ॥ जो पूर्णगुरु की शरण लेते हैं, उनके भीतर सुखस्वरूप परमात्मा का नाम-मन्त्र जपकर सहजावस्था वाली शान्ति बनी रहती है और सत्यस्वरूप आनन्द बना रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! प्रभु ने स्वयं शरणागतों के चिन्ता-क्लेश दूर कर दिए । (इसलिए) तू भी सदैव अपने गुरु को स्मरण करता रह ॥ २ ॥ हे प्रभु ! जो मनुष्य तुम्हारा नाम जपता है, वह तुम्हारे सत्यस्वरूप गुणों का गायन कर सारे फल प्राप्त कर लेता है ॥ ३ ॥ भक्तजनों की यह सुन्दर मर्यादा है कि वह सदा सुखदाता प्रभु का नाम जपते रहते हैं ॥ ४ ॥ ३ ॥ १६ ॥

॥ बसंतु महला ५ ॥ हुकमु करि कीने निहाल । अपने सेवक कउ भइआ दइआलु ॥ १ ॥ गुरि पूरै सभु पूरा कीआ । अंम्रित नामु रिद महि दीआ ॥१॥रहाउ॥ करमु धरमु मेरा कछु न बीचारिओ । बाह पकरि भवजलु निसतारिओ ॥ २ ॥ प्रभि काटि मैलु निरमल करे । गुर पूरे की सरणी परे ॥ ३ ॥ आपि करहि आपि करणै हारे । करि किरपा नानक उधारे ॥ ४ ॥ ४ ॥ १७ ॥

हे भाई ! परमात्मा अपने सेवकों पर दयालु होता है और अपने हुक्म-अनुसार उन्हें प्रसन्नचित्त रखता है ॥ १ ॥ पूर्णगुरु ने आत्मिक जीवन का दाता हरि-नाम जिसके हृदय में अवस्थित कर दिया, उस मनुष्य का प्रत्येक कार्य (भी) पूर्ण कर दिया ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु ने मेरे किसी धर्म-कर्म पर विचार नहीं किया, (बल्कि) मुझे बाँह से पकड़ कर संसार-समुद्र से पार उतार दिया है ॥ २ ॥ हे भाई ! जो मनुष्य गुरु की शरण में आ गए, प्रभु ने उनके विकार समाप्त कर उन्हें पवित्र जीवन वाला बना दिया ॥ ३ ॥ हे सर्वसमर्थ प्रभु ! तुम स्वयं सब कुछ कर रहे हो । कृपा करके मुझे संसार-समुद्र से पार कर लीजिए ॥४॥४॥१७॥

बसंतु महला ५

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ देखु फूल फूल फूले । अहं तिआगि तिआगे । चरन कमल पागे । तुम मिलहु प्रभ सभागे । हरि चेति मन मेरे ॥ रहाउ ॥ सघन बासु कूले । इकि रहे सूकि कठूले । बसंत रुति आई । परफूलता रहे ॥१॥ अब कलू आइओ रे । इकु नामु बोवहु बोवहु । अन रूति नाही नाही । मतु भरमि भूलहु भूलहु । गुर मिले हरि पाए ।

जिसु मसतकि है लेखा। मन रुति नाम रे। गुन कहे नानक हरि हरे हरि हरे ॥ २ ॥ १८ ॥

हे मेरे मन ! अपने अन्दर से अहंत्व दूर कर, फिर देख, तेरे भीतर फूल ही फूल खिले हुए हैं। हे सौभाग्यशाली मन ! प्रभु के सुन्दर चरणों से लगाव रख। परमात्मा को स्मरण करता रह ।।रहाउ।। हे मेरे मन ! वसन्त ऋतु के आने पर वृक्ष छायादार, सुगन्धित तथा नरम हो जाते हैं; लेकिन कई वृक्ष ऐसे होते हैं जो शुष्क रहते हैं, शुष्क काष्ठ वाले कड़े रहते हैं ।।१।। हे मेरे मन ! अब मनुष्य-जन्म मिलने पर (नाम बोने का) समय तुम्हें मिला है। अपनी खेती में केवल हरि-नाम बोओ। (मनुष्य-जन्म के अतिरिक्त) किसी दूसरे जन्म में परमात्मा का नाम नहीं बोया जा सकेगा। हे मेरे मन ! माया के लोभ-लालच में कुमार्गगामी न हो जाना। यह समय नाम बोने का है, (लेकिन) गुरु को पाकर ही हरि-नाम प्राप्त किया जा सकता है। गुरु नानक का कथन है कि जिस मनुष्य के मस्तक पर नाम-प्राप्ति का लेख प्रकट होता है, वह मनुष्य ही सदा परमात्मा के गुण उच्चरित करता है ॥ २ ॥ १८ ॥

बसंतु महला ५ घरु २ हिंडोल

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ होइ इकत्र मिलहु मेरे भाई दुबिधा दूरि करहु लिव लाइ। हरि नामै के होवहु जोड़ी गुरमुखि बैसहु सफा विछाइ ॥ १ ॥ इन्ह बिधि पासा ढालहु बीर। गुरमुखि नामु जपहु दिनु राती अंत कालि नह लागै पीर ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करम धरम तुम्ह चउपड़ि साजहु सतु करहु तुम्ह सारी। कामु क्रोधु लोभु मोहु जीतहु ऐसी खेल हरि पिआरी ॥२॥ उठि इसनानु करहु परभाते सोए हरि आराधे। बिखड़े दाउ लंघावै मेरा सतिगुरु सुख सहज सेती घरि जाते ॥३॥ हरि आपे खेलै आपे देखै हरि आपे रचनु रचाइआ। जन नानक गुरमुखि जो नरु खेलै सो जिणि बाजी घरि आइआ ॥४॥१॥१९॥

हे मेरे भाई ! एकत्रित होकर सत्संगति में बैठा करो और प्रभु-चरणों में मन लगाकर द्वैत-भाव मिटाया करो। गुरु की शरण लेने को कपड़ा बिछाकर चौसर खेलना तथा हरि के नाम-स्मरण को चौसर खेलने वाला साथी बनाया करो ॥ १ ॥ गुरु की शरण लेकर दिन-रात्रि प्रभु के नाम का जप करो। इस प्रभु-नाम को पासा बनाओ। इस खेल को

खेलकर अन्तिम समय में तुम्हें दुःख नहीं लगेगा ॥१॥रहाउ॥ हे भाई ! शुभ कर्म को चौसर का खेल बनाओ, उच्च आचरण को सार बनाओ। इस प्रकार तुम काम, क्रोध, लोभ तथा मोह को वश में करो। हे भाई ! ऐसी खेल प्रभु को प्यारा लगता है ॥ २ ॥ हे भाई ! ब्रह्ममुहूर्त में उठकर नाम-जल में डुबकी लगाओ, सोते हुए भी परमात्मा की आराधना में लगे रहो। (ऐसा करने पर) प्यारा गुरु कठिन दाँव पर सफलता प्राप्त करा देता है और वे मनुष्य सहजावस्था के सुख के साथ प्रभु-चरणों में जगह पा लेते हैं ॥ ३ ॥ दास नानक का कथन है कि परमात्मा आप ही जगत-क्रीड़ा करता है और आप ही यह खेल खेलता है। प्रभु ने आप ही यह रचना रची है, यहाँ जो मनुष्य गुरु की शरण लेकर जीवन-खेल खेलता है, वह यह बाज़ी जीतकर प्रभु-द्वार पर पहुँचता है ॥ ४॥ १ ॥ १९ ॥

॥ बसंतु महला ५ हिंडोल ॥ तेरी कुदरति तूहै जाणहि अउरु न दूजा जाणै। जिस नो क्रिपा करहि मेरे पिआरे सोई तुझै पछाणै ॥ १ ॥ तेरिआ भगता कउ बलिहारा। थानु सुहावा सदा प्रभ तेरा रंग तेरे आपारा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तेरी सेवा तुझ ते होवै अउरु न दूजा करता। भगतु तेरा सोई तुधु भावै जिसनो तू रंगु धरता ॥ २ ॥ तू वड दाता तू वड दाना अउरु नही को दूजा। तू समरथु सुआमी मेरा हउ किआ जाणा तेरी पूजा ॥ ३ ॥ तेरा महलु अगोचरु मेरे पिआरे बिखमु तेरा है भाणा। कहु नानक ढहि पइआ दुआरै रखि लेवहु मुगध अजाणा ॥ ४ ॥ २ ॥ २० ॥

हे प्रभु ! अपनी शक्ति को तुम आप ही जानते हो, कोई दूसरा नहीं समझ सकता। जिस पर तुम कृपा करते हो, वही तुम्हारे साथ मेल-जोल करता है ॥ १ ॥ हे प्रभु ! मैं तुम्हारे भक्तों पर बलिहारी जाता हूँ। तुम जहाँ अवस्थित हो, वह स्थान सुन्दर है और तुम्हारे कौतुक अद्भुत हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु ! तुम्हारी भक्ति तुम्हारी प्रेरणा द्वारा हो सकती है। कोई भी प्राणी तुम्हारी प्रेरणा के बिना भक्ति नहीं कर सकता। वही तुम्हारा भक्त होता है, जो तुम्हें प्यारा लगता है, जिसे तुम अपने प्रेम के रंग में रँगते हो ॥ २ ॥ हे प्रभु ! तुम सबसे बड़े दानी हो, बुद्धिमान हो और अप्रतिम हो। तुम सर्वशक्तिमान् हो, मेरे पति हो, (लेकिन) मैं तुम्हारी भक्ति नहीं करना जानता ॥ ३ ॥ हे मेरे प्यारे प्रभु ! जहाँ तुम रहते हो, वह हम जीवों की पहुँच से परे है। तुम्हारी रजा के अनुसार चलना अत्यन्त

दु:साध्य है। गुरु नानक का कथन है कि मैं तुम्हारे द्वार पर प्रणत हूँ, तुम मुझ मूर्ख को बचा लो ॥ ४ ॥ २ ॥ २० ॥

॥ बसंतु हिंडोल महला ५ ॥ मूलु न बूझै आपु न सूझै भरमि बिआपी अहंमनी ॥ १ ॥ पिता पारब्रहम प्रभ धनी। मोहि निसतारहु निरगुनी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ओपति परलउ प्रभ ते होवै इह बीचारी हरि जनी ॥ २ ॥ नाम प्रभू के जो रंगि राते कलि महि सुखीए से गनी ॥ ३ ॥ अवरु उपाउ न कोई सूझै नानक तरीऐ गुर बचनी ॥ ४ ॥ ३ ॥ २१ ॥

हे भाई! जीव की बुद्धि अहंत्व के कारण भाग-दौड़ में फँसी रहती है; वह मूल प्रभु से मेल-जोल नहीं करता और स्वयं को भी नहीं समझता ॥ १ ॥ हे मेरे पिता परब्रह्म! मुझ गुणहीन को संसार-समुद्र से पार कीजिए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई! सन्तों ने तो यही चिन्तना की है कि जगत के जन्म-मरण (सृजन-विनाश) प्रभु के हुक्म-अनुसार होता है ॥ २ ॥ जो मनुष्य प्रभु के नाम के प्रेम-रंग में रँगे रहते हैं, मैं तो उन्हें ही सुखी जीवन वाला समझता हूँ ॥ ३ ॥ गुरु नानक का कथन है कि गुरु की शिक्षा पर चलकर संसार-समुद्र से पार उतरा जा सकता है। अन्य कोई तरीक़ा नहीं सूझता (जो सहयोगी हो सके) ॥४॥३॥२१॥

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ रागु बसंतु हिंडोल महला ९ ॥

साधो इह तनु मिथिआ जानउ। या भीतरि जो राम बसतु है साचो ताहि पछानो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इहु जगु है संपति सुपने की देखि कहा ऐडानो। संगि तिहारै कछू न चालै ताहि कहा लपटानो ॥ १ ॥ उसतति निंदा दोऊ परहर हरि कीरति उर आनो। जन नानक सभ ही मै पूरन एक पुरख भगवानो ॥ २ ॥ १ ॥

हे सन्तो! इस शरीर को नश्वर समझो। इस शरीर में जो परमात्मा अवस्थित है, उसे ही सत्यस्वरूप जानो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यह जगत उस धन के तुल्य है, जो स्वप्न में मिलता है, इस धन को देखकर क्यों अहंकार करता है? यहाँ से कोई चीज़ तेरे साथ नहीं जाएगी, फिर इसके साथ संलिप्त क्यों है? ॥ १ ॥ हे भाई! किसी की प्रशंसा अथवा निन्दा का परित्याग कर दो। केवल प्रभु की गुण-स्तुति में हृदय लीन करो। गुरु नानक का कथन है कि केवल वह भगवान पुरुष ही है, जो सब जीवों में व्याप्त है ॥ २ ॥ १ ॥

॥ बसंतु महला ९ ॥ पापी हीऐ मै कामु बसाइ । मनु चंचलु या ते गहिओ न जाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जोगी जंगम अरु संनिआस । सभ ही परि डारी इह फास ॥ १ ॥ जिहि जिहि हरि को नामु सम्हारि । ते भवसागर उतरे पारि ॥ २ ॥ जन नानक हरि की सरनाइ । दीजै नामु रहै गुन गाइ ॥३॥२॥

हे भाई ! पापग्रस्त करनेवाली कामवासना हृदय में अवस्थित रहती है, इसलिए चंचल मन नियन्त्रण में नहीं आ सकता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! योगी, यती, संन्यासियों (जो त्यागी बनते हैं) पर कामवासना का यह बन्धन पड़ा हुआ है ॥ १ ॥ हे भाई ! जिस मनुष्य ने परमात्मा का नाम अपने हृदय में बसाया है, वे सब संसार-समुद्र से पार उतर जाते हैं ॥ २ ॥ हे नानक ! परमात्मा का दास परमात्मा की शरण में रहता है । (इसलिए) अपना नाम दीजिए, ताकि तुम्हारा शरणागत तुम्हारा गुणगान करता रहे ॥ ३ ॥ २ ॥

॥ बसंतु महला ९ ॥ माई मै धनु पाइओ हरिनामु । मनु मेरो धावन ते छूटिओ करि बैठो बिसरामु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ माइआ ममता तन ते भागी उपजिओ निरमल गिआनु । लोभ मोह एह परसि न साकै गही भगति भगवान ॥ १ ॥ जनम जनम का संसा चूका रतनु नामु जब पाइआ । त्रिसना सकल बिनासी मन ते निज सुख माहि समाइआ ॥ २ ॥ जा कउ होत दइआलु किरपानिधि सो गोबिंद गुन गावै । कहु नानक इह बिधि की संपै कोऊ गुरमुखि पावै ॥ ३ ॥ ३ ॥

हे माँ ! मैंने परमात्मा का नाम-धन प्राप्त किया है, मेरा मन माया-विषयक भाग-दौड़ से बच गया है और (नाम-धन में) प्रवृत्त होकर बैठ गया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे मेरी माँ ! शुद्धस्वरूप परमात्मा के साथ मेरा मेल-जोल हो गया है, जिससे मेरे शरीर में से धनसंग्रह की लालसा दूर हो गई है । जबसे मैंने प्रभु की भक्ति हृदय में अवस्थित की है, तबसे लोभ तथा मोह मुझ पर अपना दबाव नहीं डाल सकते ॥ १ ॥ हे मेरी माँ ! जबसे मैंने परमात्मा का अमूल्य नाम प्राप्त किया है, मेरा जन्म-जन्मान्तरों का भय दूर हो गया है । मेरे भीतर से सारी तृष्णा समाप्त हो गई है । अब मैं उस आनन्द में मग्न रहता हूँ, जो हमेशा मेरे भी बना रहता है ॥ २ ॥ हे माँ ! कृपा के भण्डार गोविन्द जिस मनुष्य पर दया करता है, वह मनुष्य उसके गुण गाता रहता है ।

गुरु नानक का कथन है कि कोई मनुष्य इस प्रकार का धन गुरु के सान्निध्य में रहकर प्राप्त करता है ॥ ३ ॥ ३ ॥

॥ बसंतु महला ९ ॥ मन कहा बिसारिओ राम नामु । तनु बिनसै जम सिउ परै कामु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इहु जगु धूए का पहार । तै साचा मानिआ किह बिचारि ॥ १ ॥ धनु दारा संपति ग्रेह । कछु संगि न चालै समझ लेह ॥ २ ॥ इक भगति नाराइन होइ संगि । कहु नानक भजु तिह एक रंगि ॥ ३ ॥ ४ ॥

हे मन ! तू प्रभु का नाम क्यों विस्मृत किए बैठा है ? जब शरीर नष्ट हो जाता है, तब यमराज का (नामहीन होने के कारण) सामना करना पड़ता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे मन ! यह संसार धुएँ का पहाड़ है। तू इसे क्या समझकर सत्यस्वरूप माने बैठा है ? ॥ १ ॥ हे मन ! धन, स्त्री, जायदाद, घर आदि में से कोई भी चीज साथ नहीं जाती ॥२॥ गुरु नानक का कथन है कि केवल परमात्मा की भक्ति ही मनुष्य के साथ रहती है। केवल प्रभु-प्रेम में मग्न रहकर उसका स्मरण किया कर ॥ ३ ॥ ४ ॥

॥ बसंतु महला ९ ॥ कहा भूलिओ रे झूठे लोभ लाग । कछु बिगरिओ नाहनि अजहु जाग ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सम सुपनै कै इहु जगु जानु । बिनसै छिन मै साची मानु ॥ १ ॥ संगि तेरै हरि बसत नीत । निसबासुर भजु ताहि मीत ॥ २ ॥ बार अंत की होइ सहाइ । कहु नानक गुन ता के गाइ ॥३॥५॥

हे भाई ! नश्वर दुनिया के लोभ में ग्रस्त होकर कहाँ भूला-भटका फिरता है ? अब भी बुद्धिमान बन, (अब भी) कुछ बिगड़ा नहीं है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! इस जगत को स्वप्नवत् समझ। यह बात सत्य मान कि यह जगत एक क्षण में नष्ट हो जाता है ॥ १ ॥ हे मित्र ! परमात्मा हमेशा तेरे साथ अवस्थित है। तू दिन-रात्रि उसका ही भजन किया कर ॥ २ ॥ गुरु नानक का कथन है कि अन्तिम समय में प्रभु ही सहायक बनता है। तू उस प्रभु का गुणगान किया कर ॥ ३ ॥ ५ ॥

बसंतु महला १ असटपदीआ घरु १ दुतुकीआ

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ जगु कऊआ नामु नही चीति ।

नामु बिसारि गिरै देखु भीति । मनूआ डोलै चीति अनीति । जग सिउ तूटी झूठ परीति ॥ १ ॥ कामु क्रोधु बिखु बजरु भारु । नाम बिना कैसे गुन चारु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ घरु बालू का घूमनघेरि । बरखसि बाणी बुदबुदा हेरि । मात्र बूंद ते धरि चकु फेरि । सरब जोति नामै की चेरि ॥ २ ॥ सरब उपाइ गुरू सिरि मोरु । भगति करउ पग लागउ तोर । नामि रतो चाहउ तुझ ओरु । नामु दुराइ चलै सो चोरु ॥ ३ ॥ पति खोई बिखु अंचलि पाइ । साच नामि रतो पति सिउ घरि जाइ । जो किछु कीन्हसि प्रभु रजाइ । भै मानै निरभउ मेरी माइ ॥ ४ ॥ कामनि चाहै सुंदरि भोगु । पान फूल मीठे रस रोग । खीलै बिगसै तेतो सोग । प्रभ सरणागति कीन्हसि होग ॥ ५ ॥ कापड़ु पहिरसि अधिकु सीगारु । माटी फूली रूपु बिकारु । आसा मनसा बांधो बारु । नाम बिना सूना घरु बारु ॥ ६ ॥ गाछहु पुत्री राजकुआरि । नामु भणहु सचु दोतु सवारि । प्रिउ सेवहु प्रभ प्रेम अधारि । गुर सबदी बिखु तिआस निवारि ॥ ७ ॥ मोहनि मोहि लीआ मनु मोहि । गुरकै सबदि पछाना तोहि । नानक ठाढे चाहहि प्रभू दुआरि । तेरे नामि संतोखे किरपा धारि ॥ ८ ॥ १ ॥

हे भाई ! देख, जिसके हृदय में प्रभु का नाम नहीं है, वह माया-ग्रस्त जीव कौए के स्वभाव वाला है । प्रभु का नाम विस्मृत कर वह कौए की तरह रोटी के टुकड़े पर गिरता है, उसका मन अस्थिर रहता है, उसके चित्त में खोट होता है । लेकिन माया के साथ दुनिया की प्रीति मिथ्या है, कभी पूर्ण नहीं उतरती ॥ १ ॥ हे भाई ! काम और क्रोध मानो जहर है । यह एक भारी बोझ है । सदाचरण प्रभु के नाम के बिना कभी नहीं बन सकता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! देख, जैसे बवंडर में रेत का घर बना हो, जैसे वर्षा के वक़्त बुलबुला बन जाता है (शरीर की स्थिति भी वैसी है) । सृजनहार ने अपनी प्रकृति का चक्र घुमाकर बूंद मात्र से शरीर निर्मित कर दिया है, (इसीलिए) अपनी आत्मा को उस प्रभु के नाम की दासी बना, जिसकी ज्योति समस्त जीवों में अवस्थित है ॥ २ ॥ हे प्रभु ! तुम समस्त जीवों की सृजना कर सब पर शिरोमणि हो, गुरु हो । मेरी यह इच्छा है कि मैं तुम्हारी भक्ति करूँ, मैं तुम्हारे चरण स्पर्श करता रहूँ; तुम्हारे नाम-रंग में रँगा रहूँ और तुम्हारा आश्रय लिये रखूँ । जो मनुष्य तुम्हारे नाम को दूर करके जीवन-मार्ग

पर चलता है, वह तुम्हारा चोर है ॥ ३ ॥ हे मेरी माँ! जो मनुष्य विकारों का विष अपने पल्ले में बाँधता है वह अपनी प्रतिष्ठा गँवा लेता है; लेकिन जो आदमी सत्यस्वरूप परमात्मा के नाम-रंग में रँगा जाता है, वह प्रभु के देश में प्रतिष्ठित होकर जाता है। प्रभु जो कुछ करता है, अपनी रज़ा-अनुसार करता है। जो व्यक्ति उस प्रभु के भय और सम्मान में रहना स्वीकार कर लेता है, वह निश्चिन्त होकर मार्ग तय करता है ॥ ४ ॥ सुन्दर जीव-स्त्री लौकिक पदार्थों का आस्वादन करना चाहती है, लेकिन ये पान-फूल, मीठे पदार्थों के आस्वादन —ये सब दूसरे विकार और रोग ही पैदा करते हैं। जितना अधिक वह इन भोगों में मस्त होता है, उतना ही अधिक उसे दुःख-रोग व्याप्त होता है। लेकिन जो जीव-स्त्री प्रभु की शरण लेती है, (उसे विश्वास होता है कि) जो कुछ प्रभु करता है वही होता है ॥ ५ ॥ जो जीव-स्त्री सुन्दर-सुन्दर कपड़े पहनती है, अत्यधिक रुचिपूर्वक शृंगार करती है, अपनी देह को देखकर प्रसन्न होती है, उसका सौन्दर्य उसे अधिकाधिक विकारों की ओर प्रेरित करता है, लौकिक आशाएँ और इच्छाएँ उसके दसवें द्वार को बन्द कर लेती हैं, (लेकिन) प्रभु के नाम के बिना उसका हृदय-घर सूना ही रहता है ॥ ६ ॥ हे आत्मा! उठ और उद्यम कर। तू समस्त जगत के स्वामी प्रभु का अंश है, तू राजपुत्री है, तू राजकुमारी है, ब्रह्ममुहूर्त में नित्यस्वरूप प्रभु का नाम-स्मरण कर। प्रभु-प्रेम के सहारे रहकर उस प्रियतम की सेवा-भक्ति कर और गुरु की शिक्षा में प्रवृत्त होकर माया-तृष्णा को दूर कर। यह तृष्णा विष है, जो आत्मिक जीवन को समाप्त कर देगी ॥७॥ गुरु नानक का कथन है कि तुझ मोहन ने मेरा मन मोहित कर लिया है। (कृपा कीजिए ताकि) मैं गुरु की शिक्षा द्वारा तुम्हें पहचान सकूँ। हे प्रभु! हम जीव तुम्हारे द्वार पर खड़े हैं। कृपा कीजिए ताकि तुम्हारे नाम में प्रवृत्त होकर सन्तोष धारण कर सकें ॥ ८ ॥ १ ॥

॥ बसंतु महला १ ॥ मनु भूलउ भरमसि आइ जाइ। अति लुबध लुभानउ बिखम माइ। नह असथिरु दीसै एक भाइ। जिउ मीन कुंडलीआ कंठि पाइ ॥ १ ॥ मनु भूलउ समझसि साच नाइ। गुर सबदु बीचारे सहज भाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनु भूलउ भरमसि भवरतार। बिल बिरथे चाहै बहु बिकार। मैगल जिउ फाससि कामहार। कड़ि बंधनि बाधिओ सीस मार ॥ २ ॥ मनु मुगधौ दादरु भगति हीनु। दरि भ्रसट सरापी नाम बीनु। ता कै जाति न पाती नाम लीन। सभि दूख सखाई गुणह बीन ॥ ३ ॥ मनु चलै न जाई

नामु बिसारि गिरै देखु भीति । मनूआ डोलै चीति अनीति । जग सिउ तूटी झूठ परीति ॥ १ ॥ कामु क्रोधु बिखु बजरु भारु । नाम बिना कैसे गुन चारु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ घरु बालू का घूमनघेरि । बरखसि बाणी बुदबुदा हेरि । मात्र बूंद ते धरि चकु फेरि । सरब जोति नामै की चेरि ॥ २ ॥ सरब उपाइ गुरू सिरि मोरु । भगति करउ पग लागउ तोर । नामि रतो चाहउ तुझ ओरु । नामु दुराइ चलै सो चोरु ॥ ३ ॥ पति खोई बिखु अंचलि पाइ । साच नामि रतो पति सिउ घरि जाइ । जो किछु कीन्हसि प्रभु रजाइ । भै मानै निरभउ मेरी माइ ॥ ४ ॥ कामनि चाहै सुंदरि भोगु । पान फूल मीठे रस रोग । खीलै बिगसै तेतो सोग । प्रभ सरणागति कीन्हसि होग ॥ ५ ॥ कापड़ु पहिरसि अधिकु सीगारु । माटी फूली रूपु बिकारु । आसा मनसा बांधो बारु । नाम बिना सूना घरु बारु ॥ ६ ॥ गाछहु पुत्री राजकुआरि । नामु भणहु सचु दोतु सवारि । प्रिउ सेवहु प्रभ प्रेम अधारि । गुर सबदी बिखु तिआस निवारि ॥ ७ ॥ मोहनि मोहि लीआ मनु मोहि । गुरकै सबदि पछाना तोहि । नानक ठाढे चाहहि प्रभू दुआरि । तेरे नामि संतोखे किरपा धारि ॥ ८ ॥ १ ॥

हे भाई ! देख, जिसके हृदय में प्रभु का नाम नहीं है, वह माया-ग्रस्त जीव कौए के स्वभाव वाला है। प्रभु का नाम विस्मृत कर वह कौए की तरह रोटी के टुकड़े पर गिरता है, उसका मन अस्थिर रहता है, उसके चित्त में खोट होता है। लेकिन माया के साथ दुनिया की प्रीति मिथ्या है, कभी पूर्ण नहीं उतरती ॥ १ ॥ हे भाई ! काम और क्रोध मानो जहर है। यह एक भारी बोझ है। सदाचरण प्रभु के नाम के बिना कभी नहीं बन सकता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! देख, जैसे बवंडर में रेत का घर बना हो, जैसे वर्षा के वक़्त बुलबुला बन जाता है (शरीर की स्थिति भी वैसी है)। सृजनहार ने अपनी प्रकृति का चक्र घुमाकर बूंद मात्र से शरीर निर्मित कर दिया है, (इसीलिए) अपनी आत्मा को उस प्रभु के नाम की दासी बना, जिसकी ज्योति समस्त जीवों में अवस्थित है ॥ २ ॥ हे प्रभु ! तुम समस्त जीवों की सृजना कर सब पर शिरोमणि हो, गुरु हो। मेरी यह इच्छा है कि मैं तुम्हारी भक्ति करूँ, मैं तुम्हारे चरण स्पर्श करता रहूँ; तुम्हारे नाम-रंग में रँगा रहूँ और तुम्हारा आश्रय लिये रखूँ। जो मनुष्य तुम्हारे नाम को दूर करके जीवन-मार्ग

पर चलता है, वह तुम्हारा चोर है ॥ ३ ॥ हे मेरी माँ ! जो मनुष्य विकारों का विष अपने पल्ले में बाँधता है वह अपनी प्रतिष्ठा गँवा लेता है; लेकिन जो आदमी सत्यस्वरूप परमात्मा के नाम-रंग में रँगा जाता है, वह प्रभु के देश में प्रतिष्ठित होकर जाता है। प्रभु जो कुछ करता है, अपनी रज़ा-अनुसार करता है। जो व्यक्ति उस प्रभु के भय और सम्मान में रहना स्वीकार कर लेता है, वह निश्चिन्त होकर मार्ग तय करता है ॥ ४ ॥ सुन्दर जीव-स्त्री लौकिक पदार्थों का आस्वादन करना चाहती है, लेकिन ये पान-फूल, मीठे पदार्थों के आस्वादन —ये सब दूसरे विकार और रोग ही पैदा करते हैं। जितना अधिक वह इन भोगों में मस्त होता है, उतना ही अधिक उसे दुःख-रोग व्याप्त होता है। लेकिन जो जीव-स्त्री प्रभु की शरण लेती है, (उसे विश्वास होता है कि) जो कुछ प्रभु करता है वही होता है ॥ ५ ॥ जो जीव-स्त्री सुन्दर-सुन्दर कपड़े पहनती है, अत्यधिक रुचिपूर्वक शृंगार करती है, अपनी देह को देखकर प्रसन्न होती है, उसका सौन्दर्य उसे अधिकाधिक विकारों की ओर प्रेरित करता है, लौकिक आशाएँ और इच्छाएँ उसके दसवें द्वार को बन्द कर लेती हैं, (लेकिन) प्रभु के नाम के बिना उसका हृदय-घर सूना ही रहता है ॥ ६ ॥ हे आत्मा ! उठ और उद्यम कर। तू समस्त जगत के स्वामी प्रभु का अंश है, तू राजपुत्री है, तू राजकुमारी है, ब्रह्ममुहूर्त में नित्यस्वरूप प्रभु का नाम-स्मरण कर। प्रभु-प्रेम के सहारे रहकर उस प्रियतम की सेवा-भक्ति कर और गुरु की शिक्षा में प्रवृत्त होकर माया-तृष्णा को दूर कर। यह तृष्णा विष है, जो आत्मिक जीवन को समाप्त कर देगी ॥७॥ गुरु नानक का कथन है कि तुझ मोहन ने मेरा मन मोहित कर लिया है। (कृपा कीजिए ताकि) मैं गुरु की शिक्षा द्वारा तुम्हें पहचान सकूँ। हे प्रभु ! हम जीव तुम्हारे द्वार पर खड़े हैं। कृपा कीजिए ताकि तुम्हारे नाम में प्रवृत्त होकर सन्तोष धारण कर सकें ॥ ८ ॥ १ ॥

॥ बसंतु महला १ ॥ मनु भूलउ भरमसि आइ जाइ। अति लुबध लुभानउ बिखम माइ। नह असथिरु दीसै एक भाइ। जिउ मीन कुंडलीआ कंठि पाइ ॥ १ ॥ मनु भूलउ समझसि साच नाइ। गुर सबदु बीचारे सहज भाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनु भूलउ भरमसि भवरतार। बिल बिरथे चाहै बहु बिकार। मैगल जिउ फाससि कामहार। कड़ि बंधनि बाधिओ सीस मार ॥ २ ॥ मनु मुगधौ दादरु भगति हीनु। दरि भ्रसट सरापी नाम बीनु। ता कै जाति न पाती नाम लीन। सभि दूख सखाई गुणह बीन ॥ ३ ॥ मनु चलै न जाई

ठाकि राखु। बिनु हरि रस राते पति न साखु। तू आपे सुरता आपि राखु। धरि धारण देखै जाणै आपि ॥ ४ ॥ आपि भुलाए किसु कहउ जाइ। गुरु मेले बिरथा कहउ माइ। अवगण छोडउ गुण कमाइ। गुर सबदी राता सचि समाइ ॥५॥ सतिगुर मिलिऐ मति ऊतम होइ। मनु निरमलु हउमै कढै धोइ। सदा मुकतु बंधि न सकै कोइ। सदा नामु वखाणै अउरु न कोइ ॥ ६ ॥ मनु हरि कै भाणै आवै जाइ। सभ महि एको किछु कहणु न जाइ। सभु हुकमो वरतै हुकमि समाइ। दूख सूख सभ तिसु रजाइ ॥ ७ ॥ तू अभुलु न भूलौ कदे नाहि। गुर सबदु सुणाए मति अगाहि। तू मोटउ ठाकुरु सबद माहि। मनु नानक मानिआ सचु सलाहि ॥ ८ ॥ २ ॥

कुमार्गगामी मन भटकता है, भाग-दौड़ करता रहता है, लालची होकर माया के लोभ में ग्रस्त रहता है, जिसके बन्धन में से निकलना बहुत कठिन है। यह कभी स्थिर स्थिति में नहीं दिखता, एक प्रभु के प्रेम में लीन नहीं दिखता। जैसे मछली अपने गले में काँटा फँसा लेती है (वैसी ही स्थिति मन की होती है) ॥ १ ॥ कुमार्गगामी मन सत्य-स्वरूप प्रभु के नाम में प्रवृत्त होकर अपनी ग़लती को समझता है। जब मन गुरु की शिक्षा का आचरण करता है, तब यह आत्मिक स्थिरता के भाव में अवस्थित होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कुमार्गगामी मन भँवरे की तरह भटकता है, मन इन्द्रियों के द्वारा व्यर्थ विकारों में लिप्त होना चाहता है। यह मन कामातुर हाथी की तरह फँसता है, जो ज़ंजीर के साथ कसकर बाँधा जाता है और सिर पर चोटें सहन करता है ॥ २ ॥ मूर्ख मन भक्ति से रिक्त रहता है, यह मानो मेंढक है। वह प्रभु-द्वार से अलग है, अभिशप्त है और प्रभु के नाम से रहित है। जो मनुष्य नाम से रिक्त है, उसकी न जाति उत्तम है और न वंश। कोई उसका नाम तक नहीं लेता। वह आत्मिक गुणों से ख़ाली रहता है और उसके दुःख ही दुःख उसके साथी बने रहते हैं ॥ ३ ॥ यह मन चंचल है, इसे नियन्त्रित करके रख, ताकि यह भटकता न फिरे। प्रभु के नाम-रस में रँगे बिना न इसे प्रतिष्ठा मिलती है और न कोई इसका विश्वास करता है। सृष्टि निर्मित कर प्रभु आप ही इसे जानता है। हे प्रभु ! तुम आप ही सुनने वाले हो और आप ही हमारे रक्षक हो ॥ ४ ॥ हे माँ ! मैं प्रभु के अतिरिक्त किस दूसरे को जाकर कहूँ ? प्रभु आप ही कुमार्गगामी करता है, वह आप ही गुरु से भेंट कराता है। इसलिए मैं गुरु के द्वार पर ही दिल का दुःख कह सकता हूँ। गुरु की सहायता द्वारा ही गुण एकत्रित

कर अवगुण त्याग सकता हूँ। जो मनुष्य गुरु के उपदेश में मस्त रहता है, वह उस सत्यस्वरूप परमात्मा में लीन रहता है ॥ ५ ॥ यदि गुरु मिल जाए तो मनुष्य की मति उत्तम हो जाती है, मन पवित्र हो जाता है, वह मनुष्य अपने मन में से अहंकार का मैल धोकर निकाल देता है। वह विकारों से सदैव बचा रहता है, कोई उसे नियन्त्रित नहीं कर सकता। वह सदा परमात्मा का नाम-स्मरण करता है, कोई दूसरा (आकर्षण) उसे आकर्षित नहीं कर सकता ॥ ६ ॥ यह मन परमात्मा के 'भाणे' के अनुसार माया-मोह में भटकता फिरता है। वह प्रभु सब जीवों में अवस्थित है, उसकी रज़ा के विरुद्ध कुछ नहीं कहा जा सकता। सर्वत्र प्रभु का हुक्म क्रियान्वित है, तमाम सृष्टि प्रभु के हुक्म में परिचालित है। तमाम सुख और दुःख उसकी रज़ा-अनुसार ही घटित होते हैं ॥ ७ ॥ हे प्रभु! तुम दोषरहित हो, तुम ग़लती नहीं करते। जिसे गुरु अपनी शिक्षा देता है, उस मनुष्य की बुद्धि भी गहन-गम्भीर हो जाती है। हे प्रभु! तुम बड़े मालिक हो और गुरु की शिक्षा में अवस्थित रहते हो। उस सत्यस्वरूप प्रभु की गुणस्तुति करके गुरु नानक का मन प्रभु-स्मरण में प्रवृत्त हो गया है ॥ ८ ॥ २ ॥

॥ बसंतु महला १ ॥ दरसन की पिआस जिसु नर होइ। एकतु राचै परहरि दोइ। दूरि दरदु मथि अंम्रितु खाइ। गुरमुखि बूझै एक समाइ ॥ १ ॥ तेरे दरसन कउ केती बिललाइ। विरला को चीनसि गुर सबदि मिलाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बेद वखाणि कहहि इकु कहीऐ। ओहु बेअंतु अंतु किनि लहीऐ। एको करता जिनि जगु कीआ। बाझु कला धरि गगनु धरीआ ॥ २ ॥ एको गिआनु धिआनु धुनि बाणी। एकु निरालमु अकथ कहाणी। एको सबदु सचा नीसाणु। पूरे गुर ते जाणै जाणु ॥ ३ ॥ एको धरमु द्रिड़ै सचु कोई। गुरमति पूरा जुगि जुगि सोई। अनहदि राता एक लिवतार। ओहु गुरमुखि पावै अलख अपार ॥ ४ ॥ एको तखतु एको पातिसाहु। सरबी थाई वे परवाहु। तिस का कीआ त्रिभवण सारु। ओहु अगमु अगोचरु एकंकारु ॥ ५ ॥ एका मूरति साचा नाउ। तिथै निबड़ै साचु निआउ। साची करणी पति परवाणु। साची दरगह पावै माणु ॥ ६ ॥ एका भगति एको है भाउ। बिनु भै भगती आवउ जाउ। गुर ते समझि रहै मिहमाणु। हरि रसि राता जनु परवाणु ॥ ७ ॥ इत उत

देखउ सहजे रावउ। तुझ बिनु ठाकुर किसै न भावउ। नानक हउमै सबदि जलाइआ। सतिगुरि साचा दरसु दिखाइआ॥ ८॥ ३॥

जिस मनुष्य को परमात्मा के दर्शन की इच्छा होती है, वह प्रभु के अतिरिक्त दूसरे आसरे की ललक छोड़कर एक परमात्मा के नाम में ही मस्त रहता है। वह मनुष्य बार-बार स्मरण करके आत्मिक जीवन देनेवाला नाम-रस चखता है और उसका दुःख-क्लेश दूर हो जाता है। गुरु की शरण लेकर वह मनुष्य प्रभु को समझ लेता है और उस एक प्रभु के नाम में लीन रहता है॥ १॥ हे प्रभु! अनगिनत दुनिया तुम्हारे दर्शनों के लिए तड़पती है, लेकिन कोई विरला मनुष्य गुरु के ज्ञान में प्रवृत्त होकर तुम्हारे स्वरूप को पहचानता है॥ १॥ रहाउ॥ वेद आदि धार्मिक ग्रन्थ भी व्याख्या करके यही कहते हैं कि उस एक प्रभु को स्मरण करना चाहिए जो अनन्त है। वह एक आप ही आप कर्तार है, जिसने जगत बनाया है, जिसने किसी प्रत्यक्ष अवलम्ब के बिना धरती और आकाश को ठहराया हुआ है॥ २॥ बुद्धिमान मनुष्य गुरु से यह समझ लेता है कि प्रभु की गुणस्तुति की ललक ही वास्तविक ज्ञान है और यही वास्तविक ध्यान है। एक प्रभु ही ऐसा है, जिसे सहारे की जरूरत नहीं। उस अकथनीय प्रभु की गुणस्तुति करनी चाहिए, उसकी गुण-स्तुति का शब्द (ज्ञान) ही वास्तविक मार्गव्यय है॥ ३॥ जो मनुष्य अपने हृदय में यह निश्चय करता है कि सत्यस्वरूप प्रभु का नाम-स्मरण ही एक सही धर्म है, वही गुरु के उपदेश लेकर स्थिर हो जाता है। वह मनुष्य निरन्तर सुरति लगाकर अविनाशी प्रभु में मस्त रहता है, गुरु की शरण लेकर वह मनुष्य अदृश्य और अनन्त प्रभु का दर्शन कर लेता है॥४॥ वह सत्यस्वरूप प्रभु एकमात्र बादशाह है, वही एकमात्र तख्त है, वह बादशाह सर्वत्र व्यापक है, वह निश्चिन्त है। समस्त जगत उसी प्रभु का बनाया हुआ है। वही तीनों भुवनों का मूल है, लेकिन वह अप्राप्य है और मनुष्य की इन्द्रियों की पकड़ से परे है॥ ५॥ संसार एक प्रभु का स्वरूप है, उसका नाम सत्यस्वरूप है, उसके दरबार में सदैव सत्य-स्वरूप न्याय चलता है। जिस मनुष्य ने सत्यस्वरूप प्रभु की गुणस्तुति को अपना कर्तव्य बनाया है, उसे सत्यस्वरूप दरबार में प्रतिष्ठा मिलती है, वह वहाँ सत्कृत होता है॥ ६॥ परमात्मा की भक्ति, प्रभु-प्रेम ही एकमात्र सन्मार्ग है। जो मनुष्य भक्तिहीन है, प्रभु के सम्मान से रिक्त है, उसका जन्म-मरण का चक्र बना रहता है। जो मनुष्य गुरु से शिक्षा लेकर यहाँ अतिथि बनकर जीता है और प्रभु के नाम-रस में मस्त रहता है, वह मनुष्य प्रभु-दरबार में सत्कृत होता है॥ ७॥ गुरु नानक का

कथन है कि मैं इधर-उधर तुम्हें ही देखता हूँ और आत्मिक स्थिरता को बनाए रखकर तुम्हें स्मरण करता हूँ। तुम्हारे बिना मैं किसी दूसरे से प्रेम नहीं करता। जिस मनुष्य ने गुरु-शिक्षा द्वारा अपना अहंकार जला लिया है, उसे गुरु ने प्रभु का सत्यस्वरूप (शाश्वत) दर्शन करा दिया है ॥ ८ ॥ ३ ॥

॥ बसंतु महला १ ॥ चंचलु चीतु न पावै पारा। आवत जात न लागै बारा। दूखु घणो मरीऐ करतारा। बिनु प्रीतम को करै न सारा ॥ १ ॥ सभ ऊतम किसु आखउ हीना। हरि भगती सचि नामि पतीना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अउखध करि थाकी बहुतेरे। किउ दुखु चूकै बिनु गुर मेरे। बिनु हरि भगती दूख घणेरे। दुख सुख दाते ठाकुर मेरे ॥ २ ॥ रोगु वडो किउ बांधउ धीरा। रोगु बुझै सो काटै पीरा। मै अवगण मन माहि सरीरा। ढूढत खोजत गुरि मेले बीरा ॥ ३ ॥ गुर का सबदु दारू हरि नाउ। जिउ तू राखहि तिवै रहाउ। जगु रोगी कह देखि दिखाउ। हरि निरमाइलु निरमलु नाउ ॥ ४ ॥ घर महि घरु जो देखि दिखावै। गुर महली सो महलि बुलावै। मन महि मनूआ चित महि चीता। ऐसे हरि के लोग अतीता ॥ ५ ॥ हरख सोग ते रहहि निरासा। अंम्रितु चाखि हरि नामि निवासा। आपु पछाणि रहै लिव लागा। जनमु जीति गुरमति दुखु भागा ॥ ६ ॥ गुरि दीआ सचु अंम्रितु पीवउ। सहजि मरउ जीवत ही जीवउ। अपणो करि राखहु गुर भावै। तुमरो होइ सु तुझहि समावै ॥ ७ ॥ भोगी कउ दुखु रोग विआपै। घटि घटि रवि रहिआ प्रभु जापै। सुख दुख ही ते गुर सबदि अतीता। नानक रामु रवै हित चीता ॥ ८ ॥ ४ ॥

हे कर्तार! चंचल मन चंचलता में से निकल नहीं सकता, प्रतिपल भटकता फिरता है, तनिक मात्र भी स्थिर नहीं होता। (इसके परिणाम-स्वरूप) बहुत दुःख सहना पड़ता है और आत्मिक मृत्यु हो जाती है। इस विपत्ति में प्रियतम-प्रभु के बिना दूसरा कोई सहायता भी नहीं कर सकता ॥ १ ॥ समस्त दुनिया भली है। मैं किसी को नीच नहीं कह सकता। जिसका मन प्रभु की भक्ति में प्रवृत्त होता है, वह प्रभु के सत्यस्वरूप नाम में लीन होकर प्रसन्न होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे दुःख

और सुख के दाता, पालनकर्ता प्रभु ! मैं अनेक उपचार करके थक गई हूँ, लेकिन प्यारे प्रभु के बिना यह दुःख दूर नहीं होता। परमात्मा की भक्ति के बिना अनेक दुःख आकर घेर लेते हैं ॥ २ ॥ चंचलता का रोग बहुत भारी है, इसके होते हुए मुझे आत्मिक शान्ति नहीं मिलती। इस रोग को गुरु ही समझ सकता है और वही मेरा दुःख काट सकता है। मेरे मन-तन में ये अवगुण बढ़ रहे हैं। खोज करने पर गुरु ने मुझे सत्संगति प्रदान कर दी ॥ ३ ॥ चंचलता के रोग की औषध गुरु का शब्द है, प्रभु का नाम है। जिस प्रकार तुम रखो, मैं उसी प्रकार रह सकता हूँ। जगत आप ही रोगी है, मैं किसे ढूँढ़कर अपना रोग कहूँ ? एक प्रभु ही पवित्र है, उसका नाम ही पवित्र है ॥ ४ ॥ जो गुरु अपने हृदय में परमात्मा का निवास देखकर दूसरों को दिखा सकता है, सबसे ऊँचे महल का वासी वह गुरु ही जीव को परमात्मा के दरबार में बुला सकता है। जिन व्यक्तियों को गुरु प्रभु के दरबार में पहुँचाता है, उनके मन भीतर ही स्थिर हो जाते हैं और वे इस प्रकार माया-मोह से निर्लिप्त हो जाते हैं ॥ ५ ॥ वे दुःख-सुख से असम्पृक्त रहते हैं, आत्मिक जीवन देनेवाला नाम-अमृत चखकर वे व्यक्ति प्रभु के नाम में ही अपना ठिकाना बना लेते हैं। जो मनुष्य अपने आत्मिक जीवन को परखकर प्रभु की स्मृति में सुरति लगाए रखता है, वह मनुष्य जीवन की बाज़ी जीत लेता है और गुरु की शिक्षा पर चलने से उसका दुःख दूर हो जाता है ॥ ६ ॥ गुरु ने मुझे सत्यस्वरूप नाम-अमृत दिया है, मैं उस नाम-अमृत को सदा पीता हूँ, उसके प्रभाव से सहजावस्था में टिककर मैं विकारों से मुँह मोड़ चुका हूँ। लौकिक कार्य करते हुए ही मेरे भीतर आत्मिक जीवन पैदा हो गया है। यदि गुरु कृपा करे, (तो मेरी प्रार्थना है कि हे प्रभु !) मुझे अपना सेवक बनाकर रखो। जो व्यक्ति तुम्हारा सेवक बन जाता है, वह तुम्हारे भीतर ही लीन हो जाता है ॥ ७ ॥ जो मनुष्य लौकिक पदार्थों के उपभोग में ही मस्त रहता है, उसे रोगों का दुःख आ दबाता है। गुरु नानक का कथन है कि जिस मनुष्य को प्रभु हर एक शरीर में व्याप्त दिखता है, वह गुरु के उपदेश में प्रवृत्त होकर सुख-दुःख से निर्लिप्त रहता है और हार्दिक प्रेम से प्रभु का नाम-स्मरण करता है ॥ ८ ॥ ४ ॥

॥ बसंतु महला १ इकतुकीआ ॥ मतु भसम अंधूले गरबि जाहि। इन बिधि नागे जोगु नाहि ॥ १ ॥ मूढ़े काहे बिसारिओ तै राम नाम। अंत कालि तेरै आवै काम ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुर पूछि तुम करहु बीचारु। जह देखउ तह सारिगपाणि ॥ २ ॥ किआ हउ आखा जां कछू नाहि। जाति

पति सभ तेरै नाइ ॥ ३ ॥ काहे मालु दरबु देखि गरबि जाहि । चलती बार तेरो कछू नाहि ॥ ४ ॥ पंच मारि चितु रखहु थाइ । जोग जुगति की इहै पांइ ॥ ५ ॥ हउमै पैखड़ु तेरे मनै माहि । हरि न चेतहि मूड़े मुकति जाहि ॥ ६ ॥ मत हरि विसरिऐ जम वसि पाहि । अंत कालि मूड़े चोट खाहि ॥७॥ गुर सबदु बीचारहि आपु जाइ । साच जोगु मनि वसै आइ ॥ ८ ॥ जिनि जीउ पिंडु दिता तिसु चेतहि नाहि । मड़ी मसाणी मूड़े जोगु नाहि ॥ ९ ॥ गुण नानकु बोलै भली बाणि । तुम होहु सुजाखे लेहु पछाणि ॥ १० ॥ ५ ॥

हे मूर्ख ! देह पर राख मलकर तू अहंकार में न आ जाना । नग्न रहकर इन तरीक़ों से प्रभु से मिलाप नहीं हो सकता ॥ १ ॥ हे मूर्ख ! तूने प्रभु का नाम भुला दिया है, (जबकि) प्रभु का नाम ही अन्तिम समय तेरे काम आ सकता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु की शिक्षा लेकर सोचो-समझो । मैं जिधर देखता हूँ, उधर ही प्रभु मौजूद है ॥ २ ॥ हे प्रभु ! तुम्हारे नाम में प्रवृत्त होना ही उच्च जाति है और वही मान-प्रतिष्ठा है । हे प्रभु ! मैं किस चीज़ का अभिमान करूँ ? जो कुछ भी मैं अपना समझता हूँ, यह मेरा अपना नहीं है ॥ ३ ॥ लौकिक धन-माल का तू अहंकार करता है । संसार से कूच करते समय धन-माल में से कोई भी चीज़ तेरे साथ नहीं जायगी ॥ ४ ॥ कामादिक पाँचों को मारकर, मन को नियन्त्रित करके रख । प्रभु के साथ मेल करनेवाले तरीक़े की यही नीवँ है ॥ ५ ॥ हे मूर्ख ! यह अहंकार तेरे मन में है, जो तेरे मन को ऐसे अटकाए बैठा है, जैसे पशु के पिछले लात के साथ बँधा रस्सा उसे दौड़ने नहीं देता । तू इसी की वजह से प्रभु को नहीं स्मरण करता, (जबकि) विकारों से मुक्ति स्मरण द्वारा ही हो सकती है ॥ ६ ॥ परमात्मा को विस्मृत कर यमों के वश में न पड़ जाना । (नाम विस्मृत कर) अन्तिम समय कहीं पश्चात्ताप न करना पड़े ॥ ७ ॥ यदि गुरु की शिक्षा को अपनी सुरति में टिकाए तो तेरा अहंत्व दूर हो जायगा । (गुरु-कृपा द्वारा प्रभु का नाम) मन में स्थिर हो जाता है, जो सत्यस्वरूप प्रभु के साथ शाश्वत मिलाप करा देता है ॥ ८ ॥ हे मूर्ख ! जिस प्रभु ने तुझे देह, प्राण दिए हैं, उसे तू स्मरण नहीं करता । श्मशान में बैठने से प्रभु के साथ मेल नहीं हो सकता ॥ ९ ॥ गुरु नानक तो प्रभु की गुणस्तुति की वाणी उच्चरित करता है, यही वाणी सुन्दर वाणी है । इस तथ्य को समझ, (इस प्रकार) तुझे भी परमात्मा का दर्शन कराने वाली आत्मिक आँखें मिल जाएँगी ॥ १० ॥ ५ ॥

॥ बसंतु महला १ ॥ दुबिधा दुरमति अधुली कार । मनमुखि भरमै मझि गुबार ॥ १ ॥ मनु अंधुला अंधुली मति लागै । गुर करणी बिनु भरमु न भागै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनमुखि अंधुले गुरमति न भाई । पसू भए अभिमानु न जाई ॥ २ ॥ लख चउरासीह जंत उपाए । मेरे ठाकुर भाणे सिरजि समाए ॥ ३ ॥ सगली भूलै नही सबदु अचारु । सो समझै जिसु गुरु करतारु ॥ ४ ॥ गुर के चाकर ठाकुर भाणे । बखसि लीए नाही जम काणे ॥ ५ ॥ जिन कै हिरदै एको भाइआ । आपे मेले भरमु चुकाइआ ॥ ६ ॥ बे मुहताजु बेअंतु अपारा । सचि पतीजै करणैहारा ॥ ७ ॥ नानक भूले गुरु समझावै । एकु दिखावै साचि टिकावै ॥ ८ ॥ ६ ॥

स्वेच्छाचारी मनुष्य अँधेरे में भटकता है (उसे जीवन-मार्ग नहीं दिखता)। वह प्रभु के अतिरिक्त किसी दूसरे आश्रय की ललक रखता है और अंधी दुर्बुद्धि के पीछे लगकर काम-काज करता है ॥ १ ॥ माया में अंधा हुआ जीव उस दुर्बुद्धि का अनुसरण करता है, जो स्वयं माया-मोह में अंधी है। गुरु द्वारा बतलाई कार्य-विधि के बिना मन की यह दुविधा दूर नहीं होती ॥ १ ॥ रहाउ ॥ स्वेच्छाचारी अंधे-मनुष्यों को गुरु की शिक्षा भली नहीं लगती। वे पशु हो चुके हैं, उनके भीतर से अहंकार नहीं मिटता ॥ २ ॥ सृजनहार प्रभु चौरासी लाख योनियों में अनन्त जीव पैदा करता है, जिस प्रकार उस ठाकुर की इच्छा होती है, वह सृजन भी करता है और विनाश भी करता है ॥ ३ ॥ लेकिन दुनिया कुमार्ग-गामी हुई रहती है, जब तक वह गुरु का शब्द या अपना कर्तव्य नहीं पहचानती। वही जीव सन्मार्ग को समझता है, जिसका पथप्रदर्शक गुरु या कर्तार प्रभु होता है ॥ ४ ॥ जो मनुष्य सतिगुरु के सेवक होते हैं, वे पालनकर्ता प्रभु को पसन्द आ जाते हैं। उन्हें यमों की अधीनता नहीं रहती, क्योंकि उन पर प्रभु कृपालु होते हैं ॥ ५ ॥ जिन व्यक्तियों को हृदय में एक प्रभु ही प्यारा लगता है, उन्हें प्रभु आप अपने चरणों में जगह देता है और उनकी दुविधा दूर हो जाती है ॥ ६ ॥ सृष्टि का सृजनहार प्रभु स्मरण द्वारा ही प्रसन्न किया जा सकता है। वह स्वतन्त्र है, अनन्त है और अपरम्पार है ॥ ७ ॥ गुरु नानक का कथन है कि कुमार्गगामी मनुष्य को गुरु ही समझा सकता है। गुरु उसे एक परमात्मा का दर्शन करा देता है और सत्यस्वरूप प्रभु में लीन कर देता है ॥८॥६॥

॥ बसंतु महला १ ॥ आपे भवरा फूल बेलि । आपे संगति मीत मेलि ॥ १ ॥ ऐसा भवरा बासु ले । तरवर फूले

बन हरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आपे कवला कंतु आपि । आपे रावे सबदि थापि ॥ २ ॥ आपे बछरू गऊ खीरु । आपे मंदरु थंम्हु सरीरु ॥ ३ ॥ आपे करणी करणहारु । आपे गुरमुखि करि बीचारु ॥ ४ ॥ तू करि करि देखहि करणहारु । जोति जीअ असंख देइ अधारु ॥ ५ ॥ तू सरु सागरु गुण गहीरु । तू अकुल निरंजनु परम हीरु ॥ ६ ॥ तू आपे करता करण जोगु । निहकेवलु राजन सुखी लोगु ॥ ७ ॥ नानक ध्रापे हरि नाम सुआदि । बिनु हरि गुर प्रीतम जनमु बादि ॥ ८ ॥ ७ ॥

प्रभु आप ही भँवरा है, आप ही बेल है और आप ही बेलों पर उगा हुआ फूल है। आप ही संगति है और आप ही सत्संगी मित्रों को एकत्रित करता है ॥ १ ॥ गुरमुख भँवरा प्रभु-नाम की इस प्रकार सुगन्धि लेता है कि उसे जंगल के सारे वृक्ष हरे-भरे और फूलों से लदे हुए दिखते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु आप ही लक्ष्मी है और आप ही लक्ष्मी-पति है; प्रभु अपने हुक्म-अनुसार समस्त सृष्टि का सृजन कर उसे आप ही भोग रहा है ॥ २ ॥ प्रभु आप ही बछड़ा है, आप ही दूध है; प्रभु आप मन्दिर है, आप ब्रह्म है और आप ही शरीर है ॥ ३ ॥ प्रभु आप ही कर्तव्य है, आप ही गुरु है और आप ही गुरु के सान्निध्य में बैठकर विचारक (भक्त) है ॥ ४ ॥ हे प्रभु ! तुम सब कुछ करने की शक्ति रखते हो, तुम जीव उत्पन्न कर अनन्त जीवों को अपनी ज्योति का सहारा देकर आप ही उनकी देखभाल करते हो ॥ ५ ॥ हे प्रभु ! तुम गुणों के सरोवर हो, गुणों के अथाह समुद्र हो, तुम्हारा कोई कुल-विशेष नहीं। तुम माया के प्रभाव से परे हो, तुम सर्वोत्कृष्ट हीरे हो ॥६॥ हे राजन् ! तुम आप ही समस्त जगत् के उत्पादक हो और उत्पादित करने की सामर्थ्य रखनेवाले हो। तुम पवित्रस्वरूप हो। जिस पर तुम्हारी कृपा होती है, वह आत्मिक आनन्द प्राप्त करता है ॥ ७ ॥ गुरु नानक का कथन है कि जो मनुष्य प्रभु के नाम-आस्वादन में लीन होता है, वह माया की ओर से तृप्त हो जाता है। (सचमुच) प्रभु के बिना, प्रियतम गुरु की शरण के बिना मनुष्य-जन्म व्यर्थ चला जाता है ॥ ८ ॥ ७ ॥

बसंतु हिंडोलु महला १ घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ नउ सत चउदह तीनि चारि करि महलति चारि बहाली । चारे दीवे चहु हथि दीए एका एका वारी ॥ १ ॥ मिहरवान मधुसूदन माधौ ऐसी सकति

तुम्हारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ घरि घरि लसकरु पावकु तेरा धरमु करे सिकदारी। धरती देग मिलै इक वेरा भागु तेरा भंडारी ॥ २ ॥ नासाबूरु होवै फिरि मंगै नारदु करे खुआरी। लबु अधेरा बंदीखाना अउगण पैरि लुहारी ॥ ३ ॥ पूंजी मार पवै नित मुदगर पापु करे कुोटवारी। भावै चंगा भावै मंदा जैसी नदरि तुम्हारी ॥ ४ ॥ आदि पुरख कउ अलहु कहीऐ सेखां आई वारी। देवल देवतिआ करु लागा ऐसी कीरति चाली ॥ ५ ॥ कूजा बांग निवाज मुसला नील रूप बनवारी। घरि घरि मीआ सभनां जीआं बोली अवर तुमारी ॥ ६ ॥ जे तू मीर महीपति साहिबु कुदरति कउण हमारी। चारे कुंट सलामु करहिगे घरि घरि सिफति तुम्हारी ॥ ७ ॥ तीरथ सिम्रिति पुंन दान किछु लाहा मिलै दिहाड़ी। नानक नामु मिलै वडिआई मेका घड़ी सम्हाली ॥ ८ ॥ १ ॥ ८ ॥

हे प्रभु ! नौ खण्ड, सात द्वीप, चौदह भुवन, तीन लोक और चार युगों का निर्माण कर तुमने इस सृष्टि को बसा दिया। तुमने चार दीपक चार युगों के हाथ में अपने-अपने क्रम पर पकड़ा दिए ॥१॥ हे कृपालु ! दुष्टदमन और मायापति प्रभु ! तुम्हारी शक्ति ऐसी है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रत्येक शरीर में तुम्हारी ज्योति व्यापक है, ये सब जीव तुम्हारा लश्कर हैं, इन जीवों पर धर्मराज राज्य करता है। तुमने एक बार में ही धरती रूपी देग बना दी, जिसमें से अक्षुण्ण भण्डार मिलता है। प्रत्येक जीव के पूर्वकृत कर्म (प्रारब्ध-रूप में) तुम्हारा भण्डार बाँट रहे हैं ॥ २ ॥ जीवों का मन-नारद दुविधा पैदा करता है, नास्तिक मन बार-बार पदार्थ माँगता रहता है। लोभ जीव के लिए अँधेरा क़ैदख़ाना है और इसके अपने कमाए पाप इसके पैर में लोहे की बेड़ी बने पड़े हैं ॥ ३ ॥ इस जीव का धन यह है कि इसे नित्य मुद्गरों की मार पड़ती है और इसका कमाया पाप इसके सिर पर कोतवाली कर रहा है। लेकिन, हे प्रभु ! जैसी प्रभु की कृपा हो, वैसा ही जीव बन जाता है; तुम्हें भला लगे तो भला बन जाता है, तुम्हें बुरा लगे तो बुरा बन जाता है ॥ ४ ॥ लेकिन अब मुसलमानी राज्य है; जिसे पहले 'आदिपुरुष' कहा जाता था, अब उसे 'अल्लाह' कहा जा रहा है। अब यह प्रथा है कि देवमन्दिरों पर कर लगाया जा रहा है ॥ ५ ॥ अब लोटा, बाँग, नमाज़, मुसल्ला प्रधान हैं। प्रभु की बन्दगी करनेवालों ने नीला बाना पहना हुआ है। अब तेरी बोली (तुम्हारे व्यक्तियों की बोली) अलग हो गई है, हर एक घर में, सब जीवों के मुँह में 'मियाँ' शब्द प्रधान है ॥ ६ ॥ हे बादशाह ! तुम

पृथ्वी के पति हो, मालिक हो। (यदि तुम इस्लामी राज्य चाहते हो तो) हम जीवों के क्या वश है ? चारों दिशाओं के जीव तुम्हें प्रणाम करते हैं। हर एक घर में तुम्हारी ही गुणस्तुति हो रही है ॥ ७ ॥ तीर्थ-स्नान, स्मृतियों के पाठ और दान-पुण्य आदि का यदि कोई लाभ है, तो वह थोड़ी बहुत मजदूरी के तुल्य है। गुरु नानक का कथन है कि यदि कोई प्रभु का नाम एक घड़ी भर ही स्मरण करे, तो उसे आदर-सत्कार मिलता है ॥ ८ ॥ १ ॥ ८ ॥

बसंतु हंडोलु घरु २ महला ४

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ कांइआ नगरि इकु बालकु वसिआ खिनु पलु थिरु न रहाई। अनिक उपाव जतन करि थाके बारंबार भरमाई ॥ १ ॥ मेरे ठाकुर बालकु इकतु घरि आणु। सतिगुरु मिलै त पूरा पाईऐ भजु राम नामु नीसाणु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इहु मिरतकु मड़ा सरीरु है सभु जगु जितु राम नामु नही वसिआ। राम नामु गुरि उदकु चुआइआ फिरि हरिआ होआ रसिआ ॥ २ ॥ मै निरखत निरखत सरीरु सभु खोजिआ इकु गुरमुखि चलतु दिखाइआ। बाहरु खोजि मुए सभि साकत हरि गुरमती घरि पाइआ ॥ ३ ॥ दीना दीन दइआल भए है जिउ क्रिसनु बिदर घरि आइआ। मिलिओ सुदामा भावनी धारि सभु किछु आगै दालदु भंजि समाइआ ॥ ४ ॥ राम नाम की पैज वडेरी मेरे ठाकुरि आपि रखाई। जे सभि साकत करहि बखीली इक रती तिलु न घटाई ॥ ५ ॥ जन की उसतति है राम नामा दहदिसि सोभा पाई। निंदकु साकतु खवि न सकै तिलु अपणै घरि लूकी लाई ॥ ६ ॥ जन कउ जनु मिलि सोभा पावै गुण महि गुण परगासा। मेरे ठाकुर के जन प्रीतम पिआरे जो होवहि दासनिदासा ॥ ७ ॥ आपे जलु अपरंपरु करता आपे मेलि मिलावै। नानक गुरमुखि सहजि मिलाए जिउ जलु जलहि समावै ॥ ८ ॥ १ ॥ ९ ॥

हे भाई ! शरीर-नगर में एक मूर्ख बालक (मन) अवस्थित है, जो तनिक मात्र के लिए भी टिका नहीं रह सकता। इसके लिए अनेक यत्न करके थक जाते हैं, लेकिन यह मन बार-बार भटकता फिरता है ॥ १ ॥ हे मेरे मालिक ! मूर्ख मन को तुमने ही स्थिर किया है।

हे भाई ! जब गुरु मिलता है, तब पूर्णप्रभु मिल जाता है। (इसलिए) गुरु की शरण लेकर प्रभु का नाम जपा कर, यही यात्रा-कर है।। १ ।। रहाउ ।। हे भाई ! यदि इस शरीर में परमात्मा का नाम नहीं बसा तो यह मुर्दा है, तो यह निरा मिट्टी का ढेर ही है। समस्त जगत ही नाम के बिना मुर्दा है। हे भाई ! परमात्मा का नाम जल है, गुरु ने जिस मनुष्य के मुँह में जल डाला, वह मनुष्य दुबारा आत्मिक जीवन, आत्मिक ताज़गी वाला हो गया ।। २ ।। परमात्मा से बिछुड़े हुए मनुष्य दुनिया ढूँढ़-ढूँढ़कर आत्मिक मृत्यु प्राप्त करते हैं, लेकिन गुरु ने यह अजीब तमाशा दिखाया है। मैंने बड़े ग़ौर से अपना सारा शरीर खोजा है, गुरु की शिक्षा पर चलकर मैंने अपने हृदय-घर में ही प्रभु को प्राप्त कर लिया है ।। ३ ।। हे भाई ! प्रभु अत्यन्त ग़रीबों पर दयालु होता है, जैसे कृष्ण ग़रीब विदुर के घर आया था। और जब ग़रीब सुदामा श्रद्धा-भाव से कृष्ण को मिला था, तो उसके अपने घर लौटने से पूर्व उसकी ग़रीबी दूर कर प्रत्येक पदार्थ उसके घर पहुँच चुका था ।। ४ ।। हे भाई ! प्रभु का नाम जपनेवालों की बहुत प्रतिष्ठा है। इस प्रतिष्ठा को स्वयं प्रभु ने बनाया है। प्रभु से बिछुड़े हुए समस्त व्यक्ति भक्तों की निन्दा करें तो भी प्रभु उसकी प्रतिष्ठा कम नहीं होने देता ।।५।। हे भाई ! प्रभु के नाम से सेवक की शोभा होती है, वह सब ओर प्रतिष्ठित होता है। लेकिन परमात्मा से बिछुड़ा हुआ निन्दक मनुष्य (उसकी प्रतिष्ठा को) तनिक भी सहन नहीं करता, (लेकिन) इस प्रकार वह हृदय-घर में ईर्ष्या की अग्नि में जलता रहता है ।। ६ ।। प्रभु का भक्त दूसरे भक्त को मिलकर सत्कृत होता है, उसके आत्मिक गुणों में अधिक गुणों की वृद्धि होती है। जो मनुष्य परमात्मा के दासों के दास बनते हैं, वे प्रभु को प्यारे लगते हैं ।। ७ ।। हे भाई ! वह अपरम्पार प्रभु आप ही जल है। वह आप ही निन्दक को भी गुरु की संगति में मिलता है। गुरु नानक का कथन है कि प्रभु गुरु की शरण देकर मनुष्य को सहजावस्था में इस प्रकार मिला देता है, जिस प्रकार पानी पानी में मिल जाता है ।। ८ ।। १ ।। ९ ।।

बसंतु महला ५ घरु १ दुतुकीआ

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। सुणि साखी मन जपि पिआर। अजामलु उधरिआ कहि एक बार। बालमीकै होआ साध संगु। ध्रू कउ मिलिआ हरि निसंग ।। १ ।। तेरिआ संता जाचउ चरन रेन। ले मसतकि लावउ करि क्रिपा देन ।। १ ।। रहाउ ।।

गनिका उधरी हरि कहै तोत । गजइंद्र धिआइओ हरि कीओ मोख । बिप्र सुदामे दालदु भंज । रे मन तू भी भजु गोबिंद ॥२॥ बधिकु उधारिओ खमि प्रहार । कुबिजा उधरी अंगुसट धार । बिदरु उधारिओ दासत भाइ । रे मन तू भी हरि धिआइ ॥३॥ प्रहलाद रखी हरि पैज आप । बसत्र छीनत द्रोपती रखी लाज । जिनि जिनि सेविआ अंत बार । रे मन सेवि तू परहि पार ॥ ४ ॥ धंनै सेविआ बालबुधि । त्रिलोचन गुर मिलि भई सिधि । बेणी कउ गुरि कीओ प्रगासु । रे मन तू भी होहि दासु ॥ ५ ॥ जैदेव तिआगिओ अहमेव । नाई उधरिओ सैनु सेव । मनु डीगि न डोलै कहूं जाइ । मन तू भी तरसहि सरणि पाइ ॥ ६ ॥ जिह अनुग्रहु ठाकुरि कीओ आपि । से तैं लीने भगत राखि । तिन का गुणु अवगणु न बीचारिओ कोइ । इह बिधि देखि मनु लगा सेव ॥ ७ ॥ कबीरि धिआइओ एक रंग । नामदेव हरि जीउ बसहि संगि । रविदास धिआए प्रभ अनूप । गुर नानक देव गोविंद रूप ॥ ८ ॥ १ ॥

हे मन ! गुरु की शिक्षा सुनकर प्रेमपूर्वक प्रभु का नाम जपा कर । अजामिल नाम जपकर सदा के लिए पार उतर गया । वाल्मीकि को गुरु की संगति प्राप्त हुई, (और नाम के प्रभाव से ही) ध्रुव को प्रभु के दर्शन हुए ॥ १ ॥ हे प्रभु ! मैं तुम्हारे सन्तों के चरणों की धूल माँगता हूँ । कृपा करके दीजिए, उसे मैं अपने मस्तक पर लगाऊँगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे मन ! तोता राम-नाम उच्चरित करता था, (उसके प्रभाव-स्वरूप) गणिका संसार-समुद्र से पार उतर गई । हाथी ने (सरोवर में फँसकर) प्रभु का स्मरण किया, प्रभु ने उसे बचा लिया । सुदामा ब्राह्मण की ग़रीबी श्रीकृष्ण ने समाप्त की । हे मन ! तू भी प्रभु का नाम-स्मरण किया कर ॥ २ ॥ हे मन ! तीर द्वारा मारनेवाले शिकारी को भी कृष्ण ने संसार-समुद्र से पार कर दिया । अँगूठे के स्पर्श से कुब्जा पार उतर गई । विदुर को उसके सेवाभाव के कारण पार उतार दिया । हे मन ! तू भी प्रभु का नाम-स्मरण किया कर ॥ ३ ॥ हे मन ! प्रह्लाद की प्रतिष्ठा प्रभु ने आप बचाई, द्रौपदी के वस्त्र हरण किए जा रहे थे, तब प्रभु ने उसकी लाज रखी । हे मन ! जिसने भी संकट के समय प्रभु का आश्रय लिया (उन सबकी प्रभु ने रक्षा की) । हे मन ! तू भी परमात्मा की शरण ले, इस प्रकार तेरा उद्धार हो जायगा ॥ ४ ॥ हे मन ! धन्ना भक्त ने भोले भाव से प्रभु की भक्ति की । गुरु-कृपा से त्रिलोचन को भी आत्मिक जीवन में सफलता प्राप्त हुई । गुरु ने वेणी को

आत्मिक जीवन का प्रकाश प्रदान किया। हे मन! तू भी प्रभु का भक्त बन ॥ ५ ॥ हे मन! जयदेव ने अपने ब्राह्मण होने का अहंकार त्याग दिया, (वह) भक्ति के प्रभाव से पार उतर गया। सैंन का मन किसी भी जगह (माया के प्रभाव से) विचलित नहीं होता था। हे मन! गुरु की शरण लेकर तू भी संसार-सागर से पार उतर जायगा ॥ ६ ॥ हे प्रभु! जिन भक्तों पर तुझ ठाकुर ने आप कृपा की, उन्हें तुमने बचा लिया, तुमने उनके गुण-अवगुण पर विचार नहीं किया। हे प्रभु! तुम्हारी इस प्रकार की दयालुता देखकर मेरा मन तुम्हारी भक्ति में प्रवृत्त हो गया है ॥ ७ ॥ कबीर ने अनवरत प्रेम में मग्न होकर परमात्मा का स्मरण किया। प्रभु नामदेव के साथ रहते थे। रविदास ने भी सुन्दर प्रभु का स्मरण किया। गुरु नानक का कथन है कि गुरु प्रभु-रूप है (उसकी शरण लो) ॥ ८ ॥ १ ॥

॥ बसंतु महला ५ ॥ अनिक जनम भ्रमे जोनि माहि। हरि सिमरन बिनु नरकि पाहि। भगति बिहूना खंड खंड। बिनु बूझे जमु देत डंड ॥ १ ॥ गोबिद भजहु मेरे सदा मीत। साच सबद करि सदा प्रीति ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संतोखु न आवत कहूं काज। धूंम बादर सभि माइआ साज। पाप करंतौ नह संगाइ। बिखु का माता आवै जाइ ॥ २ ॥ हउ हउ करत बधे बिकार। मोह लोभ डूबौ संसार। कामि क्रोधि मनु वसि कीआ। सुपनै नामु न हरि लीआ ॥ ३ ॥ कब ही राजा कब मंगनहारु। दूख सूख बाधौ संसार। मन उधरण का साजु नाहि। पाप बंधन नित पउत जाहि ॥ ४ ॥ ईठ मीत कोऊ सखा नाहि। आपि बीजि आपे ही खांहि। जा कै कीनै है होत बिकार। से छोडि चलिआ खिन महि गवार ॥ ५ ॥ माइआ मोहि बहु भरमिआ। किरत रेख करि करमिआ। करणैहारु अलिपतु आपि। नही लेपु प्रभ पुंन पापि ॥ ६ ॥ राखि लेहु गोबिद दइआल। तेरी सरणि पूरन क्रिपाल। तुझ बिनु दूजा नही ठाउ। करि किरपा प्रभ देहु नाउ ॥ ७ ॥ तू करता तू करणहारु। तू ऊचा तू बहु अपारु। करि किरपा लड़ि लेहु लाइ। नानक दास प्रभ की सरणाइ ॥ ८ ॥ २ ॥

हे भाई! प्रभु के स्मरण के बिना मूर्ख नरक में पड़े रहते हैं। अनेक योनियों, अनेक जन्मों में भटकते फिरते हैं। भक्ति के बिना उनका मन दुविधाग्रस्त रहता है। आत्मिक जीवन की सूझ के बिना

यमराज भी उन्हें सज़ा देता है ॥ १ ॥ हे मेरे मित्र ! सदैव प्रभु का भजन किया कर । सदैव सत्यस्वरूप प्रभु की गुणस्तुति से लगाव बनाए रख ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आत्मिक मृत्यु लानेवाली माया के विष में मस्त मनुष्य जन्म-मरण के चक्र में पड़ा रहता है, किसी भी काम में उसे माया के प्रति तृप्ति नहीं होती । माया के सारे कौतुक-तमाशे धुएं के बादल हैं, (लेकिन) मनुष्य पाप करता हुआ भी झिझकता नहीं ॥ २ ॥ जिस मनुष्य ने कभी स्वप्न में भी प्रभु का नाम-स्मरण नहीं किया, 'मैं', 'मैं' करते हुए उसके अन्दर विकार बढ़ते जाते हैं । वह हमेशा जगत के मोह तथा लोभ में डूबा रहता है, उसका मन कामवासना और क्रोध के वशीभूत होता है ॥ ३ ॥ नामहीन मनुष्य चाहे कभी राजा हो या भिखारी, वह हमेशा जगत के दुःख-सुख में जकड़ा रहता है, अपने मन को बचाने का वह कोई उद्यम नहीं करता । पापों के बन्धन हमेशा उसे बाँधते रहते हैं ॥ ४ ॥ हे भाई ! प्यारे मित्रों में से कोई भी साथी नहीं बन सकता । जीव (अच्छे-बुरे) कर्म करके आप ही भल भोगते हैं (कोई साथी नहीं बनता) । जिन पदार्थों को एकत्रित करते हुए मन में विकार पैदा होते हैं, मूर्ख एक क्षण में उन्हें छोड़कर यहाँ से चला जाता है ॥ ५ ॥ हे भाई ! मनुष्य माया-मोह के कारण बहुत भटकता फिरता है, पूर्वकृत कर्मों के संस्कारों के अनुसार वह कर्म किए जाता है । हे भाई ! सब कुछ करने में समर्थ प्रभु आप निर्लिप्त है । प्रभु के ऊपर (जीवों के किए) न पुण्य कर्मों का प्रभाव होता हैं, न किसी पाप कर्म का ॥ ६ ॥ हे दयास्रोत, सर्वव्यापक, कृपालु प्रभु ! मैं तुम्हारा शरणागत हूँ । मेरी रक्षा करो । तुम्हारे अतिरिक्त मेरा कोई दूसरा स्थान नहीं । हे प्रभु ! कृपा करके मुझे अपना नाम प्रदान करो ॥ ७ ॥ प्रभु के दास प्रभु की शरण में रहते हैं । हे प्रभु ! तुम सब जीवों को पैदा करनेवाले हो, तुम सब कुछ करने की सामर्थ्य रखते हो । तुम सर्वोच्च हो, तुम अपरम्पार हो, कृपा करके मुझे अपने सान्निध्य में रखो ॥ ८ ॥ २ ॥

बसंत की वार महलु ५

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ हरि का नामु धिआइ कै होहु हरिआ भाई । करमि लिखंतै पाईऐ इह रुति सुहाई । वणु त्रिणु त्रिभवणु मउलिआ अंम्रित फलु पाई । मिलि साधू सुखु ऊपजै लथी सभ छाई । नानकु सिमरै एकु नामु फिरि बहुड़ि न धाई ॥ १ ॥ पंजे बधे महाबली करि सचा ढोआ । आपणे चरण जपाइअनु विचि दयु खड़ोआ । रोग सोग सभि मिटि गए

नित नवा निरोआ। दिनु रैणि नामु धिआइदा फिरि पाइ न मोआ। जिस ते उपजिआ नानका सोई फिरि होआ॥ २॥ किथहु उपजै कह रहै कह माहि समावै। जीअ जंत सभि खसम के कउणु कीमति पावै। कहनि धिआइनि सुणनि नित से भगत सुहावै। अगमु अगोचरु साहिबो दूसरु लवै न लावै। सचु पूरै गुरि उपदेसिआ नानकु सुणावै॥ ३॥ १॥

हे भाई! प्रभु का नाम-स्मरण कर आत्मिक जीवन वाला बन जा। मनुष्य-जन्म का यह सुन्दर समय प्रभु-बख्शीश (कृपा) के फलस्वरूप लिखे लेख के प्रगट होने से ही मिलता है। जैसे वर्षा से तमाम वनस्पति, तमाम जगत खिल उठता है, उसी प्रकार (उस मनुष्य की स्थिति होती है) जो अमृत-नाम रूपी फल प्राप्त कर लेता है। गुरु को मिलकर उसके हृदय में सुख पैदा होता है, उसके मन का मैल उतर जाता है। गुरु नानक भी प्रभु का ही नाम-स्मरण करता है, (क्योंकि स्मरणकर्ता को) बार-बार जन्म-मरण के चक्र में भटकना नहीं पड़ता॥ १॥ जिस मनुष्य ने सत्य-रूप (प्रभु का स्मरण-रूप) भेंट प्रस्तुत की है, प्रभु ने उसके कामादिक पाँचों ही प्रबल विकार बाँध दिए हैं। उसके समस्त रोग और भय मिट जाते हैं, वह सदैव पवित्र-आत्मा और निरोग रहता है। वह मनुष्य दिन-रात्रि प्रभु का नाम-स्मरण करता है और उसे जन्म-मरण का चक्र नहीं लगाना पड़ता। गुरु नानक का कथन है कि वह अपने स्रष्टा प्रभु का ही रूप हो जाता है॥ २॥ समस्त जीव पति-प्रभु द्वारा उत्पादित हैं, कोई भी उसका मूल्यांकन नहीं कर सकता। कोई नहीं बता सकता कि प्रभु कहाँ से पैदा होता है, कहाँ रहता है और कहाँ लीन हो जाता है। जो प्रभु के गुण उच्चरित करते हैं, स्मरण करते हैं, वे समस्त भक्त सुन्दर जीवन वाले हो जाते हैं। प्रभु अगम्य, अपार और सबका स्वामी है, वह अप्रतिम है। गुरु नानक उस सत्यस्वरूप प्रभु की गुण-स्तुति सुनाता है, पूर्णगुरु ने उस प्रभु को समीपस्थ दिखा दिया है॥३॥१॥

बसंतु बाणी भगतां की॥ कबीर जी घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि॥ मउली धरती मउलिआ अकासु। घटि घटि मउलिआ आतम प्रगासु॥ १॥ राजा रामु मउलिआ अनत भाइ। जह देखउ तह रहिआ समाइ॥ १॥ रहाउ॥ दुतीआ मउले चारि बेद। सिम्रिति

मउली सिउ कतेब ॥ २ ॥ संकरु मउलिओ जोग धिआन । कबीर को सुआमी सभ समान ॥ ३ ॥ १ ॥

प्रत्येक शरीर में उस प्रभु का ही प्रकाश है। पृथ्वी और आकाश उसकी ज्योति से ज्योतिर्मान् हैं ॥ १ ॥ ज्योतिस्वरूप परमात्मा अनेक प्रकार से अपना प्रकाश कर रहा है। मैं जिधर देखता हूँ, वह उधर ही दृष्टिगत होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चारों वेद, स्मृतियाँ और मुस्लिम धर्मपुस्तक —ये सब प्रभु की ज्योति से ज्योतिर्मान् हैं ॥ २ ॥ योग-समाधि लगानेवाला शिव भी प्रभु-ज्योति से ज्योतिर्मान् हुआ। कबीर का मालिक-प्रभु सर्वत्र एक-जैसा प्रकाशमान् है ॥ ३ ॥ १ ॥

पंडित जन माते पढ़ि पुरान । जोगी माते जोग धिआन । संनिआसी माते अहंमेव । तपसी माते तप कै भेव ॥ १ ॥ सभ मदमाते कोऊ न जाग । संग ही चोर घरु मुसन लाग ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जागै सुकदेउ अरु अकूरु । हणवंतु जागै धरि लंकूरु । संकरु जागै चरन सेव । कलि जागे नामा जैदेव ॥ २ ॥ जागत सोवत बहु प्रकार । गुरमुखि जागै सोई सारु । इसु देही के अधिक काम । कहि कबीर भजि राम नाम ॥ ३ ॥ २ ॥

पण्डित लोग पुराण पढ़कर अहंकार करते हैं, योगी लोग साधनाओं के अहंकार में मस्त हैं, संन्यासी लोग अहंकारग्रस्त हैं, तपस्वी लोग इस कारण अहंकारग्रस्त हैं कि उन्होंने तपस्या का रहस्य पा लिया है ॥ १ ॥ सब जीव (विकारों में) मस्त हैं, कोई जाग्रत् नहीं होता। इन जीवों के भीतर से ही कामादिक चोर इनका घर लूट रहे हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ शुकदेव ऋषि तथा अक्रूर भक्त जागते रहे, पूँछधारी हनुमान जागते रहे, प्रभु-चरणों की सेवा करके शिवजी जागे और कलियुग में भक्त नामदेव तथा जयदेव जागते रहे ॥ २ ॥ जागना और सोते रहना कई प्रकार का है। वह जागना श्रेष्ठ है, जो गुरमुखों का है। कबीर का कथन है कि हे भाई! प्रभु का नाम-स्मरण कर, (जो) जीव के लिए बहुत उपयोगी है ॥ ३ ॥ २ ॥

जोइ खसमु है जाइआ । पूति बापु खेलाइआ । बिनु स्रवणा खीरु पिलाइआ ॥ १ ॥ देखहु लोगा कलि को भाउ । सुति मुकलाई अपनी माउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पगा बिनु हुरीआ मारता । बदनै बिनु खिर खिर हासता । निद्रा बिनु नरु पै सोवै । बिनु बासन खीरु बिलोवै ॥ २ ॥ बिनु असथन गऊ

लवेरी। पैडे बिनु बाट घनेरी। बिनु सतिगुर बाट न पाई। कहु कबीर समझाई ॥ ३ ॥ ३ ॥

स्त्री ने पति को जन्म दिया है, मन-पुत्र ने पिता-जीवात्मा को धन्धे में लगाया हुआ है। यह मन स्तनों के बिना ही जीवात्मा को दूध पान करा रहा है ॥ १ ॥ हे लोगो! कलियुग का प्रभाव अत्यन्त विचित्र है, (क्योंकि) पुत्र ने अपनी माँ (माया) को ब्याह लिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मन चरण-रहित है, लेकिन छलांगे लगाता फिरता है; मुंह नहीं है, लेकिन खिलखिलाकर हँसता फिरता है। इस जीव को माया-निद्रा क़ब्ज़े में नहीं कर सकती थी, लेकिन जीव लम्बी चादर तानकर सोया हुआ है और बर्तन के बिना दूध मथ रहा है ॥ २ ॥ माया रूपी गाय से सुख तो नहीं मिल सकते, लेकिन यह मन को मिथ्या पदार्थों के तुल्य दूध में मोहित कर रही है। (इसलिए) जीव लम्बे रास्ते (चौरासी लाख योनियों के चक्र) पर लगा है। कबीर का कथन है कि इस जगत को समझकर बताओ कि सतिगुरु के बिना जीवन-यात्रा का सही मार्ग नहीं मिल सकता ॥ ३ ॥ ३ ॥

प्रहलाद पठाए पड़नसाल। संगि सखा बहु लीए बाल। मोकउ कहा पढ़ावसि आल जाल। मेरी पटीआ लिखि देहु स्री गुोपाल ॥ १ ॥ नही छोडउ रे बाबा राम नाम। मेरो अउर पढ़न सिउ नही कामु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संडै मरकै कहिओ जाइ। प्रहलाद बुलाए बेगि धाइ। तू राम कहन की छोडु बानि। तुझु तुरतु छडाऊ मेरो कहिओ मानि ॥ २ ॥ मोकउ कहा सतावहु बार बार। प्रभि जल थल गिरि कीए पहार। इकु रामु न छोडउ गुरंहि गारि। मोकउ घालि जारि भावै मारि डारि ॥ ३ ॥ काढि खड़गु कोपिओ रिसाइ। तुझ राखनहारो मोहि बताइ। प्रभ थंम ते निकसे क बिसथार। हरनाखसु छेदिओ नख बिदार ॥ ४ ॥ ओइ परम पुरख देवाधि देव। भगति हेत नरसिंघ भेव। कहि कबीर को लखै न पार। प्रहलाद उधारे अनिक बार ॥ ५ ॥ ४ ॥

प्रह्लाद को पाठशाला में पढ़ने के लिए भेजा, प्रह्लाद ने अपने साथ कई साथी ले लिये। (पण्डित के ग़लत पढ़ाने पर) प्रह्लाद ने कहा कि मुझे ग़लत क्यों पढ़ाते हो? मेरी इस छोटी-सी तख़्ती पर 'श्री गोपाल', 'श्री गोपाल' लिखें ॥ १ ॥ हे बाबा! मैं प्रभु का नाम-स्मरण नहीं छोड़ूंगा। नाम के अतिरिक्त किसी और बात के पठन-पाठन

से मेरा सम्बन्ध नहीं है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अध्यापक ने उसके पिता को बतलाया, उसने प्रह्लाद को शीघ्र बुला भेजा। (पण्डित ने प्रह्लाद को कहा कि) तू प्रभु के नाम-स्मरण की आदत को छोड़ दे। मेरा कहना मान ले, मैं तुझे तुरन्त मुक्त करा दूँगा ॥ २ ॥ (प्रह्लाद ने उत्तर दिया कि) मुझे बार-बार क्यों परेशान करते हो ? जिस प्रभु ने पानी, धरती, पर्वत आदि समस्त सृष्टि निर्मित की है, मैं उस राम को स्मरण करना नहीं छोड़ूँगा। (उसे त्यागना) मेरे गुरु के प्रति गाली है। मुझे चाहे जला दो, मार दो ॥ ३ ॥ हिरण्यकशिपु क्रोधित हुआ, तलवार निकाल कहने लगा कि मुझे उसे बताओ, जो तुझे बचानेवाला है। प्रभु भयानक रूप धारण कर खम्भे से निकल आया और उसने अपने नाख़ूनों से चीर कर हिरण्यकशिपु को मार दिया ॥ ४ ॥ कबीर का कथन है कि प्रभुजी परमपुरुष हैं, देवताओं के भी पूज्य देव हैं। प्रह्लाद की भक्ति के प्रेम से प्रभु ने नरसिंह-रूप धारण किया, प्रह्लाद को अनेक कष्टों से बचाया। कोई जीव उस प्रभु की शक्ति का भेद नहीं पा सकता ॥ ५ ॥ ४ ॥

इसु तन मन मधे मदन चोर। जिनि गिआन रतनु हिरि लीन मोर। मै अनाथु प्रभ कहउ काहि। को को न बिगूतो मैं को आहि ॥ १ ॥ माधउ दारुन दुख सहिओ न जाइ। मेरो चपल बुधि सिउ कहा बसाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सनक सनंदन सिव सुकादि। नाभि कमल जाने ब्रहमादि। कबि जन जोगी जटाधारि। सभ आपन अउसर चले सारि ॥ २ ॥ तू अथाहु मोहि थाह नाहि। प्रभ दीनानाथ दुखु कहउ काहि। मोरो जनम मरन दुखु आथि धीर। सुखसागर गुन रउ कबीर ॥ ३ ॥ ५ ॥

मेरे इस तन-मन में कामदेव चोर आ बसा है। जिसने ज्ञान रूपी मेरा रत्न चुरा लिया है। हे प्रभु ! मैं बड़ा अनाथ हूँ, अपनी व्यथा किसको कहूँ ? इस काम से कौन-कौन परेशान नहीं हुआ ? मुझ ग़रीब की क्या शक्ति है ? ॥ १ ॥ हे मेरे माधव ! अपनी चंचल बुद्धि के समक्ष वश नहीं चलता। यह अत्यन्त भयानक दुःख मुझसे सहन नहीं होता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सनक, सनंदन, शिव, शुकदेव-जैसे ऋषि-तपस्वी, कमल-नाभि से पैदा हुए ब्रह्मा आदि, कवि, योगी और जटाधारी साधू —ये सब अपने-अपने समय (ज़िन्दगी) काटकर चले गए ॥ २ ॥ कबीर का कथन है कि हे सुखों के सागर, दीनानाथ प्रभु ! तुम गहन-गम्भीर हो, अथाह हो। मैं किसके समक्ष प्रार्थना करूँ ? माया से उत्पादित यह

मेरा सारी उम्र का दुःख दूर करो, ताकि मैं तुम्हारे गुण-स्मरण कर सकूँ ।। ३ ।। ५ ।।

नाइकु एकु बनजारे पाच । बरध पचीसक संगु काच । नउ बहीआं दस गोनि आहि । कसनि बहतरि लागी ताहि ।।१।। मोहि ऐसे बनज सिउ नही न काजु । जिह घटै मूलु नित बढै बिआजु ।। रहाउ ।। सात सूत मिलि बनजु कीन । करम भावनी संग लीन । तीनि जगाती करत रारि । चलो बनजारा हाथ झारि ।। २ ।। पूंजी हिरानी बनजु टूट । दहदिस टांडो गइओ फूटि । कहि कबीर मन सरसी काज । सहज समानो त भरम भाज ।। ३ ।। ६ ।।

जीव एक शाह है, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ इसके वनजारे हैं, पचीस प्रकृतियाँ इसके बैल हैं। लेकिन यह मेल-जोल मिथ्या ही है। नौ गोलक बहियाँ हैं, दसों इन्द्रियाँ बोरियाँ हैं, बहत्तर नाड़ियाँ रस्सियाँ हैं, जो इन्हें लगी हैं ।। १ ।। मुझे ऐसा व्यापार करने की आवश्यकता नहीं, जिसके करने से मूल्य घटता जाए और ब्याज बढ़ता जाए ।। रहाउ ।। पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ मिलकर कई प्रकार के सूत का व्यापार कर रही हैं, कृत कर्मों के संस्कारों को इन्होंने साथ ले लिया है। तीन गुण रूपी चोर झगड़ा बढ़ाते हैं, जिसके कारण वनजारा जीव ख़ाली हाथ चल पड़ता है ।। २ ।। जब श्वासों की राशि छिन जाती है, तब व्यापार समाप्त हो जाता है और क़ाफ़िला दसों दिशाओं में बिखर जाता है। कबीर का कथन है कि हे मन ! यदि तू सहज अवस्था में लीन हो जाए और तेरी दुविधा समाप्त हो जाए, तो तेरा काम सफल हो जायगा ।। ३ ।। ६ ।।

बसंतु हिंडोलु घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। माता जूठी पिता भी जूठा जूठे ही फल लागे । आवहि जूठे जाहि भी जूठे जूठे मरहि अभागे ।। १ ।। कहु पंडित सूचा कवनु ठाउ । जहां बैसि हउ भोजनु खाउ ।। १ ।। रहाउ ।। जिहबा जूठी बोलत जूठा करन नेत्र सभि जूठे । इंद्री की जूठि उतरसि नाही ब्रहम अगनि के लूठे ।। २ ।। अगनि भी जूठी पानी जूठा जूठी बैसि पकाइआ । जूठी करछी परोसन लागा जूठे ही बैठि खाइआ ।। ३ ।।

गोबरु जूठा चउका जूठा जूठी दीनी कारा। कहि कबीर तेई नर सूचे साची परी बिचारा ॥ ४ ॥ १ ॥ ७ ॥

माँ अपवित्र, पिता अपवित्र और इनसे उत्पादित बाल-बच्चे भी अपवित्र होते हैं। जो जन्मते हैं, वे अपवित्र होते हैं, और जो मरते हैं, वे भी अपवित्र होते हैं। अभागे जीव अपवित्र ही मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं ॥ १ ॥ हे पंडित ! वह कौन सा स्थान है जो पवित्र है, जहाँ बैठकर मैं रोटी खा सकूँ ? ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनुष्य की जिह्वा मैली, वचन भी निकम्मे और कान, आँख सब अपवित्र होते हैं, कामवासना का मैल उतरता ही नहीं। हे ब्राह्मणत्व के अहंकार की अग्नि में जले हुए ब्राह्मण ! (पवित्र वस्तु बताइए ।) ॥ २ ॥ आग जूठी, पानी जूठा, पकानेवाली भी जूठी; जिससे परोसा जाता है, वह चमचा भी जूठा है। वह प्राणी भी जूठा है, जो बैठकर खाता है ॥ ३ ॥ गोबर जूठा और चौका जूठा है और उस चौके के इर्द-गिर्द खींची लकीरें भी जूठी हैं। कबीर का कथन है कि केवल वही मनुष्य पवित्र हैं, जिन्हें परमात्मा की समझ आ गई है ॥ ४ ॥ १ ॥ ७ ॥

रामानंद जी घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ कत जाईऐ रे घर लागो रंगु। मेरा चितु न चलै मनु भइओ पंगु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ एक दिवस मन भई उमंग। घसि चंदन चोआ बहु सुगंध। पूजन चाली ब्रहम ठाइ। सो ब्रहमु बताइओ गुर मन ही माहि ॥ १ ॥ जहा जाईऐ तह जल पखान। तू पूरि रहिओ है सभ समान। बेद पुरान सभ देखे जोइ। ऊहां तउ जाईऐ जउ ईहां न होइ ॥ २ ॥ सतिगुर मै बलिहारी तोर। जिनि सकल बिकल भ्रम काटे मोर। रामानंद सुआमी रमत ब्रहम। गुर का सबदु काटै कोटि करम ॥ ३ ॥ १ ॥

हे भाई ! कहाँ जाएँ ? अब हृदय-घर में ही आनन्द बन गया है। अब मेरा मन स्थिर हो गया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ एक दिन मेरे भीतर भी आकांक्षा पैदा हुई थी। मैंने चन्दन घिसाकर इत्र और अन्य सुगन्धित चीज़ें लगाई और मैं मन्दिर में पूजन करने के लिए चल पड़ी, लेकिन अब गुरु ने वह प्रभु मुझे भीतर अवस्थित दिखा दिया है ॥ १ ॥ जहाँ भी जाएँ वहाँ पानी या पत्थर हैं। हे प्रभु ! तुम सर्वत्र परिव्याप्त हो, वेद-पुराण आदि धार्मिक पुस्तकें भी मैंने खोजकर देख ली हैं। इसलिए

तीर्थों और मन्दिरों में जाने की ज़रूरत तब ही पड़े, यदि प्रभु मेरे मन में अवस्थित न होवे ॥ २ ॥ हे सतिगुरु ! मैं तुम पर बलिहारी हूँ, जिसने मेरे समस्त भ्रम दूर कर दिए हैं। रामानन्द का मालिक प्रभु सर्वत्र मौजूद है। गुरु का शब्द करोड़ों कर्मों का नाश कर देता है ॥ ३ ॥ १ ॥

बसंतु बाणी नामदेउ जी की

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ साहिबु संकटवै सेवकु भजै। चिरंकाल न जीवै दोऊ कुल लजै ॥ १ ॥ तेरी भगति न छोडउ भावै लोगु हसै। चरन कमल मेरे हीअरे बसै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जैसे अपने धनहि प्रानी मरनु मांडै। तैसे संत जनां राम नामु न छाडै ॥ २ ॥ गंगा गइआ गोदावरी संसार के कामा। नाराइणु सुप्रसंन होइ त सेवकु नामा ॥ ३ ॥ १ ॥

यदि मालिक अपने सेवक को कोई कष्ट देता है और सेवक उस कष्ट के कारण उसको छोड़कर भाग जाता है, तो वह दोनों पक्षों को बदनाम करता है; यद्यपि वह सदैव उसी तरह जीवित नहीं रहेगा ॥ १ ॥ हे प्रभु ! कमल-पुष्प के समान तुम्हारे चरण-कमल मेरे हृदय में सदैव बसते हैं। भले ही सारा संसार मेरी हँसी उड़ावे, तो भी मैं तुम्हारी भक्ति नहीं छोड़ूँगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस प्रकार अपने धन की रक्षा करने के लिए मनुष्य मृत्यु को भी स्वीकार कर लेता है, उसी प्रकार सन्त प्राणी प्रभु का नाम कभी नहीं छोड़ते (उनके नज़दीक प्रभु-नाम ही धन है।) ॥ २ ॥ गंगा, गया, गोदावरी आदि तीर्थों की यात्रा तो संसार को दिखाने के लिए है; परन्तु नामदेव का कथन है कि सेवक का नाम तभी सार्थक है, तभी वह सच्चा सेवक है, जब उसका प्रभु परमात्मा उस पर प्रसन्न हो ॥ ३ ॥ १ ॥

लोभ लहरि अति नीझर बाजै काइआ डूबै केसवा ॥ १ ॥ संसारु समुंदे तारि गोबिंदे। तारि लै बाप बीठला ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनिल बेड़ा हउ खेवि न साकउ। तेरा पारु न पाइआ बीठुला ॥ २ ॥ होहु दइआलु सतिगुरु मेलि तू मोकउ। पारि उतारे केसवा ॥ ३ ॥ नामा कहै हउ तरि भी न जानउ। मोकउ बाह देहि बाह देहि बीठुला ॥ ४ ॥ २ ॥

हे सुन्दर केशों वाले प्रभु ! लोभ की लहरें ठाठा मार रही हैं, मेरा शरीर इनमें डूबता जा रहा है ॥ १ ॥ हे माया-रहित, गोविन्द पिता ! मुझे संसार-सागर से पार कीजिए ॥१॥रहाउ॥ मेरी जीवन-नौका तूफ़ान

में फँस गई है। मुझमें चप्पू लगाने की सामर्थ्य नहीं है। तुम्हारे इस संसार-समुद्र का दूसरा किनारा मुझे नहीं मिलता ॥ २ ॥ हे केशव! दया कीजिए। मुझे गुरु मिलाइए और पार कीजिए ॥ ३ ॥ नामदेव प्रार्थना करता है कि मैं तो तैरना भी नहीं जानता। मुझे अपनी बाँह का सहारा दीजिए। हे दाता! बाँह का सहारा दीजिए ॥ ४ ॥ २ ॥

सहज अवलि धूड़ि मणी गाडी चालती। पीछै तिनका लै करि हांकती ॥ १ ॥ जैसे पनकत थ्रूटिटि हांकती। सरि धोवन चाली लाडुली ॥ १ ॥ रहाउ ॥ धोबी धोवै बिरह बिराता। हरि चरन मेरा मनु राता ॥ २ ॥ भणति नामदेउ रमि रहिआ। अपने भगत पर करि दइआ ॥ ३ ॥ ३ ॥

पहले मैले कपड़ों से लदी हुई गाड़ी धीरे-धीरे चली जाती है और उसके पीछे-पीछे धोबिन डण्डा लेकर हाँकती जाती है ॥ १ ॥ जैसे धोबिन उस गाड़ी को पानी के घाट की ओर 'थ्रटिटि' कह-कहकर हाँकती है और सिर पर कपड़े धोने के लिए ले जाती है, वैसे ही प्रियतमा जीव-स्त्री सत्संग-सरोवर पर मन को धोने के लिए जाती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रेम में अनुरक्त धोबी (गुरु-सरोवर पर आई जीव-स्त्रियों का मन) पवित्र कर देता है। (गुरु-कृपा से) मेरा मन भी अकालपुरुष के चरणों में रँग गया है ॥ २ ॥ नामदेव का कथन है कि वह अकालपुरुष सर्वत्र व्यापक है और अपने भक्तों पर कृपा करता रहता है ॥ ३ ॥ ३ ॥

बसंतु बाणी रविदास जी की

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ तुझहि सुझंता कछू नाहि। पहिरावा देखे ऊभि जाहि। गरबवती का नाही ठाउ। तेरी गरदनि ऊपरि लवै काउ ॥ १ ॥ तू कांइ गरबहि बावली। जैसे भादउ खूंब राजु तू तिसते खरी उतावली ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जैसे कुरंक नही पाइओ भेदु। तनि सुगंध ढूढै प्रदेसु। अपतन का जो करे बीचारु। तिसु नही जम कंकरु करे खुआरु ॥ २ ॥ पुत्र कलत्र का करहि अहंकारु। ठाकुरु लेखा मगनहारु। फेड़े का दुखु सहै जीउ। पाछे किसहि पुकारहि पीउ पीउ ॥ ३ ॥ साधू की जउ लेहि ओट। तेरे मिटहि पाप सभ कोटि कोटि। कहि रविदास जुो जपै नामु। तिसु जाति न जनमु न जोनि कामु ॥ ४ ॥ १ ॥

हे काया! तू अपना ठाठ देखकर अहंकार करती है, तुझे कुछ

भी स्मरण नहीं रहा। अहंकारी का कोई स्थान नहीं होता, तेरे बुरे दिन आ गए हैं ॥ १ ॥ हे मेरी मूर्ख काया ! तू क्यों अभिमान करती है ? तू तो उस कुकुरमुत्ता से भी अधिक शीघ्र नष्ट होनेवाली है, जो भादों में उगता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस प्रकार हिरण को यह पता नहीं चलता कि कस्तूरी की सुगन्धि उसके अपने शरीर से आती है। वह उसे इधर-उधर खोजता फिरता है। जो जीव अपने शरीर का (नश्वरता के सम्बन्ध में) विचार करता है, उसे यमदूत परेशान नहीं करता ॥ २ ॥ तू पुत्र और पत्नी का अभिमान करती है। (स्मरण रख) मालिक-प्रभु लेखा माँगता है। जीव अपने कृत कुकर्मों का दुःख सहता है। (प्राणान्त होने पर) तू किसे 'प्यारा', 'प्यारा' कहके बुलाएगी ? ॥ ३ ॥ यदि तू गुरु का आसरा ले, तो तेरे करोड़ों पाप नष्ट हो जाएँ। रविदास का कथन है कि जो मनुष्य नाम जपता है, उसकी नीची जाति समाप्त हो जाती है, उसका जन्म-मरण मिट जाता है और योनियों के साथ उसका सम्बन्ध नहीं रहता ॥ ४ ॥ १ ॥

बसंतु कबीर जीउ

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सुरह की जैसी तेरी चाल। तेरी पूंछट ऊपर झमक बाल ॥ १ ॥ इस घर मह है सु तू ढूंढि खाहि। अउर किसही के तू मति ही जाहि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चाकी चाटहि चूनु खाहि। चाकी का चीथरा कहां लै जाहि ॥ २ ॥ छीके पर तेरी बहुतु डीठि। मतु लकरी सोटा तेरी परै पीठि ॥ ३ ॥ कहि कबीर भोग भले कीन। मति कोऊ मारै ईंट ढेम ॥ ४ ॥ १ ॥

हे कुत्ते के स्वभाव वाले जीव ! तेरी चाल गाय-जैसी है, तेरी पूंछ पर बाल भी सुन्दर चमकते हैं ॥ १ ॥ जो कुछ तेरी मेहनत की कमाई है, उसे निस्संग होकर इस्तेमाल कर। पराए माल की लालसा न कर ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तू चक्की चाटता है और आटा खाता है, लेकिन जाता हुआ चीथड़ा कहाँ ले जाएगा ? ॥ २ ॥ तू छिक्के की ओर ग़ौर से ताक रहा है। देखना, कहीं कमर पर सोटा न लगे ॥ ३ ॥ कबीर का कथन है कि तूने बहुत कुछ खाया-पिया है, पर ध्यान रखना कहीं कोई ईंट-पत्थर तेरे सिर पर न मार देवे ॥ ४ ॥ १ ॥

रागु सारग चउपदे महला १ घरु १

१ ओं सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि॥

अपुने ठाकुर की हउ चेरी। चरन गहे जगजीवन प्रभ के हउमै मारि निबेरी॥ १ ॥ रहाउ॥ पूरन परम जोति परमेसर प्रीतम प्रान हमारे। मोहन मोहि लीआ मनु मेरा समझसि सबदु बीचारे॥१॥ मनमुख हीन होछी मति झूठी मनि तनि पीर सरीरे। जब की राम रंगीलै राती राम जपत मन धीरे॥ २॥ हउमै छोडि भई बैरागनि तब साची सुरति समानी। अकुल निरंजन सिउ मनु मानिआ बिसरी लाज लुोकानी॥ ३॥ भूर भविख नाही तुम जैसे मेरे प्रीतम प्रान अधारा। हरि कै नामि रती सोहागनि नानक राम भतारा॥ ४ ॥ १॥

मैं अपने स्वामी प्रभु की दासी हूँ। उस जगत को जीवन देनेवाले परमात्मा के मैंने चरण पकड़े हैं और अहम्-भाव को मारकर समाप्त कर दिया है॥ १॥ रहाउ॥ पूर्ण परब्रह्म परमेश्वर मेरे प्रियतम हैं, मेरे प्राणनाथ हैं। प्रभु ने मेरा मन मोह लिया है और अब वह (गुरु के) शब्द को विचार कर उसे समझने लगा है॥ १॥ गुरु-विमुख हीन, ओछी और मिथ्या बुद्धि वाला होता है, उसके तन-मन में पीड़ा ही पीड़ा भरी रहती है। जबसे मुझ पर अपने रँगीले स्वामी का रंग चढ़ा है, तबसे राम-नाम जपते हुए मन निरन्तर धैर्यवान् बनता जा रहा है॥ २॥ अहम्-भाव को छोड़कर जब मैं संसार से विरक्त हुआ, तब मेरी आत्मा सत्य में समा गई। मायातीत एवं कुल-जाति-रहित प्रभु से मन लग गया, झूठी दुनियावी लाज चुक गई॥ ३॥ मेरे प्राणाधार प्रियतम, तुम्हारे सरीखा तो भूत-भविष्य कहीं नहीं मिला। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम जपनेवाली जीवात्मा ही सुहागिन है और हरि ही उसका पति है॥ ४॥ १॥

॥ सारग महला १॥ हरि बिनु किउ रहीऐ दुखु बिआपै। जिहवा सादु न फीकी रस बिनु बिनु प्रभ कालु संतापै॥ १॥ रहाउ॥ जब लगु दरसु न परसै प्रीतम तब लगु भूख पिआसी। दरसनु देखत ही मनु मानिआ जल रसि कमल

बिगासी ॥ १ ॥ ऊनवि घनहरु गरजै बरसै कोकिल मोर बैरागै । तरवर बिरख बिहंग भुइअंगम घरि पिरु धन सोहागै ॥ २ ॥ कुचिल कुरूपि कुनारि कुलखनी पिर का सहजु न जानिआ । हरि रस रंगि रसन नही त्रिपती दुरमति दूख समानिआ ॥ ३ ॥ आइ न जावै ना दुखु पावै ना दुख दरदु सरीरे । नानक प्रभ ते सहज सुहेली प्रभ देखत ही मनु धीरे ॥ ४ ॥ २ ॥

हरि के बिना क्योंकर रहें, चतुर्दिक् तो दुःख व्याप्त है। जिह्वा प्रभु-नाम-रस का स्वाद न मिलने के कारण फीकी है और परमात्मा के बिना काल भी कष्ट पहुँचाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब लग प्रियतम का दर्शन तथा स्पर्श न प्राप्त हो, तब तक आत्मा की तृष्णा बनी ही रहती है। दर्शन पाकर मन इस प्रकार तृप्त होता है, जैसे जल को पाकर फल विकसित हो जाता है ॥ १ ॥ झुक-झूमकर घटाएँ गर्जती-बरसती हैं, कोकिल, मोर, पपीहा, पेड़, पशु-पक्षी आदि प्रसन्न होते हैं, (ठीक उसी प्रकार) जिसका पति उसके घर पर है, वह सुहागिन आनन्द मनाती और प्रेम में विलसती है ॥ २ ॥ मलिन, कुरूप, कुलक्षणा नारी, प्रियतम का सहज-स्वभाव नहीं जानती; उसकी जिह्वा हरि-नाम-रस को चखकर तृप्त नहीं हुई, वह कुबुद्धि के कारण नित्य दुःख उठाती है ॥ ३ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि जो जीव-स्त्री प्रभु के सहज सुख एवं (दर्शन द्वारा) मन में धैर्य प्राप्त करती है, उसका आवागमन चुक जाता है, उसके तन-मन में कोई दुःख-दर्द नहीं सालता ॥ ४ ॥ २ ॥

॥ सारग महला १ ॥ दूरि नाही मेरो प्रभु पिआरा । सतिगुर बचनि मेरो मनु मानिआ हरि पाए प्रान अधारा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इन बिधि हरि मिलीऐ वर कामनि धन सोहागु पिआरी । जाति बरन कुल सहसा चूका गुरमति सबदि बीचारी ॥ १ ॥ जिसु मनु मानै अभिमानु न ताकउ हिंसा लोभु विसारे । सहजि रवै वरु कामणि पिर की गुरमुखि रंगि सवारे ॥ २ ॥ जारउ ऐसी प्रीति कुटंब सनबंधी माइआ मोह पसारी । जिसु अंतरि प्रीति राम रसु नाही दुबिधा करम बिकारी ॥ ३ ॥ अंतरि रतन पदारथ हित कौ दुरै न लाल पिआरी । नानक गुरमुखि नामु अमोलकु जुगि जुगि अंतरि धारी ॥ ४ ॥ ३ ॥

मेरा प्रभु कभी दूर नहीं है। सतिगुरु के उपदेश से जब मन में विश्वास उपजता है, तो वह प्राणाधार प्रकट में प्राप्त होता है (दर्शन

देता है) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इस प्रकार जीवात्मा कामिनी को हरि-वर मिलता है और वह प्यारी जीव-स्त्री सुहागिन बनती है। गुरु के उपदेश-अनुसार विचार करके जाति-पाँति, कुल-वर्ण आदि का भ्रम दूर हो जाता है ॥ १ ॥ जो हृदय में प्रभु पर विश्वास लाती है, उसे अभिमान नहीं रहता, वह हिंसा और लोभ की वृत्तियों को भुला देती है। वह कामिनी सहज भाव से अपने पति-प्रभु के संग रमण करती एवं गुरु के द्वारा प्रेम-रंग में सँवरती है ॥ २ ॥ ऐसी प्रीति त्याज्य है, जो कुटुम्ब-सम्बन्धियों में मोह-माया का प्रसार करती है। जिसके भीतर हरि-नाम-रस का स्वाद नहीं, उसके कर्म दुविधा-युक्त होते हैं, अतः व्यर्थ होते हैं ॥ ३ ॥ जिसके भीतर प्रेम-पदार्थ है, वह छिपती नहीं। गुरु नानक कहते हैं कि वह (जीवात्मा) अपने प्रभु-पति की प्यारी होती है और नित्य (युग-युग के लिए) अनमोल हरि-नाम अपने अन्तर्मन में धारण किए रहती है ॥४॥३॥

सारंग महला ४ घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ हरि के संत जना की हम धूरि। मिलि सतसंगति परमपदु पाइआ आतम रामु रहिआ भरपूरि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतिगुरु संतु मिलै सांति पाईऐ किलविख दुख काटे सभि दूरि। आतम जोति भई परफूलित पुरखु निरंजनु देखिआ हजूरि ॥ १ ॥ वडै भागि सतसंगति पाई हरि हरि नामु रहिआ भरपूरि। अठसठि तीरथ मजनु कीआ सतसंगति पग नाए धूरि ॥ २ ॥ दुरमति बिकार मलीन मति होछी हिरदा कुसुधु लागा मोह कूरु। बिनु करमा किउ संगति पाईऐ हउमै बिआपि रहिआ मनु झूरि ॥ ३ ॥ होहु दइआल क्रिपा करि हरि जी मागउ सतसंगति पग धूरि। नानक संतु मिलै हरि पाईऐ जनु हरि भेटिआ रामु हजूरि ॥ ४ ॥ १ ॥

हम परमात्मा के भक्तों की चरणधूल के समान हैं। सत्संगति में रहकर हमें परम-पद की प्राप्ति हुई और हृदय में प्रभु का वास हुआ ॥१॥ रहाउ ॥ सच्चे गुरु से भेंट होने पर तन-मन को शान्ति मिलती है, सब पाप तथा दुःख कट जाते हैं। मायातीत परमपुरुष को समक्ष देखकर आत्मा प्रफुल्लित होती है ॥ १ ॥ बड़े ऊँचे भाग्य के कारण सन्तों की संगति मिलती है और हरि-हरि-नाम व्याप्त होता है। सत्संगति की चरणधूल में स्नान होने से समझिए कि अठसठ तीर्थों का स्नान हुआ ॥२॥ दुर्मति, विकृत एवं मलिन बुद्धि हृदय में ओछापन जगाती एवं मिथ्या मोह

में पगती है। उत्तम कर्मों (सौभाग्य) के बिना सत्संगति क्योंकर मिल सकती है? मन तो अहम्-भाव में पीड़ित रहता है ॥ ३ ॥ हे प्रभु, दया करो, मैं तुमसे सत्संगति की चरणधूल माँगता हूँ। गुरु नानक कहते हैं कि ऐसे सन्तों से भेंट होने पर ही परमात्मा मिलता है, जो स्वयं प्रभु को साक्षात् करते हैं ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ सारंग महला ४ ॥ गोबिंद चरनन कउ बलिहारी। भवजलु जगतु न जाई तरणा जपि हरि हरि पारि उतारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हिरदै प्रतीति बनी प्रभ केरी सेवा सुरति बीचारी। अनदिनु राम नामु जपि हिरदै सरब कला गुणकारी ॥ १ ॥ प्रभु अगम अगोचरु रविआ स्रब ठाई मनि तनि अलख अपारी। गुर किरपाल भए तब पाइआ हिरदै अलखु लखारी ॥ २ ॥ अंतरि हरि नामु सरब धरणीधर साकत कउ दूरि भइआ अहंकारी। त्रिसना जलत न कबहू बूझहि जूऐ बाजी हारी ॥ ३ ॥ ऊठत बैठत हरि गुन गावहि गुरि किंचत किरपा धारी। नानक जिन कउ नदरि भई है तिन की पैज सवारी ॥ ४ ॥ २ ॥

मैं प्रभु के चरणों पर क़ुर्बान हूँ। संसार-सागर दुस्तर है, केवल हरि-हरि-नाम जपकर ही इससे पार हुआ जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हृदय में परमात्मा का विश्वास जगा है, सेवा-वृत्ति बनी है; रात-दिन हृदय में उस सर्वकला-गुणागार प्रभु का नाम जपो ॥ १ ॥ प्रभु अगम, अगोचर है, सर्वव्याप्त और तन-मन के लिए अदृश्य एवं अतीन्द्रिय है। गुरु की कृपा हुई तो प्रभु मिला; हृदय में ही वह अदृश्य दीख पड़ने लगा ॥ २ ॥ अन्तर्मन में हरि-नाम हो, तो धरती का स्वामी परमात्मा सब कुछ है, (अन्यथा) मायावी तथा अहंकारी जीव से वह दूर रहता है। उसकी तृष्णा-अग्नि कभी नहीं बुझती, वह अपने मानव-जन्म की बाज़ी जुए में हार देता है ॥ ३ ॥ गुरु की किंचित् कृपा हो, तो जीव उठते-बैठते हरि-गुण-गान करता है। गुरु नानक कहते हैं कि जिन पर उसकी कृपा-दृष्टि हुई है, वह उनकी लाज का रक्षक होता है ॥ ४ ॥ २ ॥

॥ सारग महला ४ ॥ हरि हरि अंम्रित नामु देहु पिआरे। जिन ऊपरि गुरमुखि मनु मानिआ तिन के काज सवारे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो जन दीन भए गुर आगै तिन के दूख निवारे। अनदिनु भगति करहि गुर आगै गुर कै सबदि सवारे ॥ १ ॥ हिरदै नामु अंम्रित रसु रसना रसु गावहि रसु बीचारे।

गुरपरसादि अंम्रित रसु चीन्हिआ ओइ पावहि मोख दुआरे ॥ २ ॥ सतिगुरु पुरखु अचलु अचला मति जिसु द्रिड़ता नामु अधारे । तिसु आगै जीउ देवउ अपुना हउ सतिगुर कै बलिहारे ॥ ३ ॥ मनमुख भ्रमि दूजै भाइ लागे अंतरि अगिआन गुबारे । सतिगुरु दाता नदरि न आवै ना उरवारि न पारे ॥ ४ ॥ सरबे घटि घटि रविआ सुआमी सरब कला कल धारे । नानकु दासनि दासु कहत है करि किरपा लेहु उबारे ॥ ५ ॥ ३ ॥

हे प्यारे प्रभुजी, कृपा-पूर्वक हमें हरि का अमृत-नाम प्रदान करो। जिन पर गुरु को प्रतीति हुई, उनके कार्य सँवर गए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो जन गुरु के सम्मुख विनम्र हुए, उनके दुःख उसने (प्रभु ने) दूर कर दिए। रात-दिन वे गुरु के सम्मुख भक्ति करते हैं, अतः वे गुरु के शब्द (उपदेश) से सँवर जाते हैं ॥ १ ॥ जिनके हृदय में नाम-रस झरता है, वे जिह्वा से इसी रस को खाते एवं इसी रस को विचारते हैं। गुरु की कृपा से वे अमृत-रस को पहचानते हैं और मोक्ष का द्वार प्राप्त करते हैं ॥ २ ॥ सतिगुरु निश्चल पुरुष है, उसकी मति भी निश्चल होती है और राम-नाम का आश्रय होने के कारण उसमें परम दृढ़ता रहती है। ऐसे सतिगुरु पर मैं क़ुर्बान हूँ और उसके सम्मुख अपने-आप को समर्पित करता हूँ ॥ ३ ॥ मनमुख (गुरु-विमुख) जीव द्वैत-भाव के कारण अज्ञान का अँधेरा ओढ़े हुए नित्य भ्रमों में भटकता है। उसे सबका मोक्ष-प्रदाता सतिगुरु दीख नहीं पड़ता, अतः वे यहाँ-वहाँ (इस लोक एवं परलोक) कहीं भी सुखी नहीं होते ॥ ४ ॥ वह प्रभु सब जगहों एवं समस्त हृदयों में रमता है तथा सर्वशक्तिमान् होने के कारण पुनः शक्ति धारण करता है। गुरु नानक तुम्हारे दासों के दास हैं, कृपा-पूर्वक उनका भी उद्धार कीजिए ॥ ५ ॥ ३ ॥

॥ सारग महला ४ ॥ गोबिद की ऐसी कार कमाइ । जो किछु करे सु सति करि मानहु गुरमुखि नामि रहहु लिव लाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गोबिद प्रीति लगी अति मीठी अवर विसरि सभ जाइ । अनदिनु रहसु भइआ मनु मानिआ जोती जोति मिलाइ ॥ १ ॥ जब गुण गाइ तब ही मनु त्रिपतै सांति वसै मनि आइ । गुर किरपाल भए तब पाइआ हरि चरणी चितु लाइ ॥ २ ॥ मति प्रगास भई हरि धिआइआ गिआनि तति लिवलाइ । अंतरि जोति प्रगटी मनु मानिआ हरि सहजि समाधि लगाइ ॥ ३ ॥ हिरदै कपटु नित कपटु कमावहि मुखहु हरि हरि

सुणाइ । अंतरि लोभु महा गुबारा तुह कूटै दुख खाइ ॥ ४ ॥ जब सुप्रसंन भए प्रभ मेरे गुरमुखि परचा लाइ । नानक नाम निरंजनु पाइआ नामु जपत सुखु पाइ ॥ ५ ॥ ४ ॥

परमात्मा की लीलाएँ ऐसी ही हैं। जो कुछ वह करता है, उसे सत्य मानो और गुरु के द्वारा उसके नाम में रत रहो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गोविन्द में अति मधुर प्रीति लगने से अन्य सब लगाव विस्मृत हो जाते हैं; मन में सदैव आनन्द बना रहता है और जीव अन्ततः परमज्योति (परमात्मा) में ही समा जाता है ॥ १ ॥ जब-जब प्रभु के गुण गाते हैं, तभी मन में शान्ति आती है। जब गुरु-कृपा होती है और जीव प्रभु के चरणों में मन रमाता है, तो उससे साक्षात् भेंट हो जाती है ॥ २ ॥ ज्ञान द्वारा तत्त्व-रूप हरि में निमग्न होने एवं सदैव उनका ध्यान करने से बुद्धि आलोकित होती है। परमात्मा में अटल ध्यान केन्द्रित करके, विश्वस्त मन के साथ (जब जीव प्रभु का भजन करता है, तो) उसके भीतर ज्योति प्रकट हो जाती है ॥ ३ ॥ जो व्यक्ति मुँह से हरि-हरि बोले, किन्तु जिसके मन में कपट हो और जिसका व्यवहार भी कपटमय हो; अन्तर्मन में लोभ और अज्ञान भरा हो, उसके समस्त उपक्रम व्यर्थ हैं (जल मथने के समान हैं) ॥ ४ ॥ जब मेरे प्रभु प्रसन्न होते हैं, गुरु के द्वारा उसका परिचय मिल जाता है, तब, गुरु नानक कहते हैं, मायातीत हरि-नाम मिलता है, जिसके जपने से परमसुख की प्राप्ति होती है ॥ ५ ॥ ४ ॥

॥ सारग महला ४ ॥ मेरा मनु राम नामि मनु मानी । मेरै हीअरै सतिगुरि प्रीति लगाई मनि हरि हरि कथा सुखानी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दीन दइआल होवहु जन ऊपरि जन देवहु अकथ कहानी । संत जना मिलि हरि रसु पाइआ हरि मनि तनि मीठ लगानी ॥ १ ॥ हरि कै रंगि रते बैरागी जिन्ह गुरमति नामु पछानी । पुरखै पुरखु मिलिआ सुखु पाइआ सभ चूकी आवण जानी ॥ २ ॥ नैणी बिरहु देखा प्रभ सुआमी रसना नामु वखानी । स्रवणी कीरतनु सुनउ दिनु राती हिरदै हरि हरि भानी ॥ ३ ॥ पंच जना गुरि वसगति आणे तउ उनमनि नामि लगानी । जन नानक हरि किरपा धारी हरि रामै नामि समानी ॥ ४ ॥ ५ ॥

मेरे मन में प्रभु-नाम का पूर्ण विश्वास जगा है। मेरे हृदय में सतिगुरु की कृपा से प्रभु-प्रीति बनी है और अब मन को हरि-कथा ही रुचती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे दीनदयालु, अपने सेवक पर कृपा करो और उसे

अपने अकथनीय रहस्य समझाओ। सन्तों की संगति में रहकर प्रभु-मिलन-रस प्राप्त हुआ है और मन में परम मधुर अनुभूति मिली है ॥ १ ॥ गुरु के द्वारा जो हरि-नाम को पहचानते हैं, वे प्रभु के प्यार में रँगकर अन्तर्मुखी हो जाते हैं। उन्हें कर्ता-पुरुष (परमात्मा) मिल जाने से सुख प्राप्त होता है, उनका आवागमन चुक जाता है ॥ २ ॥ आँखों में प्रभु स्वामी को देखने की उत्सुकता है, जिह्वा से उसका नाम जपता हूँ, कानों से रात-दिन कीर्तन सुनता हूँ, हृदय में नित्य हरि-नाम ही प्रिय लगता है ॥ ३ ॥ गुरु की सहायता से पाँच इन्द्रियाँ (काम-क्रोधादि) वश में करके हृदय को त्रिगुणातीत हरि-नाम में लगाओ। गुरु नानक कहते हैं, तब हरि-कृपा से प्रभु में ही विलीन हो जाओगे ॥ ४ ॥ ५ ॥

॥ सारग महला ४ ॥ जपि मन राम नामु पढ़ु सारु। राम नाम बिनु थिरु नही कोई होरु निहफल सभु बिसथारु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ किआ लीजै किआ तजीऐ बउरे जो दीसै सो छारु। जिसु बिखिआ कउ तुम्ह अपुनो करि जानहु सा छाडि जाहु सिरि भारु ॥ १ ॥ तिलु तिलु पलु पलु अउध फुनि घाटै बूझि न सकै गवारु। सो किछु करै जि साथि न चालै इहु साकत का आचारु ॥ २ ॥ संत जना कै संगि मिलु बउरे तउ पावहि मोख दुआरु ॥ बिनु सतसंग सुखु किनै न पाइआ जाइ पूछहु बेद बीचारु ॥ ३ ॥ राणा राउ सभै कोऊ चालै झूठु छोडि जाइ पासारु। नानक संत सदा थिरु निहचलु जिन राम नामु आधारु ॥ ४ ॥ ६ ॥

ऐ मन, तत्त्व वस्तु हरि-नाम को पढ़ो (जपो)। हरि-नाम के बिना और सब नश्वर है, समूचा विस्तार बेकार है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऐ मूर्ख, यहाँ से क्या लें, क्या छोड़ें, दृश्यमान सर्वस्व मिट्टी है। जिन विषयों को तुम अपना समझते हो, वे सब सिर पर पापों का बोझ बन रहे हैं ॥ १ ॥ प्रतिक्षण आयु घटती जा रही है, अपने गँवारपन में तुम इस तथ्य को समझते नहीं। वही सब करते हो, जो मृत्यूपरांत तुम्हारे साथ नहीं चलता, यही मायावी जीवों का आचरण होता है ॥ २ ॥ ऐ पगले, सन्तों की संगति में बैठ, तब मोक्ष का द्वार मिलेगा, सत्संगति के बिना किसी ने सुख नहीं पाया, चाहे वैदिक विचारधारा की प्रामाणिकता ले लो ॥ ३ ॥ राजा-महाराजा भी अपने झूठे प्रसार के कारण चलायमान हैं। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम का आश्रय लेनेवाले सन्त ही यहाँ स्थिर होते हैं ॥ ४ ॥ ६ ॥

सारग महला ४ घरु ३ दुपदा

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ काहे पूत झगरत हउ संगि बाप । जिनके जणे बडीरे तुम हउ तिन सिउ झगरत पाप ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसु धन का तुम गरबु करत हउ सो धनु किसहि न आप । खिन महि छोडि जाइ बिखिआ रसु तउ लागै पछुताप ॥ १ ॥ जो तुमरे प्रभ होते सुआमी हरि तिन के जापहु जाप । उपदेसु करत नानक जन तुम कउ जउ सुनहु तउ जाइ संताप ॥ २ ॥ १ ॥ ७ ॥

हे पुत्र, पिता के साथ क्यों झगड़ते हो ? जिन्होंने तुमको पैदा किया, पालन-पोषण द्वारा बड़ा किया, उनसे झगड़ना पाप है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस धन के कारण तुम गर्व करते हो, वह कभी किसी का अपना नहीं है । क्षण भर में ही इस विषय-रस को छोड़कर चल देना होता है, तब पश्चात्ताप लगता है ॥ १ ॥ जो हरि तुम्हारे स्वामी हैं, उनका जाप करो । गुरु नानक तुम्हें यह उपदेश करते हैं, सुनोगे (मानोगे) तो सब सन्ताप नष्ट हो जायँगे ॥ २ ॥ १ ॥ ७ ॥

सारग महला ४ घरु ५ दुपदे पड़ताल

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ जपि मन जगंनाथ जगदीसरो जग जीवनो मन मोहन सिउ प्रीति लागी मै हरि हरि हरि टेक सभ दिनसु सभ राति ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि की उपमा अनकि अनिक अनिक गुन गावत सुक नारद ब्रहमादिक तव गुन सुआमी गनिन न जाति । तू हरि बेअंतु तू हरि बेअंतु तू हरि सुआमी तू आपे ही जानहि आपनी भांति ॥१॥ हरि कै निकटि निकटि हरि निकट ही बसते ते हरि के जन साधू हरि भगात । ते हरि के जन हरि सिउ रलि मिले जैसे जन नानक सललै सलल मिलाति ॥२॥१॥८॥

ऐ मन, संसार के स्वामी, जगत के ईश्वर, सृष्टि के जीवन-दाता, सबके मन को मोह लेनेवाले परमात्मा का नाम जपो । मुझे प्रभु से प्रीति लगी है, रात-दिन मुझे उसी हरि का सहारा है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परमात्मा की अनेकानेक उपमाएँ (कीर्तियाँ) हैं; शुकदेव, नारद, ब्रह्मा आदि, ऐ स्वामी, तुम्हारे ही गुण गाते हैं । तुम्हारे गुण अगणित हैं । ऐ हरि, तुम बे-अन्त, सबके स्वामी हो, तुम अपनी लीलाएँ स्वयं ही जानते

हो ॥ १ ॥ जो जीव नित्य परमात्मा के निकट बसते हैं, वे हरि के दास, हरिभक्त होते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि वे हरि-भक्त हरि से ऐसे घुले-मिले होते हैं, जैसे जल जल में मिल जाता है ॥ २ ॥ १ ॥ ८ ॥

॥ सारंग महला ४ ॥ जपि मन नरहरे नरहर सुआमी हरि सगल देव देवा स्री राम राम नामा हरि प्रीतमु मोरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जितु ग्रिहि गुन गावते हरि के गुन गावते राम गुन गावते तितु ग्रिहि वाजे पंच सबद वडभाग मथोरा। तिन्ह जन के सभि पाप गए सभि दोख गए सभि रोग गए कामु क्रोधु लोभु मोहु अभिमानु गए तिन्ह जन के हरि मारि कढे पंच चोरा ॥ १ ॥ हरि राम बोलहु हरि साधू हरि के जन साधू जगदीसु जपहु मनि बचनि करमि हरि हरि आराधू हरि के जन साधू। हरि राम बोलि हरि राम बोलि सभि पाप गवाधू। नित नित जागरणु करहु सदा सदा आनंदु जपि जगदीसुोरा। मन इछे फल पावहु सभै फल पावहु धरमु अरथु काम मोखु जन नानक हरि सिउ मिले हरि भगत तोरा ॥ २ ॥ २ ॥ ६ ॥

हे मन, तुम नरहरि (परमात्मा) का नाम जपो, वह सब देवों का देव है, उसका नाम सर्वोपरि है, वही मेरा प्रियतम है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस घर में हरि के गुण गाते हैं, प्रभु के गुण गाते हैं, उस घर में असंख्य ख़ुशियाँ होती हैं (पाँच प्रकार के बाजे बजते हैं) और घर वालों के माथे की भाग्य-रेखाएँ गहरी हो जाती हैं। उन भक्त लोगों के सब पाप, दोष, रोग-शोक एवं काम-क्रोध, लोभ, मोह, अभिमान, सब दूर हो जाते हैं। स्वयं परमात्मा उनके पाँच विकारों को मारकर निकाल देता है ॥ १ ॥ हरि-नाम लेनेवाले, हरि के सेवक, मन-वचन-कर्म से जगदीश्वर का नाम जपनेवाले, हरि की एकाग्र आराधना करनेवाले, सब हरिजन साधु हैं। वे सदैव हरि-नाम बोल-बोलकर समस्त पापों को दूर करते हैं। वे नित्य जाग्रत् रहते और प्रभु-नाम जपकर आनन्दित होते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि वे हरिभक्त मनोवांछित धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष के चतुष्फल प्राप्त करते और नित्य हरि में ही लीन रहते हैं ॥ २ ॥ २ ॥ ९ ॥

॥ सारग महला ४ ॥ जपि मन माधो मधुसूदनो हरि स्रीरंगो परमेसरो सति परमेसरो प्रभु अंतरजामी। सभ दूखन को हंता सभ सूखन को दाता हरि प्रीतम गुन गाओु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि घटि घटे घटि बसता हरि जलि थले हरि बसता हरि थान

थानंतरि बसता मै हरि देखन को चाउो । कोई आवै संतो हरि का जनु संतो मेरा प्रीतम जनु संतो मोहि मारगु दिखलावै । तिसु जन के हउ मलि मलि धोवा पाउो ।। १ ।। हरिजन कउ हरि मिलिआ हरि सरधा ते मिलिआ गुरमुखि हरि मिलिआ । मेरै मनि तनि आनंद भए मै देखिआ हरि राउो । जन नानक कउ किरपा भई हरि की किरपा भई जगदीसुर किरपा भई । मै अनदिनो सद सद सदा हरि जपिआ हरि नाउो ।। २ ।। ३ ।। १० ।।

ऐ मन, माधव, मधुसूदन, श्रीरंग, परमेश्वर, अन्तर्यामी प्रभु का नाम जपो (भगवान के अनेक नाम हैं, उसे किसी भी नाम से याद करो) । सब दुःखों को दूर करनेवाले, सब सुखों के दाता हरि प्रियतम के गुण गाओ ।। १ ।। रहाउ ।। परमात्मा सर्व-व्यापक है, वह प्रत्येक शरीर में बसता है, जल-थल में बसता है, जगह-जगह वह विद्यमान है, मुझे उसे देखने का नित्य चाव है । कोई हरिजन, सन्त, कोई मेरे प्रियतम का सेवक सन्त आकर मुझे मार्ग दिखलाए, तो मैं उसके पाँव मल-मलकर धोऊँ ।। १ ।। हरि के भक्तों को हरि मिला, हरि श्रद्धा से मिला, हरि गुरु के द्वारा मिला— जब मैंने हरि को प्रकट देखा, तो मेरे तन-मन में परम आनन्द हुआ । गुरु नानक कहते हैं कि जब मुझ पर हरि की कृपा हुई, जगदीश्वर की कृपा हुई तो मैंने रात-दिन सदा हरि-नाम का जाप किया ।। २ ।। ३ ।। १० ।।

।। सारग महला ४ ।। जपि मन निरभउ । सति सति सदा सति । निरवैरु अकाल मूरति । आजूनी संभउ । मेरे मन अनदिनु धिआइ निरंकारु निराहारी ।। १ ।। रहाउ ।। हरि दरसन कउ हरि दरसन कउ कोटि कोटि तेतीस सिध जती जोगी तट तीरथ परभवन करत रहत निराहारी । तिन जन की सेवा थाइ पई जिन्ह कउ किरपाल होवतु बनवारी ।। १ ।। हरि के हो संत भले ते ऊतम भगत भले जो भावत हरि राम मुरारी । जिन्ह का अंगु करै मेरा सुआमी तिन्ह की नानक हरि पैज सवारी ।। २ ।। ४ ।। ११ ।।

हे मन, उस निर्भय प्रभु का नाम जपो । वह सदा सत्यस्वरूप है । निर्वैर तथा अकाल-रूप है । अजन्मा एवं स्वयंभू है । मेरे मन, रात-दिन उस निराहारी निराकार प्रभु को जपते रहो ।। १ ।। रहाउ ।। हरि-दर्शन के ही लिए तेंतीस कोटि देवता, सिद्ध, यती, योगी, तटों-तीर्थों का भ्रमण करते एवं व्रत-उपवास के अनुष्ठान करते हैं । उन सेवकों की

सेवा स्वीकृत होती है, जिन पर वह परमात्मा स्वयं कृपा करता है ।। १ ।। हरि-नाम जपनेवाले भले हैं, उनसे भी अधिक हरि के भक्त भले हैं, जो स्वयं प्रभु को प्रिय हैं। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-प्रभु उनका संरक्षक है, उसने उनकी सदैव लाज रखी है ।। २ ।। ४ ।। ११ ।।

।। सारग महला ४ पड़ताल ।। जपि मन गोविंदु हरि गोविंदु गुणी निधानु सभ स्रिसटि का प्रभो मेरे मन हरि बोलि हरि पुरखु अबिनासी ।। १ ।। रहाउ ।। हरि का नामु अंम्रितु हरि हरि हरे सो पीऐ जिसु रामु पिआसी। हरि आपि दइआलु दइआ करि मेलै जिसु सतिगुरू सो जनु हरि हरि अंम्रित नामु चखासी ।। १ ।। जो जन सेवहि सद सदा मेरा हरि हरे तिन का सभु दूखु भरमु भउ जासी। जनु नानकु नामु लए तां जीवै जिउ चात्रिकु जलि पीऐ त्रिपतासी ।। २ ।। ५ ।। १२ ।।

हे मन, गोविंद-नाम जपो, वह गुणों का कोष है, समूची सृष्टि का स्वामी है; ऐ मेरे मन, अविनाशी हरि का नाम बोलो ।। १ ।। रहाउ ।। हरि का नाम अमृत-सम है, इस रस को वही पीता है जिसे कृपा-वश प्रभु स्वयं पिलाता है। दयालु हरि दयापूर्वक जिसे देता है, वही जन हरि-नाम-रस को चखता है ।। १ ।। जो जन सदा मेरे प्रभु की सेवा में रत रहते हैं, वह उनके समस्त दुःख, भ्रम, भयादि हरण कर लेता है। गुरु नानक कहते हैं कि वे तो उसके नाम के सहारे ही जीते हैं, जैसे चातक केवल स्वाति-बूंद से ही तृप्त होता है ।। २ ।। ५ ।। १२ ।।

।। सारग महला ४ ।। जपि मन सिरी रामु। राम रमत रामु। सति सति रामु। बोलहु भईआ सद राम रामु रामु रवि रहिआ सरबगे ।। १ ।। रहाउ ।। रामु आपे आपि आपे सभु करता रामु आपे आपि आपि सभतु जगे। जिसु आपि क्रिपा करे मेरा राम राम रामराइ सो जनु राम नाम लिव लागे ।। १ ।। राम नाम की उपमा देखहु हरि संतहु जो भगत जनां की पति राखै विचि कलिजुग अगे। जन नानक का अंगु कीआ मेरै रामराइ दुसमन दूख गए सभि भगे ।। २ ।। ६ ।। १३ ।।

ऐ मन, श्रीराम का नाम जपो। वह राम जपो, जो सबमें रमता है। जो राम सत्य-स्वरूप है। जो राम सर्वज्ञ और सर्व-व्यापक है, हे भाई, उसी का नाम जपो ।। १ ।। रहाउ ।। राम स्वयं ही सर्वस्व है, सर्वकर्ता है, स्वयं ही सर्वव्यापक है। जिस पर मेरा राम स्वयं कृपा

करता है, वही राम-नाम में चित्त लगा पाता है ॥ १ ॥ हे सन्तजनो, राम-नाम की बड़ाई इसी में है कि घोर कलियुग में भी इसी से भक्तजनों की लाज बचती है। गुरु नानक कहते हैं कि जब मेरा प्रभु मेरे पक्ष में है, तो सब शत्रु और दुःख भाग जाते हैं ॥ २ ॥ ६ ॥ १३ ॥

सारंग महला ५ चउपदे घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सतिगुर मूरति कउ बलि जाउ । अंतरि पिआस चात्रिक जिउ जल की सफल दरसनु कदि पांउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनाथा को नाथु सरब प्रतिपालकु भगति वछलु हरि नाउ । जा कउ कोइ न राखै प्राणी तिसु तू देहि असराउ ॥ १ ॥ निधरिआ धर निगतिआ गति निथाविआ तू थाउ । दहदिस जांउ तहां तू संगे तेरी कीरति करम कमाउ ॥ २ ॥ एकसु ते लाख लाख ते एका तेरी गति मिति कहि न सकाउ । तू बेअंतु तेरी मिति नही पाईऐ सभु तेरो खेलु दिखाउ ॥ ३ ॥ साधन का संगु साध सिउ गोसटि हरि साधन सिउ लिव लाउ । जन नानक पाइआ है गुरमति हरि देहु दरसु मनि चाउ ॥ ४ ॥ १ ॥

सतिगुरु के स्वरूप (आचरण-व्यवहार वाले रूप) पर मैं क़ुर्बान हूँ। मैं कब उसके फलदायी दर्शन पाऊँगा ? मेरे भीतर गुरु-दर्शन की ऐसी प्यास है, जैसी चातक में स्वाति-जल के लिए होती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि का नाम बे-सहारों का सहारा, सबका प्रतिपालक एवं भक्त-वत्सल है। जिसे कोई प्राणी संरक्षण नहीं दे पाता, उसे तुम आसरा देते हो ॥ १ ॥ हे प्रभु, तुम अनाश्रितों के आश्रय, अमतिजन्य जीवों की गति एवं बे-ठिकाना जीवों को ठिकाना हो। दसों दिशाओं में कहीं भी जाऊँ, तुम सदैव अंग-संग रहते हो, मैं तुम्हारे यशोगान रूप में कर्म कमाता हूँ ॥ २ ॥ तुम, हे प्रभु ! एक से लाख और लाख से एक होते हो, तुम्हारी महत्ता और गहराई कोई नहीं जानता। तुम अनन्त हो, तुम्हारा अनुमान भी सम्भव नहीं, यद्यपि समूचा सृष्टि का प्रसार तुम्हारा ही है ॥ ३ ॥ साधुजन साधुजनों की संगति में रहते हैं, साधुजन से चर्चा-बैठकें करते हैं और सब साधनों का उत्तमतम साधन तुममें एकाग्र प्रेम ही है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु के उपदेश द्वारा हरि-नाम प्राप्त हुआ है। हरि के दर्शनों का मन में चाव है; हे हरि, दर्शन दो ॥४॥१॥

॥ सारग महला ५ ॥ हरि जीउ अंतरजामी जान। करत बुराई मानुख ते छपाई साखी भूत पवान ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बैसनौ नामु करत खट करमा अंतरि लोभ जूठान। संत सभा की निंदा करते डूबे सभ अगिआन ॥ १ ॥ करहि सोमपाकु हिरहि परदरबा अंतरि झूठ गुमान। सासत्र बेद की बिधि नही जाणहि बिआपे मन कै मान ॥ २ ॥ संधिआ काल करहि सभि वरता जिउ सफरी दंफान। प्रभू भूलाए ऊझड़ि पाए निहफल सभि करमान ॥ ३ ॥ सो गिआनी सो बैसनो पढ़िआ जिसु करी क्रिपा भगवान। ओनि सतिगुरु सेवि परमपदु पाइआ उधरिआ सगल बिस्वान ॥ ४ ॥ किआ हम कथह किछु कथि नही जाणह प्रभ भावै तिवै बुोलान। साध संगति की धूरि इक मांगउ जन नानक पइओ सरान ॥ ५ ॥ २ ॥

परमात्मा का अन्तर्यामी समझो। बुराई करते हुए मनुष्य से तो छिप सकते हो, किन्तु परमात्मा तो पवन की नाईं सब जगह विद्यमान है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जीव अपने को वैष्णव कहता है, छः प्रकार के शास्त्रानुसार कर्म करता है, किन्तु भीतर लोभ की जूठन भरी है। वे लोग सन्तजनों की निन्दा करते हैं एवं अज्ञान में डूबे रहते हैं ॥ १ ॥ वह सोम-पाक यज्ञ करे, दूसरों का द्रव्य हरण करे और भीतर मिथ्या अभिमान धारण करता है। वेद-शास्त्र की विधि जाने बिना मन का अभिमान दूर नहीं होता ॥ २ ॥ सन्ध्याकाल की प्रार्थना और व्रत-अनुष्ठान करके भी वैसा मनुष्य पाखण्डी ही कहलाता है। परमात्मा की शरण में न आने से सब कर्म निष्फल होते हैं ॥ ३ ॥ ज्ञानी, वैष्णवी एवं पढ़ा-लिखा (विद्याधर) व्यक्ति वही है, जिस पर परमात्मा की कृपा होती है। वह सतिगुरु की कृपा से परमपद को प्राप्त होते हैं एवं समस्त सृष्टि का उद्धार कर सकते हैं ॥ ४ ॥ हम करते कुछ हैं, चर्चा कुछ करते हैं; जैसा भी प्रभु प्रेरित करता है, जीव वैसा ही बोलते हैं। गुरु नानक दास तुम्हारी शरण में है और सन्तों की चरण-धूल का इच्छुक है ॥ ५ ॥ २ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ अब मोरो नाचनो रहो। लालु रगीला सहजे पाइओ सतिगुर बचनि लहो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कुआर कंनिआ जैसे संगि सहेरी प्रिअ बचन उपहास कहो। जउ सुरिजनु ग्रिह भीतरि आइओ तब मुखु काजि लजो ॥ १ ॥ जिउ कनिको कोठारी चड़िओ कबरो होत फिरो। जब ते सुध भए है बारहि तब ते थान थिरो ॥ २ ॥ जउ दिनु रैनि तऊ लउ

बजिओ मूरत घरी पलो। बजावनहारो ऊठि सिधारिओ तब फिरि बाजु न भइओ ॥ ३ ॥ जैसे कुंभ उदक पूरि आनिओ तब ओहु भिन द्रिसटो। कहु नानक कुंभु जलै महि डारिओ अंभै अंभ मिलो ॥ ४ ॥ ३ ॥

अब मेरा भटकना समाप्त हो गया है। सतिगुरु के उपदेश से मुझे मेरा बाँका प्रियतम मिला है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ (अभिप्राय यह कि मन की उधेड़बुन तब तक रहती है, जब तक परमात्मा मिलता नहीं। मिलनोपरांत स्थिति अनिर्वचनीय हो जाती है।) जैसे विवाह-पूर्व कन्या अपनी सखियों के साथ हँस-हँसकर प्रियतम की बातें करती है, किन्तु जब पति घर में आ जाता है (मिलाप हो जाता है), तो उसके सम्बन्ध में कुछ भी कहते लजाने लगती है ॥ १ ॥ जैसे कुठाली में शुद्धिकरण से पूर्व डाला सोना ख़ूब तिड़-तिड़ करता है, किन्तु जब शुद्ध हो जाता है, तो शांत-स्थिर हो जाता है। (वैसे ही मनुष्य प्रभु की बातें बनाने में चुस्त है, किन्तु सच्चा भक्त शान्त और स्थिर होता है।) ॥२॥ जब तक रात्रि का अन्धकार रहता है, घड़ियाल गुज़रते समय (आयु की रात्रि) का संकेत (घड़ियों, पलों, मुहूर्तों के माध्यम से) देता है, किन्तु जब (दिन होते ही) बजानेवाला उठकर चल देता है, तब वह दोबारा नहीं बजता ॥ ३ ॥ जैसे पानी से भरा घड़ा अलग ही दीख पड़ता है, वैसे ही गुरु नानक कहते हैं, घड़े के जल को और जल में डाल दें तो वह अभिन्न हो जाता है। (अर्थात् गुरु-कृपा से जब जीव हरि-नाम से भर जाता है, तो अन्यों से अलग दीखता है और अन्ततः वह हरि से ही अभिन्न हो जाता है।) ॥४॥३॥

॥ सारग महला ५ ॥ अब पूछे किआ कहा। लैनो नामु अंम्रित रसु नीको बावर बिखु सिउ गहि रहा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दुलभ जनमु चिरंकाल पाइओ जातउ कउडी बदलहा। काथूरी को गाहकु आइओ लादिओ कालर बिरख जिवहा ॥ १ ॥ आइओ लाभु लाभन कै ताई मोहनि ठागउरी सिउ उलझि पहा। काच बादरै लालु खोई है फिरि इहु अउसरु कदि लहा ॥ २ ॥ सगल पराध एकु गुणु नाही ठाकुरु छोडह दासि भजहा। आई मसटि जड़वत की निआई जिउ तसकरु दरि सांन्हिहा ॥३॥ आन उपाउ न कोऊ सूझै हरि दासा सरणी परि रहा। कहु नानक तब ही मन छुटीऐ जउ सगले अउगन मेटि धरहा ॥ ४ ॥ ४ ॥

अब पूछो तो क्या कहूँ ? लेना तो अमृत-समान हरि-नाम है, किन्तु दीवाना मनुष्य विष (माया) से ही चिपका रहा ॥ १ ॥ रहाउ ॥

चिरकाल उपरांत प्राप्त किया दुर्लभ जन्म कौड़ियों के बदले जाता है। (दशा ऐसी है कि) भक्ति रूपी कस्तूरी का ग्राहक बनकर आया, किन्तु बैल (मूढ़) ने अपने पर कल्लर (भुरभुरी मिट्टी) लाद लिया ॥ १ ॥ जीवन का लाभ उठाना था, किन्तु मोहिनी माया की ठग-मूरि में उलझकर रह गया। ('ठगमूरि' एक जड़ी होती थी, जिसे ठग लोग पथिकों को पिलाकर मूर्च्छित कर देते और फिर लूट लेते थे।) काँच के बदले हीरा खो देता है, पुनः ऐसा अवसर कब मिलेगा ॥ २ ॥ मनुष्य में अनेक दोष हैं, गुण एक भी नहीं; स्वामी को छोड़कर दासी (माया) को भजता है और जैसे चोर सेंध में फँसकर घायल और मूर्च्छित हो जाता है, वैसे ही जड़ता की चुप्पी में जीव भी मूर्च्छित हुआ रहता है ॥ ३ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि अन्य कोई उपाय नहीं सूझता, केवल हरि के सन्तों की शरण में पड़ा रहने में ही कल्याण है। मन की दुविधा तभी छूटती है, जब समस्त अवगुण मिट जाते हैं ॥ ४ ॥ ४ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ माई धीरि रही प्रिअ बहुतु बिरागिओ। अनिक भांति आनूप रंग रे तिन्ह सिउ रुचै न लागिओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ निसि बासुर प्रिअ प्रिअ मुखि टेरउ नींद पलक नही जागिओ। हार कजर बसत्र अनिक सीगार रे बिनु पिर सभै बिखु लागिओ ॥ १ ॥ पूछउ पूछउ दीन भांति करि कोऊ कहै प्रिअ देसांगिओ। हींओ देंउ सभु मनु तनु अरपउ सीसु चरण परि राखिओ ॥ २ ॥ चरण बंदना अमोल दासरो देंउ साध संगति अरदागिओ। करहु क्रिपा मोहि प्रभू मिलावहु निमख दरसु पेखागिओ ॥ ३ ॥ द्रिसटि भई तब भीतरि आइओ मेरा मनु अनदिनु सीतलागिओ। कहु नानक रसि मंगल गाए सबदु अनाहदु बाजिओ ॥ ४ ॥ ५ ॥

हे माई, मेरा धैर्य चुक गया है, मुझे प्रियतम का महता वैराग्य हुआ है। अनेक रंग-रूपों के अन्यान्य पदार्थों में मेरा मन नहीं लगता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रात-दिन अपने प्रिय को पुकारती हूँ, पल भर भी नींद नहीं आती, जागती रहती हूँ। शृंगार के प्रसाधन, हार, काजल, वस्त्रादि, सब प्रियतम के बिना मुझे विष-समान लगते हैं ॥ १ ॥ दीनता-विनम्रतापूर्वक मैं सबसे पूछती हूँ कि कोई तो मुझे प्रियतम का देश बता दे। मैं उसे अपना हृदय दूँगी, तन-मन अर्पित करूँगी, अपना शीश उसके चरणों पर डाल दूँगी (जो मुझे प्रिय का पता बताएगा) ॥ २ ॥ चरणों पर नमन करती हुई मैं सत्संगति में बिना मोल उसकी दासी बनने को तैयार हूँ, जो कृपा करके मुझे मेरे स्वामी का दर्शन करवा दे, उससे मेरी भेंट करवा

दे ॥ ३ ॥ प्रभु की कृपा-दृष्टि हुई तो परमात्मा मेरे भीतर आ बसा और मेरा परितप्त मन शीतल हुआ। गुरु नानक कहते हैं कि तब मैंने मंगल-गीत गाए और अनाहत संगीत का रस-पान कर लिया ॥ ४ ॥ ५ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ माई सति सति सति हरि सतिं सति सति साधा। बचनु गुरू जो पूरै कहिओ मै छीकि गांठरी बाधा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ निसिबासुर नखिअत्र बिनासी रवि ससीअर बेनाधा। गिरि बसुधा जल पवन जाइगो इकि साध बचन अटलाधा ॥ १ ॥ अंड बिनासी जेर बिनासी उतभुज सेत बिनाधा। चारि बिनासी खटहि बिनासी इकि साध बचन निहचलाधा ॥ २ ॥ राज बिनासी ताम बिनासी सातकु भी बेनाधा। द्रिसटिमान है सगल बिनासी इकि साध बचन आगाधा ॥ ३ ॥ आपे आपि आप ही आपे सभु आपन खेलु दिखाधा। पाइओ न जाई कही भांति रे प्रभु नानक गुर मिलि लाधा ॥ ४ ॥ ६ ॥

हे माता, परमात्मा एवं उसके साधक, सब सत्य हैं। गुरु ने जो उपदेश दिया है, मैंने उसे भलीभाँति दामन में गठरी बाँध लिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दिन, रात, नक्षत्र सब नश्वर हैं, सूर्य और चन्द्र नाशवान् हैं। गिरि, धरती, जल, पवन आदि भी मिट जायँगे, केवल एक सन्त-वचन ही अटल रहेगा ॥ १ ॥ अंडज, जेरज, उद्भुज एवं स्वेदज सृष्टियाँ नष्ट होंगी। चारों वेद मिट जायँगे, छः शास्त्र नष्ट होंगे, किन्तु सन्तों का वचन निश्चल रहेगा ॥ २ ॥ रजोगुण, तमोगुण एवं सतोगुण भी नश्वर हैं; जो कुछ भी दृश्यमान है, सब नष्ट होगा। केवल सन्तों का वचन ही अगाध है, जो सदा रहेगा ॥ ३ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि वह अपने-आप में सर्वस्व है, किसी प्रकार उसकी प्राप्ति नहीं, केवल सच्चे गुरु से मिलन होने पर ही उसको खोजा जा सकता है ॥ ४ ॥ ६ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ मेरै मनि बासिबो गुर गोबिंद। जहां सिमरनु भइओ है ठाकुर तहां नगर सुख आनंद ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जहां बीसरै ठाकुरु पिआरो तहां दूख सभ आपद। जह गुन गाइ आनंद मंगल रूप तहां सदा सुख संपद ॥१॥ जहा स्रवन हरि कथा न सुनीऐ तह महा भइआन उदिआनद। जहां कीरतनु साध संगति रसु तह सघन बास फलांनद ॥ २ ॥ बिनु सिमरन कोटि बरख जीवै सगली अउध ब्रिथानद। एक निमख

गोबिंद भजनु करि तउ सदा सदा जीवानद ॥ ३ ॥ सरनि सरनि सरनि प्रभ पावउ दीजै साध संगति किरपानद । नानक पूरि रहिओ है सरब मै सगल गुणाबिधि जांनद ॥ ४ ॥ ७ ॥

गुरु के द्वारा गोविन्द मेरे मन में बसता है । जहाँ हरि-सिमरन होता है, वहाँ समस्त शोभनीय सुख और आनन्द विद्यमान होते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जहाँ प्यारा स्वामी विस्मृत होता है, वहीं सब विपदाएँ और दुःख रहते हैं । जहाँ परमात्मा के आनन्द-मंगल रूप का गुण गाया जाता है, वहाँ सदा सुख-सम्पदा विराजते हैं ॥ १ ॥ जहाँ कानों में हरि-कथा का स्वर नहीं गूँजता, वहाँ भयानक जंगल ही समझो; जहाँ सत्संगति में हरि-कीर्ति-गान होता है, वहाँ फूलों की गंध फैल जाती है ॥ २ ॥ प्रभु-स्मरण के बिना करोड़ों वर्ष की आयु बेकार है, क्षण भर का प्रभु-भजन सदा-सदा के लिए जीवन का यथार्थ आनन्द बनता है ॥ ३ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि हे प्रभु, ऐसी सत्संगति प्रदान करो, जिसमें रहकर प्रभु की शरण पा जाऊँ । वह सर्वगुण-सम्पन्न परमात्मा सर्व-व्यापक है ॥ ४ ॥ ७ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ अब मोहि राम भरोसउ पाए । जो जो सरणि परिओ करुणानिधि ते ते भवहि तराए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सुखि सोइओ अरु सहजि समाइओ सहसा गुरहि गवाए । जो चाहत सोई हरि कीओ मन बांछत फल पाए ॥ १ ॥ हिरदै जपउ नेत्र धिआनु लावउ स्त्रवनी कथा सुनाए । चरणी चलउ मारगि ठाकुर कै रसना हरि गुण गाए ॥ २ ॥ देखिओ द्रिसटि सरब मंगल रूप उलटी संत कराए । पाइओ लालु अमोलु नामु हरि छोडि न कतहू जाए ॥ ३ ॥ कवन उपमा कउन बडाई किआ गुन कहउ रीझाए । होत क्रिपाल दीन दइआ प्रभ जन नानक दास दसाए ॥ ४ ॥ ८ ॥

अब मुझे प्रभु राम का भरोसा प्राप्त है । जो उस करुणा-निधि प्रभु की शरण में पड़ता है, वह संसार-सागर से तिर जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वह सुख की नींद सोता और पूर्णआनन्द में समाया रहता है; गुरु उसके सब संशयों को दूर कर देता है । प्रभु से वह जो भी चाहता है, वही होता है । उसे मनोवांछित फल प्राप्त होता है ॥ १ ॥ हृदय में प्रभु का जाप करो, नेत्रों में उसके स्वरूप का ध्यान करो और कानों को उसकी कीर्ति-कथा सुनाओ । चरणों से प्रभु-मिलन-पथ पर चलो और जिह्वा से हरि-गुणों का गान करो ॥ २ ॥ दृष्टि से संसार में समस्त मंगल रूप देखो, गुरु ने मेरी सुधि उलट दी है (वृत्ति संसार के विषय-विकारों से हटाकर प्रभु में लगा

दी है)। हरि का अमूल्य नाम-रत्न धन प्राप्त किया है, उसे छोड़कर कहीं नहीं जाना है ॥ ३ ॥ दासानुदास गुरु नानक कहते हैं कि उस परमात्मा की क्या उपमा करूँ, क्या बड़ाई करूँ, उसे क्या गुण बताकर रिझाऊँ; वह तो स्वयं कृपालु और दीनों पर दया करनेवाला है ॥४॥८॥

॥ सारग महला ५ ॥ ओइ सुख का सिउ बरनि सुनावत। अनद बिनोद पेखि प्रभ दरसन मनि मंगल गुन गावत ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बिसम भई पेखि बिसमादी पूरि रहे किरपावत। पीओ अंम्रित नामु अमोलक जिउ चाखि गूंगा मुसकावत ॥ १ ॥ जैसे पवनु बंध करि राखिओ बूझ न आवत जावत। जा कउ रिदै प्रगासु भइओ हरि उआ की कही न जाइ कहावत ॥ २ ॥ आन उपाव जेते किछु कहीअहि तेते सीखे पावत। अचिंत लालु ग्रिह भीतरि प्रगटिओ अगम जैसे परखावत ॥ ३ ॥ निरगुण निरंकार अबिनासी अतुलो तुलिओ न जावत। कहु नानक अजरु जिनि जरिआ तिस ही कउ बनि आवत ॥ ४ ॥ ९ ॥

वे सुख किसे कहकर बताएँ, जो प्रभु के मंगल दर्शनों तथा नित्य सोल्लास उसके गुण गाने से (प्राप्त होते हैं) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कृपालु परमात्मा की आश्चर्यजनक लीलाओं को देखकर विस्मय हो रहा है। अमृत-समान हरि-नाम का रस-पान कर ऐसे मग्न हैं, जैसे गूँगा मीठे फलों को चखने पर मुस्कराता है ॥ १ ॥ जिस प्रकार शरीर में प्राण-रूप में पवन बाँध रखा है और उसके आने-जाने तक का आभास भी नहीं होता (अत्याभ्यास के कारण), वैसे ही जिसके हृदय में परमात्मा का आलोक होता है, उनकी गम्भीरता अनिर्वचनीय होती है ॥ २ ॥ अन्य जो भी उपाय कहे जाते हैं, मैंने आज़मा लिये हैं, किन्तु अब मेरा प्रियतम हृदय में ही आकर बस गया है, जैसे अगम को परखने का सामर्थ्य मिल गया हो। (अभिप्राय यह कि प्रयत्नों से कुछ नहीं बना, प्रभु ने कृपा-पूर्वक यह अवस्था दी है।) ॥ ३ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा निर्गुण, निरंकार, अविनाशी एवं अतुलनीय है, उसकी तुलना संभव नहीं। जिसने अजर-अमर अवस्था को पा लिया, उसी को सब प्राप्य है ॥ ४ ॥ ९ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ बिखई दिनु रैनि इवही गुदारै। गोबिंदु न भजै अहंबुधि माता जनमु जूऐ जिउ हारै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नामु अमोला प्रीति न तिस सिउ परनिंदा हितकारै। छापरु बांधि सवारै त्रिण को दुआरै पावकु जारै ॥ १ ॥ कालर

पोट उठावै मूंडहि अंम्रितु मन ते डारै। ओढै बसत्र काजर महि परिआ बहुरि बहुरि फिरि झारै ॥२॥ काटै पेडु डाल परि ठाढौ खाइ खाइ मुसकारै। गिरिओ जाइ रसातलि परिओ छिटी छिटी सिर भारै ॥ ३ ॥ निरवैरै संगि वैरु रचाए पहुचि न सकै गवारै। कहु नानक संतन का राखा पारब्रहमु निरंकारै ॥ ४ ॥ १० ॥

विषयी (भोग-विलास में रत) रात-दिन यों ही गुज़ारता है, वह अहंकार-मति गोविन्द का नाम नहीं लेता, मनुष्य-जन्म को जुए में हार देता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अमूल्य हरि-नाम से प्रीति न लगाकर वह पर-निन्दा में ही हित की तलाश करता है। वह तिनकों को एकत्र करके झोंपड़ी सजाता है और द्वार पर अग्नि जला बैठता है ॥ १ ॥ ऐसा विषयी व्यक्ति सिर पर मिट्टी की गठरी उठाए फिरता है, मन से नामामृत को निकाल देता है। काजल से काला हुआ वस्त्र पहनता है, फिर उसे झाड़ने का उपक्रम करता है ॥ २ ॥ पेड़ की शाख पर खड़ा पेड़ काटता है और विषय-विष खा-खाकर मुस्कराता है। अन्ततः सिर के बल नीचे गिरता और खंड-खंड हो जाता है ॥ ३ ॥ वह गँवार निर्वैर प्रभु से भी वैर करता है और उस तक कभी नहीं पहुँच पाता। गुरु नानक कहते हैं कि परब्रह्म निरंकार सदैव अपने भक्तों की रक्षा करता है ॥ ४ ॥ १० ॥

॥ सारग महला ५ ॥ अवरि सभि भूले भ्रमत न जानिआ। एकु सुधाखरु जा कै हिरदै वसिआ तिनि बेदहि ततु पछानिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परविरति मारगु जेता किछु होईऐ तेता लोग पचारा। जउ लउ रिदै नही परगासा तउ लउ अंध अंधारा ॥ १ ॥ जैसे धरती साधै बहु बिधि बिनु बीजै नही जांमै। राम नाम बिनु मुकति न होई है तुटै नाही अभिमानै ॥ २ ॥ नीरु बिलोवै अति स्रमु पावै नैनू कैसे रीसै। बिनु गुर भेटे मुकति न काहू मिलत नही जगदीसै ॥ ३ ॥ खोजत खोजत इहै बीचारिओ सरब सुखा हरि नामा। कहु नानक तिसु भइओ परापति जा कै लेखु मथामा ॥ ४ ॥ ११ ॥

द्वैत-भाव में भूले हैं, भ्रम के तत्त्व को नहीं पहचानते (सांसारिक जीव)। जिसके हृदय में एक प्रभु का शुद्ध नाम बस गया, उसने वेदों के सार-तत्त्व को पहचान लिया ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रवृत्ति-मार्ग पर जब तक चलेंगे, केवल लोकाचार ही रहेगा। जब तक हृदय में परमात्मा प्रकट नहीं होता, तब तक अज्ञान का अंधकार ही अंधकार रहता है ॥ १ ॥ जैसे धरती

की अनेकधा सिंचाई-गुड़ाई करने पर भी बीज लगाने के बग़ैर फ़सल नहीं जमती, वैसे ही राम-नाम के बिना मुक्ति नहीं होती, अभिमान नष्ट नहीं होता ।। २ ।। कितना ही श्रम करके भी यदि कोई जल-मंथन करेगा, मक्खन नहीं निकल सकता, वैसे ही सतिगुरु से भेंट हुए बग़ैर मुक्ति सम्भव नहीं, प्रभु से मिलन नहीं होता ।। ३ ।। गुरु नानक कहते हैं कि हम तो इस परिणाम पर पहुँचे हैं कि हरि-नाम समस्त सुखों का आधार है। यह उसी को प्राप्त होता है, जिसके मस्तक पर विशिष्ट भाग्य-रेखाएँ मौजूद होती हैं ।। ४ ।। ११ ।।

।। सारग महला ५ ।। अनदिनु राम के गुण कहीऐ । सगल पदारथ सरब सूख सिधि मन बांछत फल लहीऐ ।। १ ।। रहाउ ।। आवहु संत प्रान सुखदाते सिमरह प्रभु अबिनासी । अनाथह नाथु दीन दुख भंजन पूरि रहिओ घट बासी ।। १ ।। गावत सुनत सुनावत सरधा हरि रसु पी वडभागे । कलि कलेस मिटे सभि तन ते राम नाम लिव जागे ।। २ ।। कामु क्रोधु झूठु तजि निंदा हरि सिमरनि बंधन तूटे । मोह मगन अहं अंध ममता गुर किरपा ते छूटे ।। ३ ।। तू समरथु पारब्रहम सुआमी करि किरपा जनु तेरा । पूरि रहिओ सरब महि ठाकुरु नानक सो प्रभु नेरा ।। ४ ।। १२ ।।

नित्य-प्रति प्रभु राम के गुण गाने से सकल भौतिक पदार्थ, समस्त सिद्धियाँ और सुख, तथा मनोवांछित फल प्राप्त होते हैं ।। १ ।। रहाउ ।। हे साधुजनो, आओ, सब मिलकर प्राणों के सुखदाता अविनाशी प्रभु का स्मरण करें। वह अनाथों का स्वामी, दीनों का दुःख दूर करनेवाला प्रभु अन्तर् में ही व्याप्त है ।। १ ।। श्रद्धापूर्वक उसके गुण गान, सुनने, सुनाने से परमानन्द और सौभाग्य प्राप्त होता है। शरीर के सब कष्ट-क्लेश मिट जाते हैं और मन में प्रभु-नाम से प्यार उमड़ता है ।। २ ।। हरि-स्मरण से काम, क्रोध, झूठ, निन्दा आदि के फंदे कट जाते हैं। गुरु-कृपा से मोह-ममता, अहंकार आदि की बेड़ियाँ टूट जाती हैं ।। ३ ।। गुरु नानक कहते हैं कि हे प्रभु, तुम समर्थ परब्रह्म हो, अपने दास पर कृपा करो। हे स्वामी, तुम सबमें व्याप्त हो और सबके निकटतम हो ।। ४ ।। १२ ।।

।। सारग महला ५ ।। बलिहारी गुर देव चरन । जा कै संगि पारब्रहमु धिआईऐ उपदेसु हमारी गति करन ।। १ ।। रहाउ ।। दूख रोग भै सगल बिनासे जो आवै हरि संत सरन । आपि जपै अवरह नामु जपावै वड समरथ तारन तरन ।। १ ।।

जा को मंत्रु उतारै सहसा ऊणे कउ सुभर भरन। हरि दासन की आगिआ मानत ते नाही फुनि गरभ परन ॥ २ ॥ भगतन की टहल कमावत गावत दुख काटे ता के जनम मरन। जा कउ भइओ क्रिपालु बीठुला तिनि हरि हरि अजर जरन ॥ ३ ॥ हरि रसहि अघाने सहजि समाने मुख ते नाही जात बरन। गुरप्रसादि नानक संतोखे नामु प्रभू जपि जपि उधरन ॥ ४ ॥ १३ ॥

मैं अपने सतिगुरु के चरणों पर बलिहार जाती हूँ, जिनकी शरण में रहकर परब्रह्म का ध्यान करने से मुक्ति मिलती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि के सन्तों की शरण में आने से दुःख, रोग, भय आदि सब नष्ट हो जाते हैं। सन्तजन स्वयं हरि-नाम जपते, दूसरों को जपाते हैं; वे समर्थ और संसार-सागर से पार लगाने की शक्ति रखते हैं ॥ १ ॥ जिनका उपदेश सब संशयों को दूर करता एवं खाली को भर देता है; उनकी आज्ञा मानने से (हरि के दासों की बात स्वीकारने से) जीव पुनः गर्भ-योनि में नहीं पड़ता ॥ २ ॥ जो मनुष्य भक्तों की सेवा करता, उनके गुण गाता है, उसके जन्म-मरण के दुःख कट जाते हैं। जिन पर परमात्मा की कृपा होती है, वे हरि-नाम जपते हुए अजर-अमर हो जाते हैं ॥ ३ ॥ वे हरि-रस में तृप्त, परमानन्द में लीन, अकथनीय स्थिति में रहते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु की कृपा से परम सन्तोष मिलता एवं नाम-जाप द्वारा उद्धार हो जाता है ॥ ४ ॥ १३ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ गाइओ री मै गुणनिधि मंगल गाइओ। भले संजोग भले दिन अउसर जउ गोपालु रीझाइओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संतह चरन मोरलो माथा। हमरे मसतकि संत धरे हाथा ॥ १ ॥ साधह मंत्रु मोरलो मनूआ। ताते गतु होए त्रै गुनीआ ॥ २ ॥ भगतह दरसु देखि नैन रंगा। लोभ मोह तूटे भ्रम संगा ॥ ३ ॥ कहु नानक सुख सहज अनंदा। खोल्हि भीति मिले परमानंदा ॥ ४ ॥ १४ ॥

हे सखियो, मैंने गुण-निधान प्रभु के मंगल गीत गाए हैं। संयोग उत्तम है, मेरे भले दिन तथा उत्तम अवसर है, जो मेरा प्रियतम मुझ पर रीझ गया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरा शीश सन्तों के चरणों में झुका है, सन्तों ने मेरे माथे पर हाथ धरा है ॥ १ ॥ मेरा मन सन्तों द्वारा दिए उपदेश (मंत्र) को साधता (साधना करता) है, जिससे तीनों गुणों से (माया से) मेरा छुटकारा हुआ है ॥ २ ॥ भक्तों के दर्शन पाकर मेरे नयन मग्न हो गए

हैं, भ्रम-सहित मेरा लोभ, मोह आदि दूर हो गए हैं ॥ ३ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि मुझे सहज आनन्द (अक्षुण्ण) मिला है और अज्ञान की दीवार तोड़कर परमानन्द प्रभु से भेंट हुई है ॥ ४ ॥ १४ ॥

सारग महला ५ घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ कैसे कहउ मोहि जीअ बेदनाई । दरसन प्रिआस प्रिअ प्रीति मनोहर मनु न रहै बहु बिधि उमकाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चितवनि चितवउ प्रिअ प्रीति बैरागी कदि पावउ हरि दरसाई । जतन करउ इहु मनु नही धीरै कोऊ है रे संतु मिलाई ॥ १ ॥ जप तप संजम पुंन सभि होमउ तिसु अरपउ सभि सुख जांई । एक निमख प्रिअ दरसु दिखावै तिसु संतन कै बलि जांई ॥ २ ॥ करउ निहोरा बहुतु बेनती सेवउ दिनु रैनाई । मानु अभिमानु हउ सगल तिआगउ जो प्रिअ बात सुनाई ॥ ३ ॥ देखि चरित्र भई हउ बिसमनि गुरि सतिगुरि पुरखि मिलाई । प्रभ रंग दइआल मोहि ग्रिह महि पाइआ जन नानक तपति बुझाई ॥ ४ ॥ १ ॥ १५ ॥

मैं अपने मन की वेदना कैसे कहूँ । मुझे प्रियतम के दर्शनों की प्यास है, मेरे मन में अपने स्वामी के लिए अनेक उमंगों-भरी प्रीति छलकती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रिय के प्यार में विरक्त हुई मन में सोचती हूँ कि कब हरि-दर्शन होगा । मेरे मन में धैर्य नहीं, कोई सन्तजन यतन करके मुझे मेरे प्रभु से मिला दे ॥ १ ॥ मैं अपने जप, तप, संयमादि गुण सबकी आहुति देकर अपने सुखों को उसके चरणों में अर्पित कर दूँगी । जो सन्तजन क्षण भर के लिए भी मुझे प्रियतम का दर्शन दिखा सके, मैं नित्य उस पर बलिहार जाऊँगी ॥ २ ॥ मैं उसकी मन्नत करती हूँ, रात-दिन सेवा में विनती करती हूँ; यदि प्रियतम मुझसे बात करे, तो मेरा मान-अभिमान सब धुल जाय ॥ ३ ॥ सतिगुरु की कृपा से जब प्रिय से भेंट हुई तो उसका चरित देखकर मुझे विस्मय हुआ । गुरु नानक कहते हैं कि प्यार के रंग के कारण वह मुझ पर दयालु था और घर में (अन्तर् में) ही उसने मेरी सब तृष्णाएँ शांत कर दीं ॥ ४ ॥ १ ॥ १५ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ रे मूढ़े तू किउ सिमरत अब नाही । नरक घोर महि उरध तपु करता निमख निमख गुण गांही ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनिक जनम भ्रमतौ ही आइओ मानस

जनमु दुलभाही । गरभ जोनि छोडि जउ निकसिओ तउ लागो अन ठांही ॥ १ ॥ करहि बुराई ठगाई दिनु रैनि निहफल करम कमाही । कणु नाही तुह गाहण लागे धाइ धाइ दुख पांही ॥ २ ॥ मिथिआ संगि कूड़ि लपटाइओ उरझि परिओ कुसमांही । धरमराइ जब पकरसि बवरे तउ काल मुखा उठि जाही ॥ ३ ॥ सो मिलिआ जो प्रभू मिलाइआ जिसु मसतकि लेखु लिखांही । कहु नानक तिन्ह जन बलिहारी जो अलिप रहे मन मांही ॥ ४ ॥ २ ॥ १६ ॥

ऐ मूर्ख (जीव), अब तुम क्यों प्रभु का स्मरण नहीं करते । (पहले तो) घोर नरक में (गर्भ में) उलटे लटके क्षण-क्षण तप करते थे और प्रभु के गुण गाते थे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनेक जन्मों में भ्रमते हुए अब दुर्लभ मानव-जन्म मिला है, किन्तु गर्भ-योनि से निकलते ही अन्य बातों में मग्न हुए हो ॥ १ ॥ बुरे कर्म करते हो, रात-दिन छल करते हो और निष्फल कर्म कमाते हो । अन्न-विहीन भूसे को ही छानते और दुःख पाते हो ॥२॥ मिथ्या जीवन जीने लगे और कुसुंभी रंग (माया का) में लिप्त हुए हो । अरे बावरे, जब धर्मराज के सामने पकड़कर ले जाए जाओगे, तो काला मुँह क्योंकर उठेगा ? ॥ ३ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि जिनके माथे भाग्य है और जिन्हें परमात्मा स्वयं मिलाता है, वे ही परमात्मा को पाते हैं । मन में अलिप्त रहनेवालों पर गुरु नानक क़ुर्बान जाते हैं ॥ ४ ॥ २ ॥ १६ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ किउ जीवनु प्रीतम बिनु माई । जाके बिछुरत होत मिरतका ग्रिह महि रहनु न पाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जीअ हींअ प्रान को दाता जाकै संगि सुहाई । करहु क्रिपा संतहु मोहि अपुनी प्रभ मंगल गुण गाई ॥१॥ चरन संतन के माथे मेरे ऊपरि नैनहु धूरि बांछाई । जिह प्रसादि मिलीऐ प्रभ नानक बलि बलि ताकै हउ जाई ॥ २ ॥ ३ ॥ १७ ॥

ऐ माँ, प्रियतम के बिना जीना क्योंकर सम्भव है । उसके बिछुड़ने से तो मृतक-समान हो जाती हूँ, घर में नहीं रह सकती ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरे हृदय-प्राण का स्वामी मेरा प्रियतम है, मैं उसी के संग शोभती हूँ । हे सन्तजनो, मुझ पर कृपा करो, ताकि मैं अपने स्वामी के मंगल गीत गा सकूँ ॥ १ ॥ सन्तों के चरण मेरे सिर-माथे हैं, उनकी चरण-धूलि में मैं नयन बिछाती हूँ । गुरु नानक कहते हैं कि जिसकी कृपा से मैं स्वामी को मिल सकूँ, उस पर बार-बार क़ुर्बान हूँ ॥ २ ॥ ३ ॥ १७ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ उआ अउसर कै हउ बलि जाई ।

आठ पहर अपना प्रभु सिमरनु वडभागी हरि पांई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भलो कबीरु दासु दासन को ऊतमु सैनु जनु नाई । ऊच ते ऊच नामदेउ समदरसी रविदास ठाकुर बणिआई ॥ १ ॥ जीउ पिंडु तनु धनु साधन का इहु मनु संत रेनाई । संत प्रतापि भरम सभि नासे नानक मिले गुसाई ॥ २ ॥ ४ ॥ १८ ॥

मैं उस अवसर पर बलिहार हूँ, जब आठों प्रहर अपने स्वामी की याद में मग्न रहकर सौभाग्यपूर्ण प्रभु-पति को पाती हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दासों के दास कबीर तथा सैन नाई भले हैं। समदर्शी नामदेव सबसे ऊँचे हैं और (चमार जाति के) रविदास ठाकुर बन गए हैं ॥ १ ॥ प्राण, शरीर, तन-धन और मन सब उन सन्तों की चरण-धूलि में पड़ा है। गुरु नानक कहते हैं कि इन्हीं सन्तों के प्रताप से प्रभु मिले हैं और समस्त भ्रमों का अन्त हो गया है ॥ २ ॥ ४ ॥ १८ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ मनोरथ पूरे सतिगुर आपि । सगल पदारथ सिमरनि जा कै आठ पहर मेरे मन जापि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अंम्रित नामु सुआमी तेरा जो पीवै तिसहि त्रिपतास । जनम जनम के किलबिख नासहि आगै दरगह होइ खलास ॥ १ ॥ सरनि तुमारी आइओ करते पारब्रहम पूरन अबिनास । करि किरपा तेरे चरन धिआवउ नानक मनि तनि दरस पिआस ॥ २ ॥ ५ ॥ १९ ॥

सतिगुर ने स्वयं मेरी इच्छाओं को पूर्ण किया है। जिसके स्मरण में सकल पदार्थ शामिल हैं, आठों पहर वह मेरे मन में रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे मालिक, तुम्हारा नाम अमृत-समान है, जो पीता है, वह तृप्त हो जाता है। उसके जन्म-जन्म के पाप नष्ट होते हैं और परमात्मा के सम्मुख मुक्त-भाव रहता है ॥ १ ॥ हे परब्रह्म, अविनाशी, सर्व-कर्ता प्रभु, मैं तुम्हारी शरण आया हूँ। गुरु नानक कहते हैं कि तन-मन में तुम्हारे दर्शनों की प्यास है; कृपा करो ताकि मैं तुम्हारे चरणों में ध्यान लगा सकूँ ॥ २ ॥ ५ ॥ १९ ॥

सारग महला ५ घरु ३

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ मन कहा लुभाईऐ आन कउ । ईत ऊत प्रभु सदा सहाई जीअ संगि तेरे काम कउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥

अंम्रित नामु प्रिअ प्रीति मनोहर इहै अघावन पांन कउ। अकाल मूरति है साध संतन को ठाहर नीकी धिआन कउ ॥ १ ॥ बाणी मंत्रु महा पुरखन की मनहि उतारन मांन कउ। खोजि लहिओ नानक सुख थानां हरि नामा बिस्राम कउ ॥ २ ॥ १ ॥ २० ॥

ऐ मन, किसी अन्य में क्या लुभाते हो, यहाँ-वहाँ प्रभु सदा सहायक है, अंग-संग है और सदा काम आता है (उसी में चित्त लगाओ) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रियतम में मनमोहक प्रीति और उसका अमृत-समान नाम पूर्ण तृप्ति देते हैं। अकाल-मूर्ति प्रभु में ध्यान लगाने के लिए सत्संगति अच्छी जगह है ॥ १ ॥ महापुरुषों का वाणी-उपदेश मन का अभिमान दूर करने के लिए है। गुरु नानक कहते हैं कि पूर्ण सुख-विश्राम का स्थान 'हरिनाम में प्रीति' की खोज करो ॥ २ ॥ १ ॥ २० ॥

॥ सारग महला ५ ॥ मन सदा मंगल गोबिंद गाइ। रोग सोग तेरे मिटहि सगल अघ निमख हीऐ हरिनामु धिआइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ छोडि सिआनप बहु चतुराई साधू सरणी जाइ पाइ। जउ होइ क्रिपालु दीन दुख भंजन जम ते होवै धरमराइ ॥ १ ॥ एकस बिनु नाही को दूजा आन न बीओ लवै लाइ। मात पिता भाई नानक को सुखदाता हरि प्रान साइ ॥ २ ॥ २ ॥ २१ ॥

ऐ मन, तुम सदा परमात्मा के मंगल गुणों का गान करो। क्षण भर के लिए भी हृदय में हरि-नाम का ध्यान करने से तुम्हारे समस्त रोग-शोक और पाप मिट जाते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अतः, ऐ मन, अपनी चतुरता और बुद्धिमानी का सहारा छोड़कर सन्तों की शरण लो। यदि वे कृपा करें तो दीन जनों के दुःख दूर होते हैं एवं यमदूत भी धर्मराज की भूमिका निभाने लगता है ॥ १ ॥ उस एक परमात्मा के अतिरिक्त अन्य दूसरा कोई नहीं, कोई उसकी बराबरी नहीं कर सकता। गुरु नानक कहते हैं कि वह परमात्मा ही सबका माता, पिता, भाई एवं प्राणों को सुख देने वाला मालिक है ॥ २ ॥ २ ॥ २१ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ हरि जन सगल उधारे संग के। भए पुनीत पवित्र मन जनम जनम के दुख हरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मारगि चले तिन्ही सुखु पाइआ जिन्ह सिउ गोसटि से तरे। बूडत घोर अंध कूप महि ते साधू संगि पारि परे ॥ १ ॥ जिन्ह

के भाग बडे है भाई तिन्ह साधु संगि मुख जुरे। तिन्ह की धूरि बांछै नित नानकु प्रभु मेरा किरपा करे ॥ २ ॥ ३ ॥ २२ ॥

हरि-भक्त अपने संगी-साथियों को भी मुक्त कर लेते हैं; उनका हृदय पुनीत होता है और उनके जन्म-जन्म के दुःख दूर हो जाते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो उनके संग राह भी चलते हैं, वे सुख पाते हैं। जिनकी उनसे चर्चा हो जाती है, वे मुक्त होते हैं। जो जीव अज्ञान के घोर गहरे कुएँ में डूब रहे होते हैं, वे भी साधु-संगति में पार हो जाते हैं ॥ १ ॥ हे भाई, जिनका भाग्य ऊँचा है, उन्हें ही सच्चे सन्तों की संगति मिलती है। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु-कृपा हो, तो उनकी चरण-धूलि ही मिल जाय ॥ २ ॥ ३ ॥ २२ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ हरि जन राम राम राम धिआंए। एक पलक सुख साध समागम कोटि बैकुंठह पांए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दुलभ देह जपि होत पुनीता जम की त्रास निवारै। महा पतित के पातिक उतरहि हरि नामा उरिधारै ॥ १ ॥ जो जो सुनै राम जसु निरमल ता का जनम मरण दुखु नासा। कहु नानक पाईऐ वडभागीं मन तन होइ बिगासा ॥ २ ॥ ४ ॥ २३ ॥

हरि के सेवक सदा-सदा परमात्मा का नाम जपते हैं। एक पल के लिए भी जो सच्चे सन्त की संगति में आते हैं, वे करोड़ों वैकुण्ठों का फल पा जाते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दुर्लभ मनुष्य-देह में आकर हरिनाम-जाप से पवित्र होते एवं यमों के भय से मुक्ति पाते हैं। महान पापियों के पाप धुल जाते हैं (जब वे हृदय में हरिनाम धारण करते हैं) ॥ १ ॥ जो जो निर्मल हरिनाम-यश श्रवण करता है, उनके आवागमन का दुःख मिट जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि ऐसा सुअवसर बड़े भाग्य से मिलता है; इससे तन-मन विकसित हो जाता है ॥ २ ॥ ४ ॥ २३ ॥

सारग महला ५ दुपदे घरु ४

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ मोहन घरि आवहु करउ जोदरीआ। मानु करउ अभिमानै बोलउ भूल चूक तेरी प्रिअ चिरीआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ निकटि सुनउ अरु पेखउ नाही भरमि भरमि दुख भरीआ। होइ क्रिपाल गुर लाहि पारदो मिलउ

लाल मनु हरीआ ॥ १ ॥ एक निमख जे बिसरै सुआमी जानउ कोटि दिनस लख बरीआ । साध संगति की भीर जउ पाई तउ नानक हरि संगि मिरीआ ॥ २ ॥ १ ॥ २४ ॥

हे मेरे मनमोहन प्रभु, घर आओ, मैं विनती करती हूँ । मैं मान या अभिमान करती हूँ, गर्व से बोलती हूँ, इन भूलों के होते हुए भी हे स्वामी, मैं तुम्हारी दासी हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुम सदा समीप हो, मैं सुनती-देखती नहीं और भ्रम में भटकती हुई सदा दुःख भोगती हूँ । कृपा करके जब गुरु ने अज्ञान का पर्दा दूर किया तो स्वामी से मिलकर मन प्रसन्न होता है ॥ १ ॥ एक क्षण भी जब स्वामी बिछुड़ते हैं, तो मुझे वह कालावधि करोड़ों दिनों, लाखों वर्षों जैसी प्रतीत होती है । गुरु नानक कहते हैं कि यदि मुझे सन्तों की संगति मिल जाय तो मैं हरि-प्रभु को पा लूं ॥ २ ॥ १ ॥ २४ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ अब किआ सोचउ सोच बिसारी । करणा सा सोई करि रहिआ देहि नाउ बलिहारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चहु दिस फूलि रही बिखिआ बिखु गुरमंत्रु मूखि गरुड़ारी । हाथ देइ राखिओ करि अपुना जिउ जल कमला अलिपारी ॥ १ ॥ हउ नाही किछु मै किआ होसा सभ तुमही कलधारी । नानक भागि परिओ हरि पाछै राखु संत सदकारी ॥ २ ॥ २ ॥ २५ ॥

अब क्या सोचना है, मैंने सब व्यर्थ चिन्ताएँ विसार दी हैं । जो कुछ करना है, वह स्वयं (प्रभु) कर रहा है, मुझे तो, हे दाता, अपना नाम दो, मैं तुम पर बलिहारी हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चारों ओर माया का विष फैला है, इस विष को मारने के लिए गुरु-मन्त्र ही गारुड़ी है । उसने (प्रभु ने) अपना जानकर सहारा देकर मेरी रक्षा की है, जैसे कमल जल में अलिप्त रहता है (मुझे भी माया की मलिनता में सुरक्षित रखा है) ॥ १ ॥ मैं कुछ नहीं, जो किया है, वह तुम्हींने किया है, तुम्हारी ही शक्ति कार्यान्वित है । गुरु नानक कहते हैं कि मैं तो सन्तों के सदक़े हरि-प्रभु के पीछे भाग पड़ा हूँ (अर्थात् सन्त-कृपा से ही भगवान का नाम लेता हूँ) ॥२॥२॥२५॥

॥ सारग महला ५ ॥ अब मोहि सरब उपाव बिरकाते । करणकारण समरथ सुआमी हरि एकसु ते मेरी गाते ॥ १ ॥ रहाउ ॥ देखे नाना रूप बहुरंगा अन नाही तुम भांते । देंहि अधारु सरब कउ ठाकुर जीअ प्रान सुख दाते ॥ १ ॥ भ्रमतौ

भ्रमतौ हारि जउ परिओ तउ गुर मिलि चरन पराते। कहु नानक मै सरब सुखु पाइआ इह सूखि बिहानी राते ॥ २ ॥ ३ ॥ २६ ॥

अब मैंने समस्त उपाव त्याग दिए हैं। सर्व-कर्ता समर्थ स्वामी प्रभु से ही एकमात्र मेरी गति सम्भव है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनेक प्रकार के रूप-रंग मैंने देखे हैं, किन्तु तुम सरीखा अन्य कोई नहीं। हे जीव-प्राणों के सुख देनेवाले प्रभु, मुझे सहारा देना ॥ १ ॥ माया के भ्रम में घूमते-घूमते जब मैं थक गया हूँ, तो अब गुरु को मिलकर तुम्हारी शरण को पहचाना है। गुरु नानक कहते हैं कि मैंने तुमसे समस्त सुख पाया है, मेरी आयु रूपी रात्रि सुखपूर्वक व्यतीत हुई है ॥ २ ॥ ३ ॥ २६ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ अब मोहि लबधिओ है हरि टेका। गुर दइआल भए सुखदाई अंधुलै माणिकु देखा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काटे अगिआन तिमर निरमलीआ बुधि बिगास बिबेका। जिउ जल तरंग फेनु जल होईहै सेवक ठाकुर भए एका ॥ १ ॥ जह ते उठिओ तह ही आइओ सभ ही एकै एका। नानक द्रिसटि आइओ स्रब ठाई प्राणपती हरि समका ॥२॥४॥२७॥

मुझे अब परमात्मा का सहारा मिल गया है। सुखदायी गुरु मुझ पर दयालु हुए, तो मुझ सरीखे अन्धे (अज्ञानी) ने हरि-नाम रूपी हीरा देखा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मुझे बुद्धि-विवेक प्रदान कर (गुरु ने) मेरा अज्ञानांधकार दूर कर दिया। (परिणामतः) जैसे जल और तरंग एक ही होते हैं, वैसे अब दास (मैं) और स्वामी (प्रभु) एक हो गए हैं ॥ १ ॥ जहाँ से (तरंग) उठी थी, वहीं आकर चुक गई, सब एक ही एक रह गया। गुरु नानक कहते हैं कि प्राण-प्रिय हरि-प्रभु एक समान सब जगह (सर्व-व्याप्त) दिखाई पड़ा ॥ २ ॥ ४ ॥ २७ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ मेरा मनु एकै ही प्रिअ मांगै। पेखि आइओ सरब थान देस प्रिअ रोम न समसरि लागै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मै नीरे अनिक भोजन बहु बिंजन तिन सिउ द्रिसटि न करै रुचांगै। हरि रसु चाहै प्रिअ प्रिअ मुखि टेरै जिउ अलि कमला लोभांगै ॥ १ ॥ गुण निधान मन मोहन लालन सुखदाई सरबांगै। गुरि नानक प्रभ पाहि पठाइओ मिलहु सखा गलि लागै ॥ २ ॥ ५ ॥ २८ ॥

मेरा मन अपने प्रिय से अद्वैतता की माँग करता है। मैं सब जगह,

देश आदि देख आया, (वे सब) मेरे प्यारे के एक रोम के बराबर भी नहीं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मैंने अनेक भोजन-व्यंजन परोसे, किन्तु उनमें किसी में भी मेरी रुचि नहीं बनती। हृदय मात्र हरि-रस माँगता है, जैसे भँवरा सदा कमलों पर ही लुभाता है ॥ १ ॥ परमात्मा गुणों का आगार, सबके अंग-संग रहने तथा सबको सुख देनेवाला है। गुरु नानक कहते हैं कि मुझे गुरु ने प्रभु के समीप भेजा है, हे मित्रो, मुझे गले लगकर मिल लो ॥ २ ॥ ५ ॥ २८ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ अब मोरो ठाकुर सिउ मनु मानां। साध क्रिपाल दइआल भए है इहु छेदिओ दुसटु बिगाना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुमही सुंदर तुमहि सिआने तुम ही सुघर सुजाना। सगल जोग अरु गिआन धिआन इक निमख न कीमति जानां ॥ १ ॥ तुमही नाइक तुम्हहि छत्रपति तुम पूरि रहे भगवाना। पावउ दानु संत सेवा हरि नानक सद कुरबानां ॥ २ ॥ ६ ॥ २९ ॥

मेरा मन अब स्वामी में अमित विश्वास बनाए हुए है। सन्तजन मुझ पर कृपालु हुए हैं, उन्होंने मेरा द्वैत-भाव काट दिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे स्वामी, तुम सुन्दर हो, सयाने हो और चतुर-सुजान भी हो। समूचे योग-ध्यान, ज्ञान आदि, हरि-नाम की क्षणिक उपलब्धि की भी क़ीमत नहीं डाल सकते ॥ १ ॥ हे भगवान्, तुम उच्च नायक हो, छत्रपति हो, सर्वव्यापक हो। गुरु नानक सदैव उन सन्तजनों पर सदैव क़ुर्बान हैं, जो सन्त-सेवा का पावन दान प्रदान करते हैं ॥ २ ॥ ६ ॥ २९ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ मेरै मनि चीति आए प्रिअ रंगा। बिसरिओ धंधु बंधु माइआ को रजनि सबाई जंगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि सेवउ हरि रिदै बसावउ हरि पाइआ सतसंगा। ऐसो मिलिओ मनोहरु प्रीतमु सुख पाए मुख मंगा ॥१॥ प्रिउ अपना गुरि बसि करि दीना भोगउ भोग निसंगा। निरभउ भए नानक भउ मिटिआ हरि पाइओ पाठंगा ॥ २ ॥ ७ ॥ ३० ॥

प्रिय के प्रेम-उल्लासादि मेरे हृदय में बस गए हैं। आयु रूपी रात्रि कामादि विकारों के संग युद्ध करते बीत गई है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि की सेवा करता हूँ, हरि को हृदय में बसाता हूँ और सत्संगति में हरि से मिलाप करता हूँ। ऐसे मनोहर प्रियतम से भेंट हुई है कि अब मुँह माँगा सुख प्राप्त हो रहा है ॥ १ ॥ गुरु ने प्रियतम को मेरे वश कर दिया है, अब निश्चिन्त होकर मैं उसके संग विलास करती हूँ (जीवात्मा-कथन)।

गुरु नानक कहते हैं कि मेरे सब प्रकार के भय मिट गए हैं, मैं निर्भय हुआ हूँ और अपने लक्ष्य को पा गया हूँ ॥ २ ॥ ७ ॥ ३० ॥

॥ सारग महला ५ ॥ हरि जीउ के दरसन कउ कुरबानी । बचन नाद मेरे स्त्रवनहु पूरे देहा प्रिअ अंकि समानी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ छूटरि ते गुरि कोई सुोहागनि हरि पाइओ सुघड़ सुजानी । जिह घर महि बैसनु नही पावत सो थानु मिलिओ बासानी ॥ १ ॥ उन्ह कै बसि आइओ भगति बछलु जिनि राखी आन संतानी । कहु नानक हरि संगि मनु मानिआ सभ चूकी काणि लोकानी ॥ २ ॥ ८ ॥ ३१ ॥

मैं प्रभु के दर्शनों पर क़ुर्बान हूँ, उसके वचनों की मधुर ध्वनि मेरे कानों को भर रही है और मेरा शरीर प्रिय के क्रोड में आबद्ध है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ त्यक्ता से गुरु ने मुझे सुहागिन बना दिया है और मैंने सुजान-सुंदर प्रभु-पति को पा लिया है। जिस घर में घुसने की इजाज़त नहीं थी, अब वह जगह बसने (रहने) को मिल गई है ॥ १ ॥ सन्तों की आन का रक्षक वह भक्त-वत्सल परमात्मा वश में आ गया है। गुरु नानक कहते हैं कि जब परमात्मा का विश्वास मन में आ गया तो लोगों की मुहताजी समाप्त हो गई ॥ २ ॥ ८ ॥ ३१ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ अब मेरो पंचा ते संगु तूटा । दरसनु देखि भए मनि आनद गुर किरपा ते छूटा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बिखम थान बहुत बहु धरीआ अनिक राख सूरूटा । बिखम गार्ह करु पहुचै नाही संत सानथ भए लूटा ॥ १ ॥ बहुतु खजाने मेरै पालै परिआ अमोल लाल आखूटा । जन नानक प्रभि किरपा धारी तउ मन महि हरि रसु घूटा ॥ २ ॥ ९ ॥ ३२ ॥

अब पंच विकारों से मेरा नाता टूट गया है। गुरु की कृपा से मैं उनसे छूट गया हूँ और प्रभु-दर्शन करके मन में आनन्दित हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ शरीर एक विषम दुर्ग है (जहाँ पहुँचना कठिन है) और कामादि विकार इसके वीर रक्षक हैं। चारों ओर कठिन खाईं है, हाथ नहीं पहुँचता, किन्तु जब सन्तों का सहयोग होता है (अधिक शक्तिशाली शासक का सहयोग मिल जाता है), तो शत्रु (काम-क्रोधादि) मारे जाते हैं (लुट जाते हैं) ॥ १ ॥ अमूल्य और अनन्त ऐश्वर्य मेरे पल्ले पड़ा है। गुरु नानक कहते हैं कि जब प्रभु की कृपा होती है, तभी हरि-रस का मधुर पान हो पाता है ॥ २ ॥ ९ ॥ ३२ ॥

।। सारग महला ५ ।। अब मेरो ठाकुर सिउ मनु लीना । प्रान दानु गुरि पूरै दीआ उरझाइओ जिउ जल मीना ।। १ ।। रहाउ ।। काम क्रोध लोभ मद मतसर इह अरपि सगल दानु कीना । मंत्रु द्रिड़ाइ हरि अउखधु गुरि दीओ तउ मिलिओ सगल प्रबीना ।। १ ।। ग्रिहु तेरा तू ठाकुरु मेरा गुरि हउ खोई प्रभु दीना । कहु नानक मै सहज घरु पाइआ हरि भगति भंडार खजीना ।। २ ।। १० ।। ३३ ।।

अब मेरा मन अपने स्वामी में लीन है। सच्चे गुरु ने मुझे प्राणों का दान दिया है और प्रभु-प्रेम में जल-मीन की तरह उलझा लिया है ।। १ ।। रहाउ ।। काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, ये सब अर्पित कर दिए हैं अर्थात् लुटा दिए हैं। जब गुरु ने उपदेश देकर हरिनाम-ओषधि दी, तो सर्वगुण-सम्पन्न प्रभु मिल गया ।। १ ।। यह घर तुम्हारा है, तुम मेरे मालिक हो, गुरु ने मेरा अहम् गँवाकर मुझे प्रभु दे दिया है। गुरु नानक कहते हैं कि भक्ति का भण्डार मुझे मिला है, मैंने सहजावस्था (स्थिर परमानन्दपूर्ण अवस्था) पा ली है ।। २ ।। १० ।। ३३ ।।

।। सारग महला ५ ।। मोहन सभि जीअ तेरे तू तारहि । छुटहि संघार निमख किरपा ते कोटि ब्रहमंड उधारहि ।। १ ।। रहाउ ।। करहि अरदासि बहुतु बेनंती निमख निमख साम्हारहि । होहु क्रिपाल दीन दुख भंजन हाथ देइ निसतारहि ।। १ ।। किआ ए भूपति बपुरे कहीअहि कहु ए किसनो मारहि । राखु राखु राखु सुखदाते सभु नानक जगतु तुम्हारहि ।। २ ।। ११ ।। ३४ ।।

हे परमात्मा, सब जीव तुम्हारे हैं, तुम्हीं उनको तारते हो। तुम्हारी किञ्चित् कृपा से (सांसारिक) अत्याचार चुक जाता है, करोड़ों का उद्धार होता है ।। १ ।। रहाउ ।। तुमसे प्रार्थना करते हैं, विनती करते हैं, क्षण-क्षण तुम्हें याद करते हैं। हे दीनों के दुःख दूर करनेवाले, कृपा करो, सहारा देकर निस्तार करो ।। १ ।। ये बेचारे राजा-नवाब क्या चीज़ हैं, कहो, ये किसे मार सकते हैं? गुरु नानक कहते हैं कि संसार तुम्हारा है, तुम इसके रक्षक हो (कोई क्योंकर हस्तक्षेप कर सकता है!) ।।२।।११।।३४।।

।। सारग महला ५ ।। अब मोहि धनु पाइओ हरि नामा । भए अचिंत त्रिसन सभ बुझी है इहु लिखिओ लेखु मथामा ।। १ ।। रहाउ ।। खोजत खोजत भइओ बैरागी फिरि

आइओ देह गिरामा । गुरि क्रिपालि सउदा इहु जोरिओ हथि चरिओ लालु अगामा ॥ १ ॥ आन बापार बनज जो करीअहि तेते दूख सहामा । गोबिद भजन के निरभै वापारी हरि रासि नानक राम नामा ॥ २ ॥ १२ ॥ ३५ ॥

मुझे प्रभु-नाम रूपी धन प्राप्त हुआ है। मैं निश्चिन्त हो गया हूँ, मेरी सब तृष्णा बुझ गई है, मेरे भाग्य में ऐसा बदा था ॥ १ ॥ रहाउ ॥ खोजते-खोजते वैरागी हो गया था, किन्तु पुनः जब शरीर रूपी गाँव में पहुँचा तो गुरु-कृपा से यह सौदा पटा और अमूल्य हीरा हाथ लग गया ॥१॥ अन्य व्यापार-बनिज करें तो उससे दुःख भी सहना पड़ता है। (गुरु नानक कहते हैं कि) हम तो गोविन्द-नाम के निर्भय व्यापारी हैं और परमात्मा ही हमारी पूँजी है। (इसलिए हमें कभी हानि का दुःख नहीं होता।) ॥ २ ॥ १२ ॥ ३५ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ मेरै मनि मिसट लगे प्रिअ बोला । गुरि बाह पकरि प्रभ सेवा लाए सद दइआलु हरि ढोला ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभ तू ठाकुरु सरब प्रतिपालकु मोहि कलत्र सहित सभि गोला । माणु ताणु सभु तू है तू है इकु नामु तेरा मै ओल्हा ॥ १ ॥ जे तखति बैसालहि तउ दास तुम्हारे घासु बढावहि केतक बोला । जन नानक के प्रभ पुरख बिधाते मेरे ठाकुर अगह अतोला ॥ २ ॥ १३ ॥ ३६ ॥

मेरे मन में प्रिय प्रभु के वचन मीठे लगते हैं। गुरु ने बाँह पकड़कर मुझे उसकी सेवा में लगाया है, स्वयं हरि रूपी मेरे पति बड़े दयालु हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु, तुम सबके प्रतिपालक स्वामी हो, मैं तुम्हारी स्त्री तथा अन्य सब तुम्हारी दासियाँ हैं। हमारा आश्रय और प्रतिष्ठा सब तुम्हारे ही कारण है, तुम्हीं हमारी ओट हो ॥ १ ॥ यदि सिंहासन पर बिठाओगे, तो भी तुम्हारे दास हैं; यदि घास कटवाओगे तो भी हम क्या बोल सकते हैं? हे नानकदास के मालिक, तुम हमारे अनुपम, अतुलनीय स्वामी हो ॥ २ ॥ १३ ॥ ३६ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ रसना राम कहत गुण सोहं । एक निमख ओपाइ समावै देखि चरित मन मोहं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसु सुणिऐ मनि होइ रहसु अति रिदै मान दुख जोहं । सुखु पाइओ दुखु दूरि पराइओ बणिआई प्रभ तोहं ॥ १ ॥ किलविख गए मन निरमल होई है गुरि काढे माइआ द्रोहं । कहु नानक मै सो प्रभु पाइआ करणकारण समरथोहं ॥ २ ॥ १४ ॥ ३७ ॥

जिह्वा राम का गुण गाती हुई ही शोभती है। क्षण भर में ही जो पैदा करता और मिटाता है, उसकी लीला देखकर मन मोहित हो रहा है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसका नाम श्रवण करने से आनन्द मिलता है एवं मन का मान तथा दुःख नाश हो जाते हैं। दुःखों को दूर करके तुमने सुख प्रदान किया है, हे प्रभु, तुमसे हमारी बन आई है ॥ १ ॥ गुरु ने मन से माया, द्रोह निकाल दिए हैं, पाप धुल गए हैं, मन निर्मल हुआ है। गुरु नानक कहते हैं कि (इस प्रकार) मैंने वह प्रभु पा लिया है, जो सब कुछ करने-कराने में पूर्ण समर्थ है ॥ २ ॥ १४ ॥ ३७ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ नैनहु देखिओ चलतु तमासा। सभहू दूरि सभहू ते नेरै अगम अगम घट वासा ॥१॥रहाउ॥ अभूलु न भूलै लिखिओ न चलाव मता न करै पचासा। खिन महि साजि सवारि बिनाहै भगति वछल गुणतासा ॥ १ ॥ अंध कूप महि दीपकु बलिओ गुरि रिदै कीओ परगासा। कहु नानक दरसु पेखि सुखु पाइआ सभ पूरन होई आसा ॥ २ ॥ १५ ॥ ३८ ॥

आँखों से उसकी लीलाओं का तमाशा देखा है। वह सबसे दूर भी है, सबके निकटतर भी है, अगम है और घट-घट में बसा हुआ भी है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वह कभी ग़लती नहीं करता, लिखित आज्ञा-पत्र नहीं देता, न ही पचासों मन्त्रियों से परामर्श करता है। वह तो क्षण में ही साज-सँवारकर नष्ट भी कर देता है, वह भक्त-वत्सल और गुण-निधि है ॥ १ ॥ हृदय रूपी अन्ध-कूप में ज्ञान का दीपक जलाकर गुरु ने वहाँ प्रकाश कर दिया है। गुरु नानक कहते हैं कि उसके दर्शन पाकर मुझे परम सुख-लाभ हुआ है, मेरी समस्त आशाएँ पूर्ण हो गई हैं ॥२॥१५॥३८॥

॥ सारग महला ५ ॥ चरनह गोबिद मारगु सुहावा। आन मारग जेता किछु धाईऐ तेतो ही दुखु हावा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नेत्र पुनीत भए दरसु पेखे हसत पुनीत टहलावा। रिदा पुनीत रिदै हरि बसिओ मसत पुनीत संत धूरावा ॥ १ ॥ सरब निधान नामि हरि हरि कै जिसु करमि लिखिआ तिनि पावा। जन नानक कउ गुरु पूरा भेटिओ सुखि सहजे अनद बिहावा ॥ २ ॥ १६ ॥ ३९ ॥

चरणों के लिए हरि-मार्ग पर चलना शोभता है। अन्य रास्तों पर जितना भी भाग-दौड़ करें, उतना ही दुःख होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नेत्र उसके दर्शनों से पवित्र हुए हैं, हाथ उसकी सेवा में पवित्र हैं। हृदय में हरि बसने से, वह पवित्र हुआ है, माथा हरि-चरणों की धूल से पावन

है ॥ १ ॥ समस्त निधियों का भण्डार हरि-नाम कोई भाग्यशाली ही प्राप्त करता है। गुरु नानक कहते हैं कि पूर्णगुरु से भेंट हो जाने पर परम सुख मिला है, जीवन आनन्द में कटता है ॥ २ ॥ १६ ॥ ३९ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ धिआइओ अंति बार नामु सखा। जह मात पिता सुत भाई न पहुचै तहा तहा तू रखा ॥१॥रहाउ॥ अंध कूप ग्रिह महि तिनि सिमरिओ जिसु मसतकि लेखु लिखा। खूल्हे बंधन मुकति गुरि कीनी सभ तूहै तूही दिखा ॥ १ ॥ अंम्रित नामु पीआ मनु त्रिपतिआ आघाए रसन चखा। कहु नानक सुख सहजु मै पाइआ गुरि लाही सगल तिखा ॥ २ ॥ १७ ॥ ४० ॥

अन्त समय भी जिसने परम मित्र (प्रभु) का नाम जपा, तो जहाँ माता-पिता, पुत्र-भाई आदि नहीं पहुँचते, वहाँ भी वह रक्षक हुआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हृदय के अन्धकार में जब मस्तक पर लेख लिखनेवाले परमात्मा का स्मरण किया, तो बन्धन खुल गए, गुरु ने मुक्ति प्रदान की और सब ओर तू ही तू दिखने लगा ॥ १ ॥ अमृत-समान हरि-नाम पीकर मन तृप्त हुआ और जिह्वा उसे चखकर सन्तुष्ट हो गई। गुरु नानक कहते हैं कि (इस प्रकार) मुझे परम सुख प्राप्त हुआ, गुरु ने मेरी समस्त तृष्णा दूर कर दी ॥ २ ॥ १७ ॥ ४० ॥

॥ सारग महला ५ ॥ गुर मिलि ऐसे प्रभू धिआइआ। भइओ क्रिपालु दइआलु दुख भंजनु लगै न ताती बाइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जेते सास सास हम लेते तेते ही गुण गाइआ। निमख न बिछुरै घरी न बिसरै सद संगे जत जाइआ ॥ १ ॥ हउ बलि बलि बलि बलि चरन कमल कउ बलि बलि गुर दरसाइआ। कहु नानक काहू परवाहा जउ सुख सागरु मै पाइआ ॥ २ ॥ १८ ॥ ४१ ॥

गुरु को मिलकर मैंने इस तरह प्रभु का ध्यान किया कि वह कृपालु, दुःखों को दूर करनेवाला मुझ पर दयालु हो गया, मुझे सब कष्टों से उसने मुक्त कर दिया (ताती हवा नहीं लगने दी) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जितने श्वास हम लेते हैं, इतनी ही बार उसका गुण गाता हूँ। मैं जहाँ जाता हूँ, वह सदा मेरे साथ है, क्षण भर भी नहीं बिछुड़ता, घड़ी भर नहीं भूलता ॥ १ ॥ मैं अपने गुरु पर बलिहार हूँ, जिसने प्रभु दिखाया है और अब प्रभु के चरणों पर भी बार-बार क़ुर्बान जाता हूँ। गुरु नानक कहते हैं कि मुझे कोई चिन्ता नहीं, मैंने तो सुख-सागर परमात्मा को पा लिया है ॥ २ ॥ १८ ॥ ४१ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ मेरै मनि सबदु लगो गुर मीठा । खुलिहओ करमु भइओ परगासा घटि घटि हरि हरि डीठा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पारब्रहम आजोनी संभउ सरब थान घट बीठा । भइओ परापति अंम्रित नामा बलि बलि प्रभ चरणीठा ॥ १ ॥ सत संगति की रेणु मुखि लागी कीए सगल तीरथ मजनीठा । कहु नानक रंगि चलूल भए है हरि रंगु न लहै मजीठा ॥ २ ॥ १९ ॥ ४२ ॥

गुरु का उपदेश मेरे मन को मोहक प्रतीत होता है। मेरा भाग्य खुल गया है, अन्तर्मन में प्रकाश हुआ है, घट-घट में अब मुझे हरि दीख पड़ता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वह परब्रह्म, जो अयोनि और स्वयंभू है, सब जगहों पर विद्यमान है। अमृत-सम हरि-नाम प्राप्त हुआ है, मैं उस प्रभु के चरणों पर बलिहार हूँ ॥ १ ॥ सत्संगति में (सन्तों की) चरण-धूलि मुँह लगी है, समझो कि समस्त तीर्थों का स्नान हो गया है। गुरु नानक कहते हैं कि हम तो हरि के गाढ़े लाल रंग में रंगीन हुए, यह रंग बड़ा पक्का है, कभी उतरता नहीं ॥ २ ॥ १९ ॥ ४२ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ हरि हरि नामु दीओ गुरि साथे । निमख बचनु प्रभ हीअरै बसिओ सगल भूख मेरी लाथे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ क्रिपा निधान गुण नाइक ठाकुर सुख समूह सभ नाथे । एक आस मोहि तेरी सुआमी अउर दुतीआ आस बिराथे ॥ १ ॥ नैण त्रिपतासे देखि दरसावा गुरि कर धारे मेरै माथे । कहु नानक मै अतुल सुखु पाइआ जनम मरण भै लाथे ॥ २ ॥ २० ॥ ४३ ॥

गुरु ने मेरे मस्तक पर हरि-नाम अंकित कर दिया है। निमिष मात्र के लिए भी प्रभु हृदय में बसा है, तो मेरी समस्त भूख नष्ट हो गयी है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे सर्वगुणों के स्वामी, कृपानिधान, सुखागार, सबके मालिक, मुझे एक-मात्र तुम्हारा ही सहारा है, अन्य दूसरी आशा ही व्यर्थ है ॥ १ ॥ तुम्हारे दर्शन पाकर मेरे नयन तृप्त हुए हैं, गुरु ने मेरे माथे हाथ धरा है। गुरु नानक कहते हैं कि (इससे) मुझे अतुल सुख प्राप्त हुआ है, जन्म-मरण का भय नष्ट हो गया है ॥ २ ॥ २० ॥ ४३ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ रे मूढ़े आन काहे कत जाई । संगि मनोहरु अंम्रितु है रे भूलि भूलि बिखु खाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभ सुंदर चतुर अनूप बिधाते तिस सिउ रुच नही राई । मोहनि

सिउ बावर मनु मोहिओ झूठि ठगउरी पाई ॥ १ ॥ भइओ दइआलु क्रिपालु दुख हरता संतन सिउ बनिआई। सगल निधान घरै महि पाए कहु नानक जोति समाई ॥२॥२१॥४४॥

हे मूढ़ जीव, और कहीं क्यों जाते हो ? तुम्हारे भीतर ही परम अमृत है और तुम भूल-भूलकर विष खाते हो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु सुन्दर, अनुपम और सर्वकर्ता है, उसमें तुम्हारी थोड़ी भी रुचि नहीं। माया मोहिनी से तुम्हारा मन मोहित है, झूठी ठगमूरि से छले जा रहे हो ॥ १ ॥ जब प्रभु कृपालु होता है, तो दुःख दूर होते हैं एवं सन्तों की संगति मिल जाती है। गुरु नानक कहते हैं कि तब सकल गुणों का भण्डार घर में ही मिल जाता है, जीव की ज्योति परमज्योति में मिल जाती है ॥ २ ॥ २१ ॥ ४४ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ ओअं प्रिअ प्रीति चीति पहिलरीआ। जो तउ बचनु दीओ मेरे सतिगुर तउ मै साज सीगरीआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हम भूलह तुम सदा अभूला हम पतित तुम पतित उधरीआ। हम नीच बिरख तुम मैलागर लाज संगि संगि बसरीआ ॥ १ ॥ तुम गंभीर धीर उपकारी हम किआ बपुरे जंतरीआ। गुर क्रिपाल नानक हरि मेलिओ तउ मेरी सूखि सेजरीआ ॥ २ ॥ २२ ॥ ४५ ॥

प्रिय प्रभु की प्रीति मेरे हृदय में आरम्भ से ही विद्यमान है। हे सतिगुरु, जबसे तुमने उपदेश दिया है, मेरा शृंगार हुआ है ॥१॥रहाउ॥ हम भूलते हैं, हे प्रभु, तुम सदैव भूल-रहित हो; हम पतित हैं और तुम पतित-उद्धारक हो। हम नीच साधारण पेड़ हैं, तुम मलयगिरि के चन्दन हो; निकट बसनेवाले की लाज रखो ॥ १ ॥ हे स्वामी, तुम धैर्यवान्, गम्भीर और उपकारी हो, हम बेचारे जीव (तुम्हारी तुलना में) क्या हैं। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु ने कृपा करके प्रभ से भेंट करवा दी है, जिससे (प्रियतम को निकट पाकर) मेरी सेज सुखी हो गई है ॥२॥२२॥४५॥

॥ सारग महला ५ ॥ मन ओइ दिनस धंनि परवानां। सफल ते घरी संजोग सुहावे सतिगुर संगि गिआनां ॥१॥रहाउ॥ धंनि सुभाग धंनि सोहागा धंनि देत जिनि मानां। इहु तनु तुम्हरा सभु ग्रिहु धनु तुमरा हींउ कीओ कुरबानां ॥ १ ॥ कोटि लाख राज सुख पाए इक निमख पेखि द्रिसटाना। जउ कहहु मुखहु सेवक इह बैसीऐ सुख नानक अंतु न जानां ॥२॥२३॥४६॥

हे मन, वह दिवस धन्य है, वही स्वीकार है; वही संयोग की घड़ी सफल है, जब सतिगुरु से मिलन-संयोग प्राप्त हुआ और जीव को ज्ञान मिला ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उत्तम भाग्य धन्य है, प्रभु-सुहाग धन्य है और वह जिसे सम्मान दे, वह भी धन्य है। यह शरीर तुम्हारा है, सभी घर-धन आदि तुम्हारा है, मैं तुम पर हृदय क़ुर्बान करता हूँ ॥ १ ॥ एक पल के दर्शन में करोड़ों-लाखों श्रेष्ठ सुख प्राप्त होते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि हे प्रभु, यदि तुम स्वयं कह दो कि सेवक को यहाँ बैठना है, तो इसका अनन्त सुख मिलता है ॥ २ ॥ २३ ॥ ४६ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ अब मोरो सहसा दूखु गइआ। अउर उपाउ सगल तिआगि छोडे सतिगुर सरणि पइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सरब सिधि कारज सभि सवरे अहंरोग सगल ही खइआ। कोटि पराध खिन महि खउ भई है गुर मिलि हरि हरि कहिआ ॥ १ ॥ पंच दास गुरि वसगति कीने मन निहचल निरभइआ। आइ न जावै न कतही डोलै थिरु नानक राजइआ ॥ २ ॥ २४ ॥ ४७ ॥

अब मेरे भ्रमों का दुःख दूर हुआ है; मैंने अन्य सबको छोड़कर सतिगुरु की शरण ली है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ समस्त सिद्धियों एवं कार्यों को सम्पन्नता मिली है, अहम् से उपजे सब कष्ट दूर हो गए हैं। गुरु मिलने पर हरि-हरि-नाम जपने से क्षण भर में ही करोड़ों अपराधों का प्रभाव क्षीण होता है ॥ १ ॥ गुरु के सहयोग से मैंने पाँच सेवक (काम-क्रोधादि) वश कर लिये हैं और मेरा मन निश्चल और निर्भय हो गया है। गुरु नानक कहते हैं कि अब आवागमन चुक गया है, जीव स्थिर भाव से प्रभु के निकट विराजता है ॥ २ ॥ २४ ॥ ४७ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ प्रभु मेरो इत उत सदा सहाई। मन मोहनु मेरे जीअ को पिआरो कवन कहा गुन गाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ खेलि खिलाइ लाड लाडावै सदा सदा अनदाई। प्रतिपालै बारिक की निआई जैसे मात पिताई ॥ १ ॥ तिसु बिनु निमख नही रहि सकीऐ बिसरि न कबहू जाई। कहु नानक मिलि संत संगति ते मगन भए लिव लाई ॥ २ ॥ २५ ॥ ४८ ॥

मेरा परमात्मा यहाँ-वहाँ सदा सहायक है, वह मेरा मनमोहन और अतीव प्रिय है, मैं उसके क्या-क्या गुण बताऊँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वह मुझे लाड़ लड़ाता, खेल खिलाता एवं खूब आनन्द देता है। माता-पिता की तरह मुझ बालक का प्रतिपालन करता है ॥ १ ॥ उसके बिना क्षण

भर नहीं रहा जाता, उसे कभी विस्मृत भी नहीं किया जा सकता। गुरु नानक कहते हैं कि जिन्हें सच्चे सन्तों (गुरु) की संगति मिली है, वे उसी में दत्त-चित्त मग्न हो जाते हैं ॥ २ ॥ २५ ॥ ४८ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ अपना मीतु सुआमी गाईऐ। आस न अवर काहू की कीजै सुखदाता प्रभु धिआईऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सूख मंगल कलिआण जिसहि घरि तिसही सरणी पाईऐ। तिसहि तिआगि मानुखु जे सेवहु तउ लाज लोनु होइ जाईऐ ॥ १ ॥ एक ओट पकरी ठाकुर की गुर मिलि मति बुधि पाईऐ। गुण निधान नानक प्रभु मिलिआ सगल चुकी मुहताईऐ ॥ २ ॥ २६ ॥ ४९ ॥

अपने परम सुहृदवर एवं स्वामी का गुण गाओ। अन्य किसी से कोई आशा नहीं, सदा सुखदाता प्रभु का ही ध्यान करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसके घर सब सुख, कल्याण, सद्भाव भरे हैं, उसी की शरण लो। उसे छोड़कर यदि आदमी का सहारा ढूँढ़ोगे तो अन्ततः लज्जा से घुल-घुलकर मरना होगा ॥ १ ॥ हमने तो केवल अपने स्वामी की ओट ली है, गुरु के सम्पर्क में हमें यही सूझ प्राप्त हुई है। गुरु नानक कहते हैं कि गुणों के भण्डार परमात्मा को पा जाने पर समस्त मुहताजी दूर हो जाती है ॥ २ ॥ २६ ॥ ४९ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ ओट सताणी प्रभ जीउ मेरै। द्रिसटि न लिआवउ अवर काहू कउ माणि महति प्रभ तेरै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अंगीकारु कीओ प्रभि अपुनै काढि लीआ बिखु घेरै। अम्रित नामु अउखधु मुखि दीनो जाइ पइआ गुर पैरै ॥ १ ॥ कवन उपमा कहउ एक मुख निरगुण के दातेरै। काटि सिलक जउ अपुना कीनो नानक सूख घनेरै ॥ २ ॥ २७ ॥ ५० ॥

मेरे प्रभु का सहारा बड़ा सबल है। हे प्रभु, तुम्हारे मान-प्रतिष्ठा के कारण मैं किसी अन्य को आँख-तले नहीं लाता (अर्थात् किसी की परवाह नहीं करता) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरे परमात्मा ने मुझे अंगीकार किया है और माया के विषाक्त घेरे में से निकाल लिया है। अमृत-समान हरि-नाम की औषध का सेवन करवाया है, जिससे मैं गुरु-चरणों की शरण आया हूँ ॥ १ ॥ मेरा मुख एक है, तुम्हारी (असंख्य) उपमाएँ क्योंकर कहूँ ? तुम मुझ गुण-हीन के दाता हो। गुरु नानक कहते हैं कि मेरे माया-बन्धनों को काटकर अपना कर लो, तो सुख ही सुख है ॥ २ ॥ २७ ॥ ५० ॥

॥ सारग महला ५ ॥ प्रभ सिमरत दूख बिनासी । भइओ क्रिपालु जीअ सुखदाता होई सगल खलासी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अवरु न कोऊ सूझै प्रभ बिनु कहु को किसु पहि जासी । जिउ जाणहु तिउ राखहु ठाकुर सभु किछु तुमही पासी ॥ १ ॥ हाथ देइ राखे प्रभि अपुने सद जीवन अबिनासी । कहु नानक मनि अनदु भइआ है काटी जम की फासी ॥ २ ॥ २८ ॥ ५१ ॥

प्रभु के स्मरण से दुःख नाश होते हैं । जीवों का सुखदाता प्रभु जब कृपा करता है, तो सब मुक्त हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु के बिना और कोई सूझता ही नहीं, फिर कहो कोई किसका सहारा ले ! जैसे उचित हो, हे स्वामी, वैसा रखो, सब कुछ तुम्हारे ही पास है ॥ १ ॥ उस अविनाशी ने सदा हाथ देकर मेरी जीवन-रक्षा की है । गुरु नानक कहते हैं कि उसने मेरी यमों की फाँसी काट दी है, अब तो आनन्द ही आनन्द है ॥ २ ॥ २८ ॥ ५१ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ मेरो मनु जत कत तुझहि सम्हारै । हम बारिक दीन पिता प्रभ मेरे जिउ जानहि तिउ पारै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब भूखौ तब भोजनु मांगै अघाए सूख सघारै । तब अरोग जब तुम संगि बसतौ छुटकत होइ रवारै ॥ १ ॥ कवन बसेरो दास दासन को थापि उथापनहारै । नामु न बिसरै तब जीवनु पाईऐ बिनती नानक इह सारै ॥ २ ॥ २९ ॥ ५२ ॥

जब-कब मेरा मन तुम्हीं को स्मरण करता है । हम दीन बालक हैं, तुम हमारे प्रभु और पिता हो, हम जानते हैं कि तुम्हीं पार कर सकते हो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब हम भूखे होते हैं, तुम हमको तृप्त करते एवं समस्त सुख पहुँचाते हो । तुम्हारे सम्पर्क में हम नित्य स्वस्थ हैं, तुमसे छूटते ही मिट्टी-सम हो जाते हैं ॥ १ ॥ मुझ दासों के दास का अन्य क्या सहारा है ? सब प्रभु ने स्थापित किया है । गुरु नानक यही विनती करते हैं कि जीवन में कभी, ऐ प्रभु, तुम्हारा नाम न भूले ॥२॥२९॥५२॥

॥ सारग महला ५ ॥ मन ते भै भउ दूरि पराइओ । लाल दइआल गुलाल लाडिले सहजि सहजि गुन गाइओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुर बचनाति कमात क्रिपा ते बहुरि न कतहू धाइओ । रहत उपाधि समाधि सुख आसन भगति वछलु ग्रिहि पाइओ ॥ १ ॥ नाद बिनोद कोड आनंदा सहजे सहजि

समाइओ । करना आपि करावन आपे कहु नानक आपि आपाइओ ।। २ ।। ३० ।। ५३ ।।

मन से सब भय-भ्रम दूर हो गए और मैंने आनन्द-मग्न होकर अपने प्यारे दयालु प्रभु का गुण गाया ।। १ ।। रहाउ ।। गुरु-वचनों द्वारा प्रभु की कृपा प्राप्त की, दुबारा कहीं आवागमन नहीं हुआ । समस्त उपाधि दूर हुई तथा सुख-समाधि में स्थिरता प्राप्त हुई; भक्त-वत्सल परमात्मा को मैंने घर में ही पा लिया ।। १ ।। सब बाहरी खेल-तमाशों के मिथ्या आनन्द सहज (स्थिर तथा परम) आनन्द में समाहित हुए । गुरु नानक कहते हैं कि वह प्रभु स्वयं ही करने-करानेवाला आप ही आप है (सर्वस्व है) ।। २ ।। ३० ।। ५३ ।।

।। सारग महला ५ ।। अंम्रित नामु मनहि आधारो । जिनि दीआ तिस कै कुरबानै गुर पूरे नमसकारो ।। १ ।। रहाउ ।। बूझी त्रिसना सहजि सुहेला कामु क्रोधु बिखु जारो । आइ न जाइ बसै इह ठाहर जह आसनु निरंकारो ।। १ ।। एकै परगटु एकै गुपता एकै धुंधूकारो । आदि मधि अंति प्रभु सोई कहु नानक साचु बीचारो ।। २ ।। ३१ ।। ५४ ।।

हरि का अमृत-सम नाम मन का आसरा है । जिसने यह रहस्य बताया है, उस गुरु को मेरा प्रणाम है, मैं उस पर क़ुर्बान हूँ ।। १ ।। रहाउ ।। मेरी तृष्णा बुझ गई है, मैं पूर्ण स्थिर दशा में आनन्द लेता हूँ, मेरे काम-क्रोध का विष जल गया है । अब मैं ऐसी जगह बसता हूँ, जहाँ आवागमन नहीं, वरन् निरंकार का अपना निवास है ।। १ ।। प्रकट रूप (सगुण) में, गुप्त रूप (निर्गुण) में एवं अन्धकार अनचीन्हे (विस्मय) रूप में वही एक विराजता है । गुरु नानक इस तथ्य को विचारकर कहते हैं कि आदि, मध्य, अन्त सर्वथा वही एक प्रभु है ।। २ ।। ३१ ।। ५४ ।।

।। सारग महला ५ ।। बिनु प्रभ रहनु न जाइ घरी । सरब सूख ताहू कै पूरन जा कै सुखु है हरी ।। १ ।। रहाउ ।। मंगल रूप प्रान जीवन धन सिमरत अनद घना । वड समरथु सदा सद संगे गुन रसना कवन भना ।। १ ।। थान पवित्रा मान पवित्रा पवित्र सुनन कहनहारे । कहु नानक ते भवन पवित्रा जा महि संत तुम्हारे ।। २ ।। ३२ ।। ५५ ।।

प्रभु के बिना घड़ी भर भी रहा नहीं जाता । जिसे हरि-सम्पर्क का सुख मिला है, उसके समस्त सुख सम्पूर्ण हैं ।। १ ।। रहाउ ।। उस कल्याण-रूप, जीवन-प्राण परमात्मा के स्मरण में बहुत आनन्द है । वह महनीय

समर्थ है, सदा अंग-संग सहयोगी है, जीभ से उसका क्या-क्या गुण बताऊँ ॥ १ ॥ उसका स्थान, उसकी प्रतिष्ठा तथा उसका नाम कहने-सुननेवाले, सब पवित्र हैं। गुरु नानक कहते हैं कि वह भवन (सत्संग) भी पवित्र है, जहाँ प्रभु के सन्त (सन्त) विद्यमान हैं ॥ २ ॥ ३२ ॥ ५५ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ रसना जपती तूही तूही। मात गरभ तुमही प्रतिपालक म्रित मंडल इक तुही ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुमहि पिता तुम ही फुनि माता तुमहि मीत हित भ्राता। तुम परवार तुमहि आधारा तुमहि जीअ प्रानदाता ॥ १ ॥ तुमहि खजीना तुमहि जरीना तुमही माणिक लाला। तुमहि पारजात गुर ते पाए तउ नानक भए निहाला ॥ २ ॥ ३३ ॥ ५६ ॥

मेरी जिह्वा तूही-तूही (तुम्हारा ही नाम) जपती है। माता के गर्भ में तुम्हींने मेरा पोषण किया और अब मर्त्यलोक में भी तुम ही रक्षक हो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुम्हीं मेरे पिता हो, माता हो, पुनः तुम्हीं मेरे हित-चिन्तक भाई भी हो। तुम्हीं मेरा परिवार हो, मेरा आधार हो, मुझे तन-मन-प्राण देनेवाले हो ॥ १ ॥ तुम्हीं मेरा वैभव हो, मेरी धन-सम्पत्ति हो, मेरे लाल-हीरे भी तुम्हीं हो। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु से प्राप्त तुम मेरे कल्पवृक्ष हो, मैं तुम्हें पाकर परम निहाल हूँ ॥ २ ॥ ३३ ॥ ५६ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ जाहू काहू अपुनो ही चिति आवै। जो काहू को चेरो होवत ठाकुर ही पहि जावै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अपने पहि दूख अपने पहि सूखा अपुने ही पहि बिरथा। अपुने पहि मानु अपुने पहि ताना अपने ही पहि अरथा ॥ १ ॥ किन ही राज जोबनु धन मिलखा किन ही बाप महतारी। सरब थोक नानक गुर पाए पूरन आस हमारी ॥ २ ॥ ३४ ॥ ५७ ॥

जहाँ कहीं भी हो, सदैव अपना प्रिय ही याद आता है। जो किसी का सेवक है, वह अन्ततः अपने स्वामी के ही पास जाता है (अर्थात् हरि सबका स्वामी है, उसके सेवक उसी की शरण में सुखी हो सकते हैं) ॥१॥ रहाउ ॥ अपने प्रिय को ही अपना दुःख, सुख तथा दिल की व्यथा बताई जाती है। अपने प्रिय से ही मान होता है, ज़ोर होता है और आवश्यकता पूरी करने की माँग की जाती है ॥ १ ॥ किसी को राज्य, यौवन, धन, सम्पत्ति की अपेक्षा होगी, किसी को माता-पिता का आश्रय चाहिए। गुरु नानक कहते हैं कि मैंने तो गुरु प्राप्त करके अन्य सब आवश्यकताओं को एक-साथ पूर्ण कर लिया है ॥ २ ॥ ३४ ॥ ५७ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ झूठो माइआ को मद मानु। ध्रोह मोह दूरि करि बपुरे संगि गोपालहि जानु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मिथिआ राज जोबन अरु उमरे मीर मलक अरु खान। मिथिआ कापर सुगंध चतुराई मिथिआ भोजन पान ॥ १ ॥ दीनबंधरो दास दासरो संतह की सारान। मांगनि मांगउ होइ अचिंता मिलु नानक के हरि प्रान ॥ २ ॥ ३५ ॥ ५८ ॥

माया का अभिमान झूठा है। ऐ मनुष्य, तू अपना वैर-विरोध और मोह को दूर करके केवल परमात्मा में ही चित्त लगाओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ समूची सांसारिक उपलब्धियाँ (राज्य, यौवन) अथवा अमीर, मलिक, खान आदि की पदवियाँ, सब मिथ्या हैं। सुन्दर कपड़े, सुगंधियाँ, चातुर्य, ताम्बूल, स्वादिष्ट भोजन आदि सब झूठ हैं ॥ १ ॥ हे दीन-बन्धु, मैं तुम्हारे दासों का दास हूँ और सन्तों की शरण में पड़ा हूँ। गुरु नानक यही विनती करते हैं (माँगते हैं) कि हे प्राण-प्रिय हरि, शीघ्र ही आन मिलो ॥ २ ॥ ३५ ॥ ५८ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ अपुनी इतनी कछू न सारी। अनिक काज अनिक धावरता उरझिओ आन जंजारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दिउस चारि के दीसहि संगी ऊहां नाही जह भारी। तिन सिउ राचि माचि हितु लाइओ जो कामि नही गावारी ॥१॥ हउ नाही नाही किछु मेरा ना हमरो बसु चारी। करन करावन नानक के प्रभ संतन संगि उधारी ॥ २ ॥ ३६ ॥ ५९ ॥

इस जीव ने अपनी तो (स्थिति : आध्यात्मिक) थोड़ी भी नहीं सँवारी। अन्य अनेक कार्यों में दौड़ता-भागता रहा, अन्यान्य जंजालों में उलझा रहा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ये चार दिन के संगी-साथी मुसीबत के समय साथ नहीं देते। तुमने उनके संग घनिष्ट प्यार लगाया है, जो गँवार किसी काम के नहीं ॥ १ ॥ मैं कुछ भी नहीं, न ही कुछ मेरा है; मेरा वश भी कोई नहीं चलता। गुरु नानक कहते हैं कि वह प्रभु ही सब कुछ करने-करानेवाला है, सन्तों की संगति में ही उद्धार सम्भव है ॥२॥३६॥५९॥

॥ सारग महला ५ ॥ मोहनी मोहत रहै न होरी। साधिक सिध सगल की पिआरी तुटै न काहू तोरी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ खटु सासत्र उचरत रसनागर तीरथ गवन न थोरी। पूजा चक्र बरत नेम तपीआ ऊहा गैलि न छोरी ॥ १ ॥ अंध कूप महि

पतित होत जगु संतहु करहु परमगति मोरी । साध संगति नानक भइओ मुकता दरसनु पेखत भोरी ।। २ ।। ३७ ।। ६० ।।

माया (मोहिनी) मनुष्य को मोहित करती है और किसी के रोके रुकती नहीं। यह सिद्ध, साधकों की भी प्यारी है, छोड़े नहीं छूटती ।।१।। रहाउ ।। छ: शास्त्र भी यदि जिह्वाग्र हों (ज़बानी याद हों) या तीर्थ-यात्राएँ की जायँ तो भी यह कम नहीं होती। पूजा करने, तिलकादि लगाने, व्रत-नियम पालने आदि से भी (माया) यह राह नहीं छोड़ती ।।१।। सारा संसार इसी माया के कारण अन्ध-कूप में गिरता है, सन्तों की कृपा से ही मुझे परम गति प्राप्त हुई है। गुरु नानक कहते हैं कि साधु-संगति में थोड़ा-सा दर्शन करके ही (माया से) मुक्ति मिल जाती है ।।२।।३७।।६०।।

।। सारग महला ५ ।। कहा करहि रे खाटि खाटुली । पवनि अफार तोर चामरो अति जजरी तेरी रे माटुली ।। १ ।। रहाउ ।। ऊही ते हरिओ ऊहा ले धरिओ जैसे बासा मास देत झाटुली । देवनहारु बिसारिओ अंधुले जिउ सफरी उदरु भरै बहि हाटुली ।। १ ।। साद बिकार बिकार झूठ रस जह जानो तह भीर बाटुली । कहु नानक समझु रे इआने आजु कालि खुल्है तेरी गांठुली ।। २ ।। ३८ ।। ६१ ।।

जागतिक कमाई करके भी तुम क्या करते हो ? तुम्हारा शरीर पवन से भरकर चमड़े की तरह फूल गया है तथा देह रूपी यह मटकी जर्जरित हो गई है ।। १ ।। रहाउ ।। इस मटकी को इधर से उठाते, उधर रखते हो, जैसे चील मांस को एक जगह से झपटकर ले जाती है, दूसरी जगह गिर भी जाता है। तुमने अपने दाता को भुला दिया है— जैसे राही किसी दुकान पर बैठकर पेट भर लेता है (और भोजन देनेवाले को भूल जाता है) ।। १ ।। तुम्हारे सब स्वाद बेकार हैं, सब रस मिथ्या हैं, जहाँ तुम्हें अन्तत: जाना है, वह सँकरा मार्ग है। गुरु नानक कहते हैं कि ऐ-बावरे, अब भी समझ ले, आज-कल में ही तेरी मृत्यु आनेवाली है ।।२।।३८।।६१।।

।। सारग महला ५ ।। गुर जीउ संगि तुहारै जानिओ । कोटि जोध उआ की बात न पुछीऐ तां दरगह भी मानिओ ।। १ ।। रहाउ ।। कवन मूलु प्रानी का कहीऐ कवन रूपु द्रिसटानिओ । जोति प्रगास भई माटी संगि दुलभ देह बखानिओ ।। १ ।। तुमते सेव तुमते जप तापा तुम ते ततु पछानिओ । करु मसतकि धरि कटी जेवरी नानक दास दसानिओ ।। २ ।। ३९ ।। ६२ ।।

हे मेरे सतिगुरु, तुम्हारे सम्पर्क में ही मैंने प्रभु को जाना है। करोड़ों योद्धा घूमते हैं, उन्हें कोई नहीं पूछता। किन्तु दरगाह (प्रभु-सदन) में तुमने ही मुझे सम्मान दिलाया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्राणी का आरम्भ क्या था, इसकी यथार्थता को कौन जाने ! अब यह रूप दीख पड़ता है (क्या जाने कैसे तुच्छ रूप से विकसित हुआ है)। इस मिट्टी के शरीर में ज्योति का प्रकाश हुआ, तभी तो यह शरीर दुर्लभ कहलाया ॥ १ ॥ हे सतिगुरु, तुम्हीं से मैंने सब सेवा, जप, तप और ज्ञान-तत्त्व को सीखा है। गुरु नानक कहते हैं कि तुमने ही मुझ दासों के दास के माथे हाथ रखकर काल के बंधन काट दिए हैं ॥ २ ॥ ३९ ॥ ६२ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ हरि हरि दीओ सेवक कउ नाम। मानसु काको बपुरो भाई जाको राखा राम ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आपि महा जनु आपे पंचा आपि सेवक कै काम। आपे सगले दूत बिदारे ठाकुर अंतरजाम ॥ १ ॥ आपे पति राखी सेवक की आपि कीओ बंधान। आदि जुगादि सेवक की राखै नानक को प्रभु जान ॥ २ ॥ ४० ॥ ६३ ॥

मुझ सेवक को गुरु ने हरि-नाम दिया है। प्रभु स्वयं जिसका रक्षक है, वह कभी बेचारा (अनाथ) नहीं होता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु स्वयं सबका मुखिया है, स्वयं महान है, वही सेवक के सब काम बनाता है। परमामा ने ही मेरे पाँचों विकार (पंचदूत) नष्ट कर दिए हैं, मेरा स्वामी अन्तर्यामी है ॥ १ ॥ अपने सेवक की लाज वह स्वयं रखता है, उसे स्थिरता प्रदान करता है। गुरु नानक कहते हैं कि सच्चा प्रभु वही है, जो सेवक के आदि-अन्त का पूरा ध्यान रखता है ॥ २ ॥ ४० ॥ ६३ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ तू मेरे मीत सखा हरि प्रान। मनु धनु जीउ पिंडु सभु तुमरा इहु तनु सीतो तुमरै धान ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुमही दीए अनिक प्रकारा तुमही दीए मान। सदा सदा तुमही पति राखहु अंतरजामी जान ॥ १ ॥ जिन संतन जानिआ तू ठाकुर ते आए परवान। जन का संगु पाईऐ वडभागी नानक संतन कै कुरबान ॥ २ ॥ ४१ ॥ ६४ ॥

हे प्रभु, तुम मेरे मित्र और प्राणों के प्राण हो। मेरा मन, धन, जीव, पिंड सब तुम्हारे हैं, यह मेरा शरीर तुम्हारी ही कृपा से बना है ॥१॥ रहाउ ॥ तुम्हीं ने विश्व के अनेक प्रकार दिए हैं, तुम्हीं ने मान-सम्मान दिया है। तुम अन्तर्यामी हो, सदा मेरी लाज रखते हो ॥ १ ॥ जिन्होंने सन्तों द्वारा स्वामी परमात्मा को जाना है, वे तुम्हें स्वीकार हैं। गुरु

नानक कहते हैं कि वे उन सन्तों पर क़ुर्बान हैं, जिनके कारण भाग्यवश भक्तजन की संगति प्राप्त होती है ॥ २ ॥ ४१ ॥ ६४ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ करहु गति दइआल संतहु मोरी । तुम समरथ कारन करना तूटी तुमही जोरी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जनम जनम के बिखई तुम तारे सुमति संगि तुमारै पाई । अनिक जोनि भ्रमते प्रभ बिसरत सासि सासि हरि गाई ॥ १ ॥ जो जो संगि मिले साधू कै तेते पतित पुनीता । कहु नानक जा के वडभागा तिनि जनमु पदारथु जीता ॥ २ ॥ ४२ ॥ ६५ ॥

हे दयालु सन्तो, मुझे मुक्ति प्रदान करो । तुम समर्थ, करने-कराने वाले स्वयं हो, तुम्हीं मेरी टूटी को दोबारा जोड़ सकते हो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुमने जन्म-जन्म के विषयी जीवों को तार दिया, तुम्हारी संगति में सुमति प्राप्त हुई । जो कई जन्म से हरि-विस्मृत करके भटकते थे, वे (तुम्हारी कृपा से) नित्य हरि-गुण गाते हैं ॥ १ ॥ जिन-जिनको सन्तों का सम्पर्क प्राप्त हुआ, वे पतित भी पुनीत हो गए । गुरु नानक कहते हैं कि जिनका भाग्य उत्तम है, वे जन्म (मनुष्य) में विजयी होते हैं ॥ २ ॥ ४२ ॥ ६५ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ ठाकुर बिनती करन जनु आइओ । सरब सूख आनंद सहज रस सुनत तुहारो नाइओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ क्रिपानिधान सूख के सागर जसु सभ महि जा को छाइओ । संत संगि रंग तुम कीए अपना आपु द्रिसटाइओ ॥ १ ॥ नैनहु संगि संतन की सेवा चरन झारी केसाइओ । आठ पहर दरसनु संतन का सुखु नानक इहु पाइओ ॥ २ ॥ ४३ ॥ ६६ ॥

हे स्वामी, यह सेवक तुम्हारे निकट विनती करने आया है । तुम्हारा नाम सुनने से परम सुख एवं सहज आनन्द लब्ध हुआ है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुम कृपा-निधान और सुख-सागर हो, सबमें तुम्हारा ही यश प्रसारित है । तुम संत-संगति में केलि करते हो और अपना-आप प्रकट कर देते हो ॥१॥ मुझे नयनों से सन्तों की दर्शन-सेवा तथा अपने केशों से उनके चरणों को झाड़ने की सेवा करनी है । गुरु नानक ने आठों प्रहर सन्तों के दर्शन में सुख पाया है ॥ २ ॥ ४३ ॥ ६६ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ जा की राम नाम लिव लागी । सजनु सु रिदा सुहेला सहजे सो कहीऐ बडभागी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रहित बिकार अलप माइआ ते अहंबुधि बिखु तिआगी । दरस पिआस आस एकहि की टेक हीऐं प्रिअ

पागी ॥ १ ॥ अचिंत सोइ जागनु उठि बैसनु अचिंत हसत बैरागी । कहु नानक जिनि जगतु ठगाना सु माइआ हरि जन ठागी ॥ २ ॥ ४४ ॥ ६७ ॥

जिसकी वृत्ति हरि-नाम में लगी है, वह भाग्यशाली दिल से सज्जन है एवं सहज में ही आनन्द-मग्न है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वह विकार-रहित, माया से अलिप्त होता है और अहम्-बुद्धि का विष त्याग देता है । मैं सदा प्रिय-प्रेम में पगा हृदय, उसके दर्शनों की प्यास तथा उसी एक का सहारा चाहता हूँ ॥ १ ॥ अब (प्रभु-मिलनोपरांत) मैं निश्चिन्त होकर सोता-जागता, उठता-बैठता हूँ और निश्चिन्ततापूर्वक हँसता-रोता हूँ । गुरु नानक कहते हैं कि जिस माया ने समूचे जगत को ठगा है, हरिजन द्वारा वह स्वयं ठगी जाती है ॥ २ ॥ ४४ ॥ ६७ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ अब जन ऊपरि को न पुकारै । पूकारन कउ जो उदमु करता गुरु परमेसरु ता कउ मारै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ निरवैरै संगि वैरु रचावै हरि दरगह ओहु हारै । आदि जुगादि प्रभ की वडिआई जन की पैज सवारै ॥ १ ॥ निरभउ भए सगल भउ मिटिआ चरन कमल आधारै । गुर कै बचनि जपिओ नाउ नानक प्रगट भइओ संसारै ॥२॥४५॥६८॥

अब प्रभु के सेवक की (मेरी) कोई शिकायत नहीं करता । जो कोई प्रभु-भक्तों की शिकायत करने की कोशिश करता है, गुरु परमेश्वर उसे दण्डित करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो जीव निर्वैर प्रभु से वैर करता है, प्रभु के दरबार में वह पराजित होता है । आदि युग से प्रभु की सर्वोपरि प्रतिष्ठा होती है, और वह अपने भक्तों की रक्षा करता है ॥ १ ॥ उसके चरण-कमलों का सहारा लेनेवाला जीव निर्भय हो जाता है, उसके सब भय दूर होते हैं । गुरु नानक कहते हैं कि जो जीव गुरु के उपदेश से हरि-नाम जपता है, उस पर प्रभु संसार में ही प्रत्यक्ष हो जाता है ॥२॥४५॥६८॥

॥ सारग महला ५ ॥ हरि जन छोडिआ सगला आपु । जिउ जानहु तिउ रखहु गुसाई पेखि जीवां परतापु ॥१॥रहाउ॥ गुर उपदेसि साध की संगति बिनसिओ सगल संतापु । मित्र सत्र पेखि समतु बीचारिओ सगल संभाखन जापु ॥ १ ॥ तपति बुझी सीतल आघाने सुनि अनहद बिसम भए बिसमाद । अनदु भइआ नानक मनि साचा पूरन पूरे नाद ॥ २ ॥ ४६ ॥ ६९ ॥

हरि-भक्त ने अहम्-भाव छोड़ दिया है और विनती करता है कि

हे स्वामी, जैसे जानो, वैसे रखो; मैं तो तुम्हारी बड़ाई देख-देखकर जीता हूँ ।। १ ।। रहाउ ।। गुरु के उपदेश से मुझे सन्तों की संगति प्राप्त हुई है और समूचा संताप दूर हो गया है। जो मित्र-शत्रु को समान देखता है, उसका समूचा संभाषण हरि-जाप के समान ही है ।। १ ।। अनाहत नाद (आत्म-मंडल का संगीत) सुनकर सांसारिक ताप मिट गया और शीतल तृप्ति प्राप्त हुई, जिसका विषम विस्मय हो रहा है। गुरु नानक कहते हैं कि मन में सच्चा आनन्द मिलने से पूर्ण विकास पा लिया है ।।२।।४६।।६९।।

।। सारग महला ५ ।। मेरै गुरि मोरो सहसा उतारिआ । तिसु गुर कै जाईऐ बलिहारी सदा सदा हउ वारिआ ।। १ ।। रहाउ ।। गुर का नामु जपिओ दिनुराती गुर के चरन मनि धारिआ । गुर की धूरि करउ नित मजनु किलविख मैलु उतारिआ ।। १ ।। गुर पूरे की करउ नित सेवा गुरु अपना नमसकारिआ । सरब फला दीन्हे गुरि पूरै नानक गुरि निसतारिआ ।। २ ।। ४७ ।। ७० ।।

मेरे सतिगुरु ने मेरे संशय को दूर कर दिया है। मैं उस गुरु के सदा बलिहार जाता हूँ ।। १ ।। रहाउ ।। मैं रात-दिन उस गुरु का नाम जपता और उसके चरणों में मन रमाता हूँ। गुरु की चरण-धूलि में स्नान करके सब पापों को धो डाला है ।। १ ।। मैं पूर्णगुरु की सेवा में मग्न हूँ, नित्य उसका वंदन करता हूँ। गुरु नानक कहते हैं कि मुझे समस्त मनोरथ गुरु से प्राप्त हुए हैं और उसी ने मुझे मुक्त कर दिया है ।।२।।४७।।७०।।

।। सारग महला ५ ।। सिमरत नामु प्रान गति पावै । मिटहि कलेस त्रास सभ नासै साध संगि हितु लावै ।। १ ।। रहाउ ।। हरि हरि हरि हरि मनि आराधे रसना हरि जसु गावै । तजि अभिमानु काम क्रोधु निंदा बासुदेव रंगु लावै ।। १ ।। दामोदर दइआल आराधहु गोबिंद करत सुोहावै । कहु नानक सभ की होइ रेना हरि हरि दरसि समावै ।। २ ।। ४८ ।। ७१ ।।

हरि-नाम का स्मरण करने से प्राणों की मुक्ति होती है। सन्तों के संग प्रेम बनाने में सब क्लेश और भय दूर हो जाते हैं ।। १ ।। रहाउ ।। मन में नित्य हरि-नाम की आराधना करो और जिह्वा से हरि का यश गाओ। काम, क्रोध, अभिमान आदि दुर्गुणों को छोड़कर परमेश्वर के साथ प्रेम करो ।। १ ।। दयालु परमात्मा के नाम की आराधना करो, प्रभु-भजन करते हुए ही मनुष्य शोभता है। गुरु नानक कहते हैं कि

विनम्रतावश सबकी चरण-धूलि हो जाने से मनुष्य को हरि-दर्शन प्राप्त हो जाता है ॥ २ ॥ ४८ ॥ ७१ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ अपुने गुर पूरे बलिहारै । प्रगट प्रतापु कीओ नाम को राखे राखनहारै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ निरभउ कीए सेवक दास अपने सगले दूख बिदारै । आन उपाव तिआगि जन सगले चरन कमल रिद धारै ॥१॥ प्रान अधार मीत साजन प्रभ एकै एकंकारै । सभ ते ऊच ठाकुरु नानक का बार बार नमसकारै ॥ २ ॥ ४९ ॥ ७२ ॥

मैं अपने पूरे गुरु पर क़ुर्बान हूँ । उसने हरि-नाम की महिमा को प्रकट किया है और उस रक्षक ने हमारी रक्षा की है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतिगुरु ने अपने समस्त सेवकों-दासों के दुःख दूर करके, उन्हें निर्भय कर दिया है । इसलिए उसके सेवकों ने (हमने) अन्य सब उपाय त्यागकर केवल उसके चरण-कमलों को हृदय में धारण किया है ॥ १ ॥ परमात्मा प्राणों का आधार, साजन, मित्र और एक अद्वैत ब्रह्म है । गुरु नानक कहते हैं कि मेरा स्वामी सर्वोच्च है (गुरु ने उसी के निकट हमें लगाया है ।) ॥ २ ॥ ४९ ॥ ७२ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ बिनु हरि है को कहा बतावहु । सुख समूह करुणामै करता तिसु प्रभ सदा धिआवहु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जा कै सूति परोए जंता तिसु प्रभ का जसु गावहु । सिमरि ठाकुरु जिनि सभु किछु दीना आन कहा पहि जावहु ॥ १ ॥ सफल सेवा सुआमी मेरे की मन बांछत फल पावहु । कहु नानक लाभु लाहा लै चालहु सुख सेती घरि जावहु ॥ २ ॥ ५० ॥ ७३ ॥

प्रभु के सिवा क्या कोई और है, बताओ ! वह करुणामय, स्रष्टा, सुखों का समूह है, सदा उसी की आराधना करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ समस्त जीव-जन्तु जिसके सूत्र में पिरोए हैं (अर्थात् वह समस्त जीवों का सूत्रधार है), उस परमात्मा का यशोगान करो । उस स्वामी का स्मरण करो, जिसने सब कुछ दिया है, अन्य कहाँ जाओगे ? ॥ १ ॥ मेरे स्वामी की सेवा ही सफल है, उससे मनोवांछित फल मिलता है । गुरु नानक कहते हैं कि सेवा के इस लाभ को उठाओ और सुखपूर्वक घर जाओ ॥२॥५०॥७३॥

॥ सारग महला ५ ॥ ठाकुर तुम्ह सरणाई आइआ । उतरि गइओ मेरे मन का संसा जब ते दरसनु पाइआ ॥ १ ॥

रहाउ ।। अनबोलत मेरा बिरथा जानी अपना नामु जपाइआ । दुख नाठे सुख सहजि समाए अनद अनद गुण गाइआ ।। १ ।। बाह पकरि कढि लीने अपुने ग्रिह अंध कूप ते माइआ । कहु नानक गुरि बंधन काटे बिछुरत आनि मिलाइआ ।।२।।५१।।७४।।

हे स्वामी, मैं तुम्हारी शरण में आया हूँ । जबसे मैंने तुम्हारा दर्शन पाया है, मेरे मन का संशय चुक गया है ।। १ ।। रहाउ ।। तुमने बिना बताए ही मेरी व्यथा को जान लिया है और अपना नाम-जाप करवाया है । मेरे सब दुःख दूर हो गए हैं, मुझे अडोल अवस्था का स्थायी सुख प्राप्त हुआ है और मैं आनन्द-मग्न प्रभु का गुण गाता हूँ ।।१।। माया के अँधेरे कुएँ में से उसने बाँह पकड़कर मुझे निकाला और अपने घर में आश्रय दिया है । गुरु नानक कहते हैं कि गुरु ने मेरे बंधन काट दिए हैं और बिछुड़े हुए को परमात्मा से मिला दिया है ।। २ ।। ५१ ।। ७४ ।।

।। सारग महला ५ ।। हरि के नाम की गति ठांढी । बेद पुरान सिम्रिति साधू जन खोजत खोजत काढी ।। १ ।। रहाउ ।। सिव बिरंच अरु इंद्र लोक ता महि जलतौ फिरिआ । सिमरि सिमरि सुआमी भए सीतल दूखु दरदु भ्रमु हिरिआ ।।१।। जो जो तरिओ पुरातनु नवतनु भगति भाइ हरि देवा । नानक की बेनंती प्रभ जीउ मिलै संत जन सेवा ।। २ ।। ५२ ।। ७५ ।।

हरि का नाम सदा शीतलता-दायी है । वेद, पुराण, स्मृतियों आदि को खोज-खोजकर साधु-जनों ने यह बात ढूँढ़ निकाली है ।। १ ।। रहाउ ।। शिव, ब्रह्मा और इन्द्रादि सब तामस में जलते फिरे हैं; प्रभु-स्वामी का जब उन्होंने स्मरण किया तो उनके सब दुःख-दर्द-भ्रम दूर हो गए ।। १ ।। पुराने ज़माने में या आजकल जो भी कभी मुक्त हुआ है, वह परमात्मा की भक्ति से ही हुआ है (प्रभु-भक्ति के बिना कभी कोई नहीं तिरता) । गुरु नानक विनती करते हैं कि परमात्मा सन्तजनों की सेवा में ही मिलता है ।। २ ।। ५२ ।। ७५ ।।

।। सारग महला ५ ।। जिहवे अंम्रित गुण हरि गाउ । हरि हरि बोलि कथा सुनि हरि की उचरहु प्रभ को नाउ ।। १ ।। रहाउ ।। राम नामु रतन धनु संचहु मनि तनि लावहु भाउ । आन बिभूत मिथिआ करि मानहु साचा इहै सुआउ ।। १ ।। जीअ प्रान मुकति को दाता एकस सिउ लिव लाउ । कहु नानक ता की सरणाई देत सगल अपिआउ ।। २ ।। ५३ ।।७६।।

हे जिह्वा, तुम हरि का अमृत-समान गुण गाओ। हरि-नाम का उच्चारण करो, प्रभु का नाम सुनो और परमात्मा का भजन करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रामनाम-रत्न की अमूल्य राशि का संचय करो और तन-मन में परमात्मा का प्यार पैदा करो। अन्य सब विभूतियाँ मिथ्या हैं, जीवन का सच्चा लाभ हरि-नाम में ही है ॥ १ ॥ परमात्मा जीव, प्राण का मुक्ति-दाता है, उसी एक से प्रेम करो। गुरु नानक कहते हैं कि उसी की शरण लो, वही सबका प्रतिपालक है (भोजन देता है) ॥ २ ॥ ५३ ॥ ७६ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ होती नही कवन कछु करणी। इहै ओट पाई मिलि संतह गोपाल एक की सरणी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पंच दोख छिद्र इआ तन महि बिखै बिआधि की करणी। आस अपार दिनस गणि राखे ग्रसत जात बलु जरणी ॥ १ ॥ अनाथह नाथ दइआल सुख सागर सरब दोख भै हरणी। मनि बांछत चितवत नानक दास पेखि जीवा प्रभ चरणी ॥ २ ॥ ५४ ॥ ७७ ॥

मुझसे कोई उत्तम कर्म नहीं हो पाता। सन्तों के सम्पर्क में प्रभु की शरण में आने का ही एक आश्रय लिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इस शरीर में काम-क्रोधादि पाँच विकारों के छिद्र हैं, हमारे कृत्य विषय-रोग को पैदा करते हैं; आशाएँ अगणित हैं, दिन (जीवन के) गिनती के हैं और बुढ़ापा शारीरिक बल को ग्रस रहा है ॥ १ ॥ तुम दयालु हो, अनाथों के नाथ हो, संसार के सर्वसन्तापों को दूर करते हो। गुरु नानक की मनोवांछित माँग यह है कि तुम्हारे चरणों को देख-देखकर जीते रहें ॥२॥५४॥७७॥

॥ सारग महला ५ ॥ फीके हरि के नाम बिनु साद। अंम्रित रसु कीरतनु हरि गाईऐ अहिनिसि पूरन नाद ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सिमरत सांति महा सुखु पाईऐ मिटि जाहि सगल बिखाद। हरि हरि लाभु साध संगि पाईऐ घरि लै आवहु लादि ॥ १ ॥ सभ ते ऊच ऊच ते ऊचो अंतु नही मरजाद। बरनि न साकउ नानक महिमा पेखि रहे बिसमाद ॥ २ ॥ ५५ ॥ ७८ ॥

हरि-नाम के अतिरिक्त अन्य सब स्वाद फीके हैं। यदि परमात्मा के नाम का अमृत-रस निरन्तर पान करें (प्रभु का कीर्ति-गान करें), तो नित्य दिन-रात हर्षोल्लास बना रहेगा (नाद पूरित होगा या ख़ुशी के बाजे बजते रहेंगे) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु के स्मरण से शांति और महासुख

मिलता है, समूचा विषाद दूर हो जाता है। साधुजनों की संगति में हरि-नाम का लाभ कमाया जाता है, जो घर को सम्पन्न बनाता है ॥ १ ॥ परमात्मा सबसे ऊँचा है, ऊँचे से ऊँचा है; उसकी मर्यादा की कोई सीमा नहीं। गुरु नानक कहते हैं कि उसकी महिमा अवर्णनीय है, मात्र देख-देखकर विस्मय होता है ॥ २ ॥ ५५ ॥ ७८ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ आइओ सुनन पड़न कउ बाणी। नामु विसारि लगहि अनलालचि बिरथा जनमु पराणी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ समझु अचेत चेति मन मेरे कथी संतन अकथ कहाणी। लाभु लैहु हरि रिदै अराधहु छुटकै आवण जाणी ॥ १ ॥ उदमु सकति सिआणप तुम्हरी देहि त नामु वखाणी। सेई भगत भगति से लागे नानक जो प्रभ भाणी ॥ २ ॥ ५६ ॥ ७९ ॥

जीवात्मा इस संसार में प्रभु-नाम सुनने-भजने को आता है। किन्तु (यहाँ आकर) हरि-नाम को विस्मृत करके अन्य लोभ-लालच में पड़ जाता है और मनुष्य-जन्म को व्यर्थ बना लेता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऐ मेरे मूढ़ मन, जागो और सन्तों द्वारा कही गई अकथ कहानी को समझो। हृदय में हरि-नाम का लाभ सँजो लो, तभी आवागमन से मुक्ति होगी ॥ १ ॥ हे दाता, मुझे तुम यदि उद्यम, बल और योग्यता दो, तो मैं तुम्हारा नाम जपूँ। गुरु नानक कहते हैं कि वही जन भक्ति में लीन होते हैं, जो प्रभु को स्वीकार होते हैं ॥ २ ॥ ५६ ॥ ७९ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ धनवंत नाम के वणजारे। सांझी करहु नाम धनु खाटहु गुर का सबदु वीचारे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ छोडहु कपटु होइ निरवैरा सो प्रभु संगि निहारे। सचु धनु वणजहु सचु धनु संचहु कबहू न आवहु हारे ॥ १ ॥ खात खरचत किछु निखुटत नाही अगनत भरे भंडारे। कहु नानक सोभा संगि जावहु पारब्रहम कै दुआरे ॥ २ ॥ ५७ ॥ ८० ॥

हरि-नाम का व्यापार करनेवाले जीव ही धनवान हैं। उनके संग चाईचारा रखने तथा सच्चे गुरु के उपदेशों पर विचार करने से हरिनाम-धन की कमाई होती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कपटों को त्यागकर जो निर्वैर होता है, वही परमात्मा को देखता है। वह सदैव सच्चे धन का व्यापार करता, सच्चा धन (हरि-नाम) संचित करता है, कभी पराजित नहीं होता ॥ १ ॥ इस धन का भण्डार खाने-खर्चने से कभी क्षीण नहीं होता। गुरु नानक कहते हैं कि इस धन से सम्पन्न जीव बड़े सम्मान से परब्रह्म के द्वार पर जाता है ॥ २ ॥ ५७ ॥ ८० ॥

॥ सारग महला ५ ॥ प्रभ जी मोहि कवनु अनाथु बिचारा। कवन मूल ते मानुखु करिआ इहु परतापु तुहारा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जीअ प्राण सरब के दाते गुण कहे न जाहि अपारा। सभ के प्रीतम स्रब प्रतिपालक सरब घटां आधारा ॥ १ ॥ कोइ न जाणै तुमरी गति मिति आपहि एक पसारा। साध नांव बैठावहु नानक भवसागरु पारि उतारा ॥ २ ॥ ५८ ॥ ८१ ॥

हे प्रभुजी, मैं तो कैसा अनाथ था, यही विचार कर तुमने किस मूल से (निम्नतम स्तर से) उठाकर मुझे मनुष्य बना दिया है, यह तुम्हारी ही महिमा है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जीव, प्राण तथा अन्य सब कुछ देनेवाले तुम्हीं हो, तुम्हारे अपार गुण अनिर्वचनीय हैं। तुम सबके प्रिय हो, सबके प्रतिपालक एवं सबके हृदयों के सहारे हो ॥ १ ॥ कोई तुम्हारी गति और गहनता नहीं जानता, समूचा जागतिक प्रसार तुम्हारा ही है। गुरु नानक कहते हैं कि तुम्हीं सन्तों की नाव में बिठाकर (जीवों को) भवसागर से पार लगाते हो ॥ २ ॥ ५८ ॥ ८१ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ आवै राम सरणि वडभागी। एकस बिनु किछु होरु न जाणै अवरि उपाव तिआगी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मन बच क्रम आराधै हरि हरि साध संगि सुखु पाइआ। अनद बिनोद अकथ कथा रसु साचै सहजि समाइआ ॥ १ ॥ करि किरपा जो अपुना कीनो ता की ऊतम बाणी। साध संगि नानक निसतरीऐ जो राते प्रभ निरबाणी ॥ २ ॥ ५९ ॥ ८२ ॥

भाग्यशाली जीव ही प्रभु की शरण में आते हैं। वे अन्य सब उपायों को त्यागकर उस एक परमात्मा के अतिरिक्त और कुछ नहीं जानते ॥१॥ रहाउ ॥ वे मन, वचन, कर्म से हरि-नाम की आराधना करते एवं सन्तों की संगति में सुख प्राप्त करते हैं। वे परमात्मा की अकथ-कथा में उल्लसित रहते एवं हरि-रस के कारण सहजावस्था में लीन होते हैं ॥ १ ॥ जिसे कृपा-पूर्वक परमात्मा स्वयं अपना लेता है, उसके वचन उत्तम हो जाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि जो निर्दोष अवस्था के प्रदाता हरि में रत होते हैं, वे तिर जाते हैं ॥ २ ॥ ५९ ॥ ८२ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ जाते साधू सरणि गही। सांति सहजु मनि भइओ प्रगासा बिरथा कछु न रही ॥ १ ॥ रहाउ ॥

होहु क्रिपाल नामु देहु अपुना बिनती एह कही । आन बिउहार बिसरे प्रभ सिमरत पाइओ लाभु सही ॥ १ ॥ जह ते उपजिओ तही समानो साई बसतु अही । कहु नानक भरमु गुरि खोइओ जोती जोति समही ॥ २ ॥ ६० ॥ ८३ ॥

जबसे मैंने सन्तजनों की शरण ली है, मन में शांति और सहज-भावी आलोक पूरित हुआ है, कोई दुःख-संताप नहीं रह गया ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरी यही विनती है कि ऐ कृपानिधि, अपना नाम प्रदान करो। तुम्हारे स्मरण से अन्य (मिथ्या) व्यवहार नष्ट हुए हैं और सही सार्थक लाभ मिला है ॥ १ ॥ जहाँ से पैदा हुए, वहीं समा गए, यही मूल पावती है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु ने मेरे भ्रम दूर कर दिए और जीव की आत्म-ज्योति परमात्मा की परमात्म-ज्योति में मिल गई ॥२॥६०॥८३॥

॥ सारग महला ५ ॥ रसना राम को जसु गाउ। आन सुआद बिसारि सगले भलो नाम सुआउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चरन कमल बसाइ हिरदै एक सिउ लिव लाउ। साध संगति होहि निरमलु बहुड़ि जोनि न आउ ॥ १ ॥ जीउ प्राण अधारु तेरा तू निथावे थाउ। सासि सासि सम्हालि हरि हरि नानक सद बलि जाउ ॥ २ ॥ ६१ ॥ ८४ ॥

हे जिह्वा, रामनाम-यश का गान करो। अन्य सब स्वादों को भुलाकर हरि-नाम के उत्तम स्वाद (को ग्रहण करो) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हृदय में प्रभु के चरण धारण कर उसी एक से प्यार करो। सन्तजनों की संगति में निर्मलता पाओ, पुनः योनि-भ्रमण से मुक्त होओ ॥ १ ॥ हे परमात्मा, मेरे जीव-प्राण को तुम्हारा ही आधार है, तुम्हीं निरीह के नाथ हो। गुरु नानक कहते हैं कि प्रतिश्वास हरि का स्मरण करो और सदा उस पर क़ुर्बान हो जाओ ॥ २ ॥ ६१ ॥ ८४ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ बैकुंठ गोबिंद चरन नित धिआउ। मुकति पदारथु साधू संगति अंम्रितु हरि का नाउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऊतम कथा सुणीजै स्रवणी मइआ करहु भगवान। आवत जात दोऊ पख पूरन पाईऐ सुख बिस्राम ॥ १ ॥ सोधत सोधत ततु बीचारिओ भगति सरेसट पूरी। कहु नानक इक राम नाम बिनु अवर सगल बिधि ऊरी ॥ २ ॥ ६२ ॥ ८५ ॥

परमात्मा के चरणों का ध्यान करो, यही स्वर्ग है। सन्तों की संगति में मुक्ति देनेवाले हरि-नामामृत को पा लो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कानों से

प्रभु की उत्तम कथा का श्रवण करो, इससे प्रभु की कृपा होती है। आने-जाने (आवागमन) के पक्ष पूर्ण हो जाते हैं और जीव परम विश्राम में स्थिर होता है ॥ १ ॥ खोजते-खोजते मुझे यह ज्ञान-तत्त्व प्राप्त हुआ है कि भक्ति ही पूर्ण और श्रेष्ठ है। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम के बिना अन्य सब उपाय अधूरे और व्यर्थ हैं ॥ २ ॥ ६२ ॥ ८५ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ साचे सतिगुरू दातारा । दरसनु देखि सगल दुख नासहि चरन कमल बलिहारा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सति परमेसरु सति साध जन निहचलु हरि का नाउ । भगति भावनी पारब्रहम की अबिनासी गुण गाउ ॥ १ ॥ अगमु अगोचरु मिति नही पाईऐ सगल घटा आधारु । नानक वाहु वाहु कहु ताकउ जाका अंतु न पारु ॥ २ ॥ ६३ ॥ ८६ ॥

सच्चा सतिगुरु सबका दाता है। उसके दर्शनों से समस्त दुःख नष्ट हो जाते हैं, मैं उसके चरण-कमलों पर बलिहार हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परमेश्वर सत्त्व है, साधुजन भी सत्त्व हैं और हरि का नाम सबको निश्चलता प्रदान करनेवाला है। भक्ति परब्रह्म को तुष्ट करती है, अतः अविनाशी प्रभु का गुण गाओ ॥ १ ॥ परमात्मा अगम, अगोचर है, उसकी गहनता अनुपम है, वही सबका एकमात्र आधार है। गुरु नानक कहते हैं कि उसकी महिमा असीम है, वह अनन्त है ॥ २ ॥ ६३ ॥ ८६ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ गुर के चरन बसे मन मेरै । पूरि रहिओ ठाकुरु सभ थाई निकटि बसै सभ नेरै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बंधन तोरि राम लिव लाई संत संगि बनिआई । जनमु पदारथु भइओ पुनीता इछा सगल पुजाई ॥ १ ॥ जा कउ क्रिपा करहु प्रभ मेरे सो हरि का जसु गावै । आठ पहर गोबिंद गुन गावै जनु नानकु सद बलि जावै ॥ २ ॥ ६४ ॥ ८७ ॥

मेरे मन में गुरु के चरण बसे हैं। मेरा स्वामी सर्वव्यापक है, वह सबके निकट और अंग-संग रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सन्तों का सम्पर्क होता है, तो जीव सांसारिक बन्धनों को तोड़कर प्रभु में लीन हो जाता है। उसका जीवन पवित्र हो जाता है और समस्त इच्छाएँ पूर्ण होती हैं ॥ १ ॥ जिस पर परमात्मा की कृपा होती है, वही परमात्मा का यश गाता है। गुरु नानक कहते हैं कि जीव को आठों पहर परमात्मा का गुणगान करना तथा उस पर क़ुर्बान हो जाना चाहिए ॥ २ ॥ ६४ ॥ ८७ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ जीवनु तउ गनीऐ हरि पेखा ।

करहु क्रिपा प्रीतम मन मोहन फोरि भरम की रेखा ॥१॥रहाउ॥ कहत सुनत किछु सांति न उपजत बिनु बिसास किआ सेखां । प्रभू तिआगि आन जो चाहत ताकै मुखि लागै कालेखा ॥ १ ॥ जा कै रासि सरब सुख सुआमी आन न मानत भेखा । नानक दरस मगन मनु मोहिओ पूरन अरथ बिसेखा ॥ २ ॥ ६५ ॥ ८८ ॥

हरि-दर्शन मिले तो जीवन सार्थक मानो । हे मेरे प्रियतम, मेरे मन-मोहन, मेरे भ्रमों की रेखा को तोड़ दो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कहने-सुनने (बातें बनाने) से शांति नहीं मिलती, बिना विश्वास के कोई नहीं सीख सकता है । जो प्रभु को छोड़कर द्वैत में लिप्त होते हैं, उनके मुँह में कालिख लगती है ॥ १ ॥ जिन्हें समस्त सुख देनेवाला परमात्मा प्राप्त है, वे कोई वेश नहीं बनाते, किसी अन्य देवता को नहीं मानते । गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु-दर्शन से मन मोहित होता एवं जीव की समस्त अपेक्षाएँ पूर्ण हो जाती हैं ॥ २ ॥ ६५ ॥ ८८ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ सिमरन राम को इकु नाम । कलमल दगध होहि खिन अंतरि कोटि दान इसनान ॥१॥रहाउ॥ आन जंजार ब्रिथा स्रमु घालत बिनु हरि फोकट गिआन । जनम मरन संकट ते छूटै जगदीस भजन सुख धिआन ॥ १ ॥ तेरी सरनि पूरन सुखसागर करि किरपा देवहु दान । सिमरि सिमरि नानक प्रभ जीवै बिनसि जाइ अभिमान ॥ २ ॥ ६६ ॥ ८९ ॥

राम के नाम का स्मरण करो; क्षण भर में ही सब पाप दग्ध होते हैं और करोड़ों स्नान-दान का पुण्य मिलता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अन्य सब जंजालों में पड़ने का श्रम वृथा है, अन्य जानकारी भी बेकार है । केवल जगदीश में ध्यानस्थ होने और उसी का भजन करने से जन्म-मरण-संकट से मुक्ति मिलती है ॥ १ ॥ हे सुख-सागर प्रभु, मैं तुम्हारी शरण में हूँ, कृपापूर्वक हरिनाम-दान प्रदान करो । गुरु नानक तुम्हारे ही भजन में जीवित हैं, उससे समूचा अभिमान दूर हो जाता है ॥ २ ॥ ६६ ॥ ८९ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ धूरतु सोई जि धुर कउ लागै । सोई धुरंधरु सोई बसुंधरु हरि एक प्रेम रस पागै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बलबंच करै न जानै लाभै सो धूरतु नही मूढ़ा । सुआरथु तिआगि असारथि रचिओ नह सिमरै प्रभु रूड़ा ॥१॥ सोई चतुरु सिआणा पंडितु सो सूरा सो दानां । साध संगि जिनि हरि हरि जपिओ नानक सो परवाना ॥ २ ॥ ६७ ॥ ९० ॥

वास्तविक धूरत (धूर्त, कपटी वेष वाला, जो भीतर से और, बाहर से और होता है। किन्तु यहाँ उसका उत्तम अर्थ लगाया जा रहा है) वही है, जो आदिब्रह्म से जुड़ता है। केवल एक हरि के प्रेम-रस में मग्न रहने वाला ही योगी (भस्म रमानेवाला) तथा कापड़िया (वस्त्र धारण करने वाला) हो सकता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो छल-कपट करते हैं (धूर्त), अपना लाभ नहीं पहचानते, वे धूरत नहीं, मूर्ख हैं। वह अपने वास्तविक लाभ को छोड़कर घाटे वाला कर्म करता एवं सुन्दर प्रभु का सिमरन नहीं करता ॥ १ ॥ चतुर, सयाना, पंडित वही है, वही शूरवीर एवं विवेकी है, जो साधु-संगति में हरि-नाम जपता है। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु के दरबार में उसे ही स्वीकृति मिलती है ॥ २ ॥ ६७ ॥ ९० ॥

॥ सारग महला ५ ॥ हरि हरि संत जना की जीवनि। बिखै रस भोग अंम्रित सुख सागर राम नाम रसु पीवनि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संचनि राम नाम धनु रतना मन तन भीतरि सीवनि। हरि रंग रांग भए मन लाला राम नाम रस खीवनि ॥१॥ जिउ मीना जल सिउ उरझानो राम नाम संगि लीवनि। नानक संत चात्रिक की निआई हरि बूंद पान सुख थीवनि ॥ २ ॥ ६८ ॥ ९१ ॥

हरि के सन्तों की ज़िन्दगी सुख-सागर प्रभु के नाम-रस-पान का आधार है, यही उसका विलास है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ राम-नाम धन ही उसका संचय है और वे तन-मन से उसी में जुड़े हैं। हरि के प्रेम में रँग कर वे लाल हो रहे हैं और हरि-नाम को पीकर ही मस्त हैं ॥ १ ॥ जिस प्रकार मछली का जल से प्यार होता है, वैसे ही हृदय को राम-नाम में लगाओ। गुरु नानक करते हैं कि सन्तजन चातक के समान होते हैं, परमात्मा की स्वाति-बूँद ही उनका एकमात्र तोष है ॥ २ ॥ ६८ ॥ ९१ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ हरि के नाम हीन बेताल। जेता करन करावन तेता सभि बंधन जंजाल ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बिनु प्रभ सेव करत अनसेवा बिरथा काटै काल। जब जमु आइ संघारै प्रानी तब तुमरो कउनु हवाल ॥ १ ॥ राखि लेहु दास अपने कउ सदा सदा किरपाल। सुख निधान नानक प्रभु मेरा साध संगि धन माल ॥ २ ॥ ६९ ॥ ९२ ॥

हरि-नाम के बिना जीव भूत के समान है। वह जो कुछ भी करता-कराता है, वह सब सांसारिक बंधन हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वह प्रभु-सेवा की जगह द्वैत-भावी होता है और अपना समय बेकार गँवाता है। जब यमदूत आकर पकड़ते एवं दण्ड देते हैं, तब तुम्हारा क्या सहारा होगा ? ॥ १ ॥

हे करुणा-निधि, अपने दास की रक्षा करो। गुरु नानक कहते हैं कि सुखदाता प्रभु ही मेरा धन है और सन्तों की संगति ही मेरी पूँजी है ॥ २॥ ६९ ॥ ९२॥

॥ सारग महला ५ ॥ मनि तनि राम को बिउहारु। प्रेम भगति गुन गावन गीधे पोहत नह संसारु ॥१॥रहाउ॥ स्रवणी कीरतनु सिमरनु सुआमी इहु साध को आचारु। चरन कमल असथिति रिद अंतरि पूजा प्रान को आधारु ॥ १ ॥ प्रभ दीन दइआल सुनहु बेनंती किरपा अपनी धारु। नामु निधानु उचरउ नित रसना नानक सद बलिहारु ॥ २ ॥ ७० ॥ ९३ ॥

तन-मन से सदा प्रभुपरक व्यवहार (ही उचित है)। ऐसे जीव प्रभु के प्रेम और भक्ति में लीन रहते हैं, संसार के बंधनों में नहीं फँसते ॥ १ ॥ रहाउ ॥ महात्मा के आचरण में श्रवण, कीर्तन एवं स्मरण ही प्रमुख होते हैं। उसके हृदय में (प्रभु के) चरण-कमल स्थिर होते हैं और हरि-पूजन ही उसका प्राणाधार होता है ॥ १ ॥ हे मेरे दीन-दयालु प्रभु, मेरी विनती सुनो और मुझ पर कृपा करो। गुरु नानक कहते हैं कि जिह्वा से नित्य हरिनामोच्चारण करो और परमात्मा पर क़ुर्बान हो जाओ ॥ २ ॥ ७० ॥ ९३ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ हरि के नाम हीन मति थोरी। सिमरत नाहि सिरीधर ठाकुर मिलत अंध दुख घोरी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि के नाम सिउ प्रीति न लागी अनिक भेख बहु जोरी। तूटत बार न लागै ता कउ जिउ गागरि जल फोरी ॥१॥ करि किरपा भगति रसु दीजै मनु खचित प्रेम रस खोरी। नानक दास तेरी सरणाई प्रभ बिनु आन न होरी ॥ २ ॥ ७१ ॥ ९४ ॥

हरि-नाम के बिना जीव की बुद्धि मंद होती है। वह अपने श्रीधर स्वामी का भजन नहीं करता और निरन्तर घोर दुःखों से घिरा रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनेक वेष बनाता है, किन्तु हरि-नाम से प्रीति नहीं लगती। (बाहरी वेषों में लगी) प्रीति को टूटते देर नहीं लगती, जैसे टूटे घड़े में पानी नहीं ठहरता (वह प्रीति भी शीघ्र ही क्षय हो जाती है) ॥१॥ परमात्मा ही कृपा करके भक्ति-रस का दान दे, मन उस प्रेम-रस की मादकता में मस्त हो, तो गुरु नानक कहते हैं, जीव तुम्हारी शरण ले सकता है। तुम्हारे बिना, हे प्रभु, दूसरा और कौन है? ॥ २ ॥ ७१ ॥ ९४ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ चितवउ वा अउसर मन माहि।

होइ इकत्र मिलहु संत साजन गुण गोबिंद नित गाहि ।।१।।रहाउ।। बिनु हरि भजन जेते काम करीअहि तेते बिरथे जांहि । पूरन परमानंद मनि मीठो तिसु बिनु दूसर नाहि ।।१।। जप तप संजम करम सुख साधन तुलि न कछूऐ लाहि । चरन कमल नानक मनु बेधिओ चरनह संगि समाहि ।। २ ।। ७२ ।। ९५ ।।

मैं उस अवसर को चाहता हूँ, जब संतों की संगति में एकत्र होकर हरिगुण गाए जायँ ।। १ ।। रहाउ ।। हरि-भजन के अतिरिक्त हम जितने भी काम करते हैं, सब व्यर्थ होते हैं । पूर्णपरमेश्वर ही मधुरतम है, उसके सिवा दूसरा कोई नहीं ।। १ ।। जप, तप, संयम तथा अन्य सुख-साधन, लाभ में हरि-नाम जपने के मुक़ाबले बड़े हीन हैं । गुरु नानक कहते हैं कि मन चरण-कमल में बिंधा हुआ है, उसी में समाया है ।। २ ।। ७२ ।। ९५ ।।

।। सारग महला ५ ।। मेरा प्रभु संगे अंतरजामी । आगै कुसल पाछै खेम सूखा सिमरत नामु सुआमी ।। १ ।। रहाउ ।। साजन मीत सखा हरि मेरै गुन गुोपाल हरि राइआ । बिसरि न जाई निमख हिरदै ते पूरै गुरू मिलाइआ ।। १ ।। करि किरपा राखे दास अपने जीअ जंत वसि जा कै । एका लिव पूरन परमेसुर भउ नही नानक ता कै ।। २ ।। ७३ ।। ९६ ।।

मेरा प्रभु नित्य मेरे साथ है और अन्तर्यामी है । उस स्वामी का नाम-स्मरण करने में ही सब कुशल-क्षेम और सुख निहित हैं ।। १ ।। रहाउ ।। हरि मेरे स्वामी, मित्र और सखा हैं, उसी सर्वोच्च शासक प्रभु के गुण गाओ । पूरे गुरु द्वारा मिलाया हुआ प्रभु क्षण भर के लिए भी हृदय से विस्मृत नहीं हो ।। १ ।। वह कृपा-पूर्वक अपने दास की रक्षा करता है, समस्त जीव-जन्तु उसी के वश में हैं । गुरु नानक कहते हैं कि उसी एक में लीन रहनेवाला निर्भय हो जाता है —उसे किसी काम का भय नहीं रह जाता ।। २ ।। ७३ ।। ९६ ।।

।। सारग महला ५ ।। जाकै राम को बलु होइ । सगल मनोरथ पूरन ताहू के दूखु न बिआपै कोइ ।। १ ।। रहाउ ।। जो जनु भगतु दासु निजु प्रभ का सुणि जीवां तिसु सोइ । उदमु करउ दरसनु पेखन कौ करमि परापति होइ ।। १ ।। गुरपरसादी द्रिसटि निहारउ दूसर नाही कोइ । दानु देहि नानक अपने कउ चरन जीवां संत धोइ ।। २ ।। ७४ ।। ९७ ।।

जो परमात्मा से बल प्राप्त करता है (जिसका बल स्वयं प्रभु है), उसके सब मनोरथ पूरे होते हैं, कभी कोई कष्ट नहीं सालता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो मनुष्य परमात्मा का निजी भक्त है, उसकी शोभा सुनकर मैं जीवित हूँ। मैं उसके दर्शनों का उद्यम करता हूँ, किन्तु वह उसकी कृपा के बिना प्राप्त नहीं होते (उत्तम कर्मों से ही प्राप्त होते हैं) ॥ १ ॥ गुरु की कृपा से मैं प्रभु को प्रत्यक्ष देखता हूँ, (उसके अतिरिक्त) दूसरा कोई नहीं। गुरु नानक कहते हैं कि हे परमात्मा, मुझे यही वरदान दो कि मैं सन्तों के चरण धोकर जी लूं ॥ २ ॥ ७४ ॥ ९७ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ जीवतु राम के गुण गाइ। करहु क्रिपा गोपाल बीठुले बिसरि न कबही जाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनु तनु धनु सभु तुमरा सुआमी आन न दूजी जाइ। जिउ तू राखहि तिव ही रहणा तुम्हरा पैन्है खाइ ॥ १ ॥ साध संगति कै बलि बलि जाई बहुड़ि न जनमा धाइ। नानक दास तेरी सरणाई जिउ भावै तिवै चलाइ ॥ २ ॥ ७५ ॥ ९८ ॥

मैं नित्य राम-गुण गाकर जीवित हूँ। हे मेरे भगवान्, कृपा करना, ताकि मैं कभी इसे भूल न जाऊँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरा तन, मन, धन, सब तुम्हारा है, अन्य दूसरी कोई जगह नहीं। जैसे तुम रखो, वैसा हमें रहना है, वही खाना-पहनना है (जो तुम दोगे) ॥ १ ॥ ऐसी साधु-संगति के बलिहार जाती हूँ, जिसके कारण योनि-भ्रमण कट जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि (हम तो) तुम्हारी शरण में हैं, जैसी इच्छा हो, वैसा चलाओ ॥ २ ॥ ७५ ॥ ९८ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ मन रे नाम को सुख सार। आन काम बिकार माइआ सगल दीसहि छार ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ग्रिहि अंध कूप पतित प्राणी नरक घोर गुबार। अनिक जोनी भ्रमत हारिओ भ्रमत बारं बार ॥ १ ॥ पतित पावन भगति बछल दीन किरपा धार। कर जोड़ि नानकु दानु मांगै साध संगि उधार ॥ २ ॥ ७६ ॥ ९९ ॥

हे मन, राम का नाम ही श्रेष्ठतम है। अन्य सब कार्य माया के विकार हैं, सब मिट्टी के समान हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जीव गृहस्थी के अन्धकूप में पड़ा है, जो घोर नरक के समान है। इसी में अनेक योनियों तक भटकता रहता है, बार-बार भटकता है ॥ १ ॥ पतित-पावन, भक्त-वत्सल प्रभु की जब कृपा होती है, तभी सत्संगति में आकर उसका उद्धार

होता है; गुरु नानक हाथ जोड़कर ऐसा वर माँगते हैं (कि जन को संतों की संगति दो) ॥ २ ॥ ७६ ॥ ९९ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ बिराजित राम को परताप । आधि बिआधि उपाधि सभ नासी बिनसे तीनै ताप ॥१॥रहाउ॥ त्रिसना बुझी पूरन सभ आसा चूके सोग संताप । गुण गावत अचुत अबिनासी मन तन आतम ध्राप ॥ १ ॥ काम क्रोध लोभ मद मतसर साधू कै संगि खाप । भगति वछल भै काटनहारे नानक के माई बाप ॥ २ ॥ ७७ ॥ १०० ॥

राम की महिमा चतुर्दिक् प्रसारित है । (उसी के कारण जीव के) आधि, व्याधि, उपाधि, तीनों प्रकार के रोग नष्ट हो जाते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सब तृष्णा बुझ जाती है, शोक-संताप दूर होते हैं । स्थिर अविनाशी प्रभु के गुण गाने से मन और आत्मा तृप्त होते हैं ॥ १ ॥ सन्तों की संगति में मनुष्य के काम, क्रोध, लोभ, मद, अभिमान, सब क्षय हो जाते हैं । परमात्मा भक्त-वत्सल, भय-निवारक तथा गुरु नानक के माई-बाप हैं ॥ २ ॥ ७७ ॥ १०० ॥

॥ सारग महला ५ ॥ आतुरु नाम बिनु संसार । त्रिपति न होवत कूकरी आसा इतु लागो बिखिआ छार ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पाइ ठगउरी आपि भुलाइओ जनमत बारोबार । हरि का सिमरनु निमख न सिमरिओ जमकंकर करत खुआर ॥ १ ॥ होहु क्रिपाल दीन दुख भंजन तेरिआ संतह की रावार । नानक दासु दरसु प्रभ जाचै मन तन को आधार ॥ २ ॥ ७८ ॥ १०१ ॥

हरि-नाम के बिना सारा संसार व्याकुल है । कुतिया आशा-तृष्णा से तृप्त नहीं होती, मनुष्य को नित्य विषय-विकारों की धूलि लगी रहती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु ने ठगमूरि डालकर जीव को भुला रखा है, वह बार-बार जन्म लेता-मरता है । क्षण भर के लिए भी हरि का स्मरण नहीं करता, यम के दूत सदा दण्ड देते हैं ॥ १ ॥ हे प्रभु, हे दीनों के दुःख काटनेवाले, मैं तो तुम्हारे सन्तों की चरण-धूलि हूँ, मुझ पर कृपा करो । गुरु नानक मन-तन के सहारे तुम्हारे दर्शनों की याचना करते हैं ॥ २ ॥ ७८ ॥ १०१ ॥

॥ सारग महला ॥ ५ ॥ मैला हरि के नाम बिनु जीउ । तिनि प्रभि साचै आपि भुलाइआ बिखै ठगउरी पीउ ॥ १ ॥

रहाउ ॥ कोटि जनम भ्रमतौ बहु भांती थिति नही कतहू पाई । पूरा सतिगुरु सहजि न भेटिआ साकतु आवै जाई ॥ १ ॥ राखि लेहु प्रभ संम्रिथ दाते तुम प्रभ अगम अपार । नानक दास तेरी सरणाई भवजलु उतरिओ पार ॥२॥७६॥१०२॥

हरि-नाम के बिना जीव मलिन है। ऐसे जीव ने विषय-विकारों की ठगमूरि पीकर अपने प्रभु को भुला दिया होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करोड़ों जन्मों के लिए वह अनेकधा भटकता फिरा, किन्तु कहीं स्थिर नहीं हो पाया। जो अडोल, निश्चित मन से सतिगुरु को नहीं मिला, वह मायावी पुनःपुनः जन्मता और मरता है ॥ १ ॥ हे प्रभु, तुम अगम अपार हो, समर्थ हो, मेरी रक्षा करो। गुरु नानक तुम्हारी शरण में आकर ही संसार-सागर से पार उतरे हैं ॥ २ ॥ ७९ ॥ १०२ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ रमण कउ राम के गुण बाद । साध संगि धिआईऐ परमेसरु अंम्रित जा के सुआद ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सिमरत एकु अचुत अबिनासी बिनसे माइआ माद । सहज अनद अनहद धुनि बाणी बहुरि न भए बिखाद ॥ १ ॥ सनकादिक ब्रहमादिक गावत गावत सुक प्रहिलाद । पीवत अमिउ मनोहर हरि रसु जपि नानक हरि बिसमाद ॥२॥८०॥१०३॥

स्मरण के लिए राम का गुणगान ही उत्तम है। परमेश्वर की आराधना, साधुजन की संगति में सम्पन्न होती है, अमृत-समान उसका स्वाद है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यदि जीव अच्युत अविनाशी ब्रह्म की साधना करे, तो माया का मद दूर होता है। सहजावस्था में जीव को अडोल आनन्द में वाणी की ध्वनि सुनाई पड़ती है, कभी दुःख नहीं उठाना पड़ता ॥ १ ॥ सनक-सनन्दन आदि, ब्रह्मा एवं शुकदेव तथा प्रह्लाद, सब उसके गुण गाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि विस्मयकारी हरि-नाम के मनोहर अमृत-जल का पान करने से पूर्णतृप्ति मिली है ॥ २ ॥ ८० ॥ १०३ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ कीन्हे पाप के बहु कोट । दिनसु रैनी थकत नाही कतहि नाही छोट ॥ १ ॥ रहाउ ॥ महा बजर बिख बिआधी सिर उठाई पोट । उघरि गईआं खिनहि भीतरि जमहि ग्रासे झोट ॥ १ ॥ पसु परेत उसट गरधभ अनिक जोनी लेट । भजु साध संगि गोबिद नानक कछु न लागै फेट ॥ २ ॥ ८१ ॥ १०४ ॥

पापों के अनेक घेरे बना रखे हैं। रात-दिन उनमें भ्रमते थकता नहीं और कहीं किसी प्रकार की कमी नहीं रहती ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सिर पर वज्र-कठोर विषय-रोगों की गठरी उठा रखी है, जोकि क्षण भर में ही खुलती और यमदूत केशों से पकड़ लेते हैं ॥ १ ॥ तब पशु-प्रेत, ऊँट, गर्दभ आदि योनियों में पड़ता है। गुरु नानक कहते हैं कि ऐ जीव, (अब भी) तुम यदि साधु-संगति में गोविन्द-नाम का भजन करो, तो किसी प्रकार का आघात नहीं लगता ॥ २ ॥ ८१ ॥ १०४ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ अंधे खावहि बिसू के गटाक। नैन स्रवन सरीरु सभु हुटिओ सासु गइओ तत घाट ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनाथ रञाणि उदरु ले पोखहि माइआ गईआ हाटि। किलबिख करत करत पछुतावहि कबहु न साकहि छांटि ॥ १ ॥ निंदकु जमदूती आइ संघारिओ देवहि मूंड उपरि मटाक। नानक आपन कटारी आपस कउ लाई मनु अपना कीनो फाट ॥ २ ॥ ८२ ॥ १०५ ॥

ज्ञानांध होने के कारण जीव विषय-विष का बीड़ा खा रहा है। नयन, कान, शरीर, सब झटक गए हैं, शीघ्र ही श्वास-तत्त्व घट जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दीनों को दुःख देकर इकट्ठी की गई माया (ग़रीबों को दुःख देकर पेट भरते हैं) भी साथ छोड़ जाती है। पाप करते-करते पछताता तो है, किन्तु कभी छोड़ नहीं पाता ॥ १ ॥ निन्दक को यमदूत आकर पकड़ते एवं सिर पर आघात करते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि निन्दक अपने को स्वयं घायल करता और अपने पाँव में कुल्हाड़ी मारता है ॥ २ ॥ ८२ ॥ १०५ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ टूटी निंदक की अधबीच। जन का राखा आपि सुआमी बेमुख कउ आइ पहूची मीच ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उस का कहिआ कोइ न सुणई कही न बैसणु पावै। ईहां दुखु आगै नरकु भुंचै बहु जोनी भरमावै ॥ १ ॥ प्रगटु भइआ खंडी ब्रहमंडी कीता अपणा पाइआ। नानक सरणि निरभउ करते की अनद मंगल गुण गाइआ ॥ २ ॥ ८३ ॥ १०६ ॥

निन्दक की जीवन-डोरी अध-बीच ही टूट जाती है। अपने सेवकों का रक्षक तो स्वयं परमात्मा है, किन्तु विमुख (मनमुख जीव) को मृत्यु आ दबोचती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उसका कहा कोई नहीं सुनता, उसे कोई आश्रय नहीं मिलता। यहाँ दुःख पाता है, आगे नरक भोगता और अनेक योनियों में भटकता है ॥ १ ॥ पूर्णप्रभु खण्डों-ब्रह्माण्डों में प्रकट है, किन्तु

सबको कर्मानुसार उपलब्ध है। गुरु नानक कहते हैं कि निर्भय भाव से अपने रचयिता की शरण लो और आनन्द-मंगल-भाव से उसका गुण गाओ॥ २॥ ८३॥ १०६॥

॥ सारग महला ५॥ त्रिसना चलत बहु परकारि। पूरन होत न कतहु बातहि अंति परती हारि॥ १॥ रहाउ॥ सांति सूख न सहजु उपजै इहै इसु बिउहारि। आप परका कछु न जानै काम क्रोधहि जारि॥ १॥ संसार सागरु दुखि बिआपिओ दास लेवहु तारि। चरन कमल सरणाइ नानक सद सदा बलिहारि॥ २॥ ८४॥ १०७॥

तृष्णा अनेक प्रकार से चलती है (प्रभावित करती है)। यह तृष्णा कभी पूर्ण नहीं होती और अन्ततः जीव पराजित हो जाता है॥ १॥ रहाउ॥ इसका व्यवहार कुछ ऐसा है कि (इसके होते) शांति, सुख अथवा आनन्द कभी कहीं हो पाते। काम-क्रोध की जलन में अपने-पराए की पहचान नहीं रहती॥ १॥ संसार-सगार के व्यापक दुःखों में पीड़ित अपने दास को, हे स्वामी, तार लो। गुरु नानक तुम्हारे चरण-कमलों की शरण में है, सदा तुम पर क़ुर्बान है॥ २॥ ८४॥ १०७॥

॥ सारग महला ५॥ रे पापी तै कवन की मति लीन। निमख घरी न सिमरि सुआमी जीउ पिंडु जिनि दीन॥ १॥ रहाउ॥ खात पीवत सवंत सुखीआ नामु सिमरत खीन। गरभ उदर बिललाट करता तहां होवत दीन॥ १॥ महा माद बिकार बाधा अनिक जोनि भ्रमीन। गोबिंद बिसरे कवन दुख गनीअहि सुखु नानक हरि पद चीन्ह॥ २॥ ८५॥ १०८॥

हे पापी जीव, तुमने किसकी मति (समझ) ली है। परमात्मा ने तुम्हें शरीर-प्राण दिए हैं, उसे तू क्षण भर के लिए भी याद नहीं करता॥१॥ रहाउ॥ खाते-पीते, सोते सुख मनाता है, हरि-नाम-श्रवण में तुझे दुःख होता है; जब माँ के गर्भ में था, तब मन्नतें करता और दीनता दिखाता था (छुटकारा पाने के लिए)॥ १॥ माया की मादकता एवं विषय-सुख में ही अनेक योनियों में भटकता है। प्रभु को भुलाने में क्या-क्या दुःख गिनें, गुरु नानक कहते हैं कि सच्चा सुख केवल हरि-चरणों को पहचानने में ही है॥ २॥ ८५॥ १०८॥

॥ सारग महला ५॥ माई री चरनह ओट गही। दरसनु पेखि मेरा मनु मोहिओ दुरमति जात बही॥ १॥

रहाउ ॥ अगह अगाधि ऊच अबिनासी कीमति जात न कही । जलि थलि पेखि पेखि मनु बिगसिओ पूरि रहिओ स्रब मही ॥ १ ॥ दीनदइआल प्रीतम मन मोहन मिलि साधह कीनो सही । सिमरि सिमरि जीवत हरि नानक जम की भीर न फही ॥ २ ॥ ८६ ॥ १०९ ॥

हे माँ, मैंने तो प्रभु के चरणों की ओट ग्रहण की है। उसके दर्शन देखकर ही मेरा मन मोहित हुआ है और दुर्मति नष्ट हुई है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वह अथाह, अगाध, अविनाशी है, उसका मोल नहीं कहा जा सकता। जल-थल में उसी प्रभु को देख-देखकर मन प्रफुल्लित है, वह सबमें व्याप्त है ॥ १ ॥ दीनदयालु परमात्मा को साधु-संगति में ही महसूस किया जाता है। (इसीलिए) गुरु नानक कहते हैं कि नित्य हरि का भजन करो, (ऐसा करने से) जीव यमदूतों की मुसीबत में नहीं फँसता ॥ २ ॥ ८६ ॥ १०९ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ माई री मनु मेरो मतवारो । पेखि दइआल अनद सुख पूरन हरि रसि रपिओ खुमारो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ निरमल भए ऊजल जसु गावत बहुरि न होवत कारो । चरन कमल सिउ डोरी राची भेटिओ पुरखु अपारो ॥ १ ॥ करु गहि लीने सरबसु दीने दीपक भइओ उजारो । नानक नामि रसिक बैरागी कुलह समूहां तारो ॥ २ ॥ ८७ ॥ ११० ॥

हे माँ, मेरा मन मतवाला है। दयालु प्रभु को देखकर आनन्द और सुख से पूर्ण हुआ है तथा हरि-नाम-रस का पान करके मस्त है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि का उज्ज्वल यश गाते हुए मैं निर्मल हो गया हूँ, पुनः मलिन नहीं होऊँगा। प्रभु के चरण-कमलों से डोरी बाँधी है, जिससे अपार परम-पुरुष का दर्शन मिला है ॥ १ ॥ उसने हाथ थामा है, सब कुछ प्रदान कर वह ज्ञान का दीपक दिया है कि चतुर्दिक् उजाला हो गया है। गुरु नानक कहते हैं कि हरिनाम-रस का बैरागी जीव अपने अनेक कुलों को मुक्त करवा लेता है ॥ २ ॥ ८७ ॥ ११० ॥

॥ सारग महला ५ ॥ माई री आन सिमरि मरि जांहि । तिआगि गोबिदु जीअन को दाता माइआ संगि लपटाहि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नामु बिसारि चलहि अनमारगि नरक घोर महि पाहि । अनिक सजांई गणत न आवै गरभै

गरभि भ्रमाहि ॥ १ ॥ से धनवंते से पतिवंते हरि की सरणि समाहि । गुरप्रसादि नानक जगु जीतिओ बहुरि न आवहि जांहि ॥ २ ॥ ८८ ॥ १११ ॥

हे माँ, द्वैत-भाव में (अन्य के स्मरण में) तो मौत है। समस्त जीवों के दाता परमात्मा को छोड़कर माया-संग लिपटने की स्थिति है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो जीव हरि-नाम को भुलाकर द्वैत के मार्ग पर चलते हैं, वे घोर नरक में पड़ते हैं। उन्हें असंख्य दण्ड मिलते हैं, वे गर्भ-गर्भ में (अनेक योनियों में) भटकते हैं ॥ १ ॥ जो हरि की शरण में समाते हैं, वे ही धनवान एवं प्रतिष्ठित हैं। गुरु नानक कहते हैं कि वे गुरु-कृपा से जगत-जीत होते हैं, उन्हें आवागमन से छुटकारा मिल जाता है ॥२॥८८॥१११॥

॥ सारग महला ५ ॥ हरि काटी कुटिलता कुठारि । भ्रम बन दहन भए खिन भीतरि राम नाम परहारि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काम क्रोध निंदा परहरीआ काढे साधू कै संगि मारि । जनमु पदारथु गुरमुखि जीतिआ बहुरि न जूऐ हारि ॥ १ ॥ आठ पहर प्रभ के गुण गावह पूरन सबदि बीचारि । नानक दासनि दासु जनु तेरा पुनह पुनह नमसकारि ॥ २ ॥ ८९ ॥ ११२ ॥

परमात्मा ने हमारे भीतर की कुटिलता नाम-परशु से काट डाली है। भ्रमों के वन में हम जल रहे थे, क्षण भर में ही उसने हरिनाम-वारि द्वारा शीतल बना दिया ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साधु-संगति प्रदान करके हमारे भीतर के काम-क्रोध-निन्दा आदि विकारों को निकाला। गुरु के द्वारा मनुष्य-जन्म के लक्ष्य को पा लिया, अब पुनः वह जुए में नहीं हारेगा ॥ १ ॥ (अतः मैं) गुरु-उपदेशानुसार आठों प्रहर प्रभु के गुण गाता हूँ। गुरु नानक तो तुम्हारे सेवकों के भी सेवक हैं, बार-बार तुम्हें नमस्कार करते हैं (हे प्रभु) ॥ २ ॥ ८९ ॥ ११२ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ पोथी परमेसर का थानु । साध संगि गावहि गुण गोबिंद पूरन ब्रहम गिआनु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साधिक सिध सगल मुनि लोचहि बिरले लागै धिआनु । जिसहि क्रिपालु होइ मेरा सुआमी पूरन ता को कामु ॥ १ ॥ जा कै रिदै वसै भै भंजनु तिसु जानै सगल जहानु । खिनु पलु बिसरु नही मेरे करते इहु नानकु मांगै दानु ॥ २ ॥ ९० ॥ ११३ ॥

प्रभु का गुण दर्शानेवाली पुस्तक ही प्रभु के रहने की जगह है।

सत्संगति में रहकर जो परमात्मा के गुण गाता है, उसे पूर्णब्रह्म-ज्ञान प्राप्त होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साधक और सिद्ध, दोनों उसे पाना तो चाहते हैं, किन्तु विरले व्यक्ति का ही ध्यान स्थिर होता है। जिस पर स्वयं मेरे प्रभु की कृपा होती है, उसका सब मनोरथ पूर्ण होता है ॥ १ ॥ जिसके हृदय में भय-भंजन प्रभु बसता है, उसे सारा जहान जानता है। गुरु नानक यही दान माँगते हैं कि एक क्षण के लिए भी प्रभु विस्मृत न हो ॥ २ ॥ ९० ॥ ११३ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ वूठा सरब थाई मेहु। अनद मंगल गाउ हरि जसु पूरन प्रगटिओ नेहु ॥१॥रहाउ॥ चारि कुंट दहदिसि जल निधि ऊन थाउ न केहु। क्रिपानिधि गोबिंद पूरन जीअ दानु सभ देहु ॥ १ ॥ सति सति हरि सति सुआमी सति साध संगेहु। सति ते जन जिन परतीति उपजी नानक नह भरमेहु ॥ २ ॥ ९१ ॥ ११४ ॥

सब जगह आत्मिक आनन्द की वर्षा हुई है। आनन्द-कल्याण के गीत गाओ, हरि-नाम का प्यार प्रकट हुआ है, हरि का यशोगान करो ॥१॥ रहाउ ॥ चारों ओर, दसों दिशाओं में वह सर्वव्यापी प्रभु मौजूद है, कोई जगह उससे खाली नहीं। कृपा-निधान प्रभु, जो सब जगह व्याप्त है, सबको जीव-दान देता है (अर्थात् सबमें चेतना की लहर भरता है) ॥१॥ हरि-प्रभु सत्य है, साधु-संगति भी सत्य है। गुरु नानक कहते हैं कि इन सत्यों में जिन्हें विश्वास उपजा है, वे कभी मिथ्या भ्रम में नहीं पड़ते ॥ २ ॥ ९१ ॥ ११४ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ गोबिद जीउ तू मेरे प्रान अधार। साजन मीत सहाई तुमही तू मेरो परवार ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करु मसतकि धारिओ मेरै माथै साध संगि गुण गाए। तुमरी क्रिपा ते सभ फल पाए रसकि राम नाम धिआए ॥ १ ॥ अबिचल नीव धराई सतिगुरि कबहू डोलत नाही। गुर नानक जब भए दइआरा सरब सुखानिधि पांही ॥ २ ॥ ९२ ॥ ११५ ॥

हे प्रभुजी, तुम्हीं मेरे प्राणों के सहारे हो। तुम मेरे साजन, मित्र, सहयोगी हो, तुम्हीं मेरा कुटुम्ब हो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुमने मेरे मस्तक पर कृपा का हाथ रखा है, तो मैं साधु-संगति में तुम्हारा गुणगान कर पाया हूँ। तुम्हारी कृपा से मेरे सब मनोरथ पूर्ण हुए हैं, और खूब रस-पूर्ण होकर मैंने राम-नाम का ध्यान किया है ॥ १ ॥ मेरे सतिगुरु ने मुझे अविचल

उपदेश दिया है, मैं कभी डोलता नहीं। गुरु नानक कहते हैं कि जब प्रभु की दया होती है, तो समस्त सुखों के भण्डार प्राप्त होते हैं ॥२॥९२॥११५॥

॥ सारग महला ५ ॥ निबही नाम की सचु खेप। लाभु हरि गुण गाइ निधि धनु बिखै माहि अलेप ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जीअ जंत सगल संतोखे आपना प्रभु धिआइ। रतन जनमु अपार जीतिओ बहुड़ि जोनि न पाइ ॥ १ ॥ भए क्रिपाल दइआल गोबिद भइआ साधू संगु। हरि चरन रासि नानक पाई लगा प्रभ सिउ रंगु ॥ २ ॥ ९३ ॥ ११६ ॥

हरि-नाम का सच्चा व्यापार ही निभता है। इसमें सर्व-सुखों के भण्डार हरि के गुणगान का लाभ कमाया है, तथा बिषैली माया में निर्लिप्त रह सके हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अपने प्रभु के ध्यान में सब जीव-जन्तु संतुष्ट हैं, मनुष्य-जन्म-सरीखा रत्न जीत लिया जाता है और पुनः योनि-भ्रमण की सम्भावना कट जाती है ॥ १ ॥ परमात्मा की कृपा होती है, तो दया करके वह सन्तजनों की संगति प्रदान करता है। गुरु नानक कहते हैं कि (तब उक्त व्यापार के लिए) हरि-चरणों की राशि मिल जाती है और प्रभु से प्यार हो जाता है ॥ २ ॥ ९३ ॥ ११६ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ माई री पेखि रही बिसमाद। अनहद धुनी मेरा मनु मोहिओ अचरज ताके स्वाद ॥१॥रहाउ॥ मात पिता बंधप है सोई मनि हरि को अहिलाद। साध संगि गाए गुन गोबिंद बिनसिओ सभु परमाद ॥ १ ॥ डोरी लपटि रही चरनह संगि भ्रम भै सगले खाद। एकु अधारु नानक जन कीआ बहुरि न जोनि भ्रमाद ॥ २ ॥ ९४ ॥ ११७ ॥

हे माँ, परमात्मा की आश्चर्यमयी लीला देखो। आत्म-मंडल के संगीत में मेरा मन मोहित है और उसका स्वाद आश्चर्यजनक है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु ही माता, पिता, बंधु, सब कुछ है, मन में उसी का उल्लास है। साधुजनों की संगति में परमात्मा का गुणगान करने से सब प्रमाद नष्ट हुआ है ॥ १ ॥ मेरी डोरी प्रभु-चरणों में बँधी है, भ्रम-भयादि सब समाप्त हो गए हैं। गुरु नानक कहते हैं कि जिस सेवक ने एक प्रभु का दृढ़ आश्रय लिया है, वह पुनः आवागमन में नहीं भटकता ॥२॥९४॥११७॥

॥ सारग महला ५ ॥ माई री माती चरण समूह। एकसु बिनु हउ आन न जानउ दुतीआ भाउ सभ लूह ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तिआगि गुोपाल अवर जो करणा ते बिखिआ के

खूह । दरस पिआस मेरा मनु मोहिओ काढी नरक ते धूह ॥१॥ संत प्रसादि मिलिओ सुखदाता बिनसी हउमै हूह । राम रंगि राते दास नानक मउलिओ मनु तनु जूह ॥ २ ॥ ९५ ॥ ११८ ॥

हे माँ, मैं तो पूर्णतः प्रभु के चरणों में तल्लीन हूँ। उस एक के सिवा मैं किसी को नहीं जानती, मैंने सब द्वैत-भाव जला दिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु को छोड़कर दूसरों का ध्यान करना माया के विष-भरे अंधे कुएँ में गिरने के समान है। प्रभु के दर्शनों की प्यास ने मेरा मन मोह लिया है, और मुझे नरक से खींचकर निकाल लिया (बचा लिया) गया है ॥ १ ॥ सन्तों की कृपा से प्रभु दाता प्राप्त हुआ है, अहंकार-अभिमान का शोर-गुल समाप्त हो गया है। गुरु नानक राम-नाम-रंग में मग्न हुए हैं, उनका तन-मन रूपी उद्यान खिल गया है ॥ २ ॥ ९५ ॥ ११८ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ बिनसे काच के बिउहार । राम भजु मिलि साध संगति इहै जग महि सार ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ईत ऊत न डोलि कतहू नामु हिरदै धारि । गुर चरन बोहिथ मिलिओ भागी उतरिओ संसार ॥ १ ॥ जलि थलि महीअलि पूरि रहिओ सरब नाथ अपार । हरि नामु अंम्रितु पीउ नानक आन रस सभि खार ॥ २ ॥ ९६ ॥ ११९ ॥

कच्चे सम्बन्ध और कच्चे व्यवहार नष्ट होते हैं। साधु-जनों की संगति में राम-नाम का भजन करना ही संसार में सार-तत्त्व के समान है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो हृदय में हरि-नाम धारण कर लेता है, वह कभी इधर-उधर नहीं डोलता। सौभाग्यवश उसे गुरु का चरण रूपी जहाज़ मिल जाता है और वह संसार-सागर से पार होता है ॥ १ ॥ वह परमात्मा जल, थल, आकाश सब जगह व्याप्त है, वह सबका स्वामी है। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम-रसामृत का पान करो, अन्य सब रस नीरस हैं ॥ २ ॥ ९६ ॥ ११९ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ ता ते करणपलाह करे । महा बिकार मोह मद मातौ सिमरत नाहि हरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साध संगि जपते नाराइण तिन के दोख जरे । सफल देह धंनि ओइ जनमे प्रभ कै संगि रले ॥ १ ॥ चारि पदारथ असटदसासिधि सभ ऊपरि साध भले । नानक दास धूरि जन बांछै उधरहि लागि पले ॥ २ ॥ ९७ ॥ १२० ॥

जीव इसीलिए करुण प्रलाप करता है, क्योंकि वह विकारों तथा

मोह-मद में लीन होकर हरि-स्मरण नहीं करता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो जीव साधु-संगति में नारायण का नाम जपते हैं, उनके सब दोष-विकार जल जाते हैं। उनकी देह सफल है, उनका जन्म धन्य है, वे प्रभु के संग मिल जाते हैं ॥ १ ॥ चारों पदार्थों (काम, अर्थ, धर्म, मोक्ष) एवं अठारह सिद्धियों से भी अधिक मोल साधु-जनों की संगति का पड़ता है। 'नानक' दास तो उनके चरणों की धूलि माँगता एवं उनके दामन से लगकर उद्धार चाहता है ॥ २ ॥ ९७ ॥ १२० ॥

॥ सारग महला ५ ॥ हरि के नाम के जन कांखी। मनि तनि बचनि एही सुखु चाहत प्रभ दरसु देखहि कब आखी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तू बेअंतु पारब्रहम सुआमी गति तेरी जाइ न लाखी। चरन कमल प्रीति मनु बेधिआ करि सरब सु अंतरि राखी ॥ १ ॥ बेद पुरान सिम्रिति साधू जन इह बाणी रसना भाखी। जपि राम नामु नानक निसतरीऐ होरु दुतीआ बिरथी साखी ॥ २ ॥ ९८ ॥ १२१ ॥

भक्तजन तो हरि-नाम के आकांक्षी होते हैं। वे तन, मन, वचन से यही चाहते हैं कि कब प्रभु को आँखों से देखने का सुख प्राप्त होगा! ॥१॥ रहाउ ॥ हे स्वामी, तुम अनन्त हो, परब्रह्म हो, तुम्हारी गति कोई नहीं समझता। मेरा मन तुम्हारे चरणों की प्रीति में बिंधा है, उसी को मैंने सर्वस्व मानकर हृदय के भीतर छिपा लिया है ॥ १ ॥ वेदों, पुराणों, स्मृतियों एवं साधुजनों ने एक ज़बान यही बात कही है कि ऐ नानक, हरि-नाम का भजन करो, द्वैत-भाव की अन्य सब बातें मिथ्या हैं ॥२॥९८॥१२१॥

॥ सारग महला ५ ॥ माखी राम की तू माखी। जह दुरगंध तहा तू बैसहि महा बिखिआ मद चाखी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कितहि असथानि तू टिकनु न पावहि इह बिधि देखी आखी। संता बिनु तै कोइ न छाडिआ संत परे गोबिद की पाखी ॥ १ ॥ जीअ जंत सगले तै मोहे बिनु संता किनै न लाखी। नानक दासु हरि कीरतनि राता सबदु सुरति सचु साखी ॥२॥९९॥१२२॥

ऐ माया, तू तो राम की मक्खी के समान है। जहाँ दुर्गन्ध होती है, तू वहीं बैठती है और महा विषय-विकारों के रस लेती है ॥१॥रहाउ॥ किसी भी स्थान पर तुम टिकने नहीं पाती, मैंने तुम्हें ऐसा करते अपनी आँखों से देखा है। सन्तों के सिवा तुमने किसी को नहीं छोड़ा, (क्योंकि) सन्त प्रभु के पक्ष के होते हैं ॥ १ ॥ सब जीव-जन्तु तुमने मोह लिये हैं, सन्तों के सिवा और किसी को समझती ही कुछ नहीं। गुरु

नानक कहते हैं कि हरि-कीर्तन में रत होने से सुरति में शब्द को टिकाकर सच्चे स्वरूप हरि को साक्षात् किया है ॥ २ ॥ ९९ ॥ १२२ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ माई री काटी जम की फास । हरि हरि जपत सरब सुख पाए बीचे ग्रसत उदास ॥१॥रहाउ॥ करि किरपा लीने करि अपुने उपजी दरस पिआस । संत संगि मिलि हरि गुण गाए बिनसी दुतीआ आस ॥१॥ महा उदिआन अटवी ते काढे मारगु संत कहिओ । देखत दरसु पाप सभि नासे हरि नानक रतनु लहिओ ॥ २ ॥ १०० ॥ १२३ ॥

हे माँ, हरि-प्रभु का नाम जपने से मेरी यम की फाँसी कट गई है और गृहस्थी में ही निर्लेप होकर सब सुख पा लिये हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु ने कृपा करके मेरा हाथ थामा है, मेरे मन में उसके दर्शन के लिए बड़ी तीखी इच्छा पैदा हुई है । सन्तजनों की संगति में मैंने प्रभु का गुण गाया है, जिससे द्वैत की आशा-तृष्णा समाप्त हो गई है ॥ १ ॥ गुरु-संत ने उजाड़ वनों में से निकालकर सही रास्ता बता दिया है । प्रभु का दर्शन पाकर समस्त पाप नष्ट हो गए हैं, गुरु नानक ने हरि-रत्न पा लिया है ॥ २ ॥ १०० ॥ १२३ ॥

माई री अरिओ प्रेम की खोरि । दरसन रुचित पिआस मनि सुंदर सकत न कोई तोरि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रान मान पति पित सुत बंधप हरि सरबसु धन मोर । ध्रिगु सरीरु असत बिसटा क्रिम बिनु हरि जानत होर ॥ १ ॥ भइओ क्रिपाल दीन दुख भंजनु परापूरबला जोर । नानक सरणि क्रिपानिधि सागर बिनसिओ आन निहोर ॥ २ ॥ १०१ ॥ १२४ ॥

हे माँ, मैं तो प्रेम की मस्ती में लीन हूँ । मन में सुन्दर प्रियतम के मिलन की उत्सुकता है, उसके दर्शनों की लग्न है, जिसे कोई तोड़ नहीं सकता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परमात्मा ही मेरा सर्वस्व है, वह मेरी पूँजी, प्राण, पति, पिता, पुत्र, सम्बन्धी, सब कुछ है । प्रभु के अतिरिक्त अन्य को जाननेवाले अस्थियों के शरीर को धिक्कार है, वह मनुष्य विष्ठा के कीड़े-समान है ॥ १ ॥ जब पूर्वकर्मों का बल प्राप्त होता है, तो दीन-दयालु, दुःखभंजन प्रभु कृपा करता है । गुरु नानक ने कृपा के भण्डार की शरण ली है, अतः उसकी अन्य सब मुहताजी चुक गई है ॥२॥१०१॥१२४॥

॥ सारग महला ५ ॥ नीकी राम की धुनि सोइ । चरन कमल अनूप सुआमी जपत साधू होइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चितवता

गोपाल दरसन कलमला कढु धोइ। जनम मरन बिकार अंकुर हरि काटि छाडे खोइ ॥ १ ॥ परा पूरबि जिसहि लिखिआ बिरला पाए कोइ। रवण गुण गोपाल करते नानका सचु जोइ ॥ २ ॥ १०२ ॥ १२५ ॥

राम-नामोच्चारण की ध्वनि अच्छी है। प्रभु के सुन्दर चरण-कमलों का ध्यान करने से मनुष्य साधु कहलाने योग्य हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि-दर्शन का ध्यान करनेवाला अपने पापों को धो डालता है। जन्म-मरण तथा विकारों के फूटते हुए अंकुर, तब परमात्मा काट देता तथा जीव को मुक्त कर देता है ॥ १ ॥ पहले से ही जिसके कर्मों में लिखा है, वही उससे मिलन प्राप्त करता है। गुरु नानक सत्य की खोज में परमात्मा के गुणों का नित्य स्मरण करते हैं ॥ २ ॥ १०२ ॥ १२५ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ हरि के नाम की मति सार। हरि बिसारि जु आन राचहि मिथन सभ बिसथार ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साध संगमि भजु सुआमी पाप होवत खार। चरनारबिंद बसाइ हिरदै बहुरि जनम न मार ॥ १ ॥ करि अनुग्रह राखि लीने एक नाम अधार। दिन रैनि सिमरत सदा नानक मुख ऊजल दरबार ॥ २ ॥ १०३ ॥ १२६ ॥

हरि-नाम जपनेवाले जीव की बुद्धि श्रेष्ठ होती है। परमात्मा के अतिरिक्त जो किसी में आसक्त होते हैं, उनका विस्तार मिथ्या है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साधुजन की संगति में स्वामी का भजन करो, इससे सब पाप दूर हो जाते हैं। प्रभु के चरण-कमलों को हृदय में बसा लेने से पुनः जन्म या मरण नहीं होता ॥ १ ॥ कृपा करके तुमने केवल हरि-नाम के आधार पर ही मेरी रक्षा की है। गुरु नानक कहते हैं कि रात-दिन प्रभु का स्मरण करने से मुख उज्ज्वल होता है और प्रभु के दरबार में प्रतिष्ठा मिलती है ॥ २ ॥ १०३ ॥ १२६ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ मानी तूं राम कै दरि मानी। साध संगि मिलि हरि गुन गाए बिनसी सभ अभिमानी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ धारि अनुग्रहु अपुनी करि लीनी गुरमुखि पूर गिआनी। सरब सूख आनंद घनेरे ठाकुर दरस धिआनी ॥ १ ॥ निकटि वरतनि सा सदा सुहागनि दहदिस साई जानी। प्रिअ रंग रंगि रती नाराइन नानक तिसु कुरबानी ॥ २ ॥ १०४ ॥ १२७ ॥

तुमको राम के द्वार पर सत्कार मिला है। सत्संगति में रहकर तुमने

हरि-गुणगान किया है, जिससे तुम्हारा सब अभिमान धुल गया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु के द्वारा पूर्णज्ञान पा लेने पर तुमने कृपा करके मुझे अपना लिया है। ठाकुर (प्रभु) के दर्शन एवं ध्यान से समस्त सुखों की उपलब्धि हुई है ॥ १ ॥ साईं के समीप बसनेवाली सुहागिन (जीवात्मा) हर ओर लोक-जनित हो जाती है (अर्थात् सन्त-महात्मा छिपे नहीं रहते)। वह प्रिय के प्रेम में पूर्ण आसक्त होती है, गुरु नानक उस पर क़ुर्बान जाते हैं ॥ २ ॥ १०४ ॥ १२७ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ तुअ चरन आसरो ईस। तुमहि पछानू साकु तुमहि संगि राखनहार तुमै जगदीस ॥ रहाउ ॥ तू हमरो हम तुमरे कहीऐ इत उत तुमही राखे। तू बेअंतु अपरंपरु सुआमी गुर किरपा कोई लाखै ॥ १ ॥ बिनु बकने बिनु कहन कहावन अंतरजामी जानै। जा कउ मेलि लए प्रभु नानकु से जन दरगह माने ॥ २ ॥ १०५ ॥ १२८ ॥

हे ईश्वर, मुझे तुम्हारे चरणों का आश्रय है। मैं तुम्हें ही अपना सम्बन्धी, संगी-साथी, रक्षक मानता हूँ, तुम्हें ही जगत का स्वामी जानता हूँ ॥ रहाउ ॥ तुम हमारे हो, हम तुम्हारे कहलाते हैं; इहलोक और परलोक में सब जगह तुम्हीं रक्षक हो। हे प्रभु, तुम बे-अंत, अपरंपार हो, सिर्फ़ गुरु-कृपा से ही तुम्हें जाना जा सकता है ॥ १ ॥ बिना बोले, बिना कहे-कहाए, तुम अन्तर्यामी होने के कारण सब जानते हो। गुरु नानक कहते हैं कि जिसे वह दया-वश अपने में मग्न कर लेता है, वह प्रभु के दरबार में प्रतिष्ठित होता है ॥ २ ॥ १०५ ॥ १२८ ॥

सारंग महला ५ चउपदे घरु ५

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ हरि भजि आन करम बिकार। मान मोहु न बुझत त्रिसना काल ग्रस संसार ॥ १ ॥ रहाउ ॥ खात पीवत हसत सोवत अउध बिती असार। नरक उदर भ्रमंत जलतो जमहि कीनी सार ॥ १ ॥ परद्रोह करत बिकार निंदा पाप रत कर झार। बिना सतिगुर बूझ नाही तम मोह महां अंधार ॥ २ ॥ बिखु ठगउरी खाइ मूठो चिति न सिरजनहार। गोबिंद गुपत होइ रहिओ निआरो मातंग मति अहंकार ॥ ३ ॥ करि क्रिपा प्रभ संत राखे चरन

कमल अधार। कर जोरि नानकु सरनि आइओ गोपाल पुरख अपार ॥ ४ ॥ १ ॥ १२९ ॥

ऐ जीव, हरि का भजन कर, उसके अतिरिक्त अन्य सब कर्म विकार हैं। (उनसे) मान-मोह शमित नहीं होते, तृष्णा नहीं बुझती और सारा संसार काल का ग्रास बनता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ खाते-पीते, हँसते-सोते, सारी आयु बेखबरी में ही बीत गई। नरक-रूप पेट में भ्रमता हुआ संताप सहन करता रहा और अन्त में यमदूतों ने खबर ली (अर्थात् यमदूतों ने दण्डित किया) ॥ १ ॥ पर-द्रोह करता फिरा, हाथ झाड़कर निन्दा-पाप में व्यस्त रहा। सतिगुरु के बिना मोह के महा अन्धकार में पड़ा रहा, ज्ञान की सूझ नहीं हुई ॥ २ ॥ विषय-विकारों की ठगमूरि खाकर लुट गया है, मन में अपने सर्जक को कहीं स्थान नहीं देता। हाथी की तरह अपनी बुद्धि के अहंकार में मस्त रहा और भीतर गुप्त बनकर स्थित प्रभु को नहीं पहचाना ॥ ३ ॥ परमात्मा ने कृपा-पूर्वक अपने चरणों की टेक देकर सन्तजनों की रक्षा की। गुरु नानक भी उसी गोपाल अर्थात् परम-पुरुष की शरण में हाथ जोड़कर उपस्थित हैं ॥ ४ ॥ १ ॥ १२९ ॥

सारग महला ५ घरु ६ पड़ताल

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सुभ बचन बोलि गुन अमोल। किंकरी बिकार। देखु री बीचार। गुर सबदु धिआइ महलु पाइ। हरि संगि रंग करती महा केल ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सुपन री संसारु। मिथनी बिसथारु। सखी काइ मोहि मोहि ली प्रिअ प्रीति रिदै मेल ॥ १ ॥ सरब री प्रीति पिआरु। प्रभु सदा री दइआरु। कांएं आन आन रुचीऐ। हरि संगि संगि खचीऐ। जउ साध संग पाए। कहु नानक हरि धिआए। अब रहे जमहि मेल ॥ २ ॥ १ ॥ १३० ॥

हे जीवात्मा, सदा शुभ वचन बोलो, यह अमूल्य गुण है। विकार क्यों पालती हो ? विचारकर देखो, गुरु के शब्दों का ध्यान करने से प्रभु के महलों में पहुँचते हैं, जहाँ प्रभु-पति के संग कल्लोल करोगी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऐ जीवात्मा-स्त्री, यह संसार मिथ्या है, इसका समूचा विस्तार स्वप्नवत् है। हे सखी, माया के आकर्षण में क्यों मोहित हो ? प्रियतम की प्रीति हृदय में सजग करो ॥ १ ॥ प्रभु तो समूचा प्रीति-पुंज है, वह सदा दयालु है। अन्य-अन्य में रुचि क्यों बनाती हो, हरि की संगति में लगी रहो। जब साधुजन की संगति प्राप्त हुई, तो गुरु नानक कहते

हैं, प्रभु का ध्यान पुष्ट होगा और तब यमदूतों का भय चुक जायगा ॥ २ ॥ १ ॥ १३० ॥

॥ सारग महला ५ ॥ कंचना बहु दत करा। भूमि दानु अरपि धरा। मन अनिक सोच पवित्र करत। नाही रे नाम तुलि मन चरन कमल लागे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चारि बेद जिहव भने। दस असट खसट स्रवन सुने। नही तुलि गोबिद नाम धुने। मन चरन कमल लागे ॥ १ ॥ बरत संधि सोच चार। क्रिआ कुंट निराहार। अपरस करत पाकसार। निवली करम बहु बिसथार। धूप दीप करते हरिनाम तुलि न लागे। राम दइआर सुनि दीन बेनती। देहु दरसु नैन पेखउ जन नानक नाम मिसट लागे ॥२॥२॥१३१॥

बहुत-सा सोना दान किया, धरती को दान में अर्पित किया, मन से अनेक प्रकार की पवित्रता का ध्यान रखा, किन्तु (ध्यान रहे) प्रभु-नाम तथा उसके चरण-कमल में मन स्थिर करने के तुल्य कुछ भी नहीं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चारों वेद मौखिक रूप से उच्चरित किए, अठारह पुराण एवं छः शास्त्र कानों से सुने, किन्तु यह भी प्रभु-नाम की ध्वनि के तुल्य नहीं, मन को चरण-कमल में स्थिर करने (के तुल्य नहीं) ॥ १ ॥ व्रत-उपवास, संध्या-बंदन तथा चारों प्रकार का शौच, निराहार तीर्थ-यात्रा तथा अस्पृष्ट रसोई करना, नेउली-कर्म का विस्तार (शारीरिक शौच) तथा धूप-दीप-समर्पण आदि अनुष्ठाम भी हरि-नाम के तुल्य नहीं हैं। तुम्हारे दास नानक को तुम्हारा नाम ही भाता है, हे दयालु, उसकी विनती सुनो और दर्शन दो, ताकि वह तुम्हें आँखों से देख सके ॥ २ ॥ २ ॥ १३१ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ राम राम राम जापि रमत राम सहाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संतन कै चरन लागे काम क्रोध लोभ तिआगे गुर गोपाल भए क्रिपाल लबधि अपनी पाई ॥ १ ॥ बिनसे भ्रम मोह अंध टूटे माइआ के बंध पूरन सरबत्र ठाकुर नह कोऊ बैराई । सुआमी सुप्रसंन भए जनम मरन दोख गए संतन कै चरन लागि नानक गुन गाई ॥ २ ॥ ३ ॥ १३२ ॥

राम के नाम का जप करो, स्मरण से राम सहायक होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सन्तों के चरणों की शरण में आने, काम-क्रोध-मोहादि त्यागने से गुरु तथा प्रभु दोनों की कृपा होती है और अपेक्षित तथ्य की प्राप्ति हो जाती है ॥ १ ॥ भ्रम नष्ट होते हैं (इससे) मोह का अन्धकार दूर होता

है, माया के बन्धन टूटते हैं और सर्वत्र पूर्णस्वामी दीख पड़ता है। परिणामतः कोई वैरी नहीं रहता (जीव निर्वैर हो जाता है), प्रभु प्रसन्न होते हैं, जन्म-मरण का दोष कट जाता है और गुरु नानक का कथन है कि जीव सन्तों की शरण में आकर परमात्मा के गुण गाता है ॥२॥३॥१३२॥

॥ सारग महला ५ ॥ हरि हरे हरि मुखहु बोलि हरि हरे मनि धारे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ स्रवन सुनन भगति करन अनिक पातिक पुनहचरन। सरन परन साधू आन बानि बिसारे ॥ १ ॥ हरि चरन प्रीति नीत नीति पावना महि महा पुनीत। सेवक भै दूरि करन कलिमल दोख जारे। कहत मुकत सुनत मुकत रहत जनम रहते। राम राम सारभूत नानक ततु बीचारे ॥ २ ॥ ४ ॥ १३३ ॥

हरि का नाम उच्चारण करो, हरि-नाम को मन में धारण करो ॥१॥ रहाउ ॥ (हरि-नाम को) कानों से सुनो, इसका जाप (भक्ति) करो, यह अनेक पापों का प्रायश्चित्त है। अन्य सब प्रवृत्तियों को त्यागकर सच्चे सन्तों की शरण लो ॥ १ ॥ नित्यप्रति हरि-चरणों में लगाई प्रीति पावनों में भी पावन है— वह सेवक के भय दूर करती एवं कलियुग की मलिनता को जला डालती है। हरि-नाम को उच्चारनेवाले, हरिनाम-श्रवण करनेवाले मुक्त होते हैं, तथा हरि-नाम पर आचरण करनेवाले जन्म-मरण की चक्की से छूट जाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि जीवन का सार-तत्त्व हरि-नाम में ही विद्यमान है ॥ २ ॥ ४ ॥ १३३ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ नाम भगति मागु संत तिआगि सगल कामी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रीति लाइ हरि धिआइ गुन गोबिंद सदा गाइ। हरि जन की रेन बांछु दैनहार सुआमी ॥१॥ सरब कुसल सुख बिस्राम आनदा आनंद नाम जम की कछु नाहि त्रास सिमरि अंतरजामी। एक सरन गोबिंद चरन संसार सगल ताप हरन। नाव रूप साध संग नानक पारगरामी ॥ २ ॥ ५ ॥ १३४ ॥

ऐ सन्तो, समस्त कामनाओं को त्यागकर केवल हरिनाम-भक्ति की माँग करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रीतिपूर्वक परमात्मा का ध्यान करो, सदा प्रभु का गुण गाओ; हरि-जनों की चरण-धूलि की वांछा करो, स्वामी सब कुछ देने योग्य है— मिलेगी ॥ १ ॥ अन्तर्यामी प्रभु के स्मरण से सब प्रकार की कुशल होगी, परम सुख मिलेगा। हरि-नाम में आनन्द पाओगे, यमदूतों का भय नष्ट हो जायगा। परमात्मा की चरण-शरण संसार के

समस्त कष्टों को दूर करनेवाली है। गुरु नानक का कथन है कि साधुजन की संगति में मुक्तिदाता प्रभु-नाम की नौका मिल जाती है (जो संसार-सागर से पार कर देती है) ॥ २ ॥ ५ ॥ १३४ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ गुन लाल गावउ गुर देखे । पंचा ते एकु छूटा जउ साध संगि पगरउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ द्रिसटउ कछु संगि न जाइ मानु तिआगि मोहा । एकै हरि प्रीति लाइ मिलि साध संगि सोहा ॥ १ ॥ पाइओ है गुणनिधानु सगल आस पूरी । नानक मनि अनंद भए गुरि बिखम गाह तोरी ॥ २ ॥ ६ ॥ १३५ ॥

गुरु के दर्शनों से मैं प्रभु के गुण गाने लगता हूँ; जब साधुजन की संगति मिली, तो मेरा (एक) मन (पाँच) काम-क्रोधादि के चंगुल से छूट गया ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यह दृश्यमान जगत में से कुछ भी साथ नहीं जाता, अतः मान, मोह को त्यागो। एकमात्र हरि-नाम में प्रीति लगाओ और साधुजन की संगति में शोभायमान होओ ॥ १ ॥ गुणों का भण्डार प्रभु मिला, तो समस्त आशाएँ पूर्ण हो गईं। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु ने विकारों के कठिन घेरे को तोड़ दिया और अब मन में पूर्ण आनन्द है ॥ २ ॥ ६ ॥ १३५ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ मनि बिरागैगी । खोजती दरसार ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साधू संतन सेवि कै प्रिउ हीअरै धिआइओ । आनंद रूपी पेखि कै हउ महलु पावउगी ॥ १ ॥ कामकरी सभ तिआगि कै हउ सरणि परउगी । नानक सुआमी गरि मिले हउ गुर मनावउगी ॥ २ ॥ ७ ॥ १३६ ॥

प्रभु के दर्शनों की खोज में मन वैराग्य-युत है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साधु-सन्तों की सेवा में रहकर हृदय में प्रियतम-प्रभु का ध्यान करती हूँ। (मुझे विश्वास है कि) परमात्मा का आनन्दमय रूप देखकर मुझे पति-प्रसाद की प्राप्ति होगी ॥ १ ॥ काम-धंधे सब त्यागकर मैं परमात्मा की शरण पड़ूंगी। गुरु नानक कहते हैं कि मैं उस गुरु को मनाऊँगी, जिसके कारण प्रिय से गले मिल सकूंगी ॥ २ ॥ ७ ॥ १३६ ॥

॥ सारग महला ५ ॥ ऐसी होइ परी । जानते दईआर ॥१॥रहाउ॥ मातर पितर तिआगि कै मनु संतन पाहि बेचाइओ । जाति जनम कुल खोईऐ हउ गावउ हरि हरी ॥१॥

लोक कुटंब ते टूटीऐ प्रभ किरति किरति करी । गुरि मोकउ उपदेसिआ नानक सेवि एक हरी ।। २ ।। ८ ।। १३७ ।।

मेरी ऐसी हालत हो गई है, दयालु प्रभु ही जानते हैं ।। १ ।। रहाउ ।। मैंने माता-पिता को त्यागकर अपना मन सन्तों के समीप बेच दिया है। जाति, जन्म-कुल आदि गँवाकर मैं हरि-नाम का गान करती हूँ ।। १ ।। लोक-कुटुम्ब से तोड़कर मुझे प्रभु ने कृत-कृत्य कर दिया है। गुरु नानक का कथन है कि गुरु-उपदेशानुसार एकमात्र परमात्मा की आराधना करो ।। २ ।। ८ ।। १३७ ।।

।। सारग महला ५ ।। लाल लाल मोहन गोपाल तू । कीट हसति पाखाण जंत सरब मै प्रतिपाल तू ।। १ ।। रहाउ ।। नह दूरि पूरि हजूरि संगे । सुंदर रसाल तू ।। १ ।। नह बरन बरन नह कुलह कुल । नानक प्रभ किरपाल तू ।। २ ।। ९ ।। १३८ ।।

हे मेरे मनमोहन, प्रिय स्वामी, तुम, कीट, हस्ति, पत्थर, जीव-जन्तुओं, सबके प्रतिपालक हो ।। १ ।। रहाउ ।। तुम दूर नहीं हो, बल्कि व्याप्त होने के कारण हर समय सामने हो, अंग-संग हो। तुम सर्वसुन्दर रस (आनन्द) मय हो ।। १ ।। गुरु नानक कहते हैं कि तुम पूर्ण कृपालु हो, तुम्हारा कोई वर्ण-अवर्ण या कुल-अकुल नहीं है ।। २ ।। ९ ।। १३८ ।।

।। सारग महला ५ ।। करत केल बिखै मेल चंद्र सूर मोहे । उपजता बिकार दुंदर नउपरी झुनंतकार सुंदर अनिग भाउ करत फिरत बिनु गोपाल धोहे ।। रहाउ ।। तीनि भउने लपटाइ रही काच करमि न जात सही उनमत अंध धंध रचित जैसे महा सागर होहे ।। १ ।। उधारे हरि संत दास काटि दीनी जम की फास पतित पावन नामु जा को सिमरि नानक ओहे ।। २ ।। १० ।। १३९ ।। ३ ।। १३ ।। १५५ ।।

माया खेल रचती है और विषयों का मेल कराती है। इसने चन्द्र-सूर्यादि देवता भी मोहे हैं। इसकी पायल की झंकार से विकार उपजते हैं। यह अनेक प्रकार के हाव-भाव दर्शाती एवं प्रभु के बिना सबको ठग लेती है ।। रहाउ ।। तीनों लोक माया के प्रभाव में हैं। साधारण कर्म-काण्ड से इससे छुटकारा नहीं मिलता। इसमें उन्मत्त अन्धकारमय धंधों में फँसे हैं और संसार-सागर की तरंगों में धक्के खाते हैं ।। १ ।। गुरु नानक कहते हैं कि उस प्रभु का स्मरण करो, जिसका नाम पतित-

पावन है और जो यम की फाँसी काटकर सन्तजनों के सेवकों का उद्धार करता है ॥ २ ॥ १० ॥ १३९ ॥ ३ ॥ १३ ॥ १५५ ॥

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

॥ रागु सारंग महला ९ ॥ हरि बिनु तेरो को न सहाई। कां की मात पिता सुत बनिता को काहू को भाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ धनु धरनी अरु संपति सगरी जो मानिओ अपनाई। तन छूटै कछु संगि न चालै कहा ताहि लपटाई ॥ १ ॥ दीन दइआल सदा दुख भंजन ता सिउ रुच न बढाई। नानक कहत जगत सभ मिथिआ जिउ सुपना रैनाई ॥ २ ॥ १ ॥

हे जीव, परमात्मा के सिवा तुम्हारा कोई सहायक नहीं। माता-पिता, पुत्र, पत्नी किसके हुए हैं ? कौन किसी का भाई है ? ॥१॥रहाउ॥ धन, धरती, समूची सम्पत्ति आदि को जो तुम अपना समझो, तो वे भी शरीर छूटते समय (मृत्यु-काल में) साथ नहीं चलते, अतः उनसे लिपटे रहने का भी क्या है ? ॥ १ ॥ दुःखों को दूर करनेवाले दीन-दयालु परमात्मा में यदि रुचि न बढ़ी, तो गुरु नानक कहते हैं, यह मिथ्या जगत रात्रि के स्वप्न के समान असार है ॥ २ ॥ १ ॥

॥ सारंग महला ९ ॥ कहा मन बिखिआ सिउ लपटाही। या जग मै कोऊ रहनु न पावै इक आवहि इक जाही ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कां को तनु धनु संपति कां की का सिउ नेहु लगाही। जो दीसै सो सगल बिनासै जिउ बादर की छाही ॥ १ ॥ तजि अभिमानु सरणि संतन गहु मुकति होहि छिन माही। जन नानक भगवंत भजन बिनु सुखु सुपने भी नाही ॥ २ ॥ २ ॥

हे मन, विषय-विकारों से क्यों लिपटे हो ! इस संसार में स्थायी तौर पर किसी को नहीं रहना है, कोई आता है, कोई जाता है (यही संसार का चलन है) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यह तन, धन, सम्पत्ति किसकी हुई है ? कौन किससे प्रेम लगाता है ? जो कुछ भी दृश्यमान है, वह सब बादल की छाया के समान नश्वर है ॥ १ ॥ अतः, ऐ जीव, अभिमान त्यागकर, सन्तों की शरण ग्रहण करो, इससे शीघ्र ही मुक्ति हो जायगी। नानक दास कहते हैं कि प्रभु के भजन बिना सपने में सुख नहीं मिलता ॥ २ ॥ २ ॥

॥ सारंग महला ९ ॥ कहा नर अपनो जनमु गवावै।

माइआ मदि बिखिआ रसि रचिओ राम सरनि नही आवै ।। १ ।। रहाउ ।। इहु संसारु सगल है सुपनो देखि कहा लोभावै । जो उपजै सो सगल बिनासै रहनु न कोऊ पावै ।। १ ।। मिथिआ तनु साचो करि मानिओ इह बिधि आपु बंधावै । जन नानक सोऊ जग मुकता राम भजन चितु लावै ।। २ ।। ३ ।।

ऐ मनुष्य, क्यों अपना मनुष्य-जन्म व्यर्थ गँवाते हो। माया की मादकता एवं विषयों के सुख में खोए हो, प्रभु की शरण क्यों नहीं लेते ।। १ ।। रहाउ ।। यह संसार तो रात्रि के स्वप्न की भाँति मिथ्या है, इसमें क्यों लुभाते हो ? जो कुछ पैदा होता है, वह सब नश्वर है, यहाँ कोई स्थायी तौर पर नहीं रह पाता ।। १ ।। इस मिथ्या शरीर को सच्चा मानकर तुम अपने को झूठ के साथ बाँधे हुए हो। गुरु नानक कहते हैं कि वही मनुष्य वास्तव में मुक्त है, जो प्रभु-नाम के भजन में चित्त रमाता है ।। २ ।। ३ ।।

।। सारंग महला ९ ।। मन करि कबहू न हरि गुन गाइओ । बिखिआ सकति रहिओ निस बासुर कीनो अपनो भाइओ ।।१।।रहाउ।। गुर उपदेसु सुनिओ नहि काननि परदारा लपटाइओ । परनिंदिआ कारनि बहु धावत समझिओ नह समझाइओ ।। १ ।। कहा कहउ मै अपनी करनी जिह बिधि जनमु गवाइओ । कहि नानक सभ अउगन मो मै राखि लेहु सरनाइओ ।। २ ।। ४ ।। ३ ।। १३ ।। १३९ ।। ४ ।। १५९ ।।

तुमने कभी मन लगाकर प्रभु का गुण नहीं गाया। रात-दिन विषयासक्त रहे और स्वेच्छाचरण करते रहे ।।१।।रहाउ।। अपने कानों से गुरु का उपदेश नहीं सुना, पराई स्त्री में आसक्त रहे। पर-निन्दा में रत होकर प्रसन्न होते रहे, समझाने पर भी नहीं समझे ।।१।। अपने कर्मों को मैं क्या बताऊँ कि मैं कसे जन्म बिता रहा हूँ। गुरु नानक कहते हैं कि मुझमें सब अवगुण मौजूद हैं, (हे प्रभु, दया करके मुझे) अपनी शरण में संरक्षण दो ।। २ ।। ४ ।। ३ ।। १३ ।। १३९ ।। ४ ।। १५९ ।।

रागु सारग असटपदीआ महला १ घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। हरि बिनु किउ जीवा मेरी माई । जै जगदीस तेरा जसु जाचउ मै हरि बिनु रहनु न

जाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि की पिआस पिआसी कामनि देखउ रैनि सबाई । स्रीधर नाथ मेरा मनु लीना प्रभु जानै पीर पराई ॥ १ ॥ गणत सरीरि पीर है हरि बिनु गुर सबदी हरि पांई । होहु दइआल क्रिपा करि हरि जीउ हरि सिउ रहां समाई ॥ २ ॥ ऐसी रवत रवहु मन मेरे हरि चरणी चितु लाई। बिसम भए गुण गाइ मनोहर निरभउ सहजि समाई ॥ ३ ॥ हिरदै नामु सदा धुनि निहचल घटै न कीमति पाई । बिनु नावै सभु कोई निरधनु सतिगुरि बूझ बुझाई ॥ ४ ॥ प्रीतम प्रान भए सुनि सजनी दूत मुए बिखु खाई । जब की उपजी तब की तैसी रंगल भई मनि भाई ॥ ५ ॥ सहज समाधि सदा लिव हरि सिउ जीवां हरि गुन गाई । गुर कै सबदि रता बैरागी निजघरि ताड़ी लाई ॥ ६ ॥ सुध रस नामु महारसु मीठा निजघरि ततु गुसांई । तह ही मनु जह ही तै राखिआ ऐसी गुरमति पाई ॥ ७ ॥ सनक सनादि ब्रहमादि इंद्रादिक भगति रते बनिआई । नानक हरि बिनु घरी न जीवां हरि का नामु वडाई ॥ ८ ॥ १ ॥

हे माँ, प्रभु के बिना मैं क्योंकर जीऊँ ! हे जगदीश, तुम्हारी जय है, मैं तुम्हारे ही यश की भिक्षा माँगता हूँ, मुझसे हरि के बिना रहा नहीं जाता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मैं अपने हरि-पति की कामना में अतृप्त कामिनी हूँ, सारी रात उसकी राह देखती हूँ । मेरे प्रभु-पति ने मेरा मन वश में कर लिया है, वही मेरी पीड़ा को जानता है ॥ १ ॥ प्रतीक्षा में दिन गिनते हुए तन में अतीव पीड़ा घर कर गई है, गुरु के उपदेश से प्रभु-पति को प्राप्त किया जाता है । मुझ पर मेरे स्वामी की कृपा होगी तो मैं उसी में समा जाऊँगी ॥ २ ॥ हे मेरे मन, ऐसा व्यवहार करो कि नित्य हरि के चरणों में चित्त लगे; उसके मनोहर गुण गाकर सुखी हो और निर्भय अडोल आनन्दावस्था में समाऊँ ॥ ३ ॥ हृदय में हरि-नाम की अटल ध्वनि गुंजरित है (लग्न लगी है), जो कभी घटती नहीं, न ही उसका कोई मोल पड़ता है । हरि-नाम के बिना सब निर्धन हैं, केवल सतिगुरु से ही यह ज्ञान लब्ध होता है ॥ ४ ॥ ऐ सखी, सुनो, हरि मेरे प्राण-प्रिय हुए हैं, काम-क्रोधादि दूत विष खाकर मर गए हैं (ईर्ष्या में नष्ट हो गए हैं) । जबसे मेरे मन में यह प्रीति उपजी है, वैसी ही बनी है (घटी नहीं), मैं मन से पूर्णतः प्यार में रँग गई हूँ ॥ ५ ॥ सहजावस्था में मेरी लग्न प्रभु-पति से लगी है, उसी के गुण गाकर जीती हूँ । गुरु के उपदेश से मुझे बाहरी

दुनिया से वैराग्य हुआ है और मैं अन्तर्मन में प्रियतम की ज्योति जलाकर समाधिस्थ हूँ ॥ ६ ॥ अत्यन्त रसवान हरि-नाम मीठा लगा, जिससे मन के भीतर ही वास्तविक स्वामी प्राप्त हो गया है। गुरु के उपदेश के कारण मन जहाँ था, वहीं स्थिर हो गया है ॥७॥ ब्रह्मा-सुत सनक, सनन्दन आदि, तथा ब्रह्मा, इन्द्रादि प्रभु-भक्ति के ही कारण परमात्मा से मिल पाए। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु के बिना जीवात्मा को घड़ी भर भी चैन नहीं, वह हरि-नाम की बड़ाई में ही सुखी है ॥ ८ ॥ १ ॥

॥ सारग महला १ ॥ हरि बिनु किउ धीरै मनु मेरा। कोटि कलप के दूख बिनासन साचु द्रिड़ाइ निबेरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ क्रोधु निवारि जले हउ ममता प्रेमु सदा नउरंगी। अनभउ बिसरि गए प्रभु जाचिआ हरि निरमाइलु संगी ॥ १ ॥ चंचल मति तिआगि भउ भंजनु पाइआ एक सबदि लिव लागी। हरि रसु चाखि त्रिखा निवारी हरि मेलि लए बडभागी ॥ २ ॥ अभरत सिंचि भए सुभर सर गुरमति साचु निहाला। मन रति नामि रते निहकेवल आदि जुगादि दइआला ॥ ३ ॥ मोहनि मोहि लीआ मनु मोरा बडै भाग लिव लागी। साचु बीचारि किलविख दुख काटे मनु निरमलु अनरागी ॥ ४ ॥ गहिर गंभीर सागर रतनागर अवर नही अन पूजा। सबदु बीचारि भरम भउ भंजनु अवरु न जानिआ दूजा ॥ ५ ॥ मनूआ मारि निरमल पदु चीनिआ हरि रस रते अधिकाई। एकस बिनु मै अवरु न जानां सतिगुरि बूझ बुझाई ॥ ६ ॥ अगम अगोचरु अनाथु अजोनी गुरमति एको जानिआ। सुभर भरे नाही चितु डोलै मन ही ते मनु मानिआ ॥ ७ ॥ गुरपरसादी अकथउ कथीऐ कहउ कहावै सोई। नानक दीन दइआल हमारे अवरु न जानिआ कोई ॥ ८ ॥ २ ॥

मेरा मन हरि के बिना क्योंकर धैर्य धारण करे! हरि तो करोड़ों युगों के दुःखों को नाश करता है एवं सत्य का निश्चय करवा के निर्णय देता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ (हरि-कृपा से) क्रोध दूर हुआ और मैं-मेरी के भाव जल गए। उनकी जगह सदैव नवरंग (नवीन और लुभावना) रहनेवाला प्यार मिला है। प्रभु के इतर अन्य सब भय दूर हो गए और निर्मल हरि की अंग-संग अनुभूति हुई ॥ १ ॥ प्रभु के शब्द में लग्न लगने से चंचल मति शमित हुई और भय को दूर करनेवाले प्रभु की प्राप्ति हो गई।

हरि-रस पान करके तृष्णा मिट गई और सौभाग्य से हरि मिल गया ।।२।। शून्य मन में हरि-रस भर गया, गुरु के उपदेश से मैंने यह देखा है; हार्दिक प्रेम से शुद्ध हरि के नाम में रँग गया हूँ, वह सदा से दयालु है ।। ३ ।। मनमोहक प्रभु ने मेरा मन मोह लिया है, बड़े भाग्य से उसमें लग्न लगी है। सत्य का चिन्तन करने से पाप नष्ट हो गए हैं और मन निर्मल प्रेम में लीन है ।। ४ ।। प्रभु गहिर गम्भीर है, गुणों का भण्डार है, अन्य किसी की पूजा मुझे नहीं शोभती । गुरु-शब्द को विचारकर भ्रम-भय-भंजक प्रभु को ही पहचाना है, अन्य किसी को नहीं पहचाना है।। ५ ।। मन को संयत करके मैंने निर्मल पद को चीन्ह लिया है और हरि-रस में बहुत अधिक रम गया हूँ । सतिगुरु ने मुझे ऐसी राह बताया है कि मैं उस एक हरि के सिवा और किसी को नहीं जानता ।। ६ ।। गुरुमति द्वारा मैंने उस अगम, अगोचर और स्वामी-रहित ब्रह्म को पहचान लिया है । हृदय प्रेम-रस से भर गया है, मन निश्चल हुआ है और मन से मन मिल गया है ।। ७ ।। गुरु की कृपा से मैं उस अकथनीय कथा को कहता हूँ, जो वह कहलाता है, वही बोलता हूँ । गुरु नानक कहते हैं कि दीनदयालु हरि ही मेरा सर्वस्व है, मैं अन्य किसी को नहीं जानता ।। ८ ।। २ ।।

सारग महला ३ असटपदीआ घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। मन मेरे हरि कै नामि वडाई । हरि बिनु अवरु न जाणा कोई हरि कै नामि मुकति गति पाई ।। १ ।। रहाउ ।। सबदि भउ भंजनु जम काल निखंजनु हरि सेती लिव लाई । हरि सुखदाता गुरमुखि जाता सहजे रहिआ समाई ।। १ ।। भगतां का भोजनु हरिनाम निरंजनु पैन्हणु भगति बडाई । निजघरि वासा सदा हरि सेवनि हरि दरि सोभा पाई ।। २ ।। मनमुख बुधि काची मनूआ डोलै अकथु न कथै कहानी । गुरमति निहचलु हरि मनि वसिआ अंम्रित साची बानी ।। ३ ।। मन के तरंग सबदि निवारे रसना सहजि सुभाई । सतिगुर मिलि रहीऐ सद अपुने जिनि हरि सेती लिव लाई ।। ४ ।। मनु सबदि मरै ता मुकतो होवै हरि चरणी चितु लाई । हरि सरु सागरु सदा जलु निरमलु नावै सहजि सुभाई ।। ५ ।। सबदु वीचारि सदा रंगि राते हउमै त्रिसना मारी । अंतरि निहकेवलु हरि रविआ सभु आतम रामु मुरारी ।। ६ ।। सेवक सेवि रहे

सचि राते जो तेरै मनि भाणे। दुबिधा महलु न पावै जगि झूठी गुण अवगण न पछाणे ॥ ७ ॥ आपे मेलि लए अकथु कथीऐ सचु सबदु सचु बाणी। नानक साचे सचि समाणे हरि का नामु बखाणी ॥ ८ ॥ १ ॥

हे मेरे मन, हरि के नाम में ही बड़ाई है। मैं हरि के अतिरिक्त किसी को नहीं जानता, उसी के नाम से मुक्ति-गति मिलती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भय को दूर करनेवाले तथा काल को मिटा देनेवाले हरि से मैंने शब्द द्वारा लग्न लगाई है। गुरु के द्वारा मैंने सुखदाता हरि से प्रेम किया है, और सहजावस्था में लीन हो गया हूँ ॥ १ ॥ भक्तों का भोजन निर्लेप भाव से हरि-नाम जपना ही है, प्रभु का यशोगान करना ही उनकी पोशाक है और भक्तजन हरि-सेवा में संलग्न नित्य अपने वास्तविक घर में रहते और शोभा पाते हैं ॥ २ ॥ मनमुखी जीव (स्वेच्छाचारी) की बुद्धि कच्ची, मन दोलायमान होता है और वह अकथ कथा को नहीं जानता। गुरु के उपदेश से वह निश्चल हरि मन में बस जाता है और उसकी अमृत-समान सच्ची वाणी का रस प्राप्त होता है ॥ ३ ॥ मन की तरंगों (मनोविकारों) को प्रभु-शब्द द्वारा संयत किया और जिह्वा शान्त स्वभाव में लीन हो गई। हरि के संग सदा लग्न लगा देनेवाले सतिगुरु के संग मिलकर रहें ॥ ४ ॥ यदि शब्द द्वारा मन को मारा जा सके (संयत किया जा सके), तो मुक्ति होती है और हरि-चरणों में चित्त रमता है। हरि ऐसा सरोवर अथवा सागर है, जिसका नाम रूपी जल सदैव निर्मल रहता है। जो इसमें स्नान करता है, वह सदैव शांत स्वभाव को ग्रहण करता है ॥ ५ ॥ शब्द का विचार करके मैं पूर्णप्रेम के रंग में रँग गया हूँ, मेरा अहम्-भाव तथा तृष्णा चुक गए हैं। मेरे अन्तर्मन में विशुद्ध हरि रमण करता है, सब आत्म-रूप वाहिगुरु ही विचरता है ॥ ६ ॥ हे हरि, तुम्हारे सेवक तुम्हारी सेवा में संलग्न हैं, वे सत्य में रत हैं और तुम्हें वे नित्य स्वीकार हैं। द्वैत-भावी जीव प्रभु-पति को साक्षात् नहीं कर सकते। वे भले-बुरे को नहीं पहचानते, इसलिए संसार में उनकी मिथ्या सत्ता है ॥ ७ ॥ परमात्मा का शब्द, वाणी और कथाएँ, सब सत्य हैं; जिसे वह उपयुक्त मानता है, अपने-आप उसको अपने साथ मिला लेता है। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम का बखान करनेवाला जीव सत्य-स्वरूप हरि में ही विलीन हो जाता है ॥ ८ ॥ १ ॥

॥ सारग महला ३ ॥ मन मेरे हरि का नामु अति मीठा। जनम जनम के किलविख भउ भंजन गुरमुखि एको डीठा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कोटि कोटंतर के पाप बिनासन हरि साचा

मनि भाइआ। हरि बिनु अवरु न सूझै दूजा सतिगुरि एकु बुझाइआ ॥ १ ॥ प्रेम पदारथु जिन घटि वसिआ सहजे रहे समाई। सबदि रते से रंगि चलूले राते सहजि सुभाई ॥ २ ॥ रसना सबदु वीचारि रसि राती लाल भई रंगु लाई। राम नामु निहकेवलु जाणिआ मनु त्रिपतिआ सांति आई ॥ ३ ॥ पंडित पढ़ि पढ़ि मोनी सभि थाके भ्रमि भेख थके भेखधारी। गुर परसादि निरंजनु पाइआ साचै सबदि वीचारी ॥ ४ ॥ आवागउणु निवारि सचि राते साच सबदु मनि भाइआ। सतिगुरु सेवि सदा सुखु पाईऐ जिनि विचहु आपु गवाइआ ॥ ५ ॥ साचै सबदि सहज धुनि उपजै मंनि साचै लिव लाई। अगम अगोचरु नामु निरंजनु गुरमुखि मंनि वसाई ॥ ६ ॥ एकस महि सभु जगतो वरतै विरला एकु पछाणै। सबदि मरै ता सभु किछु सूझै अनदिनु एको जाणै ॥ ७ ॥ जिसनो नदरि करे सोई जनु बूझै होरु कहणा कथनु न जाई। नानक नामि रते सदा बैरागी एक सबदि लिव लाई ॥ ८ ॥ २ ॥

हे मेरे मन, हरि का नाम अत्यन्त मधुर है। यह जन्म-जन्म के भयों और पापों को दूर करनेवाला है, गुरु के द्वारा एक प्रभु का नाम-रूप ही मैंने पाया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करोड़ों जन्म-जन्मान्तरों के पापों को दूर करनेवाला हरि मुझे भा गया है। हरि-प्रभु के बिना दूसरा कोई नहीं सूझता, मेरे सतिगुरु ने मुझे इसी एक का ज्ञान दिया है ॥ १ ॥ जिनके अन्तर्मन में हरि से प्रेम का अमित भाव बस गया है, वे सहज आनन्दावस्था में समाए रहते हैं। जो गुरु के शब्द से प्यार करते हैं, वे प्रेम के पक्के रंग में सहज ही रंगीनी भोगते हैं ॥२॥ जीभ शब्द का विचार कर उसी के रस में लीन है और प्यार में लाल हुई है। प्रभु के नाम से ही उस विशुद्ध सत्ता का ज्ञान हुआ है, परिणामतः मन को तृप्ति और शांति मिली है ॥३॥ पंडित अपनी पढ़ाई (धर्मग्रंथों की) से तथा मौनी (हठ-संयम के द्वारा) सब थक गए हैं, वेषधारी वेष बना-बनाकर तंग हैं, (किन्तु उन्हें परमात्मा का आभास नहीं मिलता)। गुरु की कृपा से मायातीत ब्रह्म की प्राप्ति शब्द के विचार से होती है ॥ ४ ॥ (तब जीव) आवागमन से मुक्त होकर सत्यस्वरूप प्रभु में लीन होते और सच्चे शब्द में मन रमाते हैं। जो अहम्-भाव को मिटा देते हैं, वे सतिगुरु की सेवा में सुख प्राप्त करते हैं ॥ ५ ॥ सच्चे शब्द में सहजानन्द की संगीत-ध्वनि उपजती है और मन सत्य में ही निमग्न हो जाता है। तब अगम अगोचर मायातीत ब्रह्म जीव

के मन में रहने लगता है ॥ ६ ॥ एक प्रभु में ही समूचा जगत विद्यमान है, किन्तु कोई विरला ही इस तथ्य को पहचानता है। शब्द द्वारा अहम्-भाव का अन्त कर देने से जीव सर्वज्ञाता हो जाता है और वह सदा एक तत्त्व को ही पहचानने लगता है ॥ ७ ॥ जिस पर प्रभु कृपा करता है, वही इस रहस्य को जानता है, अन्य कोई कुछ नहीं कह पाता। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम में प्रेम करनेवाले उसी एक शब्द में चिर-विरागी रहते हैं ॥ ८ ॥ २ ॥

॥ सारग महला ३ ॥ मन मेरे हरि की अकथ कहाणी। हरि नदरि करे सोई जनु पाए गुरमुखि विरलै जाणी ॥१॥रहाउ॥ हरि गहिर गंभीरु गुणी गहीरु गुर कै सबदि पछानिआ। बहु बिधि करम करहि भाइ दूजै बिनु सबदै बउरानिआ ॥ १ ॥ हरि नामि नावै सोई जनु निरमलु फिरि मैला मूलि न होई। नाम बिना सभु जगु है मैला दूजै भरमि पति खोई ॥ २ ॥ किआ द्रिड़ां किआ संग्रहि तिआगी मै ता बूझ न पाई। होहि दइआलु क्रिपा करि हरि जीउ नामो होइ सखाई ॥ ३ ॥ सचा सचु दाता करम बिधाता जिसु भावै तिसु नाइ लाए। गुरू दुआरै सोई बूझै जिसनो आपि बुझाए ॥ ४ ॥ देखि बिसमादु इहु मनु नही चेते आवागउणु संसारा। सतिगुरु सेवे सोई बूझै पाए मोख दुआरा ॥५॥ जिन्ह दरु सूझै से कदे न विगाड़हि सतिगुरि बूझ बुझाई। सचु संजमु करणी किरति कमावहि आवण जाणु रहाई ॥ ६ ॥ से दरि साचै साचु कमावहि जिन गुरमुखि साचु अधारा। मनमुख दूजै भरमि भुलाए ना बूझहि वीचारा ॥ ७ ॥ आपे गुरमुखि आपे देवै आपे करि करि वेखै। नानक से जन थाइ पए है जिन की पति पावै लेखै ॥ ८ ॥ ३ ॥

हे मेरे मन, परमात्मा की कहानी अनिर्वचनीय है। जिस पर हरि की कृपा होती है, वही गुरु द्वारा उस रहस्यमयी कथा को जान पाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परमात्मा गहन, गम्भीर और गुणागार है, गुरु के शब्द द्वारा ही उसे जाना जाता है। जिन्हें शब्द का रहस्य नहीं मिला, वे दीवाने हुए द्वैत-भाव में बहुविध कर्म करते हुए भटकते रहते हैं ॥ १ ॥ हरि-नाम-जल में स्नान करनेवाले जीव निर्मल हैं, उन्हें कोई मलिनता नहीं लगती। नाम के बिना सारा संसार मैला है, द्वैत-भाव में प्रतिष्ठा खो रहा है ॥ २ ॥ क्या दृढ़ाऊँ, क्या त्यागूँ और क्या इकट्ठा करूँ, मैं तो यह सब समझ नहीं पाया। दया करके हरि ने ही नाम से मेरी मैत्री बना

दी ॥ ३ ॥ सत्यस्वरूप कर्मों का रचयिता प्रभु यथेच्छा से किसी को भी हरि-नाम में लीन कर लेता है। गुरु के द्वारा वही इस रहस्य को जानता है, जिसे प्रभु स्वयं ज्ञान देता है ॥ ४ ॥ ऐ मन, तुम आश्चर्य-रूप संसार को देखो, इस बाहर के अस्थिर (आवागमनमय) जगत का खयाल छोड़ दो। सतिगुरु का सेवक ही इस तत्त्व को समझकर मोक्ष को प्राप्त होता है ॥ ५ ॥ जिन्हें एक बार प्रभु का द्वार दिख जाता है, वे सतिगुरु-प्रदत्त ज्ञान से इस स्थिति को कभी बिगड़ने नहीं देते। वे सत्य, संयम, उच्च भक्तिमयी कमाई करते और आवागमन से छुटकारा पा लेते हैं ॥ ६ ॥ जिन जीवों को गुरु के द्वारा सत्य का सहारा मिल जाता है, वे सत्यस्वरूप प्रभु के द्वार पर सत्य की कमाई करते हैं। स्वेच्छाचारी जीव द्वैत-भाव के कारण भ्रमों में भटकते हैं ॥ ७ ॥ गुरु भी स्वयं हरि ही है, वही सब कुछ देता और सृष्टि को बना-बनाकर नज़ारा करता है। गुरु नानक कहते हैं कि वे लोग, जिन्हें स्वयं प्रभु का संरक्षण प्राप्त है, यथास्थान पहुँचते हैं (मोक्ष-लाभ करते हैं) ॥ ८ ॥ ३ ॥

सारग महला ५ असटपदीआ घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ गुसाईं परतापु तुहारो डीठा। करन करावन उपाइ समावन सगल छत्रपति बीठा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ राणा राउ राज भए रंका उनि झूठे कहणु कहाइओ। हमरा राजनु सदा सलामति ता को सगल घटा जसु गाइओ ॥१॥ उपमा सुनहु राजन की संतहु कहत जेत पाहूचा। बेसुमार वड साह दातारा ऊचे ही ते ऊचा ॥ २ ॥ पवनि परोइओ सगल अकारा पावक कासट संगे। नीरु धरणि करि राखे एकत कोइ न किसही संगे ॥ ३ ॥ घटि घटि कथा राजन की चालै घरि घरि तुझहि उमाहा। जीअ जंत सभि पाछै करिआ प्रथमे रिजकु समाहां ॥ ४ ॥ जो किछु करना सु आपे करणा मसलति काहू दीन्ही। अनिक जतन करि करह दिखाए साची साखी चीन्ही ॥ ५ ॥ हरि भगता करि राखे अपने दीनी नामु वडाई। जिनि जिनि करी अवगिआ जन की ते तैं दीए रुढ़ाई ॥ ६ ॥ मुकति भए साध संगति करि तिन के अवगन सभि परहरिआ। तिन कउ देखि भए किरपाला तिन भवसागरु तरिआ ॥ ७ ॥ हम नान्हे नीच तुम्हे बड साहिब कुदरति कउण

बीचारा। मनु तनु सीतलु गुर दरस देखे नानक नामु अधारा ॥ ८ ॥ १ ॥ ॥

हे परमात्मा (सृष्टि के स्वामी), मैंने तुम्हारा प्रताप देखा है। तुम सर्व-समर्थ हो, रचना करके अपने-आप में उसे विलीन कर सकने में शक्तिमान् होकर, सब पर शाहंशाह की तरह आसीन हो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संसार के राजा, राव आदि देखते-देखते रंक भी हो जाते हैं, ये लोग झूठे दावे करते हैं। मेरा राजा सदा स्थायी है, सब लोग उसका यश गाते हैं ॥ १ ॥ हे सन्तो, मेरे राजा की महिमा सुनो, अपनी शक्ति के अनुसार बताता हूँ। वह अनन्त, अमाप्य और ऊँचे से ऊँचा है ॥ २ ॥ उसने समस्त आकारों को पवन (श्वास) में पिरो रखा है, अग्नि को लकड़ी में ही बाँध रखा है (आश्चर्य)। जल और धरती एक जगह रखे हैं, फिर अलग-अलग भी हैं ॥ ३ ॥ सब लोगों में मेरे राजा की कथा कही-सुनी जाती है, घर-घर में उसी का उत्साह है। उसने समस्त जीव बनाने से पूर्व ही उनका पेट भरने का प्रबन्ध कर लिया था ॥ ४ ॥ जो कुछ करता है, वह स्वयं करता है, कोई उसका सलाहकार नहीं (अर्थात् उसे मंत्रियों के परामर्श की अपेक्षा नहीं रहती)। हम अनेक यत्नों द्वारा दिखावा करते हैं, किन्तु यथार्थ की सूझ उसकी सच्ची शिक्षा द्वारा ही होती है ॥ ५ ॥ हरि राजा ने हमें अपना भक्त बनाकर रखा है, स्वयं हमें नाम की बड़ाई दी है। जिसने तुम्हारे भक्तों की भी अवज्ञा की, तुमने उन्हें नष्ट कर दिया ॥ ६ ॥ जो साधुजन की संगति में आकर मुक्ति खोजते थे, उनके सब अवगुण तुमने दूर कर दिये। उन्हें देखकर तुम कृपालु हुए और उन्हें भवसागर से पार कर दिया ॥ ७ ॥ हम छोटे और नीच हैं, तुम बड़े और महान हो, हमारी क्या ताक़त है कि हम तुम्हारी सत्ता पर विचार कर सकें। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु का दर्शन मिलने तथा हरि-नाम का आधार लेने से जीव का तन, मन शीतल होता है ॥ ८ ॥ १ ॥

सारग महला ५ असटपदी घरु ६

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ अगम अगाधि सुनहु जन कथा। पारब्रहम की अचरज सभा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सदा सदा सतिगुर नमसकार। गुर किरपा ते गुन गाइ अपार। मन भीतरि होवै परगासु। गिआन अंजनु अगिआन बिनासु ॥ १ ॥ मिति नाही जा का बिसथारु। सोभा ता की अपर अपार। अनिक रंग जा के गने न जाहि। सोग हरख

दुहहू महि नाहि ।। २ ।। अनिक ब्रहमे जाके बेद धुनि करहि । अनिक महेस बैसि धिआनु धरहि । अनिक पुरख अंसा अवतार । अनिक इंद्र ऊभे दरबार ।। ३ ।। अनिक पवन पावक अरु नीर । अनिक रतन सागर दधि खीर । अनिक सूर ससीअर नखिआति । अनिक देवी देवा बहु भांति ।।४।। अनिक बसुधा अनिक कामधेन । अनिक पारजात अनिक मुखि बेन । अनिक अकास अनिक पाताल । अनिक मुखी जपीऐ गोपाल ।। ५ ।। अनिक सासत्र सिम्रिति पुरान । अनिक जुगति होवत बखिआन । अनिक सरोते सुनहि निधान । सरब जीअ पूरन भगवान ।। ६ ।। अनिक धरम अनिक कुमेर । अनिक बरन अनिक कनिक सुमेर । अनिक सेख नवतन नामु लेहि । पारब्रहम का अंतु न तेहि ।। ७ ।। अनिक पुरीआ अनिक तह खंड । अनिक रूप रंग ब्रहमंड । अनिक बना अनिक फल मूल । आपहि सूखम आपहि असथूल ।। ८ ।। अनिक जुगादि दिनस अरु राति । अनिक परलउ अनिक उपाति । अनिक जीअ जाके ग्रिह माहि । रमत राम पूरन स्रब ठांइ ।। ९ ।। अनिक माइआ जाकी लखी न जाइ । अनिक कला खेलै हरि राइ । अनिक धुनित ललित संगीत । अनिक गुपत प्रगटे तह चीत ।। १० ।। सभ ते ऊच भगत जा कै संगि । आठ पहर गुन गावहि रंगि । अनिक अनाहद आनंद झुनकार । उआ रस का कछु अंतु न पार ।। ११ ।। सति पुरखु सति असथानु । ऊच ते ऊच निरमल निरबानु । अपुना कीआ जानहि आपि । आपे घटि घटि रहिओ बिआपि । क्रिपा निधान नानक दइआल । जिनि जपिआ नानक ते भए निहाल ।। १२ ।। १ ।। २ ।।

ऐ लोगो, प्रभु की अगम, अगाध कथा सुनो । परब्रह्म का सम्पर्क आश्चर्यमय है ।। १ ।। रहाउ ।। सतिगुरु को सदैव मेरा नमस्कार है, उसी की कृपा से अनन्त हरि के गुण गाए हैं । जिससे मन में प्रकाश होता है, ज्ञान का अंजन आँजने से अज्ञान नष्ट हो जाता है ।। १ ।। जिस प्रभु के प्रसार का कोई परिमाप नहीं, उसकी शोभा अनन्त अकलिपत है । जिस प्रभु के अनेक अगणित रंग हैं, जो शोक और हर्ष, दोनों से अतीत है ।।२।। अनेक ब्रह्मा उसी परब्रह्म का यशोगान वेदों के रूप में उच्चारते हैं । अनेक

शिवजी बैठकर उसका ध्यान करते हैं। अनेक पुरुष उसके अंशावतार हैं और अनेक इन्द्र उसके दरबार में आज्ञा-ग्रहणार्थ खड़े रहते हैं॥ ३॥ अनेक प्रकार के पवन, अग्नियाँ और जल (उसी के किए हैं)। अनेक रत्नों तथा दही-दूध के सागर माने गए हैं (ये उसी ने बनाए हैं)। अनेक सूर्य-चन्द्र-नक्षत्र हैं, अनेक प्रकार के देवी-देवता भी मौजूद हैं (जो उसी की सत्ता का प्रमाण हैं)॥ ४॥ अनेक धरतियाँ हैं, अनेक कामधेनुएँ हैं; कल्पवृक्ष भी अनेक हैं और वेणु बजानेवाले कृष्णादि भी अगणित हैं। अनेक आकाश हैं, अनेक पाताल हैं, अनेक मुखों से प्रभु-नाम जपनेवाले भी असंख्य हैं॥५॥ अनेक शास्त्र, स्मृतियाँ, पुराण हैं, कई प्रकार से प्रभु का बखान हो रहा है। गुण-निधान हरि का यश सुननेवाले श्रोता भी अनेक हैं, किन्तु समस्त जीवों का स्वामी एक भगवान है॥ ६॥ धर्मराज एवं कुबेर अनेक हैं, वरुणदेव तथा स्वर्ण-सुमेरु भी अनेक हैं। प्रतिदिन हरि का एक नया नाम लेनेवाले शेषनाग भी कई हैं, किन्तु फिर भी उन संज्ञाओं से परब्रह्म का स्वरूप निश्चित नहीं होता॥ ७॥ अनेक लोक हैं, अनेक खण्ड-मण्डल हैं; इस ब्रह्माण्ड के अनेक रूप-रंग हैं। अनेक वनों में अनेक फल और मूल विद्यमान हैं; प्रभु स्वयं अमूर्त है, मूर्त भी वह स्वयं है॥ ८॥ अनेक युग, दिन और रात हैं, अनेक प्रलय और उत्पत्तियाँ हैं। जिसके घर में अगणित जीव हैं, वह प्रभु सर्व-व्यापक है॥ ९॥ जिसकी अनेक लीलाएँ असूझ हैं और जिसकी अनेक शक्तियाँ जगत में प्रसारित हैं। अनेक ध्वनियों में ललित संगीत गूँजता है, वहाँ चित्रगुप्त-सरीखी कुछ शक्तियाँ गुप्त भी हैं॥ १०॥ इन सबसे ऊँचा वह भक्त है, स्वयं प्रभु जिसके संग विचरता है और जो आठों पहर प्रभु के प्यार में उसकी स्तुति करता है। अनेक अनाहत नाद की झंकारें हैं, उस रस की कोई सीमा नहीं॥ ११॥ सत्पुरुष सचखण्ड में विद्यमान है; वह ऊँचे से ऊँचा और निर्मल-शंकातीत है। वह अपने किए को स्वयं पहचानता है, स्वयं ही घट-घट में व्यापता है। वह कृपा का भण्डार है; गुरु नानक कहते हैं कि जो प्रभु-नाम जपते हैं, वे सदैव उल्लसित होते हैं॥ १२॥ १॥ २॥

सारग छंत महला ५

१ ओं सतिगुर प्रसादि॥ सभ देखीऐ अनभै का दाता। घटि घटि पूरन है अलिपाता। घटि घटि पूरनु करि बिसथीरनु जल तरंग जिउ रचनु कीआ। हभि रस माणे भोग घटाणे आन न बीआ को थीआ। हरि रंगी इक रंगी ठाकुरु संत संगि प्रभु जाता। नानक दरसि लीना जिउ जल मीना सभ

देखीऐ अन भै का दाता ॥ १ ॥ कउन उपमा देउ कवन बडाई। पूरन पूरि रहिओ स्रब ठाई। पूरन मन मोहन घट घट सोहन जब खिचै तब छाई। किउ न अराधहु मिलि करि साधहु घरी मुहतक बेला आई। अरथु दरबु सभु जो किछु दीसै संगि न कछहू जाई। कहु नानक हरि हरि आराधहु कवन उपमा देउ कवन बडाई ॥ २ ॥ पूछउ संत मेरो ठाकुरु कैसा। हींउ अरापउं देहु सदेसा। देहु सदेसा प्रभ जीउ कैसा कह मोहन परवेसा। अंग अंग सुखदाई पूरन ब्रहमाई थान थानंतर देसा। बंधन ते मुकता घटि घटि जुगता कहि न सकउ हरि जैसा। देखि चरित नानक मनु मोहिओ पूछै दीनु मेरो ठाकुरु कैसा ॥ ३ ॥ करि किरपा अपुने पहि आइआ। धंनि सु रिदा जिह चरन बसाइआ। चरन बसाइआ संत संगाइआ अगिआन अंधेरु गवाइआ। भइआ प्रगासु रिदै उलासु प्रभु लोड़ीदा पाइआ। दुखु नाठा सुखु घर महि वूठा महा अनंद सहजाइआ। कहु नानक मै पूरा पाइआ करि किरपा अपुने पहि आइआ ॥ ४ ॥ १ ॥

सब उस निर्भय-पद के देनेवाले प्रभु के दर्शनों को प्राप्त करें। वह प्रभु घट-घट में विद्यमान है, फिर भी सबसे अलिप्त रहता है। घट-घट को उसने भरा है, समूचा विस्तार उसका है और यह जल-तरंग-जैसी रचना उसी की की हुई है (जल-तरंग से प्रतीति और विलीनीकरण का अभिप्राय है)। घट-घट में मुक्ति का आश्रय वही है, उसके अतिरिक्त अन्य कोई नहीं है। अनेक रंगों वाला स्वामी एक रंग है, जोकि सन्तों के सम्पर्क में ही जाना जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि उसके दर्शन की उत्कट इच्छा वैसी ही है जैसी मछली को जल की, वह निर्भय-पद का दाता है ॥ १ ॥ उस परमात्मा की क्या उपमा दूँ, क्या बड़ाई करूँ उसकी ? वह पूर्ण है और सब जगह व्याप्त है। वह सबका मन-मोहन है, घट-घट में शोभता है। जब-जब भी भक्तों द्वारा पुकारा जाता है (खिंचता है), तभी (पीयूषवर्षी मेघ की नाईं) छाया करता है (रक्षा करता है)। साधु-संगति में रहकर, ऐसे कृपा-निधि परमात्मा की क्यों न आराधना की जाय, घड़ी-मुहूर्त में ही मृत्यु-काल आनेवाला है। धन-द्रव्य तथा भौतिक उपकरण, जो भी दीखते हैं, उनमें से कुछ भी साथ नहीं जाता। गुरु नानक कहते हैं कि हरि की आराधना करो, उसे क्या उपमा दी जा सकती है ? उसकी क्या बड़ाई करें ? (वह उपमाओं और बड़ाई की सीमाओं से भी

ऊँचा है) ।। २ ।। ठाकुर कैसा है ? यह सन्तों से पूछता हूँ। मुझे बताओ, मैं उस पर दिल-प्राण अर्पित कर दूँगा। मुझे सूचित करो कि प्रभु कैसा है और उस मोहन (मोह लेनेवाले) का प्रवेश कहाँ है ? वह केवल ब्रह्म सुखदायी है और अंग-अंग तथा सब स्थानों-देशों में व्याप्त है। वह सब बंधनों से मुक्त है, घट-घट में सर्व-कर्ता वही है। मैं कह नहीं सकता कि वह कैसा है ! उसके चरित (लीलाएँ) देखकर नानक का मन मोहित हुआ है, अतः वह दीन होकर पूछता है कि मेरा ठाकुर कैसा है ।। ३ ।। यह उसकी विशिष्ट कृपा है कि वह अपने-आप को प्रकट करता है। वह हृदय धन्य है, जो उसके चरणों में प्रीति करता है। उस प्रभु के चरण सन्तों की संगति में रहनेवाले को मिलते हैं और उसका समस्त अज्ञानांधकार नष्ट हो जाता है। ज्ञान का उजाला होता है, हृदय में उल्लास भर जाता है और प्रभु-मिलन की मनोकामना पूर्ण हो जाती है। दुःख दूर होते हैं, सुख आ बसता है और महा-आनन्दवाली अडोल सहजावस्था प्राप्त होती है। गुरु नानक कहते हैं कि मैंने उस पूर्णब्रह्म को प्राप्त किया है, उसने स्वयं कृपा करके अपने को प्रकट किया है ।। ४ ।। १ ।।

सारंग की वार महला ४ राइ महमे हसने * की धुनि

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। सलोक महला २ ।। गुरु कुंजी पाहू निवलु मनु कोठा तनु छति। नानक गुर बिनु मन का ताकु न उघड़ै अवर न कुंजी हथि ।। १ ।। महला १ ।। न भीजै रागी नादी बेदि। न भीजै सुरती गिआनी जोगि। न भीजै सोगी कीतै रोजि। न भीजै रूपीं मालीं रंगि। न भीजै तीरथि भविऐ नंगि। न भीजै दातीं कीतै पुंनि। न भीजै बाहरि बैठिआ सुंनि। न भीजै भेड़ि मरहि भिड़ि सूर। न भीजै केते होवहि धूड़। लेखा लिखीऐ मन कै भाइ। नानक भीजै साचै नाइ ।। २ ।। महला १ ।। नव छिअ खट का करे बीचारु। निसि दिन उचरै भार अठार। तिनि भी अंतु न पाइआ तोहि। नाम बिहूण मुकति किउ होइ। नाभि वसत ब्रहमै अंतु

* गुरु हरगोबिंद महला ६ ने कोई वाणी नहीं रची, किन्तु वे संगीत-प्रेमी और वीर थे। उन्होंने वारों को गाने के लिए पंजाबी में पाए जानेवाले वीर-प्रसंगों की ध्वनियों पर गुरुवाणी की वारों का निर्देश दिया। 'महमा' और 'हसना' काँगड़ा के दो सरदार थे। अकबर-काल में ये भिड़े थे। उनके युद्ध के गीत की ध्वनि में सारंग की वार गाई जाय, ऐसा निर्देश किया गया है।

न जाणिआ । गुरमुखि नानक नामु पछाणिआ ॥ ३ ॥ ॥ पउड़ी ॥ आपे आपि निरंजना जिनि आपु उपाइआ । आपे खेलु रचाइओनु सभु जगतु सबाइआ । त्रैगुण आपि सिरजिअनु माइआ मोहु वधाइआ । गुरपरसादी उबरे जिन भाणा भाइआ । नानक सचु वरतदा सभ सचि समाइआ ॥ १ ॥

॥ सलोक महला २ ॥ मन को माया का पग-ताला (पशुओं के पैरों को बाँधनेवाला ताला) लगा है और गुरु उस ताले की कुंजी है (मन रूपी कोठरी, जहाँ शरीर की छत है, को माया का ताला लगा है) । गुरु नानक कहते हैं कि गुरु के बिना मन का द्वार नहीं खुल सकता, क्योंकि अन्य किसी के हाथ कुंजी नहीं है ॥ १ ॥ महला १ ॥ परमात्मा संगीत, राग और वेद-पाठ से प्रसन्न नहीं होता, न ही वह ज्ञान और योग में रत होने से ख़ुश होता है । वह प्रतिदिन मुहर्रम मनाने से भी नहीं रीझता और न ही रूप, धन और रंगीनी से ख़ुश होता है । निर्वस्त्र तीर्थों में भ्रमण करने तथा दान-पुण्य करने से भी उसे प्रसन्न नहीं किया जा सकता । अफुर समाधि में बैठने या युद्ध में शूरवीर की तरह मरने से भी वह नहीं रीझता । भस्म चढ़ा लेने (मिट्टी में लिपटने) से भी वह ख़ुश नहीं होता । हमारे अच्छे-बुरे कर्मों का हिसाब मन की अवस्थानुसार लिखा जाता है, अतः प्रभु तो केवल सच्चे मन से हरि-नाम जपने से ही ख़ुश होता है ॥ २ ॥ ॥ महला १ ॥ नौ व्याकरणों, छः शास्त्रों एवं छः वेदांगों का विचार कर लेने, रात-दिन महाभारत के अठारह पर्वों का उच्चारण करनेवाले को भी परमात्मा का भेद नहीं मिलता । हरि-नाम के बिना मुक्ति नहीं होती । कमल-नाभ में बसकर भी ब्रह्मा जिसका अन्त नहीं पा सका, गुरु नानक कहते हैं कि उसे गुरु के द्वारा नाम-साधना से पहचाना जाता है ॥ ३ ॥ ॥ पउड़ी ॥ परमात्मा मायातीत एवं स्वयम्भू है; उसी ने सारे जगत का यह प्रकृति-खेल रचाया है । प्रकृति के तीनों गुणों का सृजन उसी ने किया है और मोह-माया का रूप उसी ने दिया है । किन्तु जो समर्पित जीव हैं और जो अपने-आप को प्रभु के हुकुम पर छोड़ देते हैं, वे गुरु-कृपा से (माया के फंदे से) बच जाते हैं । गुरु नानक कहते हैं कि सत्यस्वरूप प्रभु का ही सब प्रसार है, सब उसी में विलीन हैं ॥ १ ॥

॥ सलोक महला २ ॥ आपि उपाए नानका आपे रखै वेक । मंदा किसनो आखीऐ जां सभना साहिबु एकु । सभना साहिबु एकु है वेखै धंधै लाइ । किसै थोड़ा किसै अगला खाली कोई नाहि । आवहि नंगे जाहि नंगे विचे करहि विथार ।

नानक हुकमु न जाणीऐ अगै काई कार ॥१॥ महला १॥ जिनसि थापि जीआं कउ भेजै जिनसि थापि लै जावै। आपे थापि उथापै आपे एते वेस करावै। जेते जीअ फिरहि अउधूती आपे भिखिआ पावै। लेखै बोलणु लेखै चलणु काइतु कीचहि दावे। मूलु मति परवाणा एहो नानकु आखि सुणाए। करणी ऊपरि होइ तपावसु जे को कहै कहाए॥ २॥ ॥ पउड़ी॥ गुरमुखि चलतु रचाइओनु गुण परगटी आइआ। गुरबाणी सद उचरै हरि मंनि वसाइआ। सकति गई भ्रमु कटिआ सिव जोति जगाइआ। जिन कै पोतै पुंनु है गुरु पुरखु मिलाइआ। नानक सहजे मिलि रहे हरि नामि समाइआ॥ २॥

॥ सलोक महला २ ॥ परमात्मा सबको उपजाता और अलग-अलग रखता है। सबका स्वामी वही एक परमात्मा है, बुरा किसे कहें ? सबका मालिक एक है, उसी ने सबको अपने-अपने कर्म से लगा रखा है। किसी को कम दिया है, किसी को अधिक दिया है, ख़ाली कोई नहीं। सब नंगे (ख़ाली हाथ) आते हैं, नंगे ही जाते भी हैं; जब तक जगत में रहते हैं, आडम्बर भरते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि जो जीव उसका हुकुम नहीं पहचानते, आगे कौन जाने उन्हें किस काम से लगा देगा ॥ १ ॥ ॥ महला १ ॥ विभिन्न शरीर बनाकर जीवों को भेजता और अन्य शरीरों के लिए पुनः ले जाता है। वह बनाता है और मिटाता भी है, अपने-आप अनेक वेष बनवाता है। जो जीव भिक्षा-जीवी हैं, उन्हें भिक्षा देनेवाला भी प्रभु स्वयं है। हमारा बोलना-चलना सब हिसाब से बँधा है, फिर किसलिए (लम्बे) दावे किए जायँ ? गुरु नानक मूल की स्वीकार्य मति देते हैं कि जो भी कुछ कोई करता है, उसका समूचा न्याय उसके कर्मानुसार होता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जो गुरु-मतानुसार आचरण करते हैं, वे गुणयुक्त हो जाते हैं; सदा गुरुवाणी का उच्चारण करते एवं मन में हरि को बसाते हैं। उसकी माया मिटती तथा भ्रम कट जाते हैं; उसकी आत्मिक ज्योति आलोकित होती है। जिनके कोष में पुण्य है, उन्हें समर्थ गुरु मिलता है। गुरु नानक कहते हैं कि वे सहजावस्था को प्राप्त करके हरि-नाम में ही विलीन हो जाते हैं ॥ २ ॥

॥ सलोक महला २ ॥ साह चले वणजारिआ लिखिआ देवै नालि। लिखे उपरि हुकमु होइ लईऐ वसतु सम्हालि। वसतु लई वणजारई वखरु बधा पाइ। केई लाहा लै चले इकि

चले मूलु गवाइ । थोड़ा किनै न मंगिओ किसु कहीऐ साबासि । नदरि तिना कउ नानका जि साबतु लाए रासि ॥ १ ॥ ॥ महला १ ॥ जुड़ि जुड़ि विछुड़े विछुड़ि जुड़े । जीवि जीवि मुए मुए जीवे । केतिआ के बाप केतिआ के बेटे केते गुर चेले हूए । आगै पाछै गणत न आवै किआ जाती किआ हुणि हूए । सभु करणा किरतु करि लिखीऐ करि करि करता करे करे । मनमुखि मरीऐ गुरमुखि तरीऐ नानक नदरी नदरि करे ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ मनमुखि दूजा भरमु है दूजै लोभाइआ । कूड़ु कपटु कमावदे कूड़ो आलाइआ । पुत्र कलत्रु मोहु हेतु है सभु दुखु सबाइआ । जम दरि बधे मारीअहि भरमहि भरमाइआ । मनमुखि जनमु गवाइआ नानक हरि भाइआ ॥ ३ ॥

॥ सलोक महला २ ॥ शाह (प्रभु) के निकट से व्यापारी (जीव) चला है, साथ में उसने हुण्डी लिखकर दे दी है। जीव-व्यापारी अपनी रुचि-अनुसार अच्छी-बुरी वस्तु ख़रीदता है, हुण्डी के अनुसार उसकी इच्छा पर वस्तु मिलती रहती है। सब व्यापारी इस प्रकार वस्तु ख़रीदते हैं और माल लाद लेते हैं। उनमें से कुछ लाभ कमाते हैं, कुछ मूलधन भी गँवा बैठते हैं। (इन दोनों में) किसे शाबाशी दें, थोड़ा तो किसी ने नहीं लिया (हरि-नाम एवं माया, दोनों का भरपूर व्यापार हुआ)। गुरु नानक कहते हैं कि महिमा उन्हीं की है, जो अपने जीवन-मनोरथ की राशि पूरी की पूरी बचाकर ले आते हैं ॥ १ ॥ महला १ ॥ जीव और शरीर अनेकधा मिलते, बिछुड़ते, पुनः मिलते हैं (अर्थात् जन्म-मरण में पड़े रहते हैं, कभी किसी योनि में होते हैं, कभी किसी योनि में)। जन्मते-मरते, मरते-जन्मते हैं। किसी के बाप बनते हैं, किसी के पुत्र; कभी गुरु होते हैं, कभी चेले। आगे-पीछे कोई पता नहीं चलता— क्या थे, क्या हो गए, या क्या हो जायँगे। समूची स्थिति कर्मलिख के अनुसार बनती है। गुरु नानक कहते हैं कि मन-मतानुसार चलने से जीव डूबता और गुरु-मतानुसार आचरण करने से प्रभु-कृपा से जीवोद्धार होता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ मनमुख द्वैत के भ्रम में पड़ा दूसरे तत्त्वों में भटक जाता है। वह मिथ्या जीवन जीता, कपट करता और झूठ बोलता है। पुत्र-स्त्री में उसका मोह बढ़ता है और वह दुःखी होता है। यमदूतों के द्वार पर बाँधकर उसे दण्ड दिया जाता है और वह भ्रम में भूला रहता है। गुरु नानक कहते हैं कि मनमुख इस प्रकार अपना जन्म बरबाद करता है, ऐसी ही प्रभु की इच्छा होती है ॥ ३ ॥

॥ सलोक महला २ ॥ जिन वडिआई तेरे नाम की ते रते मन माहि । नानक अंम्रितु एकु है दूजा अंम्रितु नाहि । नानक अंम्रितु मनै माहि पाईऐ गुरपरसादि । तिन्ही पीता रंग सिउ जिन्ह कउ लिखिआ आदि ॥ १ ॥ महला २ ॥ कीता किआ सालाहीऐ करे सोइ सालाहि । नानक एकी बाहरा दूजा दाता नाहि । करता सो सालाहीऐ जिनि कीता आकारु । दाता सो सालाहीऐ जि सभसै दे आधारु । नानक आपि सदीव है पूरा जिसु भंडारु । वडा करि सालाहीऐ अंतु न पारावारु ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हरि का नामु निधानु है सेविऐ सुखु पाई । नामु निरंजनु उचरां पति सिउ घरि जांई । गुरमुखि बाणी नामु है नामु रिदै वसाई । मति पंखेरू वसि होइ सतिगुरू धिआईं । नानक आपि दइआलु होइ नामे लिव लाई ॥ ४ ॥

॥ सलोक महला २ ॥ जिन जीवों ने तुम्हारे (प्रभु के) नाम की बड़ाई पाई है, वे मन में हरिनाम-रत रहते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि अमृत-तत्त्व एक ही होता है, उसका दूसरा कोई अंग नहीं। वह अमृत-तत्त्व गुरु की कृपा से मन में ही प्राप्त होता है। जिनके भाग्य में लिखा है, वे प्रेम से इसे (अमृत) पीते हैं ॥ १ ॥ महला २ ॥ किए गए (जीव) की क्या प्रशंसा करें, करनेवाले (प्रभु) की स्तुति करो। गुरु नानक कहते हैं कि एक परमात्मा के अतिरिक्त दूसरा कोई दाता नहीं। वह कर्तापुरुष है, उसी ने समूची सृष्टि की रचना की है। उसी दाता की स्तुति करो, जो सबका अवलम्बन है। गुरु नानक कहते हैं कि वह स्थायी (अनश्वर) है, उसका भण्डार पूर्ण है; उसी की स्तुति कीजिए, उसका कोई अन्त नहीं (वह अनन्त है) ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हरि-नाम सुखों का भण्डार है, उसका सेवन करने से सुख प्राप्त होता है। परमात्मा का नाम उच्चारण करने से जीव प्रतिष्ठापूर्वक अपने मूल तक पहुँचता है। गुरु का उपदेश ही नाम है, जो मैंने हृदय में बसा रखा है। सतिगुरु का ध्यान करने से मन-पक्षी वश में आता है। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु स्वयं जिस पर दयालु होता है, वही हरि-नाम में मन रमा पाता है ॥ ४ ॥

॥ सलोक महल २ ॥ तिसु सिउ कैसा बोलणा जि आपे जाणै जाणु । चीरी जा की ना फिरै साहिबु सो परवाणु । चीरी जिस की चलणा मीर मलक सलार । जो तिसु भावै नानका साई भली कार । जिन्हा चीरी चलणा हथि तिना किछु

नाहि । साहिब का फुरमाणु होइ उठी कर लै पाहि । जेहा चीरी लिखिआ तेहा हुकमु कमाहि । घले आवहि नानका सदे उठी जाहि ॥ १ ॥ महला २ ॥ सिफति जिना कउ बखसीऐ सेई पोतेदार । कुंजी जिन कउ दितीआ तिन्हा मिले भंडार । जह भंडारी हू गुण निकलहि ते कीअहि परवाणु । नदरि तिन्हा कउ नानका नामु जिन्हा नीसाणु ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ नामु निरंजनु निरमला सुणिऐ सुखु होई । सुणि सुणि मंनि वसाईऐ बूझै जनु कोई । बहदिआ उठदिआ न विसरै साचा सचु सोई । भगता कउ नाम अधारु है नामे सुखु होई । नानक मनि तनि रवि रहिआ गुरमुखि हरि सोई ॥ ५ ॥

॥ सलोक महल २ ॥ उसके (प्रभु के) सामने क्या कहना (कोई वश नहीं चलता), वह तो स्वयं सर्वज्ञाता एवं अन्तर्यामी है। जिसका हुकुम अटल है, वही वास्तविक स्वामी माना जा सकता है। जिसके हुकुम से सब चलते हैं, वही मुखिया, सेनापति या मलिक होता है। गुरु नानक कहते हैं कि जो उसे भाता है, पसन्द होता है, वह स्थिति उत्तम है। जिनके चलने का हुकुम होता है, उनके अपने हाथ कुछ नहीं होता। मालिक का हुकुम आता है, तो वे उठकर रास्ते पर लग जाते हैं (हुकुमानुसार आना-जाना होता है, उनके वश कुछ नहीं)। जैसा चिट्ठी में लिखा होता है, वैसा हुकुम उन्हें मानना ही होता है। वे प्रभु के भेजने पर शरीर धारण करते हैं और बुलावा आने पर चुपचाप उठकर चल देते हैं ॥ १ ॥ महला २ ॥ जिन्हें प्रभु ने स्वयं अपनी बड़ाई प्रदान की है, वे ही भण्डारी हैं। जिनके पास कुंजी (हरि-नाम) होती है, वे ही भण्डार का माल प्राप्त करते हैं। जिन भण्डारियों (जीवों) में गुण झलकते हैं, वे ही दरबार में स्वीकार होते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि कृपा की दृष्टि उन्हीं पर होती है, जो हरि-नाम की पताका धारण करते हैं ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ मायातीत प्रभु का निर्मल नाम सुनकर सुख प्राप्त होता है। उसे सुनकर मन में बसा लो, कोई विरला ही उसकी सही पहचान करता है। वह उठते-बैठते कभी नहीं भूलता, वह नित्य सत्य-स्वरूप है। भक्तों का एकमात्र आधार हरि-नाम ही है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरुमुख जीवों के मन-तन में हरि स्वयं रमता है ॥ ५ ॥

॥ सलोक महला १ ॥ नानक तुलीअहि तोल जे जीउ पिछै पाईऐ । इकसु न पुजहि बोल जे पूरे पूरा करि मिलै । वडा आखणु भारा तोलु । होर हउली मती हउले बोल ।

धरती पाणी परबत भारु। किउ कंडै तोले सुनिआरु। तोला मासा रतक पाइ। नानक पुछिआ देइ पुजाइ। मूरख अंधिआ अंधी धातु। कहि कहि कहणु कहाइनि आपु॥ १॥ ॥ महला १॥ आखणि अउखा सुनणि अउखा आखि न जापी आखि। इकि आखि आखहि सबदु भाखहि अरध उरध दिनु राति। जे किहु होइ त किहु दिसै जापै रूपु न जाति। सभि कारण करता करे घट अउघट घट थापि। आखणि अउखा नानका आखि न जापै आखि॥ २॥ पउड़ी॥ नाइ सुणिऐ मनु रहसीऐ नामे सांति आई। नाइ सुणिऐ मनु त्रिपतीऐ सभ दुख गवाई। नाइ सुणिऐ नाउ ऊपजै नामे वडिआई। नामे ही सभ जाति पति नामे गति पाई। गुरमुखि नामु धिआईऐ नानक लिव लाई॥ ६॥

॥ सलोक महला १॥ गुरु नानक का कथन है कि पूरा तुलने (पूरा उतरने) के लिए दिल की लग्न को पीछे के पलड़े में रखना होता है। (दिल की लग्न के अतिरिक्त) स्तुति की तुलना किसी अन्य तत्त्व से सम्भव नहीं, जो कि पूर्ण परमेश्वर को पूरी तरह मिला सकता हो। प्रभु की स्तुति करने में बड़ाई है, यही सबसे भारी पड़ती है; अन्य सब कुछ बोलना-विचारना हल्कापन है। प्रभु की स्तुति धरती, पानी, पर्वत के समान बोझल है; यह सुनार के तराज़ू (काँटा) पर क्योंकर तुल सकती है? कर्म-काण्ड तोले-माशे के समान हल्के मोल के होते हैं, किन्तु सुनार (कर्म-काण्डी) पूछने पर तोले-माशे अर्थात् पुण्य-कर्मों को ही बड़ा बताकर घर पूरा कर देता है। गुरु नानक कहते हैं कि अज्ञानांध जीवों की भाग-दौड़ भी अन्धी होती है, वे आत्म-प्रचार द्वारा ही अपने को प्रकट करते हैं॥ १॥ ॥ महला १॥ कहना-सुनना बड़ा कठिन है, केवल आत्म-प्रचार द्वारा प्रभु को अनुभव नहीं किया जा सकता। रात-दिन में सीधे-उलटे होकर एकाध वचन कर पाते हैं, किन्तु उसकी कोई रूप-जाति हो तो कहने से दिखाई पड़े। वह परमकर्ता ही सब कुछ करता है। सरल-कठोर, छोटे-बड़े सब रूप वह स्वयं बनाता है। गुरु नानक कहते हैं कि उसकी महिमा को कहा नहीं जा सकता, न ही वह अनुभव शब्दों में बाँधा जा सकता है॥ २॥ पउड़ी॥ हरिनाम-श्रवण से मन में शान्ति और उल्लास आता है। प्रभु-नाम सुनने से मन तृप्त होता और दुःख दूर होता है। हरि-नाम सुनने से नाम होता है (प्रसिद्धि), नाम की प्रतिष्ठा सर्वोपरि है। प्रभु का नाम ही हमारी जाति, सम्मान और उद्धारक तत्त्व है। गुरु

नानक कहते हैं कि गुरु के माध्यम से हरि-नाम का ध्यान करना सीखो और परमात्मा में लीन रहो ॥ ६ ॥

॥ सलोक महला १ ॥ जूठि न रागीं जूठि न वेदीं। जूठि न चंद सूरज की भेदी। जूठि न अंनी जूठि न नाई। जूठि न मीहु वर्हिऐ सभ थाई। जूठि न धरती जूठि न पाणी। जूठि न पउणै माहि समाणी। नानक निगुरिआ गुणु नाही कोइ। मुहि फेरिऐ मुहु जूठा होइ ॥ १ ॥ महला १ ॥ नानक चुलीआ सुचीआ जे भरि जाणै कोइ। सुरते चुली गिआन की जोगी का जतु होइ। ब्रहमण चुली संतोख की गिरही का सतु दानु। राजे चुली निआव की पड़िआ सचु धिआनु। पाणी चितु न धोपई मुखि पीतै तिख जाइ। पाणी पिता जगत का फिरि पाणी सभु खाइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ नाइ सुणिऐ सभ सिधि है रिधि पिछै आवै। नाइ सुणिऐ नउनिधि मिलै मन चिंदिआ पावै। नाइ सुणिऐ संतोखु होइ कवला चरन धिआवै। नाइ सुणिऐ सहजु ऊपजै सहजे सुखु पावै। गुरमती नाउ पाईऐ नानक गुण गावै ॥ ७ ॥

॥ सलोक महला १ ॥ राग-संगीत, वेद-पाठ आदि में कोई जूठन (निंदनीय-तत्त्व) नहीं। चाँद-सूर्य के कारण ऋतुओं के परिवर्तन में भी कुछ अविचारित नहीं। अन्न और स्नान में जूठन नहीं, सब जगह बरसने वाली वर्षा में कोई जूठन नहीं, धरती-पानी में जूठन नहीं, न ही सर्व-व्यापक पवन में कुछ जूठन है। गुरु नानक कहते हैं कि निगुरे मनमुखी जीवों में कोई गुण नहीं होता, उन्हें मुँह लगाने मात्र से ही मुँह जूठा हो जाता है (अर्थात् मनमुखी आचरण सर्वाधिक निन्दनीय है) ॥ १ ॥ ॥ महला १ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि अंजुली तभी महत्त्व रखती है, यदि किसी को सही तौर पर भरनी आती हो। विद्वान् पण्डित की अंजुली विचारपूर्ण आचरण में है, जबकि योगी की अंजुली संगत काम-रहित जीवन में है (हमारे यहाँ संकल्प लेते समय अंजुली में जल लेकर छोड़ने की प्रथा है। यहाँ उन्हीं संकल्पों की सत्यपरकता की ओर संकेत है)। ब्राह्मण का संकल्प संतोष और गृहस्थी का पुण्य-दान है। राजा की अंजुली न्याय करने एवं पढ़ने-लिखनेवाले ध्यान लगाने में है। पानी से मन धुलता, भले ही मुँह से पीने पर प्यास बुझती है। पानी सब रचना का मूल है और अन्ततः पानी ही प्रलय का कारण बनता है। [भाव यह है कि समाज में जन्म और मृत्यु के समय कई सूतक (अपावनताएँ) मानी जाती हैं,

पानी रचना और प्रलय का कारण है, फिर भला पानी कैसे पवित्र हो सकता है ? अतः पानी की अंजुली संकल्प के लिए पर्याप्त नहीं] ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ प्रभु का नाम सुनने से सब सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं, रिद्धि उनका अनुसरण करती हैं। नाम-श्रवण से समस्त ऐश्वर्य मिलते हैं, मनोवांछित फलों की प्राप्ति होती है। हरि-नाम सुनने से सन्तोष उपजता है, माया भी समर्पित हो जाती है। नाम सुनने से अटलता, अडिगता मिलती है, उसी में परमानन्द है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु के उपदेशों से प्रभु-नाम प्राप्त होता है और सब उसी का गुण गाते हैं ॥ ७ ॥

॥ सलोक महला १ ॥ दुख विचि जंमणु दुखि मरणु दुखि वरतणु संसारि। दुखु दुखु अगै आखीऐ पढ़ि पढ़ि करहि पुकार। दुख कीआ पंडा खुल्हीआ सुखु न निकलिओ कोइ। दुख विचि जीउ जलाइआ दुखीआ चलिआ रोइ। नानक सिफती रतिआ मनु तनु हरिआ होइ। दुख कीआ अगी मारीअहि भी दुख दारू होइ ॥ १ ॥ महला १ ॥ नानक दुनीआ भसु रंगु भसू हू भसु खेह। भसो भसु कमावणी भी भसु भरीऐ देह। जा जीउ विचहु कढीऐ भसू भरिआ जाइ। अगै लेखै मंगिऐ होर दसूणी पाइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ नाइ सुणिऐ सुचि संजमो जमु नेड़ि न आवै। नाइ सुणिऐ घटि चानणा आन्हेरु गवावै। नाइ सुणिऐ आपु बुझीऐ लाहा नाउ पावै। नाइ सुणिऐ पाप कटीअहि निरमल सचु पावै। नानक नाइ सुणिऐ मुख उजले नाउ गुरमुखि धिआवै ॥ ८ ॥

॥ सलोक महला १ ॥ संसार का समूचा व्यवहार, जन्म-मरण सब दुःखपूर्ण है। दुःख ही दुःख को बताता, पढ़ता और पुकार करता है (अर्थात् पारस्परिक सब सम्बन्ध भी दुःख पर ही आश्रित हैं)। संसार में दुःख के ही भण्डार खुले हैं (पंडां = गठरियाँ), उनमें कोई सुख नहीं दीख पड़ता। मनुष्य दुःख में मन जला रहा है और दुःखियों के प्रति करुणा में आँसू बहाता है। गुरु नानक कहते हैं कि जो जीव हरिगुण-गान में रत है, उसका तन-मन प्रफुल्लित रहता है। दुःख की अग्नि में जलते जीवों की औषध भी दुःख में ही है ॥ १ ॥ महला ॥ १ ॥ गुरु नानक का कथन है कि संसार में सब धूल है, यहाँ की रंगरलियाँ और प्रेम भी धूल-समान है। हमारी सांसारिक कमाई धूल है और यह सुन्दर शरीर भी धूल की ढेरी के समान ही है। इसमें से आतमा निकाल दी जाय तो शेष मिट्टी ही भरी समझिए। आगे जब कर्मों का हिसाब होता है तो दस गुणा राख

और पड़ती है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ प्रभु के नाम-श्रवण से सदैव पवित्रता और संयम मिलता है, यमदूत निकट नहीं आ पाते। नाम सुनने से अन्तर्मन में उजाला होता है, अज्ञान का अँधेरा दूर होता है। प्रभु-नाम सुनने से आत्म-ज्ञान मिलता है और हरि-नाम का लाभ प्राप्त होता है। नाम सुनने से पाप कटते हैं और निर्मल पावन जीवन मिलता है। गुरु नानक कहते हैं कि जो गुरु के द्वारा हरि-नाम की उपासना करता है, उनका मुख उज्ज्वल हो जाता है (वे निष्कलंक होते हैं) ॥ ८ ॥

॥ सलोक महला १ ॥ घरि नाराइणु सभा नालि। पूज करे रखै नावालि। कुंगू चंनणु फुल चड़ाए। पैरी पै पै बहुतु मनाए। माणूआ मंगि मंगि पैन्है खाइ। अंधी कंमी अंध सजाइ। भुखिआ देइ न मरदिआ रखै। अंधा झगड़ा अंधा सथै ॥ १ ॥ महला १ ॥ सभे सुरती जोग सभि सभे बेद पुराण। सभे करणे तप सभि सभे गीत गिआन। सभे बुधी सुधि सभि सभि तीरथ सभि थान। सभि पातिसाहीआ अमर सभि सभि खुसीआ सभि खान। सभे माणस देव सभि सभे जोग धिआन। सभे पुरीआ खंड सभि सभे जीअ जहान। हुकमि चलाए आपणै करमी वहै कलाम। नानक सचा सचि नाइ सचु सभा दीबानु ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ नाइ मंनिऐ सुखु ऊपजै नामे गति होई। नाइ मंनिऐ पति पाईऐ हिरदै हरि सोई। नाइ मंनिऐ भवजलु लंघीऐ फिरि बिघनु न होई। नाइ मंनिऐ पंथु परगटा नामे सभ लोई। नानक सतिगुरि मिलिऐ नाउ मंनीऐ जिन देवै सोई ॥ ९ ॥

॥ सलोक महला १ ॥ कर्मकाण्डी पण्डित घर में नारायण की मूर्ति रखते हैं, उनके सभासदों (अन्य देवताओं) की मूर्तियाँ भी होती हैं। वह उनकी पूजा करता एवं स्नान करवाता है। उन पर केशर, चन्दन, फूल चढ़ाता है और उनके चरण पकड़-पकड़कर उनकी मन्नतें करता है। मनुष्यों से माँग-माँगकर खाता है (भाव यह है कि ईश्वर घर में हो तो मनुष्यों से माँगने का क्या काम ?) अज्ञानपूर्ण कर्म में अन्ध दण्ड भी मिलता है। पत्थर की मूर्तियाँ न तो भूखे को भोजन देती हैं और न ही मरते हुए को बचाती हैं; फिर यह अन्धों की सभा में अज्ञान का झगड़ा क्यों ? ॥१॥ ॥ महला १ ॥ सब पाण्डित्य, योग, वेद-पुराण का ज्ञान, तपस्या करना या गीता-ज्ञान आदि; समस्त शुद्ध बुद्धि, पावन तीर्थ, पवित्र स्थान; सब बादशाहतें, प्रशासन, खुशियाँ, षट्रस-भोजन; सब मनुष्य, देवता और

साधक; खण्डों-मण्डलों की नगरियाँ, जहान के समस्त जीव, इन सबको परमात्मा अपने हुकुम में चलाता और जीवों को कर्मानुसार फल देता है। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा पूर्ण सत्य है, उसका नाम और उसका दरबार भी सत्य है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हरि-नाम के मनन से सुख उपजता है, नाम में ही मुक्ति की सम्भावना निहित है। नाम के मनन से प्रतिष्ठा मिलती है और हृदय में हरि बसता है। नाम-मनन से संसार-सागर से पार हुआ जाता है, दोबारा कभी विघ्न नहीं पड़ते। प्रभुनाम-मनन से राह स्पष्ट होती है, नाम में ही समूचा प्रकाश है। गुरु नानक कहते हैं कि सतिगुरु-मिलन से ही प्रभु-नाम का मनन सम्भव है; परमात्मा जिसे यह अवसर देता है, वही पा सकता है ॥ ९ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ पुरीआ खंडा सिरि करे इक पैरि धिआए। पउणु मारि मनि जपु करे सिरु मुंडी तलै देइ। किसु उपरि ओहु टिक टिकै किसनो जोरु करेइ। किसनो कहीऐ नानका किसनो करता देइ। हुकमि रहाए आपणै मूरखु आपु गणेइ ॥ १ ॥ म० १ ॥ है है आखां कोटि कोटि कोटी हू कोटि कोटि। आखूं आखां सदा सदा कहणि न आवै तोटि। ना हउ थकां न ठाकीआ एवड रखहि जोति। नानक चसिअहु चुख बिंद उपरि आखणु दोसु ॥२॥ पउड़ी ॥ नाइ मंनिऐ कुलु उधरै सभु कुटंबु सबाइआ। नाइ मंनिऐ संगति उधरै जिन रिदै वसाइआ। नाइ मंनिऐ सुणि उधरे जिन रसन रसाइआ। नाइ मंनिऐ दुख भुख गई जिन नामि चितु लाइआ। नानक नामु तिनी सालाहिआ जिन गुरू मिलाइआ ॥ १० ॥

॥ सलोक म० १ ॥ पवित्र स्थानों, सृष्टि के खण्डों पर विजय पा ले, एक पाँव पर खड़ा तपस्या करे। प्राणायाम करके जप करे या शीर्षासन करके खड़ा रहे, किसी भी विधि का वह आश्रय ले, किसी के बल पर कुछ भी करे, किन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि प्रभु किस पर सन्तुष्ट होकर उसे देता है। परमात्मा अपनी इच्छा से सब कुछ चला रहा है, मूर्ख मनुष्य उसे अपनी शक्ति की उपलब्धि मानता है ॥ १ ॥ ॥ म० १ ॥ यदि करोड़ों-करोड़ों बार हरि के अस्तित्व की बात कहता रहूँ, मुँह से उसके होने की बात सदा करूँ और इस बात की कभी कमी न हो। यदि मुझे इतना बल मिले कि मैं यह कहते कभी न थकूँ, न ही किसी के रोकने से रुकूँ (तो भी तुम्हारी स्तुति का अंश भी पूर्ण नहीं होता) ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ प्रभु-नाम का मनन करने से समूचे कुटुम्ब का उद्धार होता है।

नाम के मनन से हृदय में प्रभु का विश्वास लानेवाले जन का उद्धार हो जाता है। हरि-नाम का मनन-श्रवण करने से सरस जिह्वा वालों का उद्धार होता है (जो जीभ से हरि-नाम लेते हैं)। हरिनाम-मनन से तथा चित्त में उसकी धारणा से सब दुःख और तृष्णा नष्ट होते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि जिसे गुरु मिल जाता है, (सही अर्थों में) वही नाम का यशोगान करता है ॥ १० ॥

॥ सलोक म० १ ॥ सभे राती सभि दिह सभि थिती सभि वार। सभे रुती माह सभि सभि धरतीं सभि भार। सभे पाणी पउण सभि सभि अगनी पाताल। सभे पुरीआ खंड सभि सभि लोअ लोअ आकार। हुकमु न जापी केतड़ा कहि न सकीजै कार। आखहि थकहि आखि आखि करि सिफतीं वीचार। त्रिणु न पाइओ बपुड़ी नानकु कहै गवार ॥१॥ म० १ ॥ अखीं परणै जे फिरां देखां सभु आकारु। पुछा गिआनी पंडितां पुछा बेद बीचार। पुछा देवां माणसां जोध करहि अवतार। सिध समाधी सभि सुणी जाइ देखां दरबारु। अगै सचा सचि नाइ निरभउ भै विणु सारु। होर कची मती कचु पिचु अंधिआ अंधु बीचारु। नानक करमी बंदगी नदरि लंघाए पारि ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ नाइ मंनिऐ दुरमति गई मति परगटी आइआ। नाउ मंनिऐ हउमै गई सभि रोग गवाइआ। नाइ मंनिऐ नामु ऊपजै सहजे सुखु पाइआ। नाइ मंनिऐ सांति ऊपजै हरि मंनि वसाइआ। नानक नामु रतंनु है गुरमुखि हरि धिआइआ ॥ ११ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि यदि सब रात, सब दिन, तिथियों, वारों, ऋतुओं, महीनों, सब धरतियों, सब जलों, अग्नियों, पातालों, पावन नगरियों, खण्ड-मण्डलों और विभिन्न आकार के लोकों में जब तक प्रभु के हुकुम की पहचान नहीं आती, तब तक कोई कुछ नहीं कह सकता। यशोगान करने और तत्व-विचार करनेवाले स्थिति को कह-कह कर थक गए हैं, किन्तु उन गँवारों ने तिल भर भी प्रभु के रहस्य को नहीं समझा ॥ १ ॥ म० १ ॥ यदि मैं आँखों के बल चलूँ और संसार के समस्त आकारों को देखूँ; ज्ञानी पण्डितों से प्रभु के रहस्य के सम्बन्ध में पूछूँ, वेदों में दिए तथ्यों पर विचार करूँ; देवताओं, मनुष्यों तथा अवतारी योद्धाओं से पूछ लूँ। सब प्रकार की समाधियाँ लगाऊँ, सिद्धि पा लूँ या प्रभु के दरबार की शोभा देख सकूँ। निर्भय भाव से सत्यनाम का भजन और मनन कर लूँ— द्वैतभाव की बंदगी निर्बुद्धि कच्ची और अज्ञानपूर्ण

होती है। गुरु नानक कहते हैं कि आराधना भी प्रभु की दया से होती है, उसकी एक कृपा-दृष्टि मनुष्य को मुक्ति प्रदान कर देती है॥ २ ॥
॥ पउड़ी ॥ प्रभु-नाम का मनन करने से दुर्बुद्धि नष्ट होती है, विवेक जाग्रत् होता है। हरिनाम-मनन से अहम्-भाव दूर होता और सब कष्ट मिटते हैं। नाम के मनन से नामी का सामीप्य मिलता है और सहजावस्था में परम सुखोपलब्धि होती है। नाम-मनन से शांति उपजती है और प्रभु स्वयं चित्त में निवास करता है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु के द्वारा हरि का ध्यान करने से ही प्रभुनाम-रत्न की प्राप्ति होती है॥ ११ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ होरु सरीकु होवै कोई तेरा तिसु अगै तुधु आखां। तुधु अगै तुधै सालाही मै अंधे नाउ सुजाखा। जेता आखणु साही सबदी भाखिआ भाइ सुभाई। नानक बहुता एहो आखणु सभ तेरी वडिआई॥ १ ॥ म० १ ॥ जां न सिआ किआ चाकरी जां जंमे किआ कार। सभि कारण करता करे देखै वारो वार। जे चुपै जे मंगिऐ दाति करे दातारु। इकु दाता सभि मंगते फिरि देखहि आकारु। नानक एवै जाणीऐ जीवै देवणहारु॥ २ ॥ पउड़ी ॥ नाइ मंनिऐ सुरति ऊपजै नामे मति होई। नाइ मंनिऐ गुण उचरै नामे सुखि सोई। नाइ मंनिऐ भ्रमु कटीऐ फिरि दुखु न होई। नाइ मंनिऐ सालाहीऐ पापां मति धोई। नानक पूरे गुर ते नाउ मंनीऐ जिन देवै सोई॥ १२ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ हे प्रभु, यदि कोई अन्य तुम्हारा शरीक (प्रतिद्वंद्वी) हो, तो उसके पास तुम्हारी बात करूँ। तुम्हारे सम्मुख, तुम्हारी स्तुति करता हूँ। अज्ञान के कारण मैं अंधा हूँ, नाम मेरा सुनयन रख लिया है। जो कुछ कह सकता हूँ, वह सब शब्दों से ही होता है, इसलिए कहना भी अपने-अपने स्वभाव से होता है। किन्तु गुरु नानक कहते हैं कि अधिकतर यही कहना होता है कि सब उसी प्रभु की बड़ाई है॥१॥
॥ म० १ ॥ जब जीव की हस्ती न थी, तब क्या करता था और अब जन्म लेने पर क्या कर्म कर सकता है (जीव के वश कुछ नहीं)। सब कुछ कर्ता स्वयं करता और बार-बार उसे बदलता है। चुप रहें या माँगते रहें, वह अपनी मर्ज़ी से ही देता है। सारी सृष्टि घूमकर देख लो, (पता चलेगा कि) एक ही दाता है, अन्य सब भिखारी हैं। यही पता चलता है, गुरु नानक कहते हैं कि दाता वही है जो अटल है॥ २ ॥
॥ पउड़ी ॥ हरि-नाम के मनन से योग्यता उपजती और विवेक जाग्रत् होता

है। प्रभु का नाम मनन करने से प्रभु के गुणों का उच्चारण करता और सुख से सोता है। नाम-मनन से भ्रम कट जाते हैं और दुःख नहीं होता। हरि-नाम मानने से पापयुत बुद्धि धुल जाती है और जीव प्रभु का स्तुतिगान करने लगता है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु के द्वारा ही हरिनाम-मनन सम्भव है और वह भी वे ही जीव कर सकते हैं, जिन्हें परमात्मा स्वयं कृपापूर्वक यह बल देता है ॥ १२ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ सासत्र बेद पुराण पढ़ंता। पूकारंता अजाणंता। जां बूझै तां सूझै सोई। नानकु आखै कूक न होई ॥ १ ॥ म० १ ॥ जां हउ तेरा तां सभु किछु मेरा हउ नाही तू होवहि। आपे सकता आपे सुरता सकती जगतु परोवहि। आपे भेजे आपे सदे रचना रचि रचि वेखै। नानक सचा सची नांई सचु पवै धुरि लेखै ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ नामु निरंजन अलखु है किउ लखिआ जाई। नामु निरंजन नालि है किउ पाईऐ भाई। नामु निरंजन वरतदा रविआ सभ ठांई। गुर पूरे ते पाईऐ हिरदै देइ दिखाई। नानक नदरी करमु होइ गुर मिलीऐ भाई ॥ १३ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ शास्त्र, वेद, पुराण पढ़ता है, ऊँचे स्वर में अज़ान लगाता है, किन्तु जब ज्ञान हो जाता है, रहस्य का पता चल जाता है, तो गुरु नानक कहते हैं कि वह कूकना बंद कर देता है (ज्ञानावस्था में बोलने की आवश्यकता नहीं रहती) ॥ १ ॥ म० १ ॥ जब मैं तुम्हारा हूँ तो सब कुछ मेरा ही है, मेरा कोई अस्तित्व नहीं, तुम ही तुम तो हो। तुम्हीं शक्तिवान हो, तुम्हीं विवेकवान हो; अपनी शक्ति में सारा जगत को पिरो रखा है। वही भेजता है, वही बुला भी लेता है— बना-बनाकर अपनी रचना आप देखता है। गुरु नानक कहते हैं कि सच्चे नाम के कारण ही जीव पावन होता है और अन्ततः मुक्त हो जाता है ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ हरि-नाम मायातीत होने के कारण अदृश्य है, उसे क्योंकर देखा जा सकता है। नाम-निरंजन तो भीतर मौजूद है, पाना कहाँ से है ? नाम-निरंजन का ही समस्त प्रसार है, वह सब जगह व्याप्त है। यदि पूर्णगुरु मिल जाय तो वह नाम-निरंजन को हृदय में ही दिखा देता है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु के मिलने से ही कृपा-दृष्टि होती है ॥ १३ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ कलि होई कुते मुही खाजु होआ मुरदारु। कूड़ु बोलि बोलि भउकणा चूका धरमु बीचारु। जिन जीवंदिआ पति नही मुइआ मंदी सोइ। लिखिआ होवै

नानका करता करे सु होइ ॥ १ ॥ म० १ ॥ रंना होईआ बोधीआ पुरस होए सईआद। सीलु संजमु सुच भंनी खाणा खाजु अहाजु। सरमु गइआ घरि आपणै पति उठि चली नालि। नानक सचा एकु है अउरु न सचा भालि ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ बाहरि भसम लेपन करे अंतरि गुबारी। खिथा झोली बहु भेख करे दुरमति अहंकारी। साहिब सबदु न ऊचरै माइआ मोह पसारी। अंतरि लालचु भरमु है भरमै गावारी। नानक नामु न चेतई जूऐ बाजी हारी ॥ १४ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ कलियुग के लोग कुत्ता-मुँही हुए हैं अर्थात् लोगों में कुत्ते की तरह लोभ बढ़ गया है। मुर्दार अर्थात् अनियमित उपलब्धि ही उसका भोज्य बन गई है (रिश्वत आदि), वे मिथ्या बोलते, कुत्ते की तरह व्यर्थ भौंकते हैं; उनमें से सब धर्म-विचार समाप्त हो गए हैं। जिन्हें जीते-जी कोई सम्मान नहीं, उनके लिए मरणोपरांत भी वही मंद ख्याति बनी रहती है। जो कुछ उनके कर्मों में लिखा है, वही होता है। गुरु नानक कहते हैं कि जो कुछ परमात्मा करता है, वही होता है ॥ १ ॥ म० १ ॥ पुरुष शिकारी (अत्याचारी) हो गए हैं, स्त्रियाँ गँवार हो गई हैं (अत्याचार को रोकने की बजाय, सह जाने लगी हैं)। शील, संयम, पवित्रता आदि गुण नष्ट हो गए हैं, खाद्य-अखाद्य सब खाया जाने लगा है। मानवीय श्रम बीत गया है, सम्मान-भावना भी साथ ही दूर हो गई है। गुरु नानक कहते हैं कि एक परमात्मा ही सच्चा है, अन्य किसी में अविनाशी तत्त्व खोजना व्यर्थ है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ बाहर शरीर पर भस्म लगाता है, भीतर मन में अन्धकार (बुराइयाँ) भरी हैं। खिथा और झोली पहनकर आडम्बरी वेष बनाता है, किन्तु बुद्धिहीनता और अहंकार ज्यों का त्यों होता है। परमात्मा का नामोच्चारण नहीं करता, मोह-माया के व्यापार में मग्न रहता है। गुरु नानक कहते हैं कि वह मूर्ख मन में लोभ और भ्रम लेकर भटकता रहता है, हरि-नाम स्मरण नहीं करता, समूचा जीवन (मनुष्य-जीवन) जुए में हार देता है ॥ १४ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ लख सिउ प्रीति होवै लख जीवणु किआ खुसीआ किआ चाउ। विछुड़िआ विसु होइ विछोड़ा एक घड़ी महि जाइ। जे सउ वर्हिआ मिठा खाजै भी फिरि कउड़ा खाइ। मिठा खाधा चिति न आवै कउड़तणु धाइ जाइ। मिठा कउड़ा दोवै रोग। नानक अंति विगुते भोग। झखि झखि झखणा झगड़ा झाख। झखि झखि जाहि झखहि तिन्ह

पासि ॥ १ ॥ म० १ ॥ कापड़ु काठु रंगाइआ रांगि । घर गच कीते बागे बाग । साद सहज करि मनु खेलाइआ । तै सह पासहु कहणु कहाइआ । मिठा करि कै कउड़ा खाइआ । तिनि कउड़ै तनि रोगु जमाइआ । जे फिरि मिठा पेड़ै पाइ । तउ कउड़तणु चूकसि माइ । नानक गुरमुखि पावै सोइ । जिस नो प्रापति लिखिआ होइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जिन कै हिरदै मैलु कपटु है बाहरु धोवाइआ । कूड़ु कपटु कमावदे कूड़ु परगटी आइआ । अंदरि होइ सु निकलै नह छपै छपाइआ । कूड़ै लालचि लगिआ फिरि जूनी पाइआ । नानक जो बीजै सो खावणा करतै लिखि पाइआ ॥ १५ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ जीव लाखों प्रीतियाँ पाल ले, लाखों वर्ष तक जिए, लाखों ख़ुशियाँ और चाव उसके जीवन में हों; इन सबसे बिछुड़ने पर घड़ी भर में ही समस्त ख़ुशियाँ गलित हो जाती हैं और बिछुड़ने का दु:ख भी होता है। सौ बरस तक मीठे खाया, तो भी आखिर कड़वा खाना पड़ा (भाव सुखों के बाद दु:ख तो उठाने ही पड़े)। मीठा खाते ध्यान भी नहीं रहता, जबकि कड़वा खाने की स्मृति कभी भूलती ही नहीं (अर्थात् दु:ख कभी नहीं भूलता)। गुरु नानक कहते हैं कि मीठा और कड़वा दोनों रोग हैं, अन्ततः भोगों के कारण व्यक्ति हानि ही उठाता है। यह सब बेकार, लाभ-रहित और अनावश्यक जीवन-व्यवहार है, तो भी जीव विषय-विकारों की ओर खिचते ही जाते हैं ॥ १ ॥ म० १ ॥ घर में कपड़ों तथा काठ के सामान को विभिन्न रंगों से सजाता है। घर की दीवारों को बिलकुल सफ़ेद कर लेता है। स्वादों और सुखों से मन को बहलाता है, स्वामी से उपालम्भ लेता है। विषय-विकारों की अन्तिम कटुता को भुलाकर और उन्हें मीठा समझकर उनमें लिप्त रहा। उस कड़वे स्वाद ने शरीर में रोग पैदा किए। अब यदि जीव पुनः केवल मीठे रस का ही भोग करे (नाम जपे), तो कड़वी माया के प्रभाव से मुक्त हो सकता है। गुरु नानक कहते हैं कि वह तत्त्व केवल गुरु के द्वारा ही मिलता है, जिसके भाग्य में पूर्व-लिखित होता है, वही उस तत्त्व-ज्ञान को पाता है ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ जिनके मन में कपट का मैल है और जो बाहर से साफ़-सुथरे होते हैं; वे मिथ्या व्यापार करते और मिथ्या की कमाई करते हैं। मनुष्य के भीतर मन में जो भी होता है, वही निकलता है, छिपाने पर छिपता नहीं। मिथ्या लोभ में पड़कर वह पुनः पुनः जन्म लेता है। गुरु नानक कहते हैं कि जो बोओ, वही खाना पड़ता है, यही प्रकृति का नियम है ॥ १५ ॥

॥ सलोक म० २ ॥ कथा कहाणी बेदीं आणी पापु पुंनु बोचारु। दे दे लैणा लै लै देणा नरकि सुरगि अवतार। उतम मधिम जातीं जिनसी भरमि भवै संसारु। अंम्रित बाणी ततु वखाणी गिआन धिआन विचि आई। गुरमुखि आखी गुरमुखि जाती सुरतीं करमि धिआई। हुकमु साजि हुकमै विचि रखै हुकमै अंदरि वेखै। नानक अगहु हउमै तुटै तां को लिखीऐ लेखै ॥ १ ॥ म० १ ॥ बेदु पुकारे पुंनु पापु सुरग नरक का बीउ। जो बीजै सो उगवै खांदा जाणै जीउ। गिआनु सलाहे वडा करि सचो सचा नाउ। सचु बीजै सचु उगवै दरगह पाईऐ थाउ। बेदु वपारी गिआनु रासि करमी पलै होइ। नानक रासी बाहरा लदि न चलिआ कोइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ निमु बिरखु बहु संचीऐ अंम्रित रसु पाइआ। बिसीअरु मंत्रि विसाहीऐ बहु दूधु पीआइआ। मनमुखु अभिनु न भिजई पथरु नावाइआ। बिखु महि अंम्रितु सिंचीऐ बिखु का फलु पाइआ। नानक संगति मेलि हरि सभ बिखु लहि जाइआ ॥ १६ ॥

॥ सलोक म० २ ॥ वेदों में दी गई कथा-कहानियों में पाप-पुण्य का विचार किया होता है, दिये हुए को लेने और लिये हुए को देने की प्रक्रिया एवं स्वर्ग-नरक में कर्मानुसार क्योंकर निवास मिलता है, यह सब बताया होता है। वैदिक विचारों के अनुसार लोग ऊँची-नीची जातियों-वर्गों के भ्रम में फँसे रहते हैं। दूसरी ओर गुरु की अमृत-वाणी तत्त्व-चिन्तन प्रदान करती है, क्योंकि इस वाणी को ज्ञान-ध्यान की अवस्थाओं ने आकार दिया होता है। यह वाणी गुरु की देन होती है, गुरु के द्वारा सुयोग्य लोगों द्वारा ही समझी एवं प्रभु-कृपा से ध्यान में लाई जाती है। परमात्मा सबको हुकुमानुसार बनाता, हुकुम में रखता और हुकुम में ही उनकी देख-भाल करता है। गुरु नानक कहते हैं कि यदि पहले अहम्-भाव का नाश हो तो नये कर्मों का आलेख तैयार हो सकता है ॥ १ ॥ ॥ म० १ ॥ वेद पुकारते हैं कि पाप-पुण्य नरक-स्वर्ग का कारण हैं। जो बोता है, वही उगता है और जीव को वही खाना पड़ता है। ज्ञान-प्राप्ति पर वह हरि-नाम के सतत्व को समझता है। तब सच का बीज बीजता, सच की फ़सल काटता और प्रभु-दरवार में सम्मान पाता है। वेद तो व्यापारी मात्र है, ज्ञान-राशि को वह पूँजी के तौर पर प्रयोग करता है (अर्थात् वेद की पूँजी भी ज्ञान है, स्वयं वेद में कुछ नहीं), क्योंकि गुरु नानक कहते हैं कि पूँजी के बिना कोई व्यापारी खेप लादकर नहीं ले जा सकता ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ यदि नीम के पेड़ को अमृतजल से भी सींचा जाय (तो भी कड़वा ही रहता है); विषधर पर मन्त्र-बल से विश्वास

करके उसे दूध पिलाएँ (तो भी वह स्वभाव नहीं छोड़ता)। स्वेच्छाचारी जीव कभी नहीं भीगता, जैसे पत्थर को नहलाने से वह भीतर से सूखा ही रहता है। विष में अमृत मिला दें तो वह भी विष का स्वभाव ग्रहण कर लेता है। गुरु नानक कहते हैं कि यदि प्रभु कृपा-पूर्वक जीव को सत्संगति में मिलने-बैठने का अवसर दिला दे तो सब विष उतर जाता है ॥ १६ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ मरणि न मूरतु पुछिआ पुछी थिति न वारु। इकन्ही लदिआ इकि लदि चले इकन्ही बधे भार। इकन्हा होई साखती इकन्हा होई सार। लसकर सणै दमामिआ छुटे बंक दुआर। नानक ढेरी छारु की भी फिरि होई छार ॥ १ ॥ म० १ ॥ नानक ढेरी ढहि पई मिटी संदा कोटु। भीतरि चोरु बहालिआ खोटु वे जीआ खोटु ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जिन अंदरि निंदा दुसटु है नक वढे नक वढाइआ। महा करूप दुखीए सदा काले मुह माइआ। भलके उठि नित पर दरबु हिरहि हरि नामु चुराइआ। हरि जीउ तिन की संगति मत करहु रखि लेहु हरि राइआ। नानक पइऐ किरति कमावदे मनमुखि दुखु पाइआ ॥ १७ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ मृत्यु किसी मुहूर्त या तिथि-वार की प्रतीक्षा नहीं करती। कुछ मौत के मुँह में गए, कुछ जा चुके हैं और कुछ सामान बाँधे तैयार बैठे हैं। कुछ साख्ती किए तैयार हैं (साख्ती घोड़े को कसने को कहते हैं) और कुछ अपने माल-असबाब को सम्हाल रहे हैं। बड़े-बड़े लश्कर, दमामे और सुन्दर महल छोड़ने ही पड़ते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि मनुष्य-देह तो मूलतः मिट्टी थी, पुनः मिट्टी की ढेरी ही रह जाती है ॥ १ ॥ म० १ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि मिट्टी का यह दुर्ग (शरीर) धूल की ढेरी रह जाता है, भीतर मन रूपी चोर था। ऐ जीव, यह सब कुछ छल ही छल था (कोई सार तत्त्व होता तो कुछ बचता) ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ जिनके मन में निन्दा-भाव है, वे दुष्ट हैं, निर्लज्ज हैं, उन्हें दूसरे की लाज का भी ख़याल नहीं होता। माया के पचड़े में पड़े सदा दुःखी, कुरूप और काले मुँह के होते हैं। वे प्रतिदिन उठकर पराया द्रव्य तो चुराते हैं, अपना हरि-नाम रूपी द्रव्य विस्मृत किए रहते हैं। हे मेरे प्रभु, मेरी रक्षा करना, ऐसे लोगों की संगति मुझे न देना। गुरु नानक कहते हैं कि वे स्वभाव के कारण मनमुखी व्यवहार करते और दुःख पाते हैं ॥१७॥

॥ सलोक म० ४ ॥ सभु कोई है खसम का खसमहु सभु

को होइ। हुकमु पछाणै खसम का ता सचु पावै कोइ। गुरमुखि आपु पछाणीऐ बुरा न दीसै कोइ। नानक गुरमुखि नामु धिआईऐ सहिला आइआ सोइ॥ १॥ म० ४॥ सभना दाता आपि है आपे मेलणहारु। नानक सबदि मिले न विछुड़हि जिना सेविआ हरि दातारु॥ २॥ पउड़ी॥ गुरमुखि हिरदै सांति है नाउ उगवि आइआ। जप तप तीरथ संजम करे मेरे प्रभ भाइआ। हिरदा सुधु हरि सेवदे सोहहि गुण गाइआ। मेरे हरि जीउ एवै भावदा गुरमुखि तराइआ। नानक गुरमुखि मेलिअनु हरि दरि सोहाइआ॥ १८॥

॥ सलोक म० ४॥ सब कुछ प्रभु स्वामी का है, वही सब कुछ करता है। अपने स्वामी की आज्ञा माननेवाला ही सत्य को पा सकता है। गुरु के द्वारा जिसे आत्मज्ञान हो जाता है, उन्हें कोई बुरा नहीं दीखता। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु के उपदेशानुसार जो हरि-नाम का ध्यान करते हैं, उनका जीवन सफल होता है॥ १॥ म० ४॥ सबका दाता प्रभु स्वयं है, वही सबको मिलाता है। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु दातार की सेवा में रहनेवाले शब्द से मिलाप प्राप्त करते हैं, वे कभी नहीं बिछुड़ते॥ २॥ पउड़ी॥ गुरमुख जीवों के अन्तर्मन में हरि-नाम उपजता है, इसलिए उन्हें नित्य शान्ति है। वे प्रभु-इच्छा से जप, तप, संयम आदि करते हैं। उनका हृदय हरि का गुण गाने से निर्मल हो जाता है। मेरे प्रभु को ऐसे गुरुमुख ही प्रिय हैं, वे ही मोक्ष को पाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु के द्वारा मिलाया जीव प्रभु के दरबार में प्रतिष्ठा पाता है॥ १८॥

॥ सलोक म० १॥ धनवंता इवही कहै अवरी धन कउ जाउ। नानकु निरधनु तितु दिनि जितु दिनि विसरै नाउ॥ १॥ म० १॥ सूरजु चड़ै विजोगि सभसै घटै आरजा। तनु मनु रता भोगि कोई हारै को जिणै। सभु को भरिआ फूकि आखणि कहणि न थंम्हीऐ। नानक वेखै आपि फूक कढाए ढहि पवै॥ २॥ पउड़ी॥ सतसंगति नामु निधानु है जिथहु हरि पाइआ। गुरपरसादी घटि चानणा आन्हेरु गवाइआ। लोहा पारसि भेटीऐ कंचनु होइ आइआ। नानक सतिगुरि मिलिऐ नाउ पाईऐ मिलि नामु धिआइआ। जिन्ह कै पोतै पुंनु है तिन्ही दरसनु पाइआ॥ १९॥

॥ सलोक म० १ ॥ मायाधारी सदा यही कहता है कि वह और अधिक धन प्राप्त करे, किन्तु गुरु नानक तो उस दिन पूर्णतः निर्धन हो जाते हैं, जब हरि-नाम विस्मृत हो जाय ॥ १ ॥ म० १ ॥ सूर्योदय से सूर्यास्त तक सारा दिन आयु व्यर्थ बीतती है। तन-मन से जीव भोगों में रत है, कोई जीतता और कोई हारता है। सब कोई अहंकार से पूर्ण है, समझने को तैयार नहीं होता। गुरु नानक कहते हैं कि वह परमात्मा एकदम सबको देखता है; जीव श्वास निकलते ही मिट्टी की ढेरी रह जाता है ॥२॥ ॥ पउड़ी ॥ सत्संगति हरि-नाम का भण्डार है, वहीं से प्रभु मिलता है। गुरु की कृपा से अन्तर्मन उज्ज्वल होता एवं अज्ञानांधकार नष्ट होता है। लोहा पारस के सम्पर्क में जैसे सोना हो जाता है, गुरु नानक कहते हैं कि इसी प्रकार सतिगुरु के सम्पर्क में हरि-नाम मिलता और प्रभु-गुणगान का सुअवसर प्राप्त होता है। जिनके भाग्य में पुण्य होता है, उन्हीं को प्रभु-दर्शन मिलता है ॥ १९ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ ध्रिगु तिना का जीविआ जि लिखि लिखि वेचहि नाउ। खेती जिन की उजड़ै खलवाड़े किआ थाउ। सचै सरमै बाहरे अगै लहहि न दादि। अकलि एह न आखीऐ अकलि गवाईऐ बादि। अकली साहिबु सेवीऐ अकली पाईऐ मानु। अकली पढ़ि कै बुझीऐ अकली कीचै दानु। नानकु आखै राहु एहु होरि गलां सैतानु ॥ १ ॥ म० २ ॥ जैसा करै कहावै तैसा ऐसी बनी जरूरति। होवहि लिङ झिङ नह होवहि ऐसी कहीऐ सूरति। जो ओसु इछे सो फलु पाए तां नानक कहीऐ मूरति ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सतिगुरु अंम्रित बिरखु है अंम्रित रसि फलिआ। जिसु परापति सो लहै गुरसबदी मिलिआ। सतिगुर कै भाणै जो चलै हरि सेती रलिआ। जमकालु जोहि न सकई घटि चानणु बलिआ। नानक बखसि मिलाइअनु फिरि गरभि न गलिआ ॥ २० ॥

॥ सलोक म० १ ॥ उन लोगों का जीवन धिक्कार हो, जो हरि-नाम लिख-लिखकर वेचते हैं (उन पण्डितों, मुल्लाओं पर चोट है, जो जंत्र-मन्त्र और तावीज़ लिखते और धन कमाते हैं)। जो साथ-साथ अपनी खेती उजाड़ते हैं, गहाई के समय उनके पास कुछ नहीं बचा होगा। (अर्थात् वे जो कमाई करते हैं उसका सुफल तो बेच देते हैं, अन्तकाल उनके पास कौन-सा पुण्य बचा रहेगा ?) सच्चाई और श्रम (साधना) के बिना प्रभु के दरबार में उनकी कोई क़द्र नहीं होती। योग्यता उसे

नहीं कहते, जो तर्क-वितर्क में समय गँवा दे। योग्यता से प्रभु की सेवा करो और सम्मान प्राप्त करो (यही योग्यता का गुण है)। योग्यता और बुद्धि द्वारा पढ़-लिखकर तत्त्व को समझो और योग्य पात्र को ही दान दो। गुरु नानक कहते हैं कि यही एकमात्र अध्यात्म मार्ग है, शेष सब कर्म शैतानी (मायावी) हैं ॥ १ ॥ म० २ ॥ आवश्यकता इस बात की है कि जैसा आचरण करे, जीव अपने को वैसा ही कहलाए। सुन्दर रूप गुणों के आकर्षक आकार में है, अवगुण-रूप विकलांगता में नहीं। गुरु नानक कहते हैं कि सम्माननीय मूर्ति (व्यक्ति) वह है, जो प्रभु को प्रसन्न करके मनोवांछित फलों को प्राप्त कर सके ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सतिगुरु अमृत का वृक्ष है, अमृत-फल उसमें लगते हैं। जिसे परमात्मा की ओर से वह फल प्राप्य है, वही गुरु के उपदेश द्वारा उसे पाता है। जो सतिगुरु के उपदेशानुसार आचरण करते हैं, वे हरि-प्रभु के संग लीन हो जाते हैं। उसे यमदूत कोई कष्ट नहीं पहुँचा सकते, उसके अन्तर्मन में आलोक होता है। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु उसे बख्श कर अपने में विलीन कर लेता है, दोबारा वह गर्भ में नहीं पड़ता (अर्थात् उसका आवागमन चुक जाता है) ॥ २० ॥

॥ सलोक म० १ ॥ सचु वरतु संतोखु तीरथु गिआनु धिआनु इसनानु। दइआ देवता खिमा जपमाली ते माणस परधान। जुगति धोती सुरति चउका तिलकु करणी होइ। भाउ भोजनु नानका विरला त कोई कोइ ॥ १ ॥ ॥ महला ३ ॥ नउमी नेमु सचु जे करै। काम क्रोधु त्रिसना उचरै। दसमी दसे दुआर जे ठाकै एकादसी एकु करि जाणै। दुआदसी पंच वसगति करि राखै तउ नानक मनु मानै। ऐसा वरतु रहीजै पाडे होर बहुतु सिख किआ दीजै ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ भूपति राजे रंग राइ संचहि बिखु माइआ। करि करि हेतु वधाइदे परदरबु चुराइआ। पुत्र कलत्र न विसहहि बहु प्रीति लगाइआ। वेखदिआ ही माइआ धुहि गई पछुतहि पछुताइआ। जम दरि बधे मारीअहि नानक हरि भाइआ ॥ २१ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ जो जीव सत्य का व्रत-उपवास, सन्तोष का तीर्थ, ज्ञान का ध्यान-स्नान करके क्षमा की जपमाला से दया के देवता का पूजन करते हैं, वे प्रभु के दरबार में सम्मानित होते हैं। जिनकी धोती युक्ति की, चौका सुरति का तथा तिलक आचरण का होता है; गुरु नानक कहते हैं कि ऐसा भाव-भोजन करनेवाला जीव कोई विरला ही होता

है ।। १ ।। महला ३ ।। सत्य को नियम बनाकर जो नवमी मनाए, काम-क्रोध और तृष्णा का त्याग कर दे। दसों द्वारों को संयत करके दसवीं का रहस्य समझे और एक प्रभु में विश्वास बनाकर एकादशी का व्रत करे और द्वादशी मनाने के लिए पाँचों विकारों को वश में करे तो गुरु नानक कहते हैं कि वह प्रभु को स्वीकार होता है। ऐ पण्डितजनो (कर्मकाण्डी पण्डितो), ऐसे व्रत करो, और अधिक शिक्षा देने से क्या होता है ।। २ ।। ।। पउड़ी ।। पृथ्वीपति, राजा और रंक सब माया का संचय करते हैं। संचय कर-करके उसी में मोह बढ़ाते और पर-द्रव्य चुराते हैं। पुत्र-स्त्री आदि पर भी विश्वास नहीं करते, केवल माया से प्रीति करते हैं। देखते-देखते माया ठग लेती है और वे पछताते रह जाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि वे प्रभु-इच्छा से यमदूतों द्वारा दण्डित होते हैं ।। २१ ।।

।। सलोक म० १ ।। गिआन विहूणा गावै गीत। भुखे मुलां घरे मसीति। मखटू होइकै कंन पड़ाए। फकरु करे होरु जाति गवाए। गुरु पीरु सदाए मंगण जाइ। ता कै मूलि न लगीऐ पाइ। घालि खाइ किछु हथहु देइ। नानक राहु पछाणहि सेइ ।। १ ।। म० १ ।। मनहु जि अंधे कूप कहिआ बिरदु न जाणन्ही। मनि अंधै ऊंधै कवलि दिसन्हि खरे करूप। इकि कहि जाणहि कहिआ बुझहि ते नर सुघड़ सरूप। इकना नाद न बेद न गीअरसु रस कस न जाणंति। इकना सुधि न बुधि न अकलि सर अखर का भेउ न लहंति। नानक से नर असलि खर जि बिनु गुण गरबु करंति ।। २ ।। पउड़ी ।। गुरमुखि सभ पवितु है धनु संपै माइआ। हरि अरथि जो खरचदे देंदे सुखु पाइआ। जो हरिनामु धिआइदे तिन तोटि न आइआ। गुरमुखां नदरी आवदा माइआ सुटि पाइआ। नानक भगतां होरु चिति न आवई हरि नामि समाइआ ।। २२ ।।

।। सलोक म० १ ।। ज्ञान-विहीन पण्डित सस्वर प्रभु के गीत गाते हैं, मुल्ला घर को ही मस्जिद बनाकर चढ़ावे लेते हैं, योगी निरुद्यमी होकर कान फड़वा लेते हैं, फ़क़ीर बनकर अपनी तथा दूसरों की जाति गँवाते हैं। गुरु और पीर कहलवाते हैं, किन्तु भिक्षा माँगते फिरते हैं —ऐसे सब लोगों के चरण भी छूने योग्य नहीं, इनके चरण कभी मत छुओ। जो मेहनत करके कमा कर खाता और ज़रूरत पड़ने पर दूसरे की भी सहायता करता है, गुरु नानक कहते हैं कि ऐसा कोई विरला जीव ही राह पहचानता है ।। १ ।। म० १ ।। मन से अन्धे कूप के समान (अज्ञानी) हैं, अपने ही

बताए उपदेश की उन्हें लाज नहीं होती। मन अज्ञानी तथा हृदय-कमल धर्म के उलटे होने के कारण कुटिल होते हैं। जो एक प्रभु को पहचानते तथा गुरु का कथन स्वीकारते हैं, वे मनुष्य विवेकी और योग्य होते हैं। किन्तु जिन्हें नाद-ज्ञान (योगी), वेद-ज्ञान (ज्ञानी) तथा गेय-रस (रागी) नहीं तथा जो मीठा कसैला रस-भाव नहीं जानते; जिन्हें सुधि-बुधि या सूझ-बूझ, खोज-ख़बर नहीं, एक अक्षर का भी भेद नहीं जानते। गुरु नानक कहते हैं कि वे मनुष्य गुण-विहीन होकर भी गर्व करते हैं, अतः वास्तव में गधे के समान हैं ।।२।। पउड़ी ।। गुरु-उपदेशानुसार आचरण करनेवाले के लिए धन, सम्पत्ति आदि सब पवित्र है। वे हरि के मार्ग पर व्यय करते एवं अपने धन से दूसरों को सुख पहुँचाते हैं, इसलिए हरि-नाम का ध्यान करनेवाले को कभी कमी नहीं होती। गुरमुखों को प्रभु की अनुभूति होती है, अतः वे माया को पसन्द ही नहीं करते। गुरु नानक कहते हैं कि भक्तों के हृदय में (प्रभु के अतिरिक्त) और कुछ आता ही नहीं, वे सदा हरि-नाम में लीन रहते हैं ।। २२ ।।

।। सलोक म० ४ ।। सतिगुरु सेवनि से वडभागी। सचै सबदि जिन्हा एक लिवलागी। गिरह कुटंब महि सहजि समाधी। नानक नामि रते से सचे बैरागी ।। १ ।। म० ४ ।। गणतै सेव न होवई कीता थाइ न पाइ। सबदै सादु न आइओ सचि न लगो भाउ। सतिगुरु पिआरा न लगई मन हठि आवै जाइ। जे इक विख अगाहा भरे तां दस विखां पिछाहा जाइ। सतिगुर की सेवा चाकरी जे चलहि सतिगुर भाइ। आपु गवाइ सतिगुरू नो मिलै सहजे रहै समाइ। नानक तिन्हा नामु न वीसरै सचे मेलि मिलाइ ।। २ ।। पउड़ी ।। खान मलूक कहाइदे को रहणु न पाई। गढ़ मंदर गचगीरीआ किछु साथि न जाई। सोइन साखति पउण वेग ध्रिगु ध्रिगु चतुराई। छतीह अंम्रित परकार करहि बहु मैलु वधाई। नानक जो देवै तिसहि न जाणनी मनमुखि दुखु पाई ।। २३ ।।

।। सलोक म० ४ ।। सतिगुरु की सेवा का अवसर पा जानेवाले भाग्यशाली होते हैं, वे सदैव सच्चे शब्द में लीन रहते हैं। गृहस्थी-परिवार में रहते हुए भी वे सहज समाधि में आनन्द मनाते हैं; गुरु नानक कहते हैं कि जो राम-नाम में लीन होते हैं, वे ही सच्चे अनासक्त कहे जा सकते हैं ।। १ ।। म० ४ ।। गणना करते रहने से प्रभु-सेवा सफल नहीं होती, जीव उस गहन परमात्मा की गहराई नहीं पा सकता। जिसे प्रभु

के शब्द का रस नहीं मिला, सतत्व में कभी प्यार नहीं बना, सतिगुरु को जिसने नहीं चाहा, वह मनोविकारों के कारण आवागमन में पड़ा रहता है। ऐसा जीव एक क़दम आगे लेता भी है, तो दस क़दम पीछे खिसक जाता है। यदि वह सतिगुरु की सेवा में संलग्न हो और उसी की इच्छानुसार आचरण करे, तो उसमें से अहम्‌वाद हो जायगा और वह अटल आनन्द समाधि में लीन हो जायगा। गुरु नानक कहते हैं कि उन्हें प्रभु-नाम कभी विस्मृत नहीं होता। वह सत्यस्वरूप प्रभु से मिलाप प्राप्त कर लेता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जो बड़े-बड़े सरदार, अधिकारी और सम्राट् कहलाते हैं, उनमें से कोई बचनेवाला नहीं है। उनके गढ़, प्रासाद और पक्की इमारतें भी साथ जानेवाली नहीं। उनकी घोड़े-जैसी तेज़ी और सोने की काठियों और चतुराई को धिक्कार है। छत्तीस प्रकार के भोजन करके भी वे मैल बढ़ाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि वे ऐसे स्वेच्छाचारी जीव होते हैं कि सब कुछ देनेवाले को भी नहीं पहचानते और इसीलिए दुःख पाते हैं ॥ २३ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ पढ़ि पढ़ि पंडित मोनी थके देसंतर भवि थके भेखधारी। दूजै भाइ नाउ कदे न पाइनि दुखु लागा अति भारी। मूरख अंधे त्रै गुण सेवहि माइआ कै बिउहारी। अंदरि कपटु उदरु भरण कै ताई पाठ पड़हि गावारी। सतिगुरु सेवे सो सुखु पाए जिन हउमै विचहु मारी। नानक पड़णा गुनणा इकु नाउ है बूझै को बीचारी ॥ १ ॥ म० ३ ॥ नांगे आवणा नांगे जाणा हरि हुकमु पाइआ किआ कीजै। जिस की वसतु सोई लै जाइगा रोसु किसै सिउ कीजै। गुरमुखि होवै सु भाणा मंने सहजे हरि रसु पीजै। नानक सुखदाता सदा सलाहिहु रसना रामु रवीजै ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ गढ़ि काइआ सीगार बहु भांति बणाई। रंग परंग कतीफिआ पहिरहि धरमाई। लाल सुपेद दुलीचिआ बहु सभा बणाई। दुखु खाणा दुखु भोगणा गरबै गरबाई। नानक नामु न चेतिओ अंति लए छडाई ॥ २४ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ पंडित ग्रंथ-शास्त्र पढ़-पढ़कर, मौनी निर्वचन रहकर तथा वेषधारी साधु घुमक्कड़ी करते हुए थक गए (किन्तु सत्य की खोज नहीं कर पाए)। द्वैत-भाव में लीन रहने के कारण कभी हरि-नाम को नहीं पहचान सके, भारी कष्टों को सहन करते रहे। वे मूर्ख अज्ञानी माया के व्यवहार में संलग्न तीन गुणों का ही सेवन करते हैं। पेट भरने

के लिए नित्य कपट करते और गँवारों की तरह बिना शिक्षा पाए पाठ रट लेते हैं। जो भीतर से अहम्-भाव को हटा देते हैं, सतिगुरु की सेवा करते हैं, वे परम सुख के अधिकारी होते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम को ही पढ़ना और मनन करना अपेक्षित है, कोई विवेकवान ही इस तथ्य को समझता है ॥ १ ॥ म० ३ ॥ खाली हाथ आना और खाली हाथ जाना ही प्रभु का हुकुम है, इसमें क्या किया जा सकता है। जिसकी वस्तु है, वह ले जाता है, इसमें किसी पर क्या क्रोध होगा। जो जीव गुरु के द्वारा परमात्मा की इच्छा में चलते हैं, वे सहज ही हरि-रस का पान करते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि उस सुखदाता प्रभु का सदा गुण गाओ और जिह्वा को प्रभु-रस में लिप्त रखो ॥२॥ पउड़ी ॥ काया रूपी दुर्ग में अनेक शृंगार बनाए हैं। रंग-बिरंगी रेशमी पोशाकें पहनकर माया में लिप्त है। सभा-भवन में ख़ूब लाल-सफ़ेद ग़लीचे बिछाता है, किन्तु अहंकार में खाना-भोगना सब दुःखद ही रहता है। गुरु नानक कहते हैं कि वह हरि-नाम-स्मरण कभी नहीं करता जो अन्तकाल में निर्वाण प्रदान करनेवाला है ॥ २४ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ सहजे सुखि सुती सबदि समाइ। आपे प्रभि मेलि लई गलि लाइ। दुबिधा चूकी सहजि सुभाइ। अंतरि नामु वसिआ मनि आइ। से कंठि लाए जि भंनि घड़ाइ। नानक जो धुरि मिले से हुणि आणि मिलाइ ॥१॥ म० ३ ॥ जिन्ही नामु विसारिआ किआ जपु जापहि होरि। बिसटा अंदरि कीट से मुठे धंधै चोरि। नानक नामु न वीसरै झूठे लालच होरि ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ नामु सलाहनि नामु मंनि असथिरु जगि सोई। हिरदै हरि हरि चितवै दूजा नही कोई। रोमि रोमि हरि उचरै खिनु खिनु हरि सोई। गुरमुखि जनमु सकारथा निरमलु मलु खोई। नानक जीवदा पुरखु धिआइआ अमरापदु होई ॥ २५ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ पूर्णसुख में जो स्वतः सहजावस्था में लीन होता है, परमात्मा उसे अपने संग मिलाकर गले से लगा लेता है। उसकी दुविधाओं का अन्त होता है तथा वह सहज स्वभावी सरल चित वाला बन जाता है। उसके अन्तर्मन में हरि-नाम वास करता है; जिन्होंने मन को संयत कर लिया है, प्रभु ने उन्हें कंठ लगाया है। गुरु नानक कहते हैं कि जिनके भाग्य में मिलन का आयोजन होता है, वे हरि द्वारा अपने में मिला लिये जाते हैं ॥ १ ॥ म० ३ ॥ जो हरि-नाम को विस्मृत कर द्वैत-भावी

जाप जपते हैं, वे विष्ठा के कीड़े के समान हैं और कपटपूर्ण व्यवहार में संलग्न रहते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम का दामन नहीं पकड़ते, मिथ्या लोभ-मोह में जकड़े रहते हैं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जो नाम का गुण-गान करते हैं, हरि-नाम का मनन करते हैं, संसार में वे ही स्थिर हैं। वे हृदय में हरि-हरि-नाम ही धारण करते हैं, उनमें कोई द्वैत नहीं होता। उनका रोम-रोम हरिनामोच्चारण करता और वे क्षण-क्षण हरि सिमरते हैं। वे गुरु के द्वारा जन्म सार्थक करते और भीतर की मलिनता को दूर कर लेते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि इस प्रकार जो परमपुरुष का ध्यान करते हैं, वे अमरपद (मोक्ष) को प्राप्त करते हैं ॥ २५ ॥

॥ सलोकु म० ३ ॥ जिनी नामु विसारिआ बहु करम कमावहि होरि। नानक जम पुरि बधे मारीअहि जिउ संन्ही उपरि चोर ॥ १ ॥ म० ५ ॥ धरति सुहावड़ी आकासु सुहंदा जपंदिआ हरि नाउ। नानक नाम विहूणिआ तिन्ह तन खावहि काउ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ नामु सलाहनि भाउ करि निज महली वासा। ओइ बाहुड़ि जोनि न आवनी फिरि होहि न बिनासा। हरि सेती रंगि रवि रहे सभ सास गिरासा। हरि का रंगु कदे न उतरै गुरमुखि परगासा। ओइ किरपा करि कै मेलिअनु नानक हरि पासा ॥ २६ ॥

॥ सलोकु म० ३ ॥ जो हरि-नाम को त्यागकर अन्य कुटिल कर्म कमाते हैं, गुरु नानक का कथन है कि वे यमपुर में बाँधकर इस प्रकार पीटे जाते हैं, जैसे सेंध लगाता हुआ चोर पिटता है ॥१॥ म० ५ ॥ हरि-नाम जपनेवालों के लिए धरती सुहानी होती है, आकाश लुभावना होता है, किन्तु गुरु नानक कहते हैं कि नाम-विहीन जीवों की देह कौए खाते हैं (अर्थात् व्यर्थ होती है) ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जो प्यार से हरि-नाम का जाप करते हैं, वे प्रभु के निजी महलों में प्रवेश पा लेते हैं। वे पुनः योनि-भ्रमण में नहीं पड़ते, न ही दोबारा उनका नाश होता है। वे श्वास-श्वास हरि के प्रेम में रत रहते हैं। गुरु के आलोक में चढ़ा हरि-रंग कभी उतरता नहीं। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा कृपा करके उन्हें अपने साथ मिला लेता है ॥ २६ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ जिचरु इहु मनु लहरी विचि है हउमै बहुतु अहंकारु। सबदै सादु न आवई नामि न लगै पिआरु। सेवा थाइ न पवई तिस की खपि खपि होइ खुआरु। नानक सेवकु सोई आखीऐ जो सिरु धरे उतारि। सतिगुर

का भाणा मंनि लए सबदु रखै उरधारि ॥ १ ॥ म० ३ ॥ सो जपु तपु सेवा चाकरी जो खसमै भावै । आपे बखसे मेलि लए आपतु गवावै । मिलिआ कदे न वीछुड़ै जोती जोति मिलावै । नानक गुर परसादी सो बुझसी जिसु आपि बुझावै ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सभु को लेखे विचि है मनमुखु अहंकारी । हरिनामु कदे न चेतई जमकालु सिरि मारी । पाप बिकार मनूर सभि लदे बहु भारी । मारगु बिखमु डरावणा किउ तरीऐ तारी । नानक गुरि राखे से उबरे हरि नामि उधारी ॥ २७ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ जब तक मन सांसारिक तरंगों में चलायमान है, तब तक अहम्-भाव और अहंकार बने रहते हैं। तब तक जीव को न तो शब्द का रस मिलता है, न हरि-नाम में प्यार उपजता है। उसकी सेवा भी महत्त्वहीन हो जाती है और वह हमेशा ख्वार होता है। गुरु नानक कहते हैं कि जो जीव अहंकार का पूर्ण त्याग करता है, वही सच्चा सेवक होता है। वह प्रभु-शब्द को सदैव हृदय में धारण किए सतिगुरु की इच्छा शिरोधार्य करता है ॥ १ ॥ म० ३ ॥ जप, तप, सेवा, दासता के केवल वे ही रूप उत्तम हैं, जो प्रियतम को पसन्द हैं। तब परमात्मा अपने-आप कृपा करके अपने में मिलाता तथा अहम्-नाश करता है। एक बार परमात्मा से मिलकर जीव कभी नहीं बिछुड़ता, उसकी आत्मा परम-ज्योति प्रभु में समा जाती है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु की कृपा से वे ही जीव इस तथ्य को समझते हैं, जिन्हें परमात्मा स्वयं तथ्य का ज्ञान देता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ स्वेच्छाचारी, अहंकारी जीव के समस्त कर्म गिने जाते हैं। वह हरिनाम-स्मरण नहीं करता, अतः यमदूत उसे दण्डित करते हैं। वह सदा पापों और विकारों के सड़े लोहे का भारी बोझ लादे फिरता है। संसार-सागर का कठिन और भयानक मार्ग वह क्योंकर तैर सकता है। गुरु नानक कहते हैं कि जो हरि-नाम को मन में बसाते हैं, वे ही गुरु का संरक्षण पाकर बच जाते हैं ॥ २७ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ विणु सतिगुर सेवे सुखु नही मरि जंमहि वारो वार । मोह ठगउली पाईअनु बहु दूजै भाइ विकार । इकि गुरपरसादी उबरे तिसु जन कउ करहि सभि नमसकार । नानक अनदिनु नामु धिआइ तू अंतरि जितु पावहि मोख दुआर ॥ १ ॥ म० ३ ॥ माइआ मोहि विसारिआ सचु मरणा हरिनामु । धंधा करतिआ जनमु गइआ अंदरि दुखु

सहामु । नानक सतिगुरु सेवि सुखु पाइआ जिन्ह पूरबि लिखिआ करामु ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ लेखा पड़ीऐ हरिनामु फिरि लेखु न होई । पुछि न सकै कोइ हरि दरि सद ढोई । जमकालु मिलै दे भेट सेवकु नित होई । पूरे गुर ते महलु पाइआ पति परगटु लोई । नानक अनहद धुनी दरि वजदे मिलिआ हरि सोई ॥ २८ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ सतिगुरु की सेवा में संलग्न हुए बिना कभी सुख नहीं मिलता, जीव बेकार बार-बार जन्म-मरण के चक्र में पड़ा रहता है। मोह की ठगमूरि से पथभ्रष्ट होकर वह द्वैत के विकार में लीन होता है। एक ऐसा जीव भी होता है, जो गुरु-कृपा से उबरता और सबकी श्रद्धा का पात्र बनता है। गुरु नानक कहते हैं कि वह रात-दिन हरि-नाम का ध्यान करता और अन्तर्मन में मोक्ष का द्वार खोज लेता है ॥ १ ॥ ॥ म० ३ ॥ माया-मोह के कारण जिसने हरि-नाम, सत्य और मृत्यु को विस्मृत किया है। व्यर्थ के कृत्यों में व्यस्त रहकर वह जन्म गँवाता और भीतर दुःख सहन करता है। गुरु नानक कहते हैं कि पूर्व-लिखित कर्मों के कारण वह सतिगुरु की सेवा में नित्य सुख लाभ करता है ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ सब अपने कर्मों के लेखे में पड़े हैं, किन्तु जब हरि-नाम स्मरण करते हैं तो लेखा चुक जाता है। उन्हें हरि-दरबार में आश्रय मिलता है, कोई पूछनेवाला नहीं रहता। दण्ड देने की बजाय यमदूत भी उसका आदर करते हैं। पूर्णगुरु की सहायता से वह जीव प्रभु का महल प्राप्त कर लेता है, उसका आदर जगत में प्रकट होता है। गुरु नानक कहते हैं कि जिसके द्वार पर अनाहत ध्वनि श्रव्य होती है, वही प्रभु से मिलता है ॥ २८ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ गुर का कहिआ जे करे सुखी हू सुखु सारु । गुर की करणी भउ कटीऐ नानक पावहि पारु ॥ १ ॥ म० ३ ॥ सचु पुराणा ना थीऐ नामु न मैला होइ । गुर कै भाणै जे चलै बहुड़ि न आवणु होइ । नानक नामि विसारिऐ आवण जाणा दोइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ मंगत जनु जाचै दानु हरि देहु सुभाइ । हरि दरसन की पिआस है दरसनि त्रिपताइ । खिनु पलु घड़ी न जीवऊ बिनु देखे मरां माइ । सतिगुरि नालि दिखालिआ रवि रहिआ सभ थाइ । सुतिआ आपि उठालि देइ नानक लिव लाइ ॥ २९ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ जो गुरु की आज्ञानुसार आचरण करता है,

वह परम सुख भोगता है। गुरु की कृपा से भव-भय मिट जाते हैं और (नानक) वह संसार-सागर से पार हो जाता है ॥ १ ॥ म० ३ ॥ सत्य-तत्त्व कभी पुराना नहीं होता, प्रभु का नाम कभी मलिन नहीं होता। जो जीव गुरु की आज्ञा में चलते हैं, पुनः उनका जन्म नहीं होता। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम को विस्मृत करने से आना-जाना दोनों बने रहते हैं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे हरि, यह याचक जीव तुमसे प्रेम का दान माँगता है। उसे हरि-दर्शन की प्यास है, जो दर्शन पाकर ही तृप्त होगी। हे माँ, बिना प्रभु के दर्शनों के मैं मर रही हूँ, क्षण, पल, घड़ी भी नहीं जी सकती। सतिगुरु ने मुझे सर्व-व्यापक प्रभु को मेरे ही भीतर दर्शा दिया है। गुरु नानक कहते हैं कि प्रेम की लौ जगने पर वह स्वयं ज्ञान की जागृति प्रदान करता है ॥ २९ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ मनमुख बोलि न जाणन्ही ओना अंदरि कामु क्रोधु अहंकारु। थाउ कुथाउ न जाणन्ही सदा चितवहि बिकार। दरगह लेखा मंगीऐ ओथै होहि कूड़िआर। आपे स्रिसटि उपाईअनु आपि करे बीचारु। नानक किस नो आखीऐ सभु वरतै आपि सचिआरु ॥ १ ॥ म० ३ ॥ हरि गुरमुखि तिन्ही अराधिआ जिन्ह करमि परापति होइ। नानक हउ बलिहारी तिन्ह कउ जिन्ह हरि मनि वसिआ सोइ ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ आस करे सभु लोकु बहु जीवणु जाणिआ। नित जीवण कउ चितु गढ़ मंडप सवारिआ। वलवंच करि उपाव माइआ हिरि आणिआ। जमकालु निहाले सास आव घटै बेतालिआ। नानक गुर सरणाई उबरे हरि गुर रखवालिआ ॥ ३० ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ मनमुख जीव प्रभून्मुख नहीं हो पाते, काम-क्रोध-अहंकारादि विकारों से ग्रस्त रहते हैं। वे भली-बुरी जगह का भी ध्यान नहीं करते, सदा विकृत दृष्टि रखते हैं। जब परमात्मा के दरबार में हिसाब-किताब माँगा जाता है, तो वे झूठे हो जाते हैं। परमात्मा स्वयं सृष्टि का रचयिता है, अपने-आप सबका विचार करता है। गुरु नानक कहते हैं कि वह सत्यस्वरूप प्रभु स्वयं सर्व-व्यापक है, फ़रियाद किसकी करें ॥ १ ॥ म० ३ ॥ जिनके भाग्य में बदा है, वही गुरु के द्वारा हरि की पूर्ण आराधना कर पाता है। गुरु नानक कहते हैं कि वे उनके बलिहार जाते हैं, जिनके मन में हरि-नाम बसा हो ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ जीवन जीते हुए सब लोग आशा के धागे से बँधे रहते हैं।

नित्य जीवन के गढ़ में वे आशा के मंडप सँवारते हैं। कपट-पूर्ण उपाय कर-करके माया चुराकर लाते हैं; यमराज उनके श्वास गिनता है और प्रेत रूपी मनुष्य की आयु घटती जाती है। गुरु नानक कहते हैं कि यदि जीव गुरु की शरण ले, तो उसकी रक्षा हो सकती है ॥ ३० ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ पड़ि पड़ि पंडित बादु बखाणदे माइआ मोह सुआइ। दूजै भाइ नामु विसारिआ मन मूरख मिलै सजाइ। जिन्हि कीते तिसै न सेवन्ही देदा रिजकु समाइ। जम का फाहा गलहु न कटीऐ फिरि फिरि आवहि जाइ। जिन कउ पूरबि लिखिआ सतिगुरु मिलिआ तिन आइ। अनदिनु नामु धिआइदे नानक सचि समाइ ॥ १ ॥ म० ३ ॥ सचु वणजहि सचु सेवदे जि गुरमुखि पैरी पाहि। नानक गुर कै भाणै जे चलहि सहजे सचि समाहि ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ आसा विचि अति दुखु घणा मनमुखि चितु लाइआ। गुरमुखि भए निरास परम सुखु पाइआ। विचे गिरह उदास अलिपत लिव लाइआ। ओना सोगु विजोगु न विआपई हरि भाणा भाइआ। नानक हरि सेती सदा रवि रहे धुरि लए मिलाइआ ॥ ३१ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ पंडितजन पढ़-पढ़कर वाद-विवाद करते हैं और मोह-माया में तल्लीन रहते हैं। द्वैत-भाव में संलग्न होने के कारण हरि-नाम को विस्मृत किए रहते हैं; ऐसे मूर्खों को दण्ड मिलता है। जिसने उन सबको बनाया है, उसका स्मरण वे नहीं करते, जबकि वह उन सबका पोषण करता है। ऐसे जीवों के गले से यम का फंदा नहीं कटता, वे पुनःपुनः जन्म-मरण को प्राप्त होते हैं। जिनके भाग्य में पूर्व-कर्मों के कारण सुलभ है, वे सतिगुरु का मिलाप प्राप्त करते हैं और गुरु नानक के कथनानुसार रात-दिन हरिनाम-स्मरण करते हुए सत्यस्वरूप ब्रह्म में ही समा जाते हैं ॥ १ ॥ म० ३ ॥ जो गुरु-चरणों का सहारा लेते हैं, वे सत्य का व्यापार करते और सत्य का ही सेवन करते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि जो जीव गुरु के मतानुसार आचरण करते हैं, वे सहज में ही सत्य-मग्न हो जाते हैं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ आशा-तृष्णा में बड़ा दुःख निहित है, किन्तु मनमुख जीव उसी में चित्त लगाते हैं। गुरुमुख आशा-तृष्णा का त्याग करके परम सुख लाभ करते हैं। वे गृहस्थी में रहकर भी अलिप्त रहते और प्रभु से प्यार करते हैं। उन्हें शोक-वियोग आदि प्रभावित नहीं करते, वे केवल परमात्मा की इच्छा में मग्न रहते हैं।

गुरु नानक कहते हैं कि वे हरि-इच्छा में चलते और उसी में लीन हो जाते हैं ॥ ३१ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ पराई अमाण किउ रखीऐ दिती ही सुखु होइ । गुर का सबदु गुर थै टिकै होरथै परगटु न होइ । अंन्हे वसि माणकु पइआ घरि घरि वेचण जाइ । ओना परख न आवई अढु न पलै पाइ । जे आपि परख न आवई तां पारखीआ थावहु लइओ परखाइ । जे ओसु नालि चितु लाए तां वथु लहै नउनिधि पलै पाइ । घरि होदै धनि जगु भुखा मुआ बिनु सतिगुर सोझी न होइ । सबदु सीतलु मनि तनि वसै तिथै सोगु विजोगु न कोइ । वसतु पराई आपि गरबु करे मूरखु आपु गणाए । नानक बिनु बूझे किनै न पाइओ फिरि फिरि आवै जाए ॥ १ ॥ म० ३ ॥ मनि अनदु भइआ मिलिआ हरि प्रीतमु सरसे सजण संत पिआरे । जो धुरि मिले न विछुड़हि कबहू जि आपि मेले करतारे । अंतरि सबदु रविआ गुरु पाइआ सगले दूख निवारे । हरि सुखदाता सदा सलाही अंतरि रखां उरधारे । मनमुखु तिन की बखीली कि करे जि सचै सबदि सवारे । ओना दी आपि पति रखसी मेरा पिआरा सरणागति पए गुरदुआरे । नानक गुरमुखि से सुहेले भए मुख ऊजल दरबारे ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ इसतरी पुरखै बहु प्रीति मिलि मोहु वधाइआ । पुत्रु कलत्रु नित वेखै विगसै मोहि माइआ । देसि परदेसि धनु चोराइ आणि मुहि पाइआ । अंति होवै वैर विरोधु को सकै न छडाइआ । नानक विणु नावै ध्रिगु मोहु जितु लगि दुखु पाइआ ॥ ३२ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ पराई अमानत क्यों रखी जाय, उसे लौटा देने में ही सुख होता है । गुरु का शब्द गुरु के ध्यान में ही टिकता है, अन्य किसी जगह प्रकट नहीं होता । अन्धे को जैसे माणिक्य मिल जाय तो वह घर-घर बेचता फिरता है । उसे स्वयं तो परख होती नहीं, परिणामतः कौड़ी भी उसका मोल नहीं पड़ता । (तरीक़ा यह है कि) स्वयं को परखने की शक्ति न हो तो पारखियों को दिखाना चाहिए । जीव यदि प्रभु से चित्त लगाए, तो नवनिधि सामग्री हरि-नाम को प्राप्त कर ले । (यहाँ तो यह दशा है कि) घर में धन होते हुए भी सतिगुरु के उपदेश के बिना जग भूखा मर रहा है (अर्थात् प्रभु भीतर है, बाहर खोज हो रही है, गुरु उसको भीतर से दर्शा सकता है) । शब्द का प्यार जब उसके तन-मन में बसता

है, तो उसके अन्दर शोक-वियोग की संवेदना निरस्त हो जाती है। पराई वस्तु पर गर्व करके अपने अहंकार में रहनेवाला मूर्ख है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु द्वारा शिक्षा पाए बिना परमात्मा किसी को नहीं मिलता, जीव बार-बार जन्म-मरण के चक्र में पड़ता है॥ १॥ म० ३॥ हरि-प्रभु के मिलन से मन प्रसन्न होता है और सन्तजनों को उल्लास मिलता है। यदि कर्तार स्वयं मिला ले, अर्थात् परमात्मा अपने में लीन कर ले, तो फिर जीव कभी बिछुड़ता नहीं। उसके भीतर शब्द-ध्वनि उपजती है और गुरु के आश्रय उसके सब दुःख दूर हो जाते हैं। वह सुखदाता हरि के गुण गाता और मन में धारण करता है। जो सच्चे शब्द द्वारा सुशोभित होते हैं, मनमुख जीव उनकी निन्दा नहीं कर सकते। मेरा प्रियतम स्वयं उनकी लाज रखता है, जो गुरु के द्वारा उसकी शरण में जाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि वे जीव गुरु के द्वारा सुखी होते और प्रभु-दरबार में उजले मुख जाते हैं॥ २॥ पउड़ी॥ स्त्री-पुरुष का प्रेम बढ़े हुए मोह के अतिरिक्त अन्य क्या है? जीव पुत्र-पत्नी को देख-देखकर प्रसन्न होता है और माया बढ़ती है। देस-परदेस (जगह-जगह) से धन प्राप्त करके (चुरा करके भी) उनके मुँह डालता है। अन्त में वहाँ भी वैर-विरोध होता है, कोई उसे हटा नहीं सकता। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम के बिना मोह-माया को धिक्कार है, जिसके प्रभाव में नित्य दुःख प्राप्त होता है॥ ३२॥

॥ सलोक म० ३॥ गुरमुखि अंम्रितु नामु है जितु खाधै सभ भुख जाइ। त्रिसना मूलि न होवई नामु वसै मनि आइ। बिनु नावै जि होरु खाणा तितु रोगु लगै तनि धाइ। नानक रस कस सबदु सलाहणा आपे लए मिलाइ॥ १॥ म० ३॥ जीआ अंदरि जीउ सबदु है जितु सह मेलावा होइ। बिनु सबदै जगि आन्हेरु है सबदे परगटु होइ। पंडित मोनी पड़ि पड़ि थके भेख थके तनु धोइ। बिनु सबदै किनै न पाइओ दुखीए चले रोइ। नानक नदरी पाईऐ करमि परापति होइ॥ २॥ ॥ पउड़ी॥ इसत्री पुरखै अति नेहु बहि मंदु पकाइआ। दिसदा सभु किछु चलसी मेरे प्रभ भाइआ। किउ रहीऐ थिरु जगि को कढहु उपाइआ। गुर पूरे की चाकरी थिरु कंधु सबाइआ। नानक बखसि मिलाइअनु हरि नामि समाइआ॥ ३३॥

॥ सलोक म० ३॥ गुरमुख के लिए हरि-नाम अमृत के समान है, जिसके सेवन से पूर्णतृप्ति मिलती है। तृष्णा बिलकुल नहीं रहती,

मन में हरि-नाम बसा होता है। जो प्रभु-नाम के अतिरिक्त अन्य तत्त्वों में प्रवृत्ति लगाते हैं, उनके शरीर में विकार पैदा हो जाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम की प्रशस्ति को ही यदि रसपूर्ण भोजन मान लिया जाय, तो परमात्मा आप अपने संग मिला लेता है॥ १ ॥ म० ३ ॥ जीवों में शब्द ही प्राण है, जिसके सेवन से प्रभु-मिलन होता है। शब्द के बिना सब ओर अँधेरा है, शब्द से ही परमात्मा प्रकट होता है। पंडित-मौनी ग्रंथों को पढ़-पढ़कर थके हैं, वेषधारी तीर्थों पर स्नान कर-करके थक गए हैं, किन्तु शब्द के बग़ैर किसी को प्राप्ति नहीं हुई, वे दुःखी होकर रोते रह गए। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु उसकी अपनी ही कृपा से मिलता है और कोई भाग्यशाली ही उसे प्राप्त करता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ स्त्री-पुरुष में प्रेम होता है। वे विषय-विकारों की गरिमा से उसे और पकाते हैं। जो भी दृश्यमान है, वह नश्वर है, यही प्रभु की इच्छा है। संसार में स्थिर क्योंकर हुआ जा सकता है, इसका उपाय खोजा जाना चाहिए। पूर्णगुरु की सेवा में संलग्न होने से समूचा जीवन सुरक्षित हो जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु स्वयं कृपा-पूर्वक जीव को बख्श लेता है और वह हरि-नाम में लीन होता है ॥ ३३ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ माइआ मोहि विसारिआ गुर का भउ हेतु अपारु। लोभि लहरि सुधि मति गई सचि न लगै पिआरु। गुरमुखि जिना सबदु मनि वसै दरगह मोख दुआरु। नानक आपे मेलि लए आपे बखसणहारु॥ १ ॥ म०४ ॥ नानक जिसु बिनु घड़ी न जीवणा विसरे सरै न बिंद। तिसु सिउ किउ मन रूसीऐ जिसहि हमारी चिंद ॥ २ ॥ म० ४ ॥ सावणु आइआ झिम झिमा हरि गुरमुखि नामु धिआइ। दुख भुख काड़ा सभु चुकाइसी मीहु वुठा छहबर लाइ। सभ धरति भई हरीआवली अंनु जंमिआ बोहल लाइ। हरि अचिंतु बुलावै क्रिपा करि हरि आपे पावै थाइ। हरि तिसहि धिआवहु संत जनहु जु अंते लए छडाइ। हरि कीरति भगति अनंदु है सदा सुखु वसै मनि आइ। जिन्हा गुरमुखि नामु अराधिआ तिना दुख भुख लहि जाइ। जन नानकु त्रिपतै गाइ गुण हरि दरसनु देहु सुभाइ ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ गुर पूरे की दाति नित देवै चड़ै सवाईआ। तुसि देवै आपि दइआलु न छपै छपाईआ। हिरदै कवलु प्रगासु उनमनि लिव लाईआ। जे को करे उस दी रीस

सिरि छाई पाईआ। नानक अपड़ि कोइ न सकई पूरे सतिगुर की वडिआईआ ।। ३४ ।।

।। सलोक म० ३ ।। मोह-माया के कारण मनमुखी जीव गुरु का भय और प्रेम त्याग देते हैं। लोभ की लहरों में उनकी निर्मल बुद्धि बह जाती है और सत्य में उनका प्यार नहीं रहता। जो गुरु के द्वारा मन में शब्द को धारण कर लेते हैं, वे प्रभु के दरबार में मोक्ष प्राप्त करते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि वह बख्शनहार प्रभु अपने-आप मिलाप प्रदान करता है ।। १ ।। म० ४ ।। गुरु नानक का कथन है कि जिसके बिना जीना दूभर है, क्षण भर भी उससे दूर होना रुचिकर नहीं होता, जिसे सदैव हमारी चिन्ता रहती है, उससे भला क्योंकर रूठा जा सकता है? ।। २ ।। ।। म० ४ ।। रस बरसानेवाला सावन मास आ गया है, गुरुमुख जीव प्रभु का नाम जपते और सावन की ठण्डक का आनन्द लेते हैं। अब मूसलाधार वर्षा के कारण सब दुःख-तृष्णा आदि नष्ट हो जायँगे (अर्थात् प्रभु-रस की धारा बहेगी तो तृष्णा नष्ट होगी)। हृदय रूपी धरती आनन्दमयी होगी, उसमें गुण रूपी अन्न उपजेगा और उसके ढेर लग जायँगे। तब अकस्मात् परमात्मा कृपा करके बुलाता और अपनी स्वीकृति की छाप लगा देता है। हे सन्तजनो, उस हरि का ध्यान करो, जो अन्ततः छुड़ा लेता है। हरि की स्तुति में ही आनन्द है, वह सदा सुख देनेवाला जब मन में बसता है (तो आनन्द मिलता है)। जो गुरु के द्वारा हरि-नाम की आराधना करते हैं, उनकी सब तृष्णाएँ दूर हो जाती हैं। गुरु नानक कहते हैं कि दास तो (हे प्रभु) तुम्हारे गुणगान से सुखी होता है, कृपा करके उसे अपने दर्शन और प्यार प्रदान करो ।। ३ ।। पउड़ी ।। गुरु की देन है (हरि-नाम का ध्यान), वह नित्य देता है और वह बढ़ती भी रहती है। तुष्ट होकर वह दयालु जब देता है, तो छिपाए छिपता नहीं। तब हृदय-कमल विकसित होता है और जीव पूर्ण ज्ञानावस्था में निमग्न होता है। उसकी नक़ल करनेवाले के सिर राख पड़ती है। गुरु नानक कहते हैं कि पूर्ण-सतिगुरु की महत्ता तक कोई नहीं पहुँच सकता ।। ३४ ।।

।। सलोक म० ३ ।। अमरु वे परवाहु है तिसु नालि सिआणप न चलई न हुजति करणी जाइ। आपु छोडि सरणाइ पवै मंनि लए रजाइ। गुरमुखि जम डंडु न लगई हउमै विचहु जाइ। नानक सेवकु सोई आखीऐ जि सचि रहै लिव लाइ ।। १ ।। म० ३ ।। दाति जोति सभ सूरति तेरी। बहुतु सिआणप हउमै मेरी। बहु करम कमावहि लोभि मोहि विआपे हउमै कदे न चूकै फेरी। नानक आपि कराए करता जो तिसु

भावै साई गल चंगेरी ॥ २ ॥ पउड़ी म० ५ ॥ सचु खाणा सचु पैनणा सचु नामु अधारु। गुरि पूरै मेलाइआ प्रभु देवण हारु। भागु पूरा तिन जागिआ जपिआ निरंकारु। साधू संगति लगिआ तरिआ संसारु। नानक सिफति सलाह करि प्रभ का जैकारु ॥ ३५ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ परमात्मा का हुकुम सर्वाधिकार-सम्पन्न है। उसके साथ कोई चालाकी या आपत्ति काम नहीं करती। यदि जीव अहंकार त्यागकर उसकी शरण लेता और उसकी इच्छा को स्वीकारता है, तो गुरु-कृपा से वह यमदूतों के दण्ड से बच जाता है और उसका अहम्-भाव चुक जाता है। गुरु नानक के मतानुसार सेवक वही कहलाता है, जो पूर्ण सत्य में मन लगाए रहता है ॥१॥ म० ३ ॥ ज्योति और आलोक में बसी समूची सुन्दरता तुम्हारी ही तो है, उस पर मैं अहम्-भाववश चतुराई दिखाता हूँ; अनेक कर्म करता हूँ, अहम् कभी टलता नहीं, इसीलिए मेरा आवागमन नहीं चुकता। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा स्वयं ही सब कुछ करता है, जो उसे रुचता है, वही भली बात होती है ॥ ३ ॥ ॥ पउड़ी म० ५ ॥ सत्य का भोजन, सत्य की पोशाक तथा सच्चे नाम का सहारा ही (गुरमुख का लक्ष्य रहता है)। यह सब देनेवाला प्रभु पूरे गुरु की सहायता से मिलता है। जिसका भाग्य जाग्रत् होता है, वह प्रभु का स्मरण करता है; वह साधुजन की संगति में प्रभु-नाम जपता और संसार से पार हो जाता है। अतः गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा का गुणगान करो, उसका जय-जयकार मनाओ ॥ ३५ ॥

॥ सलोक म० ५ ॥ सभे जीअ समालि अपणी मिहर करु। अंनु पाणी मुचु उपाइ दुख दालदु भंनि तरु। अरदासि सुणी दातारि होई सिसटि ठरु। लेवहु कंठि लगाइ अपदा सभ हरु। नानक नामु धिआइ प्रभ का सफलु घरु ॥ १ ॥ ॥ म० ५ ॥ वुठे मेघ सुहावणे हुकमु कीता करतारि। रिजकु उपाइओनु अगला ठांढि पई संसारि। तनु मनु हरिआ होइआ सिमरत अगम अपार। करि किरपा प्रभ आपणी सचे सिरजणहार। कीता लोड़हि सो करहि नानक सद बलिहार ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ वडा आपि अगंमु है वडी वडिआई। गुर सबदी वेखि विगसिआ अंतरि सांति आई। सभु आपे आपि वरतदा आपे है भाई। आपि नाथु सभ नथीअनु

सभ हुकमि चलाई। नानक हरि भावै सो करे सभ चलै रजाई ॥ ३६ ॥ १ ॥ सुधु

॥ सलोक म० ५ ॥ हे प्रभु, कृपा करके सभी जीवों को संरक्षण दो। अधिक अन्न-पानी उपजाकर जगत की दरिद्रता दूर करके सबको तार दो। हे दातार, हमारी प्रार्थना सुनो, सृष्टि को शीतलता प्रदान करो, समस्त आपत्तियों को दूर करके कंठ लगा लो। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम का ध्यान करनेवालों के लिए प्रभु का घर फलदायी होता है ॥ १ ॥ म० ५ ॥ जब परमात्मा का हुकुम हुआ तो सुहाने बादल बरस दिए (गुणों की वर्षा हुई), जिससे अधिक अन्न उपजा (तृप्ति हुई) और संसार में शीतलता हुई। अगम और अनन्त प्रभु का स्मरण करते हुए तन-मन प्रफुल्लित हो जाता है। हे सृजनहार प्रभु, कृपा करो और अपने रचे हुए (मनुष्य) की ज़रूरत पूरी करो। गुरु नानक तुम्हारी कृपालुता पर बलिहार जाते हैं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ परमात्मा स्वयं बड़ा और अपहुँच है, उसी की बड़ाई है। गुरु के उपदेश की सहायता से उसके दर्शन पाकर मन को पूर्ण शान्ति मिली है। वह स्वयं ही सर्व-व्यापक और सर्व-कर्ता है। उसी ने अपने-आप सबको नकेल डाल रखी है और सबको अपने हुकुम में चलाता है। गुरु नानक कहते हैं कि जो प्रभु को स्वीकार होता है, वही होता है; सब उसी की इच्छा में विचरते हैं ॥ ३६ ॥ १ ॥ सुधु

रागु सारंग बाणी भगतां की ॥ कबीर जी ॥

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ कहा नर गरबसि थोरी बात। मन दस नाजु टका चारि गांठी ऐंडौ टेढौ जातु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बहुतु प्रतापु गांउ सउ पाए दुइ लख टका बरात। दिवस चारि की करहु साहिबी जैसे बनहर पात ॥ १ ॥ ना कोऊ लै आइओ इहु धनु ना कोऊ लै जातु। रावन हूं ते अधिक छत्रपति खिन महि गए बिलात ॥ २ ॥ हरि के संत सदा थिरु पूजहु जो हरि नामु जपात। जिन कउ क्रिपा करत है गोबिदु ते सतसंगि मिलात ॥ ३ ॥ मात पिता बनिता सुत संपति अंति न चलत संगात। कहत कबीर राम भजु बउरे जनमु अकारथ जात ॥ ४ ॥ १ ॥

ऐ मनुष्य, क्या थोड़ी सी बात पर गर्व करता है? दस मन अन्न

और पल्ले चार टके हैं, तो उसी में अकड़कर चलता और घमंड करता है ।। १ ।। रहाउ ।। ज़्यादा प्रतिष्ठा मिली तो सौ गाँव या लाख-दो लाख टके की जागीर प्राप्त हो गई। यह तो चार दिन की मालिकी है, बाद में जंगल के पत्तों की तरह झड़ ही जाने का है ।। १ ।। न तो कोई यह धन जन्म-काल में साथ लेकर आता है, न कोई साथ ले जाता है। रावण-सरीखे बड़े-बड़े छत्रपति हुए, वे भी पल-भर में ही विनष्ट हो गए ।। २ ।। परमात्मा का नाम जपनेवाले सदैव स्थिर रहते और प्रभु का नाम जपते हैं। जिन पर प्रभु कृपा करते हैं, वही सत्संगति के सम्पर्क में आते हैं ।।३।। माता, पिता, पत्नी, पुत्र, सम्पत्ति, कोई भी अन्त में संग नहीं चलता। इसलिए कबीरजी कहते हैं कि ऐ पगले, प्रभु का नाम जप, जन्म व्यर्थ हो रहा है (इसका लाभ उठाओ— मनुष्य-जन्म में ही हरि को साक्षात् किया जा सकता है) ।। ४ ।। १ ।।

राजास्रम मिति नही जानी तेरी। तेरे संतन की हउ चेरी ।। १ ।। रहाउ ।। हसतो जाइ सु रोवतु आवै रोवतु जाइ सु हसै। बसतो होइ होइ सुो ऊजरु ऊजरु होइ सु बसै ।। १ ।। जल ते थल करि थल ते कूआ कूप ते मेरु करावै। धरती ते आकास चढावै चढे अकास गिरावै ।। २ ।। भेखारी ते राजु करावै राजा ते भेखारी। खल मूरख ते पंडितु करिबो पंडित ते मुगधारी ।। ३ ।। नारी ते जो पुरखु करावै पुरखन ते जो नारी। कहु कबीर साधू को प्रीतमु तिसु मूरति बलिहारी ।। ४ ।। २ ।।

हे मालिक, तुम्हारे इस राज-महल (सृष्टि) का काल निश्चित नहीं किया जा सकता। मैं तो तुम्हारे सन्तों का दास हूँ ।। १ ।। रहाउ ।। जो हँसता जाता है, वह रोता आता है और जो रोता जाता है, वह हँसता है। (कल तक) जहाँ बस्ती होती है, वह उजड़ जाती है और जहाँ उजाड़ होता है, वह बस जाता है ।। १ ।। जहाँ जल है, वहाँ पलक झपक में ही वह शुष्क धरती कर देता है; जहाँ धरती है, वहाँ खाइयाँ पाट देता है और जहाँ कुआँ है, वहाँ पर्वत खड़ा कर सकता है। धरती पर के जीवों को आकाश पर चढ़ा देता है (रंक को राजा बनाता है) और आकाश पर चढ़ों को धरती पर गिराता है (राजा को रंक करता है) ।। २ ।। भिखारी को राजा और राजा को भिखारी बना सकता है। वह परमात्मा मूर्ख-गँवार को पंडित और विद्वान् को मूर्ख कर सकता है ।। ३ ।। जो नारी से पुरुष और पुरुष से नारी बना देता है, कबीरजी कहते हैं कि वही सर्वशक्तिमान प्रभु साधुजनों का प्रियतम है, सब

उसकी मूर्ति पर बलिहार जाते हैं। (अर्थात् कबीरजी उस परमात्मा पर, जो उपर्युक्त सब कर सकता है, क़ुर्बान जाते हैं।) ॥ ४ ॥ २ ॥

सारंग बाणी नामदेउ जी की

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ काएं रे मन बिखिआ बन जाइ। भूलौ रे ठग मूरी खाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जैसे मीनु पानी महि रहै। काल जाल की सुधि नही लहै। जिहबा सुआदी लीलित लोह। ऐसे कनिक कामनी बाधिओ मोह ॥ १ ॥ जिउ मधु माखी संचै अपार। मधु लीनो मुखि दीनी छारु। गऊ बाछ कउ संचै खीरु। गला बांधि दुहि लेइ अहीरु ॥ २ ॥ माइआ कारन स्रमु अति करै। सो माइआ लै गाडै धरै। अति संचै समझै नही मूढ़। धनु धरती तनु होइ गइओ धूड़ि ॥ ३ ॥ काम क्रोध त्रिसना अति जरै। साध संगति कबहू नही करै। कहत नामदेउ ताची आणि। निरभै होइ भजीऐ भगवान ॥ ४ ॥ १ ॥

हे मन, क्यों तू विषय-विकारों के बन में भटकता है और क्यों ठगमूरि खाकर ठगा जा रहा है? ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जैसे मछली पानी में रहती है। काल रूपी जाल उसे नहीं सूझता, जीव के स्वाद-वश लोहा निगल जाती है, वैसे ही तुमने कनक-कामिनी से मोह के बन्धन बढ़ा लिये हैं ॥ १ ॥ जिस प्रकार मक्खी मधु का संचय करती है, किन्तु मधु मनुष्य ले जाता है, मक्खी के मुख धूल भी नहीं पड़ती। गाय बछड़े के लिए दूध-संचार करती है, किन्तु अहीर रस्सी बाँधकर उसे दुह लेता है ॥ २ ॥ (वैसे ही) तुम भी मोह-माया के कारण इतना अधिक श्रम करते हो, माया एकत्र करके गढ़ों में दबाते हो। खूब संग्रह करते हो, मूढ़, गँवार, समझते नहीं हो और अन्ततः गड़ा हुआ धन धरती में ही मिट्टी हो जाता है ॥ ३ ॥ मनुष्य काम, क्रोध, तृष्णा आदि में जलता है, कभी साधु-संगति में समय नहीं देता। नामदेवजी कहते हैं कि उसकी शरण लो और निर्भय होकर भगवान का भजन करो ॥ ४ ॥ १ ॥

कबहु की न होड माधउ मो सिउ। ठाकुर ते जनु जन ते ठाकुरु खेलु परिओ है तो सिउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आपन देउ देहुरा आपन आप लगावै पूजा। जल ते तरंग तरंग ते है

जलु कहन सुनन कउ दूजा ।। १ ।। आपहि गावै आपहि नाचै आप बजावै तूरा । कहत नामदेउ तूं मेरो ठाकुरु जनु ऊरा तू पूरा ।। २ ।। २ ।।

हे प्रभु, क्या मेरे साथ होड़ लगाओगे, शर्त बद लोगे ! तुम स्वामी तभी तो हो, जो हम दास हैं, हमारा अब तुम्हारे साथ खेल पड़ा है ।।१।। रहाउ ।। तुम्हीं तो हमें देवल में बुलाते और पूजा में लगाते हो । (हम तुमसे अभेद हैं, उसी तरह जैसे) जल से तरंग और तरंग से जल में केवल कहने-सुनने का ही भेद होता है (मूलत: कोई भेद नहीं) ।। १ ।। तुम स्वयं अपना यशोगान करते, नाचते और शहनाइयाँ बजाते हो । नामदेवजी कहते हैं कि हे मेरे स्वामी, तुम पूर्ण हो, मैं तो सदा से अंश पात्र हूँ ।। २ ।। २ ।।

दास अनिन मेरो निज रूप । दरसन निमख ताप त्रई मोचन परसत मुकति करत ग्रिह कूप ।। १ ।। रहाउ ।। मेरी बांधी भगतु छडावै बांधै भगतु न छूटै मोहि । एक समै मोकउ गहि बांधै तउ फुनि मोपै जबाबु न होइ ।।१।। मै गुन बंध सगल की जीवनि मेरी जीवनि मेरे दास । नामदेव जाके जीअ ऐसी तैसो ताकै प्रेम प्रगास ।। २ ।। ३ ।।

(प्रभु की ओर से कहते हैं कि) मेरे अनन्य भक्त मेरा ही रूप हैं । उनके निमिष मात्र का दर्शन भी त्रयताप को दूर करता है और उनके स्पर्श से गृहस्थी के कुएँ से मुक्ति मिलती है ।। १ ।। रहाउ ।। मेरे द्वारा लगाए बन्धनों को भक्त काट सकते हैं, किन्तु भक्तों द्वारा लगाए बन्धन को मैं नहीं काटता । किसी समय यदि वह (भक्त) मुझे ही पकड़कर बाँध ले, तो मैं कुछ नहीं कह पाता ।। १ ।। मैं गुणों से बँधा सबका जीवन हूँ, किन्तु मेरा जीवन मेरे भक्त हैं । नामदेवजी कहते हैं कि यह बात जिसके मन में जितनी बैठती है, उसके मन में उतना ही उजाला होता है ।। २ ।। ३ ।।

सारंग

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। तै नर किआ पुरानु सुनि कीना । अन पावनी भगति नही उपजी भूखै दानु न दीना ।। १ ।। रहाउ ।। कामु न बिसरिओ क्रोधु न बिसरिओ लोभु न छूटिओ देवा ।

परनिंदा मुख ते नही छूटी निफल भई सभ सेवा ॥ १ ॥ बाट पारि घरु मूसि बिरानो पेटु भरै अप्राधी । जिहि परलोक जाइ अपकीरति सोई अबिदिआ साधी ॥ २ ॥ हिंसा तउ मन ते नही छूटी जीअ दइआ नही पाली । परमानंद साध संगति मिलि कथा पुनीत न चाली ॥ ३ ॥ १ ॥

हे मनुष्य, पुराणों की कथा सुनकर तुमने क्या किया ? तुममें न तो अक्षय भक्ति-भावना पैदा हुई, न तुमने कभी भूखे का पेट भरने को अन्न-दान दिया ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऐ भाई, तुम्हारा काम नहीं छूटा, क्रोध नहीं चुका, लोभ का भी अन्त नहीं हुआ । मुख से पर-निन्दा करना भी तुमने नहीं छोड़ा, तुम्हारी समूची सेवा बेकार हो गयी है ॥ १ ॥ तुम दस्यु-कर्म करके, दूसरों के घर लूटकर पेट भरते रहे, अनेक अपराध किए । जिस कार्य से परलोक में अपकीर्ति मिलती है, तुम वे ही कार्य करते रहे ॥ २ ॥ तो भी मन से हिंसा का भाव नहीं छूटा और न ही जीवों पर दया करने की प्रवृत्ति जगी । परमानन्द कहते हैं कि साधु-संगति में मिलकर तुमने प्रभु की पुनीत कथा को नहीं सुना । (भाव यह कि अध्यात्म-पथ पर कोई भी श्रेष्ठ कार्य मनुष्य नहीं करता ।) ॥ ३ ॥ १ ॥

छाडि मन हरि बिमुखन को संगु ॥ *

सारंग महला ५ सूरदास

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ हरि के संग बसे हरि लोक । तनु मनु अरपि सरबसु सभु अरपिओ अनद सहज धुनि झोक ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दरसनु पेखि भए निरबिखई पाए है सगले थोक । आन बसतु सिउ काजु न कछूऐ सुंदर बदन अलोक ॥ १ ॥ सिआम सुंदर तजि आन जु चाहत जिउ कुसटी तनि जोंक । सूरदास मनु प्रभि हथि लीनो दीनो इहु परलोक ॥ २ ॥ १ ॥

---

* यह पंक्ति भक्तराज सूरदास की है । इस अर्द्धाली से सम्बन्धित पद सम्पादक गुरु अर्जुनदेव शायद गुरूग्रन्थ में संकलित करना चाहते थे, किन्तु आगे की पंक्तियों में विचार-भेद देखकर इसे सम्पूर्ण ग्रहण नहीं किया । बस एक ही पंक्ति रहने दी । स्वयं महला ५ (गुरु अर्जुनदेव) ने इस पंक्ति का आधार लेकर सूरदास के नाम से अगला पूर्ण पद लिख दिया है । इसीलिए उसके आरम्भ में 'महला ५' और अन्त में नाम-छाप 'सूरदास' अंकित है ।

हे मन, प्रभु से विमुख जीवों की संगति का त्याग करो। हरि से प्यार करनेवाले जीव नित्य हरि के ध्यान में बसते हैं। वे तन-मन, सर्वस्व हरि को अर्पित करके सहज निश्चल आनन्द में विभोर हुए रहते हैं ।। १ ।। रहाउ ।। वे प्रभु का दर्शन पाकर निर्विषयी हो जाते हैं और उनकी समस्त वांछाएँ परिपूर्ण होती हैं। हरि का सुन्दर मुख देखकर वे इतने भाव-विभोर हो जाते हैं कि उन्हें किसी भी अन्य वस्तु से कोई वास्ता नहीं रह जाता ।। १ ।। श्याम सुन्दर प्रभु को छोड़कर किसी अन्य की चाहत कुछ ऐसी होगी, जैसे कुष्टि के शरीर में चिपकी जोंक हो। (कुष्टि के शरीर में जोंक गन्दा रक्त चूसकर वहीं मर जाती है, वैसे ही द्वैत-भाव में विश्वास करनेवाले जीव भी वहीं मिट जाते हैं।) गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु ने सूरदास के चित्त को स्वीकार लिया है अर्थात् उसके मन में रमणा मान लिया है, यही देन वैकुण्ठ के समान है ।। २ ।। १ ।।

सारंग कबीर जीउ

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। हरि बिनु कउनु सहाई मन का। मात पिता भाई सुत बनिता हितु लागो सभ फन का ।। १ ।। रहाउ ।। आगे कउ किछु तुलहा बांधहु किआ भरवासा धन का। कहा बिसासा इस भांडे का इतनकु लागै ठनका ।। १ ।। सगल धरम पुंन फल पावहु धूरि बांछहु सभ जन का। कहै कबीरु सुनहु रे संतहु इहु मनु उडन पंखेरू बन का ।। २ ।। १ ।।

परमात्मा के बिना मन का सहारा कौन बन सकता है। माता, पिता, भाई, पुत्र, पत्नी आदि से लगा प्यार तो अस्थायी और छलपूर्ण है ।। १ ।। रहाउ ।। आगे जाने के लिए बेड़ा तैयार करो (कोई अध्यात्म की कमाई करो), इस सांसारिक धन का क्या भरोसा है ? इस बर्तन (शरीर) का क्या विश्वास ? छोटी-सी ठोकर से ही टूट सकता है ।। १ ।। मेरे सब धर्मों और पुण्यों के फल-रूप में मुझ भक्तजन की चरण-धूलि मिल जाय (तो कल्याण हो, क्योंकि) कबीरजी कहते हैं, ऐ सन्तो, यह मन तो बन में उड़नेवाला पक्षी है (कब कहाँ की उड़ान भरने लगे, कोई नहीं जानता) ।। २ ।। १ ।।

रागु मलार चउपदे महला १ घरु १

१ ओं सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥

खाणा पीणा हसणा सउणा विसरि गइआ है मरणा। खसमु विसारि खुआरी कीनी ध्रिगु जीवणु नही रहणा ॥ १ ॥ प्राणी एको नामु धिआवहु। अपनी पति सेती घरि जावहु ॥१॥ रहाउ ॥ तुधनो सेवहि तुझु किआ देवहि मांगहि लेवहि रहहि नही। तू दाता जींआ सभना का जीआ अंदरि जीउ तुही ॥ २ ॥ गुरमुखि धिआवहि सि अंम्रितु पावहि सेई सूचे होही। अहिनिसि नामु जपहु रे प्राणी मैले हछे होही ॥ ३ ॥ जेही रुति काइआ सुखु तेहा तेहो जेही देही। नानक रुति सुहावी साई बिनु नावै रुति केही ॥ ४ ॥ १ ॥

हे भाई! खाने-पीने, हँसने और सोने में व्यस्त होकर तुम मृत्यु (मरण) को भूल गए हो। अपने मालिक वाहिगुरु को विस्मृत कर तुम दुविधाग्रस्त हो; तुम्हें धिक्कार है, (क्योंकि) आखिरकार तुम जीवित भी नहीं रहोगे ॥ १ ॥ हे प्राणी! उस एक प्रभु के नाम को स्मरण करो, जिसके स्मरण से सत्कृत होकर परलोक (प्रभु-चरणों में) जाओगे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु! जो तुम्हारी आराधना करते हैं, वे तुम्हें क्या देते हैं? वे जो पदार्थ तुमसे माँगकर लेते हैं, वे भी अन्तिम समय में मौजूद नहीं रहते हैं। समस्त जीवों के दाता तुम ही हो और जीवों के भीतर जीवित जीव भी तुम्हीं हो ॥ २ ॥ जो गुरुमुख तुम्हें स्मरण करते हैं, वे ही अमृत प्राप्त करते हैं और वे ही सत् को प्राप्त होते हैं। इसलिए रात-दिन वाहिगुरु का नाम-स्मरण करो, जिसके स्मरण से पापों से मैले हुए जीव भी पवित्र हो जाते हैं ॥ ३ ॥ जैसी ऋतु होती है, वैसा ही शरीर को सुख होता है और उसी के अनुसार जीव की देह बन जाती है। श्री गुरु नानकदेव का कथन है कि वही ऋतु शोभनीय है, जिसमें नाम-स्मरण किया जाय, (क्योंकि) नाम-स्मरण के बिना ऋतु व्यर्थ है अर्थात् किस काम की है? ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ मलार महला १ ॥ करउ बिनउ गुर अपने प्रीतम हरि

वरु आणि मिलावै । सुणि घनघोर सीतलु मनु मोरा लाल रती गुण गावै ॥ १ ॥ बरसु घना मेरा मनु भीना । अंम्रित बूंद सुहानी हीअरै गुरि मोही मनु हरि रसि लीना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सहजि सुखी वर कामणि पिआरी जिसु गुरबचनी मनु मानिआ । हरि वरि नारि भई सोहागणि मनि तनि प्रेमु सुखानिआ ॥ २ ॥ अवगण तिआगि भई बैरागनि असथिरु वरु सोहागु हरी । सोगु विजोगु तिसु कदे न विआपै हरि प्रभि अपणी किरपा करी ॥ ३ ॥ आवण जाणु नही मनु निहचलु पूरे गुर की ओट गही । नानक राम नामु जपि गुरमुखि धनु सोहागणि सचु सही ॥ ४ ॥ २ ॥

मैं अपने सतिगुरु के समक्ष विनती करता हूँ, जो मेरे प्रियतम हरि को मुझे मिलाए। बादल रूपी सतिगुरु की उपदेश रूपी गर्जना सुनकर मोर रूपी मेरा मन शीतल हो गया है। जिसमें अनुरक्त होकर मेरी वाणी प्यारे हरि-प्रभु में अनुरक्त हुई, उसका गुणगान करती है ॥१॥ जब बादल रूपी सतिगुरु ने उपदेश रूपी जल मुझ पर बरसाया है, तब मेरा मन प्रेम में भीग गया है। सतिगुरु की शिक्षा रूपी अमृत-बूंद मुझे हृदय में भली लगी है, जिसमें मेरी बुद्धि गुरु की ओर आकर्षित हुई है और मन हरि-प्रभु के प्रेमजन्य आनन्द में लीन हो गया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वही स्त्री पति की प्यारी एवं सुखी है, जिसका मन सतिगुरु के वचन में विश्वस्त हुआ है और जिसने हरि-पति को प्राप्त किया है। वही हरि-प्रियतम की स्त्री सुहागिन है, जिसके मन-तन के भीतर वाहिगुरु का प्रेम विद्यमान है ॥ २ ॥ अवगुणों को त्यागकर जो स्त्री वैरागिन हुई है, उसको हरि-पति का आनन्द अनुभूत हुआ है। जिस स्त्री पर हरि-प्रभु ने कृपा की है, उसे शोक-वियोग कभी भी व्याप्त नहीं होता है ॥३॥ जिन्होंने पूर्णसतिगुरु की ओट ली है, उनका मन स्थिर हुआ है और इसी के फलस्वरूप उनका जन्म-मरण नहीं होता है। गुरु नानकदेवजी का कथन है कि जिसने गुरु के द्वारा राम-नाम का स्मरण करके सत्यस्वरूप को दृढ़ किया है, वह सुहागिन धन्य है ॥ ४ ॥ २ ॥

॥ मलार महला १ ॥ साची सुरति नामि नही त्रिपते हउमै करत गवाइआ । परधन पर नारी रतु निंदा बिखु खाई दुखु पाइआ । सबदु चीनि भै कपट न छूटे मनिमुखि माइआ माइआ । अजगरि भारि लदे अति भारी मरि जनमे जनमु गवाइआ ॥ १ ॥ मनि भावै सबदु सुहाइआ । भ्रमि भ्रमि

जोनि भेख बहु कीन्हे गुरि राखे सचु पाइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तीरथि तेजु निवारि न न्हाते हरि का नामु न भाइआ । रतन पदारथु परहरि तिआगिआ जत को तत ही आइआ । बिसटा कीट भए उत ही ते उतही माहि समाइआ । अधिक सुआद रोग अधिकाई बिनु गुर सहजु न पाइआ ॥ २ ॥ सेवा सुरति रहसि गुण गावा गुरमुखि गिआनु बीचारा । खोजी उपजै बादी बिनसै हउ बलि बलि गुर करतारा । हम नीच हुोते हीण मति झूठे तू सबदि सवारणहारा । आतम चीनि तहा तू तारण सचु तारे तारणहारा ॥ ३ ॥ बैसि सुथानि कहां गुण तेरे किआ किआ कथउ अपारा । अलखु न लखीऐ अगमु अजोनी तूं नाथां नाथणहारा । किसु पहि देखि कहउ तू कैसा सभि जाचक तू दातारा । भगति हीणु नानकु दरि देखहु इकु नामु मिलै उरिधारा ॥ ४ ॥ ३ ॥

प्रभु के नाम-स्मरण एवं सत्यस्वरूप के ज्ञान से मनमुख तृप्त नहीं होते हैं और वे अहंकारग्रस्त होकर जन्म गँवाते हैं । वे पराए धन, परनारी और परनिन्दा में लगाव के कारण विषय रूपी विष खाते और दुःख प्राप्त करते हैं । गुरु के उपदेश को जानकर भी उनके भय और कपट समाप्त नहीं हुए हैं, क्योंकि वे मनमुख मन और वाणी से माया-माया कहते रहते हैं । वे मनमुख भारी पापों से लदे हुए अत्यन्त भारी पीड़ा को प्राप्त करते हैं, उन्होंने जन्मते-मरते हुए यह जन्म भी व्यर्थ ही गँवा लिया है ॥१॥ जिसे मन में गुरु का उपदेश प्रिय लगा है, उसी का जन्म सफल हुआ है । भ्रमवश योनियों में भटककर बहुत से वेश किए हैं; (लेकिन) जिन्हें गुरु ने भ्रमों से बचाया है, उन्होंने ही सुख को प्राप्त किया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तमोगुण को समाप्त कर मनमुख जन तीर्थ में स्नान नहीं करते और मन से प्रभु के नाम को स्मरण नहीं करते । दुःखों का परिहार करनेवाला जो रत्न-पदार्थ (हरि-नाम) था, उसे मनमुख ने त्याग दिया है और जहाँ से आया था वहाँ ही चला गया । वे मनमुखता के कारण विष्ठा के कीड़े हैं, और पुनः उसी गर्भ या विष्ठा में उन मनमुखों का मन संलिप्त है । अत्यधिक रसों का स्वाद लेने के कारण उन्हें रोग भी अधिक होते हैं, क्योंकि गुरु के बिना उन्हें सहज ज्ञान प्राप्त नहीं होता है ॥ २ ॥ जिन्होंने श्रेष्ठ प्रीति करके सतिगुरु की सेवा की है और प्रेमपूर्वक हरि का गुणगान किया है, उन गुरमुखों ने चिन्तन करके ज्ञान को प्राप्त किया है । जो गुरु-उपदेश पर विचार करनेवाले हैं, वे दुःखों से उबरे हैं और जो गुरु के प्रति वैर-विरोध करनेवाले हैं, वे दुःखों में नष्ट

हुए हैं। इसलिए ऐसे सतिगुरु, जो कर्तार रूपी हैं, उन पर मैं मन-वाणी से बलिहारी हूँ। हे सतिगुरु! हम नीच एवं हीन हैं और तुम उपदेश देकर हमें सँवारनेवाले हो। जहाँ आत्मज्ञान है वहाँ तुम अवस्थित हो, इसलिए उद्धार करनेवाला जहाज़ रूपी सच्चा नाम देकर समस्त जीव तुमने ही पार उतारे हैं ॥ ३ ॥ सत्संग रूपी पवित्र स्थान पर बैठकर मैं तुम्हारे गुणों का गायन करूँ, लेकिन अनन्त गुणों का बखान कैसे करूँ? हे मन-वाणी से अगम्य अगोचर प्रभु! तुम्हें देखा नहीं जा सकता, (जबकि) तुम सबको अपने अधीनस्थ करके सबके स्वामी हो। तुम्हारे स्वरूप का दर्शन कर मैं किसको कहूँ कि तुम कैसे हो? (क्योंकि) समस्त जीव तुम्हारे याचक हैं और तुम सबके दाता हो। गुरु नानक का कथन है कि मैं भक्तिहीन तुम्हारे द्वार को देख रहा हूँ। मुझे वह नाम मिले, जिस नाम का प्रेम मैंने हृदय में बसाया है ॥ ४ ॥ ३ ॥

॥ मलार महला १ ॥ जिनि धन पिर का सादु न जानिआ सा बिलख बदन कुमलानी। भई निरासी करम की फासी बिनु गुर भरमि भुलानी ॥ १ ॥ बरसु घना मेरा पिरु घरि आइआ। बलि जावां गुर अपने प्रीतम जिनि हरि प्रभु आणि मिलाइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नउतन प्रीति सदा ठाकुर सिउ अनदिनु भगति सुहावी। मुकति भए गुरि दरसु दिखाइआ जुगि जुगि भगति सुभावी ॥ २ ॥ हम थारे त्रिभवण जगु तुमरा तू मेरा हउ तेरा। सतिगुरि मिलिऐ निरंजनु पाइआ बहुरि न भवजलि फेरा ॥ ३ ॥ अपुने पिर हरि देखि विगासी तउ धन साचु सीगारो। अकुल निरंजन सिउ सचि साची गुरमति नामु अधारो ॥ ४ ॥ मुकति भई बंधन गुरि खोल्हे सबदि सुरति पति पाई। नानक राम नामु रिद अंतरि गुरमुखि मेलि मिलाई ॥ ५ ॥ ४ ॥

जिस जीव रूपी स्त्री ने पति-प्रेम का आस्वादन नहीं किया है, उस व्याकुलमना कुम्हलाए हुए मुख वाली स्त्री की बुद्धि भी कुम्हलाई हुई है। वह कर्मचक्र में फँसी हुई हरि-मिलाप से निराश है, क्योंकि गुरु के बिना वह भ्रम में भटकी हुई है ॥ १ ॥ जब गुरु रूपी मेघ ने उपदेश रूपी जल बरसाया, तब मेरा पति-परमेश्वर अन्तःकरण रूपी घर में आया। उस सतिगुरु पर मैं बलिहारी हूँ, जिन्होंने मेरे प्रियतम हरि-प्रभु को मुझसे मिला दिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसकी नित्यनवीन प्रीति अपने ठाकुर के प्रति है, वही निरन्तर भक्ति करके सौभाग्यवती हुई है। जिसको

जब सतिगुरु ने हरि-प्रियतम का दर्शन दिखाया, तब उसका अन्तःकरण विकारों से मुक्त हो गया। इसलिए युग-युग में उसकी भक्ति शोभनीय है ॥ २ ॥ हे प्रभु ! हम तुम्हारे द्वारा उत्पादित हैं और त्रैलोक्य रूपी जगत भी तुम्हारे द्वारा उत्पादित है। इसलिए मैं तुम्हारा दास हूँ और तुम मेरे स्वामी हो। सतिगुरु के माध्यम से मैंने निरंजन प्रभु को प्राप्त किया है, इसलिए अब संसार-समुद्र में मेरा आवागमन नहीं होगा ॥ ३ ॥ इस प्रकार जो स्त्री अपने हरि-स्वामी को देखकर उल्लसित हुई है, उस स्त्री का शृंगार भी सच्चा है। तब ही अकुल निरंजन के साथ ऐक्यरूप होकर वह स्त्री पवित्र हुई है, जब उसने गुरु के उपदेश द्वारा प्रभु-नाम का आधार स्वीकारा है ॥ ४ ॥ वही मुक्त हुई है और गुरु ने उसी के बन्धन खोले हैं, जिसने गुरु के उपदेश में प्रवृत्त रहकर प्रतिष्ठा प्राप्त की है। गुरु नानकदेव का कथन है कि उसी गुरुमुख स्त्री को सतिगुरु ने नाम-स्मरण, प्रभु-ज्ञान द्वारा वाहिगुरु से मिलाया है ॥ ५ ॥ ४ ॥

॥ महला १ मलार ॥ परदारा परधनु परलोभा हउमै बिखै बिकार। दुसट भाउ तजि निंद पराई कामु क्रोधु चंडार ॥ १ ॥ महल महि बैठे अगम अपार। भीतरि अंम्रितु सोई जनु पावै जिसु गुर का सबदु रतनु आचार ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दुख सुख दोऊ सम करि जानै बुरा भला संसार। सुधि बुधि सुरति नामि हरि पाईऐ सत संगति गुर पिआर ॥ २ ॥ अहिनिसि लाहा हरि नामु परापति गुरु दाता देवणहारु। गुरमुखि सिख सोई जनु पाए जिसनो नदरि करे करतारु ॥ ३ ॥ काइआ महलु मंदरु घरु हरि का तिसु महि राखी जोति अपार। नानक गुरमुखि महलि बुलाईऐ हरि मेले मेलणहार ॥४॥५॥

हे भाई, परनारी, पराए धन, पराए धन के लोभ, अहंकार आदि विषय-विकारों को त्यागो। दुष्ट स्वभाव, परनिंदा को त्यागकर काम-क्रोध आदि महान चाण्डालों को हटाओ ॥ १ ॥ तुम इस शरीर रूपी महल में बैठकर ही अगम्य अपार प्रभु को प्राप्त करोगे; लेकिन इस शरीर के भीतर अमृत रूपी परमेश्वर को वही आदमी पाता है, जिसने गुरु के शब्द रूपी रत्न को धारण करने का आचरण किया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वे ही दुःख-सुख दोनों को समान भाव से जानते हैं और संसार में बुरा कर्म त्यागकर शुभ कर्म ही करते हैं। सतिगुरु की सत्संगति में रहकर शुद्ध बुद्धि द्वारा हरि-नाम के स्मरण से प्रभु-हरि को पाया जाता है ॥ २ ॥ दिन-रात प्रभु के नाम का लाभ उन्हें हुआ है, जिनको सतिगुरु दाता ने स्वयं दिया है। गुरु के द्वार पर वही व्यक्ति शिक्षा पाता है, जिस पर कर्तार

प्रभु आप कृपादृष्टि करता है ॥ ३ ॥ समस्त मन्दिरों में जो काया-गृह है, वही हरि का अपना महल है, क्योंकि इसी में वाहिगुरु ने अपनी ज्योति प्रतिष्ठित की है। गुरु नानकदेव का कथन है कि वही गुरमुख हरि के स्वरूप में (महल में) बुलाए जाते हैं, जिन्हें समर्थ हरि ने सत्संग में मिलाया है ॥ ४ ॥ ५ ॥

मलार महला १ घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ पवणै पाणी जाणै जाति। काइआं अगनि करे निभरांति। जंमहि जीअ जाणै जे थाउ। सुरता पंडितु ता का नाउ ॥१॥ गुण गोबिंद न जाणीअहि माइ। अणडीठा किछु कहणु न जाइ। किआ करि आखि वखाणीऐ माइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऊपरि दरि असमानि पइआलि। किउ करि कहीऐ देहु वीचारि। बिनु जिहवा जो जपै हिआइ। कोई जाणै कैसा नाउ ॥ २ ॥ कथनी बदनी रहै निभरांति। सो बूझै होवै जिसु दाति। अहिनिसि अंतरि रहै लिव लाइ। सोई पुरखु जि सचि समाइ ॥ ३ ॥ जाति कुलीनु सेवकु जे होइ। ता का कहणा कहहु न कोइ। विचि सनातीं सेवकु होइ। नानक पण्हीआ पहिरै सोइ ॥ ४ ॥ १ ॥ ६ ॥

पवन, पानी आदि तत्त्व जिससे उत्पन्न हुए हैं, उसे सर्वव्यापक मानो। इसलिए तृष्णा अथवा काम-अग्नि त्यागकर मन को भटकने से बचाओ। जिससे जीव उत्पन्न हुए हैं, यदि उस स्थान को जान लो, (तो इस प्रकार जानने से) मनुष्य समस्त शास्त्रों का ज्ञाता है और उसी का नाम पंडित है ॥ १ ॥ सतिगुरु के बिना मायापति गोबिन्द प्रभु के गुणों को जाना नहीं जा सकता है और उसे देखे बिना कुछ कहा नहीं जाता। इसलिए, हे भाई ! उस प्रभु को किस प्रकार का कहकर व्यक्त किया जाए ? ॥१॥ रहाउ ॥ ऊपर आकाश और नीचे पाताल के मध्य मातृलोक है। इन तीनों में जो पूर्णवाहिगुरु है, उसे किस प्रकार का कहा जाय ? ऐसा कोई विचार दीजिए ? रसना के बिना जो हृदय में स्मरण करता है, उसे कोई जानता है कि वह कैसा नाम जपता है अर्थात् वह प्रभु अकथ्य है ॥ २ ॥ प्रभु का गुणगान करे और स्तवन करे। ऐसे (जीवन बिताता हुआ) भ्रमरहित होकर रहे; (लेकिन फिर भी) ऐसे स्वरूप को वही समझता है, जिसे वाहिगुरु देन देते हैं। वही उत्तम पुरुष है, जो

रात-दिन अपनी वृत्ति को प्रभु में लगाए रखता है, जो इस प्रकार सत्यस्वरूप में समा जाता है ।। ३ ।। यदि कोई उत्तम जाति में उत्पन्न जीव वाहिगुरु का सेवक हो और उसका यशोगान न करे (तो जन्म व्यर्थ है), लेकिन जो नीच जाति में उत्पन्न होकर भी प्रभु-सेवक हो, गुरु नानक कहते हैं कि उसके पाँवों में पहनने के लिए हमारे शरीर की चमड़ी के जूते प्रस्तुत हैं ।। ४ ।। १ ।। ६ ।।

।। मलार महला १ ।। दुखु वेछोड़ा इकु दुखु भूख । इकु दुखु सकत वार जमदूत । इकु दुखु रोगु लगै तनि धाइ । वैद न भोले दारू लाइ ।। १ ।। वैद न भोले दारू लाइ । दरदु होवै दुखु रहै सरीर । ऐसा दारू लगै न बीर ।। १ ।। रहाउ ।। खसमु विसारि कीए रस भोग । तां तनि उठि खलोए रोग । मन अंधे कउ मिलै सजाइ । वैद न भोले दारू लाइ ।। २ ।। चंदन का फलु चंदन वासु । माणस का फलु घट महि सासु । सासि गइऐ काइआ ढलि पाइ । ता कै पाछै कोइ न खाइ ।। ३ ।। कंचन काइआ निरमल हंसु । जिसु महि नामु निरंजन अंसु । दूख रोग सभि गइआ गवाइ । नानक छूटसि साचै नाइ ।। ४ ।। २ ।। ७ ।।

एक तो वाहिगुरु का वियोग रूपी दुःख है और एक दूसरा दुःख भूख का है । एक दुःख यह है, जो जीव को शक्ति वाले यमदूत पकड़कर ले जाते हैं । एक दुःख यह है, जो शरीर को पाकर रोग लग जाता है । हे भोले वैद्य ! ओषधि न लगाइए ।। १ ।। हे भोले वैद्य ! यह ओषधि हमें न लगाइए, क्योंकि मेरे हृदय में विरह का दर्द है । (इसलिए) हे भाई ! यह तुम्हारा बनाया हुआ दारू (दवा) हम पर प्रभाव नहीं करता ।। १ ।। रहाउ ।। जब अपने मालिक-प्रभु को विस्मृत कर इस जीव ने रस और भोगों का आस्वादन किया, तब इस जीव के अन्तःकरण में यह सूक्ष्म रोग उत्पन्न हुए हैं, इसी से अज्ञानवश अन्धे मन को सजा मिलती है । हे भोले वैद्य ! यह बाहर की ओषधि न लगाएं ।। २ ।। जैसे चन्दन का वास और शीतलता ही चन्दन का फल है, उसी प्रकार मनुष्य का फल यही देह में आनेवाले श्वास हैं । जब शरीर में से श्वास निकल जाते हैं, तब स्थूल देह ढल जाती है । जिसके पश्चात् कोई अन्न-जल ग्रहण नहीं करता ।। ३ ।। जिसमें निरंजन के नाम का अंशमात्र भी है, वह मनुष्य-देह स्वर्ण के तुल्य शुद्ध है और जिसमें अवस्थित जीव भी निर्मल है । गुरु नानकदेव का कथन है कि वह जीव सच्चे नाम के बल पर

बन्धनमुक्त होता है और नाम-स्मरण से ही जन्म-मरण आदि दुःखों के तथा अहंकार आदि रोगों से मुक्त हो जाता है ।। ४ ।। २ ।। ७ ।।

।। मलार महला १ ।। दुख महुरा मारण हरि नामु । सिला संतोख पीसणु हथि दानु । नित नित लेहु न छीजै देह । अंत कालि जमु मारै ठेह ।। १ ।। ऐसा दारू खाहि गवार । जितु खाधै तेरे जाहि विकार ।। १ ।। रहाउ ।। राजु मालु जोबनु सभु छांव । रथि फिरंदै दीसहि थाव । देह न नाउ न होवै जाति । ओथै दिहु ऐथै सभ राति ।। २ ।। साद करि समधां त्रिसना घिउ तेलु । कामु क्रोधु अगनी सिउ मेलु । होम जग अरु पाठ पुराण । जो तिसु भावै सो परवाण ।। ३ ।। तपु कागदु तेरा नामु नीसानु । जिन कउ लिखिआ एहु निधानु । से धनवंत दिसहि घरि जाइ । नानक जननी धंनी माइ ।। ४ ।। ३ ।। ८ ।।

दुःख विष है, जिसको समाप्त करनेवाला (भस्म बनानेवाला) हरि का नाम-स्मरण है। सन्तोष खरल है और हाथों से दान करना ओषधि का पीसना है। हे भाई ! यदि तू ऐसी ओषधि नित्यप्रति ले, तो तेरी देह निष्फल नहीं होगी। यदि ऐसी ओषधि नहीं लेगा, तब तुझे यमदूत अन्तिम समय में ले लेगा अर्थात् चोटें मारेगा ।। १ ।। हे मूर्ख ! तू ऐसी ओषधि ले, जिसके खाने से तेरे सम्पूर्ण विकार दूर हो जाएँ ।। १ ।। रहाउ ।। राज्य, माल, यौवन आदि सम्पूर्ण पदार्थ छाया के तुल्य चंचल हैं, जैसे सूर्य का रथ घूमे बिना वह स्थान दृष्टिगोचर नहीं होता और छाया स्थायी नहीं रहती। परलोक में देह, नाम और जाति कोई भी साथ नहीं जायगा। इस लोक में ही रात्रि हो जायगी और वहाँ परलोक में दिन हो जायगा अर्थात् सम्पूर्ण कर्मों का वहाँ लेखा-जोखा होगा ।। २ ।। इसलिए अनेक स्वादों को लकड़ियाँ, तृष्णा को घी, काम-क्रोध को तेल करके वैराग्य अर्थात् ज्ञान की अग्नि में मिलाओ। इस होम में पुराणों का पठन-पाठन जो भी कर्म हैं, इनमें से जो वाहिगुरु को भाए वही प्रामाणिक है ।। ३ ।। हे भाई ! तुम्हारा तप करना ही काग़ज़ है। इस काग़ज़ पर जब नाम का परवाना (नीसानु) लिखा जाए अर्थात् नाम-सहित जो तप किया हो; ऐसा जिनके भाग्य में लिखा हो उन्हें नामनिधि प्राप्त होती है। इसलिए परलोक में जाकर वे ही नामनिधि वाले दृष्टिगत होते हैं। गुरु नानक का कथन है कि ऐसे जीवों की माता धन्य है ।। ४ ।। ३ ।। ८ ।।

।। मलार महला १ ।। बागे कापड़ बोलै बैण । लंमा

नकु काले तेरे नैण । कबहूं साहिबु देखिआ भैण ।। १ ।। ऊडां ऊडि चड़ां असमानि । साहिब संम्रिथ तेरै ताणि । जलि थलि डूंगरि देखां तीर । थान थनंतरि साहिबु बीर ।। २ ।। जिनि तनु साजि दीए नालि खंभ । अति त्रिसना उडणै की डंझ । नदरि करे तां बंधां धीर । जिउ वेखाले तिउ वेखां बीर ।।३।। न इहु तनु जाइगा न जाहिगे खंभ । पउणै पाणी अगनी का सनबंध । नानक करमु होवै जपीऐ करि गुरु पीरु । सचि समावै एहु सरीरु ।। ४ ।। ४ ।। ६ ।।

हे योगी रूपी सारस ! तेरे वस्त्र श्वेत हैं, मीठे वचन हैं, तेरी नाक लम्बी है और काले नेत्र हैं, लेकिन, हे बहिन ! इस शरीर में तूने कभी परमेश्वर को देखा है ? ।। १ ।। प्राणायाम के द्वारा सारस की तरह उड़कर प्राणों को दशम द्वार में चढ़ा लेता हूँ, परन्तु समर्थ परमेश्वर के बल के फलस्वरूप ही तो यह शक्ति प्राप्त हुई है । जल, थल, पर्वतों एवं नदियों के किनारे जहाँ मैं देखता हूँ, सर्वत्र वही प्रभु परिव्याप्त है ।। २ ।। जिस वाहिगुरु ने यह देह निर्मित कर इसके साथ प्राण रूपी पंख लगाए हैं, अत्यन्त तृष्णा के फलस्वरूप इधर-उधर दौड़ने की ललक लगी रहती है अर्थात् यह तृष्णा भी उसी के द्वारा उत्पादित है । यदि प्रभु कृपा करे, तो मुझे धैर्य हो । हे भाई ! जिस प्रकार सतिगुरु दिखाए, उसी प्रकार देखूं ।। ३ ।। परलोक में न यह शरीर जाएगा और न श्वास रूपी पंख जाएँगे । जिन पवन, पानी, अग्नि आदि तत्त्वों से यह शरीर निर्मित हुआ है, यह उन्हीं में विलीन हो जायगा । गुरु नानकजी का कथन है कि यदि इस जीव के कर्म श्रेष्ठ हों तो गुरु-पीर को धारण कर वाहिगुरु के नाम को जपा जाता है । जाप करने पर यह जीव शरीर के होते हुए भी सत्यस्वरूप में समा जाता है ।। ४ ।। ४ ।। ९ ।।

मलार महला ३ चउपदे घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। निरंकारु आकारु है आपे आपे भरमि भुलाए । करि करि करता आपे वेखै जितु भावै तितु लाए । सेवक कउ एहा वडिआई जा कउ हुकमु मनाए ।। १ ।। आपणा भाणा आपे जाणै गुर किरपा ते लहीऐ । एहा सकति सिवै घरि आवै जीवदिआ मरि रहीऐ ।। १ ।। रहाउ ।। वेद पड़ै पड़ि वादु वखाणै ब्रहमा बिसनु महेसा । एह त्रिगुण माइआ

जिनि जगतु भुलाइआ जनम मरण का सहसा । गुर परसादी एको जाणै चूकै मनहु अंदेसा ॥ २ ॥ हम दीन मूरख अवीचारी तुम चिंता करहु हमारी । होहु दइआल करि दासु दासा का सेवा करी तुमारी । एकु निधानु देहि तू अपणा अहिनिसि नामु वखाणी ॥ ३ ॥ कहत नानकु गुर परसादी बूझहु कोई ऐसा करे वीचारा । जिउ जल ऊपरि फेनु बुदबुदा तैसा इहु संसारा । जिस ते होआ तिसहि समाणा चूकि गइआ पासारा ॥ ४ ॥ १ ॥

निरंकार प्रभु ने साकार होकर आप ही जीवों को भ्रमित किया हुआ है । वह कर्तापुरुष जीवों को निर्मित कर आप ही देखता है । जिस ओर उसे सही लगता है, उसी ओर जीव लगा दिए हैं । जिसको अपना हुकुम मनवाता है, उस सेवक को हुकुम मानने की महत्ता भी उसी ने प्रदान की है ॥ १ ॥ जो वाहिगुरु अपना भाणा (स्वेच्छा) आप ही जानता है, वह गुरु की कृपा से देखा जाता है । जब इस माया-शक्ति से वृत्ति विपरीत होकर परमात्मा के घर में आए, तब जीवात्मा जीवित रहते हुए भी मृत-तुल्य (सांसारिक-विरक्ति) हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वेदों को पढ़-पढ़कर जीव, ब्रह्मा, बिष्णु और महेश आदि देवों के झगड़े करते हैं । यह त्रिगुणी माया है, जिसने जगत को भ्रमित किया हुआ है । इसी के फलस्वरूप जीव को जन्म-मरण का संशय पड़ा हुआ है । जब गुरु की कृपा से उस सत्यस्वरूप प्रभु की पहचान हो जाय, तब इस जीव के मन से समस्त शंका मिट जाती है ॥ २ ॥ हे प्रभु ! मुझ पर दयालु होकर अपने दासों का दास बनाओ, जिससे तुम्हारी सेवा करता रहूँ । जब तुम अपनी नाम-निधि मुझे प्रदान करो, तब मैं रात-दिन उसका उच्चारण करता रहूँ ॥ ३ ॥ गुरु नानक का कथन है कि इस तथ्य को कोई गुरु-कृपा से ही जान सकता और विचार करता है । जिस प्रकार जल के ऊपर बुदबुदा होता है, उसी प्रकार का यह संसार है । जिस वाहिगुरु से यह जीव अलग हुआ था, जब उसी स्वरूप में समाहित हुआ तब इसके जन्मों का प्रसार दूर हो गया ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ मलार महला ३ ॥ जिनी हुकमु पछाणिआ से मेले हउमै सबदि जलाइ । सची भगति करहि दिनु राती सचि रहे लिव लाइ । सदा सचु हरि वेखदे गुर कै सबदि सुभाइ ॥ १ ॥ मन रे हुकमु मंनि सुखु होइ । प्रभ भाणा अपणा भावदा जिसु बखसे तिसु बिघनु न कोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ त्रैगुण सभा धातु

नकु काले तेरे नैण । कबहूं साहिबु देखिआ भैण ।। १ ।। ऊडां ऊडि चड़ां असमानि । साहिब संम्रिथ तेरै ताणि । जलि थलि डूंगरि देखां तीर । थान थनंतरि साहिबु बीर ।। २ ।। जिनि तनु साजि दीए नालि खंभ । अति त्रिसना उडणै की डंझ । नदरि करे तां बंधां धीर । जिउ वेखाले तिउ वेखां बीर ।।३।। न इहु तनु जाइगा न जाहिगे खंभ । पउणै पाणी अगनी का सनबंध । नानक करमु होवै जपीऐ करि गुरु पीरु । सचि समावै एहु सरीरु ।। ४ ।। ४ ।। ६ ।।

हे योगी रूपी सारस ! तेरे वस्त्र श्वेत हैं, मीठे वचन हैं, तेरी नाक लम्बी है और काले नेत्र हैं, लेकिन, हे बहिन ! इस शरीर में तूने कभी परमेश्वर को देखा है ? ।। १ ।। प्राणायाम के द्वारा सारस की तरह उड़कर प्राणों को दशम द्वार में चढ़ा लेता हूँ, परन्तु समर्थ परमेश्वर के बल के फलस्वरूप ही तो यह शक्ति प्राप्त हुई है । जल, थल, पर्वतों एवं नदियों के किनारे जहाँ मैं देखता हूँ, सर्वत्र वही प्रभु परिव्याप्त है ।। २ ।। जिस वाहिगुरु ने यह देह निर्मित कर इसके साथ प्राण रूपी पंख लगाए हैं, अत्यन्त तृष्णा के फलस्वरूप इधर-उधर दौड़ने की ललक लगी रहती है अर्थात् यह तृष्णा भी उसी के द्वारा उत्पादित है । यदि प्रभु कृपा करे, तो मुझे धैर्य हो । हे भाई ! जिस प्रकार सतिगुरु दिखाए, उसी प्रकार देखूं ।। ३ ।। परलोक में न यह शरीर जाएगा और न श्वास रूपी पंख जाएँगे । जिन पवन, पानी, अग्नि आदि तत्त्वों से यह शरीर निर्मित हुआ है, यह उन्हीं में विलीन हो जायगा । गुरु नानकजी का कथन है कि यदि इस जीव के कर्म श्रेष्ठ हों तो गुरु-पीर को धारण कर वाहिगुरु के नाम को जपा जाता है । जाप करने पर यह जीव शरीर के होते हुए भी सत्यस्वरूप में समा जाता है ।। ४ ।। ४ ।। ९ ।।

मलार महला ३ चउपदे घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। निरंकारु आकारु है आपे आपे भरमि भुलाए । करि करि करता आपे वेखै जितु भावै तितु लाए । सेवक कउ एहा वडिआई जा कउ हुकमु मनाए ।। १ ।। आपणा भाणा आपे जाणै गुर किरपा ते लहीऐ । एहा सकति सिवै घरि आवै जीवदिआ मरि रहीऐ ।। १ ।। रहाउ ।। वेद पड़ै पड़ि बादु वखाणै ब्रहमा बिसनु महेसा । एह त्रिगुण माइआ

जिनि जगतु भुलाइआ जनम मरण का सहसा। गुर परसादी एको जाणै चूकै मनहु अंदेसा ॥ २ ॥ हम दीन मूरख अवीचारी तुम चिंता करहु हमारी। होहु दइआल करि दासु दासा का सेवा करी तुमारी। एकु निधानु देहि तू अपणा अहिनिसि नामु वखाणी ॥ ३ ॥ कहत नानकु गुर परसादी बूझहु कोई ऐसा करे वीचारा। जिउ जल ऊपरि फेनु बुदबुदा तैसा इहु संसारा। जिस ते होआ तिसहि समाणा चूकि गइआ पासारा ॥ ४ ॥ १ ॥

निरंकार प्रभु ने साकार होकर आप ही जीवों को भ्रमित किया हुआ है। वह कर्तापुरुष जीवों को निर्मित कर आप ही देखता है। जिस ओर उसे सही लगता है, उसी ओर जीव लगा दिए हैं। जिसको अपना हुकुम मनवाता है, उस सेवक को हुकुम मानने की महत्ता भी उसी ने प्रदान की है ॥ १ ॥ जो वाहिगुरु अपना भाणा (स्वेच्छा) आप ही जानता है, वह गुरु की कृपा से देखा जाता है। जब इस माया-शक्ति से वृत्ति विपरीत होकर परमात्मा के घर में आए, तब जीवात्मा जीवित रहते हुए भी मृत-तुल्य (सांसारिक-विरक्ति) हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वेदों को पढ़-पढ़कर जीव, ब्रह्मा, विष्णु और महेश आदि देवों के झगड़े करते हैं। यह त्रैगुणी माया है, जिसने जगत को भ्रमित किया हुआ है। इसी के फलस्वरूप जीव को जन्म-मरण का संशय पड़ा हुआ है। जब गुरु की कृपा से उस सत्यस्वरूप प्रभु की पहचान हो जाय, तब इस जीव के मन से समस्त शंका मिट जाती है ॥ २ ॥ हे प्रभु ! मुझ पर दयालु होकर अपने दासों का दास बनाओ, जिससे तुम्हारी सेवा करता रहूँ। जब तुम अपनी नाम-निधि मुझे प्रदान करो, तब मैं रात-दिन उसका उच्चारण करता रहूँ ॥ ३ ॥ गुरु नानक का कथन है कि इस तथ्य को कोई गुरु-कृपा से ही जान सकता और विचार करता है। जिस प्रकार जल के ऊपर बुदबुदा होता है, उसी प्रकार का यह संसार है। जिस वाहिगुरु से यह जीव अलग हुआ था, जब उसी स्वरूप में समाहित हुआ तब इसके जन्मों का प्रसार दूर हो गया ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ मलार महला ३ ॥ जिनी हुकमु पछाणिआ से मेले हउमै सबदि जलाइ। सची भगति करहि दिनु राती सचि रहे लिव लाइ। सदा सचु हरि वेखदे गुर कै सबदि सुभाइ ॥ १ ॥ मन रे हुकमु मंनि सुखु होइ। प्रभ भाणा अपणा भावदा जिसु बखसे तिसु बिघनु न कोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ त्रैगुण सभा धातु

है ना हरि भगति न भाइ। गति मुकति कदे न होवई हउमै करम कमाहि। साहिब भावै सो थीऐ पइऐ किरति फिराहि ॥ २ ॥ सतिगुर भेटिऐ मनु मरि रहै हरि नामु वसै मनि आइ। तिस की कीमति ना पवै कहणा किछू न जाइ। चउथै पदि वासा होइआ सचै रहै समाइ ॥ ३ ॥ मेरा हरि प्रभु अगमु अगोचरु है कीमति कहणु न जाइ। गुर परसादी बुझीऐ सबदे कार कमाइ। नानक नामु सलाहि तू हरि हरि दरि सोभा पाइ ॥ ४ ॥ २ ॥

जिन्होंने वाहिगुरु के हुकुम को पहचाना है, सतिगुरु ने उपदेश द्वारा उनके भीतर का अहकार जलाकर उन्हें उस हरि के स्वरूप में मिला दिया है। वे रात-दिन सच्ची भक्ति करते हैं और सत्यस्वरूप में वृत्ति लगाए रहते हैं। गुरु की शिक्षा के प्रभाव से वे स्वाभाविक रूप से सदैव सत्य को ही सर्वत्र देखते हैं ॥ १ ॥ हे मन ! वाहिगुरु का हुक्म मानकर सुख होता है। प्रभु को अपना 'भाणा' माननेवाला भला लगता है। जिसे प्रभु 'भाणा मानना' (की सूझ) प्रदान करता है, उसे कोई विघ्न नहीं होता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सम्पूर्ण त्रैगुणी माया चंचल है; जो इसमें लगे हैं उन्हें न हरि की भक्ति प्राप्त होती है और न सन्तों के प्रति प्रेम। जो अहंकारयुक्त कर्म करते हैं, उन्हें मुक्ति की प्राप्ति कभी नहीं होती। जो साहिब को रुचता है, वही होता है। नास्तिक जीव कर्मानुसार योनियों में भटकते फिरते हैं ॥ २ ॥ सतिगुरु के मिलाप से जिसका मन बहिर्मुखता से मर जाता है, उसके मन में हरि का नाम अवस्थित हो जाता है। उसकी क़ीमत नहीं आँकी जाती और उसका यश कुछ कहा नहीं जाता है। उसका निवास तुरीय पद में हो जाता है, इसलिए वह उस तुरीय रूपी वाहिगुरु में समाया रहता है ॥३॥ मेरा हरि-प्रभु अगम्य और अगोचर है। उसका मूल्यांकन नहीं किया जा सकता। गुरु-कृपा से शब्द द्वारा साधना करके उस प्रभु को जाना जाता है। गुरु नानकजी का कथन है कि उस वाहिगुरु के नाम की ही सराहना कर। ऐसा करने पर जीव हर प्रकार से हरि के द्वार पर शोभा पाएगा ॥ ४ ॥ २ ॥

॥ मलार महला ३ ॥ गुरमुखि कोई विरला बूझै जिस नो नदरि करेइ। गुर बिनु दाता कोई नाही बखसे नदरि करेइ। गुर मिलिऐ सांति ऊपजै अनदिनु नामु लएइ ॥ १ ॥ मेरे मन हरि अंम्रित नामु धिआइ। सतिगुरु पुरखु मिलै नाउ पाईऐ हरि नामे सदा समाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनमुख सदा विछुड़े

फिरहि कोइ न किसही नालि। हउमै वडा रोगु है सिरि मारे जमकालि। गुरमति सत संगति न विछुड़हि अनदिनु नामु सम्हालि ॥ २ ॥ सभना करता एकु तू नित करि देखहि वीचारु। इकि गुरमुखि आपि मिलाइआ बखसे भगति भंडार। तू आपे सभु किछु जाणदा किसु आगै करी पूकार ॥ ३ ॥ हरि हरि नामु अंम्रितु है नदरी पाइआ जाइ। अनदिनु हरि हरि उचरै गुर कै सहजि सुभाइ। नानक नामु निधानु है नामे ही चितु लाइ ॥ ४ ॥ ३ ॥

हे भाई ! जिस पर वाहिगुरु कृपा करता है, ऐसा सतिगुरु द्वारा नाम को जपनेवाला कोई विरला होता है। गुरु के अतिरिक्त नाम का दाता कोई दूसरा नहीं है। जिस पर सतिगुरु कृपा करता है, उसको नाम प्रदान करता है। गुरु के मिलने पर जो निरन्तर नाम का उच्चारण करते हैं, उनके हृदय में शान्ति उत्पन्न होती है ॥ १ ॥ हे मेरे मन ! हरि के नाम-अमृत को सदैव स्मरण कर। सतिगुरु के मिलने पर ही वाहिगुरु का नाम प्राप्त होता है। इसलिए उन सतिगुरु के द्वार पर हरि-नाम में सदैव संलिप्त रहो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनमुख हरि से वियुक्त होकर योनियों में भटकते फिरते हैं, क्योंकि कोई शुभ गुण किसी मनमुख के पास नहीं है। उनके हृदय में अहंत्व का बड़ा भारी रोग है, इसलिए उनके सिर पर यमदूत चोटें मारते हैं। जो गुरु की शिक्षा द्वारा सत्संगति में मिले हैं और जिन्होंने नाम को निरन्तर सँभाला है, वे उस वाहिगुरु से कभी नहीं बिछुड़ते हैं ॥ २ ॥ गुरमुख जीव चिन्तन करके सबका कर्ता जिस एक वाहिगुरु को देखते हैं, उसे तू भी जान। एक ऐसे गुरमुख हैं, जिन्हें भक्ति-रूप भंडार दिए हैं और वाहिगुरु ने उन्हें निज-स्वरूप में मिला लिया है। हे हरि ! तुम आप ही सब कुछ जानते हो, इसलिए तुम्हारे अतिरिक्त किसके समक्ष पुकार की जाए ॥ ३ ॥ हे हरि ! आपका जो हरि-नाम रूपी अमृत है, वह आपकी या सतिगुरु की कृपा द्वारा ही पाया जाता है। गुरु के उपदेश के अनुसार जो निरन्तर ही हरि-नाम का उच्चारण करता है, वह शान्ति को सहज रूप में ही प्राप्त कर लेता है। गुरु नानकजी का कथन है कि हे मन ! नाम ही निधियों का भण्डार है, इसलिए उस नाम में ही हृदय को लगाओ ॥ ४ ॥ ३ ॥

॥ मलार महला ३ ॥ गुरु सालाही सदा सुखदाता प्रभु नाराइणु सोई। गुर परसादि परमपदु पाइआ वडी वडिआई होई। अनदिनु गुण गावै नित साचे सचि समावै सोई ॥ १ ॥

मन रे गुरमुखि रिदै वीचारि। तजि कूड़ु कुटंबु हउमै बिखु त्रिसना चलणु रिदै सम्हालि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतिगुरु दाता राम नाम का होरु दाता कोई नाही। जीअदानु देइ त्रिपतासे सचै नामि समाही। अनदिनु हरि रविआ रिद अंतरि सहजि समाधि लगाही ॥ २ ॥ सतिगुर सबदी इहु मनु भेदिआ हिरद साची बाणी। मेरा प्रभु अलखु न जाई लखिआ गुरमुखि अकथ कहाणी। आपे दइआ करे सुखदाता जपीऐ सारिंग पाणी ॥३॥ आवण जाणा बहुड़ि न होवै गुरमुखि सहजि धिआइआ। मन ही ते मनु मिलिआ सुआमी मन ही मंनु समाइआ। साचे ही सचु साचि पतीजै विचहु आपु गवाइआ ॥ ४ ॥ एको एकु वसै मनि सुआमी दूजा अवरु न कोई। एको नामु अंम्रितु है मीठा जगि निरमल सचु सोई। नानक नामु प्रभू ते पाईऐ जिन कउ धुरि लिखिआ होई ॥ ५ ॥ ४ ॥

सुखदाता सतिगुरु की सदैव सराहना करो। वही सतिगुरु प्रभु नारायण का स्वरूप है। गुरु-कृपा से जिन्होंने परमपद पाया है, उनकी अत्यन्त प्रशंसा हुई है। जो दिन-रात सच्चे गुण गाते हैं, वे ही पुरुष सत्यस्वरूप में समाते हैं ॥ १ ॥ हे मन ! उस वाहिगुरु-स्वरूप गुरु को हृदय में स्मरण करो, मिथ्या कुटुम्ब एवं अहंकार के विषयों की तृष्णा को त्याग दो और मृत्यु को हृदय में याद करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतिगुरु ही राम-नाम के दाता हैं, उनके अतिरिक्त दूसरा कोई दाता नहीं है। जो सच्चे वाहिगुरु में समाते हैं. वही जीव प्रभु ने दान देकर तृप्त किए हैं। जिनके अन्तर्मन में निरन्तर हरि-नाम उच्चरित हुआ है, वही सहज-पद में समाधि लगाते हैं ॥ २ ॥ सतिगुरु के उपदेश से जिन्होंने इस मन को प्रभु में तल्लीन कर लिया है, उनके हृदय में नाम की वाणी प्राप्त हुई है। मेरा प्रभु, जो अलक्ष्य-रूप है, उसकी कथा गुरु द्वारा कही गई है। जब सुखदाता प्रभु आप दया करता है, तब उस शाङ्र्गपाणि के नाम को जपा जाता है ॥ ३ ॥ जिन गुरमुखों ने सहजभाव परब्रह्म को स्मरण किया है, उनका आवागमन का चक्र समाप्त हो जाता है। उन गुरमुखों को गुरु के नाम-स्मरण से ही हरि-स्वामी मिला है, इसीलिए उनका यह मन परमात्म-लीन है। जिन्होंने हृदय में से अहंत्व को गँवा दिया है, वे सच्चे पुरुष ही निश्चय करके सत्य-स्वरूप में विश्वस्त हुए हैं ॥ ४ ॥ जिनके मन में एकमात्र स्वामी अवस्थित है, उन्हें कोई दूसरा दृष्टिगत नहीं होता है। एक नाम-अमृत, जो परम मीठा है, वही समस्त जगत में निर्मल और सत्य है। गुरु नानकदेवजी का कथन है कि वह नाम समर्थ सतिगुरु

से मिलता है, लेकिन जिनके भाग्य में प्रभु-द्वार से प्राप्ति का लेख लिखा है, उन्हें ही प्राप्त होता है ॥ ५ ॥ ४ ॥

॥ मलार महला ३ ॥ गण गंधरब नामे सभि उधरे गुर का सबदु बीचारि । हउमै मारि सद मंनि वसाइआ हरि राखिआ उरिधारि । जिसहि बुझाए सोई बूझै जिस नो आपे लए मिलाइ । अनदिनु बाणी सबदे गांवै साचि रहै लिव लाइ ॥१॥ मन मेरे खिनु-खिनु नामु सम्हालि । गुर की दाति सबद सुखु अंतरि सदा निबहै तेरै नालि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनमुख पाखंडु कदे न चूकै दूजै भाइ दुखु पाए । नामु विसारि बिखिआ मनि राते बिरथा जनमु गवाए । इह वेला फिरि हथि न आवै अनदिनु सदा पछुताए । मरि मरि जनमै कदे न बूझै विसटा माहि समाए ॥ २ ॥ गुरमुखि नामि रते से उधरे गुर का सबदु वीचारि । जीवन मुकति हरि नामु धिआइआ हरि राखिआ उरिधारि । मनु तनु निरमलु निरमल मति ऊतम ऊतम बाणी होई । एको पुरखु एकु प्रभु जाता दूजा अवरु न कोई ॥ ३ ॥ आपे करे कराए प्रभु आपे आपे नदरि करेइ । मनु तनु राता गुर की बाणी सेवा सुरति समेइ । अंतरि वसिआ अलख अभेवा गुरमुखि होइ लखाइ । नानक जिसु भावै तिसु आपे देवै भावै तिवै चलाइ ॥ ४ ॥ ५ ॥

देवगण, गन्धर्व तथा अन्य समस्त जीव सतिगुरु के शब्द को विचार कर, नाम जाप करकें पार उतरे हैं। जिन्होंने अहंत्व को मारकर नाम को सदा मन में बसाया है, उन्होंने सदैव हरि को हृदय में धारण किया है। जिस-जिसको वाहिगुरु स्वयं सत्संग में मिलाकर हृदय की परख कराता है, वही-वही निज-स्वरूप को समझ लेते हैं। वह निरन्तर सत्संग में गुरु की वाणी का गायन करता है और सत्यस्वरूप में वृत्ति को लगाए रहता है ॥ १ ॥ हे मेरे मन ! प्रतिपल नाम-स्मरण कर। सतिगुरु जब तुम्हें शब्द की देन देंगे, तब तुम्हारे भीतर सुखों की प्राप्ति होगी और वही देन तेरी सहायक होगी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनमुख के हृदय से कभी पाखण्ड दूर नहीं होता है, इसलिए वे द्वैत-भाव में लगे दुःख पाते हैं। वाहिगुरु के नाम को विस्मृत कर उनके मन विषयों में लीन हैं। इसी कारण वे व्यर्थ ही जन्म गँवाते हैं। यह सुअवसर पुनः उनके हाथ नहीं आएगा और वे रात-दिन पश्चात्ताप करते रहेंगे। मनमुख मर-मर जन्मते रहेंगे, गुरु के बिना वे प्रभु को कभी नहीं समझते, इसलिए वे बार-बार विष्ठा में

समाते हैं ॥ २ ॥ जो गुरमुख गुरु के उपदेश का चिन्तन कर नाम में अनुरक्त हुए हैं, उन्हीं का कल्याण हुआ है। उन जीवन्मुक्तों ने हरि के नाम को हृदय में स्मरण किया है और हरि को हृदय में धारण किया है। उनका मन-तन निर्मल हो गया है और उनकी बुद्धि तथा वाणी भी उत्तम हो गई है। उन्होंने एक अद्वैत पुरुष प्रभु को जाना है, जिनके अतिरिक्त उन्हें कोई दूसरा दृष्टिगत नहीं होता ॥ ३ ॥ आप ही वह कर्तापुरुष करता है, आप ही कर्मों को कराता है और आप ही इन पर कृपादृष्टि करता है। उनका मन-तन सदैव गुरु की वाणी में अनुरक्त हुआ है और सतिगुरु की सेवा में उनकी सुरति समाई हुई है। सबके भीतर जो अलक्ष्य, अभेद्यस्वरूप अवस्थित है, वह गुरमुख होने पर देखा जाता है। गुरु नानकजी का कथन है, जो प्रभु को भला लगता है, उसको वाहिगुरु आप ही नाम देता है। जैसा उसे रुचता है, वैसे ही वह जीवों को चलाता है ॥ ४ ॥ ५ ॥

॥ मलार महला ३ दुतुके ॥ सतिगुर ते पावै घरु दरु महलु सुथानु। गुर सबदी चूकै अभिमानु ॥ १ ॥ जिन कउ लिलाटि लिखिआ धुरि नामु। अनदिनु नामु सदा सदा धिआवहि साची दरगह पावहि मानु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मन की बिधि सतिगुर ते जाणै अनदिनु लागै सद हरि सिउ धिआनु। गुर सबदि रते सदा बैरागी हरि दरगह साची पावहि मानु ॥२॥ इहु मनु खेलै हुकम का बाधा इक खिन महि दहदिस फिरि आवै। जां आपे नदरि करे हरि प्रभु साचा तां इहु मनु गुरमुखि ततकाल वसि आवै ॥ ३ ॥ इसु मन की बिधि मन हू जाणै बूझै सबदि वीचारि। नानक नामु धिआइ सदा तू भवसागरु जितु पावहि पारि ॥ ४ ॥ ६ ॥

सतिगुरु द्वारा ही यह जीव शरीर-गृह में, जो श्रेष्ठ स्थान (अन्तःकरण) है, उसमें प्रभु-स्वरूप के ज्ञान को प्राप्त करता है। गुरु की शिक्षा से इसका देह-अभिमान दूर हो जाता है ॥ १ ॥ जिनके मस्तक पर प्रभु-द्वार से ही नाम-जाप का लेख लिखा है, वे निरन्तर मन, वाणी से नाम की उपासना करते हैं, उसी के द्वारा वे प्रभु-दरबार में सम्मानित होते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब चंचल मन को संयमित करने की विधि सतिगुरु से जानी, तब इसका निरन्तर हरि के साथ ध्यान लग जाता है। जो गुरु-ज्ञान में अनुरक्त हुए हैं, वे सदैव वैरागी हुए हैं और वे ही प्रभु के सच्चे दरबार में शोभा पाते हैं ॥ २ ॥ वाहिगुरु के हुकुम का बँधा हुआ जो यह मन पदार्थों में खेलता है, वह एक क्षण में चारों दिशाओं में

घूम आता है। लेकिन जब हरि-प्रभु अपनी कृपादृष्टि करता है, तब यह मन गुरु के द्वार पर तत्क्षण ही बस जाता है ॥ ३ ॥ इस मन को वश में करने की विधि मनुष्य तब जानता है, जब गुरु के उपदेश के अनुसार प्रभु के स्वरूप को समझ लेता है। गुरु नानकदेव का कथन है कि हे भाई! तू सदैव नाम-स्मरण किया कर, जिसके द्वारा तू संसार-समुद्र से पार उतर जायगा ॥ ४ ॥ ६ ॥

॥ मलार महला ३ ॥ जीउ पिंडु प्राण सभि तिस के घटि घटि रहिआ समाई। एकसु बिनु मै अवरु न जाणा सतिगुरि दीआ बुझाई ॥ १ ॥ मन मेरे नामि रहउ लिव लाई। अदिसटु अगोचरु अपरंपरु करता गुर कै सबदि हरि धिआई ॥१॥ रहाउ ॥ मनु तनु भीजै एक लिव लागै सहजे रहे समाई। गुर परसादी भ्रमु भउ भागै एक नामि लिव लाई ॥ २ ॥ गुरबचनी सचु कार कमावै गति मति तबही पाई। कोटि मधे किसहि बुझाए तिनि राम नामि लिव लाई ॥ ३ ॥ जह जह देखा तह एको सोई इह गुरमति बुधि पाई। मनु तनु प्रान धरीं तिसु आगै नानक आपु गवाई ॥ ४ ॥ ७ ॥

यह प्राण, देह सब प्रभु द्वारा उत्पादित हैं और फिर वही घट-घट में परिव्याप्त है। उस एक प्रभु के अतिरिक्त मैं किसी को नहीं जानता। उस प्रभु को मुझे सतिगुरु ने समझा दिया है ॥ १ ॥ हे मन! नामी वाहिगुरु में वृत्ति लगाकर स्थित हो। मन, वाणी, नेत्र आदि इन्द्रियों से परे जो अलक्ष्य, अगोचर अपार कर्तार है, वह गुरु के उपदेश द्वारा ही स्मरण किया जाता है ॥१॥रहाउ॥ जिनकी वृत्ति एक वाहिगुरु में लीन हो जाती है, उनके मन, तन प्रेम भीग जाते हैं और वे सहजावस्था में समाहित हो जाते हैं। गुरु-कृपा से जिन्होंने एक नाम में वृत्ति लगाई है, उनके भ्रम और भय भाग जाते हैं ॥ २ ॥ गुरु के ज्ञान द्वारा जो व्यक्ति सच्ची भक्ति की साधना करता है, उसी को गुरु-मत की प्राप्ति की हुई जानो। करोड़ों में किसी एक को सतिगुरु समझाते हैं और जिसे समझाते हैं उसने व्यापक-स्वरूप वाहिगुरु में वृत्ति लगाई है ॥ ३ ॥ मैं जहाँ-जहाँ देखता हूँ, वहाँ-वहाँ वही एक पूर्ण विद्यमान है। यह शिक्षा मुझे गुरु के उपदेश द्वारा मिली है। गुरु नानक का कथन है कि उसके समक्ष में मन, तन और प्राण न्योछावर करता हूँ ॥ ४ ॥ ७ ॥

॥ मलार महला ३ ॥ मेरा प्रभु साचा दूख निवारणु सबदे पाइआ जाई। भगती राते सद बैरागी दरि साचै पति

पाई ॥ १ ॥ मन रे मन सिउ रहउ समाई । गुरमुखि राम नामि मनु भीजै हरि सेती लिव लाई ॥१॥रहाउ॥ मेरा प्रभु अति अगम अगोचरु गुरमति देइ बुझाई । सचु संजमु करणी हरि कीरति हरि सेती लिव लाई ॥२॥ आपे सबदु सचु साखी आपे जिन्ह जोती जोति मिलाई । देही काची पउणु वजाए गुरमुखि अंम्रितु पाई ॥ ३ ॥ आपे साजे सभ कारै लाए सो सचु रहिआ समाई । नानक नाम बिना कोई किछु नाही नामे देइ वडाई ॥ ४ ॥ ८ ॥

मेरा सच्चा प्रभु, जो दुःखों का निवारक है, गुरु-ज्ञान द्वारा ही पाया जाता है । जो पुरुष भक्ति में अनुरक्त हो सदा वैरागी हैं, सच्चे प्रभु के द्वार पर उन्होंने ही प्रतिष्ठा पाई है ॥ १ ॥ हे मन ! प्रभु में लीन रहो । जिनका मन गुरु द्वारा व्यापक नामी के बीच भीग जाता है, उन्होंने हरि में वृत्ति लगाई है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अत्यंत अगम्य अगोचर जो प्रभु है, उसे गुरु शिक्षा द्वारा समझा देते हैं । सत्य और संयम से संयुक्त होकर हरि की कीर्ति रूपी करनी करके उसने हरि में वृत्ति लगाई है ॥ २ ॥ शब्द का दाता सतिगुरु भी वह स्वयं है और वृत्तियों का साथी सत्यस्वरूप भी वह आप ही है, जिस ज्योतिस्वरूप ने सबके बीच अपनी ज्योति मिलाई है, जिस कच्ची देह को पवन चलाता है, जिसके बीच गुरमुखों ने अमृतदृष्टि प्रदान की है ॥ ३ ॥ आप ही उस ब्रह्म ने सब जीव निर्मित किए हैं, आप ही सब कर्म में लगाए हैं और वह सत्यस्वरूप सबमें समा रहा है। गुरु नानकदेव का कथन है कि उस वाहिगुरु के नाम के अतिरिक्त दूसरा कोई कुछ नहीं है । नाम के जपने से ही वह गुरमुखों को महत्त्व देता है ॥ ४ ॥ ८ ॥

॥ मलार महला ३ ॥ हउमै बिखु मनु मोहिआ लदिआ अजगर भारी । गरुड़ु सबदु मुखि पाइआ हउमै बिखु हरि मारी ॥१॥ मन रे हउमै मोहु दुखु भारी । इहु भवजलु जगतु न जाई तरणा गुरमुखि तरु हरि तारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ त्रै गुण माइआ मोहु पसारा सभ वरतै आकारी । तुरीआ गुणु सतसंगति पाईऐ नदरी पारि उतारी ॥ २ ॥ चंदन गंध सुगंध है बहु बासना बहकारि । हरि जन करणी ऊतम है हरि कीरति जगि बिसथारि ॥ ३ ॥ क्रिपा क्रिपा करि ठाकुर मेरे हरि हरि हरि उरधारि । नानक सतिगुरु पूरा पाइआ मनि जपिआ नामु मुरारि ॥ ४ ॥ ६ ॥

हे मन ! तू अहंकार के विष रूपी विषयों में मोहित है और पाप रूपी भारी भार से लादा हुआ है। जब सतिगुरु रूपी गारुड़ी ने तेरे मुख में नाम रूपी गरुड़-मंत्र फूंका है, तब अहंकार के विष को हरि ने मार दिया है ॥ १ ॥ हे मन ! अहंत्व और मोह का बड़ा भारी दुःख है। यह भय रूपी जल का भरा हुआ जो समुद्र है, वह दुस्तर है। तू गुरु द्वारा हरि-नौका लेकर उसके पार उतर जा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ समस्त देहधारी जीवों में त्रैगुणी माया के मोह का प्रसार है। तुरीय पद रूपी गुण जिन संतों की संगति में पाया जाता है, वह समूची सत्संगति वाहिगुरु ने संसार-सागर से पार उतारी है ॥ २ ॥ जैसे समस्त सुगंधियों में चंदन की सुगंधि श्रेष्ठ है। जैसे (चन्दन) अपनी सुगंधि को बहुत फैलाता है, उसी प्रकार प्रभु-भक्तों की करनी सर्वश्रेष्ठ है, जो हरि की कीर्ति का विस्तार कर दूसरे जीवों को भी अपने समान कर देते हैं ॥ ३ ॥ हे मेरे ठाकुर, कृपा के भंडार हरि ! मुझ पर कृपा करो और प्रभु-नाम को मेरे हृदय में संचरित करो। गुरु नानकदेव का कथन है कि जिन्होंने पूर्णसतिगुरु पाया है, उन्होंने ही मन के बीच मुरारी के नाम को जपा है ॥ ४ ॥ ९ ॥

मलार महला ३ घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ इहु मनु गिरही कि इहु मनु उदासी। कि इहु मनु अवरनु सदा अविनासी कि इहु मनु चंचलु कि इहु मनु बैरागी। इसु मन कउ ममता किथहु लागी ॥ १ ॥ पंडित इसु मन का करहु बीचारु। अवरु कि बहुता पड़हि उठावहि भारु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ माइआ ममता करतै लाई। एहु हुकमु करि स्रिसटि उपाई। गुर परसादी बूझहु भाई। सदा रहहु हरि की सरणाई ॥ २ ॥ सो पंडितु जो तिहां गुणा की पंड उतारै। अनदिनु एको नामु वखाणै। सतिगुर की ओहु दीखिआ लेइ। सतिगुर आगै सीसु धरेइ। सदा अलगु रहै निरबाणु। सो पंडितु दरगह परवाणु ॥ ३ ॥ सभनां महि एको एकु वखाणै। जां एको वेखै तां एको जाणै। जाकउ बखसे मेले सोइ। ऐथै ओथै सदा सुखु होइ ॥ ४ ॥ कहत नानकु कवन बिधि करे किआ कोइ। सोई मुकति जाकउ किरपा होइ। अनदिनु हरि गुण गावै सोइ। सासत्र बेद की फिरि कूक न होइ ॥ ५ ॥ १ ॥ १० ॥

यह मन गृहस्थ है, यह मन उदासी है, यह मन अवर्ण होकर मरता है और सदा अविनाशी भी है। यह मन चंचल है, यह मन वैरागी है। इस मन को ममता कहाँ से उद्भूत हुई है ? ॥ १ ॥ हे पंडित ! सर्व-प्रथम अपने मन का विचार करो। इस विचार के अतिरिक्त और क्यों अहंकार रूपी भार उठाते हो ? ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस कर्तापुरुष वाहिगुरु ने अपने हुकुम से यह सृष्टि उत्पन्न की है, उसी ने अपनी माया से इस मन को अवर्ण होने पर माया के ममत्व में बाँधा है। हे भाई ! गुरु की कृपा से इस बात को समझो। केवल उस हरि की शरण में रहो ॥२॥ हमारे विचार में वही पंडित है, जो तीनों गुणों की गठरी को उतारता है और एक नाम का निरंतर उच्चारण करता है। सदैव निर्लिप्त होकर निर्वाण-रूप होकर रहे, ऐसा पंडित सत्संग में अथवा परलोक में हरि को स्वीकृत होता है ॥ ३ ॥ सब जीवों में जो एक अद्वितीय का बखान करता है, वह जब सतिगुरु के द्वारा उस एक को जानता है, तभी उस एक अद्वितीय रूप को देखता भी है। जिन्हें वाहिगुरु की अनुकम्पा मिलती है, वही सतिगुरु के साथ मिलाप प्राप्त करते हैं। उनको ही इस लोक में सदा सुख प्राप्त होता है ॥ ४ ॥ गुरु नानक कहते हैं, कोई किसी भी तरीक़े से प्रभु को अपनाए। वही पुरुष गुरु को मिलकर मुक्त होता है, उस पर ही उस वाहिगुरु की कृपा होती है। वही पुरुष निरंतर हरि के गुणों का गायन करता है और उस पर शास्त्र-वेद की आज्ञा नहीं चलती ॥ ५ ॥ १ ॥ १० ॥

॥ मलार महला ३ ॥ भ्रमि भ्रमि जोनि मनमुख भरमाई। जमकालु मारे नित पति गवाई। सतिगुर सेवा जम की काणि चुकाई। हरि प्रभु मिलिआ महलु घरु पाई ॥ १ ॥ प्राणी गुरमुखि नामु धिआइ। जनमु पदारथु दुबिधा खोइआ कउडी बदलै जाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करि किरपा गुरमुखि लगै पिआरु। अंतरि भगति हरि हरि उरिधारु। भवजलु सबदि लंघावण हारु। दरि साचै दिसै सचिआरु ॥ २ ॥ बहु करम करे सतिगुरु नही पाइआ। बिनु गुर भरमि भूले बहु माइआ। हउमै ममता बहु मोहु वधाइआ। दूजै भाइ मनमुखि दुखु पाइआ ॥ ३ ॥ आपे करता अगम अथाहा। गुर सबदी जपीऐ सचु लाहा। हाजरु हजूरि हरि वेपरवाहा। नानक गुरमुखि नामि समाहा ॥ ४ ॥ २ ॥ ११ ॥

भ्रमित हुआ मनमुख योनियों में भटकता रहता है। उसे यमकाल

नित्य मारता है और उसकी प्रतिष्ठा समाप्त हुई है। जिन गुरमुखों ने सतिगुरु की सेवा की है, उन्होंने यमराज का भय समाप्त कर दिया है। उन्हें हरि-प्रभु मिले हैं और हृदय में ही उनको सत्य-स्वरूप की प्राप्ति हुई है ॥ १ ॥ हे प्राणी ! गुरु द्वारा हरि के नाम का स्मरण कर। जन्म-पदार्थ दुविधा के कारण खोया जाता है और माया के लिए व्यर्थ बीत जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परमेश्वर की कृपा से गुरमुखों का स्नेह प्राप्त होता है और हृदय के भीतर वे हर प्रकार से हरि की भक्ति को धारण करते हैं। जिनको गुरु के उपदेश संसार-समुद्र से पार उतारनेवाले हुए हैं, वे सच्चे प्रभु के द्वार पर परमसत्य को देखते हैं ॥ २ ॥ जो मनुष्य बहुत कर्मों को करते हैं और सतिगुरु को नहीं पाते हैं वे वह गुरु के बिना माया में भ्रमित होकर भटक रहे हैं। अहंत्व और ममत्व के कारण बहुत मोह बढ़ाया हुआ है। इस कारण द्वैत-भाववश मनमुखों ने दुःख पाया है ॥ ३ ॥ अगम, अथाह परमेश्वर सबका कर्ता है। गुरु के उपदेश द्वारा नाम-स्मरण करने से सच्चा लाभ मिलता है। निर्लिप्त हरि सदैव पास ही मौजूद है। गुरु नानक का कथन है कि गुरमुख उस प्रभु को जानकर प्रफुल्लित होता है ॥ ४ ॥ २ ॥ ११ ॥

॥ मलार महला ३ ॥ जीवत मुकत गुरमती लागे। हरि की भगति अनदिनु सद जागे। सतिगुरु सेवहि आपु गवाइ। हउ तिन जन के सद लागउ पाइ ॥ १ ॥ हउ जीवां सदा हरि के गुण गाई। गुर का सबदु महा रसु मीठा हरि कै नामि मुकति गति पाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ माइआ मोहु अगिआनु गुबारु। मनमुख मोहे मुगध गवार। अनदिनु धंधा करत विहाइ। मरि मरि जंमहि मिलै सजाइ ॥ २ ॥ गुरमुखि राम नामि लिव लाई। कूड़ै लालचि ना लपटाई। जो किछु होवै सहजि सुभाइ। हरि रसु पीवै रसन रसाइ ॥ ३ ॥ कोटि मधे किसहि बुझाई। आपे बखसे दे वडिआई। जो धुरि मिलिआ सु विछुड़ि न जाई। नानक हरि हरि नामि समाई ॥४॥३॥१२॥

जो गुरमुखों की शिक्षा स्वीकार कर नाम में प्रवृत्त हुए हैं, वे पुरुष सदैव रात-दिन हरि की भक्ति में जागे हैं और जीवित मुक्त-रूप हैं। जो आपा-भाव गँवाकर सतिगुरु की उपासना करते हैं, उन (गुरु के) दासों का सदैव चरण-स्पर्श करता हूँ ॥ १ ॥ मैं सदा हरि के गुण गाकर जीता हूँ। गुरु का जो उपदेश है, उसका रस मीठा लगा है और हरि का नाम जपने से मुक्तिपद में जगह पाई है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अज्ञान रूपी अँधेरे के

कारण माया का मोह हो रहा है और उसमें मनमुख एवं मूर्ख मोहित हो गए हैं। रात-दिन सांसारिक धन्धा करते हुए उम्र बीत जाती है, बार-बार मरकर जन्मते हैं और उनको यम आदि के द्वारा सज़ा मिलती है ॥ २ ॥ गुरमुख पुरुष ने राम में लौ लगाई है और वह मिथ्या लोभ में लिप्त नहीं होता है। जो होता है, स्वतः होता है। वह जीवन्मुक्त पुरुष जिह्वा को तत्पर कर हरि-रस का पान करता है ॥३॥ परमात्मा करोड़ों में किसी विरले को इस दिशा में बढ़ने को प्रेरित करता है, आप ही क्षमा करके अपने दास को महानता देता है। जो आदिरूप वाहिगुरु से मिला है, वह बिछुड़ता नहीं है। गुरु नानकजी का कथन है कि उनकी बुद्धि हरि में अभेद हुई है ॥ ४ ॥ ३ ॥ १२ ॥

॥ मलार महला ३ ॥ रसना नामु सभु कोई कहै। सतिगुरु सेवे ता नामु लहै। बंधन तोड़े मुकति घरि रहै। गुर सबदी असथिरु घरि बहै ॥ १ ॥ मेरे मन काहे रोसु करीजै। लाहा कलजुगि राम नामु है गुरमति अनदिनु हिरदै रवीजै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बाबीहा खिनु खिनु बिललाइ। बिनु पिर देखे नींद न पाइ। इहु वेछोड़ा सहिआ न जाइ। सतिगुरु मिलै तां मिलै सुभाइ ॥ २ ॥ नामहीणु बिनसै दुखु पाइ। त्रिसना जलिआ भूख न जाइ। विणु भागा नामु न पाइआ जाइ। बहु बिधि थाका करम कमाइ ॥ ३ ॥ त्रै गुण बाणी बेद बीचारु। बिखिआ मैलु बिखिआ वापारु। मरि जनमहि फिरि होहि खुआरु। गुरमुखि तुरीआ गुणु उरिधारु ॥ ४ ॥ गुरु मानै मानै सभु कोइ। गुर बचनी मनु सीतलु होइ। चहु जुगि सोभा निरमल जनु सोइ। नानक गुरमुखि विरला कोइ ॥ ५ ॥ ४ ॥ १३ ॥ ९ ॥ १३ ॥ २२ ॥

अपनी रसना से प्रत्येक व्यक्ति नाम-स्मरण करता है, लेकिन यदि पुरुष सतिगुरु की उपासना करता है तो नाम के यथार्थ फल को प्राप्त कर लेता है। बंधनों को तोड़कर मुक्ति-गृह में रहता है। गुरु के उपदेश से स्थिर होकर स्वरूप-गृह में बैठता है ॥१॥ हे मेरे मन! रोष किसलिए करें? कलियुग में राम-नाम जपने का लाभ है, इसलिए गुरु-शिक्षा लेकर रात-दिन प्रभु-नाम को स्मरण कीजिए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिज्ञासु का हृदय पपीहे की तरह प्रतिक्षण छटपटाता है। पति-परमेश्वर के बिना उसे शांति रूपी निद्रा नहीं आती। यह वियोग असह्य है, लेकिन यदि सतिगुरु मिल जाय तो परमेश्वर सहज ही मिल जाता है ॥ २ ॥ जो मनुष्य

नामहीन है, वह दुःख पाकर विनष्ट हो जाता है; वह तृष्णावश जलता रहता है, उसको पदार्थों की भूख कभी समाप्त नहीं होती। भाग्य के बिना नाम प्राप्त नहीं होता। मनमुख बहुत प्रकार के कर्म करके थक जाता है ॥ ३ ॥ त्रैगुणी, जो वेद-वाणी है, उसका चिन्तन करता है। जो विषय मैल-रूप हैं, उन विषयों का व्यापार करता है। मृत्यु पाकर जन्मता है, फिर दुःखी होता है, और जो गुरमुख है वह गुणातीत तुरीय पद को हृदय में धारण करता है ॥ ४ ॥ जो पुरुष गुरु का सत्कार करता है, प्रत्येक आदमी उसका सत्कार करता है। गुरु की शिक्षा से उसका मन शीतल होता है। उस पुरुष की चारों युगों में शोभा होती है और वही व्यक्ति निर्मल होता है। ऐसा गुरमुख कोई विरला ही है ॥ ५ ॥ ४ ॥ १३ ॥ ९ ॥ १३ ॥ २२ ॥

रागु मलार महला ४ घरु १ चउपदे

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ अनदिनु हरि हरि धिआइओ हिरदै मति गुरमति दूख विसारी। सभ आसा मनसा बंधन तूटे हरि हरि प्रभि किरपा धारी ॥ १ ॥ नैनी हरि हरि लागी तारी। सतिगुरु देखि मेरा मनु बिगसिओ जनु हरि भेटिओ बनवारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिनि ऐसा नामु विसारिआ मेरा हरि हरि तिस कै कुलि लागी गारी। हरि तिस कै कुलि परसूति न करीअहु तिसु बिधवा करि महतारी ॥ २ ॥ हरि हरि आनि मिलावहु गुरु साधू जिसु अहिनिसि हरि उरिधारी। गुरि डीठै गुर का सिखु बिगसै जिउ बारिकु देखि महतारी ॥ ३ ॥ धन पिर का इक ही संगि वासा विचि हउमै भीति करारी। गुरि पूरै हउमै भीति तोरी जन नानक मिले बनवारी ॥४॥१॥

रात-दिन हरि के नाम को हृदय में स्मरण किया है और गुरु के उपदेश को स्वीकार कर दुःखों को विस्मृत किया है। बुद्धि के आशा रूपी सब बंधन टूट गए हैं और हरि-प्रभु ने हर प्रकार से कृपा की है ॥१॥ हमारे बुद्धि रूपी नेत्रों में हरि-हरि की लौ लगी है। सतिगुरु को देखकर मेरा मन प्रफुल्लित हुआ है और मुझको हरि बनवारी मिला है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसने मेरे सुखदायक स्वामी हरि का प्रत्येक प्रकार से नाम भुला दिया है, उसके कुल को कलंक लगा है। हे हरि! उस वंश में और ऐसे व्यक्ति को जन्म नहीं दीजिए। अच्छा होता यदि उसकी माता पहले

ही विधवा होती ॥२॥ हे हरि ! मुझे श्रेष्ठ गुरु मिलाएँ, जिसने रात-दिन आपकी प्रीति हृदय में धारण की है। गुरु को देखकर गुरु का शिष्य ऐसे प्रसन्न होता है, जिस प्रकार पुत्र को देखकर माता प्रसन्न होती है ॥ ३ ॥ जीव रूपी स्त्री का और पति-परमेश्वर का एक संग ही निवास है, लेकिन बीच में अहंत्व, ममत्व की कड़ी दीवार है। श्री गुरु नानक का कथन है कि पूर्णगुरु ने अहंत्व-ममत्व की दीवार तोड़ दी है और प्रभु-पति मिल गए हैं ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ मलारु महला ४ ॥ गंगा जमुना गोदावरी सरसुती ते करहि उदमु धूरि साधू की ताई। किलविख मैलु भरे परे हमरै विचि हमरी मैलु साधू की धूरि गवाई ॥ १ ॥ तीरथि अठसठि मजनु नाई। सत संगति की धूरि परी उडि नेत्री सभ दुरमति मैलु गवाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जाहरनवी तपै भागीरथि आणी केदारु थापिओ महसाई। कांसी क्रिसनु चरावत गाऊ मिलि हरि जन सोभा पाई ॥ २ ॥ जितने तीरथ देवी थापे सभि तितने लोचहि धूरि साधू की ताई। हरि का संतु मिलै गुर साधू लै तिस की धूरि मुखि लाई ॥ ३ ॥ जितनी स्रिसटि तुमरी मेरे सुआमी सभ तितनी लोचै धूरि साधू की ताई। नानक लिलाटि होवै जिसु लिखिआ तिसु साधू धूरि दे हरि पारि लंघाई ॥४॥२॥

गंगा, यमुना, गोदावरी और सरस्वती भी संतों की चरण-धूल के लिए प्रयत्न करती हैं। (उनका कथन है कि) पाप रूपी मैल से भरे हुए जीव हमारे भीतर स्नान करते हैं और हमारी मैल संतों की चरण-धूल ही दूर करती है ॥ १ ॥ अठासठ तीर्थों के स्नान का फल परमेश्वर की स्तुति में है। सत्संगति की धूल उड़कर जिसके नेत्रों में पड़ी है, उस धूल ने उसकी दुर्बुद्धि रूपी मैल दूर कर दी है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गंगा को तपस्या करके भगीरथ लाये और केदार तीर्थ को शिवजी ने स्थापित किया है। काशी तीर्थ (जिसकी स्थापना शिवजी ने की) और जिस वन में कृष्णजी गाएँ चराते रहे, वे भी तीर्थ हुए हैं, कई स्थानों ने हरि के सान्निध्य से शोभा पाई है ॥ २ ॥ जितने तीर्थ देवताओं ने स्थापित किए हैं, वे सब संतों की चरण-धूल के इच्छुक हैं और यह कहते हैं कि वे यदि हमको श्रेष्ठ हरि का संत मिल जाए, तो हम उसकी चरण-धूल मुख पर लगाएँ ॥ ३ ॥ हे भाई ! जितनी सृष्टि प्रभु द्वारा रची हुई तुम देखते हो, वह समस्त साधु पुरुषों की चरण-धूल की इच्छुक है। गुरु नानक का कथन है कि जिसके मस्तक पर उत्तम कर्म लिखा होता है, उसको हरि संतों की चरण-धूल देकर संसार से पार उतार देता है ॥ ४ ॥ २ ॥

॥ मलार महला ४ ॥ तिसु जन कउ हरि मीठ लगाना जिसु हरि हरि क्रिपा करै । तिस की भूख दूख सभि उतरै जो हरि गुण हरि उचरै ॥ १ ॥ जपि मन हरि हरि हरि निसतरै । गुर के बचन करन सुनि धिआवै भव सागरु पारि परै ॥१॥रहाउ॥ तिसु जन के हम हाटि बिहाझे जिसु हरि हरि क्रिपा करै । हरि जन कउ मिलिआं सुखु पाईऐ सभ दुरमति मैलु हरै ॥ २ ॥ हरि जन कउ हरि भूख लगानी जनु त्रिपतै जा हरि गुन बिचरै । हरि का जनु हरि जल का मीना हरि बिसरत फूटि मरै ॥३॥ जिनि एह प्रीति लाई सो जानै कै जानै जिसु मनि धरै । जनु नानकु हरि देखि सुखु पावै सभ तन की भूख टरै ॥ ४ ॥ ३ ॥

जिस पुरुष पर हरि कृपा करता है, उस पुरुष को वह मीठा लगता है । जो सब प्रकार से हरि का गुणगान करता है, उसकी पदार्थों की भूख और शरीर के दुःख सब उतर जाते हैं ॥ १ ॥ हे प्यारे ! मन, वाणी से हरि को जपने से उद्धार होता है । जो पुरुष गुरु के वचन सुनकर मन में स्मरण करता है, वह संसार-समुद्र से पार उतर जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस पर प्रसन्न करनेवाला हरि कृपा करता है, उस पुरुष के हम मोल खरीदे हुए हैं । उसे संतों के मिलने पर सुख प्राप्त होता है और वह सब दुर्बुद्धि रूपी मैल को दूर कर देता है ॥२॥ हरि के जन को हरि की भूख लगी है । जो हरि के गुणों का स्मरण करता है, वह तृप्त होता है । जो हरि का सेवक है वह नाम-जल की मछली-समान है, जो जल से अलग होने पर अर्थात् नाम-विस्मृत होने पर मृत्यु को प्राप्त कर लेता है ॥ ३ ॥ जिस हरि ने यह प्रीति उत्पन्न की है, वही जानता है; अथवा जिसके हृदय में उत्पन्न करता है, वह जानता है। गुरु नानकजी का कथन है कि वह पुरुष हरि को देखकर सुख पाता है और उसके शरीर की सब भूख दूर हो जाती है ॥ ४ ॥ ३ ॥

॥ मलार महला ४ ॥ जितने जीअ जंत प्रभि कीने तितने सिरि कार लिखावै । हरि जन कउ हरि दीन्ह वडाई हरि जनु हरि कारै लावै ॥ १ ॥ सतिगुरु हरि हरि नामु द्रिड़ावै । हरि बोलहु गुर के सिख मेरे भाई हरि भउजलु जगतु तरावै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो गुर कउ जनु पूजे सेवे सो जनु मेरे हरि प्रभ भावै । हरि की सेवा सतिगुरु पूजहु करि किरपा आपि तरावै ॥ २ ॥ भरमि भूले अगिआनी अंधुले भ्रमि भ्रमि फूल

तोरावै । निरजीउ पूजहि मड़ा सरेवहि सभ बिरथी घाल गवावै ॥ ३ ॥ ब्रहमु बिंदे सो सतिगुरु कहीऐ हरि हरि कथा सुणावै । तिसु गुर कउ छादन भोजन पाट पटंबर बहु बिधि सति करि मुखि संचहु तिसु पुंन की फिरि तोटि न आवै ॥ ४ ॥ सतिगुरु देउ परतखि हरि मूरति जो अंम्रित बचन सुणावै । नानक भाग भले तिसु जन के जो हरि चरणी चितु लावै ॥ ५ ॥ ४ ॥

प्रभु ने जितने जीव-जंतु उत्पन्न किए हैं, वे सब सिर पर हुकुम रूपी कर्म लिखवाकर आते हैं । संतों को हरि-प्रभु ने आप महानता दी है, वे हरि-भक्त सबको हरि के नाम-स्मरण की करनी में लगाते हैं ॥ १ ॥ सतिगुरु हरि के नाम को दृढ़ कराते हैं (और उपदेश करते हैं कि) मेरे भाई ! गुरु की शिक्षा-अनुसार हरि-नाम उच्चरित करो । वह नाम समुद्र रूपी संसार से पार उतार देता है ॥१॥रहाउ॥ जो पुरुष गुरु की उपासना करता है और गुरु को पूजता है, वह पुरुष मेरे हरि-प्रभु को भला लगता है । हरि की सेवा भी करो और पहले सतिगुरु की आराधना करो, क्योंकि वह कृपा करके पार उतार देगा ॥ २ ॥ अज्ञानवश अंधे जीव भ्रमित होकर ठाकुरों के लिए पुष्प चढ़ाते हैं । निर्जीव पत्थरों को पूजते हैं, समाधियों की सेवा करते हैं, अपनी कमाई व्यर्थ गँवाते हैं ॥ ३ ॥ जो ब्रह्म को जाने, वही सतिगुरु कहा जाता है और जो हर प्रकार से हरि की कथा सुनाए । उस गुरु को बहुत सी सामग्री या बहुत प्रकार से सुंदर क़ीमती वस्त्र अर्पित करो और उसके मुख में भोजन डालो, तदनन्तर उस पुण्य में कभी कमी नहीं आएगी । (अभिप्राय यह कि उस गुरु को प्रसन्न कर लो तो पुण्य का कोई अभाव न होगा ।) ॥ ४ ॥ जो श्री गुरुदेव साक्षात् हरि की मूर्ति हैं, वह अमृत रूपी वचनों को सुनाते हैं । गुरु नानक का कथन है कि उस पुरुष के भाग्य भले हैं, जो सतिगुरु के द्वार पर हरि के चरणों में हृदय लगाता है ॥ ५ ॥ ४ ॥

॥ मलार महला ४ ॥ जिन्ह कै हीअरै बसिओ मेरा सतिगुरु ते संत भले भल भांति । तिन्ह देखे मेरा मनु बिगसै हउ तिन कै सद बलि जांत ॥ १ ॥ गिआनी हरि बोलहु दिनु राति । तिन्ह की त्रिसना भूख सभ उतरी जो गुरमति रांम रसु खांति ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि के दास साध सखा जन जिन मिलिआ लहि जाइ भरांति । जिउ जल दुध भिन भिन काढै चुणि हंसुला तिउ देही ते चुणि काढै साधू हउमै ताति ॥ २ ॥

जिन कै प्रीति नाही हरि हिरदै ते कपटी नर नित कपटु कमांति । तिन कउ किआ कोई देइ खवालै ओइ आपि बीजि आपे ही खांति ॥ ३ ॥ हरि का चिहनु सोई हरि जन का हरि आपे जनमहि आपु रखांति । धनु धंनु गुरू नानकु समदरसी जिनि निंदा उसतति तरी तरांति ॥ ४ ॥ ५ ॥

जिन पुरुषों के हृदय में मेरा सतिगुरु अवस्थित है, वे संत भले हैं और उनको भली प्रकार ज्ञान-प्रकाश हुआ है। उनके देखने से मेरा मन प्रफुल्लित होता है और मैं उन पर सदा बलिहार जाता हूँ ॥ १ ॥ उन ज्ञानियों के साथ मिलकर हरि-नाम का रात-दिन स्मरण करो, जो गुरु की शिक्षा ग्रहण कर राम-नाम का रस लेते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि के सेवक जो संत हैं वे मेरे सच्चे मित्र हैं, जिनके मिलन से भ्रांति दूर हो जाती है। जिस प्रकार हंस जल और दूध को अलग-अलग कर देता है, उसी प्रकार संत शरीर में से अहंत्व, ममत्व रूपी जल तथा तत्त्वस्वरूप दूध को चुनकर अलग-अलग कर देते हैं ॥ २ ॥ जिनके हृदय में हरि की प्रीति नहीं है, वे नर कपटी हैं और नित्य कपट कमाते हैं। उन मनमुखों को क्या कोई दे और क्या कोई बुलाए, वे आप ही पाप रूपी बीज बोकर आप ही खाते हैं ॥ ३ ॥ जो हरि का स्वरूप है, वही हरि के दासों का सच्चिदानंद है। हरि-प्रभु प्रत्येक प्रकार से अपने दासों में अपने-आप को प्रत्यक्ष रखता है। गुरु नानक का कथन है कि समदर्शी गुरु धन्य हैं, जिन्होंने निंदा-स्तुति रूपी नदी को आप पार किया है और दूसरों को पार करवाया है ॥ ४ ॥ ५ ॥

॥ मलार महला ४ ॥ अगमु अगोचरु नामु हरि ऊतमु हरि किरपा ते जपि लइआ । सत संगति साध पाई वडभागी संगि साधू पारि पइआ ॥१॥ मेरै मनि अनदिनु अनदु भइआ । गुरपरसादि नामु हरि जपिआ मेरे मन का भ्रमु भउ गइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिन हरि गाइआ जिन हरि जपिआ तिन संगति हरि मेलहु करि मइआ । तिन का दरसु देखि सुखु पाइआ दुखु हउमै रोगु गइआ ॥ २ ॥ जो अनदिनु हिरदै नामु धिआवहि सभु जनमु तिना का सफलु भइआ । ओइ आपि तरे स्रिसटि सभ तारी सभु कुलु भी पारि पइआ ॥ ३ ॥ तुधु आपे आपि उपाइआ सभु जगु तुधु आपे वसि करि लइआ । जन नानक कउ प्रभि किरपा धारी बिखु डुबदा काढि लइआ ॥४॥६॥

अगम्य अगोचर हरि का नाम सर्वश्रेष्ठ है। हरि-कृपा से मैंने उसका स्मरण किया है। संत की संगति सौभाग्यवश प्राप्त की है और सत्संगति के कारण ही पार उतरा हूँ ॥ १ ॥ मेरे मन को रात-दिन आनंद हुआ है, मैंने गुरु-कृपा से हरि-नाम का जाप किया है और मेरे मन का भ्रम और भय समाप्त हो गया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिन्होंने हरि का नाम गाया और जपा है, हे हरि ! कृपा करके मुझे उनकी संगति दीजिए। उनके दर्शन से मेरे मन को सुख मिला है और अहंत्व-ममत्व के रोग का दुःख दूर हो गया है ॥ २ ॥ जो पुरुष रात-दिन नाम-स्मरण करते हैं, उनका समस्त जन्म सफल हो गया है। वे गुरमुख आप पार उतरे हैं और समस्त सृष्टि पार उतारी है, उनका समस्त वंश समुदाय भी पार उतर गया है ॥३॥ हे हरि ! तुमने स्वयं समस्त जगत उत्पन्न किया है और स्वयं ही अपने अधीनस्थ कर लिया है। गुरु नानक का कथन है कि मुझ पर आपने कृपादृष्टि की है और विषयों में डूबते हुए मुझे निकाल लिया है ॥४॥६॥

॥ मलार महला ४ ॥ गुर परसादी अंम्रितु नही पीआ त्रिसना भूख न जाई। मनमुख मूढ़ जलत अहंकारी हउमै विचि दुखु पाई। आवत जात बिरथा जनमु गवाइआ दुखि लागै पछुताई। जिस ते उपजे तिसहि न चेतहि ध्रिगु जीवणु ध्रिगु खाई ॥ १ ॥ प्राणी गुरमुखि नामु धिआई। हरि हरि क्रिपा करे गुरु मेले हरि हरि नामि समाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनमुख जनमु भइआ है बिरथा आवत जात लजाई। कामि क्रोधि डूबे अभिमानी हउमै विचि जलि जाई। तिन सिधि न बुधि भई मति मधिम लोभ लहरि दुखु पाई। गुर बिहून महा दुखु पाइआ जम पकरे बिललाई ॥ २ ॥ हरि का नामु अगोचरु पाइआ गुरमुखि सहजि सुभाई। नामु निधानु वसिआ घट अंतरि रसना हरि गुण गाई। सदा अनंदि रहै दिनु राती एक सबदि लिव लाई। नामु पदारथु सहजे पाइआ इह सतिगुर की वडिआई ॥ ३ ॥ सतिगुर ते हरि हरि मनि वसिआ सतिगुर कउ सद बलि जाई। मनु तनु अरपि रखउ सभु आगै गुर चरणी चितु लाई। अपणी क्रिपा करहु गुर पूरे आपे लैहु मिलाई। हम लोह गुर नाव बोहिथा नानक पारि लंघाई ॥ ४ ॥ ७ ॥

जिन्होंने गुरु की प्रसन्नता द्वारा नाम-अमृत का पान नहीं किया, उनकी तृष्णा रूपी भूख समाप्त नहीं होती। वे मनमुख मूर्ख अहंकारी तृष्णा में

जलते हैं और अहंत्व में दुःख पाते हैं। उन्होंने आवागमन में व्यर्थ ही जन्म को गँवाया है। उन्हें दुःख व्याप्त होता है और वे पश्चात्ताप करते हैं। जिस प्रभु से वे उत्पन्न हुए हैं, वे उसे स्मरण नहीं करते, उनके जीने और खाने को धिक्कार है ॥१॥ हे प्राणी ! गुरु के माध्यम से प्रभु की आराधना करो। जब प्रफुल्लित करनेवाला हरि कृपा करता है, तो गुरु से भेंट करा देता है। तदनन्तर दुःखनाशक हरि में समाया जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनमुख का जन्म व्यर्थ जाता है, वह जन्मता-मरता लज्जित होता है। मनमुख अभिमानी काम-क्रोध में डूबे हैं और अहंत्व, ममत्व में जल जाते हैं। उनको बुद्धि नहीं होती, सिद्धि और मोक्ष नहीं होता, क्योंकि उनकी बुद्धि विकारों में मन्द हो जाती है और लोभ की लहर में उनको दुःख की राशि मिलती है। गुणहीन पुरुषों ने अत्यंत दुःख को प्राप्त किया है और जब उन्हें यमराज पकड़ता है, तब वे विलाप करते हैं ॥ २ ॥ गुरमुखों ने अगोचर हरि का नाम सहज ही प्राप्त किया है। नाम-निधियों का भंडार उनके हृदय में अवस्थित है और उनकी जिह्वा ने हरि के गुणों का गायन किया है। वे सदैव आनंदित रहते हैं और उन्होंने अद्वितीय ब्रह्म में वृत्ति लगाई है। नाम रूपी पदार्थ सहज ही पाया है, लेकिन यह सतिगुरु की महानता के कारण सम्पन्न हुआ है ॥ ३ ॥ सतिगुरु द्वारा हरि का नाम मन में अवस्थित हुआ है, इसलिए सतिगुरु पर बलिहारी जाता हूँ। ऐसे सतिगुरु के समक्ष तन, मन सब अर्पित कर दो और उसके चरणों में हृदय लगाए रखो। हे पूर्णगुरु ! अपनी कृपादृष्टि करो और आप ही मुझे मिलाएँ। हम तो लोहे के तुल्य भारी हैं। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु नौका के तुल्य हमको पार उतार लेंगे ॥ ४ ॥ ७ ॥

मलार महला ४ पड़ताल घरु ३

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ हरि जन बोलत स्री राम नामा मिलि साध संगति हरि तोर ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि धनु बनजहु हरि धनु संचहु जिसु लागत है नही चोर ॥ १ ॥ चात्रिक मोर बोलत दिनु राती सुनि घनिहर की घोर ॥२॥ जो बोलत है म्रिग मीन पंखेरू सु बिनु हरि जापत है नही होर ॥ ३ ॥ नानक जन हरि कीरति गाई छूटि गइओ जम का सभ सोर ॥४॥१॥८॥

हरि के जन राम-नाम को उच्चरित करते हैं और हरि की सत्संगति में बैठकर चिन्तन-मनन करते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इसलिए हरि-धन का व्यापार करो और हरि-धन को संचित करो, (क्योंकि) इस धन को चोर

नहीं चुराते ।। १ ।। बादल की ध्वनि को सुनकर मोर और पपीहा रात-दिन बोलते हैं ।। २ ।। जो मृग, मीन और पक्षीगण बोलते हैं, वे सब भी हरि के अतिरिक्त किसी दूसरे की उपासना नहीं करते ।। ३ ।। गुरु नानक का कथन है कि जिन्होंने केवल हरि की कीर्ति का गायन किया है, उनको यम का सब भय छूट गया है ।। ४ ।। १ ।। ८ ।।

।। मलार महला ४ ।। राम राम बोलि बोलि खोजते बडभागी। हरि का पंथु कोऊ बतावै हउ ता कै पाइ लागी ।। १ ।। रहाउ ।। हरि हमारो मीतु सखाई हम हरि सिउ प्रीति लागी। हरि हम गावहि हरि हम बोलहि अउरु दुतीआ प्रीति हम तिआगी ।। १ ।। मनमोहन मोरो प्रीतम रामु हरि परमानंदु बैरागी। हरि देखे जीवत है नानकु इक निमख पलो मुखि लागी ।। २ ।। २ ।। ९ ।। ९ ।। १३ ।। ९ ।। ३१ ।।

राम-नाम के शब्द को जपने के लिए सौभाग्यशाली जीव गुरु की खोज करते हैं। जो हमें हरि का मार्ग बताए, मैं उसके चरण स्पर्श करता हूँ ।। १ ।। रहाउ ।। (क्योंकि) हरि हमारा सखा, मित्र है और उसके साथ हमारी प्रीति लग गई है। हरि का हम गायन करते हैं और हरि को उच्चरित करके हम जाप करते हैं और दूसरी दुनियावी प्रीति हमने त्याग दी है ।। १ ।। मन को मोहित करनेवाला राम परमानन्द-रूप जो उदासीन है, वही मेरा प्रियतम हुआ है। गुरु नानक का कथन है कि उस हरि के देखने से हमारा जीवन सफल है, जो एक निमिष मात्र के लिए ही हमें प्रभु-दर्शन दे ।। २ ।। २ ।। ९ ।। ९ ।। १३ ।। ९ ।। ३१ ।।

रागु मलार महला ५ चउपदे घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। किआ तू सोचहि किआ तू चितवहि किआ तूं करहि उपाए। ताकउ कहहु परवाह काहू की जिह गोपाल सहाए ।। १ ।। बरसै मेघु सखी घरि पाहुन आए। मोहि दीन क्रिपा निधि ठाकुर नव निधि नामि समाए ।।१।।रहाउ।। अनिक प्रकार भोजन बहु कीए बहु बिंजन मिसटाए। करी पाकसाल सोच पवित्रा हुणि लावहु भोगु हरि राए ।। २ ।। दुसट बिदारे साजन रहसे इहि मंदिर घर अपनाए। जउ ग्रिह लालु रंगीओ आइआ तउ मै सभि सुख पाए ।। ३ ।। संत सभा ओट

गुर पूरे धुरि मसतकि लेखु लिखाए। जन नानक कंतु रंगीला पाइआ फिरि दूखु न लागै आए ॥ ४ ॥ १ ॥

हे प्राणी ! तू क्या सोचता है, तू क्या चिन्तना करता है और क्या उपाय करता है ? जिसकी गोपाल प्रभु सहायता करें, उस पुरुष को किसकी परवाह है ! ॥ १ ॥ हे भाई ! जिस पर गुरु रूपी बादल ने नाम की वर्षा की है, उसके हृदय-घर में अतिथि आए हैं। उन्होंने मोह आदि को अधीनस्थ किया है और कृपानिधि ठाकुर नवनिधि के दाता नाम में समाए हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भगवान् ! हमने अनेक प्रकार के साधनों के तुल्य सुन्दर भोजन तैयार किए हैं। बुद्धि रूपी पाकशाला की भूमि अत्यन्त पवित्र कर दी है। इसलिए, हे हरि ! अब भोग लगाएँ ॥ २ ॥ कामादिक दुष्ट विदीर्ण कर दिए हैं और सत्य, सन्तोष आदि सद्‌गुण प्रफुल्लित हुए हैं, ये इस शरीर-मन्दिर को अपना घर समझकर आए हैं। जो शरीर-घर में आनन्द, प्यार प्राप्त हुआ है, उससे मैंने समस्त सुखों को अनुभूत कर लिया है ॥ ३ ॥ प्रभु-दरबार से मस्तक पर शुभलेख लिखाए हुए थे, तभी मैंने सन्त-सभा में जाकर पूर्णगुरु की ओट ली। गुरु नानक का कथन है कि मैंने रँगीले स्वामी को पा लिया है, विरह के दुःख-दर्द अब नहीं लगते हैं ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ मलार महला ५ ॥ खीर अधारि बारिकु जब होता बिनु खीरै रहनु न जाई। सारि सम्हालि माता मुखि नीरै तब ओहु त्रिपति अघाई ॥ १ ॥ हम बारिक पिता प्रभु दाता। भूलहि बारिक अनिक लख बरीआ अन ठउर नाही जह जाता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चंचल मति बारिक बपुरे की सरप अगनि कर मेलै। माता पिता कंठि लाइ राखै अनद सहजि तब खेलै ॥ २ ॥ जिस का पिता तू है मेरे सुआमी तिसु बारिक भूख कैसी। नव निधि नामु निधानु ग्रिहि तेरै मनि बांछै सो लैसी ॥ ३ ॥ पिता क्रिपालि आगिआ इह दीनी बारिकु मुखि मांगै सो देना। नानक बारिकु दरसु प्रभ चाहै मोहि ह्रिदै बसहि नित चरना ॥ ४ ॥ २ ॥

जब बालक दूध के सहारे होता है, तब बिना दूध के उससे रहा नहीं जाता, और माता उसकी स्थिति जानकर स्तनपान कराती है। तब वह दूध पीकर अत्यन्त तृप्त होता है ॥ १ ॥ हे प्राणदाता पिता-प्रभु ! हम आपके बालक हैं। यदि अनेक बार, बालक ग़लती भी करे तो भी पिता को छोड़कर उसके लिए कोई जगह नहीं, जहाँ जाता रहे ॥ १ ॥ रहाउ ॥

हे भाई ! बालक बेचारे की बुद्धि चंचल होती है, वह सर्प और अग्नि को हाथ में पकड़ लेता है; लेकिन जब उसको माता-पिता गले लगा लेते हैं, तब स्वाभाविक ही आनन्दित होकर खेलता है ॥ २ ॥ हे मेरे स्वामी ! तुम जिसके पिता हो, उस बालक को भूख कैसी ! नवनिधियों को देनेवाला नाम-ख़ज़ाना तुम्हारे घर में है और जो दास मन में कोई इच्छा करता है, वह तीनों कालों में उसे प्राप्त कर लेता है ॥ ३ ॥ हे कृपालु पिता वाहिगुरु ! तुमने यह आज्ञा दी है कि बालक जो भी मुख से माँगे वह देना। गुरु नानक कहते हैं कि मुझ बालक को आपके दर्शनों की इच्छा है और मेरे हृदय में नित्य ही आपके चरणों का वास रहे ॥ ४ ॥ २ ॥

॥ मलार महला ५ ॥ सगल बिधी जुरि आहरु करिआ तजिओ सगल अंदेसा। कारजु सगल अरंभिओ घर का ठाकुर का भारोसा ॥ १ ॥ सुनीऐ बाजै बाज सुहावी। भोरु भइआ मै प्रिअ मुख पेखे ग्रिह मंगल सुहलावी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनूआ लाइ सवारे थानां पूछउ संता जाए। खोजत खोजत मै पाहुन मिलिओ भगति करउ निवि पाए ॥ २ ॥ जब प्रिअ आइ बसे ग्रिहि आसनि तब हम मंगलु गाइआ। मीत साजन मेरे भए सुहेले प्रभु पूरा गुरू मिलाइआ ॥ ३ ॥ सखी सहेली भए अनंदा गुरि कारज हमरे पूरे। कहु नानक वरु मिलिआ सुखदाता छोडि न जाई दूरे ॥ ४ ॥ ३ ॥

सब प्रकार के कर्मों में जो जुड़े हैं, जिन्होंने सब प्रकार से साथ जुड़ने का प्रयास किया है, और सब शंकाओं को त्याग दिया है। घर का कार्य अर्थात् मुक्ति का साधन-रूप आरम्भ किया है और जिन्हें केवल ठाकुर का भरोसा है ॥ १ ॥ जो सत्संग में शोभनीय ध्वनि (अनाहत नाद) बजती हुई सुनते हैं; ज्ञान रूपी दिन के उदय होने पर वे (प्रभु-) पति के मुख को देखते हैं। (ऐसा होने पर जीवात्मा-स्त्री के) अन्तःकरण में आनन्द हुआ और वह सुखी हुई है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मन को भक्ति में प्रवृत्त कर सँवारा है और सन्तों के पास जाकर उपदेश को ग्रहण किया है। खोजते-खोजते मुझे परमेश्वर अतिथि मिला है और मैं उसके चरणों में शीश झुकाकर भक्ति करता हूँ ॥ २ ॥ जब पति हृदय-स्थल में आकर स्थित हुए, तब हमने मंगलगान किया, मेरे मित्र, साजन सब सुखी हुए, क्योंकि प्रभु ने पूर्णगुरु को मिला दिया है ॥ ३ ॥ सखी, सहेलियाँ, सबको सामूहिक आनन्द प्राप्त हुए हैं, क्योंकि गुरु ने समस्त कार्य पूर्ण कर दिए हैं। गुरु नानक का कथन है कि सुखदाता वर हमको मिल गया है। अब वह हमें छोड़कर दूर नहीं जाता ॥ ४ ॥ ३ ॥

॥ मलार महला ५ ॥ राज ते कीट कीट ते सुरपति करि दोख जठर कउ भरते। क्रिपा निधि छोडि आन कउ पूजहि आतम घाती हरते ॥ १ ॥ हरि बिसरत ते दुखि दुखि मरते। अनिक बार भ्रमहि बहु जोनी टेक न काहू धरते ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तिआगि सुआमी आन कउ चितवत मूड़ मुगध खल खरते। कागर नाव लंघहि कत सागरु ब्रिथा कथत हम तरते ॥ २ ॥ सिव बिरंचि असुर सुर जेते काल अगनि महि जरते। नानक सरनि चरन कमलन की तुम्ह न डारहु प्रभ करते ॥ ३ ॥ ४ ॥

परमेश्वर ऐसा समर्थ है कि राजा से कीड़ा कर देता है और कीड़े से इन्द्र कर देता है। ऐसे परमेश्वर को त्यागकर जीव पाप करके पेट को भरते हैं। कृपानिधि को छोड़कर दूसरों को पूजते हैं, वह हरि से उदासीन और आत्मघाती हैं ॥ १ ॥ हरि के विस्मृत करने पर पुरुष दुःखी होकर मरते हैं। अनेक बार बहुत सी योनियों में भटकते हैं, क्योंकि किसी सन्तजन की शरण नहीं लेते ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो हरि-स्वामी को त्यागकर दूसरों का ध्यान करते हैं, वे मूर्ख हैं और गधे के तुल्य हैं। काग़ज़ की नाव से संसार-समुद्र कहाँ पार करोगे। वे व्यर्थ ही कहते हैं कि हम चल रहे हैं ॥२॥ शिव, ब्रह्मा, असुर, देवता जितने हैं, वे सब काल रूपी अग्नि में जलते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि हम आपके चरण-कमलों की शरण में हैं। हे प्रभु! तुम अपने आसरे से मुझे जुदा न करना ॥ ३ ॥ ४ ॥

रागु मलार महला ५ दुपदे घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ प्रभ मेरे ओइ बैरागी तिआगी। हउ इकु खिनु तिसु बिनु रहि न सकउ प्रीति हमारी लागी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उन कै संगि मोहि प्रभु चिति आवै संत प्रसादि मोहि जागी। सुनि उपदेसु भए मन निरमल गुन गाए रंगि रांगी ॥ १ ॥ इहु मनु देइ कीए संत मीता क्रिपाल भए बडभागीं। महा सुखु पाइआ बरनि न साकउ रेनु नानक जन पागी ॥ २ ॥ १ ॥ ५ ॥

जो मेरे प्रभु रूपी गुरु हैं, वह वैरागी हैं, त्यागी हैं। मैं एक क्षण उनके बिना नहीं रह सकता, क्योंकि उनके चरणों में मेरी प्रीति है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उनके संग मुझे प्रभु का स्मरण आता है और उन्हीं की कृपा

से मेरी बुद्धि जाग्रत् हुई है। गुरु का उपदेश सुनकर मन में निर्मल हुए हैं और हरि के गुण गाकर प्रेम-रंग में बुद्धि रँग गई है ॥ १ ॥ इस मन के बल पर सन्त मित्र बना लिये हैं और सौभाग्यवश सन्त हम पर कृपालु हुए हैं। इस प्रकार हमने अत्यन्त सुख पाया है, जो वर्णनातीत है। गुरु नानकजी का कथन है कि हमने सन्तों की चरण-धूलि प्राप्त की है ॥ २ ॥ १ ॥ ५ ॥

॥ मलार महला ५ ॥ माई मोहि प्रीतमु देहु मिलाई। सगल सहेली सुख भरि सूती जिह घरि लालु बसाई ॥१॥रहाउ॥ मोहि अवगन प्रभु सदा दइआला मोहि निरगुनि किआ चतुराई। करउ बराबरि जो प्रिअ संगि रातीं इह हउमै की ढीठाई ॥ १ ॥ भई निमाणी सरनि इक ताकी गुर सतिगुर पुरख सुखदाई। एक निमख महि मेरा सभु दुखु काटिआ नानक सुखि रैनि बिहाई ॥ २ ॥ २ ॥ ६ ॥

हे सन्तो ! मुझे प्रियतम से मिला दीजिए। जिनके हृदय में प्यारा आ बसा है, वे सभी सहेलियाँ सुखपूर्वक सोई हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मुझ अवगुणी पर प्रभु सदैव दया करता है। मुझ अवगुणी की क्या चतुराई है। जो सुहागिन प्रियतम के प्रेम में अनुरक्त हैं, उनकी मैं बराबरी करूँ, यह अहंत्व की धृष्टता होगी ॥ १ ॥ इसलिए तुच्छ-सी हुई मैं एक गुरु का पूजन करती हूँ, (इसीलिए) सतिगुरु पुरुष सुखदाता की शरण ली है। एक निमिषमात्र में उपदेश सुनाते ही उसने मेरा सभी दुःख काट दिया है। गुरु नानक कहते हैं कि अब सुखपूर्वक अवस्था रूपी रात्रि व्यतीत होती है ॥ २ ॥ २ ॥ ६ ॥

॥ मलार महला ५ ॥ बरसु मेघ जी तिलु बिलमु न लाउ। बरसु पिआरे मनहि सधारे होइ अनदु सदा मनि चाउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हम तेरी धर सुआमीआ मेरे तू किउ मनहु बिसारे। इसत्री रूप चेरी की निआई सोभ नही बिनु भरतारे ॥ १ ॥ बिनउ सुनिओ जब ठाकुर मेरै बेगि आइओ किरपा धारे। कहु नानक मेरो बनिओ सुहागो पति सोभा भले अचारे ॥ २ ॥ ३ ॥ ७ ॥

हे परमेश्वर वाहिगुरु ! उपदेश की वर्षा करो। तिलमात्र भी देरी न लगाओ। हे प्यारे, मन के आसरा देनेवाले उपदेश को बरसाओ। मेरे मन में आनन्द होवे, यह मेरे मन में सदा चाव रहता है ॥ १ ॥

रहाउ ॥ हे मेरे स्वामी ! हम सब जीव तुम्हारी शरण हैं, तुमने किसलिए हम सबको मन से भुला दिए हैं। मैं गृहिणी थी, अब दासी-तुल्य हो रही हूँ। स्त्री कैसी भी हो, बिना पति के शोभा नहीं पाती ॥ १ ॥ जब मेरे ठाकुर ने विनती को सुना, तब शीघ्र कृपालु होकर पास आए। गुरु नानकजी का कथन है कि अब मेरा सुहाग शोभनीय है, लाज, शोभा और कर्तव्य सब भले हो गए हैं ॥ २ ॥ ३ ॥ ७ ॥

॥ मलार महला ५ ॥ प्रीतम साचा नामु धिआइ। दूख दरद बिनसै भवसागरु गुर की मूरति रिदै बसाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दुसमन हते दोखी सभि विआपे हरि सरणाई आइआ। राखन हारै हाथ दे राखिओ नामु पदारथु पाइआ ॥ १ ॥ करि किरपा किल बिख सभि काटे नामु निरमलु मनि दीआ। गुण निधानु नानक मनि वसिआ बाहुड़ि दूख न थीआ ॥ २ ॥ ४ ॥ ८ ॥

प्रियतम का सच्चा नाम स्मरण किया है। गुरु की मूर्ति हृदय में अवस्थित करने से भवसागर के सब दुःख-दर्द नष्ट हो गए हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दुश्मन और दोषी, जो व्याप्त थे, समाप्त हो गए हैं और मैं हरि का शरणागत हूँ। रक्षक वाहिगुरु ने हाथ देकर रक्षा की है और मैंने नाम-पदार्थ प्राप्त कर लिया है ॥ १ ॥ परमात्मा ने कृपा करके समस्त पाप काट दिए हैं और निर्मल नाम मन में प्राप्त हुआ है। गुरु नानक का कथन है कि गुणों का समुद्र हरि मन में अवस्थित है, अब पुनः कोई दुःख नहीं होता है ॥ २ ॥ ४ ॥ ८ ॥

॥ मलार महला ५ ॥ प्रभ मेरे प्रीतम प्रान पिआरे। प्रेम भगति अपनो नामु दीजै दइआल अनुग्रहु धारे ॥१॥रहाउ॥ सिमरउ चरन तुहारे प्रीतम रिदै तुहारी आसा। संत जना पहि करउ बेनती मनि दरसन की पिआसा ॥ १ ॥ बिछुरत मरनु जीवनु हरि मिलते जन कउ दरसनु दीजै। नामु अधारु जीवन धनु नानक प्रभ मेरे किरपा कीजै ॥ २ ॥ ५ ॥ ९ ॥

हे मेरे प्रियतम प्रभु, प्राणप्रिय दयालु ! अनुग्रह करके मुझे प्रेम-भक्ति और अपना नाम दीजिए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रियतम ! तुम्हारे चरणों का स्मरण करता हूँ और हृदय में तुम्हारे दर्शनों की आकांक्षा है। अब संतजनों के पास विनती करता हूँ कि मेरे मन में हरि-दर्शन की आकांक्षा लगी हुई है ॥ १ ॥ हे हरि ! तुम्हारे बिछुड़ने में मृत्यु और मिलन में जीवन है, इसलिए दास को दर्शन दीजिए। श्री गुरु नानक कहते हैं कि

हे प्रभु ! मुझ पर कृपा कीजिए कि जो जीवन और धन-रूप है, उस अपने नाम का सहारा मुझे दीजिए ॥ २ ॥ ५ ॥ ९ ॥

॥ मलार महला ५ ॥ अब अपने प्रीतम सिउ बनिआई। राजा रामु रमत सुखु पाइओ बरसु मेघ सुखदाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इकु पलु बिसरत नही सुख सागरु नामु नवै निधि पाई। उदौतु भइओ पूरन भावी को भेटे संत सहाई ॥ १ ॥ सुख उपजे दुख सगल बिनासे पारब्रहम लिव लाई। तरिओ संसारु कठिन भै सागरु हरि नानक चरन धिआई ॥ २ ॥ ६ ॥ १० ॥

अब अपने प्रियतम के साथ हमारी प्रीति हो गई है। राजा राम का जाप करते हुए सुख पाया है। गुरु रूपी बादल ने सुखदायक वर्षा की है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सुखों का समुद्र नाम एक पल मात्र भी विस्मृत नहीं होता है। हमने नाम रूपी नवनिधि प्राप्त की है। पूर्व कर्मों का जब उदय हुआ, तब सन्त सहायता करनेवाले मिले हैं ॥ १ ॥ सुख उत्पन्न हुए हैं, समस्त दुःख नष्ट हो गए हैं और परब्रह्म में वृत्ति लगाई है। गुरु नानक का कथन है कि हरि के चरणों को स्मरण कर कठिन और भयदायक संसार-सागर को पार किया है ॥ २ ॥ ६ ॥ १० ॥

॥ मलार महला ५ ॥ घनिहर बरसि सगल जगु छाइआ। भए क्रिपाल प्रीतम प्रभ मेरे अनद मंगल सुख पाइआ ॥१॥रहाउ॥ मिटे कलेस त्रिसन सभ बूझी पारब्रहमु मनि धिआइआ। साध संगि जनम मरन निवारे बहुरि न कतहू धाइआ ॥१॥ मनु तनु नामि निरंजनि रातउ चरन कमल लिव लाइआ। अंगीकारु कीओ प्रभि अपनै नानक दास सरणाइआ ॥ २ ॥ ७ ॥ ११ ॥

गुरु रूपी मेघ ने उपदेश रूपी जल बरसाकर जगत को छाया से आच्छादित कर लिया है। मेरे प्रियतम प्रभु कृपालु हुए हैं और मैंने आनन्द, मंगल को प्राप्त कर लिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ समस्त क्लेश मिट गए हैं और सब तृष्णा बुझ गई है। परब्रह्म को मन में स्मरण किया है। सन्तों की संगति से जन्म-मरण समाप्त कर दिए हैं, अब मन कहीं भाग-दौड़ नहीं करता ॥१॥ क्योंकि मन, तन निरंजन प्रभु के नाम में समाया है और मैंने प्रभु के कमल-चरणों में वृत्ति को लगाया है। गुरु नानक कहते हैं कि जब मैं उसकी शरण में आया, तब प्रभु ने हमें अपना लिया है ॥ २ ॥ ७ ॥ ११ ॥

॥ मलार महला ५ ॥ बिछुरत किउ जीवे ओइ जीवन । चितहि उलास आस मिलबे की चरन कमल रस पीवन ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिन कउ पिआस तुमारी प्रीतम तिन कउ अंतरु नाही । जिन कउ बिसरै मेरो रामु पिआरा से मूए मरि जांही ॥ १ ॥ मनि तनि रवि रहिआ जगदीसुर पेखत सदा हजूरे । नानक रवि रहिओ सभ अंतरि सरब रहिआ भरपूरे ॥ २ ॥ ८ ॥ १२ ॥

हे जीवन-रूप प्रभु ! तुम्हारे बिछुड़ने पर तुम्हारे प्यारे संत कैसे जीएँ ? तुम्हारे कमल-चरणों का प्रेम-रस पान करने की और मिलने की आशा से उनके हृदय में उत्साह रहता हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रियतम ! जिनको तुम्हारी प्यास है, उनको भेद-भावना नहीं होती । हे मेरे प्यारे राम ! जिन मनुष्यों को तुम विस्मृत होते हो, वे मृत्यु के पश्चात् यमराज के पास जाते हैं अर्थात् वे चौरासी लाख योनियों में भटकते हैं ॥ १ ॥ हे वाहिगुरु ! तुम मन-तन में व्याप्त हो । मैं सदैव ही तुम्हें निकट देख रहा हूँ । गुरु नानक कहते हैं कि तुम समस्त जगत में व्यापक हो और समस्त जगत तुम्हारे भीतर पूर्ण हो रहा है ॥ २ ॥ ८ ॥ १२ ॥

॥ मलार महला ५ ॥ हरि कै भजनि कउन कउन न तारे । खग तन मीन तन म्रिग तन बराह तन साधू संगि उधारे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ देव कुल दैत कुल जख्य किंनर नर सागर उतरे पारे । जो जो भजनु करै साधू संगि ता के दूख बिदारे ॥ १ ॥ काम करोध महा बिखिआ रस इन ते भए निरारे । दीन दइआल जपहि करुणामै नानक सद बलिहारे ॥ २ ॥ ९ ॥ १३ ॥

हरि के भजन ने किन-किन का उद्धार नहीं किया है । पक्षियों के शरीर, मछलियों के शरीर, मृगों के शरीर, सूअरों के शरीर सत्पुरुषों के सहवास से पार हो गए हैं ॥१॥रहाउ॥ देवकुल, दैत्यकुल, किन्नरकुल के पुरुष, देहधारी पुरुष संसार-सागर से पार कर दिए हैं । जो-जो जीव साधुओं के साथ रहकर भजन करते रहे हैं, उनके सब दुःख समाप्त किए गए हैं ॥ १ ॥ काम, क्रोध और महान विषयों के जो रस हैं, वे सत्संगी इनमें असम्पृक्त रहे हैं । दीनदयालु कृपास्वरूप परमेश्वर को जो जपते हैं, गुरु नानक कहते हैं कि वे उन पर बलिहारी जाते हैं ॥ २ ॥ ९ ॥ १३ ॥

॥ मलार महला ५ ॥ आजु मै बैसिओ हरि हाट । नामु

रासि साझी करि जन सिउ जांउ न जम कै घाट ॥ १ ॥ रहाउ ॥ धारि अनुग्रहु पारब्रहमि राखे भ्रम के खुल्हे कपाट । बेसुमार साहु प्रभु पाइआ लाहा चरन निधि खाट ॥ १ ॥ सरनि गही अचुत अबिनासी किलबिख काढे है छांटि । कलि कलेस मिटे दास नानक बहुरि न जोनी माट ॥ २ ॥ १० ॥ १४ ॥

आज मैं हरि के हाट अर्थात् सत्संग में बैठा हूँ । नाम की राशि लेकर गुरु से मेल-मिलाप किया है, अब हम यम के घाट नहीं जाएँगे ॥१॥ रहाउ ॥ कृपा करके परब्रह्म रक्षक हुए हैं और भ्रम के किवाड़ खुल गये हैं । प्रभु अनन्त शाह है, मैंने उसको पाया है और उसके निधि रूपी चरणों का लाभ प्राप्त किया है ॥ १ ॥ अद्भुत अविनाशी की शरण ली है और शरीर से पाप छाँटकर निकाल दिए हैं । गुरु नानक कहते हैं कि मुझ दास के कलह-क्लेश मिट गए हैं और फिर योनियों के घाट में नहीं आवेंगे ॥ २ ॥ १० ॥ १४ ॥

॥ मलार महला ५ ॥ बहु बिधि माइआ मोह हिरानो । कोटि मधे कोऊ बिरला सेवकु पूरन भगतु चिरानो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इत उत डोलि डोलि स्रमु पाइओ तनु धनु होत बिरानो । लोग दुराइ करत ठगिआई हो तौ संगि न जानो ॥ १ ॥ म्रिग पंखी मीन दीन नीच इंह संकट फिरि आनो । कहु नानक पाहन प्रभ तारहु साध संगति सुख मानो ॥ २ ॥ ११ ॥ १५ ॥

माया-मोह जीव को बहुत प्रकार से खींच रहा है । करोड़ों में से पूर्णपरमेश्वर का सेवक कोई विरला ही है, जो जन्मान्तरों से भक्त है ॥१॥ रहाउ ॥ जिसके लिए इधर-उधर घूम-फिरकर जीव ने दुःख पाया था, वह तन-धन अन्त में पराया हो जाता है । मनमुख पुरुष लोगों से छिपाकर ठगाई करता है और जो परमेश्वर शाश्वत है उसको नहीं जानता है ॥१॥ मृग, पक्षी, मछली आदि नीच योनियों के संकट में फँसा जीव दीन होता है । परमेश्वर उसे इन दुःखों में फिर ले आए हैं । गुरु नानक का कथन है कि मुझ पत्थर रूपी पापी जीव को पार करो और अपने सत्संग का सुख दो ॥ २ ॥ ११ ॥ १५ ॥

॥ मलार महला ५ ॥ दुसट मुए बिखु खाई री माई । जिस के जीअ तिन ही रखि लीने मेरे प्रभ कउ किरपा आई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अंतरजामी सभ महि वरतै तां भउ कैसा भाई । संगि सहाई छोडि न जाई प्रभु दीसै सभनी ठाईं ॥ १ ॥

अनाथा नाथु दीन दुख भंजन आपि लीए लड़ि लाई । हरि की ओट जीवहि दास तेरे नानक प्रभ सरणाई ॥ २ ॥ १२ ॥ १६ ॥

हे भाई ! दुष्ट कामादिक विष का भक्षण कर मृत हो गए हैं, लेकिन हम जिसके जीव थे, उसी ने बचा लिये हैं। मेरे प्रभु ने कृपा की है ॥१॥ रहाउ ॥ अन्तर्यामी वाहिगुरु सर्वत्र व्यापक है, तब किसी का भय कैसे करें ? सहायता करनेवाला छोड़कर नहीं जाता। प्रभु सर्वत्र दृष्टिगोचर होता है ॥ १ ॥ अनाथों के नाथ, दीनों के दु:खनाशक हरि ने अपने सेवकों को अपने साथ लगा लिया है। हे हरि ! जो आपके सेवक हैं, वे आपकी ओट में जीते हैं। गुरु नानक का कथन है कि जिन्होंने तुम्हारी शरण ली है, वही तुम्हारे सेवक हैं ॥ २ ॥ १२ ॥ १६ ॥

॥ मलार महला ५ ॥ मन मेरे हरि के चरन रवीजै । दरस पिआस मेरो मनु मोहिओ हरि पंख लगाइ मिलीजै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ खोजत खोजत मारगु पाइओ साधू सेव करीजै । धारि अनुग्रहु सुआमी मेरे नामु महारसु पीजै ॥ १ ॥ त्राहि त्राहि करि सरनी आए जलतउ किरपा कीजै । करु गहि लेहु दास अपुने कउ नानक अपुनो कीजै ॥ २ ॥ १३ ॥ १७ ॥

हे हरि ! मेरे मन ने तुम्हारे चरणों को जपा है, मेरा मन मोहित हुआ है और तुम्हारे दर्शन की प्यास लगी हुई है। हे हरि ! मुझे ज्ञान, वैराग्य रूपी पंख लगाकर अपने संग मिला लीजिए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ खोजते-खोजते मैंने यही उपाय प्राप्त किया है कि संत-सेवा की जाए। हे स्वामी ! अनुग्रह कीजिए, ताकि तुम्हारे नाम-महारस का पान करूँ ॥१॥ 'रक्षा करो' ऐसा कहते हुए आपकी शरण आए हैं। मुझ, तृष्णाओं में जलते हुए पर कृपा कीजिए। अपने दास के मन रूपी हाथ को पकड़ लें। गुरु नानक कहते हैं कि नाम-जल देकर अपना दास बना लीजिए ॥ २ ॥ १३ ॥ १७ ॥

॥ मलार म० ५ ॥ प्रभ को भगति बछलु बिरदाइओ । निंदक मारि चरन तल दीने अपुनो जसु वरताइओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जै जैकारु कीनो सभ जग महि दइआ जीअन महि पाइओ । कंठि लाइ अपुनो दासु राखिओ ताती वाउ न लाइओ ॥ १ ॥ अंगीकारु कीओ मेरे सुआमी भ्रमु भउ मेटि

सुखाइओ । महा अनंद करहु दास हरि के नानक बिस्वासु मनि आइओ ।। २ ।। १४ ।। १८ ।।

प्रभु का प्रण भक्तों से प्रेम-निर्वाह करने का है, इसीलिए निंदक समाप्त कर भक्तों को चरणों में जगह दी है और संसार में अपना यश प्रकट किया है ।। १ ।। रहाउ ।। पृथ्वी पर समस्त जगत ने प्रभु का जय-जयकार किया है, क्योंकि उसने जीवों में अपनी दयालुता प्रकट की है। अपने दास को गले लगाकर रखा है और वासना रूपी गर्म हवा नहीं लगने दी ।। १ ।। भ्रम और भय दूर करके मेरे स्वामी ने दासों का पक्ष लिया है। इसी से हम दासों ने सुख प्राप्त किया है। गुरु नानक का कथन है कि जिनके मन में विश्वास उत्पन्न हुआ है, वे हरि के सेवक मन में महा-आनंद प्राप्त करते हैं ।। २ ।। १४ ।। १८ ।।

रागु मलार महला ५ चउपदे घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। गुरमुखि दीसै ब्रहम पसारु । गुरमुखि त्रै गुणीआं बिसथारु । गुरमुखि नाद बेद बीचारु । बिनु गुर पूरे घोर अंधारु ।। १ ।। मेरे मन गुरु गुरु करत सदा सुखु पाईऐ । गुर उपदेसि हरि हिरदै वसिओ सासि गिरासि अपणा खसमु धिआईऐ ।। १ ।। रहाउ ।। गुर के चरण विटहु बलि जाउ । गुर के गुण अनदिनु नित गाउ । गुर की धूड़ि करउ इसनानु । साची दरगह पाईऐ मानु ।। २ ।। गुरु बोहिथु भवजल तारणहारु । गुरि भेटिऐ न होइ जोनि अउतारु । गुर की सेवा सो जनु पाए । जाकउ करमि लिखिआ धुरि आए ।। ३ ।। गुरु मेरी जीवनि गुरु आधारु । गुरु मेरी वरतणि गुरु परवारु । गुरु मेरा खसमु सतिगुर सरणाई । नानक गुरु पारब्रहमु जाकी कीम न पाई ।। ४ ।। १ ।। १९ ।।

गुरमुख को यह जगत-प्रसार ब्रह्म-रूप दृष्टिगत होता है। उसे यह सब तीनों गुणों से रचित दिखाई देता है। गुरमुख नाद और वेद का चिन्तन करता है। विना गुरु के अज्ञान रूपी घोर अँधेरा रहता है ।। १ ।। हे मेरे मन ! गुरु का नाम जपते हुए सदा सुख होता है और गुरु के उपदेश से हरि का हृदय में वास होता है, इसलिए प्रत्येक श्वास द्वारा अपने परमेश्वर का स्मरण करो ।। १ ।। रहाउ ।। मैं गुरु के चरणों पर बलिहारी जाता हूँ और गुरु के गुणों को नित्यप्रति निरन्तर गाता हूँ। हे भाई !

गुरु की चरण-धूल में स्नान करो। इस प्रकार करने से प्रभु के दरबार में मान प्राप्त होता है ॥ २ ॥ गुरु जहाज़ के तुल्य संसार-सागर से पार करनेवाला है। गुरु के मिलाप से योनियों में भटकना नहीं होता। गुरु की सेवा वह पुरुष करता है, जिसके भाग्य में प्रभु-दरबार से ही उत्तम कर्म लिखा है ॥ ३ ॥ गुरु मेरा जीवन-रूप है, गुरु का ही आसरा है, गुरु मेरा आचरण है और गुरु ही कुटुम्ब-रूप है। गुरु मेरा स्वामी है और मैं सतिगुरु का शरणागत हूँ। गुरु नानक का कथन है कि गुरु परब्रह्म का स्वरूप ही है, जिसकी क़ीमत नहीं आँकी जाती ॥ ४ ॥ १ ॥ १९ ॥

॥ मलार महला ५ ॥ गुर के चरन हिरदै वसाए। करि किरपा प्रभि आपि मिलाए। अपने सेवक कउ लए प्रभु लाइ। ताकी कीमति कही न जाइ ॥ १ ॥ करि किरपा पूरन सुखदाते। तुम्हरी क्रिपा ते तूं चिति आवहि आठ पहर तेरै रंगि राते ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गावणु सुनणु सभु तेरा भाणा। हुकमु बूझै सो साचि समाणा। जपि जपि जीवहि तेरा नांउ। तुझ बिनु दूजा नाही थाउ ॥२॥ दुख सुख करते हुकमु रजाइ। भाणै बखस भाणै देइ सजाइ। दुहां सिरिआ का करता आपि। कुरबाणु जांई तेरे परताप ॥ ३ ॥ तेरी कीमति तूहै जाणहि। तू आपे बूझहि सुणि आपि बखाणहि। सेई भगत जो तुधु भाणे। नानक तिनकै सद कुरबाणे ॥ ४ ॥ २ ॥ २० ॥

गुरु के चरण हृदय में अवस्थित हैं। हे प्रभु ! तुमने कृपा करके आप ही गुरु मिलाए हैं। प्रभु अपने सेवकों को आप ही सेवा में लगाता है, प्रभु के सेवक की क़ीमत कही नहीं जाती ॥ १ ॥ हे पूर्ण सुखों के दाता ! हम पर कृपादृष्टि करो, क्योंकि अपनी कृपा से ही तुम हृदय में आते हो। जिन पर तुम्हारी कृपा हुई है, वे आठों प्रहर तुम्हारे प्रेम में अनुरक्त रहते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गाना और सुनना सब तुम्हारी इच्छा है। जो हुकुम जानता है, वही सत्यस्वरूप प्रभु में समा जाता है। इसलिए संतजन तुम्हारा नाम जप-जपकर जीते हैं, क्योंकि तुमसे अलग कोई दूसरा स्थान नहीं है ॥ २ ॥ हे कर्तार ! दुःख-सुख तुम्हारे हुकुम और रज़ा-अनुसार हैं। तुम अपने 'भाणे' से क्षमा करते हो और अपने 'भाणे' से सज़ा देते हो। हे कर्तार ! लोक-परलोक के मालिक तुम आप हो। मैं तुम्हारे प्रताप पर बलिहारी जाता हूँ ॥ ३ ॥ अपनी क़ीमत को तुम स्वयं ही जानते हो। तुम आप ही पूछकर सुनते हो और आप ही सुनकर बखान करते हो। जो तुम्हें उपयुक्त लगे हैं, वे ही भक्त हैं। गुरु नानक उन भक्तों पर बलिहारी जाते हैं ॥ ४ ॥ २ ॥ २० ॥

॥ मलार महला ५ ॥ परमेसरु होआ दइआलु । मेघु वरसै अंम्रितधार । सगले जीअ जंत त्रिपतासे । कारज आए पूरे रासे ॥ १ ॥ सदा सदा मन नामु सम्हालि । गुर पूरे की सेवा पाइआ ऐथै ओथै निबहै नालि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दुखु भंना भै भंजनहार । आपणिआ जीआ की कीती सार । राखनहार सदा मिहरवान । सदा सदा जाईऐ कुरबान ॥ २ ॥ कालु गवाइआ करतै आपि । सदा सदा मन तिसनो जापि । द्रिसटि धारि राखे सभि जंत । गुण गावहु नित नित भगवंत ॥ ३ ॥ एको करता आपे आप । हरि के भगत जाणहि परताप । नावै की पैज रखदा आइआ । नानकु बोलै तिस का बोलाइआ ॥ ४ ॥ ३ ॥ २१ ॥

परमेश्वर हम पर दयालु हुआ है और बादल बनकर अमृत की धारा बरसा रहा है। सभी जीव-जंतु तृप्त हुए हैं और सभी कार्य सिद्ध हुए हैं ॥१॥ मेरे मन ने सदैव नाम (सिमरन) को सँभाला है। वह पूर्णगुरु की सेवा द्वारा प्राप्त हुआ है और लोक-परलोक में हमारे साथ निभेगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भयनाशक हरि ने काल आदि दुःख को तोड़ दिया है और अपने जीवों की देखभाल की है। रक्षक हरि सदैव कृपालु है, इसलिए सदैव उस पर बलिहारी जाओ ॥ २ ॥ कर्तार ने स्वयं काल का भय गँवाया है, इसलिए, हे मन ! सदैव उसका जाप करो। जिसने दयादृष्टि करके सब जीवों की रक्षा की है, उस भगवान के गुणों को नित्य-प्रति गाया करो ॥ ३ ॥ अपने-आप एक ही कर्ता है। हरि के भक्त उसके प्रताप को जानते हैं। युग-युगों से प्रभु अपने नाम की प्रतिष्ठा रखते आए हैं। गुरु नानक का कथन है कि प्रत्येक उसी प्रभु का बुलाया हुआ बोलता है ॥ ४ ॥ ३ ॥ २१ ॥

॥ मलार महला ५ ॥ गुर सरणाई सगल निधान । साची दरगहि पाईऐ मानु । भ्रमु भउ दूखु दरदु सभु जाइ । साध संगि सद हरिगुण गाइ ॥ १ ॥ मन मेरे गुरु पूरा सालाहि । नामु निधानु जपहु दिनु राती मन चिंदे फल पाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतिगुर जेवडु अवरु न कोइ । गुरु पारब्रहमु परमेसरु सोइ । जनम मरण दूख ते राखै । माइआ बिखु फिरि बहुड़ि न चाखै ॥२॥ गुर की महिमा कथनु न जाइ । गुरु परमेसरु साचै नाइ । सचु संजमु करणी सभु साची । सो मनु निरमलु जो

गुर संगि राची ॥ ३ ॥ गुरु पूरा पाईऐ वडभागि । कामु क्रोधु लोभु मन ते तिआगि । करि किरपा गुर चरण निवासि । नानक की प्रभ सचु अरदासि ॥ ४ ॥ ४ ॥ २२ ॥

गुरु की शरण लेने से सम्पूर्ण निधियाँ प्राप्त होती हैं और सच्चे दरबार में सम्मान प्राप्त होता है। भ्रम, भय, दुःख, दर्द सब नष्ट हो जाता है, इसलिए सत्संगति द्वारा हरि के गुणों को गाओ ॥ १ ॥ हे मेरे मन ! पूर्णगुरु की सराहना करके नाम-निधान को रात-दिन जपो, (इस प्रकार) मन-वांछित फल प्राप्त कर लोगे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतिगुरु के तुल्य कोई महान नहीं है। गुरु परब्रह्म का स्वरूप है और वही परमेश्वर गुरु-रूप है। जिसे प्रभु जन्म-मरण के दुःख से बचाता है, वह पुरुष विष रूपी माया को पुनः नहीं चखता ॥ २ ॥ गुरु की महिमा अकथनीय है। सच्चे नाम के जपनेवालों के लिए गुरु परमेश्वर का रूप है। सत्य उनका संयम है और सारी करनी भी सत्य है। वह मन से निर्मल है जो गुरु के साथ अनुरक्त है ॥ ३ ॥ पूर्णगुरु सौभाग्यवश मिलता है। काम, क्रोध और लोभ मन से अलग होता है। हे प्रभु ! कृपादृष्टि करके गुरु के चरणों में जगह दीजिए। गुरु नानकजी कहते हैं कि हमारी निश्चयपूर्वक यही प्रार्थना है ॥ ४ ॥ ४ ॥ २२ ॥

रागु मलार महला ५ पड़ताल घरु ३

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ गुर मनारि प्रिअ दइआर सिउ रंगु कीआ । कीनो री सगल सींगार । तजिओ री सगल बिकार । धावतो असथिरु थीआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऐसे रे मन पाइ कै आपु गवाइ कै करि साधन सिउ संगु । बाजे बजहि म्रिदंग अनाहद कोकिल री राम नामु बोलै मधुर बैन अति सुहीआ ॥ १ ॥ ऐसी तेरे दरसन की सोभ अति अपार प्रिअ अमोघ तैसे ही संगि संत बने । भव उतार नाम भने । रम राम राम माल । मनि फेरते हरि संगि संगीआ । जन नानक प्रिउ प्रीतमु थीआ ॥ २ ॥ १ ॥ २३ ॥

गुरु को अपने पक्ष में करके दयालु प्रभु-पति के साथ प्रेम किया है। समस्त शृंगार किया है, इन्द्रियों के समस्त विकारों को भी त्यागा है और मन दौड़ाता हुआ स्थिर हो गया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अब सन्तों के साथ रहकर, अहंत्व गँवाकर और प्रियतम को पाकर आनन्दपूर्वक रहो।

जिसमें प्रत्यक्ष बाजे बजते हैं, वह सन्तों की रसना केवल राम-नाम रूपी मधुर वचनों को बोलती हुई अत्यन्त शोभा पाती है ॥ १ ॥ हे भाई! उन सन्तों के मन में ऐसी ही दर्शन की शोभा है। जैसे अपार, अमोघ सफल रूप प्रभु हैं, वैसे ही सन्त शोभा पा रहे हैं। संसार से पार उतारनेवाले नाम जपते हैं। राम-नाम-उच्चारण ही सुन्दर माला है। जो हरि के सगियों-साथियों से मिलकर नाम-माला फेरते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि उन जनों को प्रभु-पति अत्यन्त प्यारा है ॥ २ ॥ १ ॥ २३ ॥

॥ मलार महला ५ ॥ मनु घनै भ्रमै बनै। उमकित रसि चालै। प्रभ मिलबे की चाह ॥ १ ॥ रहाउ ॥ त्रै गुन माई मोहि आई कहंउ बेदन काहि ॥ १ ॥ आन उपाव सगर कीए नहि दूख साकहि लाहि। भजु सरनि साधू नानका मिलु गुन गोबिदहि गाहि ॥ २ ॥ २ ॥ २४ ॥

हे मन! पहले वन में बहुत अधिक भटके हैं। अब उमंग और चाव के साथ सत्संग में चलो और प्रभु से मिलने की इच्छा करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ त्रैगुणी माया मोहित करती हुई आती है, यह पीड़ा किससे कहूँ? ॥ १ ॥ दूसरे समस्त उपाय किए हैं, लेकिन वे दुःख को दूर नहीं कर सके हैं। इसलिए गुरु नानक कहते हैं कि साधुओं का शरणागत होकर और तदनन्तर उसके साथ मिलकर गोविन्द के गुण गाओ ॥२॥२॥२४॥

॥ मलार महला ५ ॥ प्रिअ की सोभ सुहावनी नीकी। हाहा हूहू गंध्रब अपसरा अनंद मंगल रस गावनी नीकी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ धुनित ललित गुनग्य अनिक भांति बहु बिधि रूप दिखावनी नीकी ॥ १ ॥ गिरि तर थल जल भवन भरपुरि घटि घटि लालन छावनी नीकी। साध संगि रामईआ रसु पाइओ नानक जा कै भावनी नीकी ॥ २ ॥ ३ ॥ २५ ॥

प्रभु-पति की शोभा अत्यन्त सुन्दर एवं शोभनीय हो रही है। जिसकी मांगलिक एवं श्रेष्ठ शोभा को हाहा, हूहू नाम वाले दोनों मुख्य गन्धर्व और अप्सराएँ प्रेमपूर्वक गाती हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसकी सुन्दर शोभा को, अनेक प्रकार के गुणों के ज्ञाता उच्चरित करते हैं और बहुत भली प्रकार से रूपों को प्रकट करते हैं ॥ १ ॥ पर्वत, वृक्ष, थल, जल, भवन और घट-घट में प्यारे की शोभा भली प्रकार छाई हुई है। सन्तों का संग करने से प्रभु की शोभा को उसी ने पाया है, गुरु नानकजी कहते हैं, जिसके मन में भली प्रकार श्रद्धा विद्यमान है ॥ २ ॥ ३ ॥ २५ ॥

॥ मलार महला ५ ॥ गुर प्रीति पिआरे चरन कमल रिद अंतरि धारे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दरसु सफलिओ दरसु पेखिओ गए किलबिख गए । मन निरमल उजीआरे ॥ १ ॥ बिसम बिसमै बिसम भई । अघ कोटि हरते नाम लई । गुर चरन मसतकु डारि पही । प्रभ एक तूंही एक तुही । भगत टेक तुहारे । जन नानक सरनि दुआरे ॥ २ ॥ ४ ॥ २६ ॥

गुरु, जो प्रीति के प्यारे हैं, उनके चरण-कमल हृदय में धारण किए हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हमें गुरु का दर्शन सफल हुआ है, क्योंकि हमने हरि का साक्षात्कार किया है; पाप मन, तन से दूर हो गए हैं और अन्तःकरण निर्मल और ज्ञानयुक्त हो गए हैं ॥ १ ॥ उसके अद्भुत रूप को देखकर बुद्धि विस्मयविमुग्ध हुई है, जिसके नाम-स्मरण से करोड़ों पाप समाप्त हो जाते हैं। गुरु के चरणों पर मस्तक डालकर पड़ी हूँ। हे प्रभु ! लोक-परलोक में तुम ही हो। हे भगवान् ! जो भक्त आपके आसरे हैं, गुरु नानक कहते हैं कि मैं उनके द्वार पर शरणागत हूँ ॥२॥४॥२६॥

॥ मलार महला ५ ॥ बरसु सरसु आगिआ । होहि आनंद सगल भाग ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संत संगे मनु परफड़ै मिलि मेघ धर सुहाग ॥ १ ॥ घन घोर प्रीति मोर । चितु चात्रिक बूंद ओर । ऐसो हरि संगे मन मोह । तिआगि माइआ धोह । मिलि संत नानक जागिआ ॥ २ ॥ ५ ॥ २७ ॥

हे गुरु ! परमेश्वर की आज्ञा से उपदेश की वर्षा करो, जिससे हमारे भाग्य उदित हों और आनन्द हो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सन्तों के संग से मन प्रफुल्लित होता है, जैसे पृथ्वी को बादल के देखने से आनन्द होता है ॥ १ ॥ जैसे बादल का शब्द सुनकर मोर को प्रीति होती है और चातक का चित्त स्वाति-बूंद की तरफ़ होता है। इसी प्रकार हरि के साथ मन को मोह हो रहा है और द्रोह-रूप माया को त्याग दिया है। गुरु नानक कहते हैं कि सन्तों से मिलकर मैं जाग गया हूँ ॥२॥५॥२७॥

॥ मलार महला ५ ॥ गुन गुोपाल गाउ नीत । राम नाम धारि चीत ॥ १ ॥ रहाउ ॥ छोडि मानु तजि गुमानु मिलि साधूआ कै संगि । हरि सिमरि एक रंगि मिटि जांहि दोख मीत ॥ १ ॥ पारब्रहम भए दइआल । बिनसि गए बिखै जंजाल । साध जनांकै चरन लागि । नानक गावै गोबिद नीत ॥ २ ॥ ६ ॥ २८ ॥

हे भाई ! गोपाल के गुणों को नित्य गाया करो और राम-नाम को हृदय में धारण करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सन्तों के संग मिलकर अभिमान छोड़ो, देह का अहंकार त्यागो । हे मित्र ! तुम्हारे दुःख मिट जाएँगे, इसलिए प्रेमपूर्वक हरि को स्मरण करो ॥ १ ॥ जिन पर परब्रह्म दयालु हुए हैं, उनके समस्त विषय-जंजाल नष्ट हो गए हैं । गुरु नानक कहते हैं कि इसीलिए साधु पुरुषों के चरणों को स्पर्श कर नित्य गोविन्द के गुण गाया करो ॥ २ ॥ ६ ॥ २८ ॥

॥ मलार महला ५ ॥ घनु गरजत गोबिद रूप । गुन गावत सुख चैन ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि चरन सरन तरन सागर धुनि अनहता रस बैन ॥ १ ॥ पथिक पिआस चित सरोवर आतम जलु लैन । हरि दरस प्रेम जन नानक करि किरपा प्रभ दैन ॥ २ ॥ ७ ॥ २९ ॥

गुरु रूपी बादल गोविन्द के स्वरूप का उच्चारण करता है । उनके द्वार पर गुणगान करने से सुख और शान्ति होती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई ! (गुरु की कृपा से) परमात्मा के चरणों की शरण (प्राप्त होती है, जो) संसार-सागर से पार करनेवाली है । (गुरु की) अमृत-वाणी से ही अनाहत ध्वनि की उपलब्धि होती है ॥ १ ॥ जिज्ञासु रूपी राही को जो प्यास है, आत्म-जल के पान से उसका चित्त सत्संग सरोवर में लग रहा है । गुरु नानक का कथन है कि हरि के दर्शन का उनको प्रेम है । कृपा करके प्रभु उन्हें दर्शन देनेवाला है ॥ २ ॥ ७ ॥ २९ ॥

॥ मलार महला ५ ॥ हे गोबिंद हे गोपाल हे दइआल लाल ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रान नाथ अनाथ सखे दीन दरद निवार ॥ १ ॥ हे समथ अगम पूरन मोहि मइआ धारि ॥२॥ अंध कूप महा भइआन नानक पारि उतार ॥ ३ ॥ ८ ॥ ३० ॥

हे गोविन्द, गोपाल, दयालु, लाल प्रभु ! ॥१॥रहाउ॥ हे प्राणनाथ, अनाथों के मित्र, दीनों के दुःखनाशक ! ॥ १ ॥ हे समर्थ, अगम्य, पूर्ण प्रभु ! मुझ पर कृपादृष्टि करो ॥ २ ॥ संसार रूपी जो अत्यन्त भयदायक कुआँ है, इससे पार उतार दीजिए ॥ ३ ॥ ८ ॥ ३० ॥

मलार महला १ असटपदीआ घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ चकवी नैन नींद नहि चाहै बिनु पिर नींद न पाई । सूरु चहैं प्रिउ देखै नैनी निवि निवि लागै

पांई ॥ १ ॥ पिर भावै प्रेमु सखाई । तिसु बिनु घड़ी नही जगि जीवा ऐसी पिआस तिसाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सरवरि कमलु किरणि आकासी बिगसै सहजि सुभाई । प्रीतम प्रीति बनी अभ ऐसी जोती जोति मिलाई ॥ २ ॥ चात्रिकु जल बिनु प्रिउ प्रिउ टेरै बिलप करै बिललाई । घनहर घोर दसौ दिसि बरसै बिनु जल पिआस न जाई ॥ ३ ॥ मीन निवास उपजै जल ही ते सुख दुख पुरबि कमाई । खिनु तिलु रहि न सकै पलु जल बिनु मरनु जीवनु तिसु तांई ॥ ४ ॥ धन वांढी पिरु देस निवासी सचे गुर पहि सबदु पठाईं । गुण संग्रहि प्रभु रिदै निवासी भगति रती हरखाई ॥ ५ ॥ प्रिउ प्रिउ करै सभै है जेती गुर भावै प्रिउ पाईं । प्रिउ नाले सद ही सचि संगे नदरी मेलि मिलाई ॥ ६ ॥ सभ महि जीउ जीउ है सोई घटि घटि रहिआ समाई । गुर परसादि घर ही परगासिआ सहजे सहजि समाई ॥ ७ ॥ अपना काजु सवारहु आपे सुखदाते गोसांईं । गुरपरसादि घर ही पिरु पाइआ तउ नानक तपति बुझाई ॥ ८ ॥ १ ॥

चकवी के नैनों में नींद नहीं होती, प्रियतम चकवे के वियोग में वह सो ही नहीं पाती । सूर्य चढ़ने पर जब वह प्रियतम को अपनी आँखों से देख लेती है, तो झुक-झुककर प्रणाम करती है ॥ १ ॥ प्रियतम का सख्य-भावी प्रेम अच्छा लगता है । मैं उसके दर्शनों की ऐसी प्यासी हूँ कि उसके बग़ैर जगत में घड़ी-भर जीना कठिन लगता है ॥१॥रहाउ॥ कमल सरोवर में होता है, सूर्य-किरण आकाश में रहती है (फिर भी दोनों में ऐसा प्रेम-सम्बन्ध है कि दोनों में एक-दूसरे के लिए आकर्षण रहता है), तथापि सहज स्वभाव-वश कमल का विकास सूर्य-किरण से होता है । दिल में अब तो प्रियतम के लिए ऐसा प्यार बना है कि जैसे ज्योति में ज्योति मिल गई हो ॥२॥ चातक स्वाति-बूँद के लिए वन में पिय-पिय करता और विलाप में टेरता है । बादल गरजकर चारों ओर बरसता है, किन्तु पपीहे की प्यास स्वाति के बग़ैर दूर नहीं होती ॥ ३ ॥ पूर्व कर्मों के कारण मछली का दुःख-सुख जल में ही है । क्षण-भर भी वह जल के बिना नहीं रह सकती, उसका जीवन-मरण जल पर ही निर्भर करता है ॥४॥ स्त्री (जीवात्मा) वियोगिनी है, प्रियतम अपने देश में रहता है, सच्चे गुरु के हाथ स्त्री संदेश (शब्द) भेजती है, गुणों का संग्रह करती है और तब प्रभु आकर उसके हृदय में बसने लगता है । वह भक्ति में रत होकर प्रफुल्लित हो जाती है ॥ ५ ॥ समूची सृष्टि प्रियतम को पुकारती है, किन्तु गुरु की कृपा से

ही उसे प्राप्त होता है। गुरु कृपा करके अपने संग मिलाकर फिर प्रभु में मिला देता है ॥ ६ ॥ सबमें प्रभु की ज्योति विद्यमान है, वह घट-घट में समाया हुआ है। गुरु की कृपा से हरि भीतर से ही प्रत्यक्ष हो गया और मनुष्य स्वतः ही स्थिरता की अवस्था को पा गया ॥ ७ ॥ हे सुख-दाता, सृष्टि के स्वामी, तुम अपना कार्य स्वयं ही सम्पन्न करो। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु की कृपा से जब भीतर ही प्रभु प्रकट हो जाय, तभी तृष्णा-संताप बुझता है ॥ ८ ॥ १ ॥

॥ मलार महला १ ॥ जागतु जागि रहै गुर सेवा बिनु हरि मै को नाही। अनिक जतन करि रहणु न पावै आचु काचु ढरि पांही ॥ १ ॥ इसु तन धन का कहहु गरबु कैसा। बिनसत बार न लागै बवरे हउमै गरबि खपै जगु ऐसा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जै जगदीस प्रभू रखवारे राखै परखै सोई। जेती है तेती तुझ ही ते तुम्ह सरि अवरु न कोई ॥ २ ॥ जीअ उपाइ जुगति वसि कीनी आपे गुरमुखि अंजनु। अमरु अनाथ सरब सिरिमोरा काल बिकाल भरम भै खंजनु ॥ ३ ॥ कागद कोटु इहु जगु है बपुरो रंगनि चिहन चतुराई। नान्ही सी बूंद पवनु पति खोवै जनमि मरै खिनु ताईं ॥ ४ ॥ नदी उपकंठि जैसे घरु तरवरु सरपनि घरु घर माही। उलटी नदी कहां घरु तरवरु सरपनि डसै दूजा मन मांही ॥ ५ ॥ गारड़ु गुर गिआनु धिआनु गुर बचनी बिखिआ गुरमति जारी। मन तन हेंव भए सचु पाइआ हरि की भगति निरारी ॥ ६ ॥ जेती है तेती तुधु जाचै तू सरब जीआं दइआला। तुम्हरी सरणि परे पति राखहु साचु मिलै गोपाला ॥ ७ ॥ बाधी धंधि अंध नही सूझै बधिक करम कमावै। सतिगुर मिलै त सूझसि बूझसि सच मनि गिआनु समावै ॥ ८ ॥ निरगुण देह साच बिनु काची मै पूछउ गुरु अपना। नानक सो प्रभु प्रभू दिखावै बिनु साचे जगु सुपना ॥ ९ ॥ २ ॥

ज्ञान-जागृति पानेवाला नित्य गुरु-सेवा में प्रवृत्त रहता है, (वह जानता है कि) हरि के बिना मेरा कोई नहीं। अनेक यत्न करके भी बचा नहीं जा सकता, जैसे आँच काँच को ढला देती है, वैसे शरीर ढल जाता है ॥१॥ इस तन और धन का कहो क्या गर्व करना ? इसको नष्ट होते कोई देर ही नहीं लगती, और संसार बेकार के अहम्-गर्व में खपता रहता है ॥ १ ॥

रहाउ ।। हे प्रभु, जगत के स्वामी, तुम्हारी जय हो, तुम्हीं सबके रक्षक और परीक्षक हो। जितना जो है, सब तुम्हारे आश्रय हो, तुम्हारे बराबर अन्य कोई नहीं ।। २ ।। तुम्हीं ने स्वयं समस्त जीवों को पैदा करके अपने वश में कर रखा है। तुम स्वयं ही ज्ञान रूपी अंजन हो, जो गुरु से प्राप्त होता है। परमात्मा अमर है, स्वयम्भू है और सबका सिरमौर है। जन्म-मरण के भय-भ्रमों को तोड़नेवाला है ।।३।। संसार काग़ज़ के क़िले-समान है। इसकी रंगीनी, चिह्न, चक्रादि बाहरी चतुराई है। एक छोटी-सी जल-बूंद या पवन के हलके-से झोंके से (उस क़िले की) शोभा मारी जाती है, क्षण-भर में ही जीवन मृत्यु में बदल जाता है ।। ४ ।। यदि नदी के किनारे पेड़ या कोई घर हो और फिर उस घर में सर्पिणी रहती हो। नदी के उलटते ही घर या वृक्ष बह जाते हैं और सर्पिणी बे-घर होकर मनुष्यों को डसती है। (मन के भीतर रहनेवाली माया सर्पिणी मन में द्वैत-भाव जगाती और मनुष्य को कुपथ पर लगाती है।) ।। ५ ।। गुरु रूपी मांत्रिक ज्ञान-ध्यान एवं उपदेश रूपी मंत्रोषधियों से माया (सर्पिणी) का विष दूर कर देता है। मन-तन शीतल हो जाते हैं, यथार्थ का ज्ञान होता है और प्रभु की बिलक्षण भक्ति प्राप्त होती है ।। ६ ।। यह समूची सृष्टि तुमसे ही याचना करती है, तुम सब जीवों पर दया करनेवाले हो। हम सब तुम्हारी शरण में हैं, हमारी लाज रखो; हे सृष्टि के पालक, हमें सत्य में स्थिर करो ।। ७ ।। अपने-अपने धंधों में लगे लोग अन्धे हैं, अज्ञान के कारण उन्हें कुछ नहीं सूझता, इसलिए हिंसा-पूर्ण कर्म करते हैं। सतिगुरु से भेंट हो तो ज्ञान के प्रकाश में सब कुछ सूझने लगता है और मन आलोकित हो उठता है ।। ८ ।। गुण-हीन देह सत्य के बिना कच्ची रह जाती है, मैंने अपने गुरु से यह जान लिया है। गुरु नानक कहते हैं कि उस सत्यस्वरूप मालिक के अतिरिक्त शेष सब संसार सपना है ।। ९ ।। २ ।।

।। मलार महला १ ।। चात्रिक मीन जल ही ते सुखु पावहि सारिंग सबदि सुहाई ।। १ ।। रैनि बबीहा बोलिओ मेरी माई ।। १ ।। रहाउ ।। प्रिअ सिउ प्रीति न उलटै कबहू जो तै भावै साई ।। २ ।। नीद गई हउमै तनि थाकी सच मति रिदै समाई ।। ३ ।। रूखीं बिरखीं ऊडउ भूखा पीवा नामु सुभाई ।। ४ ।। लोचन तार ललता बिललाती दरसन पिआस रजाई ।। ५ ।। प्रिअ बिनु सीगारु करी तेता तनु तापै कापरु अंगि न सुहाई ।। ६ ।। अपने पिआरे बिनु इकु खिनु रहि न सकउ बिन मिले नींद न पाई ।। ७ ।। पिरु नजीकि न बूझै बपुड़ी सतिगुरि दीआ दिखाई ।। ८ ।। सहजि मिलिआ तब ही

सुखु पाइआ त्रिसना सबदि बुझाई ।। ९ ।। कहु नानक तुझ ते मनु मानिआ कीमति कहनु न जाई ।। १० ।। ३ ।।

पपीहे और मछली को जल से ही सुख मिलता है, मृग को ध्वनि (नाद) सुहाती है ।। १ ।। रात-भर पपीहा अपने प्रिय को पुकारता है, हे मेरे भाई, (उसके प्यार का अनुमान करो) ।। १ ।। रहाउ ।। प्रियतम के साथ प्रीति कभी बदलती नहीं, बस सही मूल्य उसी का पड़ता है, जो प्रियतम को स्वीकार हो जाती है ।। २ ।। (प्रियतम की प्रीति में) नींद उचट जाती है, अहम् का भाव थक जाता है और हृदय में सत्य-ज्ञान समा जाता है ।। ३ ।। वृक्षों-पेड़ों में पपीहे की तरह उड़ता हूँ, फिर भी भूखा ही रहता हूँ; भूख तभी शमित होती है, जब प्रेम से नामामृत की स्वाति-बूँद मिलती है ।। ४ ।। आँखें निर्निमेष प्रतीक्षा में हैं, जिह्वा बिलख रही है, दर्शनों की प्यास दूर करने के लिए ! ।। ५ ।। प्रिय के बिना जितना शृंगार करती हूँ, उतना शरीर तपता है, शरीर पर सुन्दर कपड़े नहीं सुहाते ।। ६ ।। अपने प्रिय के बिना क्षण-भर भी नींद नहीं पड़ती, मैं नहीं रह सकती ।। ७ ।। मैं बेचारी समीपस्थ प्रिय को भी नहीं देख सकती थी, गुरु ने मुझे उससे मिला दिया ।। ८ ।। स्वतः ही जब उसका मिलन हुआ, पूर्णसुख प्राप्त हुआ और उसके वचनों से समूची तृष्णा शमित हो गई ।।९।। गुरु नानक कहते हैं कि अब हे प्रभु, तुमसे मन रम गया है, यह अदम्य प्रसन्नता अनमोल है, इसका मोल नहीं डाला जा सकता ।। १० ।। ३ ।।

मलार महला १ असटपदीआ घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। अखली ऊंडी जलु भर नालि । डूगरु ऊचउ गड़ु पातालि । सागरु सीतलु गुर सबद वीचारि । मारगु मुकता हउमै मारि ।। १ ।। मै अंधुले नावै की जोति । नाम अधारि चला गुर कै भै भेति ।। १ ।। रहाउ ।। सतिगुर सबदी पाधरु जाणि । गुर कै तकीऐ साचै ताणि । नामु सम्हालसि रूड़ी बाणि । थैं भावै दरु लहसि पिराणि ।।२।। ऊडां बैसा एक लिवतार । गुर कै सबदि नाम आधार । ना जलु डूंगरु न ऊची धार । निज घरि वासा तह मगु न चालणहार ।। ३ ।। जितु घरि वसहि तूहै बिधि जाणहि बीजउ महलु न जापै । सतिगुर बाझहु समझ न होवी सभु जगु दबिआ छापै । करण पलाव करै बिललातउ बिनु गुर नामु न जापै । पल पंकज महि

नामु छडाए जे गुर सबदु सिञापै ॥ ४ ॥ इकि मूरख अंधे मुगध गवार । इकि सतिगुर कै भै नाम अधार । साची बाणी मीठी अंम्रित धार । जिनि पीती तिसु मोखदुआर ॥ ५ ॥ नामु भै भाइ रिदै वसाही गुर करणी सचु बाणी । इंदु वरसै धरति सुहावी घटि घटि जोति समाणी । कालरि बीजसि दुरमति ऐसी निगुरे की नीसाणी । सतिगुर बाझहु घोर अंधारा-डूबि मुए बिनु पाणी ॥ ६ ॥ जो किछु कीनो सु प्रभू रजाइ । जो धुरि लिखिआ सु मेटणा न जाइ । हुकमे बाधा कार कमाइ । एक सबदि राचै सचि समाइ ॥ ७ ॥ चहु दिसि हुकमु वरतै प्रभ तेरा चहु दिसि नाम पतालं । सभ महि सबदु वरतै प्रभ साचा करमि मिलै बैआलं । जांमणु मरणा दीसै सिरि ऊभौ खुधिआ निद्रा कालं । नानक नामु मिलै मनि भावै साची नदरि रसालं ॥ ८ ॥ १ ॥ ४ ॥

समूची धरती जल के भार से झुक गई है, पर्वत ऊँचे हैं और खाइयाँ गहरी हैं। (ये मार्ग की कठिनाइयाँ हैं, इन पर क़ाबू पाने के लिए) गुरु के उपदेशों पर विचार करने से भव-सागर कष्ट-रहित हो जाता है और अहंकार को मार देने से मार्ग की ऊँच-नीच दूर होती है ॥ १ ॥ मुझ अज्ञानांध के पास हरि-नाम की ज्योति है। गुरु के भय और उसके बताए रहस्यानुसार हरि-नाम के आश्रय चलने से वह ज्योति प्राप्त होती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतिगुरु के वचनों से मार्ग की पहचान होती है, गुरु के सहारे ही सत्य का आधार मिलता है। गुरु की सुन्दर वाणी द्वारा हरि-नाम का स्मरण करता है और यदि तुझे (परमात्मा को) स्वीकार हो, तो तेरा द्वार पहचान लेता है ॥ २ ॥ जाऊँ या रहूँ, सब समय एक ही में ध्यान लगा रहता है, गुरु के उपदेश से हरि-नाम में विश्वास उपजता है। उनके लिए अथाह जल, ऊँचे पर्वत या ऊँची धाराएँ कहीं कठिनाई पैदा नहीं करते। उन्हें निज के वास्तविक घर (प्रभु की शरण) में स्थान मिलता है, उन्हें कठिन रास्ते में चलना ही नहीं पड़ता ॥ ३ ॥ जिस घर में रहते हैं, उसकी सब विधि ज्ञात हो जाती है, अन्य किसी को घर का पता नहीं चलता। सतिगुरु के बग़ैर किसी को समझ नहीं पड़ती, सारा जगत अज्ञानता रूपी कूड़े में दबा पड़ा है। करुण-विलाप करता है, किन्तु गुरु के बिना हरि-नाम का जाप सम्भव नहीं। यदि गुरु के उपदेश को पहचान लें, तो एक पल में ही नाम सांसारिक बन्धनों से मुक्ति दिला देता है ॥४॥ कुछ लोग मूर्ख-गँवार होते हैं, कुछ सतिगुरु के भय में हरि-नाम के आधार पर जीवित हैं। प्रभु की वाणी सच्ची और अमृत-

धारा के समान है, जो इसका पान करते हैं, वे मोक्ष को पा लेते हैं ॥ ५ ॥ प्रभु के भय और प्यार में हरि-नाम को हृदय में बसाओ और गुरु की सच्ची कथनी के अनुसार करनी करो। गुरु रूपी बादल के बरसने से हृदय रूपी धरती शस्य-श्यामला होती है और प्रत्येक व्यक्ति में प्रभु की ज्योति समाई दीख पड़ती है। मनमुखी जीव की निशानी है कि वह किसी सच्चाई को (समझता ही नहीं, उसे समझाना तो) कल्लर (बंजर) धरती में बीज फेंकने के समान है। सतिगुरु के बिना घोर अन्धकार है और जीव बिना पानी डूब रहे हैं अर्थात् ज्ञान रूपी जल के बिना डूब मरने को हैं ॥ ६ ॥ जो कुछ होता है, वह प्रभु की इच्छा पर होता है; जो कुछ आरम्भ से भाग्य में लिखा है, वह मिटाया नहीं जा सकता। मनुष्य हुकुम से बँधा जीवन-यापन करता है, प्रभु के हुकुम में रत हो जाने से ही सत्यस्वरूप की पहचान होती है ॥ ७ ॥ हे प्रभु, चतुर्दिक् तुम्हारा हुकुम चलता है, चारों ओर पातालों में तुम्हारा नाम गूँजता है। हे वाहिगुरु, सबका कर्म प्रधान है और सबमें सच्चा शब्द बसता है। जन्म, मरण, भूख, नींद तथा मृत्यु सदा उसके सिर पर खड़े रहते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि रस-रूप परमात्मा की कृपा-दृष्टि मिलने से ही हृदय में नाम स्थिर होता है ॥ ८ ॥ १ ॥ ४ ॥

॥ मलार महला १ ॥ मरण मुकति गति सार न जानै। कंठे बैठी गुर सबदि पछानै ॥ १ ॥ तू कैसे आड़ि फाथी जालि। अलखु न जाचहि रिदै सम्हालि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ एक जीअ कै जीआ खाही। जलि तरती बूडी जल माही ॥२॥ सरब जीअ कीए प्रतपानी। जब पकड़ी तब ही पछुतानी ॥ ३ ॥ जब गलि फास पड़ी अति भारी। ऊडि न साकै पंख पसारी ॥ ४ ॥ रसि चूगहि मनमुखि गावारि। फाथी छूटहि गुण गिआन बीचारि ॥ ५ ॥ सतिगुरु सेवि तूटै जमकालु। हिरदै साचा सबदु सम्हालु ॥ ६ ॥ गुरमति साची सबदु है सारु। हरि का नामु रखै उरिधारि ॥ ७ ॥ से दुख आगै जि भोग बिलासे। नानक मुकति नही बिनु नावै साचे ॥ ८ ॥ २ ॥ ५ ॥

मर्त्यलोक के प्राणी साधरणतः मुक्ति-गति का सही रूप नहीं जानते। एक छोर पर हटकर बैठी जीवात्मा गुरु के शब्द को पहचानती है (छोर पर से निष्पक्षता का आशय है) ॥ १ ॥ हे पक्षी (पक्षी के सन्दर्भ में मनुष्य को समझाते हैं), तू क्योंकर जाल में फँसी है; हृदय में प्रभु का स्मरण कर अदृश्य को देख नहीं पाती ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुम अपना जीवन पालने के लिए अनेक जीव खाते हो (यह बगुला की प्रकार का पक्षी,

जो जल के किनारे रहता है), जल में तैरते-तैरते अचानक जल में ही क्योंकर डूब गए हो ? ॥ २ ॥ सब जीवों को तुमने अपने व्यवहार से परितप्त किया है। जब पकड़ में आए, तो पछताना पड़ता है ॥ ३ ॥ जब गले में भारी फाँसी पड़ी थी, तब पंख पसारकर उड़ नहीं सकता था ॥ ४ ॥ मनमुख गँवार जीव रसपूर्ण ढंग से दाना चुगता है। (किन्तु भोग में मुक्ति नहीं) गुरु के ज्ञान का विचार करने से सब बन्धनों से मुक्ति मिल जाती है ॥ ५ ॥ सतिगुरु की सेवा में तल्लीन रहने से यमदूतों के सब आडम्बर नष्ट हो जाते हैं, हृदय में सच्चा उपदेश सम्हालकर जीव प्रगति करता है ॥ ६ ॥ गुरु-उपदेश सच्चा है और वही एकमात्र श्रेष्ठ तत्त्व है, तभी हरि-नाम हृदय में बसने लगता है ॥ ७ ॥ जो भोग-विलास में पड़ा रहता है, उसके आगे दुःख तो बना ही रहता है। गुरु नानक कहते हैं कि सच्चे हरि-नाम के बिना किसी को मुक्ति नहीं मिलती ॥ ८ ॥ २ ॥ ५ ॥

मलार महला ३ असटपदीआ घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ करमु होवै ता सतिगुरु पाईऐ विणु करमै पाइआ न जाइ । सतिगुरु मिलिऐ कंचनु होईऐ जां हरि की होइ रजाइ ॥ १ ॥ मन मेरे हरि हरि नामि चितु लाइ । सतिगुर ते हरि पाईऐ साचा हरि सिउ रहै समाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतिगुर ते गिआनु ऊपजै तां इह संसा जाइ । सतिगुर ते हरि बुझीऐ गरभ जोनी नह पाइ ॥ २ ॥ गुरपरसादी जीवत मरै मरि जीवै सबदु कमाइ । मुकति दुआरा सोई पाए जि विचहु आपु गवाइ ॥ ३ ॥ गुर परसादी सिव घरि जंमै विचहु सकति गवाइ । अचरु चरै बिबेक बुधि पाए पुरखै पुरखु मिलाइ ॥ ४ ॥ धातुर बाजी संसारु अचेतु है चलै मूलु गवाइ । लाहा हरि सत संगति पाईऐ करमी पलै पाइ ॥ ५ ॥ सतिगुर विणु किनै न पाइआ मनि वेखहु रिदै बीचारि । वडभागी गुरु पाइआ भवजलु उतरे पारि ॥६॥ हरि नामां हरि टेक है हरि हरि नामु अधारु । क्रिपा करहु गुरु मेलहु हरि जीउ पावउ मोखदुआरु ॥ ७ ॥ मसतकि लिलाटि लिखिआ धुरि ठाकुरि मेटणा न जाइ । नानक से जन पूरन होए जिन हरि भाणा भाइ ॥ ८ ॥ १ ॥

परमात्मा की कृपा हो तो सतिगुरु से भेंट होती है, बिना प्रभु-कृपा के सतिगुरु नहीं मिलता। सतिगुरु-मिलाप से जीव शुद्ध स्वर्ण हो जाता है, यदि परमात्मा की इच्छा हो (तभी यह शुद्धिकरण सम्भव होता है) ॥ १ ॥ ऐ मेरे मन, चित्त में हरि-नाम का ध्यान कर। सतिगुरु के माध्यम से ही सच्चा परमात्मा मिलता है और जीव उसी में समा जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतिगुरु से ज्ञान उपजता है और तब मन की दुविधा नष्ट होती है। गुरु के द्वारा प्रभु की पहचान कर जीव पुनः गर्भ-योनि में नहीं भ्रमता ॥ २ ॥ गुरु की कृपा से जीवित मरने का अभ्यास (अनासक्त कर्मशीलता) होता है और उसके वचनानुसार आचरण करते हुए मृत्यूपरांत जीवन को भी वह पहचान लेता है। जो अपने भीतर से अहम्-भाव निष्कासित कर देता है, वह मुक्ति-द्वार पा लेता है ॥ ३ ॥ गुरु की कृपा से सर्व-कल्याणप्रद परमात्मा के घर में वास मिलता है, मार्ग की बाधा शक्ति (माया) बीच से हट जाती है। नष्ट न होनेवाले काम-क्रोधादि नष्ट हो जाते हैं, विवेक जाग्रत् होता है और अमर पुरुष गुरु के द्वारा परमपुरुष परमात्मा से मिलन होता है ॥ ४ ॥ मूर्खतापूर्ण संसार नाशवंत खेल में रमा हुआ है, परिणामतः मूल (जीव-शक्ति) को भी गँवा बैठता है। परमात्मा रूपी लाभ तो सौभाग्यपूर्वक सत्संगति में रहकर ही मिलता है ॥ ५ ॥ ऐ मन, सोच-विचार कर देखो कि सतिगुरु के बिना किसी ने परमात्मा को प्राप्त नहीं किया। जिन भाग्यशाली जीवों को गुरु मिल गया, वे संसार-सागर से पार उतर गए ॥ ६ ॥ हमें तो केवल हरि-नाम का सहारा है, हरि-नाम की ही टेक है। हे हरि, कृपा करके गुरु से मिलन करवा दो, ताकि मैं मुक्ति-द्वार को पा सकूं ॥ ७ ॥ मस्तक पर शुरू से प्रभु ने जो हुकुम लिख दिया है, वह मिट नहीं सकता। गुरु नानक कहते हैं कि जिन्हें परमात्मा की इच्छा सर्वोपरि स्वीकार होती है, वे जीव पूर्ण हो जाते हैं ॥ ८ ॥ १ ॥

॥ मलार महला ३ ॥ बेद बाणी जगु वरतदा त्रै गुण करे बीचारु। बिनु नावै जम डंडु सहै मरि जनमै वारोवार। सतिगुर भेटे मुकति होइ पाए मोख दुआरु ॥ १ ॥ मन रे सतिगुरु सेवि समाइ। वडै भागि गुरु पूरा पाइआ हरि हरि नामु धिआइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि आपणै भाणै स्रिसटि उपाई हरि आपे देइ अधारु। हरि आपणै भाणै मनु निरमलु कीआ हरि सिउ लागा पिआरु। हरि कै भाणै सतिगुरु भेटिआ सभु जनमु सवारणहारु ॥ २ ॥ वाहु वाहु बाणी सति है गुरमुखि बूझै कोइ। वाहु वाहु करि प्रभु सालाहीऐ तिसु जेवडु अवरु न

कोइ। आपे बखसे मेलि लए करमि परापति होइ ॥ ३ ॥ साचा साहिबु माहरो सतिगुरि दीआ दिखाइ। अंम्रितु वरसै मनु संतोखीऐ सचि रहै लिव लाइ। हरि कै नाइ सदा हरीआवली फिरि सुकै ना कुमलाइ ॥ ४ ॥ बिनु सतिगुर किनै न पाइओ मनि वेखहु को पतीआइ। हरि किरपा ते सतिगुरु पाईऐ भेटै सहजि सुभाइ। मनमुख भरमि भुलाइआ बिनु भागा हरि धनु न पाइ ॥ ५ ॥ त्रै गुण सभा धातु है पड़ि पड़ि करहि बीचारु। मुकति कदे न होवई नहु पाइनि मोखदुआरु। बिनु सतिगुर बंधन न तुटही नामि न लगै पिआरु ॥ ६ ॥ पड़ि पड़ि पंडित मोनी थके बेदां का अभिआसु। हरि नामु चिति न आवई नह निज घरि होवै वासु। जमकालु सिरहु न उतरै अंतरि कपट विणासु ॥ ७ ॥ हरि नावै नो सभु को परतापदा विणु भागां पाइआ न जाइ। नदरि करे गुरु भेटीऐ हरिनामु वसै मनि आइ। नानक नामे ही पति ऊपजै हरि सिउ रहां समाइ ॥ ८ ॥ २ ॥

सारा संसार वेद-वाणी के अन्तर्गत केवल त्रिगुणात्मक तत्त्वों पर ही विचार करता है (चौथे गुण या चौथे पद की नहीं सोचता, जो केवल गुरु से ही मिलता है)। इसलिए प्रभु-नाम के बिना यमराज द्वारा दण्डित होता और जन्म-मरण के चक्र में पड़ा रहता है। यदि सतिगुरु से भेंट हो जाय तो जीव को मुक्ति मिले, वह मोक्ष-द्वार में प्रविष्ट हो सकता है ॥१॥ ऐ मन, सतिगुरु की सेवा द्वारा प्रभु में लीनता प्राप्त करो, ऊँचे भाग्य से पूर्णगुरु मिलता और जीव हरि-नाम की उपासना करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि ने स्वेच्छा-पूर्वक सृष्टि उत्पन्न की है और समूची सृष्टि का एकमात्र आधार भी हरि स्वयं ही है। परमात्मा की इच्छा हुई तभी उसने मन को निर्मलता प्रदान की और तब मन में हरि का प्यार जगा। हरि-इच्छा से ही जन्म सँवार देनेवाले सतिगुरु से भेंट हुई ॥२॥ हरि की स्तुत्य वाणी को कोई विरला गुरुमुख ही जान पाता है, वह परमात्मा की प्रशंसा और सराहना करता है, क्योंकि उससे (परमात्मा से) बढ़कर अन्य कोई नहीं। प्रभु अपने-आप जीव पर कृपा करके उसे अपने में मिला लेता है, भाग्य से ही वह मिलता है ॥ ३ ॥ सतिगुरु ही सच्चे स्वामी परमात्मा को प्रत्यक्ष करता है। तब अमृत की वर्षा (हरि-नामामृत) होती है, मन संतुष्ट होता है और सच्चे परमात्मा में लीन हो रहता है। हरि के नाम से जीव इतना हरा (सुविकसित) हो जाता है कि फिर कभी सूखता-कुम्हलाता नहीं ॥ ४ ॥ सतिगुरु के बिना किसी ने कभी परमात्मा को

नहीं पाया, ऐ मन, ज़रा सोच-विचार के देखो। परमात्मा की कृपा से सतिगुरु से मिलाप होता है, वह सहज ही मिल जाता है। मनमुख भ्रमों में खोया रहता है, वह भाग्य-हीन कभी हरि रूपी धन को नहीं पा सकता ॥ ५ ॥ तीन गुणों की परिधि में सब माया है, जिस पर लोग पुस्तकें पढ़-पढ़कर (वेद-पाठ द्वारा) विचार करते हैं। अतः उनकी मुक्ति कभी नहीं होती, न ही वे मोक्ष-द्वार के दर्शन कर पाते हैं। सतिगुरु के बिना मोह-माया के बंधन नहीं कटते, न ही हरि-नाम से प्यार जुड़ता है ॥६॥ पण्डितजन और मौनाभ्यासी वेदों का पठन-पाठन करते-करते थक गए, किन्तु न तो वे मन में हरि-नाम को स्थिर कर पाए और न ही वे अपने वास्तविक घर में निवास कर पाए। यम-काल का प्रभाव उसके सिर से उतरता ही नहीं और मन के भीतर नित्य विनाशकारी कपट बना रहता है ॥ ७ ॥ हर कोई जीव हरि-नाम का इच्छुक होता है, किन्तु भाग्य के बिना इसकी प्राप्ति सम्भव नहीं। प्रभु-कृपा से गुरु से भेंट हो जाय और फिर मन में हरि-नाम स्थिर हो, तो (फिर) गुरु नानक के मतानुसार उसी से (हरि-नाम से) जीव की प्रतिष्ठा होती है और वह हरि-प्रभु में ही लीन हो जाता है ॥ ८ ॥ २ ॥

मलार महला ३ असटपदी घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ हरि हरि क्रिपा करे गुर की कारै लाए। दुखु पल्हरि हरि नामु वसाए। साची गति साचै चितु लाए। गुर की बाणी सबदि सुणाए ॥ १ ॥ मन मेरे हरि हरि सेवि निधानु। गुर किरपा ते हरि धनु पाईऐ अनदिनु लागै सहजि धिआनु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बिनु पिर कामणि करे सींगारु। दुहचारणी कहीऐ नित होइ खुआरु। मनमुख का इहु बादि आचारु। बहु करम द्रिड़ावहि नामु विसारि ॥ २ ॥ गुरमुखि कामणि बणिआ सीगारु। सबदे पिरु राखिआ उरधारि। एकु पछाणै हउमै मारि। सोभावंती कहीऐ नारि ॥ ३ ॥ बिनु गुर दाते किनै न पाइआ। मनमुख लोभि दूजै लोभाइआ। ऐसे गिआनी बूझहु कोइ। बिनु गुर भेटे मुकति न होइ ॥ ४ ॥ कहि कहि कहणु कहै सभु कोइ। बिनु मन मूए भगति न होइ। गिआन मती कमल परगासु। तितु घटि नामै नामि निवासु ॥ ५ ॥ हउमै भगति करे सभु

कोइ। ना मनु भीजै ना सुखु होइ। कहि कहि कहणु आपु जाणाए। बिरथी भगति सभु जनमु गवाए॥ ६॥ से भगत सतिगुर मनि भाए। अनदिनु नामि रहे लिव लाए। सदही नामु वेखहि हजूरि। गुर कै सबदि रहिआ भरपूरि॥ ७॥ आपे बखसे देइ पिआरु। हउमै रोगु वडा संसारि। गुर किरपा ते एहु रोगु जाइ। नानक साचे साचि समाइ॥ ८॥ १॥ ३॥ ५॥ ८॥

परमात्मा कृपा करे तो जीव को गुरु के रास्ते लगाता है, दुःखों को दूर करके हरि-नाम में लीन करता है। सच्चे प्रभु में मन रमाने से सच्ची गति होती है, गुरु की वाणी से सच्चे शब्द में चित्त लगता है॥ १॥ ऐ मेरे मन, सुखागार परमात्मा का सेवन करो। गुरु की कृपा से प्रभु-धन की प्राप्ति होती है, रात-दिन उसमें अटल ध्यान लगता है॥ १॥ रहाउ॥ अपने प्रियतम के द्वारा भोग किए जाने के बग़ैर यदि कामिनी श्रृंगार करती है तो लोग उसे व्यभिचारिणी कहते हैं, वह दुःखी होती है। मनमुख का आचरण ऐसा ही बुरा होता है, वह भी हरि-नाम को विस्मृत करके अनेक कर्मों को दृढ़ाता है॥ २॥ गुरुमुख रूपी कामिनी परमात्मा का श्रृंगार करती है, गुरु-शब्द के द्वारा नित्य प्रियतम को हृदय में धारण किए रहती है। वह अहम्-भाव को त्यागकर केवल अपने पति (परमेश्वर) को ही पहचानती है, वही स्त्री शोभावंती कही जाती है॥ ३॥ गुरु के बिना किसी को प्रभु प्राप्त नहीं होता; मनमुख जीव पार्थिव लोभों में लुभाया रहता है। कोई ज्ञानवान् जीव ही सत्य को समझता है। गुरु से भेंट किए बग़ैर मुक्ति नहीं होती॥ ४॥ सब कोई उस प्रभु के सम्बन्ध में बातें बनाते हैं, किन्तु जब तक मन नहीं मरता, भक्ति नहीं हो सकती। विवेक जाग्रत् हो तो हृदय रूपी कमल विकसित होता है; हृदय-कमल में हरि-नाम होता है, इसलिए हरि-नाम में रमण प्राप्त होता है॥ ५॥ सब लोग अहम्-भाव से प्रभावित रहकर भक्ति करते हैं, परिणामतः न उनका मन परमात्मा में रमता है, न उन्हें सुख प्राप्त होता है। वे अपनी प्रशंसा द्वारा दुनिया में अपने को कुछ सिद्ध करने का प्रयास करते हैं, जिससे उनकी भक्ति तो वृथा होती ही है, उनका मनुष्य-जन्म ही निरर्थक हो जाता है॥ ६॥ जो भक्त रात-दिन प्रभु-नाम में चित्त लगाए रहते हैं, वे ही सतिगुरु को प्रिय होते हैं। वे सदा परमात्मा को प्रत्यक्ष देखते हैं और गुरु के भरपूर उपदेश पर आचरण करते हुए मस्त रहते हैं॥ ७॥ परमात्मा स्वयं उन पर कृपा करता है, उन्हें प्यार देता है। संसार में अहम् का भयानक रोग केवल गुरु की कृपा से ही मिटता है। गुरु नानक कहते हैं,

तभी जीवात्मा अपने सच्चे रूप में आकर परमात्मा के सत्य-स्वरूप में समा जाती है ॥ ८ ॥ १ ॥ ३ ॥ ५ ॥ ८ ॥

रागु मलार छंत महला ५

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ प्रीतम प्रेम भगति के दाते । अपने जन संगि राते । जन संगि राते दिनसुराते इक निमख मनहु न वीसरै । गोपाल गुण निधि सदा संगे सरब गुण जगदीसरै । मनु मोहि लीना चरन संगे नाम रसि जनमाते । नानक प्रीतम क्रिपाल सदहूं किनै कोटि मधे जाते ॥ १ ॥ प्रीतम तेरी गति अगम अपारे । महा पतित तुम्ह तारे । पतित पावन भगति वछल क्रिपा सिंधु सुआमीआ । संत संगे भजु निसंगे रंउ सदा अंतरजामीआ । कोटि जनम भ्रमंत जोनी ते नाम सिमरत तारे । नानक दरस पिआस हरि जीउ आपि लेहु सम्हारे ॥ २ ॥ हरि चरन कमल मनु लीना । प्रभ जल जन तेरे मीना । जल मीन प्रभ जीउ एक तू है भिन आन न जानीऐ । गहि भुजा लेवहु नामु देवहु तउ प्रसादी मानीऐ । भजु साध संगे एक रंगे क्रिपाल गोबिद दीना । अनाथ नीच सरणाइ नानक करि मइआ अपुना कीना ॥ ३ ॥ आपस कउ आपु मिलाइआ । भ्रम भंजन हरि राइआ । आचरज सुआमी अंतरजामी मिले गुणनिधि पिआरिआ । महा मंगल सूख उपजे गोबिंद गुण नित सारिआ । मिलि संगि सोहे देखि मोहे पुरबि लिखिआ पाइआ । बिनवंति नानक सरनि तिन की जिन्ही हरि हरि धिआइआ ॥ ४ ॥ १ ॥

हरि-प्रियतम प्रेम और भक्ति का दाता है, अपने भक्तों से वह प्यार करता है। वह रात-दिन अपने जन से प्यार करता है, क्षण-भर के लिए भी उनके मन से दूर नहीं होता। मेरा परमात्मा, गुणों का भण्डार, संसार का स्वामी सदैव अंग-संग रहता है। चरण-शरण लेनेवाले जीव को नाम-रस की मस्ती प्रदान करता है। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु-प्रियतम सदा कृपालु है, करोड़ों में कोई एक ही उसके तत्त्व को जान पाता है ॥१॥ हे प्रियतम, तुम्हारी लीलाएँ अगम, अपार हैं, तुमने महान पतितों को मुक्ति दी है। तुम पतितों को पवित्र करनेवाले, भक्तों से प्यार करनेवाले, कृपा

के सागर हो। सन्त-संगति में तुम सदैव रमण करते हो और अन्तर्यामी हो। करोड़ों जन्मों से जो विभिन्न योनियों में भ्रम रहे थे, हरि-नाम-स्मरण करने पर तुमने उनको तार दिया। हे हरि, गुरु नानक को तुम्हारे दर्शन की चाह है, अपने-आप उन्हें सम्हाल लो ॥२॥ मन हरि के चरण-कमल में लीन है, प्रभु तुम जल के समान हो और तुम्हारे भक्त मछलियों के समान हैं। हे प्रभु, जल और मछली एक-प्राण होते हैं, उन्हें भिन्न नहीं किया जा सकता, दोनों में तुम्हीं हो, अन्य किसी को नहीं माना जा सकता। हमें भुज पकड़कर हरिनाम-दान दो, तब हम तुम्हारी कृपा मानेंगे। समस्त साधुजन के साथ परमात्मा एक रंग में विराजता है। गुरु नानक कहते हैं कि हम अनाथ, नीच तुम्हारी शरण में हैं, दया करके हमें अपना लो ॥ ३ ॥ तुमने अपने को आप मिलाया है (अर्थात् मिलनेवाला और मिलानेवाला, दोनों एक ही हैं), हे हरि, तुम्हीं सब भ्रमों को तोड़नेवाले हो। हे स्वामी, तुम्हारी लीलाएँ आश्चर्यमयी हैं, तुम अन्तर्यामी हो, गुणों के भण्डार हो, कृपा करके हमें दर्शन दो। हे सृष्टि के नियंता, तुम्हारे स्मरण से महाकल्याण और सुख उपजता है। तुम्हारी शरण में शोभा होती है, तुम्हारे दर्शन मन-मोहक हैं, कोई भाग्यशाली जीव ही तुम्हें प्राप्त कर पाता है। गुरु नानक कहते हैं कि वे तो उनकी शरण चाहते हैं, जिन्होंने परमात्मा की आराधना की होती है ॥ ४ ॥ १ ॥

वार मलार की महला १

राणे कैलास तथा मालदे की धुनि

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सलोक महला ३ ॥ गुरि मिलिऐ मनु रहसीऐ जिउ वुठै धरणि सीगारु। सभ दिसै हरीआवली सर भरे सुभर ताल। अंदरु रचै सच रंगि जिउ मंजीठै लालु। कमलु विगसै सचु मनि गुर कै सबदि निहालु। मनमुख दूजी तरफ है वेखहु नदरि निहालि। फाही फाथे मिरग जिउ सिरि दिसै जमकालु। खुधिआ त्रिसना निंदा बुरी कामु क्रोधु विकरालु। एनी अखी नदरि न आवई जिचरु सबदि न करे बीचारु। तुधु भावै संतोखीआं चूकै आल जंजालु। मूलु रहै गुरु सेविऐ गुर पउड़ी बोहिथु। नानक लगी ततु लै तू सचा मनि सचु ॥ १ ॥ महला १ ॥ हेको पाधरु हेकु दरु गुर पउड़ी निज थानु। रूड़उ ठाकुरु नानका सभि सुख साचउ

नामु ।। २ ।। पउड़ी ।। आपीन्है आपु साजि आपु पछाणिआ । अंबरु धरति विछोड़ि चंदोआ ताणिआ । विणु थंम्हा गगनु रहाइ सबदु नीसाणिआ । सूरजु चंदु उपाइ जोति समाणिआ । कीए राति दिनंतु चोज विडाणिआ । तीरथ धरम वीचार नावण पुरबाणिआ । तुधु सरि अवरु न कोइ कि आखि वखाणिआ । सचै तखति निवासु होर आवण जाणिआ ।। १ ।।

।। सलोक महला ३ ।। गुरु के मिलाप से मन ऐसे प्रफुल्लित हो जाता है, जैसे वर्षा से धरती श्रृंगारमयी दीख पड़ती है । चारों ओर हरियाली दीख पड़ती है, सरोवर आकंठ भर जाते हैं । (ठीक इसी प्रकार) मन सत्यस्वरूप प्रभु के प्यार से भर जाता है और उसमें प्यार की गाढ़ी लाल रंगत छा जाती है । हृदय रूपी कमल खिल जाता है, मन में सच्चे गुरु का शब्द सरसता है । ध्यान से देखें, मनमुख इसके विपरीत चलता है । (यही कारण है कि) जाल में फँसे मृग के समान उसे निरन्तर मृत्यु की गर्जना सुनाई देती है । भूख, प्यास तथा निन्दा बुरी चीजें हैं, काम-क्रोधादि भयानक हैं, किन्तु मनमुख अपनी साधारण आँखों से यह अवगुण नहीं देख पाता, क्योंकि वह गुरु-शब्द नहीं विचारता । जब वह तुम्हीं से प्यार करता है, तब उसे सन्तोष होता है और सब आल-जंजाल टूट जाते हैं । गुरु की सेवा द्वारा जीव की जड़ें मज़बूत होती हैं; गुरु मंज़िल पर चढ़ने की सीढ़ी तथा संसार-सागर-तरण के लिए जहाज़ है । गुरु नानक कहते हैं कि जब वृत्ति प्रभु में लगी होती है, तो मन में स्वतः ही सत्य-स्वरूप आच्छादित होता है ।। १ ।। महला १ ।। रास्ते के प्रत्येक द्वार पर पुकारो कि स्वस्वरूप की पहचान के लिए गुरु ही सीढ़ी है । गुरु नानक कहते हैं कि उनका स्वामी अति सुन्दर है और उसके नाम-स्मरण में समस्त सुख संचित हैं ।। २ ।। पउड़ी ।। प्रभु ने अपने को स्वयं बनाया (स्वयंभू) और स्वयं ही अपने को पहचाना (अर्थात् ज्ञाता, ज्ञातव्य और ज्ञान, तीनों उसी में निहित हैं) । धरती के ऊपर आकाश का तम्बू उसी ने गाड़ा है । अपने स्पष्ट हुकुम से बिना आलम्बन दिए ही गगन को उसने रोक रखा है; सूर्य-चन्द्र बनाकर विश्व को आलोक दिया है । रात, दिन उसकी आश्चर्यमयी लीलाएँ हैं । उसने धर्म पर विचार किए जानेवाले स्थानों पर पर्वों के स्नान का विधान किया । तुम्हारे बराबर अन्य कोई नहीं, जो मैं उसकी व्याख्या कर सकूँ । तुम्हीं स्थिरतापूर्वक विराजते हुए शोभायमान हो, अन्य सब जन्म-मरण के चक्र में दुःखी होते हैं ।। १ ।।

।। सलोक म० १ ।। नानक सावणि जे वसै चहु ओमाहा

होइ। नागां मिरगां मछीआं रसीआं घरि धनु होइ ॥ १ ॥ ॥ म० १ ॥ नानक सावणि जे वसै चहु वेछोड़ा होइ। गाईं पुता निरधना पंथी चाकरु होइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ तू सचा सचिआरु जिनि सचु वरताइआ। बैठा ताड़ी लाइ कवलु छपाइआ। ब्रहमै वडा कहाइ अंतु न पाइआ। न तिसु बापु न माइ किनि तू जाइआ। ना तिसु रूपु न रेख वरन सबाइआ। ना तिसु भुख पिआस रजा धाइआ। गुर महि आपु समोइ सबदु वरताइआ। सचे ही पतीआइ सचि समाइआ ॥ २ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि जब सावन की वर्षा होती है, तो इन चारों, नागों, मृगों, मछलियों एवं भोगियों को, उत्साह होता है, उनके यहाँ सदैव माया रहती है ॥ १ ॥ म०१ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि जब सावन की वर्षा होती है, तो इन चारों को सुख से वञ्चित होना पड़ता है। (१) बछड़ों को, जिनको माताएँ बाहर चरने चली जाती हैं; (२) ग़रीबों को, जिन्हें वर्षा के कारण मज़दूरी नहीं मिलती; (३) पथिकों को, जिनके रास्ते पानी में ख़राब हो जाते हैं और (४) नौकरों को, जिन्हें वर्षा के गीलेपन में भी कार्य करता पड़ता है ॥२॥ पउड़ी ॥ हे मालिक, तुम सच्चे हो, सत्यस्वरूप हो, किसी न किसी रूप में सत्य का प्रसार कर रहे हो। स्वयं हृदय-कमल में छिपकर तुमने समाधि लगा ली है। ब्रह्म सर्वोच्च कहलाता है, उसका रहस्य किसी को विदित नहीं। उसके माता-पिता नहीं हैं, तब उसकी उत्पत्ति क्योंकर हुई है ? उसका रूपाकार, जाति-वर्ण आदि कुछ भी नहीं और न ही सारे वर्णों से कोई वर्ण उसका अपना है। उसे कोई भूख-प्यास नहीं सताती। वह तृप्त भाव से अपने यहाँ भागा फिरता है। जीव गुरु में स्वयं समाकर गुरु-शब्द का वितरण करता है। तब सत्यस्वरूप हरि द्वारा गुरु का विश्वास स्थिर होता है और अन्ततः सत्य में ही समा जाता है ॥ २ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ वैदु बुलाइआ वैदगी पकड़ि ढंढोले बांह। भोला वैदु न जाणई करक कलेजे माहि ॥ १ ॥ ॥ म० २ ॥ वैदा वैदु सु वैदु तू पहिलां रोगु पछाणु। ऐसा दारू लोड़ि लहु जितु वंञै रोगा घाणि। जितु दारू रोग उठिअहि तनि सुखु वसै आइ। रोगु गवाइहि आपणा त नानक वैदु सदाइ ॥२॥ पउड़ी ॥ ब्रहमा बिसनु महेसु देव उपाइआ। ब्रहमे दिते बेद पूजा लाइआ। दस अवतारी रामु राजा आइआ। दैता मारे धाइ हुकमि सबाइआ। ईस महेसुरु सेव

तिन्ही अंतु न पाइआ। सची कीमति पाइ तखतु रचाइआ। दुनीआ धंधै लाइ आपु छपाइआ। धरमु कराए करम धुरहु फुरमाइआ ॥ ३ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ वैद्य को उपचार के लिए बुलाया, तो वह बाँह पकड़कर नब्ज़ ढूंढ़ता है, किन्तु भोला वैद्य क्या जाने कि यह रोग हृदय का है, कलेजे में कसक उठती है (यह शारीरिक रोग नहीं) ॥ १ ॥ म० २ ॥ हे वैद्य, तुम अच्छे वैद्य हो, पहले रोग का निदान तो कर लो। ऐसा दारू खोजो जिससे मेरे दुःखों के समूह नष्ट हो जायँ। जिस ओषधि से रोग दूर हों और शरीर में सुख उपजे। गुरु नानक कहते हैं, ऐसी ओषधि से जो रोग को दूर कर दे, वही सच्चा वैद्य है। (वास्तव में इन दोनों सलोकों में वैद्य का अभिप्राय गुरु से है। सच्चा वैद्य गुरु ही है, जो समूल दुःखों को दूर कर देता है।) ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ परमात्मा ने ब्रह्मा, विष्णु, शिवजी आदि देवताओं को पैदा किया है; ब्रह्मा को वेद प्रदान किए हैं और पूजा-कार्य सौंपा है। विष्णु के दस अवतारों में एक राजा राम भी हुआ है, जिसने जाकर अनेक दैत्यों का संहार किया —यह सब परमात्मा के ही हुकुम में हुआ। ईश, महेश्वर, शिव आदि ११ प्रकार के रुद्रों ने भी उसका रहस्य नहीं जाना। प्रभु ने स्वयं जीवन के यथार्थ को देखकर अपना निराला दरबार सजाया है। सारी दुनिया को अलग-अलग धन्धे से लगाकर उसने अपने को गोपनीय बना लिया है। फिर भी परमात्मा स्वयं न्यायाधीश बनकर कर्मानुसार निर्णय लेता रहा ॥ ३ ॥

॥ सलोक म० २ ॥ सावणु आइआ हे सखी कंतै चिति करेहु। नानक झूरि मरहि दोहागणी जिन्ह अवरी लागा नेहु ॥ १ ॥ म० २ ॥ सावणु आइआ हे सखी जलहरु बरसनहारु। नानक सुखि सवनु सोहागणी जिन्ह सह नालि पिआरु ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ आपे छिंझ पवाइ मलाखाड़ा रचिआ। लथे भड़थू पाइ गुरमुखि मचिआ। मनमुख मारे पछाड़ि मूरख कचिआ। आपि भिड़ै मारे आपि आपि कारजु रचिआ। सभना खसमु एकु है गुरमुखि जाणीऐ। हुकमी लिखै सिरि लेखु विणु कलम मसवाणीऐ। सतसंगति मेलापु जिथै हरि गुण सदा वखाणीऐ। नानक सचा सबदु सलाहि सचु पछाणीऐ ॥ ४ ॥

॥ सलोक म० २ ॥ हे सखी, सावन का प्रेमल महीना आ गया है, सब सखियाँ अपने-अपने कंत में चित्त लगाती हैं, किन्तु वे दुहागिनें दुःखी हैं, जो द्वैत-भाव के कारण पति के अतिरिक्त (प्रभु के अतिरिक्त)

किसी और से प्यार करती हैं ॥ १ ॥ म० २ ॥ ऐ सखी, सावन आ गया है, बादल बरस रहे हैं। गुरु नानक कहते हैं कि सुहागिनें अपने पति-प्यार में लीन हुई सुख-पूर्वक सोती हैं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ प्रभु ने खुद ही संघर्ष का बीज डालकर यह मल्ल-अखाड़ा (जगत) रचा है। इस (अखाड़े) में उतरनेवाले सब मल्ल (जीव) शोर मचाते हैं, किन्तु गुरुमुख जीव प्रसन्न रहते हैं। मनमुख मूर्ख-गँवार होने के कारण पछाड़ दिए जाते हैं। परमात्मा खुद ही कुश्ती करता, दूसरों को गिराता और अपेक्षानुसार जन के कार्य सँवारता है। सब जीवों का मालिक एक ही है, यह तथ्य गुरु के द्वारा जाना जा सकता है। परमात्मा ने क़लम और स्याही के बग़ैर ही स्वेच्छापूर्वक सबके मस्तक में (उनके कर्मानुसार) भाग्य लिख दिया है। सत्संगति एक ऐसी मिलनावस्था है, जहाँ नित्य गुणों का संग्रह होता है। गुरु नानक कहते हैं कि सत्य-स्वरूप परमात्मा का गुणगान करके ही सत्य को पहचाना जाता है ॥ ४ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ ऊंनवि ऊंनवि आइआ अवरि करेंदा वंन। किआ जाणा तिसु साह सिउ केव रहसी रंगु। रंगु रहिआ तिन्ह कामणी जिन्ह मनि भउ भाउ होइ। नानक भै भाइ बाहरी तिन तनि सुखु न होइ ॥ १ ॥ म० ३ ॥ ऊंनवि ऊंनवि आइआ बरसै नीरु निपंगु। नानक दुखु लागा तिन्ह कामणी जिन्ह कंतै सिउ मनि भंगु ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ दोवै तरफा उपाइ इकु वरतिआ। बेद बाणी वरताइ अंदरि वादु घतिआ। परविरति निरविरति हाठा दोवै विचि धरमु फिरै रैबारिआ। मनमुख कचे कूड़िआर तिन्ही निहचउ दरगह हारिआ। गुरमती सबदि सूर है कामु क्रोधु जिन्ही मारिआ। सचै अंदरि महलि सबदि सवारिआ। से भगत तुधु भावदे सचै नाइ पिआरिआ। सतिगुरु सेवनि आपणा तिन्हा विटहु हउ वारिआ ॥ ५ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ झुक-झुककर बादल के रूप में वह परमात्मा ही आया है, अनेक प्रकार के रंग उसने बनाए हैं। मुझे नहीं मालूम कि परमात्मा से मेरी प्रीति का क्या रंग होगा ? गुरु नानक कहते हैं कि जिन्हें बाहरी दिखावे का भय-भाव रहता है, उन्हें कभी सुख नहीं मिलता ॥ १ ॥ ॥ म० ३ ॥ झुक-झुककर बादल-रूप में हरि स्वय निर्मल जल का वर्षण करता है। गुरु नानक कहते हैं कि इस स्थिति का सर्वाधिक संताप उस कामिनी को है, जिसकी अपने प्रियतम से अनबन हुई है ॥ २ ॥

॥ पउड़ी ॥ दोनों मार्ग (गृहस्थी एवं वैराग्य) बनाकर स्वयं प्रभु दोनों में एक समान विराजता है। पुनः वेद-वाणी का विचार देकर दोनों में झगड़ा खड़ा कर दिया है। निवृत्ति एवं प्रवृत्ति, दोनों पक्षों में धर्म वकील बना फिरता है। मनमुख जीव कच्चे और झूठे होते हैं और प्रभु के दरबार में उन्हें कोई विश्वास नहीं होता। गुरु-मतानुसार शब्द का सेवन करनेवाले शूरवीर हैं, वे काम-क्रोधादि को मार लेते हैं। सत्यस्वरूप प्रभु में वे लोग स्थिर शब्द को पाते गुरु-वचनों से सँवरते हैं। सच्चे हरि-नाम में दत्त-चित्त रहनेवाले भक्त तुम्हें प्रिय होते हैं। जो जीव अपने सतिगुरु की सेवा में संलग्न होते हैं, मैं उन पर क़ुर्बान जाता हूँ ॥ ५ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ ऊंनवि ऊंनवि आइआ वरसै लाइ झड़ी। नानक भाणै चलै कंत कै सु माणे सदा रली ॥ १ ॥ ॥ म० ३ ॥ किआ उठि उठि देखहु बपुड़ें इसु मेघै हथि किछु नाहि। जिनि एहु मेघु पठाइआ तिसु राखहु मन मांहि। तिस नो मंनि वसाइसी जाकउ नदरि करेइ। नानक नदरी बाहरी सभ करण पलाह करेइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सो हरि सदा सरेवीऐ जिसु करत न लागै वार। आडाणे आकास करि खिन महि ढाहि उसारणहार। आपे जगतु उपाइ कै कुदरति करे वीचार। मनमुख अगै लेखा मंगीऐ बहुती होवै मार। गुरमुखि पति सिउ लेखा निबड़ै बखसे सिफति भंडार। ओथै हथु न अपड़ै कूक न सुणीऐ पुकार। ओथै सतिगुरु बेली होवै कढि लए अंती वार। एना जंता नो होर सेवा नही सतिगुरु सिरि करतार ॥ ६ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ झुक-झुककर बादल के रूप में हरि स्वयं निरन्तर बरस रहा है। गुरु नानक कहते हैं कि जो जीवात्मा-स्त्री अपने पति (प्रभु) की आज्ञानुसार विचरती है, वह सदा प्रेम-मग्न रहती है (रंग-रलियाँ मनाती है) ॥ १ ॥ म० ३ ॥ उठ-उठकर क्या देखते हो, इस बेचारे मेघ के हाथ कुछ नहीं। जिस (परमात्मा) ने यह मेघ भेजा है, उसे मन में धारण करके रहो। जिस पर उसकी कृपा-दृष्टि होगी, वह उसी के मन में बस जायगा। गुरु नानक कहते हैं कि उसकी कृपा-दृष्टि से वंचित सब जीवात्माएँ करुण प्रलाप मात्र करती रह जाती हैं ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ जिस परमात्मा को कुछ भी करने में कोई विलम्ब नहीं लगता, उसका सेवन करो। आकाश को तम्बू की तरह तानकर वह क्षण-भर में ही उसे गिरा और पुनः उठा सकने में समर्थ है। वह अपने-आप जगत को

पैदा करके, पुनः उसकी प्रकृति पर विचार करता है। मनमुख जीव का यदि हिसाब किया जायगा, तो वह दण्ड का भागी होगा। गुरु के द्वारा यह हिसाब ससम्मान पूर्ण हो जाता है, जीव प्रभु का गुणगान करता है। (आगामी लोक में) वहाँ हमारा हाथ नहीं पहुँचता, न ही चिल्लाने से कोई सुनता है। केवल सतिगुरु ही वहाँ सहायक होता है और अन्त समय हमें बचा सकता है। इन जीवों में और कोई सामर्थ्य नहीं, परमात्मा ने सतिगुरु को उनकी रक्षा के लिए भेजा है ॥ ६ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ बाबीहा जिसनो तू पूकारदा तिस नो लोचै सभु कोइ। अपणी किरपा करि कै वससी वणु त्रिणु हरिआ होइ। गुरपरसादी पाईऐ विरला बूझै कोइ। बहदिआ उठदिआ नित धिआईऐ सदा सदा सुखु होइ। नानक अंम्रितु सद ही वरसदा गुरमुखि देवै हरि सोइ ॥१॥ म० ३ ॥ कलमलि होई मेदनी अरदासि करे लिव लाइ। सचै सुणिआ कंनु दे धीरक देवै सहजि सुभाइ। इंद्रै नो फुरमाइआ वुठा छहबर लाइ। अनु धनु उपजै बहु घणा कीमति कहणु न जाइ। नानक नामु सलाहि तू सभना जीआ देदा रिजकु संबाहि। जितु खाधै सुखु ऊपजै फिरि दूखु न लागै आइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हरि जीउ सचा सचु तू सचे लैहि मिलाइ। दूजै दूजी तरफ है कूड़ि मिलै न मिलिआ जाइ। आपे जोड़ि विछोड़िऐ आपे कुदरति देइ दिखाइ। मोहु सोगु विजोगु है पूरबि लिखिआ कमाइ। हउ बलिहारी तिन कउ जो हरि चरणी रहे लिव लाइ। जिउ जल महि कमलु अलिपतु है ऐसी बणत बणाइ। से सुखीए सदा सोहणे जिन्ह विचहु आपु गवाइ। तिन्ह सोगु विजोगु कदे नही जो हरि कै अंकि समाइ ॥ ७ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ ऐ पपीहे, जिसे तुम पुकारते हो, उसे सब कोई चाहता है। किन्तु वह तो स्वेच्छा से जब कृपा करके बरसता है, तो बन-तृण में सब हरियाली छा जाती है। (इसी प्रकार परमात्मा को भी) गुरु की कृपा से कोई विरला ही पाता है। बैठते-उठते नित्य उसका ध्यान करने से सदा सुख होता है। गुरु नानक कहते हैं, यह अमृत सदा बरसता है, किन्तु कोई गुरुमुख जीव ही गुरु के द्वारा प्रभु-इच्छा से इसका आचमन कर पाता है ॥ १ ॥ म० ३ ॥ पापों से मलिन हुई सृष्टि एकाग्र-चित्त होकर विनती करती है। यदि सच्चा प्रभु उस ओर कान धरे तो स्वतः ही सबको धैर्य मिल जाय। इन्द्र को आज्ञा हो कि वह मूसलाधार बरस

जाय, (जिससे) इतना अधिक अन्न-धन उपजे कि उसका मोल न किया जा सके। (अर्थात् प्रभु-दरबार में विनती स्वीकार होने पर इतनी उपलब्धि होती है कि उसकी क़ीमत नहीं गिनी जा सकती।) गुरु नानक कहते हैं कि जो सब जीवों का संरक्षण-पोषण करता है, उसका नाम स्मरण कर। उसके संरक्षण में ऐसा परमसुख मिलता है कि पुनः कभी दुःख नहीं होता ॥२॥ ॥ पउड़ी ॥ हे परमात्मा, तुम सत्यस्वरूप हो और जो सच्चे हैं, उन्हें तुम अपने संग मिला लेते हो। जो द्वैत में लगे हैं, वे सत्य से विपरीत दिशा में हैं, अर्थात् मिथ्या-समर्थक हैं और प्रभु मिथ्या के साथ नहीं मिल सकता। परमात्मा स्वयं जोड़ता और तोड़ता है, अपने-आप अपनी लीलाओं को दिखाता है। मोह, शोक, वियोगादि स्थितियाँ तो पूर्व-लिखित कर्मों का फल हैं। मैं तो उन पर क़ुर्बान हूँ जो परमात्मा के चरणों में लीन रहते हैं। जीव को जल में अलिप्त-भाव से रहनेवाले कमल की तरह का विधान बनाना चाहिए। वे लोग जब अपने में से अहम्-भाव दूर कर देते हैं, तो सुखी और सुन्दर होते हैं। उन्हें कभी शोक-वियोग की संवेदना नहीं होती, वे तो परमात्मा के अंक में समाए होते हैं ॥ ७ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ नानक सो सालाहीऐ जिसु वसि सभु किछु होइ। तिसै सरेविहु प्राणीहो तिसु बिनु अवरु न कोइ। गुरमुखि हरि प्रभु मनि वसै तां सदा सदा सुखु होइ। सहसा मूलि न होवई सभ चिंता विचहु जाइ। जो किछु होइ सु सहजे होइ कहणा किछू न जाइ। सचा साहिबु मनि वसै तां मनि चिंदिआ फलु पाइ। नानक तिन का आखिआ आपि सुणे जि लइअनु पंनै पाइ ॥ १ ॥ म० ३ ॥ अंम्रितु सदा वरसदा बूझनि बूझणहार। गुरमुखि जिन्ही बुझिआ हरि अंम्रितु रखिआ उरि धारि। हरि अंम्रितु पीवहि सदा रंगि राते हउमै त्रिसना मारि। अंम्रितु हरि का नामु है वरसै किरपा धारि। नानक गुरमुखि नदरी आइआ हरि आतम रामु मुरारि ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ अतुलु किउ तोलीऐ विणु तोले पाइआ न जाइ। गुर कै सबदि वीचारीऐ गुण महि रहै समाइ। अपणा आपु आपि तोलसी आपे मिलै मिलाइ। तिस की कीमति ना पवै कहणा किछू न जाइ। हउ बलिहारी गुर आपणे जिनि सची बूझ दिती बुझाइ। जगतु मुसै अंम्रितु लुटीऐ मनमुख बूझ न पाइ। विणु नावै नालि न चलसी जासी जनमु गवाइ। गुरमती जागे तिन्ही घरु रखिआ दूता का किछु न वसाइ ॥ ८ ॥

।। सलोक म० ३ ।। गुरु नानक कहते हैं कि उसकी सराहना करो, जिसके वश में यह समूचा नियन्त्रण है। ऐ प्राणियो, उसी की आराधना करो, उसके बिना दूसरा कोई नहीं है। गुरु के द्वारा जब परमात्मा हृदय में बसता है तो सदा सुख होता है। जीव की सब चिन्ताएँ नष्ट हो जाती हैं और संशय दूर होते हैं। जो भी होता है, वह सहज भाव से होता चलता है, उसके सम्बन्ध में फिर कुछ कहा नहीं जाता। परमात्मा सदा उसके मन में होता है, वह मन-चाहा फल प्राप्त करता है। गुरु नानक कहते हैं कि जिन्हें हरि अपना बना लेता है, उनका कहा स्वयं सुनता और पूरा करता है ।। १ ।। म० ३ ।। जाननेवाले जानते हैं कि प्रभु का नामामृत सदा बरसता है। गुरु के द्वारा जिसने यह रहस्य जाना है, वह उस हरि-अमृत को हृदय में धारण करके रखते हैं। हे हरि, वे जीव अहम् और तृष्णा को मारकर तुम्हारे प्यार में उस अमृत का पान करते हैं। यह अमृत (कुछ और नहीं) हरि का नाम ही है, जो उसकी कृपा से ही बरसता है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु के द्वारा ही हरि-प्रभु की कृपा से इसकी प्राप्ति होती है ।। २ ।। पउड़ी ।। वह अतुलनीय है, उसे क्योंकर तोला जा सकता है, और तोले बिना वह प्राप्त नहीं होता। गुरु के उपदेश से ही उस पर चिन्तन-मनन करो और उसके गुणों में रम जाओ। तब अपने-आप को प्रभु स्वयं तोलेगा (अर्थात् अपना स्वरूप प्रकट करता है) और अपनी इच्छा से जीवों को मिलेगा या उन्हें अपने संग मिला लेगा। वह अमूल्य है, उसके रहस्यों के सम्बन्ध में कुछ कहा नहीं जा सकता। मैं तो अपने गुरु पर बलिहार हूँ, जिसने सच्ची जानकारी हमें दी। जगत ठगा जा रहा है, अमृत लुट रहा है, किन्तु मनमुख जीव ज्ञान-विहीन होने के कारण कुछ प्राप्त नहीं कर पाता। हरि-नाम के बिना और कुछ साथ नहीं चलेगा, (अतः) मनमुख जन्म गँवा बैठेगा। जो जीव गुरु-उपदेशानुसार जागते हैं, वे अपना घर बचा लेते हैं, अन्यथा काम-क्रोधादि चोरों का कोई विश्वास नहीं ।। ८ ।।

।। सलोक म० ३ ।। बाबीहा ना बिललाइ ना तरसाइ एहु मनु खसम का हुकमु मंनि। नानक हुकमि मंनिऐ तिख उतरै चड़ै चवगलि वंनु ।। १ ।। म० ३ ।। बाबीहा जल महि तेरा वासु है जल ही माहि फिराहि। जल की सार न जाणही तां तूं कूकण पाहि। जल थल चहु दिसि वरसदा खाली को थाउ नाहि। एतै जलि वरसदै तिख मरहि भाग तिना के नाहि। नानक गुरमुखि तिन सोझी पई जिन वसिआ मन माहि ।। २ ।। पउड़ी ।। नाथ जती सिध पीर किनै अंतु न

पाइआ। गुरमुखि नामु धिआइ तुझै समाइआ। जुग छतीह गुबारु तिस ही भाइआ। जला बिबु असरालु तिनै वरताइआ। नीलु अनीलु अगंमु सरजीतु सबाइआ। अगनि उपाई वादु भुख तिहाइआ। दुनीआ कै सिरि कालु दूजा भाइआ। रखै रखणहारु जिनि सबदु बुझाइआ ॥ ९ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ ऐ जीव रूपी पपीहे, बिलखना और करुण-प्रलाप करना छोड़ो, ऐ मन, स्वामी का हुकुम मानो। गुरु नानक कहते हैं कि हुकुम मानने में सब तृष्णा दूर हो जाती है और को चौगुना रंग चढ़ जाता है (हर्षोल्लास होता है) ॥१॥ म० ३ ॥ ऐ पपीहे, तेरा वास जल में है, तुम जल में ही विचरते हो; सच तो यह है कि तुम्हें जल (हरि रूपी जल) की जानकारी नहीं, इसीलिए चीख़ते-पुकारते घूमते हो। प्रभु रूपी जल तो जल-थल सब जगह बरसता है, कोई जगह उससे ख़ाली नहीं। इतना जल बरसते हुए भी जो जीव प्यासे मरते हैं, उनका भाग्य ही दूषित है। गुरु नानक कहते हैं कि जिन जीवों ने गुरु के द्वारा सही जानकारी पा ली है, प्रभु स्वयं उनके मन में बस जाता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ नाथों, यतियों एवं सिद्धों में, किसी ने भी, प्रभु का सही रहस्य नहीं जाना। किन्तु गुरुमुख जीव तुम्हारा नाम स्मरण करता हुआ तुम्हीं में विलीन हो गया। जब (सृष्टि-रचना से पूर्व) वहाँ जल ही जल था, विकराल जल-समूह में वह छत्तीस युग तक यों ही समाधिस्थ रहा (ब्रह्म आत्म-मग्न रहा)। वह अगनित, असंख्य, अनुमान-रहित सर्वोच्च सृजनहार है। उसी ने अग्नि, भूख, प्यास आदि बनाए हैं। संसार को द्वैत-भाव में काल-वश भी उसने स्वयं ही किया है। केवल वे ही जीव सुरक्षित हो सके हैं, जो गुरु के उपदेश का पालन करते हैं ॥ ९ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ इहु जलु सभतै वरसदा वरसै भाइ सुभाइ। से बिरखा हरीआवले जो गुरमुखि रहे समाइ। नानक नदरी सुखु होइ एना जंता का दुखु जाइ ॥ १ ॥ म० ३ ॥ भिनी रैणि चमकिआ वुठा छहबर लाइ। जितु वुठै अनु धनु बहुतु ऊपजै जां सहु करे रजाइ। जितु खाधै मनु त्रिपतीऐ जीआं जुगति समाइ। इहु धनु करते का खेलु है कदे आवै कदे जाइ। गिआनी का धनु नामु है सद ही रहै समाइ। नानक जिन कउ नदरि करे तां इहु धनु पलै पाइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ आपि कराए करे आपि हउ कै सिउ करी पुकार। आपे लेखा मंगसी आपि कराए कार। जो तिसु भावै सो थीऐ हुकमु करे गावारु।

आपि छडाए छुटीऐ आपे बखसणहारु। आपे वेखै सुणे आपि सभसै दे आधारु। सभ महि एकु वरतदा सिरि सिरि करे बीचारु। गुरमुखि आपु वीचारीऐ लगै सचि पिआरु। नानक किसनो आखीऐ आपे देवणहारु ॥ १० ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ हरि रूपी जल सब जगह बरसता है, ऊँचे-भले भाव से इसकी बौछारें होती हैं। किन्तु इससे वे ही पेड़ हरे होते हैं, जो गुरु के शब्द में लीन रहते हैं (अर्थात् गुरुमुख जीव ही हरि-नामामृत-जल का पान करते हैं)। गुरु नानक कहते हैं कि जब उसकी कृपा होती है, तो सब दुःख दूर हो जाते हैं, चतुर्दिक् सुख छा जाता है ॥१॥ म० ३ ॥ रात्रि के भीगे प्रहरों में बिजली चमकी और मूसलाधार वर्षा होने लगी। इस वर्षा से ख़ूब अन्न-धन आदि उपजता है या जैसे प्रभु की इच्छा होती है। यह हरि-नाम का जल मन को तृप्ति देता है, जीवों की जीवन-युक्ति इसी में समाई है। यह धन (वृष्टि से उत्पन्न ऐश्वर्य) परमात्मा का खेल है, कभी आता है, कभी जाता है। किन्तु ज्ञानवान् के लिए सच्चा धन हरि-नाम ही है, जो सदा तल्लीनता देता है। गुरु नानक कहते हैं कि इस धन की प्राप्ति तो केवल उन्हीं को होती है, जिन पर उसकी कृपा-दृष्टि होती है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ परमात्मा अपने-आप सब कुछ करता-कराता है, मैं और किससे पुकार करूँ ? वही सब कर्म करवाता है, वही हिसाब भी माँगेगा। जो उसे स्वीकार होता है, वही होता है, गँवार मूर्ख जीव अपने हुकुम को महत्त्व देते हैं। परमात्मा स्वयं छुड़ाए, तभी छूट सकते हैं (मुक्ति), वही कृपा-पूर्वक क्षमा करने योग्य भी है। वही सबकी देखता-सुनता है, सबको सहारा देता है। सब जीवों में वह परमात्मा व्याप्त है, सबकी देख-भाल वह करता है। जो जीव गुरु के सहयोग से आत्म-विचार में रत होते हैं, वे प्रभु से प्यार करते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि किसी को क्या कहें, अपना प्यार भी वह स्वयं ही देने योग्य है (अर्थात् प्रभु की इच्छा से ही कोई उससे प्रेम करने लगता है) ॥ १० ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ बाबीहा एहु जगतु है मत को भरमि भुलाइ। इहु बाबींहा पसू है इस नो बूझणु नाहि। अंम्रितु हरि का नामु है जितु पीतै तिख जाइ। नानक गुरमुखि जिन पीआ तिन्ह बहुड़ि न लागी आइ ॥ १ ॥ म० ३ ॥ मलारु सीतल रागु है हरि धिआइऐ सांति होइ। हरि जीउ अपणी क्रिपा करे तां वरतै सभ लोइ। वुठै जीआ जुगति होइ धरणी नो सीगारु होइ। नानक इहु जगतु सभु जलु है जल ही ते सभ

कोइ । गुरपरसादी को विरला बूझै सो जनु मुकतु सदा होइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सचा वेपरवाहु इको तू धणी । तू सभु किछु आपे आपि दूजे किसु गणी । माणस कूड़ा गरबु सची तुधु मणी । आवागउणु रचाइ उपाई मेदनी । सतिगुरु सेवे आपणा आइआ तिसु गणी । जे हउमै विचहु जाइ त केही गणत गणी । मनमुख मोहि गुबारि जिउ भुला मंझि वणी । कटे पाप असंख नावै इक कणी ॥ ११ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ ऐ पपीहे, यह जगत है, क्यों भ्रम में भटक रहे हो ? यह जगत पशु है, इसे कोई ज्ञान नहीं। हरि का नाम अमृत के समान है, जिसे पीने से तृष्णा दूर होती है। गुरु नानक कहते हैं कि जिन गुरुमुख जीवों ने यह अमृत पी लिया है, उन्हें दोबारा कभी तृष्णा नहीं होती ॥ १ ॥ म० ३ ॥ मलार का राग शीतलतादायी है, इसमें हरि-प्रभु की प्रेमपूर्ण वाणी का पाठ करने से शांति होती है। परमात्मा जब स्वयं कृपा करता है, तो वह तीनों लोकों में विचरता है। उसके बरसने (विचरने) से जीवों को जीने की युक्ति मिलती है, धरती का शृंगार होता है। गुरु नानक कहते हैं कि यह सारा संसार जल है और जल से ही सब कुछ होता है। गुरु की कृपा से कोई विरला जीव इस तथ्य को समझता है और वह सदा मुक्त हो जाता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे मालिक, तुम्हीं एक सच्चे बे-परवाह हो। तुम सब कुछ अपने-आप में पूर्ण हो, दूसरा किसी को क्या गिनें ? मन का गर्व मिथ्या है, केवल तुम्हारी बड़ाई ही सत्य है। तुमने आवागमन बनाकर धरती की रचना की है। जो अपने सतिगुरु की सही आराधना करता है, वही ठीक हिसाब जानता है (ऐसा कहा जाना चाहिए)। यदि जीव अहम्-भाव का त्याग कर दे, तो फिर गिनतियों की आवश्यकता ही नहीं रहती। (मेरे-तेरे की गिनती समाप्त हो जाती है। प्रभु की करने की शक्ति पर विश्वास बनता है।) मनमुख मूर्ख गँवार है, वह तो ऐसा होता है जैसे कोई जंगलों में भटकता रहे। हरि-नाम का तो एक लघुतम अंश भी करोड़ों पापों को काट देता है ॥ ११ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ बाबीहा खसमै का महलु न जाणही महलु देखि अरदासि पाइ । आपणै भाणै बहुता बोलहि बोलिआ थाइ न पाइ । खसमु वडा दातारु है जो इछे सो फल पाइ । बाबीहा किआ बपुड़ा जगतै की तिख जाइ ॥१॥ म० ३ ॥ बाबीहा भिंनी रैणि बोलिआ सहजे सचि सुभाइ । इहु जलु मेरा जीउ है जल बिनु रहणु न जाइ । गुर सबदी जलु पाईऐ विचहु आपु

गवाइ। नानक जिसु बिनु चसा न जीवदी सो सतिगुरि दीआ मिलाइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ खंड पताल असंख मै गणत न होई। तू करता गोविंदु तुधु सिरजी तुधै गोई। लख चउरासीह मेदनी तुझ ही ते होई। इकि राजे खान मलूक कहहि कहावहि कोई। इकि साह सदावहि संचि धनु दूजै पति खोई। इकि दाते इक मंगते सभना सिरि सोई। विणु नावै बाजारीआ भीहावलि होई। कूड़ निखुटे नानका सचु करे सु होई ॥ १२ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ ऐ पपीहे (जीव को सम्बोधन है), तुम अपने स्वामी का स्थान नहीं जानते, यदि विनती करो, तो प्रभु का महल देख सकोगे। अपनी ओर से तुम अधिक पुकारते हो, किन्तु पुकारने से स्थान नहीं मिलता। तुम्हारा स्वामी दाता है, उससे प्रार्थना करने पर मनोवाञ्छित फल मिल सकता है। एक बबीहा (जीव) बेचारा क्या, सारे संसार की तृष्णा दूर हो सकती है ॥ १ ॥ म० ३ ॥ हरि-नाम-रस में मस्त होकर पपीहा (जीव) स्वतः ही पुकार उठा कि यह जल (हरि-नाम) मेरी ज़िंदगी है, इसके बग़ैर रहा नहीं जा सकता। गुरु के वचनों तथा अहम् के त्याग से यह जल (हरि-नाम) प्राप्त होता है। गुरु नानक कहते हैं कि जिसके बिना एक क्षण भी जीवन नहीं, उससे सतिगुरु मिला देते हैं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सृष्टि में असंख्य खण्ड-पाताल हैं, मैं उनकी सही गिनती नहीं कर सकता। तुम रचयिता प्रभु हो, तुम्हींने सृष्टि का सृजन किया है, तुम्हीं नाश भी करते हो। यह चौरासी लाख जीव-जन्तुओं वाली धरती तुम्हींने की है। कुछ (अपने को इसके) राजा, खान, बादशाह कहलाते हैं। कुछ लोग धन एकत्रित करके साहूकार बन बैठे, कुछ द्वैत-भाव में पड़े अपनी प्रतिष्ठा खो बैठे। कुछ दाता हैं, कुछ भिक्षुक हैं, किन्तु सबके सिर पर उसी एक का स्वामित्व (प्रभुत्व) है। हरि-नाम के बिना सब सौदेबाज़ी करते और अनेक प्रकार के भयों में आतंकित रहते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि मिथ्या का किया सब व्यर्थ है, वही होता है जो सत्यस्वरूप परमात्मा स्वयं करता है ॥ १२ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ बाबीहा गुणवंती महलु पाइआ अउगणवंती दूरि। अंतरि तेरै हरि वसै गुरमुखि सदा हजूरि। कूक पुकार न होवई नदरी नदरि निहाल। नानक नामि रते सहजे मिले सबदि गुरू कै घाल ॥ १ ॥ ॥ म० ३ ॥ बाबीहा बेनती करे करि किरपा देहु जीअ दान। जल बिनु पिआस न ऊतरै छुटकि जांहि मेरे प्रान। तू सुखदाता

बेअंतु है गुण दाता नेधानु। नानक गुरमुखि बखसि लए अंति बेली होइ भगवानु ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ आपे जगतु उपाइ कै गुण अउगण करे बीचारु। त्रै गुण सरब जंजालु है नामि न धरे पिआरु। गुण छोडि अवगण कमावदे दरगह होहि खुआरु। जूऐ जनमु तिनी हारिआ कितु आए संसारि। सचै सबदि मनु मारिआ अहिनिसि नामि पिआरि। जिनी पुरखी उरिधारिआ सचा अलख अपारु। तू गुणदाता निधानु हहि असी अवगणिआर। जिसु बखसे सो पाइसी गुरसबदी बीचारु ॥ १३ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ ऐ पपीहे (ऐ जीव), गुणवान जीव ही प्रभु के महल तक पहुँचते हैं, अवगुणी जीव तो प्रभु से दूर ही रह जाते हैं। परमात्मा तो सबके भीतर बसता है, गुरु के द्वारा वह प्रत्यक्ष हो जाता है। (ऐसी दशा में, जब वह भीतर ही रहता हो) बाहर आवाज़ें लगाने और पुकारने की ज़रूरत नहीं रहती। वहाँ तो केवल कृपालु की कृपा-दृष्टि से ही सब सुख मिल जाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम से प्यार करनेवाले गुरु के वचनानुसार आचरण करके शीघ्र ही सहजावस्था को पा लेते हैं ॥ १ ॥ म० ३ ॥ जीव (पपीहा) विनती करता है कि ऐ कृपालु, कृपा करके मुझे प्राण-दान दो। जल (हरि-नाम) के बिना मेरे प्राण छूट रहे हैं, प्यास शमित नहीं होती। हे स्वामी, तुम अनन्त सुखों के दाता हो, गुणों के भण्डार हो। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु के द्वारा हमें बख़्श लो, हे भगवान, अन्ततः हमारी रक्षा करो ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ परमात्मा स्वयं संसार को पैदा करके सब गुणों-अवगुणों पर विचार करता है। तीनों गुणों (सत, रज, तम) का विचार सांसारिक छल-कपट है, इससे हरि-नाम में प्यार नहीं बनता। जो जीव गुणों की उपेक्षा करके अवगुण कमाते हैं, वे परमात्मा के निकट दुःखी होते हैं। वे तो जीवन के जुए में अपना जन्म ही गँवा बैठे हैं, वे किसलिए संसार में आए? जिन जीवों ने सच्चे शब्द के द्वारा मन को संयमित किया है, रात-दिन हरि-नाम से प्रेम करते हैं; जिन जीवों ने उस सत्यस्वरूप अदृश्य अपार परमात्मा को हृदय में धारण कर रखा है। हे गुणदाता, हरिनाम-निधि परमात्मा, हम तुम्हारे सम्मुख अवगुणी हैं, जिस पर तुम्हारी कृपा होगी, उसी को गुरु का उपदेश और विवेक प्राप्त हो सकेगा ॥ १३ ॥

॥ सलोक म० ५ ॥ राति न विहावी साकतां जिना विसरै नाउ। राती दिनस सुहेलीआ नानक हरिगुण गांउ ॥१॥ ॥ म० ५ ॥ रतन जवेहर माणका हभे मणी मथंनि। नानक जो प्रभि भाणिआ सचै दरि सोहंनि ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सचा

सतिगुरु सेवि सचु सम्हालिआ। अंति खलोआ आइ जि सतिगुर अगै घालिआ। पोहि न सकै जमकालु सचा रखवालिआ। गुर साखी जोति जगाइ दीवा बालिआ। मनमुख विणु नावै कूड़िआर फिरहि बेतालिआ। पसू माणस चंमि पलेटे अंदरहु कालिआ। सभो वरतै सचु सचै सबदि निहालिआ। नानक नामु निधानु है पूरै गुरि देखालिआ॥ १४॥

॥ सलोक म० ५॥ मायाधारी जीवों के लिए, जिन्हें हरि-नाम विस्मृत होता है, अज्ञान की रात्रि कभी समाप्त नहीं होती। (किन्तु) हरि-गुण गानेवाले जीव के लिए रात हो या दिन, दोनों सुखकर होते हैं॥ १॥ म० ५॥ चाहे रत्न, जवाहर, माणिक्य आदि रत्न-पदार्थ मस्तक पर पहने हों, किन्तु गुरु नानक कहते हैं कि जो प्रभु को प्रिय हैं, वे ही प्रभु के द्वार पर सुशोभित होते हैं॥ २॥ पउड़ी॥ सच्चे सतिगुरु की सेवा में रत होकर सत्यस्वरूप प्रभु का स्मरण करो। सतिगुरु के हुज़ूर में की गई सेवा अन्ततः सामने आ गई अर्थात् अन्त समय सहायक हुई। तब यमराज भी वहाँ नहीं पहुँच सकता, सच्चा परमात्मा वहाँ रक्षक होता है। जीव गुरु की साक्षी को अपने जीवन का आलोक बनाता है। (इसके विपरीत) मनमुख जीव नाम-विहीन प्रेत की नाईं मिथ्या विचरण करता है। वे मनुष्य की चमड़ी में पशु हैं, मन से मलिन हैं। सच्चे शब्द द्वारा ही प्रभु की सर्व-व्यापकता का पता चलता है। गुरु नानक कहते हैं कि हरिनाम-धन उच्च कोटि की निधि है और सच्चे गुरु द्वारा ही प्राप्य है॥ १४॥

॥ सलोक म० ३॥ बाबीहै हुकमु पछाणिआ गुर कै सहजि सुभाइ। मेघु वरसै दइआ करि गूड़ी छहबर लाइ। बाबीहे कूक पुकार रहि गई सुखु वसिआ मनि आइ। नानक सो सालाहीऐ जि देंदा सभनां जीआ रिजकु समाइ॥ १॥ ॥ म० ३॥ चात्रिक तू न जाणही किआ तुधु विचि तिखा है कितु पीतै तिख जाइ। दूजै भाइ भरंमिआ अम्रित जलु पलै न पाइ। नदरि करे जे आपणी तां सतिगुरु मिलै सुभाइ। नानक सतिगुर ते अम्रित जलु पाइआ सहजे रहिआ समाइ॥ २॥ पउड़ी॥ इकि वणखंडि बैसहि जाइ सदु न देवही। इकि पाला ककरु भंनि सीतलु जलु हेंवही। इकि भसम चढ़ावहि अंगि मैलु न धोवही। इकि जटा बिकट बिकराल कूलु घरु खोवही। इकि नगन फिरहि दिन राति

नींद न सोवही । इकि अगनि जलावहि अंगु आपु विगोवही । विणु नावै तनु छारु किआ कहि रोवही । सोहनि खसम दुआरि जि सतिगुरु सेवही ॥ १५ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ गुरु के सहज स्वभावी उपदेश द्वारा पपीहा (जीव) प्रभु के हुकुम को पहचानता है। तब प्रभु-कृपा से मूसलाधार वर्षा (गुरु के शब्द की) होती है। पपीहे की कूक-पुकार समाप्त हो जाती है, और वह मन में संतोष और तृप्ति-सुख पा लेता है। गुरु नानक कहते हैं कि उस प्रभु की सराहना करो, जो सब जीवों का पोषक है और सबकी ज़रूरतें पूरी करता है ॥ १ ॥ म० ३ ॥ ऐ पपीहे, तुम नहीं जानते कि तुम्हारे भीतर कैसी तृष्णा है और क्या पान करने से वह तृष्णा शमित हो सकती है। तुम तो द्वैत-भाव में भ्रमित हो, अमृत-जल का पान नहीं करते। यदि तुम पर परमात्मा की कृपा-दृष्टि हो जाय, तो सहज ही सतिगुरु की प्राप्ति हो। गुरु नानक कहते हैं कि तब सतिगुरु से अमृत-जल (हरि-नाम) मिले और तुम (ऐ पपीहे) हरि में ही स्थिर हो सको ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ कुछ लोग जंगलों में वीतरागी बन बैठते हैं, मौन धारण करते हैं। कुछ सख्त सर्दी का ध्यान किए बिना शीतल जल में समाधि लेते हैं। कुछ शरीर के अंगों पर भस्म चढ़ाते हैं, अपने अंगों से मैल भी नहीं धोते (छुड़ाते)। कुछ लोग लम्बी भयानक जटाएँ रखते और अपने कुल की मर्यादा खोते हैं और कुछ दिन-रात दिगम्बर घूमते हैं, निद्रा-विश्राम भी नहीं करते। कुछ लोग अग्नि जलाकर अपने अंगों को बिगाड़ते हैं। (सच तो यह है कि) हरि-नाम के बिना शरीर राख के मोल ही है, उसकी चिन्ता ही बेकार है। जो सतिगुरु की सेवा में लीन होते हैं, वे प्रभु के द्वार पर सुशोभित होते हैं ॥ १५ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ बाबीहा अंम्रित वेलै बोलिआ तां दरि सुणी पुकार । मेघै नो फुरमानु होआ वरसहु किरपा धारि । हउ तिन कै बलिहारणै जिनी सचु रखिआ उरिधारि । नानक नामे सभ हरीआवली गुर कै सबदि वीचारि ॥ १ ॥ ॥ म० ३ ॥ बाबीहा इव तेरी तिखा न उतरै जे सउ करहि पुकार । नदरी सतिगुरु पाईऐ नदरी उपजै पिआरु । नानक साहिबु मनि वसै विचहु जाहि विकार ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ इकि जैनी उझड़ पाइ धुरहु खुआइआ । तिन मुखि नाही नामु न तीरथि न्हाइआ । हथी सिर खोहाइ न भदु कराइआ । कुचिल रहहि दिन राति सबदु न भाइआ । तिन जाति न

पति न करमु जनमु गवाइआ। मनि जूठै वेजाति जूठा खाइआ। बिनु सबदै आचारु न किनही पाइआ। गुरमुखि ओअंकारि सचि समाइआ ॥ १६ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ उषाकाल में जब पपीहा पुकारा तो उसकी पुकार परमात्मा के दरबार में सुनी गई। वहाँ से मेघ को हुकुम हुआ कि वह कृपा-पूर्वक वर्षा करे। (अभिप्राय यह है कि जीव प्रातःकाल उठकर प्रभु को प्रार्थना करता है, तो परमात्मा प्रसन्न होकर गुरु से हुकुम करता है कि वह हरिनाम-जलधार उसे प्रदान करे।) मैं उन पर क़ुर्बान हूँ, जिन्होंने परमात्मा को हृदय में धारण किया है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु के उपदेशानुसार जो हरि-नाम का जाप करते हैं, उन्हें सब प्रकार की हरियाली (शोभा) मिलती है ॥ १ ॥ म० ३ ॥ ऐ पपीहे, इस प्रकार यदि तुम सैकड़ों बार भी पुकार करोगे, तुम्हारी प्यास शांत नहीं होगी। केवल प्रभु की कृपा से ही सतिगुरु मिलता है और सतिगुरु की कृपा से ही प्रभु का प्यार प्राप्त होता है। गुरु नानक कहते हैं, तब परमात्मा मन में आ बसता है और सब विकार दूर हो जाते हैं ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ कुछ लोगों को (जैनियों को) आरम्भ से ही पथ-भ्रष्ट कर दिया है। उनके मुख से कभी हरि-नाम का उच्चारण नहीं होता, न वे तीर्थ-स्नान करते हैं। सिर भी नहीं मुँड़ाते, एक-एक बाल खींचकर अपने हाथों बाल निकाल देते हैं। वे दिन-रात मलिन रहते हैं, उन्हें परमात्मा के शब्द से कोई लगाव नहीं होता। उनकी जाति-पाँति कुछ नहीं, वे तो सब कर्म-धर्म गँवा बैठते हैं। उनके मन में जूठन (मलिनता) रहती है, वे जूठन का ही भोजन करते हैं। गुरु के शब्द के बिना परमात्मा कभी किसी को नहीं मिलता, केवल गुरुमुख जीव ही सत्य के द्वारा प्रभु में समा जाता है ॥ १६ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ सावणि सरसी कामणी गुर सबदी वीचारि। नानक सदा सुहागणी गुर कै हेति अपारि ॥ १ ॥ ॥ म० ३ ॥ सावणि दझै गुण बाहरी जिसु दूजै भाइ पिआरु। नानक पिर की सार न जाणई सभु सीगारु खुआरु ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सचा अलख अभेउ हठि न पतीजई। इकि गावहि राग परीआ रागि न भीजई। इकि नचि नचि पूरहि ताल भगति न कीजई। इकि अंनु न खाहि मूरख तिना किआ कीजई। त्रिसना होई बहुतु किवै न धीजई। करम वधहि कै लोअ खपि मरीजई। लाहा नामु संसारि अम्रितु पीजई। हरि भगती असनेहि गुरमुखि घीजई ॥ १७ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ जीव रूपी स्त्री गुरु के उपदेशों का विचार करके ही सरस हुई है। गुरु नानक कहते हैं कि जिसे गुरु से प्यार है, वह स्त्री (जीवात्मा) सदा सुहागिन है॥ १ ॥ म० ३ ॥ अवगुणी स्त्री, जो पति-प्रभु को छोड़कर द्वैत-मर्यादा पालती है, सावन की शीतलता में भी जलती रहती है। गुरु नानक कहते हैं कि वह प्रियतम का सही रूप जानती ही नहीं, अतः उसका शृंगार भी व्यर्थ होता है॥२॥ पउड़ी ॥ सत्य-स्वरूप परमात्मा अदृश्य है, अभेद है, वह हठधर्मिता से किए गए कर्मों से प्रसन्न नहीं होता। जैसे कोई राग-रागिनियाँ तो गाता है, किन्तु राग में विभोर नहीं होता; कोई नाच-नाचकर फिरकियाँ लेता है, किन्तु भक्ति नहीं करता; कोई मूर्ख अन्न खाना बन्द कर देता है, उसका क्या किया जाय ? उनमें तृष्णा बनी रहती है, किसी भी तरह धैर्य धारण नहीं करते। कई लोग कर्म-काण्ड में बँधकर खप जाते हैं। वास्तव में संसार में आगमन का यथार्थ लाभ तो हरि-नामामृत पीने में है, हरि-भक्ति की मूल स्निग्धता तो गुरुमुख जीवों को ही मिलती है॥ १७ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ गुरमुखि मलार रागु जो करहि तिन मनु तनु सीतलु होइ। गुर सबदी एकु पछाणिआ एको सचा सोइ। मनु तनु सचा सचु मनि सचे सची सोइ। अंदरि सची भगति है सहजे ही पति होइ। कलिजुग महि घोर अंधारु है मनमुख राहु न कोइ। से वडभागी नानका जिन गुरमुखि परगटु होइ॥ १ ॥ म० ३ ॥ इंदु वरसै करि दइआ लोकां मनि उपजै चाउ। जिस कै हुकमि इंदु वरसदा तिस कै सद बलिहारै जांउ। गुरमुखि सबदु सम्हालीऐ सचे के गुण गाउ। नानक नामि रते जन निरमले सहजे सचि समाउ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ पूरा सतिगुरु सेवि पूरा पाइआ। पूरै करमि धिआइ पूरा सबदु मंनि वसाइआ। पूरै गिआनि धिआनि मैलु चुकाइआ। हरि सरि तीरथि जाणि मनूआ नाइआ। सबदि मरै मनु मारि धंनु जणेदी माइआ। दरि सचै सचिआरु सचा आइआ। पुछि न सकै कोइ जां खसमै भाइआ। नानक सचु सलाहि लिखिआ पाइआ॥ १८ ॥

॥ सलोक म० ३ ॥ जो गुरु के मतानुसार मलार राग अलापता है (मिलन-राग), उसे तन-मन का सुख प्राप्त होता है। वह गुरु के वचनों से एकमात्र सत्यस्वरूप को पहचानता है, उसके मन में सत्य विराजता है और वह स्वयं सत्य के रंग में रँग जाता है। उसके भीतर

सच्ची भक्ति उपजती है और सहजावस्था में उसे परमसुख उपलब्ध होता है। कलियुग में अज्ञान का घोर अँधेरा है, मनमुख जीव को मार्ग नहीं मिलता। गुरु नानक कहते हैं कि वे जीव भाग्यशाली हैं, जिन्हें गुरु के द्वारा सत्य प्रकट हो गया है ॥ १ ॥ म० ३ ॥ इन्द्र दया करके वर्षा करता है, लोगों के मन में चाव बढ़ता है। किन्तु जिसके हुकुम से इन्द्र बरसता है, मैं तो उस पर बलिहार जाता हूँ। गुरु के द्वारा प्रभु-शब्द का स्मरण करते हुए सत्यस्वरूप परमात्मा के गुण गाओ। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-नाम में लीन जीव निर्मल हैं, वे सहज ही सत्य में समा जाते हैं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ पूरे सतिगुरु की सेवा से पूर्ण परमात्मा प्राप्त होता है। जिसका भाग्य पूर्ण हो, वही गुरु के पूरे शब्द को मन में बसाता है। पूर्णज्ञान से ही जीवन की मलिनता दूर होती है। परमात्मा के नाम रूपी सरोवर-तीर्थ पर मन ने स्नान किया। गुरु के शब्द पर मन मारकर सत्यस्वरूप प्रभु के द्वार पर आनेवाला सच्चा होता है और परमसत्य का अंग बन जाता है। जो कुछ स्वामी को प्रिय होगा, वही होता है, कोई उस पर प्रश्न-चिह्न नहीं लगा सकता। गुरु नानक कहते हैं कि सत्यस्वरूप का गुणगान करो, कर्मानुसार प्राप्ति अपने-आप होगी ॥ १८ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ कुलहां देंदे बावले लैंदे वडे निलज। चूहा खड न मावई तिकलि बंन्है छज। देन्हि दुआई से मरहि जिन कउ देनि सि जाहि। नानक हुकमु न जापई किथै जाइ समाहि। फसलि अहाड़ी एकु नामु सावणी सचु नाउ। मै महदूदु लिखाइआ खसमै कै दरि जाइ। दुनीआ के दर केतड़े केते आवहि जांहि। केते मंगहि मंगते केते मंगि मंगि जाहि ॥ १ ॥ म० १ ॥ सउ मणु हसती घिउ गुड़ु खावै पंजि सै दाणा खाइ। डकै फूकै खेह उडावै साहि गइऐ पछुताइ। अंधी फूकि मुई देवानी। खसम मिटी फिरि भानी। अधु गुल्हा चिड़ी का चुगणु गैणि चड़ी बिललाइ। खसमै भावै ओहा चंगी जि करे खुदाइ खुदाइ। सकता सीहु मारे सै मिरिआ सभ पिछै पै खाइ। होइ सताणा घुरै न मावै साहि गइऐ पछुताइ। अंधा किस नो बुकि सुणावै। खसमै मूलि न भावै। अक सिउ प्रीति करे अक तिडा अक डाली बहि खाइ। खसमै भावै ओहो चंगा जि करे खुदाइ खुदाइ। नानक दुनीआ चारि दिहाड़े सुखि कीतै दुखु होई। गला वाले हैनि घणेरे छडि न

सकै कोई । मखी मिठै मरणा । जिन तू रखहि तिन नेड़ि न आवै तिन भउ सागरु तरणा ।। २ ।। पउड़ी ।। अगम अगोचरु तू धणी सचा अलख अपारु । तू दाता सभि मंगते इको देवणहारु । जिनी सेविआ तिनी सुखु पाइआ गुरमती वीचारु । इकना नो तुधु एवै भावदा माइआ नालि पिआरु । गुर कै सबदि सलाहीऐ अंतरि प्रेम पिआरु । विणु प्रीती भगति न होवई विणु सतिगुर न लगै पिआरु । तू प्रभु सभि तुधु सेवदे इक ढाढी करे पुकार । देहि दानु संतोखीआ सचा नामु मिलै आधारु ।। १९ ।।

।। सलोक म० १ ।। टोपी-सेली देनेवाले बनावटी गुरु बावले हैं और उनसे प्राप्त करनेवाले शिष्ट निर्लज्ज हैं । (सांसारिक बनावटी गुरु स्वयं तो तिरने योग्य नहीं होते, दूसरों को तारने का बीड़ा उठाते हैं, जैसे) चूहा स्वयं तो बिल में समाता न हो और कमर में छाज बाँधकर चले ! आशीर्वचन कहनेवाले गुरु स्वयं तो मरते ही हैं, आशीष पानेवाले भी जाते हैं । गुरु नानक कहते हैं कि वे परमात्मा का हुकुम नहीं पहचानते, आखिर वे कहाँ जा समाएँगे ? असाढ़ी की फ़सल केवल एक हरि-नाम ही है और सावनी की फ़सल भी सच्चा नाम ही है । मैंने स्वामी के द्वार पर जाकर लगान की सीमा का पट्टा लिखवाया है । दुनिया के कितने ही द्वार मौजूद हैं, लोग वहाँ आते-जाते हैं; कितने ही भिखमंगे वहाँ भिक्षाटन करते हैं, भीख माँग-माँगकर जाते हैं (किन्तु अब मैं निश्चिन्त हूँ, मुझे इसकी अपेक्षा नहीं) ।। १ ।। म० १ ।। हाथी सवा मन घी-गुड़ खाता है, सवा पाँच मन दाना खाता है । डकारता, फूंकता एवं धूल उड़ाता है, किन्तु श्वास निकल जाने पर वह भी पछताता रह जाता है । अहंकार अन्धा होता है और अपने ही दीवानापन में मारा जाता है । जो अपने स्वामी में समा जाती है (मिट जाती है), वही उसे प्रिय होती है । चिड़िया दाने की बालियों को चुगती है और आकाश में उड़-उड़कर चहकती है । वास्तव में चिड़िया भी वही अच्छी है, जो स्वामी की बोली में ख़ुदा-ख़ुदा बोलती है (अर्थात् परमात्मा सबको सब कुछ देता है, जीव को भी सब कुछ पाकर प्रभु का ही गुणगान करना चाहिए) । शक्तिशाली सिंह सैकड़ों मृगों को मारता है और उसके बाद कई उन्हें खाते हैं । बलवान सिंह अपनी माँद में भी नहीं समाता, किन्तु मृत्यु के कारण वह भी पछताता है । अज्ञानांध जीव गर्ज-गर्जकर किसे सुनाता है, वह स्वामी को बिलकुल नहीं भाता । टिड्डी अकड़े (मदार) से प्रीति करती है, उसी की डालियों-पत्तों में रहती हुई उसका भोग करती है— किन्तु हरि-प्रभु को वही प्रिय है, जो प्रभु-नाम जपता है । गुरु नानक

कहते हैं कि यह संसार चार दिन की रौनक़ है, यहाँ सुख की खोज में निकलनेवाले को दुःख होता है। बातें बनानेवाले जीव अनेक हैं, माया को कोई नहीं छोड़ सका। मक्खी मीठी वस्तु पर आसक्त होती है (माया रूपी मधु में लिपटकर मरती है), किन्तु जिन्हें प्रभु, तुम आरक्षण देते हो, माया उसके निकट नहीं आती, वे भव-सागर से तिर जाते हैं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे स्वामी, तुम इन्द्रियातीत, अपहुँच, अदृश्य और अनन्त हो। तुम दाता हो, एकमात्र देनेवाले हो, अन्य सब तुम्हारे द्वार के भिक्षुक हैं। जिसने गुरु-कथनों को विचारकर तुम्हारी सेवा में मन लगाया, उसे सुख मिला। कुछ लोगों के प्रति तुम्हारी यही इच्छा है कि वे माया में ही लिप्त रहें। कुछ को गुरु-शब्दों के माध्यम से प्रभु गुणगान तथा मन में प्रेम-प्यार की ओर लगाया है। प्रीति के बिना भक्ति नहीं होती, सतिगुरु के बिना मन में प्रीति नहीं उपजती। तुम सबके स्वामी हो, सब तुम्हारी सेवा में रत हैं और तुम्हारे चारण बने प्रशस्ति गा रहे हैं। हे दाता, हमें ऐसा सन्तोषपूर्ण दान दो कि हरि का सच्चा नाम हमारा एकमात्र आश्रय बन सके ॥ १९ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ राती कालु घटै दिनि कालु। छिजै काइआ होइ परालु। वरतणि वरतिआ सरब जंजालु। भुलिआ चुकि गइआ तपतालु। अंधा झखि झखि पइआ झेरि। पिछै रोवहि लिआवहि फेरि। बिनु बूझे किछु सूझै नाही। मोइआ रोंहि रोंदे मरि जांहीं। नानक खसमै एवै भावै। सेई मुए जिन चिति न आवै ॥ १ ॥ म० १ ॥ मुआ पिआरु प्रीति मुई मुआ वैरु वादी। वंनु गइआ रूपु विणसिआ दुखी देह रुली। किथहु आइआ कह गइआ किहु न सीओ किहु सी। मनिमुखि गला गोईआ कीता चाउ रली। नानक सचे नाम बिनु सिर खुर पति पाटी ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ अंम्रित नामु सदा सुखदाता अंते होइ सखाई। बाझु गुरू जगतु बउराना नावै सार न पाई। सतिगुरु सेवहि से परवाणु जिन्ह जोती जोति मिलाई। सो साहिबु सो सेवकु तेहा जिसु भाणा मंनि वसाई। आपणै भाणै कहु किनि सुखु पाइआ अंधा अंधु कमाई। बिखिआ कदे ही रजै नाही मूरख भुख न जाई। दूजै सभु को लगि बिगुता बिनु सतिगुर बूझ न पाई। सतिगुरु सेवे सो सुखु पाए जिस नो किरपा करे रजाई ॥ २० ॥

॥ सलोक म० १ ॥ दिन-रात समय बीतता (घटता) जा रहा है।

शरीर क्षीण होता एक घास-फूस की नाईं व्यर्थ हो जाता है। सारा सांसारिक धंधा व्यवहार में चुक जाता है, किन्तु प्रभु-पथ पर तपस्या करना नहीं आता (यह दिशा भूली रहती है)। अज्ञान में अंधा (जन्म-मरण के) झगड़े में पड़ा रह जाता है। मरने के बाद सम्बन्धी रोते हैं कि किसी तरह उसे वापस लाया जा सके। किन्तु सच्ची जानकारी के बिना कुछ पता नहीं चलता। मृत तो मरा ही, बाद रोनेवाले भी रो-रोकर मर जाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि स्वामी को जो रुचता है (वही होता है), जिनके मन में प्रभु का स्मरण नहीं, वे तो मृत-प्राय ही हैं ॥ १ ॥ ॥ म० १ ॥ मृत्यु के साथ ही प्रीति-प्यार, वैर-विरोध सब मर जाते हैं। रंग मिट जाता है, रूप नष्ट होता है और दुःखी शरीर भी धूल में मिल जाता है। मरने के बाद बातें उठती हैं कि कहाँ से आया था, कहाँ चला गया, कुछ था भी या मनुष्य कुछ भी न था। मन और मुख से ऐसी ही बातें करते रंग-रलियों में खोए रहे। गुरु नानक कहते हैं कि सच्चे हरि-नाम के बिना सिर से पैर तक तिरस्कार-अपमान ही बना रहता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ अमृत-समान हरि-नाम सदैव सुखों का दाता है, अन्तकाल में सदा सहायक होता है। गुरु के बिना जगत दीवाना हुआ फिरता, हरि-नाम की सूझ किसी को नहीं। सतिगुरु की सेवा में रत जीव, जिन्होंने अपनी ज्योति परम की ज्योति में विलीन कर दी होती है, वे ही प्रभु के सम्मुख स्वीकृत होते हैं। प्रभु की इच्छा को शिरोधार्य करनेवाला सेवक साहिब-सरीखा ही हो जाता है। स्वेच्छाचार तो अज्ञानांध होने का परिणाम है, भला उसमें किसे सुख मिल सकता है। माया रूपी विष से कभी कोई तृप्त नहीं होता, उसकी गँवार की भूख कभी शमित नहीं होती। द्वैत-भाव में लीन सब नाशवान् हैं, सतिगुरु के अतिरिक्त कोई इसका ज्ञान नहीं दे सकता। सर्वोपरि इच्छा-धारी वाहिगुरु जिस पर कृपा करता है और जो (उस कृपा के फलस्वरूप) सतिगुरु की शरण लेता है, वही सुख पाता है ॥ २० ॥

॥ सलोक म० १ ॥ सरमु धरमु दुइ नानका जे धनु पलै पाइ। सो धनु मित्रु न कांढीऐ जितु सिरि चोटां खाइ। जिन कै पलै धनु वसै तिन का नाउ फकीर। जिन्ह कै हिरदै तू वसहि ते नर गुणी गहीर ॥ १ ॥ म० १ ॥ दुखी दुनी सहेड़ीऐ जाइ त लगहि दुख। नानक सचे नाम बिनु किसै न लथी भुख। रूपी भुख न उतरै जां देखां तां भुख। जेते रस सरीर के तेते लगहि दुख ॥ २ ॥ म० १ ॥ अंधी कंमी अंधु मनु मनि अंधै तनु अंधु। चिकड़ि लाइऐ किआ थीऐ जां तुटै पथर बंधु।

बंधु तुटा बेड़ी नही ना तुलहा ना हाथ। नानक सचे नाम विणु केते डुबे साथ ॥ ३ ॥ म० १ ॥ लख मण सुइना लख मण रुपा लख साहा सिरि साह। लख लसकर लख वाजे नेजे लखी घोड़ी पातिसाह। जिथै साइरु लंघणा अगनि पाणी असगाह। कंधी दिसि न आवई धाही पवै कहाह। नानक ओथै जाणीअहि साह केई पातिसाह ॥ ४ ॥ पउड़ी ॥ इकन्हा गलीं जंजीर बंदि रबाणीऐ। बधे छुटहि सचि सचु पछाणीऐ। लिखिआ पलै पाइ सो सचु जाणीऐ। हुकमी होइ निबेड़ु गइआ जाणीऐ। भउजल तारण हारु सबदि पछाणीऐ। चोर जार जूआर पीड़े घाणीऐ। निंदक लाइतबार मिले हड़वाणीऐ। गुरमुखि सचि समाइ सु दरगह जाणीऐ ॥ २१ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि जिनके पास हरि-नाम रूपी धन है, वे ही श्रम और धर्म में संलग्न हो सकते हैं। वह सांसारिक धन हमारा सहयोगी (सहायक) नहीं हो सकता, जिसके कारण हमें दुःख उठाने पड़ते हों (आघात सहने पड़ते हों)। जिसके आँचल में सांसारिक धन-दौलत होती है, वे तो (सही अर्थों में) फ़क़ीर होते हैं। (इसके विपरीत) जिनके मन में, हे प्रभु, तुम स्वयं बसते हो, वे गुणी और गहन होते हैं ॥ १ ॥ म० १ ॥ माया का संग्रह भी दुःखों से होता है, छिन जाय (चली जाय) तो भी दुःख होता है। गुरु नानक कहते हैं कि सच्चे हरि-नाम के बिना किसी की भूख शमित नहीं होती। रूप-सौंदर्य से भी तृष्णा शांत नहीं होती, जिधर-किधर तृष्णा ही दीख पड़ती है। दैहिक रसास्वादन में दुःख ही दुःख होते हैं ॥ २ ॥ म० १ ॥ अज्ञानपूर्ण कर्मों से मन में अंधकार रहता है और मन का अँधेरा शरीर का भी अँधेरा बन जाता है। जहाँ पत्थर का बाँध भी टूट जाय, वहाँ गारा लगाने से क्या बनता है! बाँध टूट जाय तो नौका नहीं, तुलहा (लकड़ियाँ बाँधकर बनाया तख्ता, जिस पर तैरा जा सकता है) नहीं, अथाह जल में कोई सहारा सूझ नहीं पड़ता (अभिप्राय यह कि मन को बाँधने के लिए सांसारिक गारे-जैसी कच्ची चीज़ कार्य नहीं करती, और जब मन का बाँध टूट जाता है, फिर संसार में कोई सुरक्षा नहीं रह जाती)। गुरु नानक कहते हैं कि ऐसे में हरि-नाम के बिना जीवों के समूह के समूह डूब जाते हैं ॥ ३ ॥ म० १ ॥ किसी के पास लाखों मन सोना हो, लाखों मन चाँदी हो, लाखों शाहों का भी वह शाह हो। लाखों की सेना हो, लाखों वादन हों, उस बादशाह के पास घोड़ों के अनेक रसाले हों। किन्तु जहाँ संसार-सागर को पार करना है, जहाँ अथाह आग-पानी मौजूद है,

किनारा दीख नहीं पड़ता, लोग चीख़-चीखकर शोर मचाते हैं, गुरु नानक कहते हैं कि वहाँ पता चलता है कि असली बादशाह कौन है (हरि-नाम धारण करनेवाला शांति से उक्त स्थिति से पार लाँघ जाता है, इसलिए वही बादशाह है) ॥ ४ ॥ पउड़ी ॥ कुछ जीवों के गले ज़ंजीर है और वे परमात्मा की दासता में रहते हैं; वे सत्यस्वरूप परमात्मा को पहचानकर बंधन-मुक्त हो जाते हैं। कर्म का हिसाब तो चुकाना ही पड़ता है, उसे तो सच मानना ही चाहिए। यह बात आगे पता चलती है कि हुकुमानुसार ही प्रभु सब कार्य सुलझाता है। संसार-सागर से मुक्त कर देनेवाला गुरु का शब्द पहचानो, चोर-जार-जुआरी आदि दुष्कर्मी कोल्हू में पीस दिए जाते हैं। निंदकों, चुग़ुलख़ोरों आदि को हथकड़ी लगाई जाती है (दण्ड दिया जाता है); केवल वही जीव, जो गुरु के माध्यम से सत्य में लीन हो जाता है, वही प्रभु के सम्मुख सम्मानित होता है ॥ २१ ॥

॥ सलोक म० २ ॥ नाउ फकीरै पातिसाहु मूरख पंडितु नाउ। अंधे का नाउ पारखू एवै करे गुआउ। इलति का नाउ चउधरी कूड़ी पूरे थाउ। नानक गुरमुखि जाणीऐ कलि का एहु निआउ ॥ १ ॥ म० १ ॥ हरणां बाजां तै सिकदारां एन्हा पढ़िआ नाउ। फांधी लगी जाति फहाइनि अगै नाही थाउ। सो पड़िआ सो पंडितु बीना जिन्ही कमाणा नाउ। पहिलो दे जड़ अंदरि जंमै ता उपरि होवै छांउ। राजे सीह मुकदम कुते। जाइ जगाइन्हि बैठे सुते। चाकर नहदा पाइन्हि घाउ। रतु पितु कुतिहो चटि जाहु। जिथै जीआं होसी सार। नकीं वढीं लाइतबार ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ आपि उपाए मेदनी आपे करदा सार। भै बिनु भरमु न कटीऐ नामि न लगै पिआरु। सतिगुर ते भउ ऊपजै पाईऐ मोख दुआर। भै ते सहजु पाईऐ मिलि जोती जोति अपार। भै ते भैजलु लंघीऐ गुरमती वीचारु। भै ते निरभउ पाईऐ जिसदा अंतु न पारावारु। मनमुख भै की सार न जाणन्ही त्रिसना जलते करहि पुकार। नानक नावै ही ते सुखु पाइआ गुरमती उरिधार ॥ २२ ॥

॥ सलोक म० २ ॥ (उलटी स्थिति है—) फ़क़ीर को बादशाह समझा जाता है, मूर्ख को पंडित कहा जाता है। अन्धे को पारखी कहकर बात किया जाता है। शरारती को चौधरी एवं कुलटा को प्रधान माना जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु के द्वारा यह यथार्थ प्राप्त होता है कि कलियुग का न्याय उलटा है ॥ १ ॥ म० १ ॥ हिरण के बच्चे को

सिखाकर छोड़ दिया जाता है, वह अपने अन्य साथियों को लाकर वहाँ लगे फंदे में फँसा देता है। वैसे ही सिखाए गए बाज और पढ़े हुए अधिकारी जन, अपने ही भाइयों को मारते और उनका शोषण करते हैं। अपने जाति-बन्धुओं को ही फंदे में फँसाते हैं। इससे आगे का ज्ञान उन्हें नहीं होता। वास्तव में पढ़ा-लिखा, विद्वान्, आँखवाला (चतुर) वही है, जिसने हरि-नाम की कमाई की होती है। पहले धरती में जड़ लगती है, फिर पेड़ बनकर छाया होती है (अतः पहले मन की धरती में हरि-नाम की जड़ लगनी चाहिए)। किन्तु यहाँ बाड़ ही खेत को खा रही है—राजे शेर की तरह रक्त-पिपासु हैं, उनके अधिकारी अहलकार कुत्तों की तरह हैं, कहीं भी जाकर बैठे-सोए भले लोगों को तंग करते हैं। उनके नौकर नाखूनों के समान हैं, वे घाव बनाकर कुत्तों की तरह लोगों का रक्त-शोषण करते हैं। किन्तु जहाँ इसकी पड़ताल होगी, वहाँ ऐसे चुग़लख़ोरों की नाक कट जायँगी ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ वह स्वयं धरती को बनाता और उसका ध्यान रखता है। उसके भय के बिना भ्रम नष्ट नहीं होते और न ही हरि-नाम से प्यार लगता है। यह पावन भय सतिगुरु के कारण उपजता है और तब जीव मोक्ष-द्वार को पा लेता है। प्रभु के भय से ही ज्ञान की स्थिरता मिलती है और जीव परमात्मा में विलीन होता है। भय से गुरु-वचनानुसार भव-सागर पार किया जाता है। भय से उस निर्भय ब्रह्म की प्राप्ति होती है, जिसका कोई अन्त या पारावार नहीं। मनमुख जीव प्रभु के इस भय का रहस्य नहीं जानते। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु-मतानुसार हरि-नाम को हृदय में धारण करके ही सुख प्राप्त होता है ॥ २२ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ रूपै कामै दोसती भुखै सादै गंढु। लबै मालै घुलि मिलि मिचलि ऊंघै सउड़ि पलंघु। भंउ कै कोपु खुआरु होइ फकड़ु पिटे अंधु। चुपै चंगा नानका विणु नावै मुहि गंधु ॥ १ ॥ म० १ ॥ राजु मालु रूपु जाति जोबनु पंजे ठग। एनी ठगीं जगु ठगिआ किनै न रखी लज। एना ठगन्हि ठग से जि गुर की पैरी पाहि। नानक करमा बाहरे होरि केते मुठे जाहि ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ पड़िआ लेखेदारु लेखा मंगीऐ। विणु नावै कूड़िआरु अउखा तंगीऐ। अउघट रुधे राह गलीआं रोकीआं। सचा वेपरवाहु सबदि संतोखीआं। गहिर गभीर अथाहु हाथ न लभई। मुहे मुहि चोटा खाहु विणु गुर कोइ न छुटसी। पति सेती घरि जाहु नामु वखाणीऐ। हुकमी साह गिराह देंदा जाणीऐ ॥ २३ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ रूप-सौंदर्य की काम से तथा भूख की स्वाद से दोस्ती है। लोभी धन के साथ अभेद हो जाता है, निद्रामग्न के लिए सँकरी जगह भी पलंग है। क्रोध की बकवास से मित्रता है और वह अन्धा होकर भौंकता या बकवास करता है। अतः गुरु नानक कहते हैं कि इससे तो चुप भली, हरि-नाम के बिना अन्य सब मलिनता है ॥ १ ॥ ॥ म० १ ॥ राज, माल, रूप, जाति और यौवन, ये पाँचों ठग हैं। इन ठगों ने निर्लज्ज होकर जगत को ठगा है। इन ठगों को वे ही ठग सकते हैं, जो गुरु के चरण पकड़ते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि अन्य भाग्यहीन जीव निरन्तर उनसे ठगे जा रहे हैं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ पढ़े-लिखे योग्य व्यक्ति से लेखा माँगा जाता है, वह उत्तरदायी होता है। हरि-नाम के बिना सब मिथ्या है, कठिन और तंग होनेवाला है। वे कठिन रास्तों पर रुके हैं, उनके मार्ग रुद्ध हैं। सच्चा बे-परवाह परमात्मा शब्द के द्वारा सन्तोष प्रदान करता है। वह स्वयं इतना गहरा-गम्भीर है कि उसकी गहराई नहीं जानी जा सकती। (उससे विमुख) सामने से निरन्तर आघात सहन करते हैं, गुरु के बिना कोई छूटता भी नहीं। हरि-नाम का बखान करनेवाला सप्रतिष्ठा अपने असली घर (सचखण्ड) में जाता है। परमात्मा सबको अपने हुकुमानुसार ही श्वास-ग्रास (जीवन और रोज़ी) प्रदान करता है ॥ २३ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ पउणै पाणी अगनी जीउ तिन किआ खुसीआ किआ पीड़। धरती पाताली आकासी इकि दरि रहनि वजीर। इकना वडी आरजा इकि मरि होहि जहीर। इकि दे खाहि निखुटै नाही इकि सदा फिरहि फकीर। हुकमी साजे हुकमी ढाहे एक चसे महि लख। सभु को नथै नथिआ बखसे तोड़े नथ। वरना चिहना बाहरा लेखे बाझु अलखु। किउ कथीऐ किउ आखीऐ जापै सचो सचु। करणा कथना कार सभ नानक आपि अकथु। अकथ की कथा सुणेइ। रिधि बुधि सिधि गिआनु सदा सुखु होइ ॥ १ ॥ म० १ ॥ अजरु जरै त नउ कुल बंधु। पूजै प्राण होवै थिरु कंधु। कहां ते आइआ कहां एहु जाणु। जीवत मरत रहै परवाणु। हुकमै बूझै ततु पछाणै। इहु परसादु गुरू ते जाणै। होंदा फड़ीअगु नानक जाणु। ना हउ ना मै जूनी पाणु ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ पढ़ीऐ नामु सालाह होरि बुधीं मिथिआ। बिनु सचे वापार जनमु बिरथिआ। अंतु न पारावारु न किनही पाइआ। सभु जगु

गरबि गुबारु तिन सचु न भाइआ। चले नामु विसारि तावणि ततिआ। बलदी अंदरि तेलु दुबिधा घतिआ। आइआ उठी खेलु फिरै उवतिआ। नानक सचै मेलु सचै रतिआ ॥ २४ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ पवन, पानी आदि तत्त्वों एवं आत्मा को मिलाकर जीव बना दिया है। उसे कई ख़ुशियाँ और कई पीड़ाएँ दी हैं। उनमें कोई धरती, पाताल, आकाश का स्वामी बनना चाह रहा, कोई दूसरों के द्वार में पड़ा ही प्रसन्न है। किसी को लम्बी आयु मिली है, कोई मरकर दुःखी होता है। कुछ के पास इतना है कि खाने-ख़र्चने से घटता नहीं, कोई बेचारा सदा भीख ही माँगता रहता है। परमात्मा स्वेच्छा से बनाता-बिगाड़ता है, एक क्षणांश में लाखों रचना-विनाश करता है। सबको उसने अपनी इच्छा (हुकुम) की नकेल डाल रखी है— जब मुक्त करता है, तभी यह नकेल तोड़ता है। वह (परमात्मा) स्वयं रंग-रूप, वर्ण-जाति से अतीत है, उसके कर्मों का कोई हिसाब नहीं रखता। उसके सम्बन्ध में क्या कहें, हमारे लिए तो वह ही एकमात्र सत्य का स्वरूप है (वह हमारी समझ से बाहर है)। करनी-कथनी सब उसी का कर्म है, किन्तु वह स्वयं अभिव्यक्ति से परे है। उस अकथ की कथा जो सुन ले, वह रिद्धि-सिद्धि, ज्ञान तथा सुख के भण्डारों को पा लेता है॥ १ ॥ म० १ ॥ जो आत्मरस का सही भोग कर सके तो नौ द्वार (बहिर्मुखी वृत्तियाँ) बन्द होते हैं। श्वास-श्वास प्रभु-नाम जपे तो शरीर स्थिर होता है। यह कहाँ से आया, कहाँ जाना है, यह झगड़ा तथा जन्म-मरण का अन्त होता है और मनुष्य प्रभु-दरबार में स्वीकार होता जाता है। जो हुकुम बूझता तथा मूल तत्त्व को पहचानता है, गुरु-कृपा से ही उसे वह उपलब्धि होती है। गुरु नानक कहते हैं कि अहंकारी जीव पकड़ा जाता है। अहम् त्याग दे तो योनि-चक्र में नहीं पड़ता ॥२॥ ॥ पउड़ी ॥ हरिनाम-गुणगान की शिक्षा ही सच्ची है, अन्य सब सोच मिथ्या है। इस सच्चे व्यापार के अतिरिक्त जन्म व्यर्थ है। परमात्मा का अन्त या पारावार किसी ने नहीं पाया। सारा संसार अहंकार में मग्न है, उसे सत्य की अपेक्षा ही नहीं होती। हरि-नाम विस्मृत करके जीनेवाले दुःखी और सन्तप्त रहते हैं और उस सन्ताप की कड़ाही में दुविधा का तेल काढ़ते हैं। इस प्रकार वे संसार में जन्मते और मरते हैं और सदैव इसी प्रकार आने-जाने का नीरस खेल खेलते रहते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि सत्यस्वरूप प्रभु के साथ जिस जीव का प्यार है, वह उसी में लीन होता है ॥ २४ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ पहिलां मासहु निमिआ मासै अंदरि वासु। जीउ पाइ मासु मुहि मिलिआ हडु चंमु तनु मासु।

मासहु बाहरि कढिआ मंमा मासु गिरासु। मुहु मासै का जीभ मासै की मासै अंदरि सासु। वडा होआ वीआहिआ घरि लै आइआ मासु। मासहु ही मासु ऊपजै मासहु सभो साकु। सतिगुरि मिलिऐ हुकमु बुझीऐ तां को आवै रासि। आपि छुटे नह छूटीऐ नानक बचनि बिणासु ॥ १ ॥ म० १ ॥ मासु मासु करि मूरखु झगड़े गिआनु धिआनु नही जाणै। कउणु मासु कउणु सागु कहावै किसु महि पाप समाणे। गैंडा मारि होम जग कीए देवतिआ की बाणे। मासु छोडि बैसि नकु पकड़हि राती माणस खाणे। फड़ु करि लोकां नो दिखलावहि गिआनु धिआनु नही सूझै। नानक अंधे सिउ किआ कहीऐ कहै न कहिआ बूझै। अंधा सोइ जि अंधु कमावै तिसु रिदै सि लोचन नाही। मात पिता की रकतु निपंने मछी मासु न खांही। इसत्री पुरखै जां निसि मेला ओथै मंधु कमाही। मासहु निमे मासहु जंमे हम मासै के भांडे। गिआनु धिआनु कछु सूझै नाही चतुरु कहावै पांडे। बाहर का मासु मंदा सुआमी घर का मासु चंगेरा। जीअ जंत सभि मासहु होए जीइ लइआ वासेरा। अभखु भखहि भखु तजि छोडहि अंधु गुरू जिन केरा। मासहु निमे मासहु जंमे हम मासै के भांडे। गिआनु धिआनु कछु सूझै नाही चतुरु कहावै पांडे। मासु पुराणी मासु कतेबीं चहु जुगि मासु कमाणा। जजि काजि वीआहि सुहावै ओथै मासु समाणा। इसत्री पुरख निपजहि मासहु पातिसाह सुलतानां। जे ओइ दिसहि नरकि जांदे तां उन्ह का दानु न लैणा। देंदा नरकि सुरगि लैदे देखहु एहु धिङाणा। आपि न बूझै लोक बुझाए पांडे खरा सिआणा। पांडे तू जाणै ही नाही किथहु मासु उपंना। तोइअहु अंनु कमादु कपाहां तोइअहु त्रिभवणु गंना। तोआ आखै हउ बहु बिधि हछा तोऐ बहुतु बिकारा। एते रस छोडि होवै संनिआसी नानकु कहै विचारा ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हउ किआ आखा इक जीभ तेरा अंतु न किनही पाइआ। सचा सबदु वीचारि से तुझ ही माहि समाइआ। इकि भगवा वेसु करि भरमदे विणु सतिगुर किनै न पाइआ। देस दिसंतर भवि थके तुधु अंदरि आपु लुकाइआ। गुर का सबदु रतंनु है करि चानणु आपि दिखाइआ। आपणा

आपु पछाणिआ गुरमती सचि समाइआ । आवागउणु बजारीआ बाजारु जिनी रचाइआ । इकु थिरु सचा सालाहणा जिन मनि सचा भाइआ ॥ २५ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ (इन दो सलोकों में गुरु नानक ने मांस खाने या न खाने के सम्बन्ध में वहमों-भ्रमों को दूर किया है। इसका अभिप्राय मांस खाने की छूट देना नहीं है, क्योंकि गरिष्ठ भोजन से शरीर को कष्ट होता है, उसकी मनाही वे अन्यत्र कर चुके हैं।) सर्वप्रथम मनुष्य का बीजारोपण मांस से ही होता है (वीर्य का गर्भ में स्थिर होना मांसल-क्रिया से ही सम्भव है) और फिर नौ मास तक मांस (पेट) में ही वास होता है। जब जान आई तो हड्डी, मांस, चमड़ी आदि ही प्राप्त हुआ (शरीर)। मांस से बाहर निकाला (गर्भाशय से) तो मांस को चूसने (स्तन-पान) से ही भोजन प्राप्त हुआ। मुँह, जीभ सब मांस के बने हैं, प्राण भी मांस में ही बसते हैं। बड़ा होकर विवाह में भी घर मांस ही (स्त्री) लाया। मांस से मांस पैदा करता रहा (मैथुन-क्रिया) और मांस से ही सब सम्बन्ध बने। सतिगुरु से भेंट हो सके, परमात्मा के हुकुम का ज्ञान हो, तब मांस की यह प्रक्रिया प्रतिष्ठित हो— सार्थक हो। गुरु नानक कहते हैं कि अपने प्रयासों से कौन छूटता है? बल्कि इन वचनों से नाशोन्मुख हुआ जाता है ॥ १ ॥ म० १ ॥ मूर्ख लोग मांस-मांस करके झगड़ते हैं, ज्ञान-ध्यान की सही स्थिति को नहीं समझते। क्या मांस है, क्या शाक है, किसमें क्या पाप है (यह कोई नहीं जानता)। देवताओं के स्वभावानुसार मनुष्य प्राणी उन्हें प्रसन्न करने के लिए होम-यज्ञ करते हुए गैंड़ा मारकर बलि देते थे। जो मांस-भक्षण का विरोध करते और मांस की गंध के कारण नाक पकड़ लेते हैं, वे भी रात के अँधेरे में मांस खा जाते हैं (अर्थात् अपने कुकर्मों द्वारा मनुष्यों को कष्ट पहुँचाते हैं)। वे नाक पकड़कर लोगों को दिखलाते हैं (पाखण्ड करते हैं), ज्ञान-ध्यान की जानकारी उन्हें नहीं होती। गुरु नानक कहते हैं कि ऐसे अंधे से क्या कहें, जो कहने पर भी न जाने। वास्तव में अन्धा वह है, जो अन्याय करता और अज्ञान में विचरता है। उसके मन में वे आँखें (ज्ञान-चक्षु) ही नहीं। माता-पिता के शुक्र-वीर्य से पैदा हुए हैं, किन्तु मांस-मछली नहीं खाते। रात्रि में जब स्त्री-पुरुष का मेल होता है तो मांस से ही भोग करते हैं। मांस से हमारा बीजारोपण होता है, मांस से हम पैदा होते हैं और मांस के ही हम बने हैं। यह पंडित-चतुर कहलानेवालों को सही ज्ञान-ध्यान तो सूझता नहीं। बाहर का मांस बुरा लगता है, घर के मांस (स्त्री-संतान आदि) को अच्छा समझते हैं। जीव-जन्तु सब मांस से पैदा होते हैं, मांस में ही (पेट में) वास करते हैं। जिनका गुरु अज्ञानी होता है, वे अभक्ष्य को तो खाते हैं (हराम की कमाई), किन्तु भक्ष्य को त्याग देते हैं (यहाँ भक्ष्य से अभिप्राय मांस खाना

नहीं, बल्कि सच्ची कमाई है— वे सच्ची कमाई त्यागकर हराम खाते हैं)। मांस से हमारा बीजारोपण होता है, मांस से हम पैदा होते हैं और मांस के ही हम बने हैं। पंडित-चतुर कहलानेवालों को सही ज्ञान-ध्यान तो सूझता नहीं। पुराणों, क़ुर्आन आदि में मांस का वर्णन है, चारों युगों में मांस का व्यवहार रहा है। यज्ञ-कार्य एवं विवाह आदि के शुभ अवसरों में भी मांस विद्यमान होता है (ये दोनों अवसर मांस का व्यापार है— एक ओर बलि देने से, दूसरी ओर स्त्री प्राप्त करने से —यहाँ मांस-भोजन की बात नहीं)। स्त्री, पुरुष, बादशाह या सुलतान सब मांस से पैदा हुए हैं। यदि वे नरक जाते दीखते हों, तो उनका दान नहीं लेना चाहिए (अर्थात् मांस से पैदा हुए सब नरक तो नहीं जा रहे)। विचित्र व्यवस्था है कि दान देनेवाला (क्योंकि मांस का वहम नहीं करता) नरक में जायगा और दान लेनेवाला (क्योंकि वहम करता है— ब्राह्मण पर व्यंग्य है) स्वर्ग में जाने की आशा करता है। वाह रे पंडित, बड़ा समझदार बनता है, खुद तो समझता नहीं, लोगों को समझाता है। हे पंडित, तुम्हें मालूम ही नहीं कि मांस कहाँ से पैदा हुआ। जल से अन्न, गन्ना, कपास आदि होता है, त्रिभुवन ही जल से बना है। पंडित के मतानुसार पानी पवित्र है, किन्तु जल में भी अनेक विकार आते हैं और वह अपना रूप बदलकर अनेक रसों में प्रकट होता है, इसलिए उक्त सब वस्तुओं को छोड़ने से ही पंडित वास्तविक त्यागी (वैष्णव) या संन्यासी बन सकता है, यही गुरु नानक का विचारपूर्ण मत है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे परमात्मा, मेरे पास एक जीभ है, मैं क्या कहूँ, तुम्हारा भेद कोई नहीं कह सका। जो गुरु का सच्चा शब्द विचारता (गुरु-मतानुसार विचरण करता) है, वह तुममें ही समा जाता है। कुछ लोग वेषाडम्बरी होते हैं, जो भगवा-वेष बनाकर (गेरुए रंग के कपड़े पहनकर) घूमते हैं, किन्तु सतिगुरु-सहयोग के बिना कोई प्रभु को नहीं पा सका। लोग देश-देशांतर में घूमते थक गए, तुमने उन्हीं के भीतर अपने को छिपा रखा है। गुरु का शब्द खरा रत्न है, इस सूझ का प्रकाश भी उसने स्वयं दिया है। जीव गुरु-मतानुसार ही अपने को पहचानता एवं सत्य में लीन होता है। वे आडम्बरी, जो वेष बनाते और दिखावे करते हैं, आवागमन के चक्र में पड़ते हैं। जिनके मन में सच्चा प्रभु प्रिय है, वे स्थिर भाव से उसकी स्तुति करते और सत्यस्वरूप की श्लाघा करते हैं ॥ २५ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ नानक माइआ करम बिरखु फल अंम्रित फल विसु। सभ कारण करता करे जिसु खवाले तिसु ॥ १ ॥ म० २ ॥ नानक दुनीआ कीआं वडिआईआं अगी सेती जालि। एनी जलीईं नामु विसारिआ इक न चलीआ

नालि ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सिरि सिरि होइ निबेड़ु हुकमि चलाइआ । तेरै हथि निबेड़ु तूहै मनि भाइआ । कालु चलाए बंनि कोइ न रखसी । जरु जरवाणा कंन्हि चड़िआ नचसी । सतिगुरु बोहिथु बेड़ु सचा रखसी । अगनि भखै भड़हाड़ु अनदिनु भखसी । फाथा चुगै चोग हुकमी छुटसी । करता करे सु होगु कूड़ु निखुटसी ॥ २६ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि माया कर्मों का पेड़ मात्र है, जिसे सुख-दु:ख रूपी अमृत और विष के फल लगे हैं । रचयिता स्वयं कारण बनकर जिसको भी जो फल खिलाता है, वह खाता है ॥ १ ॥ म० २ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि सांसारिक प्रतिष्ठा को अग्नि में जला दो । इन्हीं सड़ी बड़ाइयों ने हरिनाम विस्मृत करवाया है, किन्तु एक ने भी संसारेतर साथ नहीं दिया ॥२॥ पउड़ी ॥ हर एक व्यक्ति का अलग-अलग निर्णय होना है, परमात्मा ने हर एक को हुकुम में चला रखा है। हे प्रभु, हमारा निर्णय तुम्हारे हाथ है, तुम्हीं मन को भाते हो । यमराज बाँधकर ले जायगा, कोई नहीं बचा सकेगा । दुष्ट बुढ़ापा कंधे चढ़ पुकारेगा (नाचेगा), तब केवल सतिगुरु ही जहाज या बेड़ा बनकर सच्चे के पक्ष में तुम्हारी रक्षा कर सकेगा । विषय-विकारों की अग्नि की ज्वाला रात-दिन हमें जला रही है । यह जीव कर्मों के बंधनों में फँसा परिणाम भुगत रहा है, प्रभु की कृपा हो तो छूट सकेगा । वह परमात्मा जो भी करेगा, वही होगा, मिथ्यात्व का नाश होगा ॥ २६ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ घर महि घरु देखाइ देइ सो सतिगुरु पुरखु सुजाणु । पंच सबद धुनिकार धुनि तह बाजै सबदु नीसाणु । दीप लोअ पाताल तह खंड मंडल हैरानु । तार घोर बाजित्र तह साचि तखति सुलतानु । सुखमन कै घरि रागु सुनि सुंनि मंडलि लिव लाइ । अकथ कथा बीचारीऐ मनसा मनहि समाइ । उलटि कमलु अंम्रिति भरिआ इहु मनु कतहु न जाइ । अजपा जापु न वीसरै आदि जुगादि समाइ । सभि सखीआ पंचे मिले गुरमुखि निज घरि वासु । सबदु खोजि इहु घरु लहै नानकु ता का दासु ॥१॥ म० १ ॥ चिलिमिलि बिसीआर दुनीआ फानी । कालूबि अकल मन गोर न मानी । मन कमीन कमतरीन तू दरीआउ खुदाइआ । एकु चीजु मुझै देहि अवर जहर चीज न भाइआ । पुराब खाम कूजै हिकमति खुदाइआ । मन तुआना तू कुदरती आइआ । सग नानक दीबान मसताना नित

चड़ै सवाइआ। आतम दुनीआ खुनक नामु खुदाइआ ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी नवी म० ५ ॥ सभो वरतै चलतु चलतु बखाणिआ। पारब्रहमु परमेसरु गुरमुखि जाणिआ। लथे सभि विकार सबदि नीसाणिआ। साधू संगि उधारु भए निकाणिआ। सिमरि सिमरि दातारु सभि रंग माणिआ। परगटु भइआ संसारि मिहर छावाणिआ। आपे बखसि मिलाए सद कुरबाणिआ। नानक लए मिलाइ खसमै भाणिआ ॥ २७ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ सच्चा समर्थ सतिगुरु वही है, जो हृदय रूपी घर में प्रभु का निवास (घर) प्रकट कर दे। पाँच शब्दों की मीठी ध्वनि और प्रभु के हुकुम का शंखनाद (सतिगुरु ही सुनवाता है), (इस अवस्था में पहुँचे जीव को) दीपक का आलोक, खंड, मंडल, पाताल आदि विस्मित कर देते हैं। वहाँ वादन-यन्त्रों की गम्भीर ध्वनि होती है, वहाँ सत्य के आसन पर परमात्मा स्वयं विराजता है। सुषुम्ना की मिलापावस्था (जहाँ इड़ा, पिंगला के सुर मिलते हैं) में जीव राग-मग्न होता और अफुर अवस्था (जहाँ आत्म-विस्मृत होकर केवल प्रभु की सत्ता का ही भान रहता है) में समाधिस्थ होता है। इस अकथनीय कथा पर तभी विचार सम्भव है, जब प्रभु की मंशा (इच्छा) मन में समा जाती है (विश्वास होता है)। माया से विमुख होकर अमृत-भरे इस हृदय रूपी कमल को पाकर मन स्थिर हो जाता है—डाँवाडोल नहीं होता। जीव बिना जपे (जीभ हिलाए) प्रभु में लीन होकर प्रभु का जाप करता है। सब सखियों (ज्ञानेन्द्रियों) को पाँच सतोगुण (सत, संतोख, दया, धर्म, धैर्य) प्राप्त हुए हैं और गुरु के द्वारा जीव अपने असली घर (हरि के दरबार) में रहने लगता है। जो जीव सच्चे शब्द के स्वर-सूत्र में बँधकर अपना घर खोज लेता है, (नानक उसके दास हैं (अर्थात् उसकी महानता के सम्मुख नत-मस्तक हैं) ॥१॥ म० १ ॥ संसार की चमक-दमक चुँधिया देती है, किन्तु नश्वर है। मेरी उलटी बुद्धि फिर भी मौत को नहीं मानती। मैं कमीना और घटिया हूँ, हे प्रभु, तुम दरिया की तरह उदार और विस्तृत हो। हे दाता, मुझे एक चीज़ (हरिनाम) दो, अन्य विषैली चीज़ें मुझे नहीं भातीं। यह कच्ची मिटी का बर्तन (शरीर) भी पानी से भरा है, यह परमात्मा का ही चमत्कार है। मुझमें सब सामर्थ्य तुम्हारी ही शक्ति से बनता है (गुरु) नानक तुम्हारे द्वार का कुत्ता है, तुम्हारे प्रति वफ़ादारी से भरा मस्त है, यह मस्ती भी नित्य बढ़ती है। हे परमात्मा, यह दुनिया आग के समान तप्त है और तुम्हारा नाम शीतल है ॥ २ ॥ पउड़ी नवी म० ५ ॥ (यह पउड़ी छंद गुरु अर्जुनदेव ने स्वयं इस वार में जोड़ा है। अन्य पउड़ियाँ म० १ गुरु नानकदेव की हैं।) सब परमात्मा की ही लीला है, इसका बखान भी

लीला-रूप में ही होता है। उस परब्रह्म परमेश्वर को गुरु के द्वारा ही जाना जाता है। शब्द रूपी शंखनाद होने से सब विकार दूर हो गए। अनाथ जीवों का भी सत्संगति में आकर उद्धार हो गया। परमात्मा का स्मरण करके सब आनन्द प्राप्त हुए। संसार में ही प्रभु-कृपा का वरद हस्त मिल गया। वह स्वयं कृपा करके अपने संग मिला लेता है, (उसकी इसी सामर्थ्य पर) हम क़ुर्बान हैं। गुरु नानक कहते हैं कि जब प्रभु-स्वामी को स्वीकार होता है, वह अपने संग मिला है ॥ २७ ॥

॥ सलोक म० १ ॥ धंनु सु कागदु कलम धंनु धनु भांडा धनु मसु। धनु लेखारी नानका जिनि नामु लिखाइआ सचु ॥ १ ॥ म० १ ॥ आपे पटी कलम आपि उपरि लेखु भि तूं। एको कहीऐ नानका दूजा काहे कू ॥२॥ पउड़ी ॥ तूं आपे आपि वरतदा आपि बणत बणाई। तुधु बिनु दूजा को नही तू रहिआ समाई। तेरी गति मिति तू है जाणदा तुधु कीमति पाई। तू अलख अगोचरु अगमु है गुरमति दिखाई। अंतरि अगिआनु दुखु भरमु है गुर गिआनि गवाई। जिसु क्रिपा करहि तिसु मेलि लैहि सो नामु धिआई। तू करता पुरखु अगंमु है रविआ सभ ठाई। जितु तू लाइहि सचिआ तितु को लगै नानक गुण गाई ॥ २८ ॥ १ ॥ सुधु

॥ सलोक म० १ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि वह काग़ज़, क़लम दवात, स्याही और फिर लिखनेवाला, सब धन्य हैं, जिसने सच्चा नाम लिखा और लिखवाया है ॥ १ ॥ म० १ ॥ हे परमात्मा, तुम स्वयं पट्टी और क़लम हो। पट्टी पर लिखा लेख भी तुम्हारा ही रूप है। गुरु नानक कहते हैं कि तुम्हीं एक सर्वस्व हो, दूसरा क्यों कहा जाय ? ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे प्रभु, तुम सर्वव्यापक हो, तुम्हींने समूची रचना बनाई है। तुम्हारे अलावा दूसरा कोई नहीं है, तुम्हीं सब जगह समाए हो। तुम्हारी गति का अनुमान भी तुम स्वयं ही जानते हो, तुम्हीं सही मूल्य डाल सकते हो। तुम अगम, अगोचर, अलख हो, केवल गुरु-वचनानुसार दीख पड़ते हो। मनुष्य के भीतर अज्ञान, दुःख, भ्रम आदि हैं, जिनका अन्त गुरु के ज्ञान से ही सम्भव होता है। जिस पर तुम्हारी कृपा होती है, वह हरिनाम जपता है और प्रभु में लीन होता है। हे परमात्मा, तुम अगम्य कर्ता (रचयिता) हो, अपनी रचना में सर्वथा सब जगह व्याप्त हो। गुरु नानक कहते हैं कि ऐ सत्यस्वरूप प्रभु, मैं भी तुम्हारा गुण गाया करता हूँ, जहाँ तुम लगाओगे, वहीं लगकर (प्रसन्न रहूँगा) ॥ २८ ॥ १ ॥ सुधु

रागु मलार बाणी भगत नामदेव जीउ की

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सेवीले गोपाल राइ अकुल निरंजन । भगति दानु दीजै जाचहि संत जन ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जांचै घरि दिगदिसै सराइचा बैकुंठ भवन चित्रसाला सपत लोक सामानि पूरीअले । जांचै घरि लछिमी कुआरी चंदु सूरजु दीवड़े कंउतकु कालु बपुड़ा । कोटवालु सुकरासि री । सु ऐसा राजा स्री नरहरी ॥ १ ॥ जांचै घरि कुलालु ब्रहमा चतुरमुखु डांवड़ा जिनि बिस्व संसारु राचीले । जांकै घरि ईसरु बावला जगत गुरू तत सारखा गिआनु भाखीले । पापु पुंनु जांचै डांगीआ दुआरै चित्र गुपतु लेखीआ । धरमराइ परुली प्रतिहारु । सो ऐसा राजा स्री गोपालु ॥ २ ॥ जांचै घरि गण गंधरब रिखी बपुड़े ढाढीआ गावंत आछै । सरब सासत्र बहु रूपीआ अनगरूआ आखाड़ा मंडलीक बोल बोलहि काछे । चउर ढूल जांचै है पवणु । चेरी सकति जीतिले भवणु । अंड टूक जाचै भसमती । सो ऐसा राजा त्रिभवण पती ॥ ३ ॥ जाचै घरि कूरमा पालु सहस्र फनी बासकु सेज वालूआ । अठारह भार बनासपती मालणी छिनवै करोड़ी मेघ माला पाणी हारीआ । नख प्रसेव जाचै सुरसरी । सपत समुंद जांचै घड़थली । एते जीअ जांचै वरतणी । सो ऐसा राजा त्रिभवण धणी ॥ ४ ॥ जांचै घरि निकट वरती अरजनु ध्रू प्रहलादु अंबरीकु नारदु नेजै सिध बुध गण गंधरब बानवै हेला । एते जीअ जांचै हहि घरी । सरब बिआपिक अंतर हरी । प्रणवै नामदेउ तांची आणि । सगल भगत जाचै नीसाणि ॥ ५ ॥ १ ॥

मायातीत एवं कुल-रहित (स्वयंभू) परमात्मा को पूजो । हे दाता, तुम्हारे भक्तजन तुमसे भक्ति का दान माँगते हैं, उन्हें (भक्तिदान) दो ॥१॥ रहाउ ॥ जिसके घर दिशाओं का बना खेमा है (अर्थात् यह दिशाओं से घिरा समूचा दृश्य-लोक जिसका घर है); सृष्टि की समूची चित्रशाला (रंग-रलियाँ) और सातों लोकों में वह एक-समान व्याप्त है । जिसके घर में लक्ष्मी सदा युवती है (ऐश्वर्यशाली), चाँद और सूर्य जिसके दीपक हैं और बेचारा काल जिसकी सेवा में केवल लीला-धारी बना बैठा है । शुक्र (दानवों का गुरु) जिसका कोतवाल है । श्रीहरि (वाहिगुरु) ऐसा

महान राजा है ॥ १ ॥ जिसके घर में कुम्हार का कार्य चार मुंह वाला ब्रह्मा करता है और उसकी आज्ञा से संसार की चीजें बनाता है। जिसके घर में शिव बावला-सा बनकर (विभूति आदि रमाकर) जगत-गुरु बना तत्त्व-ज्ञान (मृत्यु-स्मरण) करवाता है। जिसके द्वार पर पाप-पुण्य के मुनीम चित्रगुप्त चोबदार बने बैठे हैं, प्रलय करनेवाला धर्मराज उसका दरबान है। वह श्रीगोपाल (वाहिगुरु) ऐसा महान राजा है ॥२॥ जिसके घर में गण-गंधर्व तथा बेचारे ऋषि-मुनि स्तुति-गायक चारण हैं। सब शास्त्रों ने लोगों को पथभ्रष्ट करने के लिए एक छोटा अखाड़ा रचा है, जहाँ साधुजन सुन्दर बोली बोलते हैं (अर्थात् शास्त्र-अनुसार जीनेवाले साधुजन भजन-पाठ करते हैं)। जिसके यहाँ स्वयं पवन चँवर डुलाते हैं। भुवन-विजेता सशक्त माया जिसकी चेली है। अण्डे के दोनों टुकड़े अर्थात् पृथ्वी-आकाश उसका चूल्हा है। वह त्रिभुवन-पति (तीनों लोकों का स्वामी परमात्मा) ऐसा महान राजा है ॥ ३ ॥ जिसके घर में कछुवे का पलंग है और सहस्रफणि शेषनाग जिसका सेजबंद है। अठारह भार वनस्पति जिसकी मालिन है और बादलों की असंख्य पंक्तियाँ जिसका पानी भरती हैं। देवनदी गंगा जिसके नाख़ूनों का पसीना-मात्र है। सातों समुद्र जिसकी मटके रखने की जगह है। समस्त जीव उसके विस्तृत घर के सेवक हैं। वह त्रिभुवन का स्वामी ऐसा महान राजा है ॥ ४ ॥ जिसके घर के समीप ही अर्जुन, ध्रुव, प्रह्लाद, अंबरीश, नारद, नेज ऋषि, सिद्ध-बुध एवं बानवे गंधर्व-गण खेलते रहते हैं। जिसके घर में इतने जीव रहते हैं। परमात्मा भीतर ही भीतर सर्व-व्यापक है। नामदेवजी कहते हैं कि वे उसी महान प्रभु की शरण में हैं, जिसकी महानता बताने के लिए संसार के सब भक्तजन निशानियाँ हैं ॥ ५ ॥ १ ॥

॥ मलार ॥ मो कउ तूं न बिसारि तू न बिसारि। तू न बिसारे रामईआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आलावंती इहु भ्रमु जो है मुझ ऊपरि सभ कोपिला। सूदु सूदु करि मारि उठाइओ कहा करउ बाप बीठुला ॥ १ ॥ मूए हूए जउ मुकति देहुगे मुकति न जानै कोइला। ए पंडीआ मो कउ ढेढ कहत तेरी पैज पिछंउडी होइला ॥ २ ॥ तू जु दइआलु क्रिपालु कहीअतु हैं अति भुज भइओ अपारला। फेरि दीआ देहुरा नामे कउ पंडीअन कउ पिछवारला ॥ ३ ॥ २ ॥

हे परमात्मा, मुझे तुम विस्मृत मत करो, मत करो तुम विस्मृत मुझे। हे मालिक, तुम मुझे मत विस्मृत करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ (नामदेवजी को मंदिर से निकाल दिया था, उसी प्रसंग में कहते हैं।) मंदिर वालों को भ्रम

है कि मंदिर उनका है, इसीलिए मुझ पर क्रोध कर रहे हैं। शूद्र-शूद्र कहकर मुझे मार भगाया है, हे पिता परमेश्वर, मैं क्या करूँ ? ॥ १ ॥ मरने पर मुक्ति दोगे भी तो उसे कोई नहीं जानेगा। यह पंडित लोग मुझे नीच कहते हैं, इसमें तुम्हारी ही इज़्ज़त घटती है ॥ २ ॥ तुम्हें जो दयालु, कृपालु कहते हैं, लम्बी भुजाओं वाला कहते हैं, तुमने (ठीक ही) मन्दिर का मुख नामदेव के सम्मुख फिरा दिया, पंडितों को पीठ दी है ॥ ३ ॥ २ ॥

मलार बाणी भगत रविदास जी की

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ नागर जनां मेरी जाति बिखिआत चंमारं। रिदै राम गोबिंद गुन सारं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सुरसरी सलल क्रित बारुनी रे संत जन करत नही पानं। सुरा अपवित्र नत अवर जल रे सुरसरी मिलत नहि होइ आनं ॥ १ ॥ तर तारि अपवित्र करि मानीऐ रे जैसे कागरा करत बीचारं। भगति भागउतु लिखीऐ तिह ऊपरे पूजीऐ करि नमसकारं ॥ २ ॥ मेरी जाति कुटबांढला ढोर ढोवंता नितहि बानारसी आस पासा। अब बिप्र परधान तिहि करहि डंडउति तेरे नाम सरणाइ रविदासु दासा ॥ ३ ॥ १ ॥

हे नगर के रहनेवालो, मेरी जाति लोक-जनित चमार जाति है, किन्तु मेरे हृदय में नित्य प्रभु के गुणों की स्मृति रहती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गंगाजल की बनी शराब भी सन्तजन पान नहीं करते। अपवित्र शराब या कोई अन्य चीज़ गंगा में मिलकर कुछ और नहीं होती, गंगा हो जाती है (वैसे ही मैं तुम्हारा रूप हो गया हूँ) ॥ १ ॥ जैसे ताड़ी का वृक्ष अपवित्र माना जाता है, किन्तु जब वह काग़ज़-रूप में विचाराधीन होता है और लोग उस पर भक्ति-ज्ञान की बातें लिखते हैं, तो वह पूज्य हो जाता है, उसे नमस्कार किया जाता है ॥ २ ॥ मेरी जाति के चमार अब भी बनारस के आस-पास मरे जानवर ढोते हैं। (किन्तु) हे प्रभु, यह तुम्हारी नाम-शरण का ही प्रताप है कि समाज के प्रधान ब्राह्मण भी अब मुझे दण्डवत प्रणाम करते हैं ॥ ३ ॥ १ ॥

॥ मलार ॥ हरि जपत तेऊ जना पदम कवलास पति तास समतुलि नही आन कोऊ। एक ही एक अनेक होइ बिसथरिओ आन रे आन भरपूरि सोऊ ॥ रहाउ ॥ जा कै

भागवतु लेखीऐ अवरु नही पेखीऐ तास की जाति आछोप छीपा। बिआस महि लेखीऐ सनक महि पेखीऐ नाम की नामना सपत दीपा ॥ १ ॥ जा कै ईदि बकरीदि कुल गऊ रे बधु करहि मानीअहि सेख सहीद पीरा। जा कै बाप वैसी करी पूत ऐसी सरी तिहू रे लोक परसिध कबीरा ॥ २ ॥ जा के कुटंब के ढेढ सभ ढोर ढोवंत फिरहि अजहु बंनारसी आस पासा। आचार सहित बिप्र करहि डंडउति तिन तनै रविदास दासान दासा ॥ ३ ॥ २ ॥

परमात्मा को जपते हैं, वाहिगुरु (कमला-पति) के चरणों का पूजन करते हैं, उसके बराबर अन्य कोई नहीं। वही एक अनेक होकर सब ओर प्रसरित है। उस एक को ही हृदय में धारण करो ॥ रहाउ ॥ जिसके घर हरि-गुण गाया जाता है, भागवत की कथा चलती है, और वहाँ कुछ नहीं दिखता, उसकी जाति अछूत छींबा (नामदेव) है। व्यास और सनक की रचनाओं में बताई गई हरिनाम की महिमा सप्तद्वीप में प्रसरित है ॥१॥ जिसके ईद-बकरीद के पर्वों पर गो-वध होता था और जो शेख, पीर आदि को मानते थे। जिसका बाप यह सब करता था, किन्तु पुत्र ने वह किया कि वह कबीर-रूप में तीनों लोकों में प्रसिद्ध हो गया ॥ २ ॥ जिसके कुटुंब के नीचजन आज भी बनारस के आस-पास मरे पशुओं को उठाते फिरते हैं। उसी कुटुंब के दासों के दास रविदास को आज उच्च आचारयुक्त ब्राह्मण भी दण्डवत प्रणाम करते हैं ॥ ३ ॥ २ ॥

मलार

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ मिलत पिआरो प्रान नाथु कवन भगति ते। साध संगति पाई परम गते ॥ रहाउ ॥ मैले कपरे कहा लउ धोवउ। आवैगी नीद कहा लगु सोवउ ॥१॥ जोई जोई जोरिओ सोई सोई फाटिओ। झूठै बनजि उठि ही गई हाटिओ ॥ २ ॥ कहु रविदास भइओ जब लेखो। जोई जोई कीनो सोई सोई देखिओ ॥ ३ ॥ १ ॥ ३ ॥

मेरे प्यारे स्वामी, किस प्रकार की भक्ति से मिलते हो। सत्संगति में ही मुझे परमगति मिली है (अर्थात् सर्वोत्तम भक्ति सत्संगति में साधु-सेवा ही है) ॥ रहाउ ॥ मैले कपड़े कहाँ तक धोऊँगा ? निद्रा तो आएगी, किन्तु कहाँ तक सोऊँगा (कपड़े धोना = परनिन्दा करना,

साधुसंगति में पर-निन्दा छूट गई है और अज्ञानता की निद्रा टूट गई है) ॥१॥ जो जो कुकर्म करके पापों का बही-खाता तैयार किया था, वह फट गया है। झूठे व्यापार की दूकान ही बन्द हो गई है ॥ २ ॥ रविदास कहते हैं कि हिसाब की पड़ताल के समय वे ही लेख सामने आते हैं; जो किए होते हैं, वे ही दीख पड़ते हैं ॥ ३ ॥ १ ॥ ३ ॥

रागु कानड़ा चउपदे महला ४ घरु १

१ ओं सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥

मेरा मनु साध जनां मिलि हरिआ। हउ बलि बलि बलि बलि साध जनां कउ मिलि संगति पारि उतरिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि हरि क्रिपा करहु प्रभ अपनी हम साध जनां पग परिआ। धनु धनु साध जिन हरि प्रभु जानिआ मिलि साधू पतित उधरिआ ॥ १ ॥ मनूआ चलै चलै बहु बहु बिधि मिलि साधू वसगति करिआ। जिउं जलतंतु पसारिओ बधकि ग्रसि मीना वसगति खरिआ ॥ २ ॥ हरि के संत संत भल नीके मिलि संत जना मलु लहीआ। हउमै दुरतु गइआ सभु नीकरि जिउ साबुनि कापरु करिआ ॥ ३ ॥ मसतकि लिलाटि लिखिआ धुरि ठाकुरि गुर सतिगुर चरन उरधरिआ। सभु दालदु दूख भंज प्रभु पाइआ जन नानक नामि उधरिआ ॥४॥१॥

साधुजनों को मिलकर मेरा मन प्रफुल्लित हो जाता है। मैं साधुजनों पर बार-बार बलिहार जाता हूँ, जिनकी संगति में मेरा उद्धार निहित है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु ने हम पर विशेष कृपा की है, जो हम साधुजनों के चरणों में आ सके हैं। वे साधुजन धन्य हैं, जिन्होंने हरि-प्रभु को पहचाना है, साधुजनों को मिलकर पतित जनों का भी उद्धार होता है ॥१॥ मनुष्य का मन चलायमान है, अनेक प्रकार से चंचल है; साधुजनों की संगति में मन भी इस प्रकार वश में आ जाता है, जैसे शिकारी द्वारा जल में फेंकी डोरी के खाद्य को निगलकर मछली वश में आ जाती है ॥ २ ॥ परमात्मा के सन्त बड़े भले और श्रेष्ठ हैं, उनके मिलाप से मलिनता दूर होती है। अहम् का भाव और पाप की प्रवृत्ति ऐसे निकल जाते हैं, जैसे कपड़े को

साबुन से धो लिया हो ॥ ३ ॥ परमात्मा ने यदि शुरू से ही हमारे भाग्य में लिखा हो, तभी कोई जीव सतिगुरु के चरणों में तल्लीन होता है। गुरु नानक कहते हैं, तब प्रभु-नाम से जीव की मुक्ति होती है और उसे दु:खों-दरिद्रता को दूर करनेवाला परमात्मा मिल जाता है ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ कानड़ा महला ४ ॥ मेरा मनु संत जना पग रेन। हरि हरि कथा सुनी मिलि संगति मनु कोरा हरि रंगि भेन ॥१॥ रहाउ ॥ हम अचित अचेत न जानहि गति मिति गुरि कीए सुचित चितेन। प्रभि दीन दइआलि कीओ अंगीक्रितु मनि हरि हरि नामु जपेन ॥ १ ॥ हरि के संत मिलहि मन प्रीतम कटि देवउ हीअरा तेन। हरि के संत मिले हरि मिलिआ हम कीए पतित पवेन ॥ २ ॥ हरि के जन ऊतम जगि कहीअहि जिन मिलिआ पाथर सेन। जन की महिमा बरनि न साकउ ओइ ऊतम हरि हरि केन ॥ ३ ॥ तुम्ह हरि साह वडे प्रभ सुआमी हम वणजारे रासि देन। जन नानक कउ दइआ प्रभ धारहु लदि वाखरु हरि हरि लेन ॥ ४ ॥ २ ॥

मेरा मन सन्तजनों की चरण-धूलि बना है। सत्संगति में रहकर मैंने जब हरि-कथा सुनी, तो मेरा कोरा, शुष्क मन भी हरि-रंग में भीग गया ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हम तो बेख़बर गँवार थे, प्रभु की गति नहीं जानते थे, गुरु ने हमें ज्ञान-चक्षु दिया, जिससे हमें वास्तविक चेतना हुई। दीन-दयालु प्रभु ने अंगीकार किया और मन हरिनाम जपने में लीन हो सका ॥ १ ॥ हरि के सन्तों की संगति में मन प्रभु का अनुभव करता और हृदय के त्रयताप से छूट जाता है। प्रभु के सन्तों का मिलन हरि-मिलन के ही समान है, हमसे पतित भी वहाँ पावन हो जाते हैं ॥ २ ॥ हरि के भक्त श्रेष्ठ हैं, जिनकी संगति में पत्थर भी भीग जाते हैं (अर्थात् घोर पापियों पर भी प्रभु-नाम का प्रभाव पड़ता है)। भक्तों की महिमा वर्णन नहीं की जा सकती, उनको स्वयं हरि ने श्रेष्ठता प्रदान की होती है ॥ ३ ॥ हे हरि, तुम बड़े श्रेष्ठ और हमारे स्वामी हो, हम व्यापारी हैं, हमें व्यापार के लिए राशि दीजिए। गुरु नानक कहते हैं कि यदि तुम्हारी दया हो जाय, तो हम हरिनाम का भरपूर सौदा कर लेंगे ॥४॥२॥

॥ कानड़ा महला ४ ॥ जपि मन राम नाम परगास। हरि के संत मिलि प्रीति लगानी विचे गिरह उदास ॥१॥ रहाउ॥ हम हरि हिरदै जपिओ नामु नरहरि प्रभि क्रिपा करी किरपास। अनदिनु अनदु भइआ मनु बिगसिआ उदम भए मिलन की

आस ।। १ ।। हम हरि सुआमी प्रीति लगाई जितने सास लीए हम ग्रास । किलबिख दहन भए खिन अंतरि तूटि गए माइआ के फास ।। २ ।। किआ हम किरम किआ करम कमावहि मूरख मुगध रखे प्रभ तास । अवगनीआरे पाथर भारे सतसंगति मिलि तरे तरास ।। ३ ।। जेती स्रिसटि करी जगदीसरि ते सभि ऊच हम नीच बिखिआस । हमरे अवगुन संगि गुर मेटे जन नानक मेलि लीए प्रभ पास ।। ४ ।। ३ ।।

ऐ मन, परमालोकित रामनाम का जाप करो। हरि के सन्तों के संग मिलकर हरि में प्रीति बनाओ और गृहस्थी में ही उदास (अनासक्त) बने रहो ।। १ ।। रहाउ ।। हमने जब हृदय में प्रभु का नाम जपा, तो कृपालु प्रभु ने हम पर कृपा की। रात-दिन मन में आनन्द छाया रहने लगा, मन प्रभु-नाम के उद्यम में तथा परमात्मा को मिलने की आशा में तल्लीन हुआ ।। १ ।। जितने साँस हमने लिये या जितने ग्रास भोजन किया, हमारी प्रीति निरन्तर हरि में लगी रही। हमारे समस्त पाप क्षण-भर में धुल गए और माया के फंदे टूट गए ।। २ ।। क्या तो हम कृमि-जैसी हस्ती के जीव और क्या हम कर्म करते हैं (अर्थात् हम निम्नतम जीव होकर भी मंदे कर्म करते हैं), तो भी हम मूर्ख-गँवारों की रक्षा वह प्रभु करता है। अवगुणपूर्ण हम भारी पत्थर के समान हैं, केवल सत्संगति में मिलकर ही संसार-सागर से पार हो सकते हैं ।। ३ ।। जितनी भी सृष्टि जगदीश्वर ने बनाई है, वह ऊँची है, और हम विषय-विकारों में फँसे नीच जन हैं। गुरु नानक कहते हैं कि जब गुरु की संगति में हमारे अवगुण मिट जाते हैं, तो हमें वह प्रभु अपने संग मिला लेता है ।। ४ ।। ३ ।।

।। कानड़ा महला ४ ।। मेरै मनि राम नामु जपिओ गुरवाक । हरि हरि क्रिपा करी जगदीसरि दुरमति दूजा भाउ गइओ सभ झाक ।। १ ।। रहाउ ।। नाना रूप रंग हरि केरे घटि घटि रामु रविओ गुपलाक । हरि के संत मिले हरि प्रगटे उघरि गए बिखिआ के ताक ।। १ ।। संत जना की बहुतु बहु सोभा जिन उरिधारिओ हरि रसिक रसाक । हरि के संत मिले हरि मिलिआ जैसे गऊ देखि बछराक ।। २ ।। हरि के संत जना महि हरि हरि ते जन ऊतम जनक जनाक । तिन हरि हिरदै बासु बसानी छूटि गई मुसकी मुसकाक ।। ३ ।। तुम्हरे जन तुम्ह ही प्रभ कीए हरि राखि लेहु आपन अपनाक । जन नानक के सखा हरि भाई मात पिता बंधप हरि साक ।। ४ ।। ४ ।।

ऐ मेरे मन, गुरु-कथनानुसार हरिनाम का जाप करो। मेरे जगदीश्वर हरि ने मुझ पर कृपा की है, जिससे मेरा द्वैत-भाव तथा दुर्मति पूर्ण दृष्टि से दूर हो गए हैं॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि के अनेक रंग-आकार दृश्यमान हैं और वह घट-घट में अदृश्य भी विराजता है। किन्तु हरि के सन्तों की संगति मिल जाने से हरि प्रकट होता और विषय-विकारों के द्वार टूट जाते हैं॥ १ ॥ सन्तजनों की बड़ी शोभा (महिमा) है, जो उन्होंने प्रेमपूर्वक आनन्द-रूप हरि को हृदय में धारण किया है। हरि के सन्तों को मिलने से हरि ऐसे मिल जाता है, जैसे गाय बछड़े को देखकर (उसके निकट आ मिलती है) ॥ २ ॥ हरि के सेवकों में ही हरि विराजता है, हरि के सेवक उत्तम जनों से भी उत्तम हैं। हृदय में उस प्रभु की सुवास भरती है, तो विषय-विकारों की दुर्गन्ध छूट जाती है॥ ३ ॥ हे मालिक, हम तो तुम्हारे दास हैं, तुम्हारी ही सृष्टि हैं, हमें अपना बनाकर संरक्षण दो। दास नानक के मित्र, भाई, माता-पिता और सम्बन्धी, सब हरि स्वयं है॥ ४ ॥ ४ ॥

॥ कानड़ा महला ४ ॥ मेरे मन हरि हरि राम नामु जपि चीति। हरि हरि वसतु माइआ गढ़ि वेढ़ी गुर कै सबदि लीओ गड़ु जीति ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मिथिआ भरमि भरमि बहु भ्रमिआ लुबधो पुत्र कलत्र मोह प्रीति। जैसे तरवर की तुछ छाइआ खिन महि बिनसि जाइ देह भीति ॥ १ ॥ हमरे प्रान प्रीतम जन ऊतम जिन मिलिआ मनि होइ प्रतीति। परचै रामु रविआ घट अंतरि असथिरु रामु रविआ रंगि प्रीति ॥ २ ॥ हरि के संत संत जन नीके जिन मिलिआं मनु रंगि रंगीति। हरि रंगु लहै न उतरै कबहू हरि हरि जाइ मिलै हरि प्रीति ॥३॥ हम बहु पाप कीए अपराधी गुरि काटे कटित कटीति। हरि हरि नामु दीओ मुखि अउखधु जन नानक पतित पुनीति ॥ ४ ॥ ५ ॥

ऐ मेरे मन, नित्य हरि का नाम जपो। हरिनाम की वस्तु को माया के गढ़ में बन्द रखा गया है, गुरु के उपदेशों से उस गढ़ को जीत लो ॥१॥रहाउ॥ अब तक मिथ्या भ्रमों में भटकता रहा, पुत्र-पत्नी की ममत्वपूर्ण प्रीति में आसक्त रहा। जैसे पेड़ की तुच्छ छाया क्षणभंगुर होती है, वैसे ही इस शरीर की दीवार भी (नश्वर) है॥ १ ॥ वे उत्तम जन मेरे प्रणों से भी प्रिय हैं, जिनके मिलने से मन में निश्चय बँधता है। हृदय में विराजित प्रभु प्रसन्न होता है और वह स्थिर हरि प्यार में बँध जाता है॥ २ ॥ हरि के सन्तजन उत्तम हैं, उनके मिलने से मन रंगीन (प्रेमपूर्ण) हो जाता है। ऐसा हरि-रंग चढ़ता है, जो कभी नहीं उतरता

और मन हरि की प्रीति में लीन हो जाता है ॥ ३ ॥ हम अपराधी हैं, अनेक पाप करते हैं, किन्तु गुरु ने उन सबको निरस्त कर दिया है। गुरु नानक कहते हैं कि पतितों को पवित्र बनाने के लिए वह हरिनाम-ओषिध का सेवन करवाता है ॥ ४ ॥ ५ ॥

॥ कानड़ा महला ४ ॥ जपि मन राम नाम जगंनाथ। घूमन घेर परे बिखु बिखिआ सतिगुर काढि लीए दे हाथ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सुआमी अभै निरंजन नरहरि तुम्ह राखि लेहु हम पापी पाथ। काम क्रोध बिखिआ लोभि लुभते कासट लोह तरे संगि साथ ॥ १ ॥ तुम्ह वड पुरख बड अगम अगोचर हम ढूढि रहे पाई नही हाथ। तू परै परै अपरंपरु सुआमी तू आपन जानहि आपि जगंनाथ ॥ २ ॥ अद्रिसटु अगोचर नाम धिआए सतसंगति मिलि साधू पाथ। हरि हरि कथा सुनी मिलि संगति हरि हरि जपिओ अकथ कथ काथ ॥ ३ ॥ हमरे प्रभ जगदीस गुसाई हम राखि लेहु जगंनाथ। जन नानकु दासु दास दासन को प्रभ करहु क्रिपा राखहु जन साथ ॥ ४ ॥ ६ ॥

ऐ मन, जगत के स्वामी का नाम जपो। मिथ्या विषय-विकारों के घेरे में पड़े थे, सतिगुरु ने हाथ देकर वहाँ से निकाल लिया है ॥१॥रहाउ॥ हे अभय, मायातीत, नरसिंह प्रभु, हम पापी पत्थरों की तुम रक्षा करो। हम काम-क्रोध, लोभ-मोह आदि के विषयों में लुब्ध थे, तुमने हमें ऐसे बचा लिया, जैसे लकड़ी की संगति में लोहा भी तैर जाता है ॥ १ ॥ तुम परमपुरूष हो, मन-इन्द्रियों से परे हो, हम तुम्हारी खोज में लगे रहे, किन्तु तुम्हारा सहायक हाथ नहीं पा सके। तुम परे से परे हो, अपार स्वामी हो, तुम जगत के स्वामी हो, अपने को भी तुम्हीं जानते हो ॥ २ ॥ तुम्हें अदृष्ट और अगोचर जानकर जब तुम्हारा नाम जपा तो सत्संगति में मिलकर (तुम तक पहुँचने का) मार्ग पता चला। सत्संगति में हरि की अकथनीय कथा का रस लिया और हरिनाम-जाप किया ॥ ३ ॥ हे हमारे जगदीश्वर प्रभु, हमारी रक्षा करो। दास नानक तो सेवकों के सेवक हैं, हे प्रभु, कृपा करके अपने सेवकों के साथ हमें भी रख लो ॥ ४ ॥ ६ ॥

कानड़ा महला ४ पड़ताल घरु ५

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ मन जापहु राम गुपाल। हरि रतन जवेहर लाल। हरि गुरमुखि घड़ि टकसाल। हरि हो

हो किरपाल ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुमरे गुन अगम अगोचर एक जीह किआ कथै बिचारी राम राम राम राम लाल । तुमरी जी अकथ कथा तू तू तू ही जानहि हउ हरि जपि भई निहाल निहाल निहाल ॥ १ ॥ हमरे हरि प्रान सखा सुआमी हरि मीता मेरे मनि तनि जीह हरि हरे हरे राम नाम धनु माल । जा को भागु तिनि लीओ री सुहागु हरि हरि हरे हरे गुन गावै गुरमति हउ बलि बले हउ बलि बले जन नानक हरि जपि भई निहाल निहाल निहाल ॥ २ ॥ १ ॥ ७ ॥

ऐ मन, प्रभु राम का नाम जपो। हरि का नाम अमूल्य रत्न, जवाहर के समान है। हरिनाम गुरुमुखों की टकसाल में बनता है और प्रभु की कृपा से मिलता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुम्हारे गुण हमारे मन-इन्द्रियों की पहुँच से भी अधिक हैं, ऐ राम, मेरी बेचारी एक जीभ उन सबका बखान क्योंकर कर सकती है ? तुम्हारी कथा अनिर्वचनीय है, वह केवल तुम्हीं जानते हो। मैं तो तुम्हारा नाम जपकर ही निहाल हूँ ॥१॥ हरि मेरा प्राण-सखा, स्वामी, मित्र है, मेरे तन-मन में बसा है और मेरी जीभ नित्य रामनाम-धन का स्मरण करती है। जिनका भाग्य ऊँचा है, उन्हीं को प्रभु-मिलन (सुहाग) प्राप्त है, वह गुरु के उपदेशानुसार प्रभु के गुण गाता है। दास नानक उस पर बलिहार है और हरिनाम जपकर निहाल हो रहा है ॥ २ ॥ १ ॥ ७ ॥

॥ कानड़ा महला ४ ॥ हरि गुन गावहु जगदीस । एका जीह कीचै लख बीस । जपि हरि हरि सबदि जपीस । हरि हो हो किरपीस ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि किरपा करि सुआमी हम लाइ हरि सेवा हरि जपि जपे हरि जपि जपे जपु जापउ जगदीस । तुमरे जन रामु जपहि ते ऊतम तिन कउ हउ घुमि घुमे घुमि घुमि जीस ॥ १ ॥ हरि तुम वड वडे वडे वड ऊचे सो करहि जि तुधु भावीस । जन नानक अंम्रितु पीआ गुरमती धनु धंनु धनु धंनु धंनु गुरू साबीस ॥ २ ॥ २ ॥ ८ ॥

ऐ मन, जगदीश्वर का गुण-गान करो। एक जीभ को बीसों लाख बनाकर नित्य जपने योग्य हरि का परम नाम जपते रहो। परमात्मा की कृपा होगी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परमात्मा ने कृपा करके हमें अपनी सेवा में स्वीकार कर लिया है और हम नित्य उसका नाम जप-जपकर सुखी हैं। हे प्रभु, तुम्हारे सेवक, जो नित्य तुम्हारा नाम जपते हैं, मैं उन पर क़ुर्बान जाता हूँ ॥ १ ॥ हे दाता, तुम बड़े, बहुत बड़े हो; जो तुम्हें रुचता है, वही

करते हो। गुरु नानक कहते हैं कि हमने गुरु के उपदेश से नामामृत का पान किया है; वह गुरु धन्य है, उसकी ही महिमा है॥ २॥ २॥ ८॥

॥ कानड़ा महला ४॥ भजु रामो मनि राम। जिसु रूप न रेख वडाम। सत संगति मिलु भजु राम। बड हो हो भाग मथाम॥ १॥ रहाउ॥ जितु ग्रिहि मंदरि हरि होतु जासु तितु घरि आनदो आनंदु भजु राम राम राम। राम नाम गुन गावहु हरि प्रीतम उपदेसि गुरू गुर सतिगुरा सुखु होतु हरि हरे हरि हरे हरे भजु राम राम राम॥१॥ सभ सिसटि धार हरि तुम किरपाल करता सभु तू तू तू राम राम राम। जन नानको सरणागती देहु गुरमती भजु राम राम राम॥ २॥ ३॥ ९॥

हे मन, नित्य राम ही राम भजो। वह राम, जिसका कोई रूप-आकार नहीं, जो सबसे बड़ा है। सत्संगति में मिलकर राम का नाम भजो, तुम भी बड़े होगे, तुम्हारा भाग्य जाग्रत् होगा॥ १॥ रहाउ॥ जिस घर या मकान में हरि का यशोगान होता है, उस घर में नित्य आनन्द ही आनन्द होता है, इसलिए राम-नाम का भजन करो। गुरु के उपदेशानुसार अपने हरि-प्रियतम के गुण गाओ, यही सुख का हेतु है। राम-नाम का भजन करो॥ १॥ हे प्रभु, तुम समूची सृष्टि के धारक और कर्ता हो, तुम्हीं सर्वस्व हो; हे मेरे राम, तुम कृपालु हो। दास नानक कहते हैं कि जो गुरु-मतानुसार तुम्हारा भजन करते हैं, तुम उन्हें शरण देते हो; अतः नित्य राम-नाम का भजन करो॥ २॥ ३॥ ९॥

॥ कानड़ा महला ४॥ सतिगुर चाटउ पग चाट। जितु मिलि हरि पाधर बाट। भजु हरि रसु रस हरि गाट। हरि हो हो लिखे लिलाट॥ १॥ रहाउ॥ खट करम किरिआ करि बहु बहु बिसथार सिध साधिक जोगीआ करि जट जटा जट जाट। करि भेख न पाईऐ हरि ब्रहम जोगु हरि पाईऐ सतसंगती उपदेसि गुरू गुर संत जना खोलि खोलि कपाट॥१॥ तू अपरंपरु सुआमी अति अगाहु तू भरपुरि रहिआ जल थले हरि इकु इको इक एकै हरि थाट। तू जाणहि सभ बिधि बूझहि आपे जन नानक के प्रभ घटि घटे घटि घटे घटि हरि घाट॥ २॥ ४॥ १०॥

सतिगुरु के चरण चूमो, जिससे हरि तक जानेवाला सीधा मार्ग मिलता है। हरिनाम का भजन करो, हरि-रस को गट-गट पी जाओ।

यदि तुम्हारे मस्तक पर लेख है (तुम्हारे भाग्य में है) तो हरिनाम का यश गाओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ षट्कर्म तथा अन्य क्रिया-काण्ड कर-करके सब सिद्धों, साधकों और योगियों ने वृत्ति का लौकिक प्रसार किया है और (बाहरी आडम्बर के नाते) जटा-जूट बढ़ा रखे हैं। वेषाडम्बर से प्रभु नहीं मिलता, हरिब्रह्म को गुरु के उपदेश तथा सत्संगति में पाया जाता है; (सत्संगति में) गुरु और सन्तजन मन के द्वार खोल-खोलकर ब्रह्म के रहस्य को समझाते हैं ॥ १ ॥ हे प्रभु, तुम अपरंपार, अथाह स्वामी हो, जल-थल सब जगह पूरी तरह समाए हुए हो। वही एक सर्वथा सुयोग्य है, यह समूची रचना उसी की है। हे दास नानक के स्वामी, तुम स्वयं सब जानते और जनाते हो, सब घट-घट में बसे हुए हो ॥ २ ॥ ४ ॥ १० ॥

॥ कानड़ा महला ४ ॥ जपि मन गोबिद माधो। हरि हरि अगम अगाधो। मति गुरमति हरि प्रभु लाधो। धुरि हो हो लिखे लिलाधो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बिखु माइआ संचि बहु चितै बिकार सुखु पाईऐ हरि भजु संत संत संगती मिलि सतिगुरू गुरु साधो। जिउ छुहि पारस मनूर भए कंचन तिउ पतित जन मिलि संगती सुध होवत गुरमती सुध हाधो ॥ १ ॥ जिउ कासट संगि लोहा बहु तरता तिउ पापी संगि तरे साध साध संगती गुर सतिगुरू गुर साधो। चारि बरन चारि आस्रम है कोई मिलै गुरू गुर नानक सो आपि तरै कुल सगल तराधो ॥२॥५॥११॥

हे मन, परमात्मा (गोविन्द-माधो) का नाम जपो। हरि परम अगाध है। गुरु के उपदेश से ही हरि-प्रभु प्राप्त होना है, (किन्तु उसी को मिलता है) जिसके भाग्य में शुरू से ही उपलब्धि का लेख लिखा होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ विष रूपी माया का संचय करने से चित्त में अनेक विकार उत्पन्न होते हैं, सत्संगति में रहकर हरि का भजन करने से सुख मिलता है, इसलिए सच्चे गुरु की साधना करो। जिस प्रकार लोहा पारस से छूटकर कंचन हो जाता है, वैसे ही सत्संगति में शोधक गुरुमति को पाकर परम पतित जीव भी शुद्ध हो जाता है ॥ १ ॥ जैसे लकड़ी के साथ लोहा तैर जाता है, वैसे ही पापी लोग साधु-संगति में गुरु के सेवकों के संग तर जाते है। चार वर्णों या चार आश्रमों में से जो भी काई गुरु की संगति में आता है, गुरु नानक का कथन है कि वह स्वयं तो संसार-सागर से पार होता ही है, अपने कुल को भी तरा लेता है ॥ २ ॥ ५ ॥ ११ ॥

॥ कानड़ा महला ४ ॥ हरि जसु गावहु भगवान। जसु गावत पाप लहान। मति गुरमति सुनि जसु कान। हरि

हो हो किरपान ।। १ ।। रहाउ ।। तेरे जन धिआवहि इक मनि इक चित ते साधू सुख पावहि जपि हरि हरि नामु निधान । उसतति करहि प्रभ तेरीआ मिलि साधू साध जना गुर सतिगुरू भगवान ।। १ ।। जिन कै हिरदै तू सुआमी ते सुखफल पावहि ते तरे भव सिंधु ते भगत हरि जान । तिन सेवा हम लाइ हरे हम लाइ हरे जन नानक के हरि तू तू तू तू तू भगवान ।। २ ।। ६ ।। १२ ।।

ऐ लोगो, हरि का यश गाओ । हरि का यश गाने से सब पाप धुल जाते हैं । गुरु के उपदेशानुसार प्रभु का यश अपने कानों से सुनो, प्रभु कृपानिधि कृपा करेंगे ।। १ ।। रहाउ ।। ऐ प्रभु, तुम्हारे सेवक नित्य एकाग्र-चित्त होकर मन में तुम्हारा ध्यान करते हैं, जो साधु गुरुमति से (प्रेरित होकर) तेरे सुखागार नाम को जपते हैं, वे सुख पाते हैं । गुरु के सम्पर्क में आकर साधुजन नित्य परमात्मा की स्तुति करते हैं ।। १ ।। ऐ स्वामी, जिनके हृदय में तुम्हारा निवास है, वे शुभ कर्मफल प्राप्त करते और हरि-भक्तों के संग संसार-सागर से तिर जाते हैं । उसी ने हमें सेवा-रत किया है, गुरु नानक का कथन है कि प्रभु स्वयं हमें सेवा में रत कर लेता है ।। २ ।। ६ ।। १२ ।।

कानड़ा महला ५ घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। गाईऐ गुण गोपाल क्रिपानिधि । दुख बिदारन सुखदाते सतिगुर जाकउ भेटत होइ सगल सिधि ।। १ ।। रहाउ ।। सिमरत नामु मनहि साधारै । कोटि पराधी खिन महि तारै ।। १ ।। जाकउ चीति आवै गुरु अपना । ताकउ दूखु नही तिलु सुपना ।। २ ।। जाकउ सतिगुरु अपना राखै । सो जनु हरि रसु रसना चाखै ।। ३ ।। कहु नानक गुरि कीनी मइआ । हलति पलति मुख ऊजल भइआ ।।४।।१।।

कृपा-निधि परमात्मा के गुण गाओ । वह दुःखों को दूर करनेवाला और सुखदाता है, वही सतिगुरु है जिससे भेंट होने मात्र से समस्त सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं ।। १ ।। रहाउ ।। जो जीव मन में उसी का आश्रय ग्रहण करता और हरिनाम स्मरण करता है, उसके करोड़ों पाप वह क्षण में धो डालता है ।। १ ।। जिसके मन में गुरु की याद बनी रहती है, उसे तिल बराबर भी दुःख नहीं होता ।। २ ।। जिसको सतिगुरु का संरक्षण प्राप्त

है, वह जीव नित्य जिह्वा द्वारा हरि-रस का पान करता है ।। ३ ।। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु ने दया की तो इहलोक-परलोक सब जगह जीव का मुख उज्ज्वल हो गया ।। ४ ।। १ ।।

।। कानड़ा महला ५ ।। आराधउ तुझहि सुआमी अपने । ऊठत बैठत सोवत जागत सासि सासि सासि हरि जपने ।। १ ।। रहाउ ।। ताकै हिरदै बसिओ नामु । जाकउ सुआमी कीनो दानु ।। १ ।। ताकै हिरदै आई सांति । ठाकुर भेटे गुर बचनांति ।। २ ।। सरब कला सोई परबीन । नाम मंत्रु जाकउ गुरि दीन ।। ३ ।। कहु नानक ताकै बलि जाउ । कलिजुग महि पाइआ जिनि नाउ ।। ४ ।। २ ।।

हे मेरे स्वामी, मैं तो तुम्हारी ही आराधना करता हूँ; उठते-बैठते, सोते-जगते, श्वास-श्वास हरिनाम जपता हूँ ।। १ ।। रहाउ ।। उस जन के हृदय में हरिनाम बसता है, जिसे स्वयं स्वामी प्रदान करता है ।। १ ।। उस जीव के मन में शांति आती है, जो गुरु के उपदेशानुसार स्वामी से भेंट करता है ।। २ ।। वही जीव सर्वकला-प्रवीण होता है, जिसे गुरु ने नाम-मन्त्र प्रदान किया होता है ।। ३ ।। गुरु नानक कहते हैं कि मैं तो उस पर बलिहार हूँ, जिसने कलियुग में हरिनाम-वैभव को पा लिया है ।। ४ ।। २ ।।

।। कानड़ा महला ५ ।। कीरति प्रभ की गाउ मेरी रसनां । अनिक बार करि बंदन संतन ऊहां चरन गोबिंद जी के बसना ।। १ ।। रहाउ ।। अनिक भांति करि दुआरु न पावउ । होइ क्रिपालु त हरि हरि धिआवउ ।। १ ।। कोटि करम करि देह न सोधा । साध संगति महि मनु परबोधा ।। २ ।। त्रिसन न बूझी बहु रंग माइआ । नामु लैत सरब सुख पाइआ ।। ३ ।। पारब्रहम जब भए दइआल । कहु नानक तउ छूटे जंजाल ।। ४ ।। ३ ।।

ऐ मेरी जिह्वा, प्रभु की कीर्ति का गान करो । बार-बार सन्तों की वन्दना करो, प्रभु के चरण वहीं बसते हैं ।। १ ।। रहाउ ।। अनेक उद्यम करने पर भी परमात्मा का द्वार नहीं मिलता, किन्तु जब उसकी अपनी कृपा होती है, तो जीव एकदम हरि-नाम की आराधना करने लगता है ।। १ ।। करोड़ों (आडम्बरपूर्ण) कर्म करने से देह शुद्ध नहीं होती, किन्तु सत्संगति में मन को ज्ञान प्राप्त होता है ।। २ ।। माया के अनेक-रंगी धन्धों में पड़े रहने से तृष्णा नहीं बुझती, हरि-नाम जपने से

समस्त सुख हस्तामलक होते हैं ।। ३ ।। परब्रह्म की जब दया हो जाती है, गुरु नानक कहते हैं कि तभी लौकिक जंजाल से मुक्ति मिलती है ।। ४ ।। ३ ।।

।। कानड़ा महला ५ ।। ऐसी मांगु गोबिद ते । टहल संतन की संगु साधू का हरि नामां जपि परमगते ।। १ ।। रहाउ ।। पूजा चरना ठाकुर सरना । सोई कुसलु जु प्रभ जीउ करना ।। १ ।। सफल होत इह दुरलभ देही । जाकउ सतिगुरु मइआ करेही ।।२।। अगिआन भरमु बिनसै दुख डेरा । जाकै ह्रिदै बसहि गुर पैरा ।। ३ ।। साध संगि रंगि प्रभु धिआइआ । कहु नानक तिनि पूरा पाइआ ।। ४ ।। ४ ।।

मैं परमात्मा से ऐसी याचना करता हूँ कि मैं सन्तों की सेवा में रहकर हरि-नाम की आराधना करूँ और परमगति को पाऊँ ।। १ ।। रहाउ ।। प्रभु-चरणों का पूजन एवं स्वामी की शरण ग्रहण करो; जो परमात्मा करता है, उसी में सबकी कुशल है ।। १ ।। जिस पर सतिगुरु की दया होती है, उसका देह-धारण का दुर्लभ लक्ष्य सम्पन्न हो जाता है ।। २ ।। उस जीव का अज्ञान और भ्रम सब दूर हो जाते हैं, जिसके हृदय में पूर्णगुरु बसता है ।। ३ ।। गुरु नानक कहते हैं कि जो साधु-संगति के रंग में प्रभु का भजन करता है, वह पूर्णब्रह्म को प्राप्त कर लेता है ।। ४ ।। ४ ।।

।। कानड़ा महला ५ ।। भगति भगतन हूं बनि आई । तन मन गलत भए ठाकुर सिउ आपन लीए मिलाई ।। १ ।। रहाउ ।। गावनहारी गावै गीत । ते उधरे बसे जिह चीत ।। १ ।। पेखे बिंजन परोसनहारै । जिह भोजनु कीनो ते त्रिपतारै ।। २ ।। अनिक स्वांग काछे भेखधारी । जैसो सा तैसो द्रिसटारी ।। ३ ।। कहन कहावन सगल जंजार । नानक दास सचु करणी सार ।। ४ ।। ५ ।।

भक्ति भक्तों को ही शोभती है । उनका तन-मन अपने स्वामी में लीन होता है, वे प्रभु में ही विलीन हो जाते हैं ।। १ ।। रहाउ ।। यों तो सब प्रभु के गीत गाते हैं, किन्तु उद्धार उसी का होता है, जिसके हृदय में हरि-प्रभु का वास होता है ।। १ ।। भोजन परोसनेवाला सब व्यंजनों को देखता है, किन्तु तृप्ति खानेवाले को ही मिलती है ।। २ ।। वेषाडम्बरी अनेक स्वाँग रचता है, किन्तु वास्तविक तो अलग ही नजर आता

है ॥ ३ ॥ कहने-कहाने की बातें तो जंजाल हैं, गुरु नानक कहते हैं, सच्ची करनी ही सार-तत्त्व है ॥ ४ ॥ ५ ॥

॥ कानड़ा महला ५ ॥ तेरो जनु हरि जसु सुनत उमाहिओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनहि प्रगासु पेखि प्रभ की सोभा जत कत पेखउ आहिओ ॥ १ ॥ सभ ते परै परै ते ऊचा गहिर गंभीर अथाहिओ ॥ २ ॥ ओति पोति मिलिओ भगतन कउ जन सिउ परदा लाहिओ ॥ ३ ॥ गुर प्रसादि गावै गुण नानक सहज समाधि समाहिओ ॥ ४ ॥ ६ ॥

हरि का (तुम्हारा) सेवक हरि का यशोगान सुनकर प्रसन्न होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु की कीर्ति देखकर मन में उजाला होता है और फिर जिधर दृष्टि उठती है, वही दीख पड़ने लगता है ॥१॥ परमात्मा सबसे परे, ऊँचा, गहिर-गम्भीर है, वह गहन भी है ॥ २ ॥ वह अपने भक्तों को पूर्णतः प्राप्त है, अपने सेवकों से कोई आवरण नहीं रखता ॥३॥ गुरु नानक कहते हैं कि गुरु की कृपा से ही जीव परमात्मा के गुण गाता और सहज समाधि में लीन होता है ॥ ४ ॥ ६ ॥

॥ कानड़ा महला ५ ॥ संतन पहि आपि उधारन आइओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दरसन भेटत होत पुनीता हरि हरि मंत्रु द्रिड़ाइओ ॥ १ ॥ काटे रोग भए मन निरमल हरि हरि अउखधु खाइओ ॥ २ ॥ असथित भए बसे सुख थाना बहुरि न कतहू धाइओ ॥ ३ ॥ संत प्रसादि तरे कुल लोगा नानक लिपत न माइओ ॥ ४ ॥ ७ ॥

परमात्मा जीवों को तारने के लिए स्वयं सन्तों के पास आता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उसके दर्शनों से पावनता मिलती है और हरि-मन्त्र दृढ़ होता है ॥ १ ॥ हरि-ओषधि के सेवन से सब रोग कट जाते हैं, मन निर्मल हो जाता है ॥ २ ॥ (तब जीव) स्थिरचित्त हो एक ही जगह रम जाता है, इधर-उधर नहीं भटकता ॥ ३ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि सन्तों की कृपा से ही जीव संसार-सागर से तिरते हैं, उनमें माया का लेश भी नहीं रह जाता ॥ ४ ॥ ७ ॥

॥ कानड़ा महला ५ ॥ बिसरि गई सभ ताति पराई । जब ते साधसंगति मोहि पाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ना को बैरी नही बिगाना सगल संगि हम कउ बनि आई ॥ १ ॥ जो प्रभ

कीनो सो भल मानिओ एह सुमति साधू ते पाई ।। २ ।। सभ महि रवि रहिआ प्रभु एकै पेखि पेखि नानक बिगसाई ।। ३ ।। ८ ।।

जबसे मैंने साधुओं का पावन दर्शन पाया है, दूसरों को देखकर उपजनेवाली सब ईर्ष्या नष्ट हो गई है ।। १ ।। रहाउ ।। अब हमारा कोई वैरी या बेगाना नहीं रह गया है, अब हमारी सबसे बनने लगी है ।।१।। परमात्मा जो करता है, अब मुझे सत्संगति में ऐसी सूझ मिली है कि मैं उसे भला ही मानता हूँ ।। २ ।। वह प्रभु सबमें व्याप्त है, गुरु नानक कहते हैं कि यही देख-देखकर मुझे हर्ष होता है ।। ३ ।। ८ ।।

।। कानड़ा महला ५ ।। ठाकुर जीउ तुहारो परना । मानु महतु तुम्हारै ऊपर तुम्हरी ओट तुम्हारी सरना ।। १ ।। रहाउ ।। तुम्हरी आस भरोसा तुम्हरा तुमरा नामु रिदै लै धरना । तुमरो बलु तुम संगि सुहेले जो जो कहहु सोई सोई करना ।। १ ।। तुमरी दइआ मइआ सुखु पावउ होहु क्रिपाल त भउजलु तरना । अभै दानु नामु हरि पाइओ सिरु डारिओ नानक संत चरना ।। २ ।। ९ ।।

हे ठाकुरजी, हे स्वामी, तुम्हारा ही आश्रय है । तुम्हारा ही मान-महत्त्व है, तुम्हारी ओट है, हम तुम्हारी ही शरण में हैं ।। १ ।। रहाउ ।। हमें एकमात्र तुम्हारी आशा है, तुम्हारा भरोसा है और हम तुम्हारा ही नाम हृदय में धारण करते हैं । तुम्हीं हमारा बल हो, तुम्हारे संग हमें निश्चिन्तता है; जो भी तुम कहो, वही हमें करना है ।। १ ।। तुम्हारी ही दया और प्यार से हमें सुख मिलता है, तुम कृपा करो तो हम भवजल से पार उतर सकते हैं । गुरु नानक कहते हैं कि तुमसे हमें निर्भय हरि-नाम प्राप्त हुआ है, जबसे हमने सन्तों की शरण ली है (सिर सन्त-चरणों में डाला है) ।। २ ।। ९ ।।

।। कानड़ा महला ५ ।। साध सरनि चरन चितु लाइआ । सुपन की बात सुनी पेखी सुपना नाम मंत्रु सतिगुरू द्रिड़ाइआ ।। १ ।। रहाउ ।। नह त्रिपतानो राज जोबनि धनि बहुरि बहुरि फिरि धाइआ । सुखु पाइआ त्रिसना सभ बुझीहै सांति पाई गुन गाइआ ।। १ ।। बिनु बूझे पसू की निआई भ्रमि मोहि बिआपिओ माइआ । साध संगि जम जेवरी काटी नानक सहजि समाइआ ।। २ ।। १० ।।

मैंने सन्तों के चरणों में मन रमा लिया है । संसार के सपना होने

की बात सुनी थी, किन्तु जबसे गुरु का उपदेश मिला है, उस तथ्य को देख भी लिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनुष्य राज्य, यौवन और धन पाकर भी तृप्त नहीं होता, बार-बार अधिक के पीछे भागता है। किन्तु प्रभु का गुण-गान करने से तृष्णा बुझती है, सुख और शान्ति मिलते हैं ॥ १ ॥ बिना ज्ञान के मनुष्य पशु के समान है, उसे सदैव मोह, भ्रम और माया व्याप्त रहते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि साधु-संगति में यमदूतों की शृंखला कट जाती है और जीव सहजावस्था में रम जाता है ॥ २ ॥ १० ॥

॥ कानड़ा महला ५ ॥ हरि के चरन हिरदै गाइ। सीतला सुख सांति मूरति सिमरि सिमरि नित धिआइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सगल आस होत पूरन कोटि जनम दुखु जाइ ॥ १ ॥ पुंन दान अनेक किरिआ साधू संगि समाइ। ताप संताप मिटे नानक बाहुड़ि कालु न खाइ ॥ २ ॥ ११ ॥

प्रभु के चरणों को हृदय में धारण करके उस शीतल एवं सुख-शान्ति-स्वरूप परमात्मा का स्मरण करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ (ऐसा करने से) समस्त आशाएँ पूर्ण होती हैं और करोड़ों जन्म के दुःख दूर हो जाते हैं ॥ १ ॥ साधु-संगति में विचरण करने में ही अनेक पुण्य-दान निहित हैं। गुरु नानक कहते हैं कि इससे सब रोग-सन्ताप दूर होते हैं और दोबारा काल हमें नहीं ग्रसता ॥ २ ॥ ११ ॥

कानड़ा महला ५ घरु ३

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ कथीऐ संत संगि प्रभ गिआनु। पूरन परम जोति परमेसुर सिमरत पाईऐ मानु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आवत जात रहे स्रम नासे सिमरत साधू संगि। पतित पुनीत होहि खिन भीतरि पारब्रहम कै रंगि ॥ १ ॥ जो जो कथै सुनै हरि कीरतनु ता की दुरमति नास। सगल मनोरथ पावै नानक पूरन होवै आस ॥ २ ॥ १ ॥ १२ ॥

सन्तों की संगति में बैठकर प्रभु का ज्ञान-कथन करो। उस पूर्ण-परमज्योति परमेश्वर को सिमरने से प्रतिष्ठा मिलती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साधु-संगति में हरि-स्मरण करने से आवागमन रुकता है, श्रम दूर होता है। परब्रह्म के रंग में पतित जीव भी क्षण-भर में पवित्र हो जाता है ॥ १ ॥ जो जीव हरि-यशोगान करते-सुनते हैं, उनकी कुबुद्धि नष्ट होती है।

गुरु नानक कहते हैं कि उनके समस्त मनोरथ सम्पन्न होते और आशाएँ पूर्ण हो जाती हैं ॥ २ ॥ १ ॥ १२ ॥

॥ कानड़ा महला ५ ॥ साध संगति निधि हरि को नाम। संगि सहाई जीअ कै काम ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संत रेनु निति मजनु करै। जनम जनम के किलबिख हरै ॥ १ ॥ संत जना की ऊची बानी। सिमरि सिमरि तरे नानक प्रानी ॥२॥२॥१३॥

साधुजन की संगति में प्रभु-नाम का खज़ाना मौजूद है, जो मनुष्य के साथ-साथ सहायी होता और जीव के काम आता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सन्तों की चरण-धूलि में नित्य स्नान करनेवाले के जन्म-जन्म के पाप दूर होते हैं ॥ १ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि सन्तजनों की वाणी ऊँची होती है, उसका स्मरण कर-करके प्राणी संसार-सागर से मुक्त हो जाता है ॥ २ ॥ २ ॥ १३ ॥

॥ कानड़ा महला ५ ॥ साधू हरि हरे गुन गाइ। मान तनु धनु प्रान प्रभ के सिमरत दुखु जाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ईत ऊत कहा लुोभावहि एक सिउ मनु लाइ ॥१॥ महा पवित्र संत आसनु मिलि संगि गोबिदु धिआइ ॥२॥ सगल तिआगि सरनि आइओ नानक लेहु मिलाइ ॥ ३ ॥ ३ ॥ १४ ॥

ऐ सज्जनो, हरि के गुण गाओ। हरि-स्मरण से मन-तन-धन-प्राण, सबके दुःख दूर होते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इधर-उधर कहाँ लुभाता फिरता है, एक प्रभु से मन लगाओ ॥ १ ॥ सन्तों की बैठक बड़ा पवित्र स्थान है, उसी में बैठकर प्रभु का ध्यान करो ॥ २ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि मैं सब कुछ त्यागकर शरण में आया हूँ, अपने संग मिला लो ॥३॥३॥१४॥

॥ कानड़ा महला ५ ॥ पेखि पेखि बिगसाउ साजन। प्रभु आपना इकांत ॥१॥रहाउ॥ आनदा सुख सहज मूरति तिसु आन नाही भांति ॥ १ ॥ सिमरत इक बार हरि हरि मिटि कोटि कसमल जांति ॥ २ ॥ गुण रमंत दूख नासहि रिद भइअंत सांति ॥ ३ ॥ अंम्रिता रसु पीउ रसना नानक हरि रंगि रात ॥ ४ ॥ ४ ॥ १५ ॥

अपने साजन (परमात्मा) को देख-देखकर मुझे प्रफुल्लता होती है। मैं एकान्त-भाव से अपने प्रभु को (सिमरता हूँ) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वह मेरा परमात्मा आनन्द और पूर्ण सहज सुख की मूर्ति है, उसे (प्रभु-स्मरण के अतिरिक्त) अन्य कुछ नहीं रुचता ॥ १ ॥ एक बार हरि-हरि सिमरने

से करोड़ों पाप मिट जाते हैं ।। २ ।। जीवात्मा गुणों में रमण करती है, दुःख नष्ट होते तथा हृदय में शान्ति आती है ।। ३ ।। गुरु नानक कहते हैं कि ऐ जीभ, परमात्मा के प्यार में भीगकर हरि-नाम का मधुर रसामृत पान करो ।। ४ ।। ४ ।। १५ ।।

।। कानड़ा महला ५ ।। साजना संत आउ मेरै ।। १ ।। रहाउ ।। आनदा गुन गाइ मंगल कसमला मिटि जाहि परेरै ।। १ ।। संत चरन धरउ माथै चांदना ग्रिहि होइ अंधेरै ।। २ ।। संत प्रसादि कमलु बिगसै गोबिंद भजउ पेखि नेरै ।। ३ ।। प्रभ क्रिपा ते संत पाए वारि वारि नानक उह बेरै ।। ४ ।। ५ ।। १६ ।।

ऐ मेरे सज्जन सन्तो, आकर मुझे (दर्शन दो) ।। १ ।। रहाउ ।। (क्योंकि) तुम्हारी प्रेरणा और संगति में प्रभु का गुण-गान करने में सुख मिलता और पाप दूर हो जाते हैं ।। १ ।। सन्त-चरणों को शिरोधार्य करने से अँधेरे घर में उजाला होता है अर्थात् अज्ञान का अन्धकार दूर हो जाता है ।। २ ।। सन्तों की कृपा से प्रभु का भजन करने से हृदय-कमल विकसता है ।। ३ ।। गुरु नानक उस समय पर क़ुर्बान हैं, जब प्रभु-कृपा से सन्तों का दर्शन हुआ था ।। ४ ।। ५ ।। १६ ।।

।। कानड़ा महला ५ ।। चरन सरन गोपाल तेरी । मोह मान धोह भरम राखि लीजै काटि बेरी ।। १ ।। रहाउ ।। बूडत संसार सागर । उधरे हरि सिमरि रतनागर ।। १ ।। सीतला हरि नामु तेरा । पूरनो ठाकुर प्रभु मेरा ।। २ ।। दीन दरद निवारि तारन । हरि क्रिपा निधि पतित उधारन ।। ३ ।। कोटि जनम दूख करि पाइओ । सुखी नानक गुरि नामु द्रिड़ाइओ ।। ४ ।। ६ ।। १७ ।।

हे परमात्मा, मैं तुम्हारे चरणों की शरण में हूँ । मेरी काम, क्रोध, वैर, भ्रमादि की बेड़ियाँ काटकर मेरी रक्षा करो ।। १ ।। रहाउ ।। संसार-सागर में डूब रहा हूँ, हरि-स्मरण से ही इस सागर से उबर सकता हूँ ।।१।। तुम्हारा नाम शीतलता देनेवाला है । मेरा स्वामी प्रभु पूर्ण है ।। २ ।। वह दीनों का दुःख दूर करके तारनेवाला है; परमात्मा कृपा का भण्डार तथा पतितों का उद्धार करनेवाला है ।। ३ ।। गुरु नानक कहते हैं कि करोड़ों जन्म भी यदि दुःख पाया हो, अब गुरु के द्वारा हरिनाम-भजन से परमसुख मिलेगा ।। ४ ।। ६ ।। १७ ।।

॥ कानड़ा महला ५ ॥ धनि उह प्रीति चरन संगि लागी। कोटि जाप ताप सुख पाए आइ मिले पूरन बड भागी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मोहि अनाथु दासु जनु तेरा अवर ओट सगली मोहि तिआगी। भोर भरम काटे प्रभ सिमरत गिआन अंजन मिलि सोवत जागी ॥ १ ॥ तू अथाहु अति बडो सुआमी क्रिपा सिंधु पूरन रतनागी। नानकु जाचकु हरि हरि नामु मांगै मसतकु आनि धरिओ प्रभ पागी ॥ २ ॥ ७ ॥ १८ ॥

प्रभु के चरणों में लगी प्रीति ही धन्य है। सौभाग्यपूर्वक जब (प्रभु-चरणों) से मिलन हुआ, तो करोड़ों जप-तप सफल हो गए और परम-सुख की प्राप्ति हुई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे स्वामी, मैं अनाथ तो तुम्हारा सेवक हूँ, अन्य सब सहारे मैंने त्याग दिए हैं। प्रभु के स्मरण से जो थोड़ा भी भ्रम था, वह भी दूर हो गया और ज्ञान का अंजन लगा लेने से मोह-निद्रा से जग गया हूँ ॥ १ ॥ हे कृपा-सिंधु, तुम अथाह स्वामी और पूर्ण रत्नों की खान हो। गुरु नानक कहते हैं कि मैं याचक बनकर तुमसे हरि-नाम की याचना करता हूँ, अपना माथा तुम्हारे चरणों पर धरे हुए प्रार्थना कर रहा हूँ ॥ २ ॥ ७ ॥ १८ ॥

॥ कानड़ा महला ५ ॥ कुचिल कठोर कपट कामी। जिउ जानहि तिउ तारि सुआमी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तू समरथु सरनि जोगु तू राखहि अपनी कल धारि ॥ १ ॥ जाप ताप नेम सुचि संजम नाही इन बिधे छुटकार। गरत घोर अंध ते काढहु प्रभ नानक नदरि निहारि ॥ २ ॥ ८ ॥ १९ ॥

मैं गन्दा, कठोर-चित्त, कपटी और व्यभिचारी हूँ; जैसी भी हो, ऐ मेरे मालिक, मुझे तार दो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु, तुम समर्थ हो, शरण देने योग्य हो, अपनी शक्ति-प्रसार द्वारा मेरी रक्षा करो ॥ १ ॥ जप, तप, नियम, संयम आदि विधियों से यहाँ किसी का छुटकारा नहीं। गुरु नानक कहते हैं कि मैं (माया के) गहरे अँधेरे गर्त में पड़ा हूँ, अपनी कृपा-दृष्टि धारण कर मुझे वहाँ से निकाल लो ॥ २ ॥ ८ ॥ १९ ॥

कानड़ा महला ५ घरु ४

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ नाराइन नरपति नमसकारै। ऐसे गुर कउ बलि बलि जाईऐ आपि मुकतु मोहि तारै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कवन कवन कवन गुन कहीऐ

अंतु नही कछु पारै । लाख लाख लाख कई कोरै को है ऐसो बीचारै ॥ १ ॥ बिसम बिसम बिसम ही भईहै लाल गुलाल रंगारै । कहु नानक संतन रसु आईहै जिउ चाखि गूंगा मुसकारै ॥ २ ॥ १ ॥ २० ॥

जो सर्वोच्च स्वामी परमात्मा को नमस्कार करता है, ऐसे गुरु के बलिहार जाता हूँ, जो आप तो मुक्त है ही, मुझे भी तार देता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उसका कौन-कौन-सा गुण कहूँ, उसके गुणों की कोई सीमा रंग में ही नहीं। वे लाख-लाख-करोड़ों हैं, कौन उन सबका विचार भी कर सकता है ! ॥ १ ॥ (उसके गुणों में लीन होकर) मैं गूढ़े लाल रँग गया हूँ, तथा अति आनन्दित हूँ। गुरु नानक कहते हैं कि इस स्थिति में सन्तजनों को ऐसा रस मिलता है, जैसा गूँगा किसी स्वादिष्ट वस्तु को चखकर मुस्करा देता है ॥ २ ॥ १ ॥ २० ॥

॥ कानड़ा महला ५ ॥ न जानी संतन प्रभ बिनु आन । ऊच नीच सभ पेखि समानो मुखि बकनो मनि मान ॥१॥रहाउ॥ घटि घटि पूरि रहे सुख सागर भै भंजन मेरे प्रान । मनहि प्रगासु भइओ भ्रमु नासिओ मंत्रु दीओ गुर कान ॥ १ ॥ करत रहे क्रतग्य करुणामै अंतरजामी गिआन । आठ पहर नानक जसु गावै मांगन कउ हरि दान ॥ २ ॥ २ ॥ २१ ॥

सन्तजन परमात्मा के अतिरिक्त और किसी को नहीं जानते । वे ऊँचे-नीचे सब लोगों को समान मानते हैं, मुँह से उसी का गान करते हैं, मन में उसी का ध्यान करते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरे प्राण-प्रिय प्रभु, जो दुःखों को दूर करके सुखों का अथाह सागर प्रदान करते हैं, घट-घट में बसते हैं। गुरु के द्वारा उपदेश पाकर सब भ्रम दूर होते एवं मन में ज्ञान का प्रकाश होता है ॥ १ ॥ करने योग्य परमात्मा स्वयं सब कुछ करता है, वह करुणामय है, ज्ञानस्वरूप एवं अन्तर्यामी है। गुरु नानक कहते हैं कि हरि से दान-प्राप्ति के लिए आठों पहर उसका यश गाना होता है ॥ २ ॥ २ ॥ २१ ॥

॥ कानड़ा महला ५ ॥ कहन कहावन कउ कई केतै । ऐसो जनु बिरलो है सेवकु जो तत जोग कउ बेतै ॥१॥रहाउ॥ दुखु नाही सभु सुखु ही है रे एकै एकी नेतै । बुरा नही सभु भला ही है रे हार नही सभ जेतै ॥ १ ॥ सोगु नाही सदा हरखी है रे छोडि नाही किछु लेतै । कहु नानक जनु हरि हरि हरि है कत आवै कत रमतै ॥ २ ॥ ३ ॥ २२ ॥

कहने-कहाने को तो कितने ही हैं, किन्तु ऐसा कोई विरल जन ही होता है, जो तत्त्व-वेत्ता कहा जा सके ॥१॥रहाउ ॥ जो एकमात्र हरि को आँखों में बसाए रखते हैं, उन्हें कोई दुःख नहीं रह जाता, उन्हें सुख ही सुख मिलता है। ऐसे जीव के लिए कुछ बुरा नहीं, भला ही होता है; वह कहीं पराजित नहीं होता, विजयी होता है ॥ १ ॥ (प्रभु-भक्त जीवों के लिए) कोई भी स्थिति शोकमयी नहीं होती, वे सदा आनन्द में जीते हैं; उक्त आनन्द को छोड़ वे और कुछ भी नहीं लेते। गुरु नानक कहते हैं कि जो जन हरि-स्मरण करता है, वह कहाँ आता, कहाँ रमता है ? (अर्थात् वह भटकता नहीं, मुक्त हो जाता है— उसका आना-जाना, आवागमन चुक जाता है) ॥ २ ॥ ३ ॥ २२ ॥

॥ कानड़ा महला ५ ॥ हीए को प्रीतमु बिसरि न जाइ। तन मन गलत भए तिह संगे मोहनी मोहि रही मोरी माइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जै जै पहि कहउ ब्रिथा हउ अपुनी तेऊ तेऊ गहे रहे अटकाइ। अनिक भांति की एकै जाली ताकी गंठि नही छोराइ ॥ १ ॥ फिरत फिरत नानक दासु आइओ संतन ही सरनाइ। काटे अगिआन भरम मोह माइआ लीओ कंठि लगाइ ॥ २ ॥ ४ ॥ २३ ॥

हृदय से प्रियतम विस्मृत नहीं होना चाहिए। तन, मन मोहिनी माया के आकर्षण में तल्लीन है, हे भाई, (मुझे इससे बचाओ) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस-जिसको हम दिल की बात कहते हैं, वही-वही हमको पकड़े और अटकाए रहते हैं। यह अनेक प्रकार के फंदे एक ही जाल की गाँठें (माया) हैं, जो खुल नहीं पातीं ॥ १ ॥ दास नानक भटकते-भटकते जब सन्तों की शरण में आए, तो उनके अज्ञान, मोह, माया के दुर्गुण दूर हुए, सन्तों ने उन्हें गले लगा लिया ॥ २ ॥ ४ ॥ २३ ॥

॥ कानड़ा महला ५ ॥ आनद रंग बिनोद हमारै। नामो गावनु नामु धिआवनु नामु हमारे प्रान अधारै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नामो गिआनु नामु इसनाना हरि नामु हमारे कारज सवारै। हरिनामो सोभा नामु बडाई भउजलु बिखमु नामु हरि तारै ॥ १ ॥ अगम पदारथ लाल अमोला भइओ परापति गुर चरनारै। कहु नानक प्रभ भए क्रिपाला मगन भए हीअरै दरसारै ॥ २ ॥ ५ ॥ २४ ॥

हमें अनेक आनन्द और खुशियाँ मिलती हैं, जब हम हरि-नाम का गान करते, उसी का ध्यान करते और उसी को प्राणाधार बनाते

हैं ।। १ ।। रहाउ ।। हरि-नाम का ज्ञान, नाम का स्नान तथा हरि-नाम का स्मरण ही हमारे काम बनाता है। हरि-नाम से ही शोभा होती है, नाम से ही प्रतिष्ठा मिलती है और विषम भव-सागर से प्रभु हरिनाम-जहाज़ से ही तारते हैं ।।१।। यह अगम और अनमोल पदार्थ (हरि-नाम) गुरु के चरणों में ही प्राप्त होता है। गुरु नानक कहते हैं कि जब प्रभु की कृपा होती है, तो भीतर ही उसके दर्शन हो जाते हैं और मन मग्न होता है ।। २ ।। ५ ।। २४ ।।

।। कानड़ा महला ५ ।। साजन मीत सुआमी नेरो । पेखत सुनत सभन कै संगे थोरै काज बुरो कह फेरो ।। १ ।। रहाउ ।। नाम बिना जेतो लपटाइओ कछू नही नाही कछु तेरो । आगै द्रिसटि आवत सभ परगट ईहा मोहिओ भरम अंधेरो ।। १ ।। अटकिओ सुत बनिता संग माइआ देवनहारु दातारु बिसेरो । कहु नानक एकै भारोसउ बंधन काटनहारु गुरु मेरो ।।२।।६।।२५।।

प्रभु सबका सज्जन, मित्र, स्वामी और समीपतर है। वह सभी के संग देखता-सुनता है, (अतः) क्यों थोड़ी आयु के लिए बुरे कर्म करते हो ? ।। १ ।। रहाउ ।। हरि-नाम के अतिरिक्त जितना भी तुम इधर-उधर लिपटते रहे, वह कुछ नहीं, उसमें कुछ भी तुम्हारा नहीं। आगे जाकर सब स्पष्ट हो जायगा, चाहे तुम भ्रम के अँधेरे में ही क्यों न बँधे रहे होओ ।। १ ।। तुम देनेवाले प्रभु को विस्मृत कर पुत्र-पत्नी के मोह में अटके रहे। किन्तु गुरु नानक को केवल एक बन्धन काट देनेवाले अपने गुरु का ही भरोसा है ।। २ ।। ६ ।। २५ ।।

।। कानड़ा महला ५ ।। बिखै दलु संतनि तुम्हरै गाहिओ । तुमरी टेक भरोसा ठाकुर सरनि तुम्हारी आहिओ ।।१।।रहाउ।। जनम जनम के महा पराछत दरसनु भेटि मिटाहिओ । भइओ प्रगासु अनद उजीआरा सहजि समाधि समाहिओ ।। १ ।। कउनु कहै तुम ते कछु नाही तुम समरथ अथाहिओ । क्रिपा निधान रंग रूप रस नामु नानक लै लाहिओ ।। २ ।। ७ ।। २६ ।।

मैंने तुम्हारे सन्तों की सहायता से विषय-विकारों के दल को दूर भगा दिया है। हे स्वामी, मुझे केवल तुम्हारा ही सहारा है, तुम्हारा ही भरोसा है, मैं (इसीलिए) तुम्हारी ही शरण में आया हूँ ।। १ ।। रहाउ ।। तुम्हारे दर्शनों से मैंने गत जन्मों के बड़े-बड़े पाप मिटा दिए हैं। मुझे अपने भीतर आलोक मिला है, मैं सहज समाधि में आनन्द मग्न हो गया हूँ ।। १ ।। कौन कहता है कि तुम कुछ नहीं कर सकते, तुम तो अनन्त

सामर्थ्य वाले हो। हे कृपा के भण्डार, जब तुम्हारा नाम-लाभ प्राप्त हुआ तो रंग, रस, रूप सब कुछ मिल गया ॥ २ ॥ ७ ॥ २६ ॥

॥ कानड़ा महला ५ ॥ बूडत प्रानी हरि जपि धीरै। बिनसै मोहु भरमु दुखु पीरै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सिमरउ दिनु रैनि गुर के चरना। जत कत पेखउ तुमरी सरना ॥ १ ॥ संत प्रसादि हरि के गुन गाइआ। गुर भेटत नानक सुखु पाइआ ॥ २ ॥ ८ ॥ २७ ॥

डूबते हुए प्राणी, धैर्यपूर्वक हरि का नाम जपो। इससे तुम्हारे मोह, भ्रम, दुःख, पीड़ा सब दूर हो जायँगे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मैं रात-दिन गुरु के चरणों में बैठकर हरि-स्मरण करता हूँ, जहाँ कहीं भी देखता हूँ, मुझे तुम्हारी ओट दीख पड़ती है ॥ १ ॥ मैं सन्तों की कृपा से हरि का गुण गाता हूँ, गुरु नानक कहते हैं कि ऐसे में गुरु की भेंट हो जाने से परमसुख प्राप्त होता है ॥ २ ॥ ८ ॥ २७ ॥

॥ कानड़ा महला ५ ॥ सिमरत नामु मनहि सुखु पाईऐ। साध जना मिलि हरि जसु गाईऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करि किरपा प्रभ रिदै बसेरो। चरन संतन कै माथा मेरो ॥ १ ॥ पारब्रहम कउ सिमरहु मनां। गुरमुखि नानक हरि जसु सुनां ॥२॥९॥२८॥

हरि-नाम के स्मरण से मन में सुख मिलता है। अतः साधुजनों की संगति में रहकर हरि का यशोगान करते रहो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु, कृपा करके मेरे हृदय में स्थान बनाओ। मेरा शीश सन्तों के चरणों में नित्य झुका है ॥ १ ॥ ऐ मन, परब्रह्म का स्मरण करो। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु के द्वारा हरि-कीर्ति को सुनो ॥ २ ॥ ९ ॥ २८ ॥

॥ कानड़ा महला ५ ॥ मेरे मन प्रीति चरन प्रभ परसन। रसना हरि हरि भोजनि त्रिपतानी अखीअन कउ संतोखु प्रभ दरसन ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करननि पूरि रहिओ जसु प्रीतम कलमल दोख सगल मल हरसन। पावन धावन सुआमी सुख पंथा अंग संग काइआ संत सरसन ॥ १ ॥ सरनि गही पूरन अबिनासी आन उपाव थकित नही करसन। करु गहि लीए नानक जन अपने अंध घोर सागर नही मरसन ॥२॥१०॥२९॥

मेरे मन में प्रभु के चरणों को स्पर्श करने की प्रीति है। मेरी जिह्वा हरि-भोजन द्वारा तृप्त हुई है, आँखों को प्रभु-दर्शन का सन्तोष है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरे प्रियतम का यश मेरे कानों में भर रहा है,

जिससे मेरे मन के सभी पाप-दोष धुल गए हैं। सन्तों की शरण लेने से पावन प्रभु-स्वामी अंग-संग रहता और परमसुख पहुँचता है ॥ १ ॥ अन्य उपायों से थककर अब मैंने उन्हें त्याग दिया है और पूर्ण अविनाशी परमात्मा की शरण ली है। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु ने मुझे हाथ पकड़कर सहारा दिया है, अब मैं गहरे अन्धे संसार-सागर में नहीं डूबूंगा ॥ २ ॥ १० ॥ २९ ॥

॥ कानड़ा महला ५ ॥ कुहकत कपट खपट खल गरजत मरजत मीचु अनिक बरीआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अहंमत अन रत कुमित हित प्रीतम पेखत भ्रमत लाख गरीआ ॥ १ ॥ अनित बिउहार अचार बिधि हीनत मम मद मात कोप जरीआ। करुण क्रिपाल गुोपालु दीनबंधु नानक उधरु सरनि परीआ ॥ २ ॥ ११ ॥ ३० ॥

जिनके भीतर विनाशकारी कपट मचलते हैं तथा कामादि दुष्ट गर्जते हैं, उन्हें मौत बार-बार मारती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मैं अहम्भाव में लीन एवं अन्य रसों में रत हूँ, कुमित्रों से हित रखता हूँ, और तुम देखते हो कि मैं लाखों गलियों में भटकता फिरता हूँ ॥१॥ मेरा आचार-व्यवहार अनित्य है, विधिहीन जीवन जीता हूँ और ममता-मद में उन्मत्त होने के कारण क्रोधाग्नि में जलता हूँ। हे दीनबन्धु, नानक तुम्हारी शरण पड़ा है, कृपा करके उस पर करुणा करो ॥ २ ॥ ११ ॥ ३० ॥

॥ कानड़ा महला ५ ॥ जीअ प्रान मान दाता। हरि बिसरते ही हानि ॥१॥रहाउ॥ गोबिद तिआगि आन लागहि अंम्रितो डारि भूमि पागहि। बिखै रस सिउ आसकत मूड़े काहे सुख मानि ॥ १ ॥ कामि क्रोधि लोभि बिआपिओ जनम ही की खानि। पतित पावन सरनि आइओ उधरु नानक जानि ॥ २ ॥ १२ ॥ ३१ ॥

मेरे मन का दाता प्रभु ही मेरा जीवन-प्राण है। हरि के विस्मरण से अति हानि (सम्भावित) है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो लोग प्रभु को छोड़कर द्वैतभाव में जीते हैं, वे अमृत त्यागकर मिट्टी छानते हैं। विषय-रस में आसक्त रहनेवाला मूढ़ क्योंकर सुख पा सकता है ! ॥ १ ॥ काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि की व्यापकता ही जन्म-मरण का कारण है। गुरु नानक कहते हैं कि पतितपावन हरि की शरण में आने से उद्धार निश्चित है ॥ २ ॥ १२ ॥ ३१ ॥

॥ कानड़ा महला ५ ॥ अविलोकउ राम को मुखारबिंद । खोजत खोजत रतनु पाइओ बिसरी सभ चिंद ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चरन कमल रिदै धारि । उतरिआ दुखु मंद ॥ १ ॥ राज धनु परवारु मेरै सरबसो गोबिंद । साध संगमि लाभु पाइओ नानक फिरि न मरंद ॥ २ ॥ १३ ॥ ३२ ॥

मैं हरि के मुख-कमल को देखता हूँ । प्रभु-रत्न को खोजते-खोजते मैंने उसे पा लिया है, अब मेरी सब चिन्ता मिट गई है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु के चरण-कमल हृदय में धारण करने से दुःख-पीड़ा से मुक्त हो गया हूँ ॥ १ ॥ मेरा परमात्मा ही अब मेरे लिए राज, धन, परिवार, सर्वस्व बन गया है । गुरु नानक कहते हैं कि मैंने साधु-संगति में ऐसा परम लाभ प्राप्त किया है कि मैं अमर हो गया हूँ (अब मरूँगा नहीं) ॥२॥१३॥३२॥

कानड़ा महला ५ घरु ५

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ प्रभ पूजहो नामु अराधि । गुर सतिगुर चरनी लागि । हरि पावहु मनु अगाधि । जगु जीतो हो हो गुर किरपाधि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनिक पूजा मै बहु बिधि खोजी सा पूजा जि हरि भावासि । माटी की इह पुतरी जोरी किआ एह करम कमासि । प्रभ बाह पकरि जिसु मारगि पावहु सो तुधु जंत मिलासि ॥ १ ॥ अवर ओट मै कोइ न सूझै इक हरि की ओट मै आस । किआ दीनु करे अरदासि । जउ सभ घटि प्रभू निवास । प्रभ चरनन की मनि पिआस । जन नानक दासु कहीअतु है तुम्हरा हउ बलि बलि सद बलि जास ॥ २ ॥ १ ॥ ३३ ॥

हरि-नाम के स्मरण द्वारा प्रभु का पूजन करो । (अपने) सच्चे गुरु के चरणों में शरण लो । (तब) मन की आराधना द्वारा हरि को पा लो और गुरु की कृपा से जगत पर विजयी बनो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनेक विधियों से मैंने पूजन किया, किन्तु सही वही है, जो मेरे प्रभु को रुचती हो । मिट्टी की पुतलिका में बल कहाँ कि वह कोई कर्म कमा सके (मनुष्य तो माटी का पुतला है, वह जो भी करता है, वास्तव में उससे करवाया जाता है) ! यह तो स्वामी स्वयं बाँह पकड़कर जिस मार्ग पर लगा देता है, वहीं अपेक्षित जीव मिल जाते हैं ॥ १ ॥ मुझे और कोई सहारा नहीं सूझता, केवल प्रभु की ओट ही मेरी आशा है; मैं दीन इसके लिए

क्या प्रार्थना करूँ, प्रभु का निवास तो सब घटों में है (वह स्वयं जान लेता है)। मुझे प्रभु के चरणों की प्यास है। गुरु नानक कहते हैं कि मैं तो तुम्हारा दास कहलवाता हूँ और सदा-सदा तुम पर नित्य बलिहार जाता हूँ ॥ २ ॥ १ ॥ ३३ ॥

कानड़ा महला ५ घरु ६

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ जगत उधारन नाम प्रिअ तेरै। नव निधि नामु निधानु हरि केरै। हरि रंग रंग रंग अनूपेरै। काहे रे मन मोहि मगनेरै। नैनहु देखु साध दरसेरै। सो पावै जिसु लिखतु लिलेरै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सेवउ साध संत चरनेरै। बांछहु धूरि पवित्र करेरै। अठसठि मजनु मैलु कटेरै। सासि सासि धिआवहु मुखु नही मोरै। किछु संगि न चालै लाख करोरै। प्रभ जी को नामु अंति पुकरोरै ॥१॥ मनसा मानि एक निरंकेरै। सगल तिआगहु भाउ दूजेरै। कवन कहां हउ गुन प्रिअ तेरै। बरनि न साकउ एक टुलेरै। दरसन पिआस बहुतु मनि मेरै। मिलु नानकदेव जगत गुर केरै ॥२॥१॥३४॥

हे प्रियतम, तुम्हारा नाम ही जगत का उद्धार करनेवाला है। हरि का (तुम्हारा) नाम नौ निधियों का भण्डार है। प्रभु अनेक रंगों में प्रकट है, वह फिर भी अद्वितीय है। ऐ मन, तू क्यों बाहरी बातों के मोह में मग्न है? अपनी आँखों से सन्तों के दर्शन कर; जिसके मस्तक में भाग्य की रेखा विद्यमान होती है, उसे (प्रभु) मिल जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साधु-सन्तों के चरणों की सेवा करता हूँ और उनकी वह धूलि चाहता हूँ जो पवित्र करती है। वह अठासठ तीर्थों में स्नान करने के बराबर मैल काट देती है। मैं श्वास-श्वास उसका भजन करता हूँ, (प्रभु से) कभी मुख नहीं मोड़ता। लाख यत्न करो, कुछ संग नहीं चलता, अन्ततः प्रभु का नाम ही सहायी होता है ॥१॥ मन से एकमात्र निरंकार का भजन करो। समस्त द्वैत-भाव त्याग दो। हे प्रियतम, मैं तुम्हारे कौन-कौन से गुण कहूँ, मैं तो एक भी गुण का वर्णन नहीं कर सकता। मेरे मन में दर्शनों की बहुत प्यास है, हे जगत-गुरु दास नानक को दर्शन दो ॥ २ ॥ १ ॥ ३४ ॥

॥ कानड़ा महला ५ ॥ ऐसी कउन बिधे दरसन परसना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आस पिआस सफल मूरति उमगि हीउ तरसना ॥ १ ॥ दीन लीन पिआस मीन संतना हरि

संतना। हरि संतना की रेन। हीउ अरपि देन। प्रभ भए है किरपेन। मानु मोहु तिआगि छोडिओ तउ नानक हरि जीउ भेटना ॥ २ ॥ २ ॥ ३५ ॥

ऐसी कौन-सी विधि है, जिससे प्रभु-दर्शन प्राप्त हों ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उस फलदायी मूर्ति (प्रभु) के दर्शनों की उत्कट प्यास बनी है, मन दर्शनों की उमंग में तरसता है ॥ १ ॥ मैं दीन होकर प्रभु-दर्शनों की इच्छा में लीन मछली की तरह प्यास में तड़पता हूँ, हरि के सन्तों की चरण-धूलि चाहता हूँ, उसके लिए मैंने हृदय अर्पित किया है। प्रभु मुझ पर कृपालु हैं। गुरु नानक कहते हैं कि मान-मोह का त्याग करके ही हरिजी से भेंट हो सकती है ॥ २ ॥ २ ॥ ३५ ॥

॥ कानड़ा महला ५ ॥ रंगा रंग रंगन के रंगा। कीट हसत पूरन सभ संगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बरत नेम तीरथ सहित गंगा। जलु हेवत भूख अरु नंगा। पूजाचार करत मेलंगा। चक्र करम तिलक खाटंगा। दरसनु भेटे बिनु सतसंगा ॥ १ ॥ हठि निग्रहि अति रहत बिटंगा। हउ रोगु बिआपै चुकै न भंगा। काम क्रोध अति त्रिसन जरंगा। सो मुकतु नानक जिसु सतिगुरु चंगा ॥ २ ॥ ३ ॥ ३६ ॥

परमात्मा अनेक प्रकार के रंगों में रँगता है, कीड़े से लेकर हाथी तक सबमें उसका पूर्ण रंग मौजूद है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ (लोग उसकी प्राप्ति के लिए) तीर्थ, व्रत, नियम, गंगा-स्नान आदि करते हैं; जल और बर्फ़ में भूखे और नंगे रहकर कष्ट सहते हैं। पद्मासन लगाकर पूजा करते हैं। चक्र-कर्म एवं षटांग-तिलक करते हैं, किन्तु सत्संग के बिना प्रभु का दर्शन नहीं मिलता (सब व्यर्थ है) ॥ १ ॥ हठपूर्वक संयम करते तथा शीर्षासन लगाते हैं, (इस पर भी) अहम् का रोग व्यापक रहता है, हानि बढ़ती है; काम, क्रोध, तृष्णा की आग में जलते हैं; गुरु नानक कहते हैं कि मुक्त वही होता है, जो सच्चे सतिगुरु की शरण लेता है ॥ २ ॥ ३ ॥ ३६ ॥

कानड़ा महला ५ घरु ७

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ तिख बूझि गई गई मिलि साध जना। पंच भागे चोर सहजे सुखैनो हरे गुन गावती गावती गावती दरस पिआरि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जैसी करी प्रभ मो सिउ मो सिउ ऐसी हउ कैसे करउ। हीउ तुम्हारे बलि बले बलि बले

बलि गई ॥१॥ पहिले पै संत पाइ धिआइ धिआइ प्रीति लाइ। प्रभ थानु तेरो केहरो जितु जंत न करि बीचारु। अनिक दास कीरति करहि तुहारी। सोई मिलिओ जो भावतो जन नानक ठाकुर रहिओ समाइ। एक तूही तूही तूही॥ २॥ १ ॥ ३७ ॥

सन्तजनों की संगति में सब तृष्णा जाती रही। प्यारपूर्वक हरि के गुण गाते रहने से काम, क्रोधादि पाँचों चोर भाग गए और जीव सहज सुखपूर्ण हो गया ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु ने मेरे साथ जैसी की, मैं वैसी क्योंकर कर सकता हूँ ? मैं तो तुम पर हृदय से न्योछावर हूँ ॥ १ ॥ पहले सन्तों के चरणों में रहकर तुमसे प्रीति लगाई है। हे प्रभु, तेरा कैसा स्थान है, जीवों को विचार करना होता है। असंख्य सेवक तुम्हारी कीर्ति कहते हैं। दास नानक को प्रभु में लीन होने से मनोवांछित प्राप्तियाँ हुई हैं। हे प्रभु, बस तुम ही, केवल तुम ही हो ॥२॥१॥३७॥

कानड़ा महला ५ घरु ८

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ तिआगीऐ गुमानु मानु पेखता दइआल लाल हां हां मन चरन रेन ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि संत मंत गुपाल गिआन धिआन ॥१॥ हिरदै गोबिंद गाइ चरन कमल प्रीति लाइ दीन दइआल मोहना। क्रिपाल दइआ मइआ धारि। नानकु मागै नामु दानु। तजि मोहु भरमु सगल अभिमानु ॥ २ ॥ १ ॥ ३८ ॥

गुमान, अभिमान सब त्यागकर ऐ मन, दयालु प्रीतम का दर्शन करो और उसके चरणों की धूलि बन जाओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि-सन्तों के उपदेश से अपने प्रभु का ध्यान करो ॥ १ ॥ हृदय में गोविन्द के गुण गाओ और दीन-दयालु मोहन के चरणों में प्रीति बनाओ। ऐ कृपासिंधु, दया-कृपा करो, दास नानक सब मोह, भ्रम और अभिमान त्यागकर, तुमसे नाम का दान माँगता है ॥ २ ॥ १ ॥ ३८ ॥

॥ कानड़ा महला ५ ॥ प्रभ कहन मलन दहन लहन गुर मिले आन नही उपाउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तटन खटन जटन होमन नाही डंड धार सुआउ ॥ १ ॥ जतन भांतन तपन भ्रमन अनिक कथन कथते नही थाह पाई ठाउ। सोधि सगर सोधना सुखु नानका भजु नाउ ॥ २ ॥ २ ॥ ३९ ॥

प्रभु का यशोगान पाप रूपी मलिनता को जला देनेवाला है; गुरु के सम्पर्क में ही यह मिलता है, अन्य कोई उपाय नहीं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तीर्थों के स्नान, षट्कर्म, जटा धारण, होम-यज्ञादि करने या योगियों की तरह दण्ड धारण करने से कुछ नहीं बनता ॥ १ ॥ भाँति-भाँति के यत्नों से भ्रम की पीड़ा बढ़ती है, अनेक बातें बतियाने से कोई उसकी गहराई नहीं समझ पाता । गुरु नानक कहते हैं कि मैंने अन्य अनेक साधन किए हैं, किन्तु नाम-स्मरण-सरीखा सुख कहीं नहीं मिलता ॥ २ ॥ २ ॥ ३९ ॥

कानड़ा महला ५ घरु ९

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ पतित पावनु भगति बछलु भै हरन तारन तरन ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नैन तिपते दरसु पेखि जसु तोखि सुनत करन ॥ १ ॥ प्रान नाथ अनाथ दाते दीन गोबिद सरन । आस पूरन दुख बिनासन गही ओट नानक हरि चरन ॥ २ ॥ १ ॥ ४० ॥

परमात्मा पतितों को पावन करनेवाला, भक्तों से प्यार करनेवाला, भय दूर करनेवाला एवं संसार-सागर से पार लगानेवाला है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उसके दर्शनों से नेत्रों को तृप्ति मिलती है, कानों से उसका यश सुनकर सन्तोष होता है ॥ १ ॥ प्रभु मेरे प्राणों के स्वामी, अनाथों के दाता और दीनों को शरण देनेवाले हैं । गुरु नानक कहते हैं कि वह समस्त आशाओं को पूर्ण करनेवाला और दुःखों को दूर करनेवाला है, इसीलिए उन्होंने उसकी ओट ग्रहण की है ॥ २ ॥ १ ॥ ४० ॥

॥ कानड़ा महला ५ ॥ चरन सरन दइआल ठाकुर आन नाही जाइ । पतित पावन बिरदु सुआमी उधरते हरि धिआइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सैसार गार बिकार सागर पतित मोह मान अंध । बिकल माइआ संगि धंध । करु गहे प्रभ आपि काढहु राखि लेहु गोबिंद राइ ॥ १ ॥ अनाथ नाथ सनाथ संतन कोटि पाप बिनास । मनि दरसनै की पिआस । प्रभ पूरन गुनतास । क्रिपाल दइआल गुपाल नानक हरि रसना गुन गाइ ॥ २ ॥ २ ॥ ४१ ॥

मैं अपने दयालु स्वामी की चरण-शरण में हूँ, और कोई जगह मुझे नहीं सूझती । मेरे स्वामी का विरद पतित-पावन होने का है, उस हरि का ध्यान करनेवालों का उद्धार हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मैं संसार-सागर

में विकारों की काई में गिरा हुआ हूँ, माया के साथ सम्पर्क के कारण व्याकुल हूँ और मोह-अभिमान के अन्धकार में पड़ा हूँ। हे गोविंद राय, हे प्रभु, हाथ पकड़कर निकाल लो, (मेरी रक्षा करो) ॥ १ ॥ हे अनाथों को सनाथ करनेवाले स्वामी, तुम सेवकों के करोड़ों पापों को धो डालते हो, मेरे मन में तुम्हारे दर्शन की प्यास है, तुम, हे प्रभु, पूर्ण गुणागार हो। गुरु नानक जीभ द्वारा उसी गोपाल दयालु तथा कृपालु के गुण गाते हैं ॥ २ ॥ २ ॥ ४१ ॥

॥ कानड़ा महला ५ ॥ वारि वारउ अनिक डारउ। सुखु प्रिअ सुहाग पलक रात ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कनिक मंदर पाट सेज सखी मोहि नाहि इन सिउ तात ॥ १ ॥ मुकत लाल अनिक भोग बिनु नाम नानक हात। रूखो भोजनु भूमि सैन सखी प्रिअ संगि सूखि बिहात ॥ २ ॥ ३ ॥ ४२ ॥

अपने प्रियतम के एक रात के भी पल-भर के सुहाग-सुख पर अनेक सुख न्योछावर कर दूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे सखी, मुझे स्वर्ण-मन्दिर नहीं चाहिए, रेशमी साड़ियाँ और सुन्दर सेज मुझे अपेक्षित नहीं, मुझे इन वस्तुओं से कोई सम्बन्ध नहीं ॥ १ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि लाल मोती और अनेक प्रकार के भोग-विलास भी हरि-नाम के बग़ैर विनाशक हैं। हे सखी, किन्तु प्रियतम के साथ रूखा भोजन और धरती-शयन भी सुखकर है ॥ २ ॥ ३ ॥ ४२ ॥

॥ कानड़ा महला ५ ॥ अहं तोरो मुखु जोरो। गुरु गुरु करत मनु लोरो। प्रिअ प्रीति पिआरो मोरो ॥१॥रहाउ॥ ग्रिहि सेज सुहावी आगनि चैना तोरो री तोरो पंच दूतन सिउ संगु तोरो ॥ १ ॥ आइ न जाइ बसे निज आसनि ऊंध कमल बिगसोरो। छुटकी हउमै सोरो। गाइओ री गाइओ प्रभ नानक गुनी गहेरो ॥ २ ॥ ४ ॥ ४३ ॥

ऐ सज्जन लोगो, अहम्-भाव का त्याग कर प्रभु से लग्न लगाओ। मन की अपेक्षा है कि वह सतिगुरु के उपदेशानुसार आचरण करे। मुझे अपने प्यारे से प्यार है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऐ मेरी सखियो, काम-क्रोधादि पाँच दूतों से सम्बन्ध-विच्छिन्न कर लो, घर में सुहानी सेज पर तथा हृदय रूपी आँगन में प्रिय को पा लो ॥ १ ॥ परमात्मा कहीं आता-जाता नहीं, अपने अटल आसन पर विराजता है और हृदय रूपी उलटा कमल खिल जाता है। अभिमान का शोर दूर होता है। दास नानक ने जब गुणागार प्रभु का यशोगान किया (तो सब मनोरथ पूरे हुए) ॥२॥४॥४३॥

॥ कानड़ा म० ५ घरु ६ ॥ तां ते जापि मना हरि जापि । जो संत बेद कहत पंथु गाखरो मोह मगन अहंताप ॥ रहाउ ॥ जो राते माते संति बपुरी माइआ मोह संताप ॥ १ ॥ नामु जपत सोऊ जनु उधरै जिसहि उधारहु आप । बिनसि जाइ मोह भै भरमा नानक संत प्रताप ॥ २ ॥ ५ ॥ ४४ ॥

ऐ मन, तुम इसीलिए हरि-नाम का जाप करो, क्योंकि सन्तों और वेदों के कथनानुसार तुम्हारा मार्ग काँटे-भरा है, और तुम मोह और अहंकार में लीन हो (अतः मोह को छोड़कर हरिगुण गाओ) ॥ रहाउ ॥ जो नामुराद माया में रत रहते हैं (उन्हें मोह का दुःख बना रहता है) ॥ १ ॥ जिसका उद्धार प्रभु स्वयं करता है, वे नाम जपने से मुक्त हो जाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि सन्तों के प्रताप से मोह, भय, भ्रम आदि सब दुर्गुण छूट जाते हैं ॥ २ ॥ ५ ॥ ४४ ॥

कानड़ा महला ५ घरु १०

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ ऐसो दानु देहु जी संतहु जात जीउ बलिहारि । मान मोही पंच दोही उरझि निकटि बसिओ ताकी सरनि साधूआ दूत संगु निवारि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कोटि जनम जोनि भ्रमिओ हारि परिओ दुआरि ॥ १ ॥ किरपा गोबिंद भई मिलिओ नामु अधारु । दुलभ जनमु सफलु नानक भव उतारि पारि ॥ २ ॥ १ ॥ ४५ ॥

ऐ सन्तजनो, ऐसा दान दो, जिस पर मैं प्राण न्योछावर कर दूं। अभिमान में रत तथा पाँच काम-क्रोधादि दूतों द्वारा ठगा हुआ, उनमें फँसकर, उन्हीं में फँसा, उनके समीप बसता था। अब मैंने इनसे बचने के लिए साधुओं की शरण ली है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करोड़ों जन्म विभिन्न योनियों में घूमता रहा, अन्ततः हारकर हे प्रभु, तुम्हारे द्वार पर आया हूं ॥ १ ॥ वहाँ प्रभु की कृपा हुई है और हरि-नाम का सहारा मिला है। गुरु नानक कहते हैं कि इससे दुर्लभ मनुष्य-जन्म सफल होता एवं भव-सागर से मुक्ति होती है ॥ २ ॥ १ ॥ ४५ ॥

कानड़ा महला ५ घरु ११

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सहज सुभाए आपन आए ।

कछू न जानौ कछू दिखाए। प्रभु मिलिओ सुख बाले भोले ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संजोगि मिलाए साध संगाए। कतहू न जाए घरहि बसाए। गुन निधानु प्रगटिओ इह चोलै ॥ १ ॥ चरन लुभाए आन तजाए। थान थनाए सरब समाए। रसकि रसकि नानकु गुन बोलै ॥ २ ॥ १ ॥ ४६ ॥

सहज ही परमात्मा अपने-आप आ मिला है (मुझे नहीं मालूम कैसे !) मैं कुछ नहीं जानता और न ही कोई चमत्कार होते दीख पड़ा है। वह भोले भाव से मिला है, जिससे मुझे अतीव सुख प्राप्त हुआ है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संयोग से ही मुझे साधु-संगति प्राप्त हुई, परिणामतः मेरा मन अब नहीं भटकता, स्वस्वरूप में टिक गया है। और वह गुणागार प्रभु इसी जन्म में प्रकट हो गया है ॥ १ ॥ मुझे परमात्मा के चरणों में प्रीति लगी है, अतः मैंने अन्य सब त्याग दिया है। वह स्वयं सब जगहों में व्याप्त है। गुरु नानक रस ले-लेकर उसके गुण गाते हैं ॥ २ ॥ १ ॥ ४६ ॥

॥ कानड़ा महला ५ ॥ गोबिंद ठाकुर मिलन दुराईं। परमिति रूपु अगंम अगोचर रहिओ सरब समाई ॥१॥रहाउ॥ कहनि भवनि नाही पाइओ पाइओ अनिक उकति चतुराई ॥१॥ जतन जतन अनिक उपाव रे तउ मिलिओ जउ किरपाई। प्रभू दइआर क्रिपार क्रिपानिधि जन नानक संत रेनाई ॥२॥२॥४७॥

प्रभु-स्वामी का मिलन कठिन है। उसका रूप अपरिमित है; वह अगम, अगोचर है और सब जगहों पर व्याप्त है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चर्चा करने, तीर्थों में भ्रमने से वह नहीं मिलता, युक्ति और चतुराई से भी उसे पाया नहीं जा सकता ॥ १ ॥ यत्न करते रहो, उपाय करो, किन्तु वह तभी मिलता है, जब प्रभु की कृपा होती है। दास नानक सन्तों की चरण-धूलि है, परमात्मा दयालु, कृपालु और करुणा-निधि है (दास नानक पर कृपा करता है) ॥ २ ॥ २ ॥ ४७ ॥

॥ कानड़ा महला ५ ॥ माई सिमरत राम राम राम। प्रभ बिना नाही होरु। चितवउ चरनारबिंद सासन निसि भोर ॥ १ ॥ रहाउ ॥ लाइ प्रीति कीन आपन तूटत नही जोरु। प्रान मनु धनु सरबसो हरि गुननिधे सुख मोर ॥ १ ॥ ईत ऊत राम पूरनु निरखत रिद खोरि। संत सरन तरन नानक बिनसिओ दुखु घोर ॥ २ ॥ ३ ॥ ४८ ॥

हे माई, परमात्मा का नाम जपो। प्रभु के सिवा अन्य किसके चरणारविन्द का सहारा हो सकता है, श्वास-श्वास और रात-दिन (उसी को जपो) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उससे प्रीति लगाकर उसे अपना बना लो, यह जोड़ पुनः टूटता नहीं है। गुण-निधि परमात्मा मेरा मन, प्राण, सर्वस्व है, मेरे लिए परमसुख का कारण है ॥ १ ॥ यहाँ-वहाँ हर जगह प्रभु व्याप्त है, मैंने उसे अपने हृदय की गहराइयों में देखा है। गुरु नानक कहते हैं कि सन्तों की शरण लेने से घोर दुःख भी नाश हो जाते हैं ॥ २ ॥ ३ ॥ ४८ ॥

॥ कानड़ा महला ५ ॥ जन को प्रभु संगे असनेहु। साजनो तू मीतु मेरा ग्रिहि तेरै सभु केहु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मानु मांगउ तानु मांगउ धनु लखमी सुत देह ॥ १ ॥ मुकति जुगति भुगति पूरन परमानंद परम निधान। भै भाइ भगति निहाल नानक सदा सदा कुरबान ॥ २ ॥ ४ ॥ ४९ ॥

प्रभु अपने सेवकों के अंग-संग रहता और उनसे प्यार करता है। हे सज्जन प्रभु, तुम्हीं मेरे मित्र हो, मेरे घर में सब कुछ तुम्हीं हो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुम्हीं से मैं मान-सम्मान, धन, लक्ष्मी, सन्तान एवं स्वास्थ्य आदि की याचना करता हूँ ॥ १ ॥ प्रभु परमानन्द तथा सुखों का भण्डार है, वह मुक्ति, युक्ति एवं लौकिक रसों की इच्छाओं का पूरा करनेवाला है। भय, भाव तथा भक्ति भी उसी की कृपा का परिणाम है; (इसीलिए) गुरु नानक उस पर सदा न्योछावर हैं ॥ २ ॥ ४ ॥ ४९ ॥

॥ कानड़ा महला ५ ॥ करत करत चरच चरच चरचरी। जोग धिआन भेख गिआन फिरत फिरत धरत धरत धरचरी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अहं अहं अहै अवर मूड़ मूड़ मूड़ बवरई। जति जात जात जात सदा सदा सदा सदा काल हई ॥ १ ॥ मानु मानु मानु तिआगि मिरतु मिरतु निकटि निकटि सदा हई। हरि हरे हरे भाजु कहतु नानकु सुनहु रे मूड़ बिनु भजन भजन भजन अहिला जनमु गई ॥ २ ॥ ५ ॥ ५० ॥

योगी, ज्ञानी, ध्यानी और मिथ्याडम्बरी, सब उसकी चर्चा ही करते हैं। समूची धरती एवं धरती पर विचरनेवाले लोग (सब उस प्रभु की बात करते हैं) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनेक जन अहंकार में घूमते हैं, कुछ तो बावरे हो गए हैं (अर्थात् मूर्खतावश पगला गए हैं)। जहाँ-जहाँ भी वे जाते हैं, काल-दण्ड उनके सिर पर रहता है, वे काल द्वारा मारे जाते हैं ॥ १ ॥ (इसलिए) ऐ जीव, मान-अभिमान को त्याग, मृत्यु हर

समय निकट आ रही है। गुरु नानक कहते हैं कि ऐ मूढ़ जीव, सुनो, नित्य-नित्य हरि का नाम भजो, अन्यथा बिना भजन के जन्म लाभ-हीन रहता है ॥ २ ॥ ५ ॥ ५० ॥

कानड़ा असटपदीआ महला ४ घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ जपि मन राम नामु सुखु पावैगो ॥ जिउ जिउ जपै तिवै सुखु पावै सतिगुरु सेवि समावैगो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भगत जनां की खिनु खिनु लोचा नामु जपत सुखु पावैगो। अनरस साद गए सभ नीकरि बिनु नावै किछु न सुखावैगो ॥१॥ गुरमति हरि हरि मीठा लागा गुरु मीठे बचन कढावैगो। सतिगुर बाणी पुरखु पुरखोतम बाणी सिउ चितु लावैगो ॥ २ ॥ गुरबाणी सुनत मेरा मनु द्रविआ मनु भीना निज घरि आवैगो। तह अनहत धुनी बाजहि नित बाजे नीझर धार चुआवैगो ॥ ३ ॥ राम नामु इकु तिल तिल गावै मनु गुरमति नामि समावैगो। नामु सुणै नामो मनि भावै नामे ही त्रिपतावैगो ॥ ४ ॥ कनिक कनिक पहिरे बहु कंगना कापरु भांति बनावैगो। नाम बिना सभि फीक फिकाने जनमि मरै फिरि आवैगो ॥ ५ ॥ माइआ पटल पटल है भारी घरु घूमनि घेरि घुलावैगो। पाप बिकार मनूर सभि भारे बिखु दुतरु तरिओ न जावैगो ॥ ६ ॥ भउ बैरागु भइआ है बोहिथु गुरु खेवटु सबदि तरावैगो। राम नामु हरि भेटीऐ हरि रामै नामि समावैगो ॥ ७ ॥ अगिआनि लाइ सवालिआ गुर गिआनै लाइ जगावैगो। नानक भाणै आपणै जिउ भावै तिवै चलावैगो ॥ ८ ॥ १ ॥

हे मन, राम-नाम जपो, तुम्हें सुख मिलेगा। ज्यों-ज्यों जपोगे, सुख पाओगे; सतिगुरु की शरण लेने से प्रभु में लीन हो जाओगे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भक्तजनों की क्षण-क्षण यही इच्छा रहती है, (वे जानते हैं कि) नाम जपने से सुख मिलेगा। अन्य रस-भोग सब दूर हुए हैं, अब नाम के सिवा कुछ नहीं रुचता ॥ १ ॥ गुरु के उपदेश से हरि-नाम मीठा लगा है, गुरु के मीठे वचनों से ही नाम का पता चला है। सतिगुरु की वाणी से ही परमपुरुष परमात्मा का ज्ञान होता है, अतः वाणी से चित्त लगेगा ॥ २ ॥ गुरु वाणी-श्रवण द्वारा मेरा मन द्रवित हो गया है, इस

भीगे हृदय से अपने घर (प्रभु के दरबार) में आओगे। वहाँ अनाहत ध्वनि बजती होगी, अमृत-धारा बह रही होगी और नित्य नाद-संगीत विद्यमान होगा ॥ ३ ॥ क्षण-क्षण जो हरि-नाम का गुण गाता है, गुरु-उपदेश से उसका मन नाम में ही समा जाता है। हरि-नाम के श्रवण, मनन से हृदय में पूर्णतृप्ति पाओगे ॥ ४ ॥ चाहे स्वर्ण के अनेक कंगन-आभूषण पहनो, भाँति-भाँति के कपड़े पहन लो, किन्तु हरि-नाम के बिना ये सब फीके हैं, पुनः जन्म-मरण के चक्र में पड़े रहोगे ॥ ५ ॥ माया का आवरण बड़ा भारी पटल है, इसके भँवर में पड़कर घर घुल (मिट) जायगा। पापों, विकारों और भारी दुष्कर्मों के कारण जीवन का बेड़ा भारी हो रहा है, विषय का सागर इससे तरा नहीं जा सकेगा ॥ ६ ॥ हरि का भय और लोक से वीतराग की भावनाओं को जहाज़ बनाकर गुरु-नाविक के उपदेश द्वारा तिर सकोगे। प्रभु-नाम की भेंट लेकर मिलने वाला प्रभु में ही लीन हो जाता है ॥ ७ ॥ प्रभु ने अज्ञान में लगाकर प्रश्न-चिह्न छोड़ा है, गुरु ने ज्ञान में लगाकर जागृति दी है। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु की इच्छा सर्वोपरि है, उसे जैसा रुचता है, वैसे वह चलाता है ॥ ८ ॥ १ ॥

॥ कानड़ा महला ४ ॥ जपि मन हरि हरि नामु तरावैगो। जो जो जपै सोई गति पावै जिउ ध्रू प्रहिलादु समावैगो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ क्रिपा क्रिपा क्रिपा करि हरि जीउ करि किरपा नामि लगावैगो। करि किरपा सतिगुरू मिलावहु मिलि सतिगुर नामु धिआवैगो ॥ १ ॥ जनम जनम की हउमै मलु लागी मिलि संगति मलु लहि जावैगो। जिउ लोहा तरिओ संगि कासट लगि सबदि गुरू हरि पावैगो ॥ २ ॥ संगति संत मिलहु सत संगति मिलि संगति हरि रसु आवैगो। बिनु संगति करम करै अभिमानी कढि पाणी चीकड़ु पावैगो ॥३॥ भगत जना के हरि रखवारे जन हरि रसु मीठ लगावैगो। खिनु खिनु नामु देइ वडिआई सतिगुर उपदेसि समावैगो ॥ ४ ॥ भगत जना कउ सदा निवि रहीऐ जन निवहि ता फल गुन पावैगो। जो निंदा दुसट करहि भगता की हरनाखस जिउ पचि जावैगो ॥५॥ ब्रहम कमल पुतु मीन बिआसा तपु तापन-पूज करावैगो। जो जो भगतु होइ सो पूजहु भरमन भरमु चुकावैगो ॥ ६ ॥ जात नजाति देखि मत भरमहु सुक जनक पगीं लगि धिआवैगो। जूठनजूठि पई सिर ऊपरि खिनु मनूआ तिलु न डुलावैगो ॥ ७ ॥ जनक

जनक बैठे सिंघासनि नउ मुनी धूरि लै लावैगो । नानक क्रिपा क्रिपा करि ठाकुर मै दासनि दास करावैगो ।। ८ ।। २ ।।

ऐ मन, हरि-नाम जपो, इससे संसार-सागर से तिर जाओगे। जो-जो प्रभु-नाम जपता है, उसे गति मिलती है, जैसे ध्रुव और प्रह्लाद समा गए ।। १ ।। रहाउ ।। कृपा करो मेरे प्रियतम, कृपा-पूर्वक मुझे हरि-नाम में तल्लीन करो। कृपा करके मुझे सतिगुरु से भेंट करवा दो, सतिगुरु को मिलकर हरि-नाम की आराधना होगी ।। १ ।। जन्म-जन्म से जो अहम् की मलिनता जम रही है, वह मलिनता सत्संगति में रहकर धुल जाती है। जैसे लोहा लकड़ी के संग तैर जाता है, वैसे ही गुरु के उपदेश से लगकर परमात्मा को पा जाओगे ।। २ ।। सन्तों की संगति में रहकर सत्संगति करो और वहाँ हरि-रस का आनन्द प्राप्त करोगे। जो अभिमानी सत्संगति के बिना कर्म करते हैं, वे पानी के निकल जाने पर केवल कीचड़ ही प्राप्त कर पाते हैं ।। ३ ।। हरि स्वयं भक्तजनों के रक्षक हैं, भक्तों को हरि-रस मीठा लगता है। वे क्षण-क्षण हरि-नाम की प्रतिष्ठा करते हैं और वे सतिगुरु के उपदेश से हरि में ही समा जायँगे ।। ४ ।। भक्तजनों के प्रति सदैव नम्रता से रहो, नम्रता में ही सब फल और गुण प्राप्त होंगे। जो दुष्ट भक्त-निन्दक हैं, वे हिरण्यकशिपु की नाईं मारे जायँगे ।। ५ ।। पद्म-पुत्र ब्रह्मा (नाभि में से उगनेवाले कमल में ब्रह्मा विराजता है) और ऋषिवर व्यास (मीन-कुल में उत्पन्न) ने अपनी तपस्या-साधना द्वारा अपनी पूजा करवाई; जो-जो भक्ति करते हैं, वे उनका महत्त्व मानते और भ्रम-मुक्त रहते हैं ।। ६ ।। जातियों में ऊँची जाति देखकर भ्रम में न पड़ो, शुकदेव (ब्राह्मण) जनक (क्षत्रिय) के चरणों में लगकर मुक्त हो गए। उनके (शुकदेव के) सिर पर जनक के यज्ञ में, जूठन भी पड़ी, किन्तु क्षण के लिए उनका मन नहीं डोला ।।७।। जनक (ज्ञानी थे) सिंहासन पर बैठते थे, किन्तु उन्होंने भी ज्ञान पाने से पूर्व नौ मुनियों की चरण-धूलि मुख लगाई (श्रीमद्भागवत स्कंद ४, अध्याय २ के अनुसार नौ मुनि इस प्रकार हैं— मरीचि, अत्रि, अंगिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, भृगु, वसिष्ठ, अथर्वंनि)। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु कृपा करो, मुझे अपने दासों का दास ही बना लो ।। ८ ।। २ ।।

।। कानड़ा महला ४ ।। मनु गुरमति रसि गुन गावैगो । जिहबा एक होइ लख कोटी लख कोटी कोटि धिआवैगो ।।१।।रहाउ।। सहस फनी जपिओ सेख नागै हरि जपतिआ अंतु न पावैगो । तू अथाहु अति अगमु अगमु है मति गुरमति मनु ठहरावैगो ।। १ ।। जिन तू जपिओ तेई जन नीके हरि जपतिअहु कउ सुखु पावैगो ।

बिदर दासी सुत छोक छोहरा क्रिसनु अंकि गलि लावैगो ॥ २ ॥ जल ते ओपति भई है कासट कासट अंगि तरावैगो। राम जना हरि आपि सवारे अपना बिरदु रखावैगो ॥ ३ ॥ हम पाथर लोह लोह बड पाथर गुर संगति नाव तरावैगो। जिउ सत संगति तरिओ जुलाहो संतजना मनि भावैगो ॥४॥ खरे खरोए बैठत ऊठत मारगि पंथि धिआवैगो। सतिगुर बचन बचन है सतिगुर पाधरु मुकति जनावैगो ॥५॥ सासनि सासि सासि बलु पाईहै निहसासनि नामु धिआवैगो। गुरपरसादी हउमै बूझै तौ गुरमति नामि समावैगो ॥ ६ ॥ सतिगुरु दाता जीअ जीअन को भागहीन नही भावैगो। फिरि एह वेला हाथि न आवै परतापै पछुतावैगो ॥ ७ ॥ जे को भला लोड़ै भल अपना गुर आगै ढहि ढहि पावैगो। नानक दइआ दइआ करि ठाकुर मै सतिगुर भसम लगावैगो ॥ ८ ॥ ३ ॥

ऐ मन, गुरु के उपदेशामृत का पान करते हुए प्रभु का गुण गाओ। एक जिह्वा यदि लाख-करोड़ भी हो जायँ, तो लाखों-करोड़ों से उसका गुण गाते रहो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ शेषनाग ने अपनी सहस्रों जिह्वाओं से उसका नाम जपा, किन्तु तो भी उसका अन्त नहीं पाया। प्रभु अथाह और अगम है, केवल गुरु के उपदेश से ही उसमें मन ठहरता है ॥ १ ॥ जिन लोगों ने तुम्हारा नाम जपा है, वे ही भले हैं, नाम-जाप से ही सुख पाओगे। विदुर चाहे दासी-पुत्र और अछूत लड़का था, तो भी श्रीकृष्ण ने उसे (भक्ति-कारण) अंग लगाया ॥ २ ॥ जल से लकड़ी उपजती है और जल अपने में उसे सदा तैराता है; (इसी तरह) प्रभु अपने विरद की रक्षा करता है और भक्तजनों को स्वयं सँवारता है ॥ ३ ॥ हम तो भारी पत्थर या लोहे के समान हैं, किन्तु गुरु-संगति की नाव में पार लग जाते हैं। जैसे कबीर-सरीखा जुलाहा भी सन्तजनों की संगति में तिर गया और उसने सन्तों में मन रमा लिया ॥ ४ ॥ प्रभु का नाम बैठे, खड़े, मार्ग में चलते सब जगह जपा जा सकता है। सतिगुरु का वचन ही गुरु है, उसी से मुक्ति का मार्ग मिलता है ॥ ५ ॥ सतिगुरु के शासन से श्वास-श्वास प्रभु-नाम जपकर बल पाया है और अब निर्भय होकर हरि-नाम जपते हैं। गुरु की कृपा से जो अहम्-भाव को समझ लेते हैं, वे गुरु-उपदेश से हरि-नाम में ही समा जाते हैं ॥ ६ ॥ सतिगुरु सब जीवों का दाता है, किन्तु भाग्यहीन उसे नहीं पाते; पुनः यह अवसर हाथ नहीं लगता और जीव परिताप में पछताता रह जाता है ॥ ७ ॥ जो कोई अपना भला चाहता हो, उसे गुरु के सम्मुख नत-मस्तक होना चाहिए। गुरु नानक

कहते हैं कि ऐ स्वामी, मुझ पर दया करो और मुझे सतिगुरु की चरण-धूलि प्रदान कर दो ॥ ८ ॥ ३ ॥

॥ कानड़ा महला ४ ॥ मनु हरि रंगि राता गावैगो । भै भै त्रास भए है निरमल गुरमति लागि लगावैगो ॥१॥रहाउ॥ हरि रंगि राता सद बैरागी हरि निकटि तिना घरि आवैगो । तिन की पंक मिलै तां जीवा करि किरपा आपि दिवावैगो ॥ १ ॥ दुबिधा लोभि लगे है प्राणी मनि कोरै रंगु न आवैगो । फिरि उलटिओ जनमु होवै गुरबचनी गुरुपुरखु मिलै रंगु लावैगो ॥ २ ॥ इंद्री दसे दसे फुनि धावत त्रैगुणीआ खिनु न टिकावैगो । सतिगुर परचै वसगति आवैं मोख मुकति सो पावैगो ॥ ३ ॥ ओअंकारि एको रवि रहिआ सभु एकस माहि समावैगो । एको रूपु एको बहुरंगी सभु एकतु बचनि चलावैगो ॥ ४ ॥ गुरमुखि एको एकु पछाता गुरमुखि होइ लखावैगो । गुरमुखि जाइ मिलै निज महली अनहद सबदु बजावैगो ॥ ५ ॥ जीअ जंत सभ सिसटि उपाई गुरमुखि सोभा पावैगो । बिनु गुर भेटे को महलु न पावै आइ जाइ दुखु पावैगो ॥ ६ ॥ अनेक जनम विछुड़े मेरे प्रीतम करि किरपा गुरू मिलावैगो । सतिगुर मिलत महा सुखु पाइआ मति मलीन बिगसावैगो ॥७॥ हरि हरि क्रिपा करहु जगजीवन मै सरधा नामि लगावैगो । नानक गुरू गुरू है सतिगुरु मै सतिगुरु सरनि मिलावैगो ॥ ८ ॥ ४ ॥

ऐ मन, हरि-रंग में मस्त कर नित्य प्रभु-नाम का गान करो। परमात्मा के भय से निर्मल-चित्त होकर गुरु के उपदेशानुसार प्रभु में लग्न लगाओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि के प्यार में रहनेवाला जीव अनासक्त होता है, उसी के निकट सदा हरि विराजता है। ऐसे जीवों की चरण-धूलि मेरे लिए जीवन-दायिनी है, वह भी प्रभु कृपा करके दिलवाते हैं ॥१॥ प्रायः प्राणी दुविधा और लोभ में लगे रहते हैं, उनका मन कोरा रहता है, उसमें प्रभु का रंग नहीं भरता। यदि वह मन को उलट ले और नया जन्म लेकर गुरु के उपदेश द्वारा परमपुरुष की खोज करे, तब उसे प्रभु-प्रेम का रंग मिलेगा ॥ २ ॥ अब तो दसों इन्द्रियाँ लौकिक रसों की ओर भागती हैं, त्रिगुणमयी माया के कारण स्थिर नहीं होतीं। यदि सतिगुरु से भेंट हो जाय तो ये इन्द्रियाँ वश में आ जायँ और परिणामतः मोक्ष की प्राप्ति हो ॥ ३ ॥ केवल परमात्मा ही सब जगह व्याप्त है, उसी एक में

सबको समा जाना है। उसका रूप एक भी है और बहुरंगी भी (एकता में अनेकता) है, उसी एक के वचन से सब व्यवस्था नियन्त्रण में रहती है ॥ ४ ॥ गुरु के द्वारा उसे केवल शक्ति की पहचान होती है, कोई गुरुमुख जीव ही इस तथ्य को पहचानता है। गुरमुख जीव प्रभु को उसके प्रासादों में जा मिलता है, जहाँ अनाहत-नाद ध्वनित हुआ करता है ॥ ५ ॥ जीव-जन्तुओं की सृष्टि उत्पन्न करके उसमें सर्वाधिक शोभा गुरुमुख को दी गई है। गुरु-मिलन के बिना कोई प्रभु में लीन नहीं होता— आवागमन बना रहता है ॥६॥ अनेक जन्मों से गुरु से बिछुड़े पड़े हैं, प्रियतम की कृपा हो तो गुरु से पुनर्मिलन होता है। सतिगुरु के मिलने से महासुख प्राप्त होता है और जीव की बुद्धि का शुद्धिकरण होकर विकास होता है ॥ ७ ॥ हे हरि, कृपा करके मुझे श्रद्धापूर्वक हरि-नाम में लीन कर लो। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु और सतिगुरु में अभेद है, मुझे सतिगुरु की शरण में लगाओ ॥ ८ ॥ ४ ॥

॥ कानड़ा महला ४ ॥ मन गुरमति चाल चलावैगो। जिउ मैगलु मसतु दीजै तलि कुंडे गुर अंकसु सबदु द्रिड़ावैगो ॥१॥ रहाउ ॥ चलतौ चलै चलै दह दहदिसि गुरु राखै हरि लिव लावैगो। सतिगुरु सबदु देइ रिद अंतरि मुखि अंम्रितु नामु चुआवैगो ॥ १ ॥ बिसीअर बिसू भरे है पूरन गुरु गरुड़ सबदु मुखि पावैगो। माइआ भुइअंग तिसु नेड़ि न आवै बिखु झारि झारि लिव लावैगो ॥२॥ सुआनु लोभु नगर महि सबला गुरु खिन महि मारि कढावैगो। सतु संतोखु धरमु आनि राखे हरि नगरी हरि गुन गावैगो ॥३॥ पंकज मोह निघरतु है प्रानी गुरु निघरत काढि कढावैगो। त्राहि त्राहि सरनि जन आए गुरु हाथी दे निकलावैगो ॥ ४ ॥ सुपनंतरु संसारु सभु बाजी सभु बाजी खेलु खिलावैगो। लाहा नामु गुरमति लै चालहु हरि दरगह पैधा जावैगो ॥ ५ ॥ हउमै करै करावै हउमै पाप कोइले आनि जमावैगो। आइआ कालु दुखदाई होए जो बीजे सो खवलावैगो ॥ ६ ॥ संतहु राम नामु धनु संचहु लै खरचु चले पति पावैगो। खाइ खरचि देवहि बहुतेरा हरि देदे तोटि न आवैगो ॥ ७ ॥ राम नाम धनु है रिद अंतरि धनु गुर सरणाई पावैगो। नानक दइआ दइआ करि दीनी दुखु दालदु भंजि समावैगो ॥ ८ ॥ ५ ॥

ऐ मन, गुरु-मतानुसार आचरण करो। जैसे मस्त हाथी अंकुश के

काँटे से चलता है, तुम भी गुरु-शब्द के अंकुश से हरिनाम का जाप करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चंचल मन दसों दिशाओं में चलायमान होता है, गुरु ही इसे प्रभु के ध्यान में लीन रखता है। सतिगुरु हृदय में शब्द दृढ़ करवाकर मुख से अमृत-नाम-रस को स्रवित करते हैं ॥ १ ॥ वासना के विषधर विष से पूर्णतः भरे हैं, पूर्णगुरु गारुड़ी (मांत्रिक) रूप में शब्द के मन्त्र देकर विष उतार देता है। माया रूपी सर्प उस जीव के निकट नहीं आता, जिसका विष गुरु-मान्त्रिक उतार देता है और प्रभु में ध्यान लगाता है ॥ २ ॥ शरीर रूपी नगर में लोभ रूपी कुत्ता बड़ा बलवान है, गुरु ही उसको मारकर भगा देता है। उस नगर में वह सत्, सन्तोष और धर्म को बसाता है, वह हरि की नगरी है, इसलिए हरि-गुण गाने की प्रेरणा देता है ॥ ३ ॥ प्राणी मोह रूपी कीचड़ में फँसता है, तो गुरु ही उसके फंदे काटकर छुड़ाता है। शरण में आए सेवक रक्षा के लिए पुकारते हैं, तो गुरु ही उन्हें सहारा देकर निकालता है ॥ ४ ॥ यह संसार स्वप्न में खेली बाज़ी के समान है, गुरु ही इस बाज़ी को सफलतापूर्वक खिलवाता है। गुरु-मतानुसार आचरण द्वारा हरि-नाम का लाभ कमानेवाला प्रतिष्ठा अर्जित करके जाएगा ॥ ५ ॥ जब जीव अहंकारवश सब कुछ करता-कराता है, तो (एक प्रकार से वह) पापों के कोयले इकट्ठे करता है। इसी तरह मृत्यु आ जाती है, उसने जो बीजा होता है, वही खाना होता है ॥ ६ ॥ ऐ सन्तो, रामनाम-धन का संचय करो, उसी का ख़र्चा पल्ले बाँधकर चलो। खाने-ख़र्चने से यह धन बढ़ेगा, परमात्मा की ओर से देने में भी कोई कमी नहीं रहेगी ॥ ७ ॥ रामनाम-धन हृदय के भीतर संचित होता है, गुरु की शरण में इसकी उपलब्धि होती है। गुरु नानक कहते हैं कि जब उस दयालु प्रभु की दया होती है, तो जीव दुःख-दरिद्रता से मुक्त होकर परमात्मा में ही लीन हो जाता है ॥ ८ ॥ ५ ॥

॥ कानड़ा महला ४ ॥ मनु सतिगुर सरनि धिआवैगो। लोहा हिरनु होवै संगि पारस गुनु पारस को होइ आवैगो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतिगुरु महापुरखु है पारसु जो लागै सो फलु पावैगो। जिउ गुर उपदेसि तरे प्रहिलादा गुरु सेवक पैज रखावैगो ॥ १ ॥ सतिगुर बचनु बचनु है नीको गुरबचनी अंम्रितु पावैगो। जिउ अंबरीकि अमरापद पाए सतिगुर मुख बचन धिआवैगो ॥ २ ॥ सतिगुर सरनि सरनि मनि भाई सुधा सुधा करि धिआवैगो। दइआल दीन भए है सतिगुर हरि मारगु पंथु दिखावैगो ॥ ३ ॥ सतिगुर सरनि पए से थापे तिन राखन कउ प्रभु आवैगो। जे को सरु संधै जन ऊपरि फिरि उलटो तिसै लगावैगो ॥४॥ हरि

हरि हरि हरि हरि सरु सेवहि तिन दरगह मानु दिवावैगो। गुरमति गुरमति गुरमति धिआवहि हरि गलि मिलि मेलि मिलावैगो ॥ ५ ॥ गुरमुखि नादु बेदु है गुरमुखि गुर परचै नामु धिआवैगो। हरि हरि रूपु हरि रूपो होवै हरि जन कउ पूज करावैगो ॥ ६ ॥ साकत नर सतिगुरु नही कीआ ते बेमुख हरि भरमावैगो। लोभ लहरि सुआन की संगति बिखु माइआ करंगि लगावैगो ॥ ७ ॥ राम नामु सभ जग का तारकु लगि संगति नामु धिआवैगो। नानक राखु राखु प्रभ मेरे सत संगति राखि समावैगो ॥ ८ ॥ ६ ॥ छका १

ऐ मन, सतिगुरु की शरण में रहकर प्रभु-नाम का ध्यान करो। पारस के संग लोहा तो सोना बनता है, किन्तु गुरु रूपी पारस की संगति से जीव में पारस के ही गुण आ जाते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतिगुरु एक ऐसा महनीय पारस है, जिसके निकट मनोवांछित फल मिल जाता है। जिस प्रकार गुरु के उपदेश से प्रह्लाद की गति हुई, वैसे ही गुरु सदा अपने सेवक का मान रखता है ॥ १ ॥ सतिगुरु के वचन उत्तम हैं, ये अमृत-सम वचन गुरु-कृपा से ही मिलते हैं, जैसे गुरु के वचनानुसार मुख से प्रभु-जाप द्वारा अम्बरीष ने अमरपद प्राप्त कर लिया था ॥ २ ॥ सतिगुरु की शरण जब मन-भावनी होती है, तो जीव अमृतमय हरिनाम का ध्यान करता है। सतिगुरु दीन जीव पर दयालु होकर वास्तव का मार्ग दिखाता है ॥ ३ ॥ सतिगुरु की शरण लेनेवाले स्थिर हो गए हैं, उनकी रक्षा प्रभु स्वयं करेंगे। यदि कोई प्रभु के सेवक को तीर का निशाना बनाएगा, प्रभु उलटकर उस तीर को चलानेवाले पर लगा देते हैं ॥ ४ ॥ जो जीव हरि रूपी सरोवर अर्थात् सत्संगति में विचरता है, उसे परमात्मा की दरगाह में सम्मान प्राप्त होता है। गुरु-मतानुसार आचरण करते हुए जो प्रभु-भजन करते हैं, परमात्मा उन्हें गले लगा लेता है ॥ ५ ॥ जिनके लिए गुरु ही नाद है, गुरु ही अक्षय ज्ञान-भण्डार (वेद) है, वे गुरु के तुष्ट होने पर हरिनाम की आराधना करते हैं। वे हरिजन हरि की पूजा करते हुए हरि का रूप ही हो जाते हैं ॥ ६ ॥ मायाचारी जीव ने गुरु धारण नहीं किया होता, प्रभु उस विमुख जीव को भ्रम में डाले रखता है। लोभ रूपी कुत्ते की संगति में रहने के कारण माया ऐसे जीव को मृत पशु के कंकाल-सा रखती है ॥७॥ हरिनाम भवसागर तारनेवाला है, अतः सन्तों के सम्पर्क में हरिनाम का ध्यान करो। गुरु नानक प्रार्थना करते हैं कि ऐ मेरे प्रभु, मुझे सदैव सत्संगति के सम्पर्क में बनाए रखो ॥ ८ ॥ ६ ॥ छका १

कानड़ा छंत महला ५

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ से उधरे जिन राम धिआए । जतन माइआ के कामि न आए । राम धिआए सभि फल पाए धनि धंनि ते बडभागीआ । सतसंगि जागे नामि लागे एक सिउ लिव लागीआ । तजि मान मोह बिकार साधू लगि तरउ तिन कै पाए । बिनवंति नानक सरणि सुआमी बडभागि दरसनु पाए ॥ १ ॥ मिलि साधू नित भजह नाराइण । रसकि रसकि सुआमी गुण गाइण । गुण गाइ जीवह हरि अमिउ पीवह जनम मरणा भागए । सतसंगि पाईऐ हरि धिआईऐ बहुड़ि दूखु न लागए । करि दइआ दाते पुरख बिधाते संत सेव कमाइण । बिनवंति नानक जन धूरि बांछहि हरि दरसि सहजि समाइण ॥ २ ॥ सगले जंत भजहु गोपालै । जप तप संजम पूरन घालै । नित भजहु सुआमी अंतरजामी सफल जनमु सबाइआ । गोबिदु गाईऐ नित धिआईऐ परवाणु सोई आइआ । जप ताप संजम हरि हरि निरंजन गोबिद धनु संगि चालै । बिनवंति नानक करि दइआ दीजै हरि रतनु बाधउ पालै ॥ ३ ॥ मंगलचार चोज आनंदा । करि किरपा मिले परमानंदा । प्रभ मिले सुआमी सुखहगामी इछ मन की पुंनीआ । बजी बधाई सहजे समाई बहुड़ि दूखि न रुंनीआ । ले कंठि लाए सुख दिखाए बिकार बिनसे मंदा । बिनवंति नानक मिले सुआमी पुरख परमानंदा ॥ ४ ॥ १ ॥

जिन जीवों ने हरिनाम जपा होता है, वे मुक्त हो जाते हैं। माया-परक यत्न किसी काम नहीं आते। रामनाम का ध्यान करनेवाले भाग्यशाली हैं, वे सब प्रकार के फल प्राप्त करते हैं। वे सत्संगति में जागृति पाते एवं हरिनाम जपते हुए एक हरि में ही मन रमाते हैं। अतः (तुम भी) मान, मोह का त्याग कर सन्तों के चरणों की शरण लो और मुक्त हो जाओ। गुरु नानक विनय करते हैं कि हे स्वामी, भाग्यशाली जीव ही तुम्हारे दर्शन पाते हैं ॥ १ ॥ साधुजनों के सम्पर्क में नित्य नारायण की आराधना करो, आनन्द एवं रुचिपूर्वक स्वामी के गुण गाओ। गुण गाते हुए जीव हरि रूपी अमृत का पान करता और जन्म-मरण से छूटता है। सत्संगति में रहने एवं हरिनाम का ध्यान करने से पुनः कभी दुःख नहीं होता। ऐ दाता, ऐ सृजनहार प्रभु, दया करो और हमें सन्तों

की सेवा में लगाओ। गुरु नानक विनती करते हैं कि उन्हें अपने सेवकों की चरण-धूलि प्रदान करो, ताकि वे तुम्हारे दर्शन पाकर पूर्णतः परमानन्द अवस्था में लीन हो सकें ॥ २ ॥ समस्त जीव प्रभु को भजते हैं, इसी में उनका जप, तप, संयम सब सम्पन्न हो जाते हैं। अन्तर्यामी स्वामी का नित्य भजन करने से समूचा जन्म सफल होता है। गोविंद (वाहिगुरु) का गुण गाने तथा नित्य ध्यान करने से प्रभु की स्वीकृति प्राप्त होती है। परमात्मा ही जप, तप, संयम है, वह मायातीत है और वही एक मात्र संग चलनेवाला धन है। गुरु नानक विनय करते हैं कि दया करके हरिनाम-रत्न मेरे पल्ले बाँध दो ॥ ३ ॥ आनन्द तथा प्रभु-चरित के गीत गाओ। प्रभु दया करके तुम्हें परमानन्द देंगे। सुखों का दाता प्रभु मिलेगा, तब सब इच्छाएँ पूर्ण हो जायँगी। पूर्ण प्रसन्नता प्राप्त होगी, आत्मा सहज उल्लास को पा जायगी, पुनः कभी दुःख नहीं होगा। परमात्मा गले से लगा लेगा, सुख मिलेगा, विषय-विकार तथा बुराइयाँ मिट जायँगी; गुरु नानक विनती करते हैं कि परमानन्द देनेवाला परमात्मा मिल जायगा (तो उपर्युक्त आध्यात्मिक अवस्था का लाभ मिलेगा) ॥ ४ ॥ १ ॥

कानड़े की वार महला ४ मूसे की वार की धुनी

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सलोक म० ४ ॥ राम नामु निधानु हरि गुरमति रखु उरधारि। दासन दासा होइ रहु हउमै बिखिआ मारि। जनमु पदारथु जीतिआ कदे न आवै हारि। धनु धनु वडभागी नानका जिन गुरमति हरि रसु सारि ॥ १ ॥ ॥ म० ४ ॥ गोविंदु गोविदु गोविदु हरि गोविदु गुणी निधानु। गोविदु गोविदु गुरमति धिआईऐ तां दरगह पाईऐ मानु। गोविदु गोविदु गोविदु जपि मुखु ऊजला परधानु। नानक गुरु गोविंदु हरि जितु मिलि हरि पाइआ नामु ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ तूं आपे ही सिध साधिको तू आपे ही जुग जोगीआ। तू आपे ही रस रसीअड़ा तू आपे ही भोग भोगीआ। तू आपे आपि वरतदा तू आपे करहि सु होगीआ। सतसंगति सतिगुर धंनु धंनुो धंन धंन धनो जितु मिलि हरि बुलग बुलोगीआ। सभि कहहु मुखहु हरि हरि हरे हरि हरि हरे हरि बोलत सभि पाप लहोगीआ ॥ १ ॥

॥ सलोक म० ४ ॥ गुरु के उपदेशानुसार सदैव रामनाम को हृदय में धारण किए रहो। अहंकार रूपी विष को मारकर प्रभु के दासों का

भी दास (विनम्रता) बने रहो। ऐसा करनेवाला जीव सदैव जन्म-पदार्थ पर विजय पाता है, कभी हारता नहीं। गुरु नानक कहते हैं कि वे भाग्यशाली धन्य हैं, जो गुरु के द्वारा नित्य हरि-रस का पान करते हैं (स्मरण करते हैं— हरिनाम का) ॥ १ ॥ म० ४ ॥ परमात्मा के गुण गाओ, वह गुण-निधान (भण्डार) है; यदि हम गुरु-उपदेशानुसार गोविंद-गुण गाएँगे, तो हमें प्रभु-दरबार में सम्मान प्राप्त होगा। हरिनाम-जाप से मुख उजला होता है और जीव को प्रधानता मिलती है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु हरि से अभिन्न है, जिसके सम्पर्क में हरिनाम लब्ध होता है ॥२॥ ॥ पउड़ी ॥ हे प्रभु, तुम स्वयं ही साधक और सिद्ध हो, आप ही युक्ति और योगी हो, तुम्हीं रस और रस के भोगी हो, तुम्हीं भोग हो और भोग करनेवाले हो। तुम अपने-आप सब ओर प्रसारित हो, तुम्हारे ही करने से सब होता है। सतिगुरु का सम्पर्क एवं सत्संग धन्य है, जहाँ बैठकर प्रभु के बोल (बाणी, शब्द) जीव भी बोलता है। अतः सब मुख से हरि-हरि-हरे कहते रहें, ऐसा कहते रहने से सब पाप उतर जाते हैं ॥ १ ॥

॥ सलोक म० ४ ॥ हरि हरि हरि हरि नामु है गुरमुखि पावै कोइ। हउमै ममता नासु होइ दुरमति कढै धोइ। नानक अनदिनु गुण उचरै जिन कउ धुरि लिखिआ होइ ॥१॥ म० ४ ॥ हरि आपे आपि दइआलु हरि आपे करे सु होइ। हरि आपे आपि वरतदा हरि जेवडु अवरु न कोइ। जो हरि प्रभ भावै सो थीऐ जो हरि प्रभु करे सु होइ। कीमति किनै न पाईआ बेअंतु प्रभू हरि सोइ। नानक गुरमुखि हरि सालाहिआ तनु मनु सीतलु होइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सभ जोति तेरी जगजीवना तू घटि घटि हरि रंग रंगना। सभि धिआवहि तुधु मेरे प्रीतमा तू सति सति पुरख निरंजना। इकु दाता सभु जगतु भिखारीआ हरि जाचहि सभ मंग मंगना। सेवकु ठाकुरु सभु तू है तू है गुरमती हरि चंग चंगना। सभि कहहु मुखहु रिखीकेसु हरे रिखीकेसु हरे जितु पावहि सभ फल फलना ॥ २ ॥

॥ सलोक म० ४ ॥ हरि-हरिनाम ऐसी महान संज्ञा है कि कोई विरला ही गुरुमुख जीव इसे प्राप्त कर पाता है। इसकी उपलब्धि से अहम्-भाव और ममता नष्ट होते हैं, दुर्मति घुल जाती है। गुरु नानक कहते हैं कि जिसके मस्तक में लिखा होता है, वे रात-दिन हरि-नामोच्चारण करते हैं ॥ १ ॥ म० ४ ॥ परमात्मा स्वयं दया करता है और जो करता है, केवल वही होता है। हरि सर्व-व्यापक है, उससे बढ़कर कोई नहीं

है। जो हरि-प्रभु को रुचे, वह होता है; जो हरि-प्रभु करता है, वह होता है। जिसका सही मूल्यांकन कोई नहीं कर पाया, वही अनन्त प्रभु है। गुरु नानक कहते हैं कि जो गुरु-मतानुसार हरि का यशोगान करते हैं, उनका तन-मन शीतल होता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे जगत के जीवन, सब जगह तुम्हारा ही आलोक बिखरा है, घट-घट में तुम्हीं हरि का रंग रँगानेवाले हो। हे मेरे प्रियतम, तुम मायातीत निरंजन-पुरुष हो, सभी तुम्हारी ही आराधना करते हैं। दाता प्रभु एक हो है, सब जगह उसका भिखारी है और परमात्मा से अनेक माँगें माँगता फिरता है। तुम ही सेवक हो, तुम ही स्वामी हो, गुरु-उपदेशानुसार आचरण करते हुए उस प्रभु की श्रेष्ठता को पाया जाता है। सब जीव मुख से वाहिगुरु का नाम जपें, वही पावन फल-दा शक्ति है ॥ २ ॥

॥ सलोक म० ४ ॥ हरि हरि नामु धिआइ मन हरि दरगह पावहि मानु। जो इछहि सो फलु पाइसी गुर सबदी लगै धिआनु। किलविख पाप सभि कटीअहि हउमै चुकै गुमानु। गुरमुखि कमलु विगसिआ सभु आतम ब्रहमु पछानु। हरि हरि किरपा धारि प्रभ जन नानक जपि हरि नामु ॥१॥ म० ४ ॥ हरि हरि नामु पवितु है नामु जपत दुखु जाइ। जिन कउ पूरबि लिखिआ तिन मनि वसिआ आइ। सतिगुर कै भाणै जो चलै तिन दालदु दुखु लहि जाइ। आपणै भाणै किनै न पाइओ जन वेखहु मनि पतीआइ। जनु नानकु दासन दासु है जो सतिगुर लागे पाइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ तूं थान थनंतरि भरपूरु हहि करते सभ तेरी बणत बणावणी। रंग परंग सिसटि सभ साजी बहु बहु बिधि भांति उपावणी। सभ तेरी जोति जोती विचि वरतहि गुरमती तुधै लावणी। जिन होहि दइआलु तिन सतिगुरु मेलहि मुखि गुरमुखि हरि समझावणी। सभि बोलहु राम रमो स्री राम रमो जितु दालदु दुख भुख सभ लहि जावणी ॥ ३ ॥

॥ सलोक म० ४ ॥ हरि-नाम का ध्यान करने से प्रभु के दरबार में जीव को सम्मान प्राप्त होता है। गुरु के शब्दों में ध्यान लगाने से मनोवाञ्छित फल मिल जाता है। इससे सब पाप कटते हैं और मान-गुमान दूर हो जाते हैं। गुरु के द्वारा हृदय-कमल विकसित होता है और आतम-ब्रह्म की पहचान होती है। गुरु नानक कहते हैं कि ऐ प्रभु, कृपा करके हरि-नाम जपने का सामर्थ्य प्रदान करो ॥ १ ॥ ॥ म० ४ ॥ हरि का नाम अति पवित्र है, इसके जपने से दुःख दूर होते

हैं। जिनके भाग्य में पहले से लिखा होता है, उनके मन में ही उजागर होता है। जो सतिगुरु के उपदेशानुसार आचरण करते हैं, उनके दुःख-दारिद्र्य उतर जाते हैं। ऐ लोगो, विचार कर देखो, आज तक कोई स्वेच्छा से परमात्मा को नहीं पा सका। गुरु नानक तो उसके दासों के भी दास हैं, जो सतिगुरु की चरण-शरण प्राप्त कर लेता है॥ २॥ ॥ पउड़ी॥ हे प्रभु, तुम हर जगह मौजूद हो, सब रचना तुम्हारी ही बनाई हुई है। रंग-रंग की सृष्टि तुमने सजाई है, बहु-विधि इसे उपजाया है। सब तुम्हारी ही परमज्योति से प्रकाशित है, तुम्हीं यथेच्छा सृष्टि को गुरु-मत में लगाते हो। जिन पर दया करते हो, उन्हें सतिगुरु से मिलाते हो और गुरु के उपदेश के द्वारा हरि का स्वरूप समझा देते हो। अतः सब लोग राम-नाम का स्मरण करो, जो दुःखों, तृष्णाओं और दारिद्र्य को दूर करता है॥ ३॥

॥ सलोक म० ४॥ हरि हरि अंम्रितु नामरसु हरि अंम्रितु हरि उरधारि। विचि संगति हरि प्रभु वरतदा बुझहु सबद वीचारि। मनि हरि हरि नामु धिआइआ बिखु हउमै कढी मारि। जिन हरि हरि नामु न चेतिओ तिन जूऐ जनमु सभु हारि। गुरि तुठै हरि चेताइआ हरिनामा हरि उरधारि। जन नानक ते मुख उजले तितु सचै दरबारि॥ १॥ म० ४॥ हरि कीरति उतमु नामु है विचि कलिजुग करणी सारु। मति गुरमति कीरति पाईऐ हरि नामा हरि उरिहारु। वडभागी जिन हरि धिआइआ तिन सउपिआ हरि भंडारु। बिनु नावै जि करम कमावणे नित हउमै होइ खुआरु। जलि हसती मलि नावालीऐ सिरि भी फिरि पावै छारु। हरि मेलहु सतिगुरु दइआ करि मनि वसै एककारु। जिन गुरमुखि सुणि हरि मंनिआ जन नानक तिन जैकारु॥ २॥ पउड़ी॥ राम नामु वखरु है ऊतमु हरि नाइकु पुरखु हमारा। हरि खेलु कीआ हरि आपे वरतै सभु जगतु कीआ वणजारा। सभ जोति तेरी जोती विचि करते सभु सचु तेरा पासारा। सभि धिआवहि तुधु सफल से गावहि गुरमती हरि निरंकारा। सभि चवहु मुखहु जगंनाथु जगंनाथु जगजीवनो जितु भवजल पारि उतारा॥ ४॥

॥ सलोक म० ४॥ हरि का नाम अमृत की धारा के समान है, उसे हृदय में धारण करो। सत्संगति में प्रभु विराजता है, गुरु के शब्द पर विचार करके यह तथ्य जाना जा सकता है। मन में हरि-नाम का

ध्यान करने से अहम् का विष दूर हटाया जाता है। जो हरिनाम-स्मरण नहीं करता, वह एक प्रकार से जुए में, जन्म का दाँव हार जाता है। गुरु प्रसन्न होकर हरि-नाम का स्मरण करवाता है और प्रभु को हृदय में धारण कराता है। दास नानक का कथन है कि उन जीवों के मुख उज्ज्वल हो जाते हैं और वे सत्यस्वरूप प्रभु के दरबार में स्थान पा लेते हैं ॥ १ ॥ म० ४ ॥ कलियुग में प्रभु का गुणगान एवं हरिनाम-स्मरण श्रेष्ठ कृत्य है। गुरुमत द्वारा हरि-यश मिलता है और हरि-नाम गले में हार की तरह शोभा देता है। हरि का ध्यान करनेवाला जीव भाग्य-शाली है, उसे हरि अपना भण्डार सौंपता है। हरि-नाम के अतिरिक्त सब कर्म अहम्युक्त और ख्वारी करनेवाले हैं। (जैसे) हाथी को यदि जल में मल-मलकर नहलाएँ, तो भी वह पुनः सिर में धूल डाल लेता है। सतिगुरु कृपा-पूर्वक यदि हरि से मिलन करवा दे, तो हृदय में वाहिगुरु बसने लगता है। गुरु नानक कहते हैं कि जो जीव गुरु का उपदेश पाकर हरि-प्रभु में विश्वास लाते हैं, उनका जय-जयकार होता है ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ राम-नाम का व्यापार यहाँ होता है और सर्वोच्च श्रेष्ठी (व्यापारी सेठ) स्वयं कर्तापुरुष है। परमात्मा ने ही यह समूचा खेल रचाया है और वही सर्वथा व्याप्त रहकर सबके द्वारा व्यापार करवा रहा है। हे कर्तापुरुष, सब प्रकाश तुम्हारी ही परमज्योति का अंग है और विश्व का समस्त प्रसार तुम्हारा ही किया हुआ है। जो गुरु-मतानुसार तुम्हारा ध्यान करते और गुण गाते हैं, उनका जीवन सफल है। सब जन मुख से जगत के स्वामी हरि का नाम बोलो, वही संसार-सागर से पार उतार सकता है ॥ ४ ॥

॥ सलोक म० ४ ॥ हमरी जिहबा एक प्रभ हरि के गुण अगम अथाह। हम किउ करि जपह इआणिआ हरि तुम वड अगम अगाह। हरि देहु प्रभू मति ऊतमा गुर सतिगुर कै पगि पाह। सतसंगति हरि मेलि प्रभ हम पापी संगि तराह। जन नानक कउ हरि बखसि लैहु हरि तुठै मेलि मिलाह। हरि किरपा करि सुणि बेनती हम पापी किरम तराह ॥ १ ॥ म० ४ ॥ हरि करहु क्रिपा जगजीवना गुरु सतिगुरु मेलि दइआलु। गुर सेवा हरि हम भाईआ हरि होआ हरि किरपालु। सभ आसा मनसा विसरी मनि चूका आल जंजालु। गुरि तुठै नामु द्रिड़ाइआ हम कीए सबदि निहालु। जन नानकि अतुटु धनु पाइआ हरिनामा हरिधनु मालु ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हरि तुम्ह वड वडे वडे वड ऊचे सभ ऊपरि वडे वडौना। जो धिआवहि हरि अपरंपरु हरि हरि

हरि धिआइ हरे ते होना। जो गावहि सुणहि तेरा जसु सुआमी तिन काटे पाप कटोना। तुम जैसे हरि पुरख जाने मति गुरमति मुखि वड वड भाग वडोना। सभि धिआवहु आदि सते जुगादि सते परतखि सते सदा सदा सते जनु नानकु दासु दसोना ॥ ५ ॥

॥ सलोक म० ४ ॥ हमारी जिह्वा एक है, जबकि प्रभु के गुण असंख्य, अगम्य हैं। हे परमात्मा, (अपने गुणगान के लिए) उत्तम मति दो और सच्चे गुरु के चरणों से लगाओ। हे प्रभु, हमें सत्संगति में मिला दो, हम पापी हैं, शुभ संगति में हमारा कल्याण होगा (तिर जायँगे)। हे प्रभु, दास नानक को बख्श लें, प्रभु के प्रसन्न होने पर ही उससे भेंट सम्भव है। हरि ने कृपा-पूर्वक हमारी विनती सुन ली है, हम पापी कीटों को भी पार लगा दिया है ॥ १ ॥ म० ४ ॥ हे जगत के जीवन परमात्मा, कृपा करके हमें सतिगुरु से मिला दो। हरि ने हमें गुरु-सेवा में लगाया था, और अब हम पर कृपा करके सत्य-स्वरूप में स्थित कर दिया है। (परिणामतः) हमारी आशाएँ-तृष्णाएँ छूट गई हैं और सब धुनिया-धंधे मिट गए हैं। गुरु ने प्रसन्न होकर हरि-नाम का जाप करवाया और शब्द का दान देकर हमें निहाल किया। दास नानक ने कभी समाप्त न होनेवाली धन-सम्पत्ति प्राप्त कर ली ॥२॥ पउड़ी ॥ हे प्रभु, तुम बड़े हो, सबसे बड़े, सबसे ऊपर हो। जो हरि का ध्यान करते हैं, सदा उसी के ध्यान में मग्न रहते हैं, वे हरि ही हो जाते हैं। जो तुम्हारा यश गाते-सुनते हैं, उनके करोड़ों पाप कट जाते हैं। हरिजनों (हरि के परमभक्त) को भी हमने गुरु-उपदेशानुसार हरि-सरीखा महान स्वीकार किया है। सब उस हरि का ध्यान करते हैं, जो युग-युग से सत्य-स्वरूप है और गुरु नानक उसके दासों के दास हैं ॥ ५ ॥

॥ सलोक म० ४ ॥ हमरे हरि जगजीवना हरि जपिओ हरि गुर मंत। हरि अगमु अगोचरु अगमु हरि हरि मिलिआ आइ अचिंत। हरि आपे घटि घटि वरतदा हरि आपे आपि बिअंत। हरि आपे सभ रस भोगदा हरि आपे कवलाकंत। हरि आपे भिखिआ पाइदा सभ सिसटि उपाई जीअ जंत। हरि देवहु दानु दइआल प्रभ हरि मांगहि हरि जन संत। जन नानक के प्रभ आइ मिलु हम गावह हरि गुण छंत ॥१॥ म० ४ ॥ हरि प्रभु सजणु नामु हरि मै मनि तनि नामु सरीरि। सभि आसा गुरमुखि पूरीआ जन नानक सुणि हरि धीर ॥२॥ पउड़ी ॥ हरि ऊतमु हरिआ नामु है हरि पुरखु निरंजनु मउला। जो

जपदे हरि हरि दिनसु राति तिन सेवे चरन नित कउला। नित सारि सम्हाले सभ जीअ जंत हरि वसै निकटि सभ जउला। सो बूझै जिसु आपि बुझाइसी जिसु सतिगुरु पुरखु प्रभु सउला। सभि गावहु गुण गोविंद हरे गोविंद हरे गोविंद हरे गुण गावत गुणी समउला ॥ ६ ॥

॥ सलोक म० ४ ॥ हमारा हरि जगत का जीवन है, उसका स्मरण गुरु के उपदेश से होता है। वह अगम-अगोचर है और अकस्मात ही किसी को मिल जाता है। हरि अपने-आप सब जगह व्याप्त है, वह अनन्त है। हरि ही समस्त रसों का भोक्ता है, वही माया का स्वामी भी है। हरि ही सब जीव-जन्तुओं की सृष्टि उपजाकर उन्हें भोजन देता है। हे हरि, दया करके हमें अपने नाम का दान दो, सब हरिजन तुमसे यही याचना करते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि हे हरि, हम तुम्हारा गुण गाते हैं, आनकर हमें दर्शन दो ॥ १ ॥ म० ४ ॥ अपने हरि-साजन का नाम मैंने तन मन में बसाया है। गुरु के उपदेश से दास नानक की सब आशाएँ पूर्ण हुई हैं और मन को पूर्ण धैर्य मिला है ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ परमात्मा का नाम सर्वश्रेष्ठ है, प्रभु मायातीत और नित्य प्रफुल्लित है। जो दिन-रात प्रभु का नाम जपते हैं, स्वयं लक्ष्मी उनकी चरण-सेवा करती है। परमात्मा अपने जीव-जन्तुओं का पूरा ध्यान रखता है और सबके निकट सबकी खबर लेता है। उसे वही जान सकता है, जिस पर परमात्मा प्रकट होता है, या जिन पर सतिगुरु की कृपा होती है। सब उसी परमात्मा के नित्य गुण गाओ, गुण गाकर गुण-सरीखे हो जाते हैं ॥ ६ ॥

॥ सलोक म० ४ ॥ सुतिआ हरि प्रभु चेति मनि हरि सहजि समाधि समाइ। जन नानक हरि हरि चाउ मनि गुरु तुठा मेले माइ ॥ १ ॥ म० ४ ॥ हरि इकसु सेती पिरहड़ी हरि इको मेरै चिति। जन नानक इकु अधारु हरि प्रभ इकस ते गति पति ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ पंचे सबद वजे मति गुरमति वडभागी अनहदु वजिआ। आनद मूलु रामु सभु देखिआ गुर सबदी गोविदु गजिआ। आदि जुगादि वेसु हरि एको मति गुरमति हरि प्रभु भजिआ। हरि देवहु दानु दइआल प्रभ जन राखहु हरि प्रभ लजिआ। सभि धंनु कहहु गुरु सतिगुरू गुरु सतिगुरू जितु मिलि हरि पड़दा कजिआ ॥ ७ ॥

॥ सलोक म० ४ ॥ ऐ मेरे सुप्त चित्त, जागो और हरि-प्रभु का

स्मरण करो और सहज-समाधि में हरि-लीन हो जाओ। दास नानक को हरि-मिलन का चाव है, गुरु प्रसन्न होकर भेंट करवा देता है ॥ १ ॥ ॥ म० ४ ॥ मुझे एकमात्र हरि से प्यार है, एक हरि ही नित्य मेरे चित्त में विराजता है। दास नानक को एकमात्र प्रभु का ही आधार है, उसी से हमारी गति सम्भव है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सौभाग्यपूर्वक जब गुरु का उपदेश प्राप्त हुआ, तो चारों ओर पाँचों प्रकार का संगीत होने लगा (खुशियाँ छा गईं), अनाहत नाद भी गूँज उठा। सबने आनन्द के मूल परमात्मा को देखा और गुरु-उपदेशानुसार प्रभु को प्रत्यक्ष किया। युग-युग से प्रभु एक-रूप है, गुरु के शब्दों द्वारा उसी का भजन किया गया है। हे हरि, कृपा करके हमें दर्शन-दान दो और दया करके हमारी लाज रखो। गुरु सतिगुरु धन्य है, जिसे मिलकर हरि का रहस्य (प्रकट हुआ) ॥ ७ ॥

॥ सलोकु म० ४ ॥ भगति सरोवरु उछलै सुभर भरे वहंनि। जिना सतिगुरु मंनिआ जन नानक वडभाग लहंनि ॥ १ ॥ म० ४ ॥ हरि हरि नाम असंख हरि हरि के गुन कथनु न जाहि। हरि हरि अगमु अगाधि हरि जन कितु बिधि मिलहि मिलाहि। हरि हरि जसु जपत जपंत जन इकु तिलु नही कीमति पाइ। जन नानक हरि अगम प्रभ हरि मेलि लैहु लड़ि लाइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हरि अगमु अगोचरु अगमु हरि किउ करि हरि दरसनु पिखा। किछु वखरु होइ सु वरनीऐ तिसु रूपु न रिखा। जिसु बुझाए आपि बुझाइ देइ सोई जनु दिखा। सतसंगति सतिगुर चटसाल है जितु हरिगुण सिखा। धनु धंनु सु रसना धंनु कर धंनु सु पाधा सतिगुरू जितु मिलि हरि लेखा लिखा ॥ ८ ॥

॥ सलोकु म० ४ ॥ भक्ति का सरोवर (गुरु-उपदेशों में) लहराता है और (सत्संगति में बैठे सेवक) इस भरे सरोवर में बह रहे हैं। गुरु नानक कहते हैं कि जिन्होंने गुरु का उपदेश स्वीकार किया है, वह भाग्यशाली है ॥ १ ॥ म० ४ ॥ हरि के असंख्य नाम हैं, उसके अनन्त गुणों की व्याख्या सम्भव नहीं होती। परमात्मा अगम्य, अगाध है, उसके निकट क्योंकर पहुँचा और मिला जाय ! जो जन नित्य हरि-यश का गान करते हैं, वे किंचित भी उसका मूल्यांकन नहीं कर पाते। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु अगम्य है, वह अपने-आप ही अपने में मिलाता और अपनी स्वीकृति में अपनाता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ परमात्मा अगम्य और अगोचर है, उसका दर्शन क्योंकर पाऊँ ! अपने पास कुछ सामग्री (हरिनाम की) हो, तो बखान भी करें, अन्यथा उसकी तो कुछ रूप-रेख हैं नहीं। जिसे

स्वयं वह अपना ज्ञान देता है, वही उसके दर्शन करता है। सत्संगति गुरु की पाठशाला है, जहाँ हरि-गुण की शिक्षा मिलती है। वह जिह्वा, वह हाथ और वह अध्यापक, सब धन्य हैं, जिन सबने मिलकर हरिनाम का लेखा पाया है ॥ ८ ॥

॥ सलोक म० ४ ॥ हरि हरिनामु अंम्रितु है हरि जपीऐ सतिगुर भाइ। हरि हरि नामु पवितु है हरि जपत सुनत दुखु जाइ। हरिनामु तिनी आराधिआ जिन मसतकि लिखिआ धुरि पाइ। हरि दरगह जन पैनाईअनि जिन हरि मनि वसिआ आइ। जन नानक ते मुख उजले जिन हरि सुणिआ मनि भाइ ॥ १ ॥ म० ४ ॥ हरि हरि नामु निधानु है गुरमुखि पाइआ जाइ। जिन धुरि मसतकि लिखिआ तिन सतिगुरु मिलिआ आइ। तनु मनु सीतलु होइआ सांति वसी मनि आइ। नानक हरि हरि चउदिआ सभु दालदु दुखु लहि जाइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हउ वारिआ तिन कउ सदा सदा जिना सतिगुरु मेरा पिआरा देखिआ। तिन कउ मिलिआ मेरा सतिगुरू जिन कउ धुरि मसतकि लेखिआ। हरि अगमु धिआइआ गुरमती तिसु रूपु नही प्रभ रेखिआ। गुरबचनि धिआइआ जिना अगमु हरि ते ठाकुर सेवक रलि एकिआ। सभि कहहु मुखहु नर नर हरे नर नरहरे नर नरहरे हरि लाहा हरि भगति बिसेखिआ ॥ ९ ॥

॥ सलोक म० ४ ॥ हरि का नाम अमृत-समान है, सतिगुरु के प्रेम में हरिनाम को जपो। हरि का नाम पवित्र है, हरिनाम को जपने-सुनने से सब दुःख दूर हो जाते हैं। आरम्भ से ही जिनके भाग्य में लिखा है, वे ही हरि की सही आराधना कर पाते हैं। जिनके मन में हरि-प्रभु बस जाता है, वे दरबार में सम्मान पाते हैं। दास नानक का कथन है कि वे जन उज्ज्वल हैं, जो मन लगाकर हरि-कीर्तन सुनते हैं ॥१॥ म० ४ ॥ हरि का नाम नौ-निधियों का भण्डार है, वह गुरु द्वारा ही पाया जाता है। जिनके भाग्य में है, सतिगुरु स्वयं उन्हें आन मिलता है। उसका तन-मन शीतल होता है, शांति छा जाती है। गुरु नानक कहते हैं कि हरिनाम का उच्चारण करने से सब दुःख-दरिद्रता दूर होते हैं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ मैं उन जीवों पर सदा न्योछावर हूँ, जिन्होंने मेरा प्यारा सतिगुरु देखा है। मेरा सतिगुरु उन्हीं को दर्शन देता है, जिनके मस्तक में शुरू से भाग्य-रेखा मौजूद है, गुरु के उपदेशानुसार वह रूप-रेखा-विहीन हरि का ध्यान करता है।

जो गुरु के वचनों से हरि का ध्यान करते हैं, उनमें सेवक-स्वामी में कोई भेद नहीं रह जाता। (अतः) सब मुँह से हरि-प्रभु (नरहर : नरसिंह) का नाम लो और यथाधिक हरि-भक्ति करो ॥ ९ ॥

॥ सलोक म० ४ ॥ राम नामु रमु रवि रहे रमु रामो रामु रमीति । घटि घटि आतम रामु है प्रभि खेलु कीओ रंगि रीति । हरि निकटि वसै जग जीवना परगासु कीओ गुरमीति । हरि सुआमी हरि प्रभु तिन मिले जिन लिखिआ धुरि हरि प्रीति । जन नानक नामु धिआइआ गुरबचनि जपिओ मनि चीति ॥ १ ॥ म० ४ ॥ हरि प्रभु सजणु लोड़ि लहु भागि वसै वडभागि । गुरि पूरै देखालिआ नानक हरि लिव लागि ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ धनु धनु सुहावी सफल घड़ी जितु हरि सेवा मनि भाणी । हरि कथा सुणावहु मेरे गुरसिखहु मेरे हरिप्रभ अकथ कहाणी । किउ पाईऐ किउ देखीऐ मेरा हरिप्रभु सुघड़ु सुजाणी । हरि मेलि दिखाए आपि हरि गुरबचनी नामि समाणी । तिन विटहु नानकु वारिआ जो जपदे हरि निरबाणी ॥ १० ॥

॥ सलोक म० ४ ॥ सर्वव्यापक राम का नाम नित्य स्मरण करो। राम घट-घट में विद्यमान है (रमण करता है), प्रभु ने यह रंगीन खेल रचा है। जगत का जीवन हरि सबके निकट है, इस तथ्य का ज्ञान गुरु ने दिया है। हरि-स्वामी उसी को प्राप्त होता है, जिनके भाग्य में शुरू से ही मिलन लिखा है। दास नानक ने गुरु-उपदेशानुसार प्रभु का ध्यान किया और मन में उसका नाम जपा है ॥ १ ॥ म० ४ ॥ परमात्मा रूपी सज्जन को खोज लो, भाग्य हुआ तो मिलेगा। गुरु नानक कहते हैं कि हरि में अटूट प्रेम होने से गुरु उससे मिलाने में समर्थ होता है ॥ २ ॥ ॥ पउड़ी ॥ जीवन की वह घड़ी धन्य है, जिसमें परमात्मा की सेवा में मन लगा है। हे मेरे गुरु-भाइयो, हरिकथा सुहानी है; हरि-कथा अकथनीय है। मेरा प्रभु सर्वज्ञ और सुयोग्य है, उसे कैसे पाया जाय, कैसा देखा जाय ? परमात्मा स्वयं चाहे तो गुरु-वचनानुसार जीव को अपने संग मिलाता है। निर्वाण-पद देनेवाले हरि का नाम-स्मरण करनेवालों पर दास नानक सदा न्योछावर है ॥ १० ॥

॥ सलोक म० ४ ॥ हरिप्रभ रते लोइणा गिआन अंजनु गुरु देइ । मै प्रभु सजणु पाइआ जन नानक सहजि मिलेइ ॥ १ ॥ म० ४ ॥ गुरमुखि अंतरि सांति है मनि तनि

नामि समाइ। नामु चितवै नामो पड़ै नामि रहै लिव लाइ। नामु पदारथु पाईऐ चिंता गई बिलाइ। सतिगुरि मिलिऐ नामु ऊपजै त्रिसना भुख सभ जाइ। नानक नामे रतिआ नामो पलै पाइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ तुधु आपे जगतु उपाइ कै तुधु आपे वसगति कीता। इकि मनमुख करि हाराइअनु इकना मेलि गुरू तिना जीता। हरि ऊतमु हरिप्रभ नामु है गुरबचनि सभागै लीता। दुखु दालदु सभो लहि गइआ जां नाउ गुरू हरि दीता। सभि सेवहु मोहनो मनमोहनो जगमोहनो जिनि जगतु उपाइ सभो वसि कीता ॥ ११ ॥

॥ सलोक म० ४ ॥ गुरु ने मेरे नेत्रों में ज्ञान का अंजन लगाया तो वे हरि-प्रभु के प्यार में मत्त हो गए। गुरु नानक कहते हैं कि उन्हें पूर्ण अडोल अवस्था में प्रभु की प्राप्ति हो गई ॥ १ ॥ म० ४ ॥ गुरु-मतानुसार आचरण करनेवाले के अन्तर्मन में नित्य शान्ति रहती है और तन-मन में हरिनाम समाया रहता है। वह नाम का चिन्तन करता, नाम पढ़ता और हरिनाम में ही लीन रहता है। जब-जब नाम-पदार्थ की उपलब्धि होती है, समस्त चिन्ताएँ विलीन हो जाती हैं। सतिगुरु से भेंट होने से ही हरिनाम मिलता और तृष्णा, आशा आदि मिट जाती हैं। गुरु नानक कहते हैं कि मनुष्य हरिनाम में इतना रँग जाता है कि हरिनाम की पूँजी ही उसके पास रह जाती है (लौकिक उपलब्धियों से विमुख हो जाता है) ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे परमात्मा, तुमने स्वयं संसार को उत्पन्न करके अपने ही वश में कर रखा है। कुछ को मनमुख (स्वेच्छाचारी) बनाकर पराजय दी और कुछ की सतिगुरु से भेंट करवाकर उन्हें विजयी बना दिया। हरि का उत्तम विशुद्ध नाम गुरु के द्वारा किसी भाग्यशाली को ही प्राप्त होता है। जब गुरु ने हरिनाम प्रदान किया तो सब दुःख-दरिद्रता दूर हो गए। (अतः) सब जन उस मन को तथा समस्त जगत को मोह लेनेवाले प्रभु की आराधना करो, जिसने यह जगत उत्पन्न करके अपने वश में कर रखा है ॥ ११ ॥

॥ सलोक म० ४ ॥ मन अंतरि हउमै रोगु है भ्रमि भूले मनमुख दुरजना। नानक रोगु वञाइ मिलि सतिगुर साधू सजना ॥ १ ॥ म० ४ ॥ मनु तनु तामिस गारवा जां देखा हरि नैणे। नानक सो प्रभु मै मिलै हउ जीवा सदु सुणे ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जगंनाथ जगदीसर करते अपरंपर पुरखु अतोलु। हरिनामु धिआवहु मेरे गुरसिखहु हरि ऊतमु हरिनामु

अमोलु। जिन धिआइआ हिरदै दिनसु राति ते मिले नही हरि रोलु। वडभागी संगति मिलै गुर सतिगुर पूरा बोलु। सभि धिआवहु नरनाराइणो नाराइणो जितु चूका जम झगड़ झगोलु ॥ १२ ॥

॥ सलोक म० ४ ॥ मन के भीतर अहम् का रोग विद्यमान है, इसीलिए मनमुख दुर्जन लोग भ्रम में भटकते रहते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि सच्चे गुरु से मिलकर ही इस रोग को निकाला जाता है ॥ १ ॥ ॥ म० ४ ॥ हरि-प्रभु को अपनी आँखों से देखने से तन-मन सुशोभित होता है। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा का अमर नाद श्रवण करने में ही जीवन है, श्रोता प्रभु में ही मिल जाता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जगत का स्वामी जगदीश्वर सबका कर्ता अनुपम है। हे गुरु-सिक्खो, उस परमात्मा का नाम-स्मरण करो, वह नाम अमूल्य है। जो रात-दिन हृदय में हरिनाम की आराधना करते हैं, वे प्रभु से मिल जाते हैं, अकारण भ्रमों में नहीं पड़े रहते। सौभाग्य से जिनको साधु-संगति प्राप्त होती है, उन्हें गुरु का उपदेश मिल जाता है। इसलिए सब जन उस नारायण प्रभु का नाम-स्मरण करो, जिससे सांसारिक झगड़े-टंटे समाप्त होते हैं ॥ १२ ॥

॥ सलोक म० ४ ॥ हरिजन हरि हरि चउदिआ सरु संधिआ गावार। नानक हरिजन हरि लिव उबरे जिन संधिआ तिसु फिरि मार ॥ १ ॥ म० ४ ॥ अखी प्रेमि कसाईआ हरि हरि नामु पिखंन्हि। जे करि दूजा देखदे जन नानक कढि दिचंन्हि ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जलि थलि महीअलि पूरनो अपरंपरु सोई। जीअ जंत प्रतिपालदा जो करे सु होई। मात पिता सुत भ्रात मीत तिसु बिनु नही कोई। घटि घटि अंतरि रवि रहिआ जपिअहु जन कोई। सगल जपहु गोपाल गुन परगटु सभ लोई ॥ १३ ॥

॥ सलोक म० ४ ॥ हरिजन नित्य हरिनाम जपते हैं। कोई गँवार उन्हें नाम जपते हुए तीर का निशाना भी बनाए, तो गुरु नानक कहते हैं कि वे बच जाते हैं और शिकारी स्वयं शिकार हो जाता है ॥ १ ॥ ॥ म० ४ ॥ मेरी आँखें प्रेम में रत हैं, केवल हरिनाम ही देखती हैं। दास नानक कहते हैं कि यदि वे किसी दूसरे को देखें तो उन्हें निकाल दूं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ परे से परे जो सर्वात्मा है, वही जल, थल और आकाश में व्याप्त है। समस्त जीव-जन्तुओं का वही प्रतिपालक है, जो

वह करता है, वही होता है। उसके बिना माता, पिता, भाई, मित्र, पुत्र आदि कोई सगा नहीं। परमात्मा घट-घट में व्याप्त है, सेवकजन उसी का भजन करते हैं। सब जन प्रभु का गुण-गान करो, वह सारे संसार में प्रकट है ॥ १३ ॥

॥ सलोक म० ४ ॥ गुरमुखि मिले सि सजणा हरि प्रभ पाइआ रंगु। जन नानक नामु सलाहि तू लुडि लुडि दरगहि वंञु ॥ १ ॥ म० ४ ॥ हरि तूहै दाता सभस दा सभि जीअ तुम्हारे। सभि तुधै नो आराधदे दानु देहि पिआरे। हरि दातै दातारि हथु कढिआ मीहु वुठा सैसारे। अंनु जंमिआ खेती भाउ करि हरि नामु सम्हारे। जनु नानकु मंगै दानु प्रभ हरि नामु अधारे ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ इछा मन की पूरीऐ जपीऐ सुखसागरु। हरि के चरन अराधीअहि गुर सबदि रतनागरु। मिलि साधू संगि उधारु होइ फाटै जमकागरु। जनम पदारथु जीतीऐ जपि हरि बैरागरु। सभि पवहु सरनि सतिगुरू की बिनसै दुख दागरु ॥ १४ ॥

॥ सलोक म० ४ ॥ जो सज्जन गुरु से भेंट करते हैं, उन्हें परमात्मा का प्यार मिलता है। गुरु नानक कहते हैं कि जो हरिनाम-स्तुति करता है, वह प्रसन्नता-पूर्वक प्रभु के दरबार में प्रवेश करता है ॥ १ ॥ म० ४ ॥ हे परमात्मा, तुम सबको देनेवाले हो, सब जीव तुम्हारे हैं। सभी तुम्हारी आराधना करते हैं; ऐ प्रियतम, सबके मनोरथ पूर्ण करना। परमात्मा ने देने के लिए हाथ निकाला, तो संसार में प्रभु-प्रेम की वर्षा हुई। प्रेम रूपी खेती करनेवाले के खेतों (हृदय में) प्रभु-गुणगान रूपी अन्न उपजा। गुरु नानक कहते हैं कि मैं तो उस प्रभु से केवल हरिनाम का आश्रय माँगता हूँ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सुख-सागर परमात्मा को जपने से सब मनोकामनाएँ पूर्ण होती हैं। गुरु के अनमोल चरणों में बैठकर हरिनाम की आराधना करो। साधुजनों के सम्पर्क में जीव का उद्धार होता है, यमराज का लेखा (हिसाब का काग़ज़) चुक जाता है। निर्लिप्त हरि-प्रभु का नाम जपने से जन्म सफल होता है। सब जन सतिगुरु की शरण लो, इससे सबके दुःख-दाग़ दूर हो जाते हैं ॥ १४ ॥

॥ सलोक म० ४ ॥ हउ ढूंढेंदी सजणा सजणु मैडै नालि। जन नानक अलखु न लखीऐ गुरमुखि देहि दिखालि ॥ १ ॥ ॥ म० ४ ॥ नानक प्रीति लाई तिनि सचै तिसु बिनु रहणु न जाई। सतिगुरु मिलै त पूरा पाईऐ हरि रसि रसन

रसाई ।। २ ।। पउड़ी ।। कोई गावै को सुणै को उचरि सुनावै । जनम जनम की मलु उतरै मन चिंदिआ पावै । आवणु जाणा मेटीऐ हरि के गुण गावै । आपि तरहि संगी तराहि सभ कुटंबु तरावै । जनु नानकु तिसु बलिहारणै जो मेरे हरि प्रभ भावै ।। १५ ।। १ ।। सुधु

।। सलोक म० ४ ।। मैं परमात्मा को बाहर खोजती हूँ, परमात्मा तो मेरे अंग-संग है। गुरु नानक कहते हैं कि वह अदृश्य दीख नहीं पड़ता, गुरु के द्वारा दिखने लगता है ।।१ ।। म० ४ ।। गुरु नानक का कथन है कि सत्यस्वरूप प्रभु से प्रीति लगाई है, उसके बिना रहा नहीं जाता। यदि सच्चा गुरु मिल जाय, तो वह जिह्वा को हरि-रस से रस-सिक्त कर पूर्णपरमेश्वर से मिला देता है ।। २ ।। पउड़ी ।। प्रभु के नाम को जो गाता है, जो सुनता है और जो उच्चारण करके सुनाता है, उन सबकी जन्म-जन्मान्तरों की मलिनता दूर होती और मनोवाञ्छाएँ पूर्ण होती हैं। उनका आवागमन मिट जाता है, वे शान्त-मन हरि-गुण गाते हैं। उनका अपना उद्धार होता है, उनके साथियों एवं कुटुम्बीजनों का भी उद्धार हो जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-प्रभु को प्यार करनेवाले प्रत्येक जीव पर वे क़ुर्बान जाते हैं ।। १५ ।। १ ।। सुधु

रागु कानड़ा बाणी नामदेव जीउ की

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। ऐसो रामराइ अंतरजामी । जैसे दरपन माहि बदन परवानी ।। १ ।। रहाउ ।। बसै घटा घट लीप न छीपै । बंधन मुकता जातु न दीसै ।। १ ।। पानी माहि देखु मुखु जैसा । नामे को सुआमी बीठलु ऐसा ।। २ ।। १ ।।

जैसे दर्पण में चेहरा प्रत्यक्ष दीख पड़ता है, वैसे ही अन्तर्यामी प्रभु (हमारे भीतर प्रत्यक्ष दीखता है।) ।। १ ।। रहाउ ।। वह घट-घट में व्याप्त है किन्तु उसमें माया का कोई दाग़ नहीं लगता। वह बन्धनों से मुक्त है और उसका स्वरूप भी अदृश्य है (जाता दीख नहीं पड़ता) ।।१।। पानी में जैसे मुख साफ़ देखा जा सकता है, नामदेवजी कहते हैं, परमात्मा भी ऐसे ही प्रत्यक्ष देखा जा सकता है ।। २ ।। १ ।।

रागु कलिआन महला ४

१ ओं सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥

रामा रम रामै अंतु न पाइआ । हम बारिक प्रतिपारे तुमरे तू बड पुरखु पिता मेरा माइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि के नाम असंख अगम हहि अगम अगम हरि राइआ । गुणी गिआनी सुरति बहु कीनी इकु तिलु नही कीमति पाया ॥ १ ॥ गोबिद गुण गोबिद सद गावहि गुण गोबिद अंतु न पाइआ । तू अमिति अतोलु अपरंपर सुआमी बहु जपीऐ थाह न पाइआ ॥ २ ॥ उसतति करहि तुमरी जन माधौ गुन गावहि हरि राइआ । तुम्ह जलनिधि हम मीने तुमरे तेरा अंतु न कतहु पाइआ ॥ ३ ॥ जन कउ क्रिपा करहु मधसूदन हरि देवहु नामु जपाइआ । मै मूरख अंधुले नामु टेक है जन नानक गुरमुखि पाइआ ॥ ४ ॥ १ ॥

राम सर्वव्यापक है, उसका अन्त किसी ने नहीं पाया । हम तुम्हारे पालित बालक हैं, तुम हमारे परमपिता और माता हो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि के असंख्य नाम हैं, वह हरि स्वयं भी अगम, अगाध है । गुणी ज्ञानियों ने उसकी बहुत खोज-खबर की, किन्तु तिल-भर भी उसको नहीं समझ पाए ॥ १ ॥ सदैव प्रभु के गुण गाओ, प्रभु के गुणों का कोई अन्त नहीं । हे मालिक, तुम तो हमारे अंदाज़े से भी परे, परे से भी परे हो, तुम्हारे अनन्त जाप से भी कोई तुम्हारी गहराई नहीं जान सकता ॥ २ ॥ हे माधव, हम तो तुम्हारी स्तुति करते हैं, सब सेवक तुम्हारे गुण गाते हैं । तुम सागर हो, हम तुममें रहनेवाली मछलियाँ हैं, तुम्हारा अन्त नहीं जानते ॥३॥ हे प्रभु, अपने सेवकों पर कृपा करके उन्हें अपना नाम-दान दो । गुरु नानक कहते हैं कि मुझ अज्ञानी को तो केवल तुम्हारे नाम का ही सहारा है, जो मुझे गुरु के द्वारा प्राप्त हुआ है ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ कलिआनु महला ४ ॥ हरि जनु गुन गावत हसिआ । हरि हरि भगति बनी मति गुरमति धुरि मसतकि प्रभि लिखिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुर के पग सिमरउ दिनु राती मनि हरि हरि हरि बसिआ । हरि हरि हरि कीरति जगि सारी

घसि चंदनु जसु घसिआ ॥ १ ॥ हरिजन हरि हरि हरि लिव लाई सभि साकत खोजि पइआ। जिउ किरत संजोगि चलिओ नर निंदकु पगु नागनि छुहि जलिआ ॥ २ ॥ जन के तुम्ह हरि राखे सुआमी तुम्ह जुगि जुगि जन रखिआ। कहा भइआ दैति करी बखीली सभ करि करि झरि परिआ ॥ ३ ॥ जेते जीअ जंत प्रभि कीए सभि कालै मुखि ग्रसिआ। हरिजन हरि हरि हरि प्रभि राखे जन नानक सरनि पइआ ॥ ४ ॥ २ ॥

जीव परमात्मा के गुण गाने से प्रफुल्लित होता है। गुरु के उपदेश से हमने हरि-भक्ति में मन रमाया, यह शुरू से परमात्मा ने हमारे मस्तक में लिखा था (भाग्य में था) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मन में हरि बसा है, गुरु-चरणों का आश्रय लेकर रात-दिन उसका स्मरण करो। जैसे चन्दन को घिसकर संसार में सुगंधि फैलाते हैं, वैसे ही हरिनाम का गुणगान करके जगत को सुवासित करो ॥ १ ॥ हरि-प्रभु में प्यार बना तो नास्तिक-जन पीछे पड़ गए। किन्तु प्रकृतिजन्य निन्दक जन संसार में विचरता रहा और चलते-चलते उसका पाँव माया नागिनी पर पड़ गया, जिससे उसे विष चढ़ने लगा है। (पैर मायाग्नि में जल गए हैं।) ॥२॥ हे मालिक, तुम अपने सेवकों के रक्षक हो, युग-युग से तुमने उनकी रक्षा की है। क्या हुआ यदि हिरण्यकशिपु-जैसे राक्षसों ने निन्दा की —ऐसा करनेवाले स्वयं निरस्त हो गए ॥ ३ ॥ प्रभु ने जितने जीव-जन्तु बनाए हैं, सब काल के मुँह में जानेवाले हैं। गुरु नानक कहते हैं कि जो हरिजन शरण में आएँगे, उनकी रक्षा हो जायगी ॥ ४ ॥ २ ॥

॥ कलिआन महला ४ ॥ मेरे मन जपु जपि जगंनाथे। गुर उपदेसि हरिनामु धिआइओ सभि किलबिख दुख लाथे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रसना एक जसु गाइ न साकै बहु कीजै बहुर सुनथे। बार बार खिनु पल सभि गावहि गुन कहि न सकहि प्रभ तुमनथे ॥ १ ॥ हम बहु प्रीति लगी प्रभ सुआमी हम लोचह प्रभु दिखनथे। तुम बड दाते जीअ जीअन के तुम जानहु हम बिरथे ॥ २ ॥ कोई मारगु पंथु बतावै प्रभ का कहु तिन कउ किआ दिनथे। सभु तनु मनु अरपउ अरपि अरापउ कोई मेलै प्रभ मिलथे ॥ ३ ॥ हरि के गुन बहुत बहुत बहु सोभा हम तुछ करि करि बरनथे। हमरी मति वसगति प्रभ तुमरै जन नानक के प्रभ समरथे ॥ ४ ॥ ३ ॥

ऐ मेरे मन, जगत के स्वामी का स्मरण करो। गुरु के उपदेशानुसार हरिनाम का ध्यान करने से सब पाप उतर जाते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हमारी एक जीभ तो प्रभु का समुचित यश नहीं गा सकती, अतः अधिक जीभों वाले बना दो। तब हम बार-बार क्षण-पल तुम्हारे ही गुण गाएंगे, फिर भी, हे प्रभु, तुम्हारे समस्त गुण नहीं कह सकेंगे ॥ १ ॥ ऐ स्वामी, हमें तुमसे प्रीति है और हमारी आँखें तुम्हारे दर्शनों के लिए इच्छुक हैं। तुम तो स्वयं सब जीवों के प्रतिपालक अन्तर्यामी हो, तुम हमारी हार्दिक पीड़ा को जानते ही हो ॥ २ ॥ जो प्रभु तक पहुँचने का मार्ग बताए, कहो उसे मैं क्या दूँ ? कोई हरि से मिला हुआ मुझे भी प्रभु से मिला दे, तो मैं अपना तन, मन, सर्वस्व उसे अर्पित कर दूँ ॥ ३ ॥ हरि के असंख्य गुण सुशोभित हैं, हम तुच्छ उनका वर्णन नहीं-समान कर सके हैं। गुरु नानक कहते हैं, ऐ समर्थ प्रभु, हमारी तो बुद्धि भी तुम्हारे वश में है ॥४॥३॥

॥ कलिआन महला ४ ॥ मेरे मन जपि हरि गुन अकथ सुनथई। धरमु अरथु सभु कामु मोखु है जन पीछै लगि फिरथई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सो हरि हरि नामु धिआवै हरिजनु जिसु बड भाग मथई। जह दरगहि प्रभु लेखा मागै तह छुटै नामु धिआइ थई ॥ १ ॥ हमरे दोख बहु जनम जनम के दुखु हउमै मैलु लगथई। गुरि धारि क्रिपा हरि जलि नावाए सभ किलबिख पाप गथई ॥ २ ॥ जन कै रिद अंतरि प्रभु सुआमी जन हरि हरि नामु भजथई। जह अंती अउसरु आइ बनतु है तह राखै नामु साथई ॥ ३ ॥ जन तेरा जसु गावहि हरि हरि प्रभ हरि जपिओ जगंनथई। जन नानक के प्रभ राखे सुआमी हम पाथर रखु बुडथई ॥ ४ ॥ ४ ॥

ऐ मेरे मन, उस हरि का नाम जपो, जिसके गुण अकथनीय हैं, ऐसा सुनते हैं। धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, चारों पदार्थ हरिजनों के पीछे लगे चलते हैं (अपने-आप उन्हें मिल जाते हैं) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वे हरिजन ही हरि का नाम स्मरण करते हैं, जिनके माथे भाग्य की रेखाएँ मौजूद होती हैं। जहाँ दरगाह में यमराज कर्मों का हिसाब माँगता है, वहाँ नाम की आराधना करनेवाला छूट जाता है ॥ १ ॥ हमारे जन्म-जन्म के दोष हैं, अहम्पूर्ण पापों की अधिक मैल जम गई है। गुरु प्रभु-नाम-जल से नहलाता है, तो पापों की सब मैल धुल जाती है ॥ २ ॥ दास के हृदय में प्रभु स्वयं विराजता है, और दास सदा हरि का नाम भजता है। जहाँ अन्तकाल में जवाबदारी होती हैं, वहाँ हरिनाम ही रक्षक होता है ॥ ३ ॥ ऐ जगत के स्वामी, यह सेवक नित्य तुम्हारा ही यश गाता है। दास

नानक-सरीखे पत्थर को भी डूबने से हरि-स्वामी ने ही बचा लिया है ॥ ४ ॥ ४ ॥

॥ कलिआन महला ४ ॥ हमरी चितवनी हरि प्रभु जानै। अउरु कोई निंद करै हरिजन की प्रभु ताका कहिआ इकु तिलु नही मानै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अउर सभ तिआगि सेवा करि अचुत जो सभ ते ऊच ठाकुरु भगवानै। हरि सेवा ते कालु जोहि न साकै चरनी आइ पवै हरि जानै ॥ १ ॥ जा कउ राखि लेइ मेरा सुआमी ताकउ सुमति देइ पै कानै। ताकउ कोई अपरि न साकै जाकी भगति मेरा प्रभु मानै ॥ २ ॥ हरि के चोज विडान देखु जन जो खोटा खरा इक निमख पछानै। ता ते जन कउ अनदु भइआ है रिद सुध मिले खोटे पछुतानै ॥ ३ ॥ तुम हरि दाते समरथ सुआमी इकु मागउ तुझ पासहु हरि दानै। जन नानक कउ हरि क्रिपा करि दीजै सद बसहि रिदै मोहि हरि चरानै ॥ ४ ॥ ५ ॥

हमारी हार्दिक संवेदनाओं को अन्तर्यामी प्रभु जानता है। यदि कोई हरि-भक्तों की निंदा भी करता है, तो परमात्मा उसकी बात नहीं मानता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ (अतः ऐ जीव) अन्य सब बातें त्यागकर अडिग भाव से अपने स्वामी सर्वेश्वर की सेवा में रत रहो। परमात्मा की सेवा से काल भी कुदृष्टि नहीं डालता, वरन् हरिजन के चरणों में आन गिरता है ॥ १ ॥ मेरा प्रभु जिसका संरक्षण स्वीकार कर लेता है, उसे सुमति प्रदान करता है। जिसकी भक्ति मेरे प्रभु को स्वीकार होती है, उसे कोई परास्त नहीं कर सकता ॥ २ ॥ ऐ जीव, प्रभु की आश्चर्य-जनक लीला को देखो, जो निमिष-मात्र में खरा-खोटा पहचान लेता है। तभी तो सेवक को हार्दिक आनन्द मिलता है और खोटा जीव पछताता रह जाता है ॥ ३ ॥ हे मेरे दातार हरि, तुम समर्थ हो, मैं तुमसे एक याचना करता हूँ कि दास नानक पर एक कृपा करना, जो उसके हृदय में सदा हरि-चरण बसे रहें ॥ ४ ॥ ५ ॥

॥ कलिआन महला ४ ॥ प्रभ कीजै क्रिपा निधान हम हरिगुन गावहगे। हउ तुमरी करउ नित आस प्रभ मोहि कब गलि लावहिगे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हम बारिक मुगध इआन पिता समझावहिगे। सुतु खिनु खिनु भूलि बिगारि जगत पित भावहिगे ॥ १ ॥ जो हरि सुआमी तुम देहु सोई हम पावहगे।

मोहि दूजी नाही ठउर जिसु पहि हम जावहगे ।। २ ।। जो हरि भावहि भगत तिना हरि भावहिगे । जोती जोति मिलाइ जाति रलि जावहगे ।। ३ ।। हरि आपे होइ क्रिपालु आपि लिव लावहिगे । जनु नानकु सरनि दुआरि हरि लाज रखावहिगे ।। ४ ।। ६ ।। छका १

हे कृपा-निधान प्रभु, दया करो कि हम सदा आपके गुण गाते रह सकेंगे । मैं नित्य तुम्हारी इसी आशा में पड़ा हूँ, मुझे कब गले लगाएँगे ।। १ ।। रहाउ ।। हम तो अनजान नासमझ बालक हैं, आप पिता हैं, आप समझाइए । पुत्र बार-बार भूल करता है, किन्तु जगत-पिता प्रभु, (ऐसा प्रतीत होता है कि) तुम्हें वे भूलें रोचक लगती हैं ।।१।। हे स्वामी, जो तुम दोगे, हम वही पाएँगे (और संतुष्ट रहेंगे) । मेरे पास दूसरी कोई जगह नहीं, जहाँ मैं जा सकूँगा ।। २ ।। जो भक्त प्रभु को स्वीकार होते हैं, उन्हें ही हरि से लग्न होती है । उनकी आत्मज्योति परमात्मा की परमज्योति से मिलकर उसी में विलीन हो जाती है ।।३।। परमात्मा स्वयं ही कृपा करके जीव को अंग लगाता है, दास नानक तो उसके द्वार पर शरणार्थी है, वह अपने विरद की लाज रखेगा ।। ४ ।। ६ ।। छका १

कलिआनु भोपाली महला ४

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। पारब्रहमु परमेसुरु सुआमी दूख निवारणु नाराइणे । सगल भगत जाचहि सुख सागर भव निधि तरण हरि चिंतामणे ।। १ ।। रहाउ ।। दीन दइआल जगदीस दमोदर हरि अंतरजामी गोबिंदे । ते निरभउ जिन स्रीरामु धिआइआ गुरमति मुरारि हरि मुकंदे ।। १ ।। जगदीसुर चरन सरन जो आए ते जन भवनिधि पारि परे । भगत जना की पैज हरि राखै जन नानक आपि हरि क्रिपा करे ।। २ ।। १ ।। ७ ।।

परब्रह्म सबका स्वामी, और सबके दुःखों को दूर करनेवाला नारायण है । समस्त भक्तजन सुखों के भण्डार प्रभु के याचक हैं, वह संसार-सागर से पार जाने के लिए नौका है और मनोकामना पूर्ण करनेवाली मणि है ।। १ ।। रहाउ ।। हरि दीनों पर दया करनेवाला, जगत का स्वामी, कृष्ण, गोविन्द (परमात्मा, सृष्टि का नियंता) सब वही है । वे निर्भय हैं, जिन्होंने गुरु-उपदेशानुसार राम के नाम का ध्यान किया है, हरि मुक्तिदाता है ।। १ ।। जो जीव जगत के स्वामी की चरण-शरण लेते हैं, वे संसार-

सागर से पार हो जाते हैं। दास नानक का विश्वास है कि हरि स्वयं कृपा करके भक्तजनों की लाज रखता है ॥ २ ॥ १ ॥ ७ ॥

रागु कलिआनु महला ५ घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ हमारै एह किरपा कीजै। अलि मकरंद चरन कमल सिउ मनु फेरि फेरि रीझै ॥१॥रहाउ॥ आन जला सिउ काजु न कछूऐ हरि बूंद चात्रिक कउ दीजै ॥१॥ बिनु मिलबे नाही संतोखा पेखि दरसनु नानकु जीजै ॥ २ ॥ १ ॥

हम पर यह कृपा करो कि तुम्हारे चरण-कमलों के मकरन्द का रसपान करने के लिए हमारा मन रूपी भँवरा बार-बार वहीं मँड़राता रहे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अन्य जल से हमें कोई वास्ता नहीं, मुझ चातक को तो हरि रूपी स्वाति-बुंद की अपेक्षा है ॥ १ ॥ उसके मिले बग़ैर मुझे सन्तोष नहीं, गुरु नानक तो प्रभु-दर्शन से ही जीवित हैं ॥ २ ॥ १ ॥

॥ कल्यान महला ५ ॥ जाचिकु नामु जाचै जाचै। सरब धार सरब के नाइक सुख समूह के दाते ॥ १ ॥ रहाउ ॥ केती केती मांगनि मागै भावनीआ सो पाईऐ ॥ १ ॥ सफल सफल सफल दरसु रे परसि परसि गुन गाईऐ। नानक तत तत सिउ मिलीऐ हीरै हीरु बिधाईऐ ॥ २ ॥ २ ॥

जीव-याचक तुमसे हरिनाम की याचना करता है; हे सर्वाधार, सर्वनायक, सुखों के देनेवाले प्रभु (तुम्हीं से याचना है) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कितनी दुनिया, कितनी ही माँग करती है, किन्तु जो तुम्हें रुचता है, वही देते हो ॥ १ ॥ उस प्रभु के दर्शन फलदायी हैं, उससे नैकट्य में गुणगान करो। गुरु नानक कहते हैं कि ऐसा करने से तत्त्व तत्त्व में मिल जाता है, हृदय रूपी हीरा हरि रूपी हीरे से बिंध जाता है ॥ २ ॥ २ ॥

॥ कलिआन महला ५ ॥ मेरे लालन की सोभा। सद नवतन मनरंगी सोभा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ब्रहम महेस सिध मुनि इंद्रा भगति दानु जसु मंगी ॥ १ ॥ जोग गिआन धिआन सेखनागै सगल जपहि तरंगी। कहु नानक संतन बलिहारै जो प्रभ के सद संगी ॥ २ ॥ ३ ॥

मेरे प्रिय प्रभु की शोभा सदा नवीन और मन को रंगीनी प्रदान

करनेवाली है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ब्रह्मा, महेश, सिद्ध, मुनि, इन्द्र आदि तुमसे (प्रभु से) भक्ति और यश का दान माँगते हैं ॥ १ ॥ योगी, ज्ञानी, ध्यानी तथा शेषनाग भी अपनी सहस्रों जीभों से तरंगपूर्ण प्रभु का नाम जपते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि वे उन सन्तों पर क़ुर्बान हैं, जो सदैव प्रभु के निकट रहते हैं ॥ २ ॥ ३ ॥

कलिआन महला ५ घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ तेरै मानि हरि हरि मानि। नैन बैन स्रवन सुनीऐ अंग अंगे सुख प्रानि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इत उत दहदिसि रविओ मेर तिनहि समानि ॥ १ ॥ जत कता तत पेखीऐ हरि पुरख पति परधान। साध संगि भ्रम भै मिटे कथे नानक ब्रहम गिआन ॥ २ ॥ १ ॥ ४ ॥

हे प्रभु, तुममें विश्वास लाने में ही हमारा आदर निहित है। नयनों से देखने, कानों से सुनने से अंग-अंग और श्वास-श्वास सुख मिलता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परमात्मा यहाँ, वहाँ दसों दिशाओं में रम रहा है; वह पर्वत और तृण में एक-समान व्याप्त है ॥ १ ॥ जहाँ तक भी दृष्टि जाती है, वही परमेश्वर-पति दीख पड़ता है। गुरु नानक कहते हैं कि ब्रह्म-ज्ञान का विचार करने एवं साधु-संगति में सब भ्रम-भय मिट जाते हैं ॥ २ ॥ १ ॥ ४ ॥

॥ कलिआन महला ५ ॥ गुन नाद धुनि अनंद बेद। कथत सुनत मुनिजना मिलि संत मंडली ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गिआन धिआन मान दान मन रसिक रसन नामु जपत तह पाप खंडली ॥ १ ॥ जोग जुगति गिआन भुगति सुरति सबद तत बेते जपु तपु अखंडली। ओति पोति मिलि जोति नानक कछू दुखु न डंडली ॥ २ ॥ २ ॥ ५ ॥

मुनिजन भी सन्त-मंडली में बैठकर हरि के गुण, शब्द की ध्वनि तथा आनन्द देनेवाले वेद (ज्ञान) पर विचार करते हैं (कहते-सुनते हैं) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वे ज्ञान-ध्यान द्वारा अभिमान का त्याग करते तथा मन और जिह्वा से सानन्द पापों को खंडित करनेवाले हरिनाम का जाप करते हैं ॥१॥ वे तत्त्व-वेत्ता योग-युक्ति द्वारा, ज्ञान-भोग तथा शब्द की लग्न द्वारा नित्य जप-तप कर रहे हैं। वे अन्ततः पूर्णतः परमज्योति में मिल जाते हैं, उन्हें कोई दुःख-द्वन्द्व नहीं रह जाता ॥ २ ॥ २ ॥ ५ ॥

॥ कलिआनु महला ५ ॥ कउनु बिधि ताकी कहा करउ। धरत धिआनु गिआनु ससत्रगिआ अजर पदु कैसे जरउ ॥१॥रहाउ॥ बिसन महेस सिध मुनि इंद्रा कै दरि सरनि परउ ॥ १ ॥ काहू पहि राजु काहू पहि सुरगा कोटि मधे मुकति कहउ। कहु नानक नाम रसु पाईऐ साधू चरन गहउ ॥ २ ॥ ३ ॥ ६ ॥

उसके मिलन की क्या विधि है ? मैं क्या करूँ (जिससे वह मिल सके) ? कई लोग ध्यान लगाते और शास्त्रज्ञ ज्ञान बघारते हैं, किन्तु सब व्यर्थ दीख पड़ता है, मैं इस असह्य अवस्था को क्योंकर वहन करूँ ? ॥१॥ रहाउ ॥ क्या मैं विष्णु, शिव, सिद्धों-मुनियों या इन्द्रादि की शरण लूँ ? ॥ १ ॥ कोई राज देगा, कोई स्वर्ग देगा, किन्तु मुक्ति तो करोड़ों में से किसी विरले को प्राप्य है। गुरु नानक कहते हैं कि साधुजन की शरण में हरिनाम-रस का पान करने (से ही मुक्ति मिलती है) ॥२॥३॥६॥

॥ कलिआन महला ५ ॥ प्रानपति दइआल पुरख प्रभ सखे। गरभ जोनि कलिकाल जाल दुख बिनासनु हरि रखे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नामधारी सरनि तेरी। प्रभ दइआल टेक मेरी ॥ १ ॥ अनाथ दीन आसवंत। नामु सुआमी मनहि मंत ॥ २ ॥ तुझ बिना प्रभ किछू न जानू। सरब जुग महि तुम पछानू ॥ ३ ॥ हरि मनि बसे निसि बासरो। गोबिंद नानक आसरो ॥ ४ ॥ ४ ॥ ७ ॥

हे मित्र, तुम्हीं मेरे प्राणों के स्वामी, दयालु पुरुष हो; गर्भ-योनि तथा काल-जाल के दुःखों को दूर करनेवाले रक्षक हो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मैं तुम्हारा नाम धारण किए तुम्हारी ही शरण में आया हूँ, हे दयालु प्रभु, तुम्हीं मेरा सहारा हो ॥ १ ॥ मैं अनाथ हूँ, दीन हूँ और तुम्हीं से आशा रखता हूँ; हे स्वामी, तुम्हारा नाम ही मेरा मन्त्र है ॥ २ ॥ हे प्रभु, तुम्हारे सिवा मैं कुछ नहीं जानता, समस्त संसार में तुम्हें ही पहचानता हूँ ॥ ३ ॥ रात-दिन प्रभु मेरे मन में बसता है, मुझे (नानक को) केवल गोविन्द (वाहिगुरु) का ही आश्रय है ॥ ४ ॥ ४ ॥ ७ ॥

॥ कलिआन महला ५ ॥ मनि तनि जापीऐ भगवान। गुर पूरे सुप्रसंन भए सदा सूख कलिआन ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सरब कारज सिधि भए गाइ गुन गुपाल। मिलि साध संगति प्रभू सिमरे नाठिआ दुख काल ॥ १ ॥ करि क्रिपा प्रभ मेरिआ

करउ दिनु रैनि सेव। नानक दास सरणागती हरि पुरख पूरन देव ॥ २ ॥ ५ ॥ ८ ॥

तन-मन अर्पित करके प्रभु का भजन करो। पूर्णगुरु की प्रसन्नता में ही सब सुख और कल्याण निहित हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ धरती के पालक (गोपाल) के गुण गाने से समस्त कार्य सिद्ध हो जाते हैं। यदि साधुजनों की संगति में बैठकर हरि का स्मरण हो, तो दुःख और काल भी दूर होते हैं ॥ १ ॥ हे मेरे प्रभु, मुझ पर कृपा करो ताकि मैं रात-दिन तुम्हारी सेवा में रत रह सकूँ। हे पूर्णपुरुष हरि, दास नानक तुम्हारी शरण में आया है ॥ २ ॥ ५ ॥ ८ ॥

॥ कलिआनु महला ५ ॥ प्रभु मेरा अंतरजामी जाणु। करि किरपा पूरन परमेसर निहचलु सचु सबदु नीसाणु ॥१॥रहाउ॥ हरि बिनु आन न कोई समरथु तेरी आस तेरा मनि ताणु। सरब घटा के दाते सुआमी देहि सु पहिरणु खाणु ॥ १ ॥ सुरति मति चतुराई सोभा रूपु रंगु धनु माणु। सरब सूख आनंद नानक जपि राम नामु कलिआणु ॥ २ ॥ ६ ॥ ९ ॥

मेरा प्रभु अन्तर्यामी और सब कुछ जाननेवाला है। वह सत्यस्वरूप परमेश्वर कृपा करता है, तो सच्चा शब्द प्रत्यक्ष हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु के सिवा अन्य कोई इतना समर्थ नहीं, मुझे केवल तुम्हारी ही आशा है और मन में तुम्हारा ही सहारा है। समस्त घटों का स्वामी परमात्मा जो भी देता है, वही मेरी पोशाक और भोजन है ॥ १ ॥ मेरी आत्मा, बुद्धि, चतुराई, शोभा, रूप-रंग, धन-मान, समस्त सुख, आनन्द सब उसी की देन हैं; गुरु नानक कहते हैं कि राम-नाम का जाप करो, समग्र कल्याण उसी में हैं ॥ २ ॥ ६ ॥ ९ ॥

॥ कलिआणु महला ५ ॥ हरि चरन सरन कलिआन करन। प्रभ नामु पतित पावनो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साधसंग जपि निसंग जमकालु तिसु न खावनो ॥ १ ॥ मुकति जुगति अनिक सूख हरि भगति लवै न लावनो। प्रभ दरस लुबध दास नानक बहुड़ि जोनि न धावनो ॥ २ ॥ ७ ॥ १० ॥

हरि-चरणों की ओट मोक्ष-दायिनी (कल्याणकारी) है; प्रभु का नाम पतितों, कुटिलों को भी पावन कर देता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो निःशंक भाव से साधु-संगति में हरिनाम जपते हैं, काल भी उन्हें नहीं खाता ॥ १ ॥ मुक्ति, युक्ति के अनेक प्रकार के सुख भक्ति-सुख की

बराबरी नहीं करते (नज़दीक नहीं ठहरते)। दास नानक प्रभु-दर्शन में लुभाया है, पुनः वह योनि-बन्धनों में नहीं भटकता ॥ २ ॥ ७ ॥ १० ॥

कलिआन महला ४ असटपदीआ

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ रामा रम रामो सुनि मनु भीजै। हरि हरि नामु अंम्रितु रसु मीठा गुरमति सहजे पीजै ॥१॥रहाउ॥ कासट महि जिउ है बैसंतरु मथि संजमि काढि कढीजै। राम नामु है जोति सबाई ततु गुरमति काढि लईजै ॥ १ ॥ नउ दरवाज नवे दर फीके रसु अंम्रितु दसवे चुईजै। क्रिपा क्रिपा किरपा करि पिआरे गुरसबदी हरिरसु पीजै ॥ २ ॥ काइआ नगरु नगरु है नीको विचि सउदा हरिरसु कीजै। रतन लाल अमोल अमोलक सतिगुर सेवा लीजै ॥ ३ ॥ सतिगुरु अगमु अगमु है ठाकुरु भरि सागर भगति करीजै। क्रिपा क्रिपा करि दीन हम सारिंग इक बूंद नामु मुखि दीजै ॥ ४ ॥ लालनु लालु लालु है रंगनु मनु रंगन कउ गुर दीजै। राम राम राम रंगि राते रस रसिक गटक नित पीजै ॥ ५ ॥ बसुधा सपत दीप है सागर कढि कंचनु काढि धरीजै। मेरे ठाकुर के जन इनहु न बाछहि हरि मागहि हरि रसु दीजै ॥ ६ ॥ साकत नर प्रानी सद भूखे नित भूखन भूख करीजै। धावतु धाइ धावहि प्रीति माइआ लख कोसन कउ बिथि दीजै ॥७॥ हरि हरि हरि हरि हरि जन ऊतम किआ उपमा तिन्ह दीजै। राम नाम तुलि अउरु न उपमा जन नानक क्रिपा करीजै ॥ ८ ॥ १ ॥

प्रभु सर्वव्यापक है, उसका नाम सुनकर मन प्रसन्न होता है। हरि-हरि नाम अमृत-समान मीठा है, गुरु-उपदेशानुसार आचरण करते हुए सहजावस्था मे इसका पान करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ लकड़ी में जैसे अग्नि विद्यमान है, तरीक़े से रगड़कर निकाल सकते हैं; वैसे ही हरि की ज्योति, जो रहस्यमयी व्याप्त है, उसे गुरुमत द्वारा प्रत्यक्ष किया जाता है ॥ १ ॥ शरीर के नौ द्वारों (दो नासिकाएँ, दो आँखें, दो कान, एक मुँह एवं दो मल-मूत्र त्याग के द्वार) से प्राप्त रस व्यर्थ और फीके हैं, अमृत-रस तो दसवें (इनसे ऊपर उठने पर) द्वार में स्रवित होता है। हे प्यारे प्रभु, मुझ पर कृपा करो, गुरु का उपदेश उपलब्ध करवाओ, ताकि मैं भी हरि-रस का पान कर सकूँ ॥२॥ काया एक आकर्षक व्यापार नगरी है, इसमें हरि-रस का

व्यापार करो और सतिगुरु की सेवा द्वारा अमूल्य रत्न हरिनाम का अखुट लाभ प्राप्त करो ॥ ३ ॥ सतिगुरु अपहुँच तथा अति गहरा सागर है, उसी की भक्ति करो। हे प्रभु, कृपा करके मुझ चातक के मुँह में हरिनाम-स्वाति की एक बूँद डाल दो ॥ ४ ॥ मेरा प्यारा रंगसाज़ है, उसकी मटकी में आध्यात्मिकता का लाल रंग है, गुरु के माध्यम से अपना मन रँगने के लिए उसे दे दो। रामनाम का मधुर रस रसिक बनकर नित्य गट-गट पी जाओ ॥ ५ ॥ समूची धरती, सातों द्वीपों और सातों सागरों से यदि सोना निकालकर भी (हरिजनों को) दें, तो मेरे स्वामी के भक्त इसे नहीं चाहते, वे तो केवल हरि-प्रभु का नाम-रस माँगते हैं, उन्हें वही चाहिए ॥६॥ मायाधारी जीव सदा असन्तोषी होते हैं, नित्य भूख-भूख चिल्लाते हैं (अर्थात् अधिक से अधिक प्राप्त करने की इच्छा रखते हैं)। माया की प्रीति में वे लाखों कोसों का फ़ासिला तय करके कहीं भी पहुँचते हैं ॥ ७ ॥ हरि के भक्तजन उत्तम लोग होते हैं, उन्हें क्या उपमा दें। उनके लिए रामनाम से बढ़कर कोई उपमा नहीं, दास नानक पर उनकी कृपा बनी रहे ॥ ८ ॥ १ ॥

॥ कलिआन महला ४ ॥ राम गुरु पारसु परसु करीजै। हम निरगुणी मनूर अति फीके मिलि सतिगुर पारसु कीजै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सुरग मुकति बैकुंठ सभि बांछहि निति आसा आस करीजै। हरि दरसन के जन मुकति न मांगहि मिलि दरसन त्रिपति मनु धीजै ॥ १ ॥ माइआ मोहु सबलु है भारी मोहु कालख दाग लगीजै। मेरे ठाकुर के जन अलिपत है मुकते जिउ मुरगाई पंकु न भीजै ॥ २ ॥ चंदन वासु भुइअंगम वेड़ी किव मिलीऐ चंदनु लीजै। काढि खड़गु गुर गिआनु करारा बिखु छेदि छेदि रसु पीजै ॥ ३ ॥ आनि आनि समधा बहु कीनी पलु बैसंतर भसम करीजै। महा उग्र पाप साकत नर कीने मिलि साधू लूकी दीजै ॥ ४ ॥ साधू साध साध जन नीके जिन अंतरि नामु धरीजै। परसनि परसु भए साधू जन जनु हरि भगवानु दिखीजै ॥ ५ ॥ साकत सूतु बहु गुरझी भरिआ किउ करि तानु तनीजै। तंतु सूतु किछु निकसै नाही साकत संगु न कीजै ॥ ६ ॥ सतिगुर साध संगति है नीकी मिलि संगति रामु रवीजै। अंतरि रतन जवेहर माणक गुर किरपा ते लीजै ॥ ७ ॥ मेरा ठाकुरु वडा वडा है सुआमी हम

किउ करि मिलह मिलीजै । नानक मेलि मिलाए गुरु पूरा जन कउ पूरनु दीजै ।। ८ ।। २ ।।

हे प्रभु, मुझे गुरु रूपी पारस का स्पर्श प्रदान करो (गुरु से मिलाप करा दो) । हम गुणहीन व्यर्थ लौह के समान हैं, पारस से मिलकर हममें भी कंचन के गुण आ जायँगे ।। १ ।। रहाउ ।। सब लोग स्वर्ग, मुक्ति, वैकुण्ठ आदि माँगते और नित्य इन्हीं की आशा करते रहते हैं । हरि के सेवक मुक्ति के इच्छुक नहीं होते, वरन् दर्शन में ही पूर्णतृप्ति पा लेते हैं ।। १ ।। माया, मोह सशक्त आकर्षण हैं, मोह तो पापों की कालिमा के दाग़ लगा देता है । किन्तु मेरे स्वामी के सेवक अलिप्त रहते हैं, जैसे मुर्ग़ाबी पानी में तैरती तो है, किन्तु उसके पंख नहीं भीगते ।। २ ।। चन्दन की गन्ध के कारण उस पर सर्प लिपटे रहते हैं, चन्दन को क्योंकर प्राप्त किया जाय ? (हरिनाम चन्दन के गिर्द काम-क्रोधादि सर्प लिपटे हैं ।) गुरु-ज्ञान रूपी सबल खड्ग लेकर उनके विष को काट दो और नाम-रस का पान करो ।। ३ ।। अनेक प्रकार की लकड़ियाँ लगाई, किन्तु कामाग्नि ने उन्हें पल-भर में ही भस्म कर दिया । मायाधारी जीवों ने उग्र पाप किए हैं, (उन पापों को खंडित करने के लिए) सत्संगति में रहकर उसे प्रभु-नाम की अग्नि लगानी होगी (तभी वे जल सकेंगे) ।। ४ ।। साधुजन एवं सन्तों के सम्पर्क में आनेवाली सुयोग्य आत्माएँ उत्तम हैं, क्योंकि उनके भीतर हरिनाम विराजता है । साधुजनों से प्रसन्नतापूर्ण भेंट भगवान के दर्शनों के समान ही होती है ।। ५ ।। मायावी जीव का सूत्र तो पूरी तरह उलझा रहता है, वह ताना क्योंकर लगा सकता है ? (जन्म क्योंकर सफल हो ?) उस सूत्र में से सुलझे हुए तार नहीं निकलते, इसलिए मायाधारी की संगति नहीं की जानी चाहिए ।। ६ ।। सतिगुरु का सम्पर्क तथा सत्संगति उत्तम व्यवस्था है, संगति में मिलकर राम-स्मरण करो । अमूल्य रत्न (हरिनाम) तुम्हारे भीतर ही विद्यमान है, गुरु की कृपा से उसे प्राप्त कर लो ।। ७ ।। मेरा स्वामी बड़ा महान है, हम उससे क्योंकर मिल सकते हैं । गुरु नानक कहते हैं कि कोई सच्चा गुरु ही भक्त को पूर्णता का पद देकर प्रभु-स्वामी से भेंट करवा सकता है ।। ८ ।। २ ।।

।। कलिआनु महला ४ ।। रामा रम रामो रामु रवीजै । साधू साध साध जन नीके मिलि साधू हरि रंगु कीजै ।।१।।रहाउ।। जीअ जंत सभु जगु है जेता मनु डोलत डोल करीजै । क्रिपा क्रिपा करि साधु मिलावहु जगु थंमन कउ थंमु दीजै ।।१।। बसुधा तलै तलै सभ ऊपरि मिलि साधू चरन रुलीजै । अति ऊतम अति ऊतम होवहु सभ सिसटि चरन तल दीजै ।। २ ।। गुरमुखि

जोति भली सिव नीकी आनि पानी सकति भरीजै। मैनवंत निकसे गुर बचनी सारु चबि चबि हरि रसु पीजै ॥३॥ राम नाम अनुग्रहु बहु कीआ गुर साधू पुरख मिलीजै। गुन राम नाम बिसथीरन कीए हरि सगल भवन जसु दीजै ॥ ४ ॥ साधू साध साध मनि प्रीतम बिनु देखे रहि न सकीजै। जिउ जल मीन जलं जल प्रीति है खिनु जल बिनु फूटि मरीजै ॥ ५ ॥ महा अभाग अभाग है जिन के तिन साधू धूरि न पीजै। तिना तिसना जलत जलत नही बूझहि डंडु धरमराइ का दीजै ॥६॥ सभि तीरथ बरत जग्य पुंन कीए हिवै गालि गालि तनु छीजै। अतुला तोलु रामनामु है गुरमति को पुजै न तोल तुलीजै ॥ ७ ॥ तव गुन ब्रहम ब्रहम तू जानहि जन नानक सरनि परीजै। तू जलनिधि मीन हम तेरे करि किरपा संगि रखीजै ॥ ८ ॥ ३ ॥

राम सर्वव्यापक है, राम ही राम का स्मरण करें। साधुजन तथा उनका सम्पर्क उत्तम है, उनकी संगति में मिलकर हरि के रंग में आनन्द करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जगत में जो भी जीव-जन्तु हैं, सबका मन चंचल और दोलायमान है। हे प्रभु, कृपा करके साधुजन की संगति प्रदान करो और उस परमात्मा से मिलाओ जो संसार-भर का सहारा देता है ॥१॥ धरती सबसे नीचे है और इस प्रकार सन्तों की चरण-धूलि बनकर महत्ता प्राप्त करती है। अतः हम भी साधुजन की चरण-धूलि में मिलकर उत्तम हो सकेंगे ॥ २ ॥ गुरुमुखों की वृत्ति श्रेष्ठ होती है, क्योंकि उनमें प्रभु-नाम की ज्योति विराजती है— माया भी उनका पानी भरती है अर्थात् उनकी सेवा में रत रहती है। गुरु के उपदेश को मानने से मोम के दाँत निकलते हैं (ज्ञान और वैराग्य प्रकट होते हैं)। अब इन मोम-दन्तों से लोहा भी चबा-चबाकर खाया जाता है (विकारों का अन्त होता है) और प्रभु-नाम-रस का पान होता है ॥ ३ ॥ हरिनाम की कृपा से ही जीव गुरु के सम्पर्क में आता है। हरिनाम के गुण समूचे लोक में प्रसारित हैं, हरि का यश सर्वत्र गाया जाता है ॥ ४ ॥ साधु के सम्पर्क में मन में प्रियतम की साधना सधती है, तब प्रभु-दर्शन के बिना रहना कठिन हो जाता है; जैसे मछली को जल ही जल से प्रीति होती है, क्षण-भर भी जल से विलग होकर मर जाती है ॥ ५ ॥ जो भाग्यहीन हैं, वे साधुजन की स्थिति से अज्ञ रहते एवं उनकी चरण-धूलि से वंचित होते हैं। वे तृष्णा-अग्नि में जलते हैं, उनकी तृष्णाग्नि कभी नहीं बुझती, धर्मराज दण्ड देता है ॥ ६ ॥ सब तीर्थ, व्रत और होम-पुण्य किए, पर्वतों की बर्फ़ में शरीर को गलाया। रामनाम तो अतुलनीय पदार्थ है, कोई गुरु-उपदेश

को समझे, तभी सही अभेद को पा सकता है ॥ ७ ॥ तुम्हारे गुण ब्रह्म के समान हैं, तुम ही ब्रह्म हो, दास नानक तुम्हारी शरण में है। तुम सागर हो, हम तुम्हारी मछलियाँ हैं, कृपा-पूर्वक हमें अपने साथ-साथ रहने दो ॥ ८ ॥ ३ ॥

॥ कलिआन महला ४ ॥ रामा रम रामो पूज करीजै । मनु तनु अरपि धरउ सभु आगै रसु गुरमति गिआनु द्रिड़ीजै ॥१॥ रहाउ ॥ ब्रहम नाम गुण साख तरोवर नित चुनि चुनि पूज करीजै । आतम देउ देउ है आतमु रसि लागै पूज करीजै ॥१॥ बिबेक बुधि सभ जग महि निरमल बिचरि बिचरि रसु पीजै । गुर परसादि पदारथु पाइआ सतिगुर कउ इहु मनु दीजै ॥ २ ॥ निरमोलकु अति हीरो नीको हीरै हीरु बिधीजै । मनु मोती सालु है गुरसबदी जितु हीरा परखि लईजै ॥ ३ ॥ संगति संत संगि लगि ऊचे जिउ पीप पलास खाइ लीजै । सभ नर महि प्रानी ऊतमु होवै रामनामै बासु बसीजै ॥४॥ निरमल निरमल करम बहु कीने नित साखा हरी जड़ीजै । धरमु फुलु फलु गुरि गिआनु द्रिड़ाइआ बहकार बासु जगि दीजै ॥ ५ ॥ एक जोति एको मनि वसिआ सभ ब्रहम द्रिसटि इकु कीजै । आतमरामु सभ एकै है पसरे सभ चरन तले सिरु दीजै ॥ ६ ॥ नाम बिना नकटे नर देखहु तिन घसि घसि नाक वढीजै । साकत नर अहंकारी कहीअहि बिनु नावै ध्रिगु जीवीजै ॥ ७ ॥ जब लग सासु सासु मन अंतरि ततु बेगल सरनि परीजै । नानक क्रिपा क्रिपा करि धारहु मैं साधू चरन पखीजै ॥ ८ ॥ ४ ॥

(राम) प्रभु सर्व-व्यापक है, उसी की आराधना करो। तन-मन सब उसके सम्मुख अर्पित कर दो और गुरु-मतानुसार नाम का रस एवं ज्ञान पक्की तरह समझाओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरिनाम एक पेड़ है, उसके गुण शाखाएँ हैं, नित्य उसी का पूजन करो। आत्मा ही पूजनीय इष्ट है और पूजनीय इष्ट ही आत्मा है— प्रेम-पूर्वक उसकी पूजा करो ॥ १ ॥ जगत में निर्मल विवेक-बुद्धि से भली-भाँति विचार करके आत्म-रस का पान करो। गुरु-कृपा से हरिनाम-पदार्थ प्राप्त हुआ है, यह हृदय उसी सतिगुरु को अर्पित कर दो ॥२॥ हरिनाम रूपी हीरा अमूल्य है, निर्मल है, इस हीरे से मन रूपी हीरा बींध लीजिए। मन गुरु के उपदेश द्वारा जौहरी बन जाता है, जिससे हरिनाम का हीरा परख लीजिए ॥ ३ ॥ सन्तों की संगति में लगकर जीव इस प्रकार ऊँचा और महान बनता है, जैसे पीपल

का पेड़ पलाश के पेड़ को अपने में आत्मसात् कर लेता है। सब प्राणियों में नर-योनि सर्वोत्तम है, उसमें हरिनाम की सुवास बसी रहती है ॥ ४ ॥ नित्य निर्मल कर्म रूपी हरी-हरी शाखाएँ उगती हैं; उनमें धर्म के फूल और गुरु-ज्ञान के फल दृढ़ होते हैं और सारा संसार उनकी सुगंधि लेता है ॥५॥ एक ज्योति प्रभु मन में विराजता है, समूचा प्रसार एक दृष्टि में ब्रह्म ही है। आत्मा और राम में अभेद है, अन्य सब प्रसार प्रभु की चरण-धूलि की वांछा करता है ॥ ६ ॥ हरिनाम के बिना संसार के लोग नकटे (अपमानित) हैं, उनकी नाक घिस-घिसकर कट गई है (द्वैत-भाव में रगड़-रगड़कर कट जाती रही है)। मायावी जीव अहंकार से भरे होते हैं, हरिनाम के बिना उनके जीने को भी धिक्कार है ॥ ७ ॥ जब तक प्राण हैं, शीघ्र ही परमात्मा की शरण लो। गुरु नानक कहते हैं कि हे प्रभु, मुझ पर कृपा करो, (ऐसा सामर्थ्य दो कि) मैं साधु-चरणों को धोता रहूँ ॥ ८ ॥ ४ ॥

॥ कलिआन महला ४ ॥ रामा मै साधू चरन धुवीजै। किलबिख दहन होहि खिन अंतरि मेरे ठाकुर किरपा कीजै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मंगत जन दीन खरे दरि ठाढे अति तरसन कउ दानु दीजै। त्राहि त्राहि सरनि प्रभ आए मोकउ गुरमति नामु द्रिड़ीजै ॥ १ ॥ काम करोधु नगर महि सबला नित उठि उठि जूझु करीजै। अंगीकारु करहु रखि लेवहु गुर पूरा काढि कढीजै ॥ २ ॥ अंतरि अगनि सबल अति बिखिआ हिव सीतलु सबदु गुर दीजै। तनि मनि सांति होइ अधिकाई रोगु काटै सूखि सवीजै ॥ ३ ॥ जिउ सूरजु किरणि रविआ सरब ठाई सभ घटि घटि रामु रवीजै। साधू साध मिले रसु पावै ततु निज घरि बैठिआ पीजै ॥ ४ ॥ जन कउ प्रीति लगी गुर सेती जिउ चकवी देखि सूरीजै। निरखत निरखत रैनि सभ निरखी मुखु काढै अंम्रितु पीजै ॥ ५ ॥ साकत सुआन कहीअहि बहु लोभी बहु दुरमति मैलु भरीजै। आपन सुआइ करहि बहु बाता तिना का विसाहु किआ कीजै ॥ ६ ॥ साधू साध सरनि मिलि संगति जितु हरिरसु काढि कढीजै। परउपकार बोलहि बहुगुणीआ मुखि संत भगत हरि दीजै ॥ ७ ॥ तू अगम दइआल दइआपति दाता सभ दइआ धारि रखि लीजै। सरब जीअ जगजीवनु एको नानक प्रतिपाल करीजै ॥ ८ ॥ ५ ॥

हे प्रभु, मुझे साधु-चरण धोने का सामर्थ्य प्रदान करो। मेरे स्वामी

को कृपा हो तो सब पाप क्षण-भर में ही जल जाते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ याचक जन दीनतापूर्वक तुम्हारे द्वार पर खड़े हैं, उन तरसते हुए जीवों को दया का दान दो। त्राहि-त्राहि कहते हुए, हे प्रभु, मैं तुम्हारी शरण में आया हूँ, गुरु-उपदेशानुसार मुझे हरिनाम जपने की शक्ति दो ॥ १ ॥ शरीर रूपी नगर में काम-क्रोधादि बड़े सशक्त बदमाश हैं, नित्य उठ-उठकर झगड़ा-फ़साद करते हैं। हे मेरे सच्चे गुरु, मेरी रक्षा करो और इन कुटिलों को निकाल दो ॥ २ ॥ अन्तर् में विषय-विकारों की ज्वलन्त अग्नि विद्यमान है, बर्फ़-समान शीतल गुरु का शब्द प्रदान करो। जिससे मेरा तन-मन शान्त हो, रोग कटे और मैं सुख से सो सकूँ ॥ ३ ॥ जिस प्रकार सूर्य की किरणें सारे जगत में रमती हैं, (उसी प्रकार) घट-घट में राम व्याप्त है। सत्संगति में सन्तों के मिलन से जीव अन्तर्मुखी हुआ हरिनाम-रस का पान करने लगता है ॥ ४ ॥ सेवक की गुरु से ऐसी प्रीति होती है, जैसे चकवी सूर्य को देखकर प्रफुल्लित हो जाती है। उसकी राह देखते-देखते वह सारी रात निकाल देती है, ज्योंही उषाकाल में वह मुँह दिखाता है, वह (चकवी) दर्शनों का मधुर अमृत पीने लगती है ॥५॥ मायाधारी जीव तो कुत्ते की तरह लोभी होता है, उसमें दुर्मति की मैल भरी होती है। वह अपने स्वार्थ के लिए बहुत बातें बनाता है, ऐसे व्यक्ति का क्या विश्वास हो ॥ ६ ॥ साधु, साधु-शरण और सत्संगति वहीं है, जहाँ हरिनाम-रस का पान किया जाता है। वे परोपकार की बात करते, गुण-युक्त सन्तों-भक्तों के द्वारा हरि-चर्चा देते हैं ॥ ७ ॥ हे परमात्मा, तुम अगम, दयालु, दयानिधि हो; सम्मान देनेवाले हो, दया धारण कर मेरी रक्षा करो। गुरु नानक कहते हैं कि विश्व में सर्व जीवों के तुम्हीं एक जीवन-दाता हो, सबको संरक्षण दो ॥ ८ ॥ ५ ॥

॥ कलिआनु महला ४ ॥ रामा हम दासन दास करीज। जब लगि सासु होइ मन अंतरि साधू धूरि पिवीजै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संकरु नारदु सेखनाग मुनि धूरि साधू की लोचीजै। भवन भवन पवितु होहि सभि जह साधू चरन धरीजै ॥ १ ॥ तजि लाज अहंकारु सभु तजीऐ मिलि साधू संगि रहीजै। धरमराइ की कानि चुकावै बिखु डुबदा काढि कढीजै ॥ २ ॥ भरमि सूके बहु उभि सुक कहीअहि मिलि साधू संगि हरीजै। ताते बिलमु पलु ढिल न कीजै जाइ साधू चरनि लगीजै ॥ ३ ॥ राम नाम कीरतन रतन वथु हरि साधू पासि रखीजै। जो बचनु गुर सति सति करि मानै तिसु आगै काढि धरीजै ॥ ४ ॥ संतहु सुनहु सुनहु जन भाई गुरि काढी बाह कुकीजै। जे आतम कउ

सुखु सुखु नित लोड़हु तां सतिगुर सरनि पवीजै ।।५।। जे वडभागु होइ अति नीका तां गुरमति नामु द्रिड़ीजै । सभु माइआ मोहु बिखमु जगु तरीऐ सहजे हरिरसु पीजै ।। ६ ।। माइआ माइआ के जो अधिकाई विचि माइआ पचै पचीजै । अगिआनु अंधेरु महा पंथु बिखड़ा अहंकारि भारि लदि लीजै ।। ७ ।। नानक राम रम रमु रम रम रामै ते गति कीजै । सतिगुरु मिलै ता नामु द्रिड़ाए राम नामै रलै मिलीजै ।। ८ ।। ६ ।। छका १

हे वाहिगुरु, हमें अपने दासों का दास बना लो। जब तक श्वास चलता है, हमें साधु-चरणामृत पीते रहना है ।। १ ।। रहाउ ।। स्वयं शिव, नारद, शेषनाग और ऋषि-मुनि साधु की चरण-धूलि के आकांक्षी हैं। जहाँ-जहाँ भी साधुजन के चरण पड़ते हैं, वे जगहें पवित्र हो जाती हैं ।।१।। मिथ्या लज्जा और अहंकार को त्यागकर साधुजन की संगति में रहो। साधु धर्मराज का भय दूर करता और विषय-विकारों के विषैले सागर से निकाल लेता है ।। २ ।। मिथ्या भटकन में पड़कर खड़े-खड़े सूख जाने वाले पेड़ भी साधुजन की संगति में हरे हो जाते हैं (भटके जीव स्थिर होते हैं)। अतः पल-भर भी विलम्ब न करो, ढील न करो, जाकर साधुजन की शरण लो ।। ३ ।। हरिनाम-कीर्तन की वस्तु परमात्मा ने साधुजन के पास रखी होती है, जो गुरु के वचनों को सत्य कर स्वीकार करता है, उसके सम्मुख वे निकालकर दे देते हैं ।। ४ ।। ऐ भले लोगो, सुनो, ध्यान दो, गुरु तो हाथ उठा-उठाकर पुकारता है (कि इस राह पर आओ)। यदि आत्मा का परमसुख अपेक्षित है, तो गुरु की शरण धारण कीजिए ।।५।। यदि भाग्य बहुत ही ऊँचा हो, तभी जीव गुरु के उपदेशानुसार हरिनाम दृढ़ाता है, अन्यथा सब माया-मोह है, यह विषम संसार-सागर केवल सहजावस्था में हरिनाम रसपान द्वारा ही पार होता है ।। ६ ।। जो नित्य माया के ही चाहक हैं, वे माया में ही बरबाद हो जाते हैं। माया का रास्ता महा अन्धकारमय है, इस पर लोभी जीव अहंकार का बोझ लादे हुए होता है ।। ७ ।। गुरु नानक कहते हैं कि व्यापक राम के स्मरण द्वारा ही मुक्ति मिलती है। सच्चा गुरु मिले, तो वह हरिनाम जपवाता है और जीव रामनाम में ही लीन हो जाता है ।। ८ ।। ६ ।। छका १

१ ओं सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥

रागु परभाती बिभास महला १ चउपदे घरु १

नाइ तेरै तरणा नाइ पति पूज । नाउ तेरा गहणा मति मकसूदु । नाइ तेरै नाउ मंने सभ कोइ । विणु नावै पति कबहु न होइ ॥ १ ॥ अवर सिआणप सगली पाजु । जै बखसे तै पूरा काजु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नाउ तेरा ताणु नाउ दीबाणु । नाउ तेरा लसकरु नाउ सुलतानु । नाइ तेरै माणु महत परवाणु । तेरी नदरी करमि पवै नीसाणु ॥ २ ॥ नाइ तेरै सहजु नाइ सालाह । नाउ तेरा अंम्रितु बिखु उठि जाइ । नाइ तेरै सभि सुख वसहि मनि आइ । बिनु नावै बाधी जमपुरि जाइ ॥ ३ ॥ नारी बेरी घर दर देस । मन कीआ खुसीआ कीचहि वेस । जां सदे तां ढिल न पाइ । नानक कूड़ु कूड़ो होइ जाइ ॥ ४ ॥ १ ॥

हे प्रभु, तुम्हारे नाम से ही गति है, नाम द्वारा ही मनुष्य की प्रतिष्ठा होती है और वह पूजा जाता है । हे हरि, तुम्हारा नाम हमारी शोभा है और इससे ज्ञान का लक्ष्य पूर्ण होता है । तुम्हारे नाम से ही लोगों को ख्याति मिलती है, हरिनाम के बिना किसी की प्रतिष्ठा नहीं होती ॥ १ ॥ अन्य सब चतुराई दिखावा है, जिस पर प्रभु की कृपा होती है, उसके सब कार्य सम्पन्न हो जाते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुम्हारा नाम ही मेरा सहारा है, नाम ही मेरी एकमात्र टेक है । तुम्हारा नाम ही सेना है, नाम ही सेना-नायक सुलतान है । तुम्हारे नाम से लोगों को मान, महत्त्व प्राप्त होता है, तुम्हारी कृपा-दृष्टि से ही जीव पर स्वीकृति-चिह्न लगता है ॥ २ ॥ तुम्हारे नाम से ही ज्ञान पैदा होता है, नाम की ही प्रशस्ति होती है । तुम्हारा नाम अमृत है, विषय-विकारों के विष को निरस्त करता है । तुम्हारा नाम जपने से मन में सब प्रकार का सुख होता है । हरिनाम के बिना यमदूतों द्वारा बँधकर यमपुरी जाना पड़ता है ॥ ३ ॥ सुन्दर स्त्री का बन्धन, घर, देश, मन की ख़ुशियाँ या विभिन्न प्रकार के वेषाडम्बर जैसी चीजें भी किसी के पास हों, तो भी परमात्मा का बुलावा आने पर जाने में ढील नहीं की जा सकती । गुरु नानक कहते हैं कि ये सब वस्तुएँ मिथ्या हैं, मिथ्या में ही मिल जाती हैं ॥ ४ ॥ १ ॥

।। प्रभाती महला १ ।। तेरा नामु रतनु करमु चानणु सुरति तिथै लोइ। अंधेरु अंधी वापरै सगल लीजै खोइ ।। १ ।। इहु संसारु सगल बिकारु। तेरा नामु दारू अवरु नासति करणहारु अपारु ।।१।।रहाउ।। पाताल पुरीआ एक भार होवहि लाख करोड़ि। तेरे लाल कीमति ता पवै जां सिरै होवहि होरि ।। २ ।। दूखा ते सुख ऊपजहि सूखी होवहि दूख। जितु मुखि तू सालाहीअहि तितु मुखि कैसी भूख ।। ३ ।। नानक मूरखु एकु तू अवरु भला संसारु। जितु तनि नामु न ऊपजै से तन होहि खुआर ।। ४ ।। २ ।।

तुम्हारी कृपा से जिस जीव का नाम-रत्न प्राप्त है, वह आलोकित हो उठती है। अन्धी (अज्ञानपूर्ण) सृष्टि में अँधेरा रहता है, जिसके परिणामस्वरूप लोग सब कुछ खो बैठते हैं ।। १ ।। यह सारा संसार विकारपूर्ण है, इसमें तुम्हारा नाम ही ओषधि है, हे अपार स्रष्टा, (उसके अतिरिक्त) अन्य कुछ नहीं है ।। १ ।। रहाउ ।। विश्व के सभी लोक, पाताल, नगरियाँ यदि एक इकाई हो और ऐसी लाखों-करोड़ों इकाइयाँ किसी की सम्पत्ति हो, तो भी उसका सही मोल तब तक सम्भव नहीं, जब तक कि तुलता में दूसरी ओर कुछ और (महत्त्वपूर्ण चीज़ें) न हों। (ये महत्त्वपूर्ण चीज़ें वास्तव में हरिनाम और प्रभु के यशोगान का संकेत देती हैं) ।। २ ।। दुःखों के बाद सुख आते हैं, सुखों के बाद दुःख होते हैं, किन्तु जिस मुख से तुम्हारी कीर्ति गाई जाती है, वह पूर्णतः तृप्त हो जाता है, उसे कोई भूख (ज़रूरत) नहीं रह जाती ।। ३ ।। गुरु नानक विनम्रतावश कहते हैं कि मैं ही गँवार हूँ, अन्य सब संसार भला है; किन्तु जिस तन में हरिनाम नहीं उपजता, वह तन व्यर्थ होता है ।। ४ ।। २ ।।

।। प्रभाती महला १ ।। जै कारणि बेद ब्रहमै उचरे संकरि छोडी माइआ। जै कारणि सिध भए उदासी देवी मरमु न पाइआ ।। १ ।। बाबा मनि साचा मुखि साचा कहीऐ तरीऐ साचा होई। दुसमनु दूखु न आवै नेड़ै हरि मति पावै कोई ।। १ ।। रहाउ ।। अगनि बिंब पवणै की बाणी तीनि नाम के दासा। ते तसकर जो नामु न लेवहि वासहि कोट पंचासा ।। २ ।। जेको एक करै चंगिआई मनि चिति बहुतु बफावै। एते गुण एतीआ चंगिआईआ देइ न पछोतावै ।। ३ ।। तुधु सालाहनि तिन धनु पलै नानक का धनु सोई। जे को जीउ कहै ओना कउ जम की तलब न होई ।। ४ ।। ३ ।।

जिस प्रभु की प्राप्ति के लिए ब्रह्मा ने वेद उच्चारण किया और शिव मायातीत त्यागी बना, सिद्ध जिस कारण उदासीन हुए और जिसका भेद देवता लोग भी नहीं पा सके ॥ १ ॥ हे बाबा, वह परमात्मा सत्यस्वरूप है, उसके कहने-सुनने से मुख और मन सच होते हैं और उसी सच्चे से मुक्ति प्राप्त होती है। प्रभु-रहस्य को पा लेनेवाले के पास दुःख या शत्रु कोई नहीं फटकता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संसार अग्नि, पानी और वायु की रचना है (अग्नि = तमोगुण, पानी = सतोगुण तथा वायु = रजोगुण। त्रिगुणी सृष्टि प्रभु की रचना और उसके नियन्त्रण में है), ये तीनों प्रभु-नाम के दास हैं। जो दुष्ट हरिनाम नहीं लेते, वे पचासवें कोट (धरती पर ४९ कोट माने गए हैं, पचासवाँ काल्पनिक है, जहाँ कुछ उपलब्ध नहीं) में बसते हैं ॥ २ ॥ यदि कोई किसी से भले की एक बात करता है, तो वह बाहर डींगे मारने लगता है, किन्तु हरि-दाता को देखो, जो भला ही भला करता है, किन्तु एक बार भी उसकी गिनती नहीं करता ॥ ३ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि तुम्हारा यशोगान करनेवालों को उपलब्धियाँ मिलती हैं, मेरा तो धन वह स्वयं ही है। यदि कोई उनका भी सत्कार करता है, तो वह भी यमदूतों के दुःख से बच जाता है ॥ ४ ॥ ३ ॥

॥ प्रभाती महला १ ॥ जाकै रूपु नाही जाति नाही नाही मुखु मासा। सतिगुरि मिले निरंजनु पाइआ तेरै नामि है निवासा ॥ १ ॥ अउधू सहजे ततु बीचारि। जाते फिरि न आवहु संसारि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जाकै करमु नाही धरमु नाही नाही सुचि माला। सिव जोति कंनहु बुधि पाई सतिगुरू रखवाला ॥ २ ॥ जाकै बरतु नाही नेमु नाही नाही बकबाई। गति अवगति की चिंत नाही सतिगुरू फुरमाई ॥ ३ ॥ जाकै आस नाही निरास नाही चिति सुरति समझाई। तंत कउ परमतंतु मिलिआ नानका बुधि पाई ॥ ४ ॥ ४ ॥

जिस ब्रह्म का कोई रूप नहीं, जाति नहीं, मुख-मांस कुछ भी नहीं, ऐसा मायातीत प्रभु सतिगुरु के द्वारा ही मिलता है और वह नाम में निवास करता है ॥ १ ॥ हे अवधूत योगी, सहज तत्त्व पर विचार करो, ताकि पुनः संसार में न आना हो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसका कोई कर्म, धर्म या जपमाला आदि नहीं; वह कल्याण-रूप हरि-ज्योति सतिगुरु के संरक्षण में ही मिलती है ॥ २ ॥ जिसका कोई व्रत, नियम अथवा व्यर्थ बकवाद नहीं, उसके सम्बन्ध में सतिगुरु की शिक्षा यह है कि उसे अच्छे-बुरे की कोई चिन्ता नहीं होती ॥ ३ ॥ वह आशा, निराशा से परे है;

गुरु नानक अपने चित्त को समझाते हुए कहते हैं कि विवेक जाग्रत् होने पर जीव को परमात्मा (तत्त्व को परमतत्त्व) मिल जाता है ॥ ४ ॥ ४ ॥

॥ प्रभाती महला १ ॥ ताका कहिआ दरि परवाणु। बिखु अंम्रितु दुइ समकरि जाणु ॥ १ ॥ किआ कहीऐ सरबे रहिआ समाइ। जो किछु वरतै सभ तेरी रजाइ ॥१॥रहाउ॥ प्रगटी जोति चूका अभिमानु। सतिगुरि दीआ अंम्रित नामु ॥२॥ कलि महि आइआ सो जनु जाणु। साची दरगह पावै माणु ॥३॥ कहणा सुनणा अकथ घरि जाइ। कथनी बदनी नानक जलि जाइ ॥ ४ ॥ ५ ॥

जो सन्तजन विष और अमृत अर्थात् दुःख-सुख एक-समान मानते हैं, उनका कहा परमात्मा के दरबार में साक्षी होता है (मान्य होता है) ॥ १ ॥ उसकी महिमा क्या कहें, वह सर्व-व्यापक है, जो कुछ हो रहा है, वह सब तुम्हारी ही इच्छा से होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब सतिगुरु ने अमृत-समान हरिनाम का भेद समझाया, तो मन में आलोक हो गया, अभिमान-जैसे दुर्गुण दूर हो गए ॥ २ ॥ कलियुग में जो भी जन (हरिनाम का ध्यान करता है), उसे परमात्मा के निकट आदर प्राप्त होता है ॥ ३ ॥ उसका कहना-सुनना इतना ही है कि वह सदा अकथनीय हरि के घर में रहता है। गुरु नानक कहते हैं कि मौखिक बातें तो व्यर्थ होती हैं ॥ ४ ॥ ५ ॥

॥ प्रभाती महला १ ॥ अंम्रितु नीरु गिआनि मन मजनु अठसठि तीरथ संगि गहे। गुर उपदेसि जवाहर माणक सेवे सिखु सुो खोजि लहै ॥ १ ॥ गुर समानि तीरथु नही कोइ। सरु संतोखु तासु गुरु होइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु दरीआउ सदा जलु निरमलु मिलिआ दुरमति मैलु हरै। सतिगुरि पाइऐ पूरा नावणु पसू परेतहु देव करै ॥ २ ॥ रता सचि नामि तलहीअलु सो गुरु परमलु कहीऐ। जाकी वासु बनासपति सउरै तासु चरण लिव रहीऐ ॥ ३ ॥ गुरमुखि जीअ प्रान उपजहि गुरमुखि सिव घरि जाईऐ। गुरमुखि नानक सचि समाईऐ गुरमुखि निज पदु पाईऐ ॥ ४ ॥ ६ ॥

ज्ञान द्वारा नामामृत रूपी जल प्राप्त होता है। मन उसमें स्नान करता है, तो अठसठ तीर्थों को साथ लिये फिरता है। गुरु के उपदेश में अनेक अमूल्य रत्न-जवाहर मौजूद हैं, जो कोई भी शिष्य खोज सकता

है ॥ १ ॥ गुरु के समान कोई तीर्थ नहीं, वह गुरु सन्तोष का सरोवर है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु निर्मल जल की नदी है, जो भी उससे मिलता है, वह उसकी दुर्मति रूपी मैल धो डालता है। सच्चा सतिगुरु मिले तो हमारा वास्तविक तीर्थ-स्नान हो, वह तो पशु-प्रेत को भी देवत्व प्रदान करने में समर्थ है ॥ २ ॥ जो सतिगुरु गहराई तक सत्यनाम में डूबा होता है, वह चन्दन-रूप होता है। उसकी सुगन्धि से निकट की समूची वनस्पति सुवासित हो जाती है, हमें भी उसी के चरणों की शरण में रहना चाहिए। (यहाँ गुरु को चन्दन एवं संगति करनेवाले जीवों को वनस्पति कहा गया है।) ॥ ३ ॥ गुरु के द्वारा मनुष्य में जीवन-प्राण स्रवित होते हैं, गुरु के ही द्वारा सुख-कल्याण का घर नसीब होता है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु के द्वारा ही जीव सत्यस्वरूप परमात्मा में समाता है, और गुरु के द्वारा ही निजी स्वरूप प्राप्त होता है ॥ ४ ॥ ६ ॥

॥ प्रभाती महला १ ॥ गुरपरसादी विदिआ वीचारै पड़ि पड़ि पावै मानु । आपा मधे आपु परगासिआ पाइआ अंम्रितु नामु ॥ १ ॥ करता तू मेरा जजमानु । इक दखिणा हउ तै पहि मागउ देहि आपणा नामु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पंच तसकर धावत राखे चूका मनि अभिमानु । दिसटि बिकारी दुरमति भागी ऐसा ब्रहम गिआनु ॥ २ ॥ जतु सतु चावल दइआ कणक करि प्रापति पाती धानु । दूधु करमु संतोखु घीउ करि ऐसा मांगउ दानु ॥ ३ ॥ खिमा धीरजु करि गऊ लवेरी सहजे बछरा खीरु पीऐ । सिफति सरम का कपड़ा मांगउ हरिगुण नानक रवतु रहै ॥ ४ ॥ ७ ॥

गुरु की कृपा से जीव को विद्या प्राप्त होती है और वह पढ़-लिखकर सम्मान प्राप्त करता है। अमृत-समान हरिनाम को पाकर वह अपने भीतर हरि-ज्योति का प्रकाश अनुभव करता है ॥ १ ॥ हे कर्ता प्रभु, तुम मेरे यजमान (दान देनेवाले) हो, मैं तुमसे एक दक्षिणा माँगता हूँ कि मुझे अपना नाम प्रदान करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुमने मेरे पाँचों चोरों (काम-क्रोधादि) को भागने से रोका और मन का मानाभिमान हटाया है। ऐसा ब्रह्म-ज्ञान दिया है कि मेरी विकृत-दृष्टि तथा दुर्मति दूर हो गई हैं ॥ २ ॥ (यजमान से पत्तल-दान का रूपक है।) यतीत्व और सतीत्व का चावल, दया का गेहूँ और सत्य का धान रखकर तुमने पत्तल दान दिया है। उस महान दान में तुम्हारी कृपा का दूध तथा संतोष का घी भी मिला है ॥ ३ ॥ क्षमा और धैर्य की दुधारू गाय का दान दो, जिसका दूध सहजावस्था में बछड़ा सेवन करता है। गुरु नानक कहते हैं कि अपने

कीर्तिगान के लिए उद्यम का वस्त्र दान दो और सामर्थ्य दो कि नित्य तुम्हारी स्मृति बनी रहे ॥ ४ ॥ ७ ॥

॥ प्रभाती महला १ ॥ आवतु किनै न राखिआ जावतु किउ राखिआ जाइ । जिस ते होआ सोई परु जाणै जां उस ही माहि समाइ ॥१॥ तूहै है वाहु तेरी रजाइ । जो किछु करहि सोई परु होइबा अवरु न करणा जाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जैसे हरहट की माला टिंड लगत है इक सखनी होर फेर भरीअत है। तैसो ही इहु खेलु खसम का जिउ उस की वडिआई ॥ २ ॥ सुरती कै मारगि चलि कै उलटी नदरि प्रगासी । मनि वीचारि देखु ब्रहमगिआनी कउनु गिरही कउनु उदासी ॥ ३ ॥ जिस की आसा तिसही सउपि कै एहु रहिआ निरबाणु । जिस ते होआ सोई करि मानिआ नानक गिरही उदासी सो परवाणु ॥४॥८॥

पैदा होने से किसी ने रोका नहीं और मरने से कोई बचा नहीं सकता । जो करता है, वही जानता है, उसी में सब समा जाता है ॥१॥ हे प्रभु, तुम ही सर्वस्व हो, तुम्हारी रज़ा (इच्छा) ही शिरोधार्य है । जो तुम करते हो वह ज़रूर होता है, अन्य कोई उसे नहीं कर सकता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जैसे रहट वाले कुएँ की डिब्बों की माला में एक डिब्बा ख़ाली होता है तो नीचे दूसरा भरता चलता है, वैसे ही प्रभु का यह खेल है (एक मरता और दूसरा पैदा होता है), इसी में उसका बड़प्पन है ॥ २ ॥ ज्ञान-पथ पर चलते हुए दृष्टि माया की ओर से उलट ली है और भीतर प्रकाश हुआ है । ऐ ब्रह्मज्ञानी, मन में विचार कर देख तो सही कि कौन (मन से) गृहस्थी या उदासीन है ॥ ३ ॥ जिस परमात्मा ने आशाएँ पैदा की हैं, उसी को सौंपकर मनुष्य दुःख-रहित हो जाता है । जिस परमात्मा ने किया है, वही सबकी पुष्टि करता है, गृही या त्यागी-रूप में वही स्वीकृति अंकित करता है ॥ ४ ॥ ८ ॥

॥ प्रभाती महला १ ॥ दिसटि बिकारी बंधनि बांधै हउ तिस कै बलि जाई । पाप पुंन की सार न जाणै भूला फिरै अजाई ॥ १ ॥ बोलहु सचु नामु करतार । फुनि बहुड़ि न आवण वार ॥१॥रहाउ॥ ऊचा ते फुनि नीचु करतु है नीच करै सुलतानु । जिनी जाणु सु जाणिआ जगि ते पूरे परवाणु ॥२॥ ताकउ समझावण जाईऐ जे को भूला होई । आपे खेल करे सभ करता ऐसा बूझै कोई ॥ ३ ॥ नाउ प्रभातै सबदि धिआईऐ

छोडहु दुनी परीता । प्रणवति नानक दासनिदासा जगि हारिआ तिनि जीता ॥ ४ ॥ ९ ॥

जो जीव विकृत दृष्टि को संयत करता है, मैं उस पर क़ुर्बान जाता हूँ। जो पाप-पुण्य की असलियत को नहीं समझता, व्यर्थ में भूला फिर रहा है (वह असफल जीवन है) ॥ १ ॥ जो कर्तार का सच्चा नाम बोलता है, वह पुनः आनेवाला नहीं होता (अर्थात् वह दोबारा जन्म नहीं लेता) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऊँचे से वह नीचा बना देता है, राजाओं को रंक करता है। जो जानने योग्य हरि को जान लेते हैं, वे प्रभु द्वारा स्वीकृत होते हैं ॥ २ ॥ समझाया तो उसे जाता है, जो भूला हुआ हो। वह स्रष्टा तो अपने-आप लीलाएँ करता है, इस तथ्य को जान लो ॥ ३ ॥ सांसारिक प्रीति छोड़कर जो प्रातःकाल गुरु-वचनानुसार प्रभु-स्मरण करता है, गुरु नानक कहते हैं कि वह विजेता है, संसार उसके सम्मुख परास्त हो जाता है ॥ ४ ॥ ९ ॥

॥ प्रभाती महला १ ॥ मनु माइआ मनु धाइआ मनु पंखी आकासि । तसकर सबदि निवारिआ नगरु वुठा साबासि । जा तू राखहि राखि लैहि साबतु होवै रासि ॥ १ ॥ ऐसा नामु रतनु निधि मेरै । गुरमति देहि लगउ पगि तेरै ॥१॥रहाउ॥ मनु जोगी मनु भोगीआ मनु मूरखु गावारु । मनु दाता मनु मंगता मन सिरि गुरु करतारु । पंच मारि सुखु पाइआ ऐसा ब्रहमु बीचारु ॥ २ ॥ घटि घटि एकु वखाणीऐ कहउ न देखिआ जाइ । खोटो पूठो रालीऐ बिनु नावै पति जाइ । जा तू मेलहि ता मिलि रहां जां तेरी होइ रजाइ ॥ ३ ॥ जाति जनमु नह पूछीऐ सच घरु लेहु बताइ । सा जाति सा पति है जेहे करम कमाइ । जनम मरन दुखु काटीऐ नानक छूटसि नाइ ॥४॥१०॥

मन मायावी है, मन चंचल है, आकाश के पक्षी की तरह उड़ता फिरता है। जब प्रभु-शब्द द्वारा वह काम-क्रोधादि तस्करों को दूर कर देता है, तो वह हृदय-नगर का शिष्ट नागरिक हो जाता है। जिसे, हे प्रभु, तुम रखते हो, वह सुरक्षित हो जाता है, उसकी हरिनाम-पूंजी भी सार्थक होती है ॥ १ ॥ मेरे पास नाम-रत्न की निधि है और गुरु से उपदेश मिला है कि मुझे तुम्हारे चरणों में रहना है ॥१॥रहाउ॥ मन योगी है, भोगी भी वही है और मन ही मूर्ख-गँवार है। मन दाता है, याचक भी है और कभी यह भी समझता है कि उसके सिर प्रभु का अंकुश भी मौजूद है। तब वह काम-क्रोधादि पंचों को मारकर और ब्रह्म के सम्बन्ध में

विचार करते हुए सुखी होता है ।। २ ।। वह एक परमात्मा ही घट-घट में बसा है, किन्तु किसी से देखा नहीं जाता । खोटे दुष्ट स्वभाव के जीवों को उलटा करके पुनः गर्भ-दुःख सहने को फेंक दिया जाता है, हरिनाम के बिना वहाँ किसी की इज़्ज़त नहीं । जब तुम अपने में मिलाओगे, तभी, तुम्हारी ही इच्छा से तुममें लग्न लगा सकूँगा ।। ३ ।। परमात्मा के घर में जाति-धर्म आदि नहीं पूछे जाते, वहाँ के लिए तो उत्तम जीवनाचरण सीखना अपेक्षित है । जीव जैसे कर्म करता है, वैसी ही उसकी जाति या सम्मान होता है । गुरु नानक कहते हैं कि हरिनाम से ही उनकी मुक्ति होती है, उनके जन्म-मरण के दुःख कट जाते हैं ।। ४ ।। १० ।।

।। प्रभाती महला १ ।। जागतु बिगसै मूठो अंधा । गलि फाही सिरि मारे धंधा । आसा आवै मनसा जाइ । उरझी ताणी किछु न बसाइ ।। १ ।। जागसि जीवण जागणहारा । सुख सागर अंम्रित भंडारा ।।१।।रहाउ।। कहिओ न बूझै अंधु न सूझै भोंडी कार कमाई । आपे प्रीति प्रेम परमेसुरु करमी मिलै वडाई ।। २ ।। दिनु दिनु आवै तिलु तिलु छीजै माइआ मोहु घटाई । बिनु गुर बूडो ठउर न पावै जब लग दूजी राई ।। ३ ।। अहिनिसि जीआ देखि सम्हालै सुखु दुखु पुरबि कमाई । करमहीणु सचु भीखिआ मांगै नानक मिलै वडाई ।। ४ ।। ११ ।।

जाग्रतावस्था में भी यह अंधा जीव लुट रहा है, और इसमें भी यह सुख मानता है । गले में मोह का फंदा लगा है और यह अपने कर्म में तल्लीन है । आशाएँ लेकर पैदा होता है, मन में ही लेकर मर जाता है । जीवन उलझा रहता है और इसका वश उस पर कुछ नहीं चलता ।। १ ।। जीवन देनेवाला परमात्मा सदैव जाग्रत् है । उसके नामामृत के भण्डार में परमसुख संकलित है ।।१।।रहाउ।। जीव समझाने से समझता नहीं, अज्ञानांधकार में उसे दीख नहीं पड़ता; अतः भोंडी (विकृत) करनी में निमग्न रहता है । हरि की प्रीति हरि से ही मिलती है, उत्तम कर्मों को ही बड़ाई मिलती है ।। २ ।। जीवन के दिन आ-जा रहे हैं, आयु धीरे-धीरे घट रही है और चित्त में अभी तक माया-मोह विराजते हैं । गुरु के बिना वह संसार की गहराइयों में डूबता है और जब तक द्वैत-भाव से मुक्त नहीं होता, उसे कोई ठिकाना प्राप्त नहीं है ।।३।। परमात्मा रात-दिन जीवों को देखता-सम्हालता है और उन्हें कर्मों के अनुसार सुख-दुःख प्रदान करता है । गुरु नानक कहते हैं कि मैं अभागा तुमसे भिक्षा माँगता हूँ, मुझे भी सत्य की बड़ाई प्राप्त हो ।। ४ ।। ११ ।।

॥ प्रभाती महला १ ॥ मसटि करउ मूरखु जगि कहीआ। अधिक बकउ तेरी लिव रहीआ। भूल चूक तेरै दरबारि। नाम बिना कैसे आचार ॥१॥ ऐसे झूठि मुठे संसारा। निंदकु निंदै मुझै पिआरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसु निंदहि सोई बिधि जाणै। गुर कै सबदे दरि नीसाणै। कारण नामु अंतरिगति जाणै। जिसनो नदरि करे सोई बिधि जाणै ॥ २ ॥ मै मैलौ ऊजलु सचु सोइ। ऊतमु आखि न ऊचा होइ। मनमुखु खूल्हि महा बिखु खाइ। गुरमुखि होइ सु राचै नाइ ॥ ३ ॥ अंधौ बोलौ मुगधु गवारु। हीणौ नीचु बुरौ बुरिआरु। नीधन कौ धनु नामु पिआरु। इहु धनु सारु होरु बिखिआ छारु ॥ ४ ॥ उसतति निंदा सबदु वीचारु। जो देवै तिस कउ जैकारु। तू बखसहि जाति पति होइ। नानकु कहै कहावै सोइ ॥ ५ ॥ १२ ॥

मौन रहने पर जगत मूर्ख कहता है, यदि अधिक बोलूँ तो तुम्हारी लग्न में फ़र्क़ आता है। तुम्हारे समक्ष भूल-चूक परखी जायगी, अतः हरिनाम के बिना व्यर्थ कर्मों का क्या लाभ है ? ॥१॥ सारा संसार झूठ में फँसा है। जिसे निन्दक बुरा कहता है, वही मुझे प्यारा लगता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो अधिकांशतः निन्दा-पात्र बनता है, वही जीवन-युक्ति को समझता है। वह गुरु के उपदेश से ही प्रकट होता है। कारण-रूप प्रभु को मन से पहचानता है। जिस पर परमात्मा की कृपा-दृष्टि होती है, वही जीवन-युक्ति को जानता है ॥ २ ॥ मैं मलिन हूँ, वह सत्यस्वरूप उज्ज्वल है। उत्तम कहने से कोई ऊँचा नहीं हो जाता। मनमुख जीव खुले-बँधे विषय-विकारों का विष खाते हैं। केवल गुरुमुख ही हरिनाम में रचे होते हैं ॥ ३ ॥ अज्ञानी अन्धे मूर्ख-गँवार होते हैं, वे क्या बोलेंगे। वे हीन, नीच, बुरों से भी बुरे हैं। निर्धन के लिए राम-धन ही उत्तम होता है। यही धन मूल तत्त्व है, अन्य सब तो धूल है ॥ ४ ॥ परमात्मा किसी को स्तुति, किसी को निन्दा और किसी को शब्द-विचार का सामर्थ्य देता है। जो प्रभु यह सब कुछ देता है, प्रणम्य है। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा स्वयं ही सब कुछ करनेवाला है, उसी के बख़्शने पर जाति का बड़प्पन स्वयं उतर जाता है ॥ ५ ॥ १२ ॥

॥ प्रभाती महला १ ॥ खाइआ मैलु वधाइआ पैधै घर की हाणि। बकि बकिवादु चलाइआ बिनु नावै बिखु

जाणि ॥ १ ॥ बाबा ऐसा बिखम जालि मनु वासिआ । बिबलु झागि सहजि परगासिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बिखु खाणा बिखु बोलणा बिखु की कार कमाइ । जमदरि बाधे मारीअहि छूटसि साचै नाइ ॥२॥ जिव आइआ तिव जाइसी कीआ लिखि लै जाइ । मनमुखि मूलु गवाइआ दरगह मिलै सजाइ ॥ ३ ॥ जगु खोटौ सचु निरमलौ गुरसबदीं वीचारि । ते नर विरले जाणीअहि जिन अंतरि गिआनु मुरारि ॥ ४ ॥ अजरु जरै नीझरु झरै अमर अनंद सरूप । नानकु जल कौ मीन सै थे भावै राखहु प्रीति ॥ ५ ॥ १३ ॥

मनुष्य अधिक खाकर मैल बढ़ाता है और अच्छा पहनकर घर की हानि करता है। बेकार बोल-बोलकर झगड़ा खड़ा करता है। हरिनाम के बिना सब विषवत् ही तो है ॥ १ ॥ ऐसे विषम संसार-जाल में बसा हुआ मन अन्ततः हरिनाम के साबुन-जल से धुलकर उज्ज्वल हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दुनियादारी जीव का खाना, बोलना और कर्म करना, सब विषाक्त (माया-प्रेरित) है। यमदूतों द्वारा बाँधकर उसे दण्ड दिया जाता है, मात्र सच्चे हरिनाम से ही उसका छुटकारा सम्भव है ॥ २ ॥ जैसा गुणहीन पैदा हुआ था, वैसा ही गुणहीन वह मर जाता है— कर्मों के हिसाब में कोई श्रेष्ठता नहीं जुड़ती। मनमुख जीव इसी प्रकार अपनी मूल राशि को भी गँवा बैठते हैं (पूर्व कर्मों के सुफल भी खो बैठते हैं) और प्रभु के दरबार में उन्हें सज़ा मिलती है ॥ ३ ॥ गुरु के उपदेश से विचार कर देखो कि संसार मिथ्या है, सत्यस्वरूप प्रभु ही निर्मल है। परमात्मा का ज्ञान प्राप्त करनेवाले कोई विरले जन ही होते हैं ॥ ४ ॥ यदि वह असह्य ज्ञानावस्था को वहन कर सके तो अमर आनन्द का एक प्रवाह चल पड़ता है। दास नानक तुमसे वैसी ही प्रीति रखता है, जैसे मछली जल से प्रेम करती है ॥ ५ ॥ १३ ॥

॥ प्रभाती महला १ ॥ गीत नाद हरख चतुराई । रहस रंग फुरमाइसि काई । पैन्हणु खाणा चीति न पाई । साचु सहजु सुखु नामि वसाई ॥ १ ॥ किआ जानां किआ करै करावै । नाम बिना तनि किछु न सुखावै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जोग बिनोद स्वाद आनंदा । मति सत भाइ भगति गोबिंदा । कीरति करम कार निज संदा । अंतरि रवतौ राज रवंदा ॥२॥ प्रिउ प्रिउ प्रीति प्रेमि उरधारी । दीनानाथु पीउ बनवारी । अनदिनु नामु दानु ब्रतकारी । त्रिपति तरंग ततु

बीचारी ॥ ३ ॥ अकथौ कथउ किआ मै जोरु । भगति करी कराइहि मोर । अंतरि वसै चूकै मै मोर । किसु सेवी दूजा नही होरु ॥ ४ ॥ गुर का सबदु महा रसु मीठा । ऐसा अंम्रितु अंतरि डीठा । जिनि चाखिआ पूरा पदु होइ । नानक ध्रापिओ तनि सुखु होइ ॥ ५ ॥ १४ ॥

संगीत, नाद, प्रसन्नता, चतुराई, आनन्द, रंग-रलियों, कुछ फ़रमाइशों, पहनने-खाने आदि में कोई सार नहीं; सच्ची सहजावस्था का परम सुख हरिनाम में ही उपलब्ध होता है ॥ १ ॥ मुझे नहीं मालूम, वह क्या करता-कराता है, हरिनाम के बिना कोई सुख नहीं है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सच्चे ज्ञान में सहज भाव की भक्ति निहित है, अतः योग के कौतुक, स्वाद, आनन्द आदि सब प्राप्त हो गए हैं। अब मैं सेवा-रत रहकर अपना व्यावसायिक कर्म करता हूँ, इससे सूर्य और चन्द्र का प्रकाशक परमात्मा हृदय में बस गया है ॥ २ ॥ अपने प्रिय की प्रीति मैंने हृदय में धारण की है। मेरा प्रिय वाहिगुरु दीनों का स्वामी है। मैं नित्य उसके नाम का व्रत धारण किए रहता हूँ और तत्त्व-विचार द्वारा अब विषयों की तरंगों से मुक्त होकर तृप्ति अनुभव करता हूँ ॥ ३ ॥ मेरा क्या सामर्थ्य है कि मैं अकथनीय हरि के गुणों का कथन कर सकूँ। भक्ति भी यदि वह करवाता है, तभी सम्भव है। मन में हरि के बस जाने से मैं-मेरी (अभिमान-भावना) समाप्त हो जाती है। अन्य कोई दूसरा इस योग्य नहीं कि मैं उसकी सेवा में संलग्न हो सकूँ ॥ ४ ॥ गुरु का उपदेश बड़ा मधुर और रसपूर्ण है। उपदेश द्वारा अन्तर् में ही हरिनामामृत दीख पड़ा है। जिसने उसे अमृत को चखा, वह पूर्णपद (मोक्ष) को पा गया। गुरु नानक कहते हैं, वह तृप्त हो गया और उसे परमसुख लाभ हुआ ॥ ५ ॥ १४ ॥

॥ प्रभाती महला १ ॥ अंतरि देखि सबदि मनु मानिआ अवरु न रांगनहारा । अहिनिसि जीआ देखि समाले तिस ही की सरकारा ॥ १ ॥ मेरा प्रभु रांगि घणौ अति रूड़ौ । दीन दइआलु प्रीतम मनमोहनु अति रस लाल सगूड़ौ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऊपरि कूपु गगन पनिहारी अंम्रितु पीवणहारा । जिस की रचना सो बिधि जाणै गुरमुखि गिआनु वीचारा ॥ २ ॥ पसरी किरणि रसि कमल बिगासे ससि घरि सूरु समाइआ । कालु बिधुंसि मनसा मनि मारी गुरप्रसादि प्रभु पाइआ ॥ ३ ॥ अति

रसि रंगि चलूलै राती दूजा रंगु न कोई। नानक रसनि रसाए राते रवि रहिआ प्रभु सोई ॥ ४ ॥ १५ ॥

गुरु के उपदेश से मन के भीतर ही हरि को देखकर यह विश्वास हो गया है कि प्रभु के अतिरिक्त मन को रंग (प्यार) देनेवाला अन्य कोई नहीं। वह रात-दिन जीवों की देख-भाल करता और उन्हें सम्हालता है, चतुर्दिक् उसी का शासन है ॥ १ ॥ मेरा प्रभु गूढ़ रंग वाला तथा सुन्दर है। वह दिनों पर दया करनेवाला मन-मोहन प्रियतम है, उसके प्यार का रंग अति गूढ़ा लाल है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऊपर गगन में उलटा कुआँ है (दशम द्वार), बुद्धि पनिहारिन है और मन उस कुएँ का अमृत पीनेवाला है। गुरु द्वारा यह ज्ञार अर्जित किया है कि परमात्मा ही सर्व-विधि का स्वामी है ॥ २ ॥ गुरु-ज्ञान रूपी किरण के प्रसार से हृदय रूपी कमल सरस होकर विकसित हो गया। चाँद में सूर्य समा गया अर्थात् मन में गुरु-ज्ञान का आलोक जगा है। काल को मारकर तृष्णा मन में ही शान्त होकर रह गई और गुरु-कृपा से परमात्मा को पा लिया ॥ ३ ॥ मैं प्यार के गूढ़े लाल रंग में रँग गई हूँ, उस पर अन्य कोई रस नहीं चढ़ सकता। गुरु नानक कहते हैं कि हम तो जिह्वा को रस-युक्त कर (हरिनाम से) रँग गए हैं और हमें हरि का साक्षात्कार हो गया है, वह कण-कण में व्याप्त है ॥ ४ ॥ १५ ॥

॥ प्रभाती महला १ ॥ बारह महि रावल खपि जावहि चहु छिअ महि संनिआसी। जोगी कापड़ीआ सिर खूथे बिनु सबदै गलि फासी ॥ १ ॥ सबदि रते पूरे बैरागी। अउहठि हसत महि भीखिआ जाची एक भाइ लिव लागी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ब्रहमण वादु पड़हि करि किरिआ करणी करम कराए। बिनु बूझे किछु सूझै नाही मनमुखु विछुड़ि दुखु पाए ॥ २ ॥ सबदि मिले से सूचाचारी साची दरगह माने। अनदिनु नामि रतनि लिव लागे जुगि जुगि साचि समाने ॥ ३ ॥ सगले करम धरम सुचि संजम जप तप तीरथ सबदि वसे। नानक सतिगुर मिलै मिलाइआ दूख पराछत काल नसे ॥ ४ ॥ १६ ॥

बारह वर्गों में योगी बटे हैं, दस वर्गों में संन्यासी खपते हैं। योगियों में कापड़िया वर्ग के हों या सिर-मुण्डे, हरिनाम के बिना सबके गले में फन्दा पड़ा है ॥ १ ॥ जो प्रभु के शब्द में रत हैं, वे ही पूर्ण वैरागी हैं। वे हृदय रूपी हाथ में ही (प्रभु से) भिक्षा माँगते हैं और केवल एक प्रभु में ही उनकी वृत्ति स्थिर रहती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ब्राह्मण लोग क्रिया-कर्म करते, आडम्बरपूर्ण पाठ करते और शास्त्रार्थ में खपते हैं, किन्तु गुरु

के ज्ञान के बिना उन्हें कोई सूझ नहीं पड़ती, वे मनमुख सदैव प्रभु से बिछुड़कर दुःख पाते हैं ॥ २ ॥ जो प्रभु के शब्द को ग्रहण करता हो, वह सत्याचरण करता है और प्रभु के दरबार में सम्मानित होता है। वे नित्य ही हरिनाम-रत्न में मन रमाते और सदैव हरिनाम में लीन रहते हैं ॥ ३ ॥ समस्त कर्म-धर्म सच, संयम, जप-तप, तीर्थ आदि गुरु के शब्द में आकर बस जाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु से हमारा मिलन हरिकृपा से ही होता है और काल के दुःख-पाप सब नष्ट हो जाते हैं ॥ ४ ॥ १६ ॥

॥ प्रभाती महला १ ॥ संता की रेणु साध जन संगति हरि कीरति तरु तारी। कहा करै बपुरा जमु डरपै गुरमुखि रिदै मुरारी ॥ १ ॥ जलि जाउ जीवनु नाम बिना। हरि जपि जापु जपउ जप माली गुरमुखि आवै सादु मना ॥१॥रहाउ॥ गुर उपदेस साचु सुखु जाकउ किआ तिसु उपमा कहीऐ। लाल जवेहर रतन पदारथ खोजत गुरमुखि लहीऐ ॥२॥ चीनै गिआनु धिआनु धनु साचौ एक सबदि लिव लावै। निरालंबु निरहारु निहकेवलु निरभउ ताड़ी लावै ॥ ३ ॥ साइर सपत भरे जल निरमलि उलटी नाव तरावै। बाहरि जातौ ठाकि रहावै गुरमुखि सहजि समावै ॥ ४ ॥ सो गिरही सो दासु उदासी जिनि गुरमुखि आपु पछानिआ। नानकु कहै अवरु नही दूजा साच सबदि मनु मानिआ ॥ ५ ॥ १७ ॥

सन्तों की चरण-धूलि लो, साधुजनों की संगति में हरि-यश गान करो, ऐसा करने से (संसार-सागर से) तिर जाओगे। बेचारा यमदूत भी ऐसे जीव का क्या करे, गुरुमुख जीव के मन में सदैव वाहिगुरु मौजूद रहता है ॥ १ ॥ हरिनाम के बिना जीवन जल जाने योग्य है। हरिनाम की माला फेरने से गुरु द्वारा मन में परमरस उपजता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु-उपदेशानुसार आचरण करने से ऐसा सच्चा सुख मिलता है कि उसकी कोई उपमा नहीं दी जा सकती। यह हरिनाम हीरे-जवाहरात के समान अतीव मूल्यवान है, जो केवल गुरु के द्वारा ही मिलता है ॥ २ ॥ जो ज्ञान द्वारा प्रभु को पहचानता, ध्यानावस्था रूपी धन संचित करता और हरि-शब्द में परमासक्ति रखता है। वह आलम्बन-हीन, निराहार, केवल हरि के निर्भय रूप में स्थिर होता है ॥ ३ ॥ उसके सातों सरोवर (पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ तथा मन और बुद्धि) निर्मल आचरण से भर जाते हैं और वह उलटी नाव चलाता है (आत्मा को माया से उलट कर)। अपने बाहर फलते हुए ध्यान को रोककर जीव गुरु के द्वारा सहजावस्था में समा जाता

है ॥ ४ ॥ वह गृहस्थ है, वही दास-भाव की उदासीनता और गुरु-कृपा से अपने को पहचानता है। गुरु नानक ने स्पष्ट कहा है कि अन्य कोई ऐसा सत्य नहीं, जो सच्चे हृदय में विश्वासपूर्वक धारण किया जा सके ॥ ५ ॥ १७ ॥

रागु प्रभाती महला ३ चउपदे

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ गुरमुखि विरला कोई बूझ सबदे रहिआ समाई। नामि रते सदा सुखु पावै साचि रहै लिव लाई ॥ १ ॥ हरि हरि नामु जपहु जन भाई। गुरप्रसादि मनु असथिरु होवै अनदिनु हरि रसि रहिआ अघाई॥१॥रहाउ॥ अनदिनु भगति करहु दिनु राती इसु जुग का लाहा भाई। सदा जन निरमल मैलु न लागै सचि नामि चितु लाई ॥ २ ॥ सुखु सीगारु सतिगुरू दिखाइआ नामि वडी वडिआई। अखुट भंडार भरे कदे तोटि न आवै सदा हरि सेवहु भाई ॥ ३ ॥ आपे करता जिस नो देवै तिसु वसै मनि आई। नानक नामु धिआइ सदा तू सतिगुरि दीआ दिखाई ॥ ४ ॥ १ ॥

कोई विरला जीव ही गुरु के मार्ग से यह आध्यात्मिक तथ्य समझता है कि हरि गुरु के शब्द में समा रहा होता है। जो जीव हरिनाम में रत हैं, वे सच्चा सुख पाते और सत्य में आचरण करते हैं ॥१॥ हे भक्त भाई, हरि-हरि-नाम जपो। गुरु की कृपा से मन स्थिर होता और हरि-रस से पूर्णतः तृप्त हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नित्य दिन-रात भक्ति करो, यही समय का सदुपयोग है। जो सेवक हरिनाम में चित्त लगाते हैं, वे सदैव निर्मल रहते हैं, उनमें किसी प्रकार की कोई मैल नहीं होती ॥ २ ॥ सतिगुरु ने हरिनाम रूपी सुखद श्रृंगार हमें दिया है, जिसका बड़ा महत्त्व है। हरिनाम का भण्डार अक्षय है, इसमें कभी कमी नहीं आती, अतः हरि-सेवा में संलग्न रहो ॥ ३ ॥ कर्ता जिसे चाहे, उसे भक्ति प्रदान करता है और स्वयं उसके मन में आकर बस जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि सदा हरिनाम का ध्यान करो, सतिगुरु ने उसे प्रकट किया है (उसे देखो और उसी में रम जाओ) ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ प्रभाती महला ३ ॥ निरगुणीआरे कउ बखसि लै सुआमी आपे लैहु मिलाई। तू बिअंतु तेरा अंतु न पाइआ सबदे देहु बुझाई ॥ १ ॥ हरि जीउ तुधु विटहु बलि जाई।

तनु मनु अरपी तुधु आगै राखउ सदा रहा सरणाई ॥१॥रहाउ॥ आपणे भाणे विचि सदा रखु सुआमी हरिनामो देहि वडिआई । पूरे गुर ते भाणा जापै अनदिनु सहजि समाई ॥ २ ॥ तेरै भाणै भगति जे तुधु भावै आपे बखसि मिलाई । तेरै भाणै सदा सुखु पाइआ गुरि त्रिसना अगनि बुझाई ॥ ३ ॥ जो तू करहि सु होवै करते अवरु न करणा जाई । नानक नावै जेवडु अवरु न दाता पूरे गुर ते पाई ॥ ४ ॥ २ ॥

हे प्रभु, मुझ गुणहीन जीव को क्षमा करके अपने संग मिला लो। तुम अनन्त हो, तुम्हारा भेद किसी ने नहीं पाया, गुरु के उपदेश द्वारा वह रहस्य हमें समझा दो ॥ १ ॥ हे हरि, तुम पर से हम क़ुर्बान जाते हैं। अपना तन-मन तुम्हारे सम्मुख अर्पित करके स्वयं तुम्हारी ही शरण में रहूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे मालिक, सदा अपनी इच्छानुसार हमें रखो और हरिनाम की बड़ाई प्रदान करो। तुम्हारी इच्छा का ज्ञान पूरे गुरु से प्राप्त होता है, तब जीव सदा सहजावस्था में स्थिर हो जाता है ॥ २ ॥ जीव तुम्हारी इच्छा से ही भक्ति कर सकता है और तुम चाहो तो अपने-आप उसे अपने में विलीन कर लेते हो। तुम्हारी ही इच्छा से जब गुरु ने तृष्णा-अग्नि बुझा दी, तो परमसुख प्राप्त किया ॥ ३ ॥ हे कर्तार, जो तुम करते हो, वही होता है, अन्य कोई नहीं कर सकता। गुरु नानक कहते हैं कि हरिनाम से बढ़कर कुछ भी नहीं और वह सच्चे गुरु से प्रकट होता है ॥ ४ ॥ २ ॥

॥ प्रभाती महला ३ ॥ गुरमुखि हरि सालाहिआ जिना तिन सलाहि हरि जाता । विचहु भरमु गइआ है दूजा गुर कै सबदि पछाता ॥ १ ॥ हरि जीउ तू मेरा इकु सोई । तुधु जपी तुधै सालाही गति मति तुझ ते होई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमुखि सालाहनि से सादु पाइनि मीठा अंम्रितु सारु । सदा मीठा कदे न फीका गुरसबदी वीचारु ॥ २ ॥ जिनि मीठा लाइआ सोई जाणै तिसु विटहु बलि जाई । सबदि सलाही सदा सुखदाता विचहु आपु गवाई ॥ ३ ॥ सतिगुरु मेरा सदा है दाता जो इछै सो फलु पाए ॥ नानक नामु मिलै वडिआई गुरसबदी सचु पाए ॥ ४ ॥ ३ ॥

जिन जीवों ने गुरु के द्वारा परमात्मा का यश गाया है, वे ही यशोगान का सलीक़ा जानते हैं। गुरु के उपदेश के कारण उनमें से द्वैत-भाव का भ्रम दूर हो चुका होता है ॥ १ ॥ हे परमात्मा, मेरे केवल

तुम्हीं एक हो। मैं तुम्हारा नाम जपता हूँ, तुम्हारा गुण गाता हूँ, मेरी सब गति-मति तुम पर ही आश्रित है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु के द्वारा जो प्रभु-गुणगान करते हैं, उन्हें हरिनामामृत का मधुर रस प्राप्त होता है। वह रस सदैव मधुर होता है, विचारपूर्वक जाँच कर देखो, उसमें कभी नीरसता नहीं आती ॥ २ ॥ जिन्हें वह रस मिला है, वे ही जानते हैं और उस पर से क़ुर्बान जाते हैं। गुरु के वचनानुसार अहम् का त्याग करके सदा सुखदाता प्रभु का गुणगान करो ॥ ३ ॥ मेरा सतिगुरु सदा देनेवाला है, इच्छानुसार उससे प्राप्त होता है। गुरु नानक कहते हैं कि हरिनाम से बड़ाई मिलती और गुरु के उपदेशानुसार आचरण करने से सत्य का ज्ञान होता है ॥ ४ ॥ ३ ॥

॥ प्रभाती महला ३ ॥ जो तेरी सरणाई हरि जीउ तिन तू राखन जोगु। तुधु जेवडु मै अवरु न सूझै ना को होआ न होगु ॥ १ ॥ हरि जीउ सदा तेरी सरणाई। जिउ भावै तिउ राखहु मेरे सुआमी एह तेरी वडिआई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो तेरी सरणाई हरि जीउ तिन की करहि प्रतिपाल। आपि क्रिपा करि राखहु हरि जीउ पोहि न सकै जमकालु ॥ २ ॥ तेरी सरणाई सची हरि जीउ ना ओह घटै न जाइ। जो हरि छोडि दूजै भाइ लागै ओहु जंमै तै मरि जाइ ॥ ३ ॥ जो तेरी सरणाई हरि जीउ तिना दूख भूख किछु नाहि। नानक नामु सलाहि सदा तू सचै सबदि समाहि ॥ ४ ॥ ४ ॥

हे हरि, जो तुम्हारी शरण में आते हैं, तुम उनकी रक्षा करने में समर्थ हो। तुमसे बड़ा मुझे कोई नहीं सूझता; न है, न होगा ॥ १ ॥ हे परमात्मा, मैं सदा तुम्हारी शरण में हूँ, जैसी तुम्हारी इच्छा हो, मुझे संरक्षण दो, इसी में तुम्हारी बड़ाई है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे हरि, जो तुम्हारी शरण में आते हैं, तुम उसका प्रतिपालन करते हो; हरि स्वयं कृपापूर्वक उसकी रक्षा करता है, स्वयं यमदूत भी उस तक नहीं पहुँच सकते ॥ २ ॥ हे प्रभु, तुम्हारी शरण ही सच्चा अवलम्ब है, जो न क्षय होता है, न मिटता है। जो परमात्मा को छोड़कर द्वैत-भाव में लीन होते हैं, वे जन्म-मरण के चक्र में पीड़ित होते हैं ॥ ३ ॥ हे दाता, जो तुम्हारी शरण लेते हैं, उन्हें किसी प्रकार का कोई दुःख या तृष्णा नहीं रह जाती। अतः गुरु नानक कहते हैं कि ऐ जीव, तुम सदा हरिनाम का यशोगान करो, ताकि तुम गुरु के सच्चे उपदेश द्वारा प्रभु में समा सको ॥ ४ ॥ ४ ॥

॥ प्रभाती महला ३ ॥ गुरमुखि हरि जीउ सदा धिआवहु

जब लगु जीअ परान। गुरसबदी मनु निरमलु होआ चूका मनि अभिमानु। सफलु जनमु तिसु प्रानी केरा हरि कै नामि समान ॥ १ ॥ मेरे मन गुर की सिख सुणीजै। हरि का नामु सदा सुखदाता सहजे हरि रसु पीजै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मूलु पछाणनि तिन निज घरि वासा सहजे ही सुखु होई। गुर कै सबदि कमलु परगासिआ हउमै दुरमति खोई। सभना महि एको सचु वरतै विरला बूझै कोई ॥२॥ गुरमती मनु निरमलु होआ अंम्रितु ततु वखानै। हरि का नामु सदा मनि वसिआ विचि मनही मनु मानै। सद बलिहारी गुर अपुने विटहु जितु आतम रामु पछानै ॥ ३ ॥ मानस जनमि सतिगुरू न सेविआ बिरथा जनमु गवाइआ। नदरि करे तां सतिगुरु मेले सहजे सहजि समाइआ। नानक नामु मिलै वडिआई पूरै भागि धिआइआ ॥ ४ ॥ ५ ॥

जब तक शरीर में प्राण हैं, तब तक गुरु-वचनानुसार हरि-स्मरण करते रहो। गुरु के उपदेश से मन निर्मल होता एवं अभिमान दूर होता है। उस प्राणी का जन्म सफल हो जाता है, जो हरिनाम में समाता है ॥ १ ॥ ऐ मेरे मन, गुरु की शिक्षा ग्रहण करो, हरि का नाम सुखदायी है, उसे पाकर सहजावस्था में हरि-रस का पान करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो प्राणी अपना मूल (अपने पैदा करनेवाले को) पहचानते हैं, वे ही प्रभु के दरबार तक पहुँचते और निष्प्रयत्न ही सुख लाभ करते हैं। गुरु के उपदेश से उनका हृदय-कमल विकसता है और उनकी मलिन बुद्धि धुल जाती है। सबमें ही वही एक सत्य व्याप्त है, हाँ कोई विरला जीव ही इस तथ्य को जान पाता है ॥ २ ॥ गुरु के उपदेश से निर्मल हुआ मन तत्त्व-रूप हरिनाम का उच्चारण करता है। हरि का नाम उसके मन में बस जाता है और वह मन ही मन उस पर विश्वास बना लेता है। मैं अपने गुरु पर सदा क़ुर्बान हूँ, जिसने भीतर के आत्माराम (प्रभु-तत्त्व) की पहचान हमें दी ॥ ३ ॥ यदि मनुष्य-योनि में आकर भी सतिगुरु की सेवा नहीं की, तो जन्म अकारथ रहा। उस प्रभु की कृपा हो तो वह सतिगुरु से मिला देता है और सहज में ही स्थिर-अवस्था को पा लेता है। गुरु नानक कहते हैं कि हरिनाम के कारण ही जीव को बड़ाई मिलती है, कोई भाग्यशाली जीव ही इसका आराधना कर पाता है ॥ ४ ॥ ५ ॥

॥ प्रभाती महला ३ ॥ आपे भांति बणाए बहुरंगी सिसटि उपाइ प्रभि खेलु कीआ। करि करि वेखै करे कराए सरब

जीआ नो रिजकु दीआ ॥ १ ॥ कलीकाल महि रविआ रामु । घटि घटि पूरि रहिआ प्रभु एको गुरमुखि परगटु हरि हरि नामु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुपता नामु वरतै विचि कलजुगि घटि घटि हरि भरपूरि रहिआ । नामु रतनु तिना हिरदै प्रगटिआ जो गुर सरणाई भजि पइआ ॥ २ ॥ इंद्री पंच पंचे वसि आणै खिमा संतोखु गुरमति पावै । सो धनु धनु हरिजनु वड पूरा जो भै बैरागि हरिगुण गावै ॥ ३ ॥ गुर ते मुहु फेरे जे कोई गुर का कहिआ न चिति धरै । करि आचार बहु संपउ संचै जो किछु करै सु नरकि परै ॥ ४ ॥ एको सबदु एको प्रभु वरतै सभ एकसु ते उतपति चलै । नानक गुरमुखि मेलि मिलाए गुरमुखि हरि हरि जाइ रलै ॥ ५ ॥ ६ ॥

परमात्मा ने खेल रचाया और अनेक प्रकार की सृष्टि बनाई। वह सबको बना-बनाकर उनकी देख-भाल भी करता है और सबको अन्न-भोजन भी देता है ॥ १ ॥ कलियुग में परमात्मा ही व्याप्त है (अर्थात् इस युग में यही मान्य है कि परमात्मा को हर जगह समाया हुआ जानो)। वह प्रभु घट-घट में विद्यमान है, गुरु के द्वारा हरिनाम-जाप द्वारा उसे प्रकट किया जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कलियुग में प्रभु का गुप्त नाम ही घट-घट में व्याप्त है । जो गुरु की शरण लेते हैं, उन्हीं के हृदय में हरिनाम रूपी रत्न प्रकट होता है ॥ २ ॥ गुरु के उपदेश से जीव पाँचों इन्द्रियों को वश में करता और क्षमा तथा सन्तोष के भावों को जगाता है । वह हरि-भक्त धन्य है, वह महान है, जो परमात्मा के भय एवं सांसारिक विरक्ति में रहकर परमात्मा का गुण गाता है ॥ ३ ॥ जो गुरु से विमुख होता तथा उसका वचन नहीं मानता; अनेक धर्माचार (कर्मकाण्ड) द्वारा धन संचित करता है, वह सीधे नरक में जाता है ॥ ४ ॥ संसार में एक परमात्मा है, उसी का हुकुम व्याप्त है और उसी एक से सब उत्पत्ति हुई है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु के द्वारा जब उस एक से मेल हो जाता है, तो गुरुमुख जीव उसी में लीन होते हैं ॥ ५ ॥ ६ ॥

॥ प्रभाती महला ३ ॥ मेरे मन गुरु अपणा सालाहि । पूरा भागु होवै मुखि मसतकि सदा हरि के गुण गाहि ॥१॥रहाउ॥ अंम्रित नामु भोजनु हरि देइ । कोटि मधे कोई विरला लेइ । जिस नो अपणी नदरि करेइ ॥ १ ॥ गुर के चरण मन माहि वसाइ । दुखु अन्हेरा अंदरहु जाइ । आपे साचा लए मिलाइ ॥ २ ॥ गुर की बाणी सिउ लाइ पिआरु । ऐथै ओथै

एहु अधारु । आपे देवै सिरजनहारु ॥ ३ ॥ सचा मनाए अपणा भाणा । सोई भगतु सुघड़ु सोजाणा । नानकु तिस कै सद कुरबाणा ॥ ४ ॥ ७ ॥ १७ ॥ ७ ॥ २४ ॥

हे मेरे मन, अपने सतिगुरु के गुण गाओ । जो तुम्हारे मुँह-माथे सौभाग्य होगा तो सदा परमात्मा के गुण विचारते रहोगे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परमात्मा ने नामामृत-भोजन दिया है, करोड़ों में कोई विरला ही (इस भोजन को) प्राप्त करता है । जिस पर उसकी अपनी कृपा-दृष्टि होती है (वही नाम-भोजन पाता है) ॥ १ ॥ गुरु के चरण मन में बसा लो, भीतर का सब दुःख और अन्धकार दूर हो जायगा और तब सत्यस्वरूप परमात्मा जीव को अपने संग मिला लेगा ॥ २ ॥ गुरु की वाणी से प्यार लगाओ, यही इहलोक और परलोक का सहारा है, (और यह सहारा) सृजनहार परमात्मा स्वेच्छा से देता है ॥ ३ ॥ सत्यस्वरूप परमात्मा सबको सदा अपनी इच्छा पर चलाता है । (जो उसकी इच्छानुसार आचरण करता है) वही सुयोग्य भक्त है, गुरु नानक उस पर क़ुर्बान जाते हैं ॥ ४ ॥ ७ ॥ १७ ॥ ७ ॥ २४ ॥

प्रभाती महला ४ बिभास

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ रसकि रसकि गुन गावह गुरमति लिव उनमनि नामि लगान । अंम्रितु रसु पीआ गुर सबदी हम नाम विटहु कुरबान ॥ १ ॥ हमरे जगजीवन हरि प्रान । हरि ऊतमु रिद अंतरि भाइओ गुरिमंतु दीओ हरि कान ॥१॥रहाउ॥ आवहु संत मिलहु मेरे भाई मिलि हरि हरि नामु वखान । कितु बिधि किउ पाईऐ प्रभु अपुना मोकउ करहु उपदेसु हरि दान ॥ २ ॥ सतसंगति महि हरि हरि वसिआ मिलि संगति हरि गुन जान । वडै भागि सतसंगति पाई गुरु सतिगुरु परसि भगवान ॥ ३ ॥ गुन गावह प्रभ अगम ठाकुर के गुन गाइ रहे हैरान । जन नानक कउ गुरि किरपा धारी हरि नामु दीओ खिन दान ॥ ४ ॥ १ ॥

गुरु के उपदेशों के परिणामस्वरूप जब वृत्ति सहजावस्था में स्थिर होकर हरिनाम में लगी होती है, तो जीव रस ले-लेकर प्रभु के गुण गाता है । गुरु के वचनानुसार नामामृत-रस का पान किया है, मैं इस नाम पर क़ुर्बान हूँ ॥ १ ॥ हे संसार के जीवन-दाता, जगत के प्राण; गुरु ने जब

कान में उपदेश दिया तो हृदय में उत्तम हरि अच्छा लगने लगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे सन्तो, मेरे भाइयो, आओ मिलकर हरिनाम की चर्चा करें। मुझे वह उपदेश दो कि किस प्रकार मैं हरि को प्राप्त कर सकता हूँ ॥ २ ॥ परमात्मा सत्संगति में बसा है, सत्संगति में बैठकर तुम भी हरि के गुण जान लो। सतिगुरु को मिलकर बड़े भाग्य से ही सत्संगति प्राप्त होती है ॥ ३ ॥ अगम स्वामी के गुण गा-गाकर हमारी उत्सुकता नित्य बढ़ती रहती है। दास नानक ने गुरु-कृपा द्वारा ही हरिनाम का दान प्राप्त किया है ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ प्रभाती महला ४ ॥ उगवै सूरु गुरमुखि हरि बोलहि सभ रैनि सम्हालहि हरि गाल। हमरै प्रभि हम लोच लगाई हम करह प्रभू हरि भाल ॥ १ ॥ मेरा मनु साधू धूरि रवाल। हरि हरि नामु द्रिड़ाइओ गुरि मीठा गुर पग झारह हम बाल ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साकत कउ दिनु रैनि अंधारी मोहि फाथे माइआ जाल। खिनु पलु हरि प्रभु रिदै न वसिओ रिनि बाधे बहु बिधि बाल ॥ २ ॥ सतसंगति मिलि मति बुधि पाई हउ छूटे ममता जाल। हरिनामा हरि मीठ लगाना गुरि कीए सबदि निहाल ॥ ३ ॥ हम बारिक गुर अगम गुसाई गुर करि किरपा प्रतिपाल। बिखु भउजल डुबदे काढि लेहु प्रभ गुर नानक बाल गुपाल ॥ ४ ॥ २ ॥

गुरुमुख जन रात-भर हरि की चर्चा करते हैं और सूर्योदय पर पुनः हरिनाम-स्मरण ही करते हैं। हमें भी प्रभु ने ऐसी उत्सुकता दी है कि हम नित्य उसी की खोज करते हैं ॥ १ ॥ मेरा मन साधुजन की चरण-धूलि माँगता है। मेरे गुरु ने मुझे परमात्मा का मधुर नाम-रसामृत पान करवाया है, मैं अपने बालों से उसके पैर साफ़ करता हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मायावी जीव रात-दिन मोह के अन्धकार एवं माया के जाल में फँसा रहता है। उनके हृदय में क्षण-भर के लिए भी प्रभु का रूप नहीं उभर सकता, उनका तो बाल-बाल ऋण में जकड़ा (मोह-बन्धनों में) होता है ॥ २ ॥ सत्संगति में मिलकर हमें सूझ मिलती है और मिथ्या मोह-ममता से हमारा छुटकारा होता है। गुरु के उपदेशों से निहाल होकर हमें हरिनाम मीठा लगने लगा है ॥ ३ ॥ हम बालक-समान अबोध हैं, गुरु अगम प्रतिपालक है, वह हमारा स्वामी कृपा-पूर्वक हमारा संरक्षण करता है। हे गोपाल (सृष्टि के पालक), हम तुम्हारे बच्चे हैं; गुरु नानक कहते हैं कि हम विषैले भवसागर में डूबते हुओं को निकाल लो ॥ ४ ॥ २ ॥

॥ प्रभाती महला ४ ॥ इकु खिनु हरि प्रभि किरपा धारी गुन गाए रसक रसीक। गावत सुनत दोऊ भए मुकते जिना गुरमुखि खिनु हरि पीक ॥ १ ॥ मेरै मनि हरि हरि राम नामु रसु टीक। गुरमुखि नामु सीतल जलु पाइआ हरि हरि नामु पीआ रसु झीक ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिन हरि हिरदै प्रीति लगानी तिना मसतकि ऊजल टीक। हरिजन सोभा सभ जग ऊपरि जिउ विचि उडवा ससि कीक ॥ २ ॥ जिन हरि हिरदै नामु न वसिओ तिन सभि कारज फीक। जैसे सीगारु करै देह मानुख नाम बिना नकटे नक कीक ॥ ३ ॥ घटि घटि रमईआ रमत रामराइ सभ वरतै सभ महि ईक। जन नानक कउ हरि किरपा धारी गुर बचन धिआइओ घरी मीक ॥ ४ ॥ ३ ॥

एक क्षण के लिए भी परमात्मा की कृपा हो तो जीव रस-मग्न होकर प्रभु के गुण गा ले। यदि वे क्षण-भर भी गुरु के द्वारा नाम-रसामृत का पान कर लें, तो हरिगुण गाने और सुननेवाले, दोनों मुक्त हो जाते हैं ॥ १ ॥ ऐ मेरे मन, तुम हरिनाम-रस में स्थिर हो जाओ। गुरु के द्वारा हरिनाम रूपी शीतल जल प्राप्त हुआ है, उसे अंजुलि भर-भरकर पिओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिन्होंने हृदय में प्रभु से प्रीति लगाई है, उनके माथे पर उज्ज्वल टीका लगता है (अर्थात् वे महत्त्व अर्जित कर लेते हैं)। समस्त संसार में हरि-भक्त इस प्रकार सुशोभित होता है, जैसे सितारों में चन्द्र शोभा देता है ॥ २ ॥ जिनके हृदय में हरि का नाम नहीं बसता, उनके सब कार्य नीरस होते हैं; जैसे शृंगार करके भी नकटा (कटी नाक वाला) नाक-विहीन ही रहता है ॥ ३ ॥ घट-घट में व्याप्त रहनेवाला परमात्मा सबमें एक होकर वर्तित है। दास नानक कहते हैं कि हरि-कृपा पाकर गुरु-उपदेशानुसार एक-एक घड़ी परमात्मा का ध्यान करो ॥ ४ ॥ ३ ॥

॥ प्रभाती महला ४ ॥ अगम दइआल क्रिपा प्रभि धारी मुखि हरि हरि नामु हम कहे। पतित पावन हरिनामु धिआइओ सभि किलबिख पाप लहे ॥ १ ॥ जपि मन राम नामु रवि रहे। दीन दइआलु दुख भंजनु गाइओ गुरमति नामु पदारथु लहे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काइआ नगरि नगरि हरि बसिओ मति गुरमति हरि हरि सहे। सरीरि सरोवरि नामु हरि प्रगटिओ घरि मंदरि हरि प्रभु लहे ॥ २ ॥ जो नर भरमि भरमि उदिआने ते साकत मूड़ मुहे। जिउ म्रिग नाभि बसै बासु

बसना भ्रमि भ्रमिओ झार गहे ॥ ३ ॥ तुम वड अगम अगाधि बोधि प्रभ मति देवहु हरि प्रभ लहे । जन नानक कउ गुरि हाथु सिरि धरिओ हरि राम नामि रवि रहे ॥ ४ ॥ ४ ॥

अगम अगोचर दयालु प्रभु की कृपा हुई तो हमने मुख से हरिनाम का उच्चारण किया। पतितों को पावन कर देनेवाले हरिनाम की आराधना से सब पाप धुल गये ॥ १ ॥ ऐ मन, सर्व-व्यापक हरि के नाम का जाप करो। दीनों पर दया करने एवं दुःखों को दूर करनेवाले के नाम की आराधना करो और गुरु के उपदेशानुसार हरिनाम-सरीखी अमूल्य वस्तु प्राप्त करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ शरीर रूपी नगरी में परमात्मा निवास करता है, गुरु के उपदेश द्वारा वह प्रकट हो जाता है। शरीर रूपी सरोवर में ही हरि प्रकट है, घर में ही प्रभु के दर्शन हो जाते हैं (यदि गुरु का उपदेश मिल जाय) ॥२॥ जो प्राणी भ्रम के जंगल में भटकते हैं, वे मूढ़-गँवार माया द्वारा लुट जाते हैं। (उनकी स्थिति ऐसी होती है) जैसे मृग के भीतर सुगन्धि (कस्तूरी) का नाफ़ा होता है, किन्तु वह बाहर झाड़ियों-पेड़ों में खोजता फिरता है ॥ ३ ॥ तुम बड़े गहरे ज्ञान से उपलब्ध हो, इसलिए ऐसा बोध दो कि हम परमात्मा को खोज लें। दास नानक के सिर पर जबसे गुरु ने हाथ धरा है (अर्थात् जबसे गुरु-कृपा हुई है), तबसे चतुर्दिक् हरि रमण करते दीख पड़ते हैं ॥ ४ ॥ ४ ॥

॥ प्रभाती महला ४ ॥ मनि लागी प्रीति राम नाम हरि हरि जपिओ हरि प्रभु वडफा । सतिगुर बचन सुखाने हीअरै हरि धारी हरि प्रभ क्रिपफा ॥ १ ॥ मेरे मन भजु राम नाम हरि निमखफा । हरि हरि दानु दीओ गुरि पूरै हरिनामा मनि तनि बसफा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काइआ नगरि वसिओ घरि मंदरि जपि सोभा गुरमुखि करपफा । हलति पलति जन भए सुहेले मुख ऊजल गुरमुखि तरफा ॥ २ ॥ अनभउ हरि हरि हरि लिव लागी हरि उरधारिओ गुरि निमखफा । कोटि कोटि के दोख सभ जन के हरि दूरि कीए इक पलफा ॥ ३ ॥ तुमरे जन तुम ही ते जाने प्रभ जानिओ जन ते मुखफा । हरि हरि आपु धरिओ हरिजन महि जन नानकु हरि प्रभु इकफा ॥४॥५॥

मन में हरि की प्रीति लगी है, हरि का नाम जपो, वही बड़ा स्वामी है। सतिगुरु के सुखद वचनों से प्रभु-कृपा प्राप्त कर परमात्मा को हृदय में धारण करो ॥ १ ॥ ऐ मेरे मन, निमिष के लिए भी हरिनाम का भजन करो। गुरु ने हरिनाम का दान दिया है, हरिनाम तन-मन में बस

गया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काया रूपी नगरी में परमात्मा घर करता है और गुरु के द्वारा उसकी शोभा की जानकारी मिलती है। गुरुमुख जन इहलोक और परलोक में सुखी होते एवं उजले मुख होकर परमगति को प्राप्त होते हैं ॥ २ ॥ निर्भय हरि से प्रेम हुआ है और निमिष-भर के लिए गुरु की टेक लेकर परमात्मा को हृदय में धारण किया है। परमात्मा ने अपने सेवकों के करोड़ों दोष पल-भर में दूर किए हैं ॥ ३ ॥ हे प्रभु, तुम्हारे भक्तजन तुम्हारी भक्ति से ही प्रकट हुए हैं और तुम्हारी महिमा भक्तों के कारण ही है। गुरु नानक कहते हैं कि हरि ने अपने भक्तों में अपना ही रूप ढाला है, भक्त और भगवान् एक-रूप हो गए हैं ॥४॥५॥

॥ प्रभाती महला ४ ॥ गुर सतिगुरि नामु द्रिड़ाइओ हरि हरि हम मुए जीवे हरि जपिआ। धनु धंनु गुरू गुरु सतिगुरु पूरा बिखु डुबदे बाह देइ कढिआ ॥ १ ॥ जपि मन राम नामु अरधांभा। उपजंपि उपाइ न पाईऐ कतहू गुरि पूरै हरि प्रभु लाभा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ राम नामु रसु राम रसाइणु रसु पीआ गुरमति रसभा। लोह मनूर कंचनु मिलि संगति हरि उरधारिओ गुरि हरिभा ॥ २ ॥ हउमै बिखिआ नित लोभि लुभाने पुत कलत मोहि लुभिआ। तिन पग संत न सेवे कबहू ते मनमुख भूंभर भरभा ॥ ३ ॥ तुमरे गुन तुमही प्रभ जानहु हम परे हारि तुम सरनभा। जिउ जानहु तिउ राखहु सुआमी जन नानकु दासु तुमनभा ॥ ४ ॥ ६ ॥ छका १

सतिगुरु हरिनाम को दृढ़ करते हैं। हरिनाम-जाप से तो मृतक भी जाग्रत् हो जाता है। मेरा पूरा सतिगुरु धन्य है, जिसने विष (विषय-तृष्णा) के अपार सागर में से बाँह पकड़कर मुझे निकाल लिया ॥ १ ॥ ऐ मन, आराध्य हरि का नाम जपो। नित्य नवीन उपायों से भी वह प्रभु नहीं मिलता, केवल पूर्णगुरु द्वारा ही उसकी खोज सम्भव है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु-वचनों के रस में विभोर होकर राम-नाम का रसायन पीना है। लोहा, सोना और व्यर्थ का लोहा (मनूर) आदि मिलकर भी यदि सत्संगति को पा सकें, तो गुरु-कृपा से प्रभु के ज्योतिस्वरूप को हृदय में धारण करेंगे (अर्थात् निकृष्ट वस्तु भी सत्संगति में श्रेष्ठ हो जाती है) ॥२॥ अहंभाव के तृष्णायुत विषय-विकारों में लोभान्वित हुआ व्यक्ति पुत्र-स्त्री के बीच मोह में बना रहता है। उसने कभी सन्त-चरणों का सेवन नहीं किया होता, वह सन्त-चरणों की धूलि का इच्छुक होता है ॥ ३ ॥ हे परमात्मा, तुम स्वयं अपने गुणों को पहचानते हो, हमने तो हारकर

तुम्हारी शरण ली है। जैसे तुम्हें स्वीकार हो, वैसे रखो, दास नानक तो तुम्हारा सेवक है ॥ ४ ॥ ६ ॥ छका १

प्रभाती बिभास पड़ताल महला ४

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ जपि मन हरि हरि नामु निधान। हरि दरगह पावहि मान। जिनि जपिआ ते पारि परान ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सुनि मन हरि हरि नामु करि धिआनु। सुनि मन हरि कीरति अठसठि मजानु। सुनि मन गुरमुखि पावहि मानु ॥ १ ॥ जपि मन परमेसुरु परधानु। खिनु खोवै पाप कोटान। मिलु नानक हरि भगवान ॥ २ ॥ १ ॥ ७ ॥

ऐ मन, सुखदाता हरिनाम का भजन करो। इससे परमात्मा के दरबार में प्रतिष्ठा बनती है। जिन्होंने उसका नाम जपा है, वे पार हो गए हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऐ मन सुनो, हरिनाम का ध्यान करो। ऐ मन, सुनो, हरि के गुणगान में अठसठ तीर्थों का स्नान निहित है। गुरु के द्वारा प्रभु का नाम जपने से प्रतिष्ठा मिलती है ॥ १ ॥ ऐ मन, सबके परमस्वामी का जाप करो, वह क्षण में ही करोड़ों पापों का नाश कर देता है; गुरु नानक कहते हैं, तब जीव प्रभु से मिल जाता है ॥ २ ॥ १ ॥ ७ ॥

प्रभाती महला ५ बिभास

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ मनु हरि कीआ तनु सभु साजिआ। पंच तत रचि जोति निवाजिआ। सिहजा धरति बरतन कउ पानी। निमख न विसारहु सेवहु सारिगपानी ॥ १ ॥ मन सतिगुरु सेवि होइ परमगते। हरख सोग ते रहहि निरारा तां तू पावहि प्रानपते ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कापड़ भोग रस अनिक भुंचाए। मात पिता कुटंब सगल बनाए। रिजकु समाहे जलि थलि मीत। सो हरि सेवहु नीता नीत ॥ २ ॥ तहा सखाई जह कोइ न होवै। कोटि अप्राध इक खिन महि धोवै। दाति करै नही पछुोतावै। एका बखस फिरि बहुरि न बुलावै ॥ ३ ॥ किरत संजोगी पाइआ भालि। साध संगति महि बसे गुपाल। गुर मिलि आए तुमरै दुआर। जन नानक दरसनु देहु मुरारि ॥ ४ ॥ १ ॥

परमात्मा ने यह तन-मन सब रचा है। पाँच तत्त्वों (जल, वायु, अग्नि, पृथ्वी, आकाश) को आधार बनाकर उसमें आत्मिक ज्योति स्थापित की है। धरती को सेज बनाया है, प्रयोग के लिए पानी दिया है। उस सारंगपाणि (सृष्टि के संरक्षक, प्रभु) को क्षण-भर के लिए भी न विस्मृत करो, अनवरत उसकी सेवा में तल्लीन रहो ॥ १ ॥ ऐ मन, सतिगुरु की सेवा में परमगति मिलती है, हर्ष-शोक से अतीत रहकर ही तुम्हें प्राण-पति परमात्मा की प्राप्ति हो सकती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वह परमात्मा अनेक प्रकार की सुन्दर पोशाकें, भोग सामग्रियाँ एवं रस हमें देता है, हमारे लिए माता-पिता, कुटुम्ब बनाता है, पोषण करता है और जल-थल में हमारा मित्र है। ऐसे हरि की नित्य-नित्य सेवा करो (आराधना करो) ॥ २ ॥ जहाँ कोई नहीं होता, वहाँ भी वह सहायक होता है। वह क्षण-भर में ही हमारे करोड़ों अपराध धो डालता है। वह देकर कभी पछताता नहीं। एक ही बार सब कुछ प्रदान कर देता है, बार-बार ले जाने को नहीं बुलाता ॥ ३ ॥ उसे शुभ प्रारब्ध से ही पाया गया है, वह धरती का पालक साधु-संगति में बसता है। गुरु से मिलकर ही तुम्हारे (प्रभु के) द्वार तक आ गए हैं। ऐ परमेश्वर, दास नानक को दर्शन दो ॥४॥१॥

॥ प्रभाती महला ५ ॥ प्रभ की सेवा जन की सोभा । काम क्रोध मिटे तिसु लोभा । नामु तेरा जन कै भंडारि । गुन गावहि प्रभ दरस पिआरि ॥ १ ॥ तुमरी भगति प्रभ तुमहि जनाई । काटि जेवरी जन लीए छडाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो जनु राता प्रभ कै रंगि । तिन सुखु पाइआ प्रभ कै संगि । जिसु रसु आइआ सोई जानै । पेखि पेखि मन महि हैरानै ॥२॥ सो सुखीआ सभ ते ऊतमु सोइ । जा कै हिर्दै वसिआ प्रभु सोइ । सोई निहचलु आवै न जाइ । अनदिनु प्रभ के हरि गुण गाइ ॥ ३ ॥ ता कउ करहु सगल नमसकारु । जा कै मनि पूरनु निरंकारु । करि किरपा मोहि ठाकुर देवा । नानकु उधरै जन की सेवा ॥ ४ ॥ २ ॥

स्वामी की एकाग्रचित्त सेवा ही सेवक की शोभा होती है। (सेवक के) काम, क्रोध, लोभ आदि सब मिट जाते हैं। हे प्रभु, तुम्हारा नाम ही सेवक की पूँजी है। (तुम्हारे सेवक) तुम्हारे दर्शनों के प्यार में ही तुम्हारे गुण गाते हैं ॥ १ ॥ हे स्वामी, तुम्हीं ने अपनी भक्ति का मार्ग बताया है और अपने सेवकों के बंधन काटकर उन्हें मुक्त कर लिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो व्यक्ति प्रभु के रंग में लाल हुआ है, वह प्रभु की संगति में परमसुख को पा लेता है। जिसे (परम) रस मिलता है, वही

जानता है। (वह भी) इस आश्चर्यजनक तथ्य को देख-देखकर मन में हैरान होता है ॥ २ ॥ जिसके हृदय में परमात्मा निवास करता है, वही सुखी है, वही सबसे श्रेष्ठ है। जो रात-दिन नित्य प्रभु के गुण गाता है, वह निश्चल होता है— उसका आवागमन चुक जाता है ॥ ३ ॥ सब उसे नमन करो, जिसके हृदय में मायातीत ब्रह्म का रूप विद्यमान है। गुरु नानक कहते हैं कि ऐ स्वामी, मुझ पर कृपा करो, सेवा में रत अपने दास का उद्धार कर दो ॥ ४ ॥ २ ॥

॥ प्रभाती महला ५ ॥ गुन गावत मनि होइ अनंद। आठ पहर सिमरउ भगवंत। जा कै सिमरनि कलमल जाहि। तिसु गुर की हम चरनी पाहि ॥ १ ॥ सुमति देवहु संत पिआरे। सिमरउ नामु मोहि निसतारे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिनि गुरि कहिआ मारगु सीधा। सगल तिआगि नामि हरि गीधा। तिसु गुर कै सदा बलि जाईऐ। हरि सिमरनु जिसु गुर ते पाईऐ ॥ २ ॥ बूडत प्रानी जिनि गुरहि तराइआ। जिसु प्रसादि मोहै नही माइआ। हलतु पलतु जिनि गुरहि सवारिआ। तिसु गुर ऊपरि सदा हउ वारिआ ॥ ३ ॥ महा मुगध ते कीआ गिआनी। गुर पूरे की अकथ कहानी। पारब्रहम नानक गुरदेव। वडै भागि पाईऐ हरि सेव ॥ ४ ॥ ३ ॥

प्रभु के गुण गाने से मन में आनन्द उपजता है, अतः आठों पहर प्रभु का स्मरण करो। जिसके स्मरण से सब पाप धुल जाते हैं, हम उस गुरु की चरण-शरण में हैं ॥ १ ॥ ऐ प्यारे सन्तजनो, मुझे सुमति दो, ताकि मैं हरिनाम-स्मरण करूँ, जो मुझे संसार से मुक्त कर सके ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस गुरु ने सीधा राह बताया है और अन्य सब कुछ छुड़वाकर हरिनाम में लीन किया है, उस गुरु पर हम सदा क़ुर्बान हैं, जिससे हमें हरि-स्मरण प्राप्त होता है ॥ २ ॥ डूबते हुए प्राणियों को जिस गुरु ने पार लगा दिया, जिसकी कृपा से हम मोह-माया से बचे रहते हैं, जिस गुरु ने हमारा यह लोक और परलोक, दोनों सँवार दिए हैं, उस गुरु के ऊपर मैं सदा बलिहार हूँ ॥ ३ ॥ जिस गुरु ने मुझे मूर्ख से ज्ञानी बना दिया, उस गुरु की कथा अकथनीय है। गुरु नानक कहते हैं कि परब्रह्म ही हमारा सच्चा गुरु है जिसे हरि-सेवा द्वारा ही पाया जाता है ॥ ४ ॥ ३ ॥

॥ प्रभाती महला ५ ॥ सगले दूख मिटे सुख दीए अपना नामु जपाइआ। करि किरपा अपनी सेवा लाए सगला दुरतु मिटाइआ ॥ १ ॥ हम बारिक सरनि प्रभ दइआल। अवगण

काटि कीए प्रभि अपुने राखि लीए मेरै गुर गोपालि ॥१॥रहाउ॥ ताप पाप बिनसे खिन भीतरि भए क्रिपाल गुसाई। सास सास पारब्रहमु अराधी अपुने सतिगुर कै बलि जाई ॥ २ ॥ अगम अगोचरु बिअंतु सुआमी ताका अंतु न पाईऐ। लाहा खाटि होईऐ धनवंता अपुना प्रभू धिआईऐ ॥ ३ ॥ आठ पहर पारब्रहमु धिआई सदा सदा गुन गाइआ। कहु नानक मेरे पूरे मनोरथ पारब्रहमु गुरु पाइआ ॥ ४ ॥ ४ ॥

सब दुखों को मिटाकर उसने सुख दिए हैं और अपना नाम जपाया है। हम पर कृपा करके ही प्रभु ने हमारे दोष दूर किए एवं अपनी सेवा में अपनाया है ॥ १ ॥ हम बालक हैं, दयालु प्रभु की शरण में हैं, उसने हमारे अवगुण दूर करके अपनाया तथा गुरु ने हमें बचा लिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ स्वामी के कृपालु होते ही क्षण भर में ही सब पाप-ताप शमित हो गए, मैं अब श्वास-श्वास परब्रह्म की आराधना करता हूँ (और परब्रह्म से परिचित करवानेवाले) गुरु पर क़ुर्बान जाता हूँ ॥२॥ मेरा स्वामी अगम, अगोचर, अनन्त है, उसका कोई भेद नहीं जानता। अपने प्रभु का ध्यान करते हुए मैं हरिनाम की उपलब्धि से सम्पन्न हो रहा हूँ ॥ ३ ॥ आठों पहर परमात्मा का नाम जपने से सदा सुख प्राप्त होता है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु-कृपा से परब्रह्म को पाकर सब मनोरथ पूर्ण हो गए हैं ॥ ४ ॥ ४ ॥

॥ प्रभाती महला ५ ॥ सिमरत नामु किलबिख सभि नासे। सचु नामु गुरि दीनी रासे। प्रभ की दरगह सोभावंते। सेवक सेवि सदा सोहंते ॥ १ ॥ हरि हरि नामु जपहु मेरे भाई। सगले रोग दोख सभि बिनसहि अगिआनु अंधेरा मन ते जाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जनम मरन गुरि राखे मीत। हरि के नाम सिउ लागी प्रीति। कोटि जनम के गए कलेस। जो तिसु भावै सो भल होस ॥ २ ॥ तिसु गुर कउ हउ सद बलि जाई। जिसु प्रसादि हरि नामु धिआई। ऐसा गुरु पाईऐ वडभागी। जिसु मिलते राम लिव लागी ॥ ३ ॥ करि किरपा पारब्रहम सुआमी। सगल घटा के अंतरजामी। आठ पहर अपुनी लिव लाइ। जनु नानकु प्रभ की सरनाइ ॥ ४ ॥ ५ ॥

हरिनाम-स्मरण से सब पाप नष्ट होते हैं, यह सच्चे नाम की पूँजी गुरु ने दी है। (नाम जपनेवाले) सदैव प्रभु के दरबार में शोभा पाते

हैं। सेवा-रत सेवक सुशोभित होते हैं ॥ १ ॥ ऐ मेरे भाइयो, हरि-नाम जपो। इससे सब रोग, दोष मिट जाते हैं और मन के अज्ञान का अँधेरा दूर हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु की मैत्री ने हमें जन्म-मरण से बचा लिया है, और हरिनाम से हमारी प्रीति लग गई है। करोड़ों जन्मों के दुःख दूर हुए हैं; जो उसे स्वीकार है, वह भला ही होगा ॥ २ ॥ उस गुरु पर मैं सदा बलिहार हूँ, जिसकी कृपा से हरिनाम की आराधना सम्भव होती है। ऐसा गुरु बड़े भाग्य से मिलता है, जिसके मिलने से परमात्मा में ध्यान लग जाता है ॥ ३ ॥ हे परब्रह्म स्वामी, हम पर कृपा करो, तुम तो सबके भीतर की जाननेवाले हो; आठों पहर अपनी प्रीति प्रदान करो। दास नानक, हे प्रभु, तुम्हारी शरण में है ॥ ४ ॥ ५ ॥

॥ प्रभाती महला ५ ॥ करि किरपा अपुने प्रभि कीए। हरि का नामु जपन कउ दीए। आठ पहर गुन गाइ गुबिंद। भै बिनसे उतरी सभ चिंद ॥ १ ॥ उबरे सतिगुर चरनी लागि। जो गुरु कहै सोई भल मीठा मन की मति तिआगि ॥१॥रहाउ॥ मनि तनि वसिआ हरि प्रभु सोई। कलि कलेस किछु बिघनु न होई। सदा सदा प्रभु जीअ कै संगि। उतरी मैलु नाम कै रंगि ॥ २ ॥ चरन कमल सिउ लागो पिआरु। बिनसे काम क्रोध अहंकार। प्रभ मिलन का मारगु जानां। भाइ भगति हरि सिउ मनु मानां ॥ ३ ॥ सुणि सजण संत मीत सुहेले। नामु रतनु हरि अगह अतोले। सदा सदा प्रभु गुण निधि गाईऐ। कहु नानक वडभागी पाईऐ ॥ ४ ॥ ६ ॥

प्रभु ने कृपा-पूर्वक हमें अपना लिया है और हमें जपने के लिए हरिनाम दिया है। आठों पहर गोविंद का गुण गाने से हमारे भय दूर हुए और चिन्ताएँ शमित हुई हैं ॥ १ ॥ सतिगुरु के चरणों में लगकर हमारा उद्धार हुआ है। जो गुरु कहते हैं, मुझे वही मीठा कल्याणकारी है। मन की मति (स्वेच्छाचारिता) को मैंने त्याग दिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरा प्रभु तन-मन में बसा है (उसके कारण) कलियुग में भी कोई क्लेश या विघ्न नहीं रह जाता। परमात्मा सदा जीवों के अंग-संग रहता है और हरिनाम से सबकी मैल उतर जाती है ॥२॥ प्रभु के चरण-कमलों से प्यार हो जाने से काम, क्रोध, अहंकारादि नष्ट हो गए हैं। मुझे प्रभु-मिलन के मार्ग का ज्ञान हुआ है और हरि में भाव-भक्ति की तल्लीनता प्राप्त हुई है ॥ ३ ॥ ऐ मेरे सज्जन एवं सुखी मित्र सुनो, हरिनाम-रत्न अनुपम और अद्वितीय है। गुरु नानक कहते हैं कि भाग्यशाली लोगों को ही सदा गुण-निधान परमात्मा का ध्यान करने से वह प्राप्त होता है ॥ ४ ॥ ६ ॥

॥ प्रभाती महला ५ ॥ से धनवंत सेई सचु साहा । हरि की दरगह नामु विसाहा ॥ १ ॥ हरि हरि नामु जपहु मन मीत । गुरु पूरा पाईऐ वडभागी निरमल पूरन रीति ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पाइआ लाभु वजी वाधाई । संत प्रसादि हरि के गुन गाई ॥ २ ॥ सफल जनमु जीवन परवाणु । गुर परसादी हरि रंगु माणु ॥ ३ ॥ बिनसे काम क्रोध अहंकार । नानक गुरमुखि उतरहि पारि ॥ ४ ॥ ७ ॥

वे ही जीव धनवान और सच्चे अर्थों में शाह हैं, जिन्होंने हरि के व्यापार-स्थल से उसका नाम ख़रीद लिया है ॥ १ ॥ ऐ मेरे मित्र मन, हरि का नाम जपो, भाग्य से पूर्णगुरु मिला है, अब समस्त पहलुओं को निर्मल बना देगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सन्तों की कृपा से जब जीव हरि-गुण गाता है, तो खूब लाभ प्राप्त होता और बधाइयाँ बजती हैं ॥ २ ॥ गुरु की कृपा से हरि के प्यार में रँगकर जन्म सफल होता है और जीव प्रभु-दरबार में स्वीकृति प्राप्त करता है ॥ ३ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि जीव के काम, क्रोध, अहंकार मिट जाते हैं और वह गुरु के सहयोग से पार उतर जाता है ॥ ४ ॥ ७ ॥

॥ प्रभाती महला ५ ॥ गुरु पूरा पूरी ताकी कला । गुर का सबदु सदा सद अटला । गुर की बाणी जिसु मनि वसै । दूखु दरदु सभु ताका नसै ॥ १ ॥ हरि रंगि राता मनु राम गुन गावै । मुकतो साधू धूरी नावै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुर परसादी उतरे पारि । भउ भरमु बिनसे बिकार । मन तन अंतरि बसे गुर चरना । निरभै साध परे हरि सरना ॥ २ ॥ अनद सहज रस सूख घनेरे । दुसमनु दूखु न आवै नेरे । गुरि पूरै अपुने करि राखे । हरि नामु जपत किलबिख सभि लाथे ॥ ३ ॥ संत साजन सिख भए सुहेले । गुरि पूरै प्रभ सिउ लै मेले । जनम मरन दुख फाहा काटिआ । कहु नानक गुरि पड़दा ढाकिआ ॥ ४ ॥ ८ ॥

पूर्णगुरु की शक्ति भी पूर्ण होती है, गुरु का वचन सदैव अटल होता है । जिसके मन में गुरु की वाणी बस जाती है, उसका सब दुःख-दर्द दूर हो जाता है ॥१॥ मन हरि के प्यार में प्रभु के गुण गाता है । साधुओं की चरण-धूलि में स्नान करनेवाले जीव सदैव मुक्त हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु की कृपा से जीव का भय-भ्रम नष्ट होता है और वह संसार-सागर से

पार हो जाता है। जिसके मन-तन में गुरु-चरण समाये हैं वह निर्भय भाव से हरि-शरण को प्राप्त होता है ॥ २ ॥ उसे सहज आनन्द एवं अत्यधिक सुख मिलता है, शत्रु और दुख उसके निकट नहीं आते, सद्गुरु उसे अपनी शरण में लेते हैं और हरिनाम के जपने से उसके सब पाप नष्ट हो जाते हैं ॥ ३ ॥ सन्तों और सज्जन पुरुषों की संगति में जीव को सुख मिलता है, सच्चा गुरु उसे प्रभु से मिला देता है। उसका जन्म-मरण के दुःखों का फंदा कट जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि उसके पर्दे ढके रह जाते हैं (अर्थात उसकी कमज़ोरियाँ प्रभु के दरबार में क्षमा कर दी जाती हैं) ॥ ४ ॥ ८ ॥

॥ प्रभाती महला ५ ॥ सतिगुरि पूरै नामु दीआ। अनद मंगल कलिआण सदा सुखु कारजु सगला रासि थीआ ॥१॥रहाउ॥ चरन कमल गुर के मनि वूठे। दूख दरद भ्रम बिनसे झूठे ॥१॥ नित उठि गावहु प्रभ की बाणी। आठ पहर हरि सिमरहु प्राणी ॥ २ ॥ घरि बाहरि प्रभु सभनी थाई। संगि सहाई जह हउ जाई ॥ ३ ॥ दुइ कर जोड़ि करी अरदासि। सदा जपे नानकु गुणतासु ॥ ४ ॥ ९ ॥

पूर्णगुरु ने जब प्रभु-नाम का भेद बताया तो आनन्द, मंगल, सुख-कल्याण सब कुछ मिल गया और जीव की समस्त समस्याएँ सुलझ गईं ॥१॥ रहाउ ॥ गुरु के चरण-कमल हृदय में बस गए, तो समस्त मिथ्या दुःख, दर्द, भ्रम आदि नष्ट हो गए ॥ १ ॥ वह जीव आठों पहर हरिनाम का सिमरन करने तथा नित्य प्रभु की वाणी गान करने लगा ॥ २ ॥ घर-बाहर परमात्मा सब जगह सहायी हो गया, जहाँ भी जीव जाता है, वह अंग-संग रहता है ॥ ३ ॥ गुरु नानक दोनों हाथ जोड़कर प्रार्थना करते हैं कि गुण-निधि परमात्मा की सदैव आराधना करो ॥ ४ ॥ ९ ॥

॥ प्रभाती महला ५ ॥ पारब्रहमु प्रभु सुघड़ सुजाणु। गुरु पूरा पाईऐ वडभागी दरसन कउ जाईऐ कुरबाणु ॥१॥रहाउ॥ किलबिख मेटे सबदि संतोखु। नामु अराधन होआ जोगु। साधसंगि होआ परगासु। चरन कमल मन माहि निवासु ॥१॥ जिनि कीआ तिनि लीआ राखि। प्रभु पूरा अनाथ का नाथु। जिसहि निवाजे किरपा धारि। पूरन करम ताके आचार ॥२॥ गुण गावै नित नित नित नवे। लख चउरासीह जोनि न भवे। ईहां ऊहां चरण पूजारे। मुखु ऊजल साचे दरबारे ॥३॥ जिसु

मसतकि गुरि धरिआ हाथु। कोटि मधे को विरला दासु। जलि थलि महीअलि पेखै भरपूरि। नानक उधरसि तिसु जन की धूरि ॥ ४ ॥ १० ॥

परब्रह्म परमात्मा अतीव सुयोग्य और समर्थ है। ऊँचे भाग्य से पूर्णगुरु प्राप्त होता है, जिसके दर्शन पर मैं क़ुर्बान जाता हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु की वाणी से पाप मिट गए और सन्तोष प्राप्त हुआ और मैं हरिनाम-आराधना के योग्य बना। सन्तों की संगति में ज्ञान का प्रकाश मिला और गुरु के चरण हृदय में बस गए ॥ १ ॥ जिस परमात्मा ने पैदा किया था, उसी ने रक्षा की। परमात्मा स्वयं ही अनाथों का नाथ है। जिस पर कृपा-पूर्वक वह वरद हस्त रखता है, उसका कर्म-व्यवहार सब पूर्ण हो जाता है ॥ २ ॥ वह नित्य-नित्य परमात्मा के गुण गाता है, चौरासी लाख योनि-चक्र के भ्रमण से बच जाता है। लोक, परलोक में उसके चरण पूजे जाते हैं और प्रभु के सच्चे दरबार में वह उज्ज्वल मुख से प्रवेश करता है ॥ ३ ॥ जिसके माथे पर गुरु ने हाथ रखा, वह करोड़ों में कोई विरला ही होता है। गुरु नानक कहते हैं कि वह जल, थल, आकाश, सब जगह प्रभु का रंग देखता है, उसकी चरण-धूलि भी मोक्ष-दायिनी होती है ॥ ४ ॥ १० ॥

॥ प्रभाती महला ५ ॥ कुरबाणु जाई गुर पूरे अपने। जिसु प्रसादि हरि हरि जपु जपने ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अंम्रित बाणी सुणत निहाल। बिनसि गए बिखिआ जंजाल ॥ १ ॥ साच सबद सिउ लागी प्रीति। हरि प्रभु अपुना आइआ चीति ॥ २ ॥ नामु जपत होआ परगासु। गुर सबदे कीना रिदै निवासु ॥ ३ ॥ गुर समरथ सदा दइआल। हरि जपि जपि नानक भए निहाल ॥ ४ ॥ ११ ॥

मैं अपने गुरु पर क़ुर्बान हूँ, जिसकी कृपा से हरि-जाप सम्भव हो पाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उसकी अमृत-वाणी सुनने से उत्कट सुख मिलता है, विषय-विकारों के जंजाल नष्ट होते हैं ॥ १ ॥ सच्चे शब्द से प्रीति लगती है तो मन में प्रभु का ध्यान स्थिर होता है ॥ २ ॥ हरिनाम के जपने से ज्ञान का प्रकाश होता है और हृदय में गुरु के वचन बस जाते हैं ॥ ३ ॥ गुरु परमसमर्थ और दयालु होता है; गुरु नानक कहते हैं कि (उस गुरु के वचनानुसार) हरिनाम-जाप से जीव सुखी होते हैं ॥४॥११॥

॥ प्रभाती महला ५ ॥ गुरु गुरु करत सदा सुखु पाइआ। दीन दइआल भए किरपाला अपणा नामु आपि

जपाइआ ।। १ ।। रहाउ ।। संत संगति मिलि भइआ प्रगास । हरि हरि जपत पूरन भई आस ।। १ ।। सरब कलिआण सूख मनि वूठे । हरिगुण गाए गुर नानक तूठे ।। २ ।। १२ ।।

गुरु, गुरु करने (अर्थात् गुरु में विश्वास लाने) से सदा सुख प्राप्त हुआ । दीनदयालु प्रभु भी हम पर कृपालु हुए और उन्होंने स्वयं अपना नाम जपवाया ।। १ ।। रहाउ ।। सत्संगति के सम्पर्क में ज्ञान का प्रकाश मिला, हरि-हरि नाम जपने से समस्त आशाएँ पूर्ण हुईं ।।१।। गुरु नानक कहते हैं कि हरिगुण-गान से प्रभु संतुष्ट हुए और जीव का पूर्ण कल्याण हुआ, मन में परमसुख आन बसे ।। २ ।। १२ ।।

प्रभाती महला ५ घरु २ बिभास

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। अवरु न दूजा ठाउ । नाही बिनु हरि नाउ । सरब सिधि कलिआन । पूरन होहि सगल काम ।। १ ।। हरि को नामु जपीऐ नीत । काम क्रोध अहंकारु बिनसै लगै एकै प्रीति ।। १ ।। रहाउ ।। नामि लागै दूखु भागै सरनि पालन जोगु । सतिगुरु भेटै जमु न तेटै जिसु धुरि होवै संजोगु ।। २ ।। रैनि दिनसु धिआइ हरि हरि तजहु मन के भरम । साध संगति हरि मिलै जिसहि पूरन करम ।। ३ ।। जनम जनम बिखाद बिनसे राखि लीने आपि । मात पिता मीत भाई जन नानक हरि हरि जापि ।। ४ ।। १ ।। १३ ।।

हरिनाम के बिना दूसरा कोई स्थान नहीं है । इससे सब प्रकार का कल्याण होता है, सफलता मिलती है और समस्त कार्य सम्पन्न हो जाते हैं ।। १ ।। (अत:) हमें नित्य-प्रति हरि का नाम जपना चाहिए । इससे काम-क्रोध-अहंकारादि वृत्तियाँ दूर होंगी और एक प्रभु में प्रीति जगेगी ।। १ ।। रहाउ ।। हरिनाम में रत रहनेवालों के दु:ख दूर होते हैं, हरि शरणागत-पालन में समर्थ है । जिसका भाग्य अच्छा हो, उसे सतिगुरु मिलता है और काल उसे दण्डित नहीं करता ।। २ ।। मन के भ्रमों को त्यागकर रात-दिन हरि-प्रभु का ध्यान लगावें । सत्संगति में हरि मिलते हैं, (किन्तु केवल उसी को प्राप्त हैं) जिनके भाग्य उत्तम हैं ।। ३ ।। प्रभु ने स्वयं कृपा करके रक्षा की है और हमारे जन्म-जन्मांतर के दु:ख दूर हो गए हैं । दास नानक कहते हैं कि हरिनाम ही माता, पिता, मित्र, भाई के समान (सर्वदा सहयोगी) है ।। ४ ।। १ ।। १३ ।।

प्रभाती महला ५ बिभास पड़ताल

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। रम राम राम राम जाप । कलि कलेस लोभ मोह बिनसि जाइ अहंताप ।। १ ।। रहाउ ।। आपु तिआगि संत चरन लागि मनु पवितु जाहि पाप ।। १ ।। नानकु बारिकु कछू न जानै राखन कउ प्रभु माई बाप ।।२।।१।।१४।।

राम-राम के निरन्तर जाप से (वाहिगुरु के जाप से) सब क्लेश, लोभ, मोह, अहंकार और संताप दूर हो जाते हैं ।।१।।रहाउ।। अहंभाव को छोड़कर सन्तों के चरण पकड़ो, पाप दूर होंगे, मन पवित्र होगा ।। १ ।। गुरु नानक कहते हैं कि (जीव की दशा) उस बालक की-सी हो जाती है, जो स्वयं कुछ नहीं जानता, उसकी देख-भाल के लिए माता-पिता ही चिन्तित रहते हैं ।। २ ।। १ ।। १४ ।।

।। प्रभाती महला ५ ।। चरन कमल सरनि टेक । ऊच मूच बेअंतु ठाकुरु सरब ऊपरि तुही एक ।। १ ।। रहाउ ।। प्रान अधार दुख बिदार दैनहार बुधि बिबेक ।। १ ।। नमसकार रखनहार मनि अराधि प्रभू मेक । संत रेनु करउ मजनु नानक पावै सुख अनेक ।। २ ।। २ ।। १५ ।।

प्रभु के चरण-कमलों का ही सहारा है, वही सबसे उच्च और सबसे महान स्वामी है, वही एक सर्वोपरि है ।। १ ।। रहाउ ।। वह जीवनाधार है, दुःखों को दूर करनेवाला एवं बुद्धि-विवेक के देनेवाला है ।। १ ।। उस परम संरक्षक को हमारा प्रणाम है, उसी एक प्रभु की मन में आराधना करो । गुरु नानक कहते हैं कि सन्तों की चरण-धूलि में स्नान कर लेने से असंख्य सुख प्राप्त होते हैं ।। २ ।। २ ।। १५ ।।

प्रभाती असटपदीआ महला १ बिभास

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। दुबिधा बउरी मनु बउराइआ । झूठै लालचि जनमु गवाइआ । लपटि रही फुनि बंधु न पाइआ । सतिगुरि राखे नामु द्रिड़ाइआ ।। १ ।। ना मनु मरै न माइआ मरै । जिनि किछु कीआ सोई जाणै सबदु वीचारि भउसागरु तरै ।। १ ।। रहाउ ।। माइआ संचि राजे अहंकारी । माइआ साथि न चलै पिआरी । माइआ ममता है बहु रंगी ।

बिनु नावै को साथि न संगी ।। २ ।। जिउ मनु देखहि परमनु तैसा । जैसी मनसा तैसी दसा । जैसा करमु तैसी लिव लावै । सतिगुरु पूछि सहज घरु पावै ।। ३ ।। रागि नादि मनु दूजै भाइ । अंतरि कपटु महा दुखु पाइ । सतिगुरु भेटै सोझी पाइ । सचै नामि रहै लिव लाइ ।। ४ ।। सचै सबदि सचु कमावै । सची बाणी हरिगुण गावै । निजघरि वासु अमरपदु पावै । ता दरि साचै सोभा पावै ।।५।। गुर सेवा बिनु भगति न होई । अनेक जतन करै जे कोई । हउमै मेरा सबदे खोई । निरमल नामु वसै मनि सोई ।।६।। इसु जग महि सबदु करणी है सारु । बिनु सबदै होरु मोहु गुबारु । सबदे नामु रखै उरिधारि । सबदे गति मति मोखदुआरु ।। ७ ।। अवरु नाही करि देखणहारो । साचा आपि अनूपु अपारो । राम नाम ऊतम गति होई । नानक खोजि लहै जनु कोई ।। ८ ।। १ ।।

दुविधा बड़ी दीवानी है, मन को भी इसने दीवाना बना रखा है। झूठे लोभ-लालच में पड़कर अनमोल मनुष्य-जन्म खोया जा रहा है। यह दुविधा मनुष्य को ऐसे चिपटी है, कि इसे कोई संयत नहीं कर पाया। केवल सतिगुरु ही हरिनाम का जाप दृढ़ करवाके इससे रक्षा करते हैं।। १ ।। मन और माया के लोभ-भ्रम अमर हैं। जिसने अध्यात्म-पथ पर कोई प्रगति की है, वही जानता है; गुरु के वचनों को समझ-जानकर भव-सागर से पार हो जाता है ।। १ ।। रहाउ ।। मायापरक पदार्थों का संचय करते-करते राजा लोग अहंकारी हो जाते हैं, माया फिर भी उनका साथ नहीं देती। माया-ममता बहु-विध रंग बदल-बदलकर प्रकट होती हैं, हरिनाम के अतिरिक्त कोई दूसरा संगी-साथी नहीं बनता ।। २ ।। जैसी अपनी भावना होती है (जैसा अपना मन होता है), वैसा ही दूसरे का मन प्रतीत होता है। जैसी आशा-तृष्णा होती है, वैसी दशा-स्थिति हो जाती है। जैसे कर्म होते हैं, वैसी वृत्ति बनती है। सतिगुरु की आज्ञा मानने से पूर्ण स्थिर निश्चल अवस्था की प्राप्ति होती है ।। ३ ।। सांसारिक राग-संगीत में लीन मन द्वैत-भाव में पगा होता है, भीतर छल-कपट की वृत्ति के कारण दुःखी होता है। किन्तु जब सतिगुरु से मिलन हो जाता है, जीव का विवेक-ज्ञान जाग्रत् होता है और वह सच्चे ज्ञान में ही ध्यानस्थ हो जाता है ।।४।। (तब जीव) सच्चे शब्द (गुरु के सदोपदेश) में रत होकर सत्याचरण करता और सच्ची वाणी के माध्यम से हरि के गुण गाता है। अन्ततः अपने वास्तविक घर (प्रभु के दरबार) में पहुँचता और अमर पद प्राप्त करता है और सत्यस्वरूप प्रभु के द्वार पर सम्मानित होता है ।। ५ ।। गुरु की सेवा

के बिना भक्ति नहीं होती; कोई अनेक यत्न कर ले, अहंभाव का अन्त केवल गुरु-उपदेश से ही हो सकता है। निर्मल हरिनाम मन में आ बसता है ॥ ६ ॥ इस संसार में प्रभु का शब्द ही श्रेष्ठ उपलब्धि है, शब्द से इतर अन्य सब बातें मूर्खतापूर्ण मोह के अतिरिक्त और कुछ नहीं। शब्द के कारण ही मन में हरिनाम को धारण किया जाता है। प्रभु शब्द में ही हमारी गति-मति है, यही मोक्ष का सिंह-द्वार है ॥ ७ ॥ हरि के अतिरिक्त ऐसा कोई नहीं, जो पैदा करके उनकी सँभाल भी करता है। वह प्रभु सत्यस्वरूप, अनुपम और हमारी पहुँच से बाहर है। उसका नाम-स्मरण करने से जीव की गति उत्तम होती है। गुरु नानक का कथन है कि जीवों को उसे (रामनाम को) खोज लेना चाहिए ॥ ८ ॥ १ ॥

॥ प्रभाती महला १ ॥ माइआ मोहि सगल जगु छाइआ। कामणि देखि कामि लोभाइआ। सुत कंचन सिउ हेतु वधाइआ। सभु किछु अपना इकु रामु पराइआ ॥ १ ॥ ऐसा जापु जपउ जपमाली। दुख सुख परहरि भगति निराली ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुण निधान तेरा अंतु न पाइआ। साच सबदि तुझ माहि समाइआ। आवागउणु तुधु आपि रचाइआ। सेई भगत जिन सचि चितु लाइआ ॥ २ ॥ गिआनु धिआनु नरहरि निरबाणी। बिनु सतिगुर भेटे कोइ न जाणी। सगल सरोवर जोति समाणी। आनद रूप विटहु कुरबाणी ॥ ३ ॥ भाउ भगति गुरमती पाए। हउमै विचहु सबदि जलाए। धावतु राखै ठाकि रहाए। सचा नामु मंनि वसाए ॥४॥ बिसम बिनोद रहे परमादी। गुरमति मानिआ एक लिव लागी। देखि निवारिआ जल महि आगी। सो बूझै होवै वडभागी ॥ ५ ॥ सतिगुरु सेवे भरमु चुकाए। अनदिनु जागै सचि लिव लाए। एको जाणै अवरु न कोइ। सुखदाता सेवे निरमलु होइ ॥६॥ सेवा सुरति सबदि वीचारि। जपु तपु संजमु हउमै मारि। जीवन मुकतु जा सबदु सुणाए। सची रहत सचा सुखु पाए ॥ ७ ॥ सुखदाता दुखु मेटणहारा। अवरु न सूझसि बीजीकारा। तनु मनु धनु हरि आगै राखिआ। नानकु कहै महा रसु चाखिआ ॥ ८ ॥ २ ॥

समूचे जगत में मोह-माया आच्छादित है। स्त्री को देखकर कामी पुरुष उसकी ओर आकर्षित होता है। सन्तान तथा ऐश्वर्य से प्यार बढ़ाता है। वह प्रभु के अतिरिक्त सब लौकिक चीज़ों से ममता रखता है (केवल राम को ही पराया मानता है अर्थात् राम की ओर उसे कोई

आकर्षण नहीं होता) ॥ १ ॥ माला लेकर ऐसा जाप जपो कि दुःख-सुख से ऊपर उठकर निराली भक्ति-साधना हो सके ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे गुणों के भण्डार प्रभु, तुम्हारा रहस्य किसी ने नहीं जाना; (सब कुछ तुम्हारी ही लीला है) सच्चा शब्द (अनाहत नाद) तुम्हीं में समाया है, जीव के लिए आवागमन के बन्धन भी तुम्हींने बनाए हैं। किन्तु साधक वही है, जो तुम्हारे सत्यस्वरूप में मन रमा लेता है ॥ २ ॥ परमात्मा के ज्ञान, ध्यान और निर्वाण के रंगों को सतिगुरु-मिलन के बग़ैर कोई नहीं समझता। समस्त हृदयों में उसी परम-आलोक की किरणें समाई हैं, उस परम आनन्द-रूप परमात्मा पर मैं क़ुर्बान हूँ ॥ ३ ॥ गुरु के उपदेश से ही भाव-भक्ति की प्राप्ति होती है, प्रभु-शब्द से मन के अन्तर् की अहंभावना जल जाती है। इससे मन की चंचलता संयमित होती है और प्रभु का सच्चा नाम मन में बस जाता है ॥ ४ ॥ प्रमाद उपजानेवाले आश्चर्यमय कर्म दूर हुए, गुरु के उपदेश में विश्वास दृढ़ करने से एक प्रभु में ध्यान पक्का हुआ। परमात्मा के दर्शनों से प्रभु-नाम-जल के साथ परितापमयी तृष्णा की अग्नि बुझा दी गई। जो इस तथ्य को समझ ले, वही भाग्यशाली है ॥ ५ ॥ सतिगुरु की सेवा में रत होने से भ्रम दूर होते हैं। जीव सत्य से रात-दिन प्रेम करता है। वह सबको भुलाकर एकमात्र सुखदाता प्रभु को ही सिमरता है ॥ ६ ॥ जब प्रभु के शब्द में विचार करने से वृत्ति सेवामयी होती है और अहंभावना समाप्त हो जाती है। यही स्थिति उसके लिए जप, तप, संयम होती है। सच्चा शब्द सुनकर जीव जीवन्मुक्ति को प्राप्त करता है तथा सच्चे आचरण द्वारा सच्चा सुख प्राप्त होता है ॥ ७ ॥ हरि सुख देनेवाला, दुःखों को मिटानेवाला है, उसके अतिरिक्त दूसरे कार्य बन्धन मात्र हैं। जीव अपना तन, मन, धन सब हरि को अर्पित कर देता है, गुरु नानक कहते हैं, इसी में उसे परमरस की प्राप्ति होती है ॥ ८ ॥ २ ॥

॥ प्रभाती महला १ ॥ निवली करम भुअंगम भाठी रेचक पूरक कुंभ करै। बिनु सतिगुर किछु सोझी नाही भरमे भूला बूडि मरै। अंधा भरिआ भरि भरि धोवै अंतर की मलु कदे न लहै। नाम बिना फोकट सभि करमा जिउ बाजीगरु भरमि भुलै ॥ १ ॥ खटु करम नामु निरंजनु सोई। तू गुण सागरु अवगुण मोही ॥ १ ॥ रहाउ ॥ माइआ धंधा धावणी दुरमति कार बिकार। मूरखु आपु गणाइदा बूझि न सकै कार। मनसा माइआ मोहणी मनमुख बोल खुआर। मजनु झूठा चंडाल का फोकट चार सींगार ॥ २ ॥ झूठी मन की मति है करणी बादि

बिबादु । झूठे विचि अहंकरणु है खसम न पावै सादु । बिनु नावै होरु कमावणा फिका आवै सादु । दुसटी सभा विगुचीऐ बिखु वाती जीवण बादि ॥ ३ ॥ ए भ्रमि भूले मरहु न कोई । सतिगुरु सेवि सदा सुखु होई । बिनु सतिगुर मुकति किनै न पाई । आवहि जांहि मरहि मरि जाई ॥ ४ ॥ एहु सरीरु है त्रै गुण धातु । इस नो विआपै सोग संतापु । सो सेवहु जिसु माई न बापु । विचहु चूकै तिसना अरु आपु ॥ ५ ॥ जह जह देखा तह तह सोई । बिनु सतिगुर भेटे मुकति न होई । हिरदै सचु एह करणी सारु । होरु सभु पाखंडु पूज खुआरु ॥ ६ ॥ दुबिधा चूकै तां सबदु पछाणु । घरि बाहरि एको करि जाणु । एहा मति सबदु है सारु । विचि दुबिधा माथै पवै छारु ॥ ७ ॥ करणी कीरति गुरमति सारु । संत सभा गुण गिआनु बीचारु । मनु मारे जीवत मरि जाणु । नानक नदरी नदरि पछाणु ॥ ८ ॥ ३ ॥

(इस पद में गुरुजी माया के भ्रम में पड़कर वेषधारी साधु-योगी आदि जो कर्म करते हैं, उनका तिरस्कार करते हुए सतिगुरु की आवश्यकता पर बल देते हैं।) योगी लोग निउली कर्म करते (पेट, नाक, मुँह की सफ़ाई की क्रियाएँ), कुण्डलिनी की भट्ठी में श्वासों के भरने, रोकने, छोड़ने की (प्राणायाम) क्रियाएँ करते हैं, किन्तु सतिगुरु के बग़ैर उन्हें कुछ सूझ नहीं पड़ता और वे भ्रम में पड़कर झूठ का अनुसरण करते हुए ही डूब मरते हैं। वे अयोग्य कर्मों के मैल से भरते हैं, जो कि मल-मलकर धोने से भी कभी दूर नहीं होता। हरिनाम के बिना उक्त सब कर्म व्यर्थ है; जैसे बाज़ीगर लोगों को भ्रम में डालता है, जिनका मायावी अस्तित्व स्थिर नहीं होता (ये ऐसे ही कर्म होते हैं) ॥ १ ॥ हरिनाम की प्रीति में ही षट्कर्म (ब्राह्मणों के छः मुख्य कर्म) निहित हैं। हे प्रभु, तुम गुणों के सागर हो, मुझमें सब अवगुण हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मायावी धंधों में दौड़-भाग करना बुद्धिहीन व्यर्थ कर्म है। मूर्ख जीव अहम् के कारण अपना महत्त्व स्थापित करना चाहता है, वास्तविक कार्य क्षेत्र नहीं पहचानता। उसकी इच्छा-तृष्णाएँ मोहक माया-युक्त हो जाती हैं और वह मनमुख अनीतिकर शब्दों का उच्चारण करने लगता है। उस चण्डाल का स्नान भी मिथ्या होता है और चारों प्रकार का कर्मकाण्डी शृंगार भी बेकार है ॥ २ ॥ मन की मति (मनमुखता = स्वेच्छाचारिता) मिथ्या है और (उक्त) करनी व्यर्थ और विवादपूर्ण है। ऐसे झूठे जीव में अहंकार विराजता है, इसलिए मालिक को उसमें कोई आकर्षण नहीं रह जाता। हरिनाम के बिना अन्य

सब कर्म नीरस हैं। दुष्टों की संगति में तो कष्ट स्वाभाविक हैं, विष सेवन करने से तो जीवन का अन्त होगा ही ॥ ३ ॥ ऐ भ्रम में भूले लोगो, सतिगुरु की सेवा में लगो, इसमें सुख ही सुख है, अमरता है। सतिगुरु के बिना कोई मुक्ति नहीं पा सकता— वह आवागमन के चक्र में रहता और बार-बार मरता है ॥ ४ ॥ यह शरीर त्रिगुणात्मक माया का बना है। इसे शोक-संताप कष्ट पहुँचाते हैं; अतः उस प्रभु का भजन करो जिसका न कोई माँ है, न बाप है तथा अपने मन से तृष्णा और अहंकार को दूर करो ॥५॥ जहाँ तक दृष्टि जाती है, वह स्वयं दृश्यमान है, किन्तु सतिगुरु से मिले बग़ैर मुक्ति सम्भव नहीं होती। हृदय में सत्य को धारण करना ही श्रेष्ठ कर्म है, अन्य सब पूजाडम्बर पाखण्डपूर्ण हैं ॥६॥ दुविधा का अन्त होने से ही शब्द की पहचान होती है; तब जीव अन्तर्-बाहर सम-व्यवहारी हो जाता है। शब्द की श्रेष्ठता को स्वीकार करना ही सद्बुद्धि है, दुविधा में तो माथे धूल ही पड़ती है ॥ ७ ॥ गुरु-मतानुसार उत्तम कर्म ही प्रभु का गुणगान है। सत्संगति में बैठकर गुरु के उपदेशों को विचारो और मन को संयमित करके जीवित मरना सीख लो तो गुरु नानक कहता है कि प्रभु-कृपा से उसकी दृष्टि को पहचान लेने का सामर्थ्य पा सकोगे ॥ ८ ॥ ३ ॥

॥ प्रभाती महला १ दखणी ॥ गोतमु तपा अहिलिआ इसत्री तिसु देखि इंद्रु लुभाइआ। सहस सरीर चिहन भग हूए ता मनि पछोताइआ ॥ १ ॥ कोई जाणि न भूलै भाई। सो भूलै जिसु आपि भुलाए बूझै जिसै बुझाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तिनि हरीचंदि प्रिथमी पति राजै कागदि कीम न पाई। अवगणु जाणै त पुंन करे किउ किउ नेखासि बिकाई ॥२॥ करउ अढाई धरती मांगी बावन रूपि बहानै। किउ पइआलि जाइ किउ छलीऐ जे बलि रूपु पछानै ॥ ३ ॥ राजा जनमेजा दे मतीं बरजि बिआसि पढ़ाइआ। तिन्हि करि जग अठारह घाए किरतु न चलै चलाइआ ॥ ४ ॥ गणत न गणीं हुकमु पछाणा बोली भाइ सुभाई। जो किछु वरतै तुधै सलाहीं सभ तेरी वडिआई ॥ ५ ॥ गुरमुखि अलिपतु लेपु कदे न लागै सदा रहै सरणाई। मनमुखु मुगधु आगै चेतै नाही दुखि लागै पछुताई ॥ ६ ॥ आपे करे कराए करता जिनि एह रचना रचीऐ। हरि अभिमानु न जाई जीअहु अभिमाने पै पचीऐ ॥७॥

भुलण विचि कीआ सभु कोई करता आपि न भुलै। नानक सचि नामि निसतारा को गुर परसादि अघुलै ॥ ८ ॥ ४ ॥

तपस्वी गौतम की पत्नी अहल्या को देखकर इन्द्र मोहित हो गया था। बाद में गौतम के अभिशाप से सारे शरीर पर सहस्र भग-चिह्न बन गए, तो पछताना पड़ा ॥१॥ हे भाइयो, जान-बूझकर किसी को ग़लती नहीं करनी चाहिए। वह तो भूलता ही है, जिसे परमात्मा भुला देता है; जिसे वह सुझाता है, वह ज्ञानवान् हो जाता है ॥१॥रहाउ॥ राजा हरिश्चन्द्र को देख लो, पृथ्वी-पति होकर भी वह अपने भाग्य-लेख को नहीं जान सका। यदि उसे अपने पूर्व-कर्मों का ज्ञान होता, तो वह पुण्य करता और दासों की मण्डी में क्यों बिकता ? ॥ २ ॥ विष्णु ने वामन-रूप में राजा बलि से अढ़ाई करम भूमि माँगी थी। भला यदि वह वामन का रूप पहचान लेता तो क्यों छला जाता और पाताल में गिरता ? ॥३॥ राजा जनमेजय को व्यास मुनि जैसे महापुरुष समझाते रहे किन्तु वह नहीं माना, उसने यज्ञ भी किया, अठारह ब्राह्मण मरवा दिए— कर्मों की गति से बचा नहीं जा सकता। (राजा जनमेजय को व्यास ने घोड़े पर चढ़ने, अप्सरा को घर लाने तथा उसके कथनानुसार कुछ भी करने से मना किया था। किन्तु वह अप्सरा के प्यार में मुग्ध उसे घर पर लाया, उसके कहने पर यज्ञ भी रचाया और अठारह ब्राह्मण बुलाए। अप्सरा झीने कपड़ों में उनके सामने आई और वे ब्राह्मण उसे देखकर हँस पड़े। परिणामतः राजा ने क्रोध में उन्हें मरवा दिया और ब्राह्मण-हत्या के पाप से कोढ़ी हो गया।) ॥४॥ अपनी सत्ता को अहम्पूर्ण न स्वीकारना, हुकुम पहचानकर जीवन-यापन करना और सहज स्वभाव से बात करना, इसमें जो भी व्याप्त है, वह तू ही है, तुम्हारी ही बड़ाई है, तुम्हीं सराहनीय हो ॥ ५ ॥ गुरमुख जीव सदैव अलिप्त रहता है, उसे कभी माया-मोह आकर्षित नहीं करता, वह प्रभु-शरण में निश्चिन्त रहता है। मूर्ख मनमुख जीव को सही नहीं सूझता, इसलिए वह दुःखी होता और पछताता रहता है ॥६॥ यह सृष्टि की रचना, जिस रचयिता ने बनाई है, वही सब कुछ करता-कराता है। अन्य सब व्यर्थ के अभिमान में जलते हैं, उनके मन से अभिमान नहीं जाता ॥ ७ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा ने अपने अतिरिक्त अन्य सबको भूलने योग्य बनाया है, वह स्वयं अचूक है। गुरु की कृपा से कोई विरला जीव ही प्रभु-नाम-स्मरण द्वारा इस सांसारिक पचड़े से छूट पाता है ॥ ८ ॥ ४ ॥

॥ प्रभाती महला १ ॥ आखणा सुनणा नामु अधारु। धंधा छुटकि गइआ वेकारु। जिउ मनमुखि दूजै पति खोई। बिनु नावै मै अवरु न कोई ॥ १ ॥ सुणि मन अंधे मूरख

गवार । आवत जात लाज नही लागै बिनु गुर बूडै बारो बार ।। १ ।। रहाउ ।। इसु मन माइआ मोहि बिनासु । धुरि हुकमु लिखिआ तां कहीऐ कासु । गुरमुखि बिरला चीन्है कोई । नाम बिहूना मुकति न होई ।। २ ।। भ्रमि भ्रमि डोलै लख चउरासी । बिनु गुर बूझे जम की फासी । इहु मनूआ खिनु खिनु ऊभि पइआलि । गुरमुखि छूटै नामु सम्हालि ।।३।। आपे सद्दे ढिल न होइ । सबदि मरै सहिला जीवै सोइ । बिनु गुर सोझी किसै न होइ । आपे करै करावै सोइ ।।४।। झगड़ु चुकावै हरि गुण गावै । पूरा सतिगुरु सहजि समावै । इहु मनु डोलत तउ ठहरावै । सचु करणी करि कार कमावै ।। ५ ।। अंतरि जूठा किउ सुचि होइ । सबदी धोवै विरला कोइ । गुरमुखि कोई सचु कमावै । आवणु जाणा ठाकि रहावै ।। ६ ।। भउ खाणा पीणा सुखु सारु । हरि जन संगति पावै पारु । सचु बोलै बोलावै पिआरु । गुर का सबदु करणी है सारु ।।७।। हरि जसु करमु धरमु पति पूजा । काम क्रोध अगनी महि भूंजा । हरि रसु चाखिआ तउ मनु भीजा । प्रणवति नानकु अवरु न दूजा ।। ८ ।। ५ ।।

हरिनाम का जपना और सुनना ही एकमात्र आधार बन गया है, अन्य व्यर्थ के कार्य सब छूट गए हैं। जैसे मनमुख द्वैत-भाव में अपनी प्रतिष्ठा गँवाता है (किन्तु छोड़ता नहीं), वैसे ही मैंने हरिनाम को आश्रय बनाने का हठ कर रखा है ।। १ ।। हे मूर्ख, गँवार, अज्ञानी मन, सुनो, क्या तुम्हें बार-बार जन्म-मरण के चक्र में पड़ने में लज्जा नहीं होती, जो गुरु के बिना फिर-फिर डूब रहे हो ! ।। १ ।। रहाउ ।। माया-मोह से इस मन का नाश होता है, किन्तु जब यही उसके भाग्य में बदा है, तो किसे क्या कहें ? कोई विरला जीव ही गुरु के द्वारा इस सत्य को जान पाता है कि हरिनाम के बिना मुक्ति कभी सम्भव नहीं ।। २ ।। जीव चौरासी लाख योनि-चक्र में भ्रमता है, गुरु के बिना यमदूतों के फन्दे में बँधा रहता है। यह मन बार-बार कभी आकाश और कभी पाताल (ऊँचा-नीचा) में भटकता है, किन्तु गुरुमुख जीव हरिनाम स्मरण करके आवागमन के चक्र से छूट जाता है ।। ३ ।। परमात्मा स्वयं अपनी ओर खींचता है, इसमें कोई ढील नहीं होती, गुरु के शब्द पर मरनेवाले का जीवन सुखद और कल्याणपूर्ण हो जाता है। गुरु के बिना किसी को समझ नहीं आती, वह सब कुछ अपने-आप करता-कराता है ।। ४ ।। हरि के गुण गानेवाला

सब झगड़ा (आवागमन का) ही चुका देता है। सतिगुरु उसे पूर्ण निश्चल स्थिति में स्थिर कर देता है, तब कहीं यह मन डोलने से ठहरता है और सच्चे कर्मों द्वारा मोक्ष-पथ की खोज कर लेता है ॥५॥ किन्तु जिनके भीतर झूठ है, वे सत्य कैसे कहेंगे ? इस मिथ्यात्व को कोई विरला जीव ही गुरु के उपदेश से धोता है। कोई गुरुमुख जीव ही सत्य की कमाई करता और आवागमन से मुक्त होता है ॥ ६ ॥ परमात्मा के भय में रहना, खाना-पीना, यही श्रेष्ठ सुखदायी व्यवहार है। हरि का भक्त सत्संगति के सम्पर्क में मुक्ति पाता है, वह सच बोलता है और प्रभु के प्यार में रत रहता है। उसके लिए गुरु की आज्ञा ही श्रेष्ठ उपलब्धि है ॥ ७ ॥ जिसने हरिनाम के यशोगान को ही अपना कर्म-धर्म, पूजा-पाठ एवं प्रतिष्ठा मान लिया है, वह काम-क्रोधादि को ज्ञानाग्नि में भून डालता है। गुरु नानक कहते हैं कि वह हरि-रसामृत का पान करता हुआ रस-मुग्ध रहता है, उसके लिए द्वैत को कोई स्थान नहीं ॥ ८ ॥ ५ ॥

॥ प्रभाती महला १ ॥ राम नामु जपि अंतरि पूजा। गुर सबदु वीचारि अवरु नही दूजा ॥ १ ॥ एको रवि रहिआ सभ ठाई। अवरु न दीसै किसु पूज चड़ाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनु तनु आगै जीअड़ा तुझ पासि। जिउ भावै तिउ रखहु अरदासि ॥ २ ॥ सचु जिहवा हरि रसन रसाई। गुरमति छूटसि प्रभ सरणाई ॥ ३ ॥ करम धरम प्रभि मेरै कीए। नामु वडाई सिरि करमां कीए ॥ ४ ॥ सतिगुर कै वसि चारि पदारथ। तीनि समाए एक क्रितारथ ॥ ५ ॥ सतिगुरि दीए मुकति धिआनां। हरि पदु चीन्हि भए परधाना ॥६॥ मनु तनु सीतलु गुरि बूझ बुझाई। प्रभु निवाजे किनि कीमति पाई ॥ ७ ॥ कहु नानक गुरि बूझ बुझाई। नाम बिना गति किनै न पाई ॥ ८ ॥ ६ ॥

हरिनाम जपने से अन्तर्मन में ही पूजन हो जाता है, गुरु के वचनानुसार कर्म करने से द्वैत-भाव का कोई आकर्षण नहीं रह जाता ॥ १ ॥ सब स्थानों पर एक प्रभु ही व्याप्त है, अन्य कोई दीख ही नहीं पड़ता, फिर किसकी आराधना करें ? ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हमारा तन, मन और हृदय, प्रभु के समक्ष अर्पित है; हमारी विनती है कि जैसा प्रभु चाहे, वैसे इन्हें रखे ॥२॥ सत्यामृत ने हमारी जिह्वा हरि-रसमयी बना दी है। प्रभु की शरण लेने और गुरु का उपदेश ग्रहण करने में ही मुक्ति है ॥ ३ ॥ प्रभु ने स्वयं मेरे कर्म-धर्म भुगता दिए और हरिनाम को कर्मकाण्डों से ऊपर स्थापित कर दिया ॥ ४ ॥ चारों पदार्थ (काम, अर्थ, धर्म, मोक्ष)

सतिगुरु के वश में हैं, इनमें से तीन की तृष्णा चुक जाती है और चौथा (मोक्ष) सफल होता है (क्योंकि सतिगुरु अपने जीव को मोक्षोन्मुखी बनाते हैं) ॥ ५ ॥ सतिगुरु केवल मुक्ति की ओर ही ध्यान देते हैं, हरि-पद को समझकर जीव प्रधानता पा लेता है ॥ ६ ॥ गुरु की शिक्षा पा लेने पर मन-तन शीतल हो जाता है। परमात्मा जिन्हें सम्मानित करता है, उनका सही मूल्य कौन जान सकता है ? ॥ ७ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि मात्र गुरु ही समूचे ज्ञान का स्रोत है, उसके बिना किसी ने मुक्ति नहीं पाई ॥ ८ ॥ ६ ॥

॥ प्रभाती महला १ ॥ इकि धुरि बखसि लए गुरि पूरै सची बणत बणाई। हरि रंग राते सदा रंगु साचा दुख बिसरे पति पाई ॥ १ ॥ झूठी दुरमति की चतुराई। बिनसत बार न लागै काई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनमुख कउ दुखु दरदु विआपसि मनमुखि दुखु न जाई। सुख दुख दाता गुरमुखि जाता मेलि लए सरणाई ॥ २ ॥ मनमुख ते अभ भगति न होवसि हउमै पचहि दिवाने। इहु मनूआ खिनु ऊभि पइआली जब लगि सबद न जाने ॥ ३ ॥ भूख पिआसा जगु भइआ तिपति नही बिनु सतिगुर पाए। सहजै सहजु मिलै सुखु पाईऐ दरगह पैधा जाए ॥ ४ ॥ दरगह दाना बीना इकु आपे निरमल गुर की बाणी। आपे सुरता सचु वीचारसि आपे बूझै पदु निरबाणी ॥ ५ ॥ जलु तरंग अगनी-पवनै फुनि त्रै मिलि जगतु उपाइआ। ऐसा बलु छलु तिन कउ दीआ हुकमी ठाकि रहाइआ ॥ ६ ॥ ऐसे जन विरले जग अंदरि परखि खजानै पाइआ। जाति वरन ते भए अतीता ममता लोभु चुकाइआ ॥ ७ ॥ नामि रते तीरथ से निरमल दुखु हउमै मैलु चुकाइआ। नानकु तिन के चरन पखालै जिना गुरमुखि साचा भाइआ ॥ ८ ॥ ७ ॥

गुरु ने कुछ जीवों को सत्य व्यवस्था बनाकर शुरू से ही अपना लिया। वे परमात्मा के प्यार में रँग गए, उनके दुःख दूर हुए और उन्होंने प्रभु के दरबार में विशेष प्रतिष्ठा प्राप्त कर ली ॥ १ ॥ दुर्बुद्धि का चातुर्य झूठा है, उसे नष्ट होते कुछ भी देर नहीं लगती ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनमुख जीव को दुःख-दर्द का सामना करना पड़ता है, उसका दुःख अनन्त होता है। सुखों-दुःखों के देनेवाले परमात्मा को गुरु के द्वारा ही जाना जाता है, तभी वह अपनी शरण में अपनाता है ॥ २ ॥ मनमुख जीव हार्दिक भक्ति नहीं कर सकता, वह दीवाना तो अहंकार में रत रहता है। यह

मन, जब तक शब्द का संयम नहीं पा लेता, क्षण-क्षण आकाश-पाताल में भटकता रहता है ॥ ३ ॥ संसार भूख-प्यास की पीड़ा में दुःखी है, सतिगुरु के बग़ैर किसी को तृप्ति नहीं मिलती। जब तक तृष्णा को त्यागकर शांति प्राप्त न कर लें, तब तक पूर्णपरमानन्द अवस्था (प्रभु में लीनता) नहीं मिलती ॥ ४ ॥ परमात्मा के दरबार में वही चतुर-स्याना है और गुरु की निर्मल वाणी द्वारा उसकी जानकारी होती है। वह स्वयं निर्वाण-पद को पहचानने और सत्य के स्वरूप को विचारने में समर्थ है ॥ ५ ॥ उसी ने लहरों का पानी, अग्नि और वायु बनाकर फिर इन तीनों के सुमेल से संसार पैदा किया। संसार के पदार्थों में ऐसा बल-छल रख दिया कि सब उसी के हुकुम में बँधे पड़े हैं ॥ ६ ॥ जगत में ऐसे विरले ही लोग हैं जो जाति-वर्ण से उठकर, ममता-लोभ का अन्त कर सकते हैं, ऐसे लोगों को परखकर उसने पुनः अपने भण्डार में रख लिया (अर्थात् परमगति प्रदान की) ॥ ७ ॥ हरिनाम रूपी तीर्थ में स्नान करनेवाले निर्मल होते हैं और उनकी अहंभाव की सब मैल धुल जाती है। गुरु नानक तो उन जीवों के चरण धोना अपना सौभाग्य समझते हैं, जिन्होंने गुरु के द्वारा सत्यस्वरूप परमात्मा को पा लिया है ॥ ८ ॥ ७ ॥

प्रभाती महला ३ बिभास

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ गुर परसादी वेखु तू हरि मंदरु तेरै नालि। हरि मंदरु सबदे खोजीऐ हरि नामो लेहु सम्हालि ॥ १ ॥ मन मेरे सबदि रपै रंगु होइ। सची भगति सचा हरि मंदरु प्रगटी साची सोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि मंदरु एहु सरीरु है गिआनि रतनि परगटु होइ। मनमुख मूलु न जाणनी माणसि हरि मंदरु न होइ ॥ २ ॥ हरि मंदरु हरि जीउ साजिआ रखिआ हुकमि सवारि। धुरि लेखु लिखिआ सु कमावणा कोइ न मेटणहारु ॥ ३ ॥ सबदु चीन्हि सुखु पाइआ सचै नाइ पिआर। हरिमंदरु सबदे सोहणा कंचनु कोटु अपार ॥ ४ ॥ हरिमंदरु एहु जगतु है गुर बिनु घोरंधार। दूजा भाउ करि पूजदे मनमुख अंध गवार ॥ ५ ॥ जिथै लेखा मंगीऐ तिथै देह जाति न जाइ। साचि रते से उबरे दुखीए दूजै भाइ ॥ ६ ॥ हरि मंदर महि नामु निधानु है ना बूझहि मुगध गवार। गुरपरसादी चीन्हिआ हरि राखिआ उरिधारि ॥ ७ ॥ गुर की बाणी गुर ते

जाती जि सबदि रते रंगु लाइ। पवितु पावन से जन निरमल हरि कै नामि समाइ ॥ ८ ॥ हरि मंदरु हरि का हाटु है रखिआ सबदि सवारि। तिसु विचि सउदा एकु नामु गुरमुखि लैनि सवारि ॥ ९ ॥ हरि मंदर महि मनु लोहटु है मोहिआ दूजै भाइ। पारसि भेटिऐ कंचनु भइआ कीमति कही न जाइ ॥१०॥ हरि मंदर महि हरि वसै सरब निरंतरि सोइ। नानक गुरमुखि वणजीऐ सचा सउदा होइ ॥ ११ ॥ १ ॥

गुरु-कृपा से तुम अपने ज्ञान-चक्षु खोलो और देखो कि हरि-मन्दिर तुम्हारे साथ ही है, अर्थात् प्रभु का घर तुम्हारे भीतर ही है। हरिनाम का स्मरण करते हुए गुरु के उपदेश से वह (हरि-मन्दिर) खोज लिया जा सकता है ॥ १ ॥ ऐ मेरे मन, यदि वृत्ति को शब्द द्वारा रँगा जाय, तभी रंग चढ़ता है। सच्ची भक्ति-साधना द्वारा सच्चा हरि-मन्दिर प्रकट होता है, उसी में शोभा बनती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि-प्रभु इस शरीर में ही रहता है, और ज्ञान-रत्न की चमचमाहट में दीख पड़ता है अर्थात् ज्ञानवान् जीव उसे अपने भीतर रहते हुए देख लेता है (दूसरों के लिए घोर अन्धकार है, उन्हें शरीर ही सूझ पड़ता है)। स्वेच्छाचारी जीव मूल तत्त्व को नहीं जानते और वे दावा करते हैं कि मनुष्य-शरीर में हरि-मन्दिर नहीं है ॥२॥ यह हरि-मन्दिर स्वयं परमात्मा ने बनाया और हुकुमानुसार इसे गति दी है। शुरू से ही भाग्य में जो लिखा है, उसके अनुसार सबको प्राप्त है, उसे मिटाया नहीं जा सकता ॥ ३ ॥ गुरु के शब्दों को समझकर, हरिनाम के प्यार से सुख प्राप्त हुआ। उसी शब्द की ध्वनि सुन्दर सुनहरी क़िले के रूप में हरि-मन्दिर की पहचान का स्रोत है ॥४॥ यह संसार भी हरि-मन्दिर है (प्रभु समस्त विश्व में व्याप्त है), किन्तु गुरु के बिना ज्ञानालोक न होने के कारण घोर अन्धकार चारों ओर छाया हुआ है। (उस अँधेरे में विचरते हुए) मनमुख गँवार द्वैत-भावी पूजन करते हैं (अतः प्रभु को पाने से वंचित रह जाते हैं) ॥ ५ ॥ जहाँ हमारे कर्मों का हिसाब किया जाता है, वहाँ शरीर तथा दुनिया के जाति-वर्णादि नहीं जाते। केवल सत्यस्वरूप परमात्मा से प्रेम करनेवालों की ही वहाँ गति है, द्वैत-भाव के जीव दुःखी होते हैं ॥ ६ ॥ इस शरीर रूपी हरि-मन्दिर में ही सुख-निधि हरिनाम विद्यमान रहता है, मूढ़-गँवार जीव यह नहीं जानते। गुरु की कृपा हो तो सच्ची जानकारी मिलती है और जीव परमात्मा के रूप को हृदय में धारण करता है ॥ ७ ॥ गुरु के वचनों से प्यार करनेवाले गुरु से ही इस तथ्य का ज्ञान प्राप्त करते हैं और जो पवित्र-पावन हरिनाम में लीन होते हैं, वे निर्मल हो जाते हैं ॥ ८ ॥ हरि के घर में शब्द का व्यापार होता है (यह शब्द का व्यापार-स्थल है), उसमें गुरुमुख जीव गुरु के द्वारा

हरिनाम का सौदा करते हैं ।।९।। हरि-मन्दिर के भीतर रहनेवाला मन भी जब तक द्वैत-भाव में रत रहता है, लोहे के समान व्यर्थ होता है। वही जब हरिनाम रूपी पारस का स्पर्श प्राप्त करता है, तो सोना बन जाता है, अमूल्य हो जाता है, उसका मूल्य कई गुणा बढ़ जाता है ।। १० ।। हरि-मन्दिर (शरीर) में स्वयं परमात्मा रहता है, निरन्तर सुशोभित होता है। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु के माध्यम से ही यह व्यापार सम्भव है, यही एक-मात्र सच्चा सौदा है ।। ११ ।। १ ।।

।। प्रभाती महला ३ ।। भै भाइ जागे से जन जाग्रण करहि हउमै मैलु उतारि। सदा जागहि घरु अपणा राखहि पंच तसकर काढहि मारि ।। १ ।। मन मेरे गुरमुखि नामु धिआइ। जितु मारगि हरि पाईऐ मन सेई करम कमाइ ।। १ ।। रहाउ ।। गुरमुखि सहज धुनि ऊपजै दुखु हउमै विचहु जाइ। हरिनामा हरि मनि वसै सहजे हरिगुण गाइ ।। २ ।। गुरमती मुख सोहणे हरि राखिआ उरि धारि। ऐथै ओथै सुखु घणा जपि हरि हरि उतरे पारि ।। ३ ।। हउमै विचि जाग्रणु न होवई हरि भगति न पवई थाइ। मनमुख दरि ढोई ना लहहि भाइ दूजै करम कमाइ ।। ४ ।। ध्रिगु खाणा ध्रिगु पैन्हणा जिन्हा दूजै भाइ पिआरु। बिसटा के कीड़े बिसटा राते महि जंमहि होहि खुआरु ।। ५ ।। जिन कउ सतिगुरु भेटिआ तिना विटहु बलि जाउ। तिनकी संगति मिलि रहां सचे सचि समाउ ।। ६ ।। पूरै भागि गुरु पाईऐ उपाइ कितै न पाइआ जाइ। सतिगुर ते सहजु ऊपजै हउमै सबदि जलाइ ।। ७ ।। हरि सरणाई भजु मन मेरे सभ किछु करणै जोगु। नानक नामु न वीसरै जो किछु करै सु होगु ।। ८ ।। २ ।। ७ ।। २ ।। ९ ।।

जो जीव प्रभु के भय-भाव से अहम् की मैल उतारकर जागृति प्राप्त करते हैं, वास्तव में वे ही जागते हैं। वे चिर-जाग्रत् लोग अपने घर की रक्षा करते हैं और पाँचों लुटेरों (काम-क्रोधादि) को मारकर घर से बाहर कर देते हैं ।। १ ।। हे मेरे मन, गुरु के द्वारा हरि-भजन करो; जिस रास्ते से हरि-प्रभु मिल सके, वही कर्म कमाओ ।। १ ।। रहाउ ।। गुरु के द्वारा जीव के भीतर सहजावस्था में अनाहत नाद उपजता है, मन के दुःख और अहंभाव नष्ट हो जाते हैं। हरिनाम-जाप से स्वयं परमात्मा मन में आ बसता है, जीव सहज में ही हरिगुण-गान करने लगता है ।। २ ।। गुरु के बताए मार्ग पर चलनेवाले जीव प्रभु को हृदय में धारण करते एवं

समुज्ज्वल-मुख होते हैं। उनके लिए इहलोक तथा परलोक, दोनों जगह खूब सुख मिलता है, वे हरिनाम जपते हुए ही मोक्ष को प्राप्त होते हैं ॥३॥ यदि अहम्-भाव बना रहे तो जागृति नहीं होती, न ही हरि-भक्ति को स्थान मिलता है। मनमुख द्वैत-भाव में कर्म कमाने के कारण कभी प्रभु की शरण नहीं पा सकते ॥ ४ ॥ द्वैत-भाव में प्यार रखनेवालों के खाने-पहनने को भी धिक्कार है। वे तो गंदगी के कीड़ों के समान गंदगी में ही जन्मते मरते और दुःखी होते हैं ॥ ५ ॥ जिन्हें सतिगुरु से मिलन प्राप्त होता है, मैं उन पर क़ुर्बान जाता हूँ, उनकी संगति में मिलकर रहने से मैं सत्यस्वरूप गुरु के माध्यम से सत्यस्वरूप परमात्मा में लीन हो जाता हूँ ॥ ६ ॥ गुरु सद्भाग्य से मिलता है बाहरी यत्नों से नहीं मिलता। सतिगुरु ही सहजावस्था प्रदान करता एवं शब्द द्वारा अहंभाव को जलाता है ॥ ७ ॥ ऐ मेरे मन, प्रभु की शरण लेकर हरिनाम का भजन कर, यही आद्यंत करणीय है। गुरु नानक कहते हैं कि नित्य हरिनाम-स्मरण करनेवाला जो चाहता है, वही होता है ॥ ८ ॥ २ ॥ ७ ॥ २ ॥ ९ ॥

बिभास प्रभाती महला ५ असटपदीआ

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ मात पिता भाई सुतु बनिता। चूगहि चोग अनंद सिउ जुगता। उरझि परिओ मन मीठ मुोहारा। गुन गाहक मेरे प्रान अधारा ॥ १ ॥ एकु हमारा अंतरजामी। धर एका मै टिक एकसु की सिरि साहा वडपुरखु सुआमी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ छल नागनि सिउ मेरी टूटनि होई। गुरि कहिआ इह झूठी धोहो। मुखि मीठी खाई कउराइ। अंम्रित नामि मनु रहिआ अघाइ ॥ २ ॥ लोभ मोह सिउ गई विखोटि। गुरि क्रिपालि मोहि कीनी छोटि। इह ठगवारी बहुतु घर गाले। हम गुरि राखि लीए किरपाले ॥ ३ ॥ काम क्रोध सिउ ठाटु न बनिआ। गुर उपदेसु मोहि कानी सुनिआ। जह देखउ तह महा चंडाल। राखि लीए अपुनै गुरि गोपाल ॥४॥ दस नारी मै करी दुहागनि। गुरि कहिआ एह रसहि बिखागनि। इन सनबंधी रसातलि जाइ। हम गुरि राखे हरि लिव लाइ ॥५॥ अहंमेव सिउ मसलति छोडी। गुरि कहिआ इहु मूरखु होडी। इहु नीघरु घरु कही न पाए। हम गुरि राखि लीए लिव लाए ॥ ६ ॥ इन लोगन सिउ हम भए बैराई। एक ग्रिह महि

दुइ न खटांई । आए प्रभ पहि अंचरि लागि । करहु तपावसु प्रभ सरबागि ।।७।। प्रभ हसि बोले कीए निआंएं । सगल दूत मेरी सेवा लाए । तू ठाकुरु इहु ग्रिहु सभु तेरा । कहु नानक गुरि कीआ निबेरा ।। ८ ।। १ ।।

माता, पिता, भाई, पुत्र, पत्नी, सब मिलकर संसार के भोग-विलासों का रस लेते हैं । मन इन्हीं के मीठे मोह में पड़ा हुआ है, गुणों के वास्तविक ग्राहक (सन्तजन) मेरे प्राणाधार हैं ।। १ ।। हमारे भीतर की जाननेवाला हमारा अन्तर्यामी वही एक है; उसी एक का सहारा है, उसी का आश्रय है, वह शाहों का शाह और हमारा एक-मात्र स्वामी है ।। १ ।। रहाउ ।। छल करनेवाली सर्पिणी (माया) से मेरी दोस्ती टूट गई है । गुरु ने समझाया कि यह झूठी और द्रोह करनेवाली है । ऊपर से मीठी और खाने पर (भोगने पर) कड़वी लगती है । (गुरु ने) मन को अमृत-समान हरिनाम से भरकर तृप्त कर दिया ।। २ ।। लोभ-मोह आदि से मेरा नाता टूटा । गुरु ने कृपालु होकर मुझे बचा लिया । इस ठगिनी माया ने बहुत लोगों को चकमे दिए हैं, हम तो गुरु की कृपा से बच गए हैं ।। ३ ।। काम-क्रोधादि से मेरा सुमेल नहीं हो पाया । मैंने अपने कानों से गुरु का उपदेश सुना । जिधर देखता हूँ, ये ही चाण्डाल (काम-क्रोधादि) दीख पड़ते हैं, केवल मेरे गुरु ने दया करके मेरी रक्षा कर ली है ।। ४ ।। दस इन्द्रियों को मैंने विरहिणी बना दिया है (अर्थात् उसने सम्बन्ध-विच्छेद कर लिया है), गुरु ने बताया था कि ये इन्द्रियाँ रसों और विषय-बिकारों की अग्नि के समान हैं । इनके साथ घनिष्ट सम्बन्ध रखनेवाला नरक में जाता है । हरि में रत होने के कारण गुरु ने हमारी रक्षा की है ।। ५ ।। मैंने अपने अहम्-भाव से परामर्श छोड़ दिया है, गुरु ने बताया था कि यह भाव मूर्ख और हठी है । अब यह अहम्-भाव बे-घर हो गया है, गुरु ने हमारी रक्षा कर ली है ।। ६ ।। इन लोगों (दस इन्द्रियों, काम-क्रोधादि तथा अहम्-भाव) से हम बेगाने हो गए हैं, एक घर में दो नहीं समा सकते । हम परमात्मा की शरण में आ गए हैं (प्रभु का दामन थाम लिया है), अब ऐ सर्वज्ञ प्रभु, तुम्हीं न्याय करो ।। ७ ।। प्रभु ने हँस कर कहा, तुम्हारा यही न्याय है । तुमने समस्त दूत मेरी सेवा में लगा दिए हैं । अब तुम ही इस घर के मालिक हो, (गुरु नानक कहते हैं कि) गुरु ने तुम्हारा निर्णय कर दिया है ।। ८ ।। १ ।।

।। प्रभाती महला ५ ।। मन महि क्रोधु महा अहंकारा । पूजा करहि बहुतु बिसथारा । करि इसनानु तनि चक्र बणाए । अंतर की मलु कबही न जाए ।। १ ।। इतु संजमि प्रभु किनही

न पाइआ । भगउती मुद्रा मनु मोहिआ माइआ ॥१॥रहाउ॥ पाप करहि पंचां के बसि रे । तीरथि नाइ कहहि सभि उतरे । बहुरि कमावहि होइ निसंक । जमपुरि बांधि खरे कालंक ॥२॥ घूघर बाधि बजावहि ताला । अंतरि कपटु फिरहि बेताला । बरमी मारी सापु न मूआ । प्रभु सभ किछु जानै जिनि तू कीआ ॥ ३ ॥ पूंअर ताप गेरी के बसत्रा । अपदा का मारिआ ग्रिह ते नसता । देसु छोडि परदेसहि धाइआ । पंच चंडाल नाले लै आइआ ॥ ४ ॥ कान फराइ हिराए टूका । घरि घरि मांगै त्रिपताबन ते चूका । बनिता छोडि बद नदरि परनारी । वेसि न पाईऐ महा दुखिआरी ॥ ५ ॥ बोलै नाही होइ बैठा मोनी । अंतरि कलप भवाईऐ जोनी । अंन ते रहता दुखु देही सहता । हुकमु न बूझै विआपिआ ममता ॥६॥ बिनु सतिगुर किनै न पाई परमगते । पूछहु सगल बेद सिम्रते । मनमुख करम करै अजाई । जिउ बालू घर ठउर न ठाई ॥७॥ जिसनो भए गुोबिंद दइआला । गुर का बचनु तिनि बाधिओ पाला । कोटि मधे कोई संतु दिखाइआ । नानकु तिनकै संगि तराइआ ॥ ८ ॥ जे होवै भागु ता दरसनु पाईऐ । आपि तरै सभु कुटंबु तराईऐ ॥ १ ॥ रहाउ दूजा ॥ २ ॥

जिस जीव के मन में क्रोध और अहंकार बना रहता है और (ऊपर से दिखावे की) वह लम्बी पूजा-आरतियाँ करता फिरता है । स्नान-ध्यान करके, शरीर पर तरह-तरह के लेप करता है, किन्तु इससे मन के भीतर की मैल नहीं जाती ॥ १ ॥ इस तरीक़े से किसी को प्रभु नहीं प्राप्त होता । ऊपर भगवती के चिह्न लगा लिये हैं, मन माया द्वारा मोहित है (फिर परमात्मा कैसे मिले ?) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काम-क्रोधादि पाँचों के वश होकर जीव नित्य पाप कमाता है और तीर्थ-स्नान करके सबको उतर गया मान लेता है और फिर निर्भय होकर और अधिक पाप करता है । अन्ततः इन्हीं पापों के कारण बाँधकर यमपुरी ले जाया जाता है ॥ २ ॥ पैरों में घुँघरू बाँधकर ताल देता है, मन के भीतर छल-कपट बिना ताल के ही बजते रहते हैं । बाहर से साँप के छिद्र पर डण्डे मारते रहने से तो साँप नहीं मरता । जो कुछ तुम करते हो, प्रभु सब कुछ जानता है ॥ ३ ॥ धूनी तपना, गेरुए वस्त्र पहनना तो विपत्ति के मारे घर से भागकर शान्ति-स्थल की खोज का प्रयास है । देस छोड़कर

परदेस चला, तो भी पाँचों (काम-क्रोधादि) को साथ लिये चलता है (फिर भला शान्ति कैसे हो) ॥४॥ कान फड़वाकर (योगी बनकर) भी बेगाने टुकड़ों की ओर ताकता है (दूसरों से भिक्षा चाहता है); घर-घर माँगता फिरता और तृप्ति से वंचित रहता है। अपनी पत्नी को छोड़कर पराई स्त्रियों पर बुरी नज़र रखता है। इस प्रकार वेषाडम्बर करने से परमात्मा नहीं मिलता, बल्कि दुःख होता है ॥ ५ ॥ मौनी बनकर बैठ जाता है, बोलता ही नहीं। मन में दुविधा के कारण जन्म-मरण के चक्र में पड़ता है। व्रत-उपवास करता है, शरीर पर दुःख सहन करता है। ममता में डूबा प्रभु के हुकुम को नहीं पहचानता ॥ ६ ॥ सतिगुरु के बिना किसी को कभी परमगति नहीं मिलती। चाहे सब वेदों-स्मृतियों की साक्षी लेकर देख लो। मनमुखी कर्म व्यर्थ होते हैं, जैसे रेत के घर का कोई आधार ही नहीं होता ॥ ७ ॥ जिस पर परमात्मा की दया हो जाती है और जो गुरु-वचनों को पल्ले बाँध लेता है। ऐसा सन्त करोड़ों में कोई एक होता है। गुरु नानक कहते हैं कि उसी की संगति में भवसागर से पार हुआ जायगा ॥ ८ ॥ यदि भाग्य उत्तम हो तो प्रभु का दर्शन होता है और जीव स्वयं तो पार होता ही है, समूचे कुटुम्ब को भी पार लगाता है ॥ १ ॥ रहाउ दूजा ॥ २ ॥

॥ प्रभाती महला ५ ॥ सिमरत नामु किलबिख सभि काटे। धरमराइ के कागर फाटे। साधसंगति मिलि हरि रसु पाइआ। पारब्रहमु रिद माहि समाइआ ॥ १ ॥ राम रमत हरि हरि सुखु पाइआ। तेरे दास चरन सरनाइआ ॥१॥रहाउ॥ चूका गउणु मिटिआ अंधिआरु। गुरि दिखलाइआ मुकति दुआरु। हरि प्रेम भगति मनु तनु सद राता। प्रभू जनाइआ तब ही जाता ॥ २ ॥ घटि घटि अंतरि रविआ सोइ। तिसु बिनु बीजो नाही कोइ। बैर बिरोध छेदे भै भरमां। प्रभि पुंनि आतमै कीने धरमा ॥ ३ ॥ महा तरंग ते कांढै लागा। जनम जनम का टूटा गांढा। जपु तपु संजमु नामु सम्हालिआ। अपुनै ठाकुरि नदरि निहालिआ ॥ ४ ॥ मंगल सूख कलिआण तिथाईं। जह सेवक गोपाल गुसाईं। प्रभ सुप्रसंन भए गोपाल। जनम जनम के मिटे बिताल ॥ ५ ॥ होम जग उरध तप पूजा। कोटि तीरथ इसनानु करीजा। चरन कमल निमख रिदै धारे। गोबिंद जपत सभि कारज सारे ॥ ६ ॥ ऊचे ते ऊचा प्रभ थानु। हरिजन लावहि सहजि धिआनु। दास दासन की

बांछउ धूरि। सरब कला प्रीतम भरपूरि ॥ ७ ॥ मात पिता हरि प्रीतमु नेरा। मीत साजन भरवासा तेरा। करु गहि लीने अपुने दास। जपि जीवै नानकु गुणतास ॥ ८ ॥ ३ ॥

हरिनाम के स्मरण से सब पाप धुल जाते हैं। धर्मराज के द्वारा तैयार किए गए बुरे कर्मों का हिसाब-किताब फाड़ दिया जाता है। साधु-जनों की संगति में बैठकर हरिनाम-रस का पान किया तो परब्रह्म परमेश्वर स्वयं हृदय में आकर बस गया ॥ १ ॥ प्रभु-नाम के स्मरण से परमसुख मिला और तुम्हारा यह दास तुम्हारी चरण-शरण में आ गया ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरा भटकना चुक गया, अज्ञानान्धकार नष्ट हो गया। गुरु ने मुक्ति का द्वार दिखला दिया। मन-तन सदा हरि के प्रेम और भक्ति में रत हुआ है; किन्तु यह सब जानकारी तभी मिली जब प्रभु ने इच्छा से यह ज्ञान दिया ॥ २ ॥ वह परमात्मा सर्व-व्यापक है, उसके अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं। उसने भय, विरोध और भ्रमों को दूर किया है। सबके शुभ-चिन्तक परमात्मा ने अपने विरद का पालन किया है ॥ ३ ॥ भवसागर की भयंकर तरंगों से किनारे लगाया है, जन्म-जन्म के बन्धन टूट गए हैं। हरिनाम का स्मरण ही जप-तप-संयम बन गया है। अपने स्वामी ने कृपा की दृष्टि दी है ॥ ४ ॥ कल्याण, आनन्द और प्रसन्नता वहीं रहती है, जहाँ परमात्मा की सेवा होती है। परमात्मा के प्रसन्न होते ही जन्म-जन्मान्तर के दुःख-क्लेश नष्ट हो गए हैं ॥ ५ ॥ होम, यज्ञ, ऊर्ध्व स्थिति में तपस्या एवं पूजन करो, करोड़ों तीर्थों में स्नान कर लो (तो भी व्यर्थ है, किन्तु) क्षण-भर के लिए भी जो परमात्मा के चरण-कमल को हृदय में धारण करता है, प्रभु का नाम लेते-लेते ही उसके सब कार्य सम्पन्न हो जाते हैं ॥ ६ ॥ परमात्मा का स्थान ऊँचे से ऊँचा है, हरिजन वहीं सहज-ध्यान लगाते हैं। मैं ऐसे हरिजनों के सेवकों की भी चरण-धूलि चाहता हूँ, मेरा प्रियतम सर्वकलासम्पन्न है। (उसकी दया वांछित है।) ॥ ७ ॥ हे मेरे स्वामी, तुम्हीं माता-पिता की तरह मेरे समीप हो; मित्र-साजन की तरह मुझे तुम्हारा ही भरोसा है। गुरु नानक कहते हैं कि कृपा करके मेरा हाथ थामकर अपनी सेवा में अपना लो, मैं तो गुणागार प्रभु को जपकर ही जीवित हूँ ॥ ८ ॥ ३ ॥

बिभास प्रभाती बाणी भगत कबीर जी की

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ मरन जीवन की संका नासी। आपन रंगि सहज परगासी ॥ १ ॥ प्रगटी जोति मिटिआ अंधिआरा। राम रतनु पाइआ करत बीचारा ॥ १ ॥ रहाउ ॥

जह अनंदु दुखु दूरि पइआना। मनु मानकु लिव ततु लुकाना ।। २ ।। जो किछु होआ सु तेरा भाणा। जो इव बूझै सु सहजि समाणा ।। ३ ।। कहतु कबीरु किलबिख गए खीणा। मनु भइआ जगजीवन लीणा ।। ४ ।। १ ।।

सहज रूपी प्रभु अपनी मौज में प्रकट हुआ तो जीवन-मरण की सब शंकाएँ नष्ट हो गईं ।। १ ।। प्रकाश की ज्योति मिल गई, अन्धकार नष्ट हुआ। विचार करते-करते (ज्ञानार्जन करने से) राम-नाम रूपी अनमोल वस्तु प्राप्त हो गई ।। १ ।। रहाउ ।। जहाँ आनन्द उपजता है, वहाँ दुःख दूर हो जाते हैं और मन-माणिक्य उस वास्तव (प्रभु) की प्रीति में जुड़ जाता है ।। २ ।। (इस बीच) जो भी हुआ, वह प्रभु-इच्छा ही थी; जो यह तथ्य समझ लेते हैं, वे सहजावस्था में लीन हो जाते हैं ।। ३ ।। कबीरजी कहते हैं, (तब) सब पापों का क्षय होता है एवं मन जग-जीवन (प्रभु) में लीन हो जाता है ।। ४ ।। १ ।।

।। प्रभाती ।। अलहु एकु मसीति बसतु है अवरु मुलखु किसु केरा। हिंदू मूरति नाम निवासी दुहु महि ततु न हेरा ।। १ ।। अलह राम जीवउ तेरे नाई। तू करि मिहरामति साई ।। १ ।। रहाउ ।। दखन देस हरी का बासा पछिमि अलह मुकामा। दिल महि खोजि दिलै दिलि खोजहु एही ठउर मुकामा ।। २ ।। ब्रहमन गिआस करहि चउबीसा काजी मह रमजाना। गिआरह मास पास कै राखे एकै माहि निधाना ।।३।। कहा उडीसे मजनु कीआ किआ मसीति सिरु नांए। दिल महि कपटु निवाज गुजारै किआ हज काबै जांएं ।। ४ ।। एते अउरत मरदा साजे ए सभ रूप तुम्हारे। कबीरु पूंगरा राम अलह का सभ गुर पीर हमारे ।। ५ ।। कहतु कबीरु सुनहु नर नरवै परहु एक की सरना। केवल नामु जपहु रे प्रानी तब ही निहचै तरना ।। ६ ।। २ ।।

(यदि) अल्लाह केवल मस्जिद में ही रहता है, तो शेष देश किसका है ? हिन्दुओं की दृष्टि में हरिनाम मूर्ति में बसता है; दोनों ने तत्त्व को नहीं समझा ।। १ ।। हे अल्लाह, हे राम, मैं तो तुम्हारे नाम के भरोसे ही जीता हूँ। हे स्वामी, तुम कृपा करो ।। १ ।। रहाउ ।। हिन्दू-दृष्टि-कोणानुसार परमात्मा का निवास दक्षिण (वाराणसी से दक्षिण में जगन्नाथ-पुरी पड़ता है) में है, मुसलमान उसे पश्चिम का वासी मानते हैं। दिल में खोजो, दिल ही दिल में देखो, वही उसका वास्तविक मुक़ाम है ।। २ ।।

ब्राह्मण एकादशी के चौबीस व्रत (साल में चौबीस एकादशियाँ होती हैं) करता है, क़ाज़ी रमज़ान का महीना उपवास करता है। अन्य ग्यारह माह एक ओर हटाकर सुख-निधि परमात्मा को पाने का यही एक महीने का समय उपयुक्त समझते हैं ।। ३ ।। उड़ीसा में (जगन्नाथपुरी) जाकर स्नान कर लेने या मस्जिद में सिर झुका लेने से क्या होता है, यदि दिल में कपट बना हुआ हो तो नमाज़ पढ़ने और हज्ज-क़ाबे जाने से भी क्या होता है ? ।। ४ ।। जितने स्त्रियाँ-पुरुष बनाए हैं, वे सब तुम्हारे रूप हैं। कबीर तो राम-अल्लाह का पुत्र (का अंश) है, सब गुरु-पीर उसे अपने ही प्रतीत होते हैं ।। ५ ।। कबीरजी कहते हैं कि ऐ स्त्री-पुरुषो, सुनो, केवल एक परमात्मा की शरण लो। हे प्राणी, एकमात्र हरिनाम का जाप करो, उसी में निश्चित मोक्ष है ।। ६ ।। २ ।।

।। प्रभाती ।। अवलि अलह नूरु उपाइआ कुदरति के सभ बंदे। एक नूर ते सभु जगु उपजिआ कउन भले को मंदे ।।१।। लोगा भरमि न भूलहु भाई। खालिकु खलक खलक महि खालिकु पूरि रहिओ स्रब ठांई ।। १ ।। रहाउ ।। माटी एक अनेक भांति करि साजी साजनहारै। ना कछु पोच माटी के भांडे ना कछु पोच कुंभारै ।। २ ।। सभ महि सचा एको सोई तिस का कीआ सभु कछु होई। हुकमु पछानै सु एको जानै बंदा कहीऐ सोई ।। ३ ।। अलहु अलखु न जाई लखिआ गुरि गुड़ु दीना मीठा। कहि कबीर मेरी संका नासी सरब निरंजनु डीठा ।। ४ ।। ३ ।।

परमात्मा ने सर्वप्रथम ज्योति पैदा की और फिर उसी की क़ुदरत ने सब जीवधारियों को जन्म दिया। सारा संसार उसी एक ज्योति से पैदा हुआ, फिर भला किन्हें भला कहा जाय और किसे बुरा कहें ? ।। १ ।। ऐ लोगो, भ्रम में न भटको, रचयिता अपनी रचना में (सृष्टि का कर्ता सृष्टि में) मौजूद है और रचना उसी रचयिता से उपजी है (अर्थात् रचना और रचनाकार तद्वत् एक-दूसरे से भिन्न नहीं हैं) और वही सर्व-व्यापक है (सब जगह विद्यमान है) ।। १ ।। रहाउ ।। मिट्टी (आधार-सामग्री) तो एक ही है, किन्तु स्रष्टा ने अनेक प्रकार के रूपाकार देकर इसको सर्जित किया है। इसमें न तो मिट्टी के बर्तन (मनुष्याकार) का दोष है, न उसके स्रष्टा का दोष है ।। २ ।। सबमें स्रष्टा का सतत्व मौजूद है, उसी का किया सब कुछ होता है। जो उसके हुकुम को पहचानता और एकमात्र उसी सत्ता में विश्वास रखता है, वही सही अर्थों में बंदा है ।। ३ ।। अल्लाह (स्रष्टा) अदृश्य है, देखा नहीं जा सकता। मुझे गुरु ने उस

गुड़ के अनूठे रस की अनुभूति दी है (अर्थात् मुझ गूँगे को गुरु ने गुड़ दिया है, मुझे मीठा तो लगता है, किन्तु मैं उस मिठास का वर्णन नहीं कर सकता)। कबीरजी कहते हैं कि (इसी से) मेरी सब शंकाएँ दूर हो गई हैं, मैंने उस मायातीत सर्व-स्रष्टा को (देख लिया) अनुभव कर लिया है ॥ ४ ॥ ३ ॥

॥ प्रभाती ॥ बेद कतेब कहहु मत झूठे झूठा जो न बिचारै । जउ सभ महि एकु खुदाइ कहत हउ तउ किउ मुरगी मारै ॥ १ ॥ मुलां कहहु निआउ खुदाई । तेरे मन का भरमु न जाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पकरि जीउ आनिआ देह बिनासी माटी कउ बिसमिलि कीआ । जोति सरूप अनाहत लागी कहु हलालु किआ कीआ ॥ २ ॥ किआ उजू पाकु कीआ मुहु धोइआ किआ मसीति सिरु लाइआ । जउ दिल महि कपटु निवाज गुजारहु किआ हज काबै जाइआ ॥ ३ ॥ तूं नापाकु पाकु नही सूझिआ तिस का मरमु न जानिआ । कहि कबीर भिसति ते चूका दोजक सिउ मनु मानिआ ॥ ४ ॥ ४ ॥

वेदों या क़ुर्आन को मिथ्या मत कहो, मिथ्या तो वह है जो इन पर विचार नहीं करता। जब सबमें एक ख़ुदा होने का दावा करते हो, तो मुर्ग़ी-मुर्ग़ा क्यों मारते हो ? (क्या उसमें ख़ुदा नहीं ?) ॥ १ ॥ ऐ मुल्ला, बताओ, क्या यह ख़ुदा का न्याय है ? तुम्हारे मन का यह भ्रम तो अब तक दूर नहीं हुआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जीव पकड़कर लाया गया, शरीर नष्ट हो गया, मिट्टी को रौंद डाला गया। उसकी ज्योति अमर प्रभु में मिल जाती है, फिर भला हलाल कौन-सी चीज़ हुई ? ॥ २ ॥ फिर वज़ू करना क्या, पवित्र होना क्या, मुँह धोया या मस्जिद में शीश नवाना क्या ? यदि दिल में कपट हो तो नमाज़ पढ़ने या हज्ज-क़ाबा जाने का भी क्या ? (लाभ ?) ॥ ३ ॥ तुम अपवित्र हो, परमपवित्र प्रभु को नहीं पहचान सके, उसका भेद नहीं समझे। कबीरजी कहते हैं कि इसीलिए तुम स्वर्ग से रह गए, नरक में ही पड़े सड़ते रहे ॥ ४ ॥ ४ ॥

॥ प्रभाती ॥ सुंन संधिआ तेरी देव देवा कर अधपति आदि समाई । सिध समाधि अंतु नही पाइआ लागि रहे सरनाई ॥ १ ॥ लेहु आरती हो पुरख निरंजनु सतिगुर पूजहु भाई । ठाढा ब्रहमा निगम बीचारै अलखु न लखिआ जाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ततु तेलु नामु कीआ बाती दीपकु देह उज्यारा । जोति लाइ जगदीस जगाइआ बूझै बूझनहारा ॥ २ ॥

पंचे सबद अनाहद बाजे संगे सारिंगपानी । कबीर दास तेरी आरती कीनी निरंकार निरबानी ॥ ३ ॥ ५ ॥

हे देवाधिदेव, हे स्वामी, हे आदि सर्व-व्यापक प्रभु, तुम्हारा पूजन शून्य में समाधिस्थ हो जाने में है। सिद्धि की साधना में भी प्रभु का रहस्य नहीं जाना जाता, अतः उसकी शरण में बने रहना ही उचित है ॥१॥ हे भाई, निरंजन की आरती इसी में है कि तुम सतिगुरु की पूजा करो। ब्रह्मा खड़ा वेद-विचार करता है, किन्तु अलक्ष्य परमात्मा उसे भी दृश्यमान नहीं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ज्ञान का तेल डालकर यदि हरिनाम की बाती का दीपक जलाया जाय तो शरीर में प्रभु का प्रकाश होता है। उसमें प्रभु की लौ की ज्योति उमगती है, यह तत्त्व कोई ज्ञानवान् ही जानता है ॥ २ ॥ परमात्मा के सम्पर्क में पाँचों संगीतमय वादन बने, अनाहत ध्वनि छा गई। कबीरजी कहते हैं कि ऐ मायातीत निर्वाण-दाता प्रभु, इसी में तुम्हारी परम आरती निहित है ॥ ३ ॥ ५ ॥

प्रभाती बाणी भगत नामदेव जी की

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ मन की बिरथा मनु ही जानै कै बूझल आगै कहीऐ। अंतरजामी रामु रवांई मै डरु कैसे चहीऐ ॥ १ ॥ बेधीअले गोपाल गोुसाई। मेरा प्रभु रविआ सरबे ठाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मानै हाटु मानै पाटु मानै है पासारी। मानै बासै नाना भेदी भरमतु है संसारी ॥२॥ गुर कै सबदि एहु मनु राता दुबिधा सहजि समाणी। सभो हुकमु हुकमु है आपे निरभउ समतु बीचारी ॥ ३ ॥ जो जन जानि भजहि पुरखोतमु ताची अबिगतु बाणी। नामा कहै जगजीवनु पाइआ हिरदै अलख बिडाणी ॥ ४ ॥ १ ॥

मन की व्यथा या तो मन जानता है, या किसी जानकार (परमात्मा) के आगे कही जा सकती है। मैं अन्तर्यामी परमात्मा का नाम जपता हूँ, मुझे डरना क्यों चाहिए ? (अर्थात् मुझे क्या डर है ?) ॥ १ ॥ मुझे सर्व-व्यापक गोपाल (सृष्टि के पालक) ने बींध रखा है। मेरा प्रभु सर्वदा सब जगह रमण करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मन ही दूकान है, मन ही नगर है, मन का ही सब प्रसार है। मन ही कई रंगों में रहता और संसार में इधर-उधर भटकता है ॥ २ ॥ जब यह मन गुरु के उपदेशों में रम जाता है, तो सहज में ही दुविधा चुक जाती है। (ऐसे व्यक्ति को) सब ओर हुकुम ही दीख पड़ता है और वह निर्भय प्रभु को एक समान

समझता है ॥ ३ ॥ जो लोग उत्तम पुरुष परमात्मा की सविवेक आराधना करते हैं, उनकी वाणी अटल होती है। नामदेवजी कहते हैं कि वे हृदय में आश्चर्य-रूप अदृश्य जग-जीवन प्रभु को धारण करते हैं ॥ ४ ॥ १ ॥

॥ प्रभाती ॥ आदि जुगादि जुगादि जुगो जुगु ताका अंतु न जानिआ । सरब निरंतरि रामु रहिआ रवि ऐसा रूपु बखानिआ ॥ १ ॥ गोबिदु गाजै सबदु बाजै । आनद रूपी मेरो रामईआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बावन बीखू बानै बीखे बासु ते सुख लागिला । सरबे आदि परमलादि कासट चंदनु भैइला ॥ २ ॥ तुम्ह चे पारसु हम चे लोहा संगे कंचनु भैइला । तू दइआलु रतनु लालु नामा साचि समाइला ॥ ३ ॥ २ ॥

परमात्मा आदि-अनादि है, युग-युग से उसकी जानकारी है, फिर भी कोई उसका ठीक रहस्य नहीं जानता। सबके भीतर वह व्याप्त है, यही रूप उसका कहा गया है ॥ १ ॥ परमात्मा हुकुम के माध्यम से प्रकट हो रहा है, वह मेरा राम परमानन्द-रूप है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चन्दन का पेड़ बन में होता है, किन्तु उसकी सुगन्धि का सुख सबको मिलता है। परमात्मा सबका आदि है, सुगन्धित लकड़ी (चन्दन) का कारण भी वही है, अर्थात् वही सुगंधि का मूल है (सबको सुगंधि प्रदान करता है) ॥२॥ तुम पारस हो, मैं लोहा हूँ, किन्तु तुम्हारे सम्पर्क में वह कंचन हो जाता है। हे दयालु प्रभु, तुम अमूल्य माणिक्य हो, नामदेव नित्य तुम्हारा ही स्मरण करता है ॥ ३ ॥ २ ॥

॥ प्रभाती ॥ अकुल पुरख इकु चलितु उपाइआ । घटि घटि अंतरि ब्रहमु लुकाइआ ॥ १ ॥ जीअ की जोति न जानै कोई । तै मै कीआ सु मालूमु होई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिउ प्रगासिआ माटी कुंभेउ । आप ही करता बीठुलु देउ ॥ २ ॥ जीअ का बंधनु करमु बिआपै । जो किछु कीआ सु आपै आपै ॥ ३ ॥ प्रणवति नामदेउ इहु जीउ चितवै सु लहै । अमरु होइ सद आकुल रहै ॥ ४ ॥ ३ ॥

कुल-रहित परमपुरुष ने एक लीला रचाई। प्रत्येक शरीर में ब्रह्म-तत्त्व को छिपाकर रख दिया ॥ १ ॥ वह तत्त्व हमारे प्राणों की ज्योति है, किन्तु कोई उसे पहचानता नहीं, (इसके विपरीत) जो हम लोग करते हैं, वह उसे पता चलता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जैसे मिट्टी से घड़ा बनता है (घड़े में मिट्टी स्पष्ट प्रकट है), वैसे ही हरि से सब कुछ बनता है, वही

भिन्न रूपों में दृश्यमान है ॥ २ ॥ कर्म जीवों के बंधन हैं (इनसे मुक्ति पा सकना जीवों के वश में नहीं), किन्तु ये भी तो वह स्वयं करवाता है ॥ ३ ॥ नामदेवजी कहते हैं कि जीव की जो भावना होती है, वैसा ही फल वह पाता है। यदि वह कुल-रहित परमात्मा में लीन रहे तो अमर हो जाता है ॥ ४ ॥ ३ ॥

प्रभाती भगत बेणी जी की

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ तनि चंदनु मसतकि पाती। रिद अंतरि कर तल काती। ठग दिसटि बगा लिव लागा। देखि बैसनो प्रानमुख भागा ॥ १ ॥ कलि भगवत बंद चिरांमं। क्रूर दिसटि रता निसि बादं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नित प्रति इसनानु सरीरं। दुइ धोती करम मुखि खीरं। रिदै छुरी संधि आनी। परदरबु हिरन की बानी ॥ २ ॥ सिल पूजसि चक्र गणेसं। निसि जागसि भगति प्रवेसं। पग नाचसि चितु अकरमं। ए लंपट नाच अधरमं ॥ ३ ॥ म्रिग आसणु तुलसी माला। कर ऊजल तिलकु कपाला। रिदै कूडु कंठि रुद्राखं। रे लंपट क्रिसनु अभाखं ॥ ४ ॥ जिनि आतम ततु न चीनिआ। सभ फोकट धरम अबीनिआ। कहु बेणी गुरमुखि धिआवै। बिनु सतिगुर बाट न पावै ॥ ५ ॥ १ ॥

शरीर पर चन्दन लिपा है, माथे पर पत्रांकन है, किन्तु हृदय में हाथ में पकड़ी छुरी के समान काटने की भावनाएँ हैं। ठगों-जैसी दृष्टि और बगुले-जैसा कपटमय ध्यान लगा है। ऐसा वैष्णव देखकर लगता है जैसे मुंह से श्वास निकल गए हों ॥ १ ॥ ऐसा सुन्दर भक्त लम्बे समय तक वंदना में झुका रहता है, किन्तु दृष्टि क्रूर है और नित्य वाद-विवाद में रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नित्यप्रति शरीर से स्नान करता है, दो धोतियाँ बाँधता, कर्म-काण्ड करता एवं दूध-फल का आहार करता है। मन में छुरी खिची रहती है और पराया धन चुराने की बान है ॥ २ ॥ मूर्ति-पूजा करता, गणेश के चक्र-चिह्न लगाता एवं रात-भर भक्ति के बहाने जागता है, किन्तु बुरे मार्ग पर चलते एवं चित्त कुकर्मों में रमा रहता है। ऐ लोभी, तू इस प्रकार अधर्म करता है ॥३॥ मृगछाला पर आसन लगाता, तुलसी-माला धारण करता है, उज्ज्वल हाथों से माथे पर तिलक लगाता है। हृदय में दुर्भावनाएँ तथा गले में रुद्राक्ष पहनता है। ऐ लंपट, तुम कृष्ण-कृष्ण उच्चारने का मिथ्या दावा करते हो ॥ ४ ॥

जिसने आतम-तत्त्व नहीं पहचाना, उसके सब कर्म-धर्म अंधे हैं। बेणीजी कहते हैं कि जो गुरु के द्वारा परमात्मा का ध्यान करता है (वही राह पाता है), बिना सतिगुरु कोई सही रास्ते पर नहीं लगता ।। ५ ।। १ ।।

१ ओं सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ।।

रागु जैजावंती महला ९

राम सिमर राम सिमर इहै तेरै काजि है। माइआ को संगु तिआगि प्रभ जू की सरनि लाग। जगत सुख मानु मिथिआ झूठो सभ साजु है ।। १ ।। रहाउ ।। सुपने जिउ धनु पछानु। काहे पर करत मानु। बारू की भीति जैसे बसुधा को राजु है ।।१।। नानक जन कहत बात बिनसि जै है तेरो गात। छिनु छिनु करि गइओ कालु तैसे जातु आजु है।। २ ।। १ ।।

ऐ जीव, प्रभु-नाम का स्मरण कर, तुम्हारे लिए यही करणीय (करने योग्य कार्य) है। माया की संगति (विकार-युक्त कार्यों की तल्लीनता) त्यागकर परमात्मा की शरण लो। सांसारिक सुखों को मिथ्या मानो, दुनिया की सब शान-शौकत झूठी समझो ।।१।।रहाउ।। ऐश्वर्य स्वप्नवत् उपलब्धि है, घमण्ड किस बात पर करें; धरती की सम्पन्नता बालू की भीति (रेत की दीवार) जैसी है। (कभी भी ढह सकती है) ।। १ ।। गुरु नानक कहते हैं कि ऐ जीव, बात कहते-कहते तुम्हारा शरीर नष्ट हो जायगा। क्षण-क्षण करके जैसे कल का समय बीत गया, वैसे ही आज बीत रहा है (अर्थात् सारी आयु यों ही कट जाती है, सांसारिक धन-दौलत को छोड़कर प्रभु-नाम का स्मरण करो) ।। २ ।। १ ।।

।। जैजावंती महला ९ ।। राम भजु राम भजु जनमु सिरातु है। कहउ कहा बार बार समझत नह किउ गवार। बिनसत नहलगै बार ओरे सम गात है ।।१।।रहाउ।। सगल भरम डारि देह गोबिंद को नामु लेह। अंति बार संगि तेरै इहै एकु जातु है ।।१।। बिखिआ बिख जिउ बिसारि प्रभ को जसु हीए धार। नानक जन कहि पुकार अउसरु बिहातु है।। २ ।। २ ।।

ऐ मनुष्य, तुम्हारा जन्म बीत रहा है, प्रभु-भजन कर लो। बार-बार क्या कहूँ, गँवार समझता क्यों नहीं ? (इस नश्वर शरीर को) नाश होते विलम्ब नहीं लगता, यह शरीर तो ओले के समान है, जो थोड़ी ही देर में पिघल जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ समस्त भ्रमों का त्याग कर परमात्मा का नाम जपो, अन्तिम समय यही एक उपलब्धि तुम्हारे साथ जाती है ॥ १ ॥ विषय-विकारों से भरपूर माया को विष के समान त्यागकर प्रभु की कीर्ति को हृदय में धारण करो। दास नानक पुकारकर कहते हैं कि अवसर जा रहा है (चूकने मत दो) ॥ २ ॥ २ ॥

॥ जैजावंती महला ९ ॥ रे मन कउन गति होइ है तेरी। इह जग मै राम नामु सो तउ नही सुनिओ कान। बिखिअन सिउ अति लुभान मति नाहिन फेरी ॥१॥रहाउ॥ मानस को जनमु लीन सिमरनु नह निमख कीन। दारा सुख भइओ दीन पगहु परी बेरी ॥ १ ॥ नानक जन कहि पुकारि सुपनै जिउ जगु पसारि। सिमरत नहि किउ मुरारि माइआ जाकी चेरी ॥२॥३॥

ऐ मन, तुम्हारी क्या दशा होगी ? संसार में प्रभु-नाम को तुम नहीं सुनते, उस पर कान नहीं धरते। संसार के विषय-विकारों में लोभायमान हो, इनसे अपनी बुद्धि को विमुख नहीं किया ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनुष्य-जन्म में अवतरित होकर भी, क्षण-भर के लिए तुमने प्रभु-स्मरण नहीं किया। स्त्री-पुत्र के सुखों के लिए तुमने दासता स्वीकार कर रखी है, पाँव में दुनियादारी की बेड़ी पड़ गयी है ॥ १ ॥ दास नानक पुकारकर कहते हैं कि इस संसार का समूचा प्रसार स्वप्नवत् है (माया है); किन्तु उस परमात्मा का सिमरन नहीं किया, माया भी जिसकी दासी है ॥२॥३॥

॥ जैजावंती महला ९ ॥ बीत जैहै बीत जैहै जनमु अकाज रे। निस दिन सुन कै पुरान। समझत नह रे अजान। कालु तउ पहूचिओ आनि कहा जैहै भाजि रे ॥१॥रहाउ॥ असथिरु जो मानिओ देह सो तउ तेरउ होइ है खेह। किउ न हरि को नामु लेह मूरख निलाज रे ॥ १ ॥ राम भगति हीए आनि छाडि दे तै मन को मानु। नानक जन इह बखान जग मै बिराजु रे ॥२॥४॥

ऐ मनुष्य, तुम्हारा मानव-जन्म व्यर्थ (निरर्थक) बीत जायगा। रात-दिन धर्म-ग्रंथों की कथाएँ सुनकर भी ऐ मूर्ख, तुम नहीं समझ सके। मौत तो अब आ पहुँची है, उससे बचकर कहाँ भाग जाओगे ? ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस काया को तुम स्थायी मानते हो, वह तुम्हारा शरीर तो मिट्टी हो जायगा। ऐसे में ऐ मूर्ख, निर्लज्ज, क्यों प्रभु का नाम नहीं

लेते ? ॥ १ ॥ अतः ऐ भले जीव, हृदय में राम-भक्ति दृढ़ करके तुम मन के मान (गर्व) को त्याग दो। दास नानक कहते हैं कि इस प्रकार से (गर्व छोड़— भक्ति बना) जगत में जीवन जिओ ॥ २ ॥ ४ ॥

१ ओं सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥

सलोक सहसक्रिती महला १

पढ़ि पुस्तक संधिआ बादं। सिल पूजसि बगुल समाधं। मुखि झूठु बिभूखन सारं। त्रै पाल तिहाल बिचारं। गलि माला तिलक लिलाटं। दुइ धोती बसत्र कपाटं। जो जानसि ब्रहमं करमं। सभ फोकट निसचै करमं। कहु नानक निसचौ धिआवै। बिनु सतिगुर बाट न पावै ॥१॥ निहफलं तस्य जनमस्य जावद ब्रहम न बिंदते। सागरं संसारस्य गुरपरसादी तरहि के। करणकारण समरथु है कहु नानक बीचारि। कारणु करते वसि है जिनि कल रखी धारि ॥२॥ जोग सबदं गिआन सबदं बेद सबदं त ब्राहमणह। ख्यत्री सबदं सूर सबदं सूद्र सबदं पराक्रितह। सरब सबद त एक सबदं जेको जानसि भेउ। नानक ताको दासु है सोई निरंजन देउ ॥३॥ एक क्रिस्नं त सरबदेवा देव देवा त आतमह। आतमं स्त्री बास्व देवस्य जे कोई जानसि भेव। नानक ताको दासु है सोई निरंजन देव ॥ ४ ॥

(जीवन में व्यर्थ का कर्म-काण्ड सहायक नहीं होता। ऊँची जाति कहलानेवाले लोग) शास्त्र पढ़ते, सन्ध्या-वंदन करते और परस्पर शास्त्रार्थ में उलझते हैं। पत्थरों की पूजा करते और बगुले की नाईं ध्यान लगाते हैं। मुँह से झूठ बोलते और लोहे को कंचन के आभूषण बताते हैं। दिन में तीन बार गायत्री पर विचार (का जाप) करते हैं। गले में मालाएँ और माथे पर तिलक धारण करते हैं। दुहरी धोती पहनते और शीश पर भी वस्त्र रखते हैं। यदि वे ब्रह्म के आचरण को जानते-समझते तो उन्हें अपने व्यर्थ के कर्म असार दिखते। गुरु नानक कहते हैं कि जीव को निश्चयपूर्वक प्रभु-भजन करना अपेक्षित है। सतिगुरु द्वारा पथ-प्रदर्शन के बिना सही मार्ग नहीं मिलता ॥ १ ॥ जब तक जीव ब्रह्म को

नहीं पहचानता, उसकी वंदना नहीं करता, उसका जन्म निष्फल होता है। इस संसार-सागर को कोई विरला ही गुरु की कृपा से पार करता है। गुरु नानक विचार-पूर्वक कहते हैं कि प्रभु सब कुछ करने-कराने में समर्थ है। संसार के समस्त कारण उस कर्ता-पुरुष (वाहिगुरु) के वश में हैं, जिसने समस्त शक्तियों को धारण कर रखा है ॥ २ ॥ योगी ज्ञान की पद्धति अपनाते हैं, ब्राह्मणों की पद्धति वेदों का पढ़ना-पढ़ाना है। क्षत्रियों की पद्धति वीरता तथा शूद्रों की पद्धति सेवा-भावना की है। यदि कोई इन सब पद्धतियों को एक बना ले, गुरु नानक कहते हैं कि वे उसके दास बन जायँगे, क्योंकि वह मनुष्य निर्लिप्त हरि-रूप होगा। (अर्थात् सब अलग-अलग पद्धतियों का वाद है, यदि कोई इस विवाद से ऊपर उठकर पूर्णपरमेश्वर को पा ले, तो उसकी कोई भी पद्धति श्रेष्ठतर मानी जायगी।) ॥ ३ ॥ सब देवताओं का मूल देवता वह परब्रह्म है, यदि कोई भेद जानता हो तो उसके लिए वही परमसत्य है। गुरु नानक कहते हैं कि वे उसके दास बन जायँगे, क्योंकि वह मनुष्य निर्लिप्त हरि-रूप होगा ॥ ४ ॥

सलोक सहसक्रिती महला ५

१ ओं सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥

कतं च माता कतं च पिता कतं च बनिता बिनोद सुतह। कतं च भ्रात मीत हित बंधव कतं च मोह कुटंब्यते। कतं च चपल मोहनी रूपं पेखंते तिआगं करोति। रहंत संग भगवान सिमरण नानक लबध्यं अचुत तनह ॥ १ ॥ ध्रिगंत मात पिता सनेहं ध्रिग सनेहं भ्रात बांधवह। ध्रिग स्नेहं बनिता बिलास सुतह। ध्रिग स्नेहं ग्रिहारथकह। साध संग स्नेह सत्यिं। सुखयं बसंति नानकह ॥ २ ॥ मिथ्यंत देहं खीणंत बलनं। बरधंति जरूआ हित्यंत माइआ। अत्यंत आसा आथित्य भवनं। गनंत स्वासा भैयान धरमं। पतंति मोह कूप दुरलभ्य देहं तत आस्रयं नानक। गोबिंद गोबिंद गोबिंद गोपाल क्रिपा ॥३॥ काच कोटं रचंति तोयं लेपनं रकत चरमणह। नवंत दुआरं भीत रहितं बाइ रूपं असथंभनह। गोबिंद नामं नह सिमरंति अगिआनी जानंति असथिरं।

दुरलभ देह उधरंत साध सरण नानक। हरि हरि हरि हरि हरि हरे जपंत ॥४॥ सुभंत तुयं अचुत गुणग्यं पूरनं बहुलो क्रिपाला। गंभीरं ऊचं सरबगि अपारा। भ्रितिआ प्रिअं बिस्राम चरणं। अनाथ नाथे नानक सरणं ॥ ५ ॥ म्रिगी पेखंत बधिक प्रहारेण लख्य आवधह। अहो जस्यि रखेण गोपालह नानक रोम न छेद्यिते ॥ ६ ॥

(सांसारिक मोह-माया और सगे-सम्बन्धियों का प्यार प्रभु-प्रेम की तुलना में कुछ भी नहीं।) माता, पिता, पत्नी का विनोद, पुत्र का प्यार क्या है ? भाई, मित्र का प्यार और यह कुटुम्ब का मोह भी क्या है ? यह मोहिनी रूपा चंचल माया भी क्या है, जो देखते-देखते छोड़ जाती है। हरि-सिमरन करते हुए रहनेवाले को, गुरु नानक कहते हैं, प्रभु के सन्तों की संगति में प्रभु-नाम उपलब्ध होता है ॥ १ ॥ माता-पिता का प्यार धिक् है, भाइयों-सम्बन्धियों का स्नेह भी धिक्कार-योग्य है। स्त्री और पुत्रों के विलास और सुख धिक् हैं, गृहस्थी के सुखों को भी धिक्कार है। गुरु नानक कहते हैं कि साधु-संगति में सच्चा स्नेह बना लेने से ही कोई सुख-पूर्वक जी सकता है ॥ २ ॥ शरीर मिथ्या है, इसका बल क्षीण हो जाता है। माया-मोह के साथ-साथ बुढ़ापा बढ़ता जाता है। शरीर रूपी भवन में यह जीव अतिथि के तौर पर रहता है, किन्तु आशा बहुत करता है। भयानक धर्मराज (मृत्यु का व्यवस्थापक) श्वास गिन रहा है। यह दुर्लभ शरीर मोह रूपी कुएँ में गिरी पड़ी है, गुरु नानक कहते हैं कि वहाँ भी तत्त्व (प्रभु) का आश्रय है। गोविन्द का नाम जपने से ही प्रभु की कृपा होती है ॥३॥ यह शरीर एक कच्चा दुर्ग है, जो जल से बना है। ऊपर से रक्त का लेपन ही चमड़ी है। भीतर नौ द्वार हैं और वायु के स्तम्भ हैं। अज्ञानी मनुष्य परमात्मा का नाम स्मरण नहीं करता, शरीर को स्थिर समझता है। इस दुर्लभ शरीर का उद्धार सन्तों की शरण में ही होता है। गुरु नानक का कथन है कि सन्त-शरण में जब जीव हरि-हरि-नाम का जाप करता है, तभी मनुष्य का उद्धार सम्भव होता है ॥ ४ ॥ हे शोभायमान, तुम अच्युत (अटल), गुणागार, पूर्ण और चौदह लोकों के पालक हो। तुम गम्भीर, उच्च, सर्वज्ञ एवं अनन्त हो; भक्तों के प्रिय एवं उन्हें अपने चरणों में विश्राम देनेवाले हो। अनाथों के नाथ हो, (गुरु) नानक तुम्हारी शरण में है ॥ ५ ॥ एक मृगी को देखकर शिकारी ने ताककर उस पर निशाना लगाया, किन्तु गुरु नानक कहते हैं, जिसकी सम्भाल स्वयं परमात्मा करता है, कोई उसका बाल भी बाँका नहीं कर सकता ॥ ६ ॥

बहु जतन करता बलवंतकारी सेवंत सूरा चतुर दिसह। बिखम थान बसंत ऊचह नह सिमरंत मरणं कदांचह। होवंति आगिआ भगवान पुरखह नानक कीटी सास अकरखते ॥ ७ ॥ सबदं रतं हितं मइआ कीरतं कली करम क्रितुआ। मिटंति तत्रागत भरम मोहं। भगवान रमणं सरबत्र थान्यिं। द्रिसट तुयं अमोघ दरसनं बसंत साध रसना। हरि हरि हरि हरे नानक प्रिअं जापु जपुना ॥ ८ ॥ घटंत रूपं घटंत दीपं घटंत रवि ससीअर नखियत्र गगनं। घटंत बसुधा गिरि तर सिखंडं। घटंत ललना सुत भ्रात हीतं। घटंत कनिक मानिक माइआ स्वरूपं। नह घटंत केवल गोपाल अचुत। असथिरं नानक साध जन ॥ ९ ॥ नह बिलंब धरमं बिलंब पापं। द्रिड़ंत नामं तजंत लोभं। सरणि संतं किलबिख नासं। प्रापतं धरम लख्यिण। नानक जिह सुप्रसंन माधवह ॥१०॥ मिरत मोहं अलप बुध्यं रचंति बनिता बिनोद साहं। जौबन बहिक्रम कनिक कुंडलह। बचित्र मंदिर सोभंति बसत्रा इत्यत माइआ ब्यापितं। हे अचुत सरणि संत नानक भो भगवानए नमह ॥ ११ ॥ जनमं त मरणं हरखं त सोगं भोगं त रोगं। ऊचं त नीचं नान्हा सुमूचं। राजं त मानं अभिमानं त हीनं। प्रबिरति मारगं वरतंति बिनासनं। गोबिंद भजन साध संगेण असथिरं नानक भगवंत भजनासनं ॥ १२ ॥

चारों दिशाओं में बड़े-बड़े शूरवीर, यत्न करने में समर्थ और अति बलवान व्यक्ति भी यदि उसकी रक्षा कर रहे हों; वह चाहे अत्युच्च स्थान पर रहता हो और चाहे उसे मरने का कभी भय न हुआ हो; किन्तु जब भगवान की आज्ञा होती है, तो गुरु नानक कहते हैं कि एक साधारण चींटी भी उसके प्राण खींच लेती है ॥ ७ ॥ शब्द-श्रवण में रत होना, जीवों पर दया करना, प्रभु का कीर्तन करना आदि कर्म ही कलियुग में करणीय हैं। इनसे मनुष्य में आए मोह और भ्रम मिट जाते हैं। प्रभु सब जगह बसता है और हे प्रभु, तुम्हारा सफल दर्शन प्राप्त होता है। परमात्मा साधुओं की जिह्वा पर बसता है, क्योंकि वे प्यारे हरि का नाम जपते हैं ॥ ८ ॥ संसार में सब कुछ क्षय होता है। रूप का क्षय होता है, दीपक, सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र और स्वयं गगन का भी क्षय हो रहा है। धरती, पर्वत, पेड़, देश सब क्षयशील है। स्त्री, पुत्र और पारस्परिक प्रेम का भी क्षय होता है। सोना, माणिक्य और इनकी सुन्दर माया, सब घट जाते हैं। नहीं घटते तो केवल

अच्युत प्रभु, अनश्वर परमात्मा का क्षय नहीं होता। गुरु नानक कहते हैं कि साधुजन भी (हरि के समान ही) अटल होते हैं ॥ ९ ॥ धर्म-कार्य में विलम्ब नहीं करना चाहिए, विलम्ब पाप में होना चाहिए। हरिनाम को दृढ़ करने से लोभ दूर होता है। सन्तों की शरण लेने से पाप नष्ट होता है। गुरु नानक कहते हैं कि इनसे धर्म के लक्षण पैदा होते हैं और परमात्मा प्रसन्न होता है ॥ १० ॥ अल्प बुद्धि वाला जीव माया के मोह में मृतक-समान हो रहा है तथा स्त्री एवं रंग-तमाशों (भोग-विलास) में रत है। यौवनावस्था में स्वर्णाभूषणों के पीछे रहता है, सुन्दर घर ढूंढ़ता है। इतनी माया व्याप्त हुई है कि शोभायुक्त वस्त्रों में ऐंठता है। ऐ गँवार (इन सबको छोड़कर), गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु के सन्तों की शरण में जाओ, परमात्मा को प्रणाम करो ॥ ११ ॥ दुनियादारी में तो जन्म-मरण, हर्ष-शोक, भोग-रोग आदि बने ही रहते हैं। इसमें ऊँचा होता है तो नीचा भी आता है, छोटे का विस्तार भी होता है। राज्य पाकर सम्मान मिलता है, तो अभिमान से हीनता भी आती है। प्रवृत्ति-मार्ग (दुनियादारी) में अन्ततः सब कुछ नश्वर है। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु के भजन एवं सन्तों की शरण में ही स्थिरता है ॥ १२ ॥

किरपंत हरीअं मति ततु गिआनं। बिगसीध्यि बुधा कुसल थानं। बस्यिंत रिखिअं तिआगि मानं। सीतलंत रिदयं द्रिडु संत गिआनं। रहंत जनमं हरि दरस लीणा। बाजंत नानक सबद बीणां ॥ १३ ॥ कहंत बेदा गुणंत गुनीआ सुणंत बाला बहु बिधि प्रकारा। द्रिड़ंत सुबिदिआ हरि हरि क्रिपाला। नाम दानु जाचंत नानक दैनहार गुर गोपाला ॥ १४ ॥ नह चिंता मात पित भ्रातह नह चिंता कछु लोक कह। नह चिंता बनिता सुत मीतह प्रविरति माइआ सनबंधनह। दइआल एक भगवान पुरखह नानक सरब जीअ प्रतिपालकह ॥ १५ ॥ अनित्य वितं अनित्य चितं अनित्य आसा बहु बिधि प्रकारं। अनित्य हेतं अहं बंधं भरम माइआ मलनं बिकारं। फिरंत जोनि अनेक जठरागनि नह सिमरंत मलीण बुध्यं। हे गोबिद करत मइआ नानक पतित उधारण साध संगमह ॥ १६ ॥ गिरंत गिरि पतित पातालं जलंत देदीप्य बैस्वांतरह। बहंति अगाह तोयं तरंगं दुखंत ग्रह चिंता जनमं त मरणह। अनिक साधनं न सिध्यते नानक। असथंभं असथंभं असथंभं सबद साध स्वजनह ॥ १७ ॥ घोर दुख्यं अनिक हत्यं जनम दारिद्रं महा

बिख्यादं। मिटंत सगल सिमरंत हरिनाम नानक। जैसे पावक कासट भसमं करोति ॥ १८ ॥

प्रभु की कृपा से तत्त्व-ज्ञान की प्राप्ति होती है। विवेक जाग्रत् होता है और सुखपूर्ण स्थान मिलता है। इन्द्रियाँ वश में होती हैं (संयत) और मान छूट जाता है। हृदय शीतल होता और ज्ञान दृढ़ होता है। हरि-दर्शन पाने से जन्म-मरण चुक जाता है। तब, गुरु नानक कहते हैं, शब्द की वीणा बजने लगती है ॥ १३ ॥ वेद-शास्त्र एवं गुणवंत जन कहते हैं, जिज्ञासु-जन अनेक प्रकार से सुनते हैं, किन्तु जिन पर हरि-कृपा होती है, वे ही तत्त्व-ज्ञान प्राप्त करते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि वे हरिनाम की याचना करते हैं, जोकि स्वयं परमात्मा ही देनेवाला है ॥ १४ ॥ माता, पिता, भाई या लोगों की चिन्ता नहीं रह जाती; स्त्री, पुत्र, मित्र आदि में प्रवृत्त होना मायावी सम्बन्ध ही हैं —ऐसी मान्यता तभी होती है, जब सर्व जीवों के प्रतिपालक कर्तापुरुष परमात्मा की दया हो जाती है ॥ १५ ॥ धन नाशवान् है, मन की कल्पनाएँ भी नश्वर हैं, अनेक प्रकार की आशाएँ भी अनित्य हैं। अहम् के बंधनों वाला प्रेम भी नश्वर, अपवित्र एवं विकारयुक्त है। मलिन बुद्धि का जीव अनेक योनियों में भ्रमता, बार-बार पेट की अग्नि में जलता है, किन्तु परमात्मा का स्मरण नहीं करता। गुरु नानक कहते हैं कि जब परमात्मा कृपा करता है तो साधु-संगति में जीव का उद्धार होता है ॥ १६ ॥ पर्वतों से गिर जाना, पाताल में जा पड़ना, जलती आग में गिरकर जल जाना, पानी की लहरों में बह जाना आदि से भी बढ़कर घर की चिन्ता दुःखदायी है, वही जन्म-मरण का मूल है। अनेक साधन करने से भी घर के झंझट नहीं चुकते। सन्तजनों के शब्द का आश्रय ही मनुष्य को स्थिरता प्रदान करता है ॥ १७ ॥ यदि घोर दुःख हों, अनेकधा जन्म-मरण हो लिया हो, महा दरिद्रता का विषाद हो; गुरु नानक कहते हैं कि हरिनाम-स्मरण करने से वह सब मिट जाते हैं। (हरिनाम उन दुःखों को ऐसे काट देता है जैसे) अग्नि लकड़ी को भस्म कर देती है ॥ १८ ॥

अंधकार सिमरत प्रकासं गुण रमंत अघ खंडनह। रिब बसंति भै भीत दूतह करम करत महा निरमलह। जनम मरण रहंत स्रोता सुख समूह अमोघ दरसनह। सरणि जोगं संत प्रिअ नानक सो भगवान खेमं करोति ॥ १९ ॥ पाछं करोति अग्रणीवह निरासं आस पूरनह। निरधन भयं धनवंतह रोगीअं रोग खंडनह। भगत्यं भगति दानं राम नाम गुण कीरतनह। पारब्रहम पुरख दातारह। नानक गुर सेवा किं न

लभ्यते ।। २० ।। अधरं धरं धारणह निरधनं धन नाम नरहरह । अनाथ नाथ गोबिंदह बलहीण बल केसवह । सरब भूत दयाल अचुत दीन बांधव दामोदरह । सरबग्य पूरन पुरख भगवानह भगति वछल करुणामयह । घटि घटि बसंत बासुदेवह पारब्रहम परमेसुरह । जाचंति नानक क्रिपाल प्रसादं नह बिसरंति नह बिसरंति नाराइणह ।। २१ ।। नह समरथं नह सेवकं नह प्रीति परम पुरखोतमं । तव प्रसादि सिमरते नामं नानक क्रिपाल हरि हरि गुरं ।। २२ ।। भरण पोखण करंत जीआ बिस्राम छादन देवंत दानं । स्रिजंत रतन जनम चतुर चेतनह । वरतंति सुख आनंद प्रसादह । सिमरंत नानक हरि हरि हरे । अनित्य रचना निरमोहते ।। २३ ।। दानं परा पूरबेण भुंचंते महीपते । बिपरीत बुध्यं मारत लोकह नानक चिरंकाल दुख भोगते ।।२४।।

प्रभु का सिमरन करने से अन्धकार में प्रकाश होता है, गुण-वृद्धि होती है और पापों का नाश होता है। प्रभु का नाम हृदय में बसने से यमदूत भयभीत होते हैं और भले कर्म करने से निर्मलता आती है। हरिनाम-श्रवण से जन्म-मरण के चक्र का अन्त होता है, प्रभु के सफल दर्शन से सुखों का समूह प्राप्त होता है। गुरु नानक कहते हैं कि वह परमात्मा शरण देने योग्य, सन्तों का प्रिय एवं क्षेम-आनन्द देनेवाला है ।।१९।। परमात्मा पीछे रह जानेवालों को आगे बढ़ाता एवं निराश को आशा-दान देता है। निर्धनों को वह धनवान् बनाता एवं रोगियों का रोग दूर करता है। भक्तों को भक्ति-दान देता है और वे रामनाम का कीर्तन करते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि परब्रह्म दातार पुरुष है, गुरु-सेवा द्वारा उससे क्या नहीं मिल जाता ! ।। २० ।। परमात्मा का नाम निराश्रितों का आश्रय है और निर्धनों के लिए धन है। प्रभु अनाथों का नाथ है, हरि निर्बलों का बल है; अच्युत परमात्मा सब जीवों पर दया करनेवाला है और वाहिगुरु दीनों का सहायक है। पूर्णपुरुष सर्वज्ञ है, भक्तवत्सल एवं करुणामय है। परब्रह्म परमेश्वर सर्वव्यापक है, घट-घट में बसता है। गुरु नानक उसे कृपा-प्रसाद की याचना करते हुए प्रार्थना करते हैं कि ऐसी व्यवस्था हो कि वह कभी विस्मृत न हो ।। २१ ।। (किन्तु) मुझमें न कोई सामर्थ्य है, न ही मैं अच्छा सेवक हूँ और न ही परम पुरुषोत्तम में मेरी प्रीति बनी है। गुरु नानक कहते हैं कि वे तो तुम्हारी ही कृपा से गुरु के द्वारा हरिनाम का स्मरण करते हैं ।। २२ ।। वह परमात्मा जीवों की प्रतिपालना करता है, रहने को घर, पहनने को कपड़ा देता है। उसने हमें अनमोल रत्न के समान मनुष्य-जन्म में पैदा किया है, वह चतुर और परम

चेतन है, उसकी कृपा से सब ओर सुख, आनन्द प्रसारित है। ॥ अतः गुरु नानक कहते हैं कि उसी हरि-प्रभु का स्मरण करने से नश्वर संसार से निर्लिप्त हो जाते हैं ॥ २३ ॥ पूर्व जन्मों के दान का फल राजा भोगते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि विपरीत बुद्धि के लोग इस मर्त्यलोक में चिरकाल तक दुःख भोगते हैं ॥ २४ ॥

ब्रिथा अनुग्रहं गोबिंदह जस्य सिमरण रिदंतरह। आरोग्यं महारोग्यं बिसिम्रिते करुणामयह ॥ २५ ॥ रमणं केवलकीरतनं सुधरमं देह धारणह। अंम्रित नामु नाराइण नानक पीवतं संत न त्रिप्यते ॥ २६ ॥ सहण सील संतं सम मित्रस्य दुरजनह। नानक भोजन अनिक प्रकारेण निंदक आवध होइ उपतिसटते॥२७॥ तिरसकार नह भवंति नह भवंत मान भंगनह। सोभा हीन नह भवति नह पोहंति संसार दुखनह। गोबिंद नाम जपंति मिलि साध संगह नानक से प्राणी सुख बासनह ॥ २८ ॥ सैना साध समूह सूर अजितं संनाहं तनि निम्रताह। आवधह गुण गोबिंद रमणं ओट गुर सबद कर चरमणह। आरूड़ते अस्व रथ नागह बुझंते प्रभ मारगह। बिचरते निरभयं सत्रु सैना धायंते गुोपाल कीरतनह। जितते बिस्व संसारह नानक बस्यं करोति पंच तसकरह ॥ २९ ॥ म्रिग त्रिसना गंधरब नगरं द्रुम छाया रचि दुरमतिह। ततह कुटंब मोह मिथ्या सिमरंति नानक राम राम नामह ॥ ३० ॥

जिनके हृदय में प्रभु का स्मरण है, वे पीड़ा को भी परमात्मा की कृपा समझते हैं, किन्तु जो उस करुणामय प्रभु को भुलाता है, वह रोगहीन होता हुआ भी रोगी है ॥ २५ ॥ देह धारण करने का मूल धर्म केवल ब्रह्म में रमण करना तथा उसी का यशोगान करना है। गुरु नानक कहते हैं कि अमृत नाम का पान करते सन्तजन तृप्त नहीं होते अर्थात् हरिनाम-पान से कभी नहीं चूकते ॥ २६ ॥ सन्तजन सहनशील होते हैं, वे मित्र-शत्रु को एक समान समझते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि चाहे कोई विविध व्यंजन लिये खड़ा हो, निन्दा करता या शस्त्र लेकर मारने को आया हो, सन्तों का व्यवहार समान ही रहता है ॥२७॥ उनका तिरस्कार नहीं होता और न ही कभी अप्रतिष्ठा होती है। वे न तो शोभाहीन होते हैं, न ही उन्हें संसार के दुःख छूते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि जो प्राणी साधु-संगति में मिलकर प्रभु का नाम जपता है, वह सुख पाता है ॥ २८ ॥ सब साधु न जीते जाने योग्य शूरवीरों की सेना होते हैं। उनके शरीर

पर नम्रता का कवच होता है। परमात्मा के गुणों का शस्त्र होता है और गुरु-शब्द का सहारा उनके हाथ की ढाल है। प्रभु-पथ की जानकारी ही उनके हाथी-घोड़ों के रथ हैं। वे निर्भय भाव से काम-क्रोधादि शत्रुओं के बीच खुला घूमते हैं और हरि-कीर्तन रूपी आक्रमण बोलते हैं। इस प्रकार गुरु नानक कहते हैं कि वे विश्व-विजयी होते एवं पाँच तस्करों (काम-क्रोधादि) को वश में कर लेते हैं।।२९।। गुरु नानक कहते हैं कि दुर्मति के कारण जीव मृग-तृष्णा, गंधर्व-नगरी या द्रुम-छाया के समान (तीनों बातें भ्रम की द्योतक हैं) अपना संसार रचता है। वैसे ही कुटुंब का मोह भी मिथ्या है, इसलिए इसकी उपेक्षा करके राम-नाम का स्मरण करो ।।३०।।

नच बिदिआ निधान निगमं न च गुणग्य नाम कीरतनह। नच राग रतन कंठं नह चंचल चतुर चातुरह। भाग उदिम लबध्यं माइआ नानक साध संगि खल पंडितह ।। ३१ ।। कंठ रमणीय राम राम मालां हसत ऊच प्रेम धारणी। जीह भणिजो उतम सलोक उधरणं नैन नंदनी ।। ३२ ।। गुरमंत्र हीणस्य जो प्राणी ध्रिगंत जनम भ्रसटणह। कूकरह सूकरह गरधभह काकह सरपनह तुलि खलह ।।३३।। चरणार बिंद भजनं रिदयं नाम धारणह। कीरतनं साध संगेण नानक नह द्रिसटंति जमदूतनह ।। ३४ ।। नच दुरलभं धनं रूपं नच दुरलभं स्वरग राजनह। नच दुरलभं भोजनं बिजनं नच दुरलभं स्वछ अंबरह। नच दुरलभं सुत मित्र भ्रात बांधव नच दुरलभं बनिता बिलासह। नच दुरलभं बिदिआ प्रबीणं नच दुरलभं चतुर चंचलह। दुरलभं एक भगवान नामह नानक लबध्यिं साध संगि क्रिपा प्रभं ।।३५।। जत कतह ततह द्रिसटं स्वरग मरत पयाल लोकह। सरबत्र रमणं गोबिंदह नानक लेप छेप न लिप्यते ।। ३६ ।।

मनुष्य न तो वेदों की विद्या का भण्डार है, न गुणों का ज्ञाता है और न ही हरिनाम का कीर्तन करता है। न उसके गले में संगीत की शक्ति है, न ही उसमें कोई चांचल्य-चातुर्य है। गुरु नानक कहते हैं कि ये सब दुर्लभ पदार्थ उत्तम कर्मों के कारण ही उसे मिलते हैं। खल भी पंडित की संगति में बुद्धिमान हो जाता है ।। ३१ ।। गले में हरिनाम-सिमरन की माला हो, प्रेम-धारणा ही गोमुखी हो और जीभ उत्तम शब्दों का उच्चारण करती हो, तो जीव नयनों को सुन्दर लगनेवाली माया से बच जाता है ।। ३२ ।। गुरु-मन्त्र से हीन प्राणी के जन्म पर धिक्कार है, वह भ्रष्ट है। वह खल कुत्ते, सुअर, गधे, काग, सर्प-सरीखा है ।। ३३ ।।

जो प्रभु के चरण-कमल को भजता है, हृदय में हरिनाम को धारण करता है, साधु-संगति में प्रभु-कीर्तन गाता है, गुरु नानक के मतानुसार वह जीव यमदूतों को नहीं देखता (अर्थात् यमदूत उसके निकट नहीं फटकते) ।।३४।। न तो धन और रूप दुर्लभ है, न स्वर्ग का राज्य ही दुर्लभ है। भोजन-व्यंजन भी दुर्लभ नहीं, और न ही स्वच्छ वस्त्र अप्राप्य हैं। पुत्र, मित्र, बन्धु-बांधव आदि भी मिलने दुर्लभ नहीं हैं, न ही वनिता-विलास दुर्लभ है। न विद्या में प्रवीणता दुर्लभ है और न ही चातुर्य-चंचलता दुर्लभ कही जा सकती है। गुरु नानक कहते हैं कि केवल भगवान का भजन ही दुर्लभ है, जो सत्संगति में प्रभु-कृपा के कारण मिलता है ।। ३५ ।। जहाँ कहीं भी स्वर्गलोक, मृत्युलोक एवं पाताललोक तक दृष्टि जाती है, सर्वत्र वह परमात्मा ही व्याप्त दीख पड़ता है, गुरु नानक कहते हैं कि उसे कोई दाग़-दोष नहीं छूते (अर्थात् वह दोषों-विकारों से ऊपर है) ।। ३६ ।।

बिखया भयंति अंम्रितं द्रुसटां सखा स्वजनह । दुखं भयंति सुख्यं भै भीतं त निरभयह । थान बिहून बिस्राम नामं नानक क्रिपाल हरि हरि गुरह ।। ३७ ।। सरब सील ममं सीलं सरब पांवन मम पांवनह । सरब करतब ममं करता नानक लेप छेप न लिप्यते ।। ३८ ।। नह सीतलं चंद्र देवह नह सीतलं बांवन चंदनह । नह सीतलं सीत रुतेण नानक सीतलं साध स्वजनह ।। ३९ ।। मंत्रं राम राम नामं ध्यानं सरबत्र पूरनह । ग्यानं सम दुख सुखं जुगति निरमल निरवैरणह । दयालं सरबत्र जीआ पंच दोख बिबरजितह । भोजनं गोपाल कीरतनं अलप माया जल कमल रहतह । उपदेसं सम मित्र सत्रह भगवंत भगति भावनी । पर निंदा नह स्राति स्रवणं आपु तियागि सगल रेणुकह । खट लख्यण पूरनं पुरखह नानक नाम साध स्वजनह ।। ४० ।। अजा भोगत कंद मूलं बसंते समीपि केहरह । तत्र गते संसारह नानक सोग हरखं बिआपते ।। ४१ ।। छलं छिद्रं कोटि बिघनं अपराधं किलबिख मलं । भरम मोहं मान अपमानं मदं माया बिआपितं । म्रित्यु जनम भ्रमंति नरकह अनिक उपावं न सिध्यते । निरमलं साध संगह जपंति नानक गोपाल नामं । रमंति गुण गोबिंद नितप्रतह ।। ४२ ।।

(हरिनाम जपने से) विष अमृत हो जाता है, दुष्टजन सखा-स्वजन बनते हैं; दुःख सुख में परिवर्तित होता है और कायर निर्भय हो जाता है। स्थान-विहीन जीवों का विश्राम हरिनाम में होता है, जोकि हरि-कृपा से

गुरु के माध्यम से प्राप्त होता है ॥ ३७ ॥ सर्वशील परमात्मा मुझे शील देता है, सर्वपावन प्रभु मुझे पावन करता है। सबका कर्ता हरि मेरा भी कर्ता है, गुरु नानक कहते हैं कि उसे कोई दाग़-दोष नहीं छू सकते (अर्थात् वह दोषों विकारों से इतर है) ॥ ३८ ॥ प्रकाश-रूप चन्द्रमा भी (उतना) शीतल नहीं है, बावन चन्दन भी शीतल नहीं है। सर्दी की ऋतु भी शीतल नहीं है (जितना कि), गुरु नानक कहते हैं, सन्तजन शीतल होते हैं ॥३९॥ वे (सन्तजन) राम-राम का मन्त्र जपते हैं, उनके ध्यानानुसार प्रभु सर्वव्यापक है, उनके ज्ञानानुसार सुख-दुःख समान होता है और उनकी युक्ति निर्मल-निर्वैर रहने की होती है। वे समस्त जीवों पर दया करते और पांच दोषों (काम-क्रोधादि) को वर्जित रखते हैं। उनका भोजन गोपाल का कीर्तिगान होता है और माया से यों अलिप्त रहते हैं, जैसे जल में कमल। वे शत्रु-मित्र के समान उपदेश देते हैं, उन्हें केवल भगवान की भक्ति ही रुचिकर होती है। वे अपने कानों से पर-निन्दा नहीं सुनते, अपने को सबकी चरण-धूलि मानते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि वे छः लक्षणों को धारण करनेवाले पूर्णपुरुष होते हैं, उन्हीं का नाम सन्तजन होता है ॥ ४० ॥ जैसे बकरी को खाने को कन्द-मूल चारा मिलता हो, किन्तु उसे सिंह के निकट रख दिया गया हो, वैसे ही संसार की गति है, जिसमें सुख के साथ-साथ दुःख भी व्याप्त हैं ॥ ४१ ॥ जीव छल-कपट में पड़ा करोड़ों विघ्नों को भोगता और अपराधों-पापों की मैल, भ्रमों, मोह एवं व्याप्त माया की मस्ती में डूबा रहता है। जन्म-मरण के चक्र में पड़ा नरकों को भोगता है, अनेक उपायों से भी बचने में सफल नहीं होता। सन्तों की संगति में हरिनाम जपना ही निर्मलता देनेवाला है, गुरु नानक कहते हैं कि (सत्संगति में वह) नित्यप्रति प्रभु के गुणों में रमण करता है ॥ ४२ ॥

तरण सरण सुआमी रमण सील परमेसुरह। करण कारण समरथह दानु देत प्रभु पूरनह। निरास आस करणं सगल अरथ आलयह। गुण निधान सिमरंति नानक सगल जाचंत जाचिकह ॥ ४३ ॥ दुरगमस्थान सुगमं महा दूख सरब सूखणह। दुरबचन भेद भरमं साकत पिसनं त सुरजनह। अस्थितं सोग हरखं भै खीणं त निरभवह। भै अटवीअं महा नगर बासं। धरम लख्यण प्रभ मइआ। साध संगम राम राम रमणं। सरणि नानक हरि हरि दयाल चरणं ॥ ४४ ॥ हे अजित सूर संग्रामं अति बलना बहु मरदनह। गण गंधरब देव मानुख्यं पसु पंखी बिमोहनह। हरि करणहारं नमसकारं सरणि

नानक जगदीश्वरह ।। ४५ ।। हे कामं नरक बिस्रामं बहु जोनी भ्रमावणह । चित हरणं त्रै लोक गंम्यं जप तप सील बिदारणह । अलप सुख अवित चंचल ऊच नीच समावणह । तव भै बिमुंचित साध संगम ओट नानक नाराइणह ।। ४६ ।। हे कलि मूल क्रोधं कदंच करुणा न उपरजते । बिखियंत जीवं वस्यं करोति निरत्यं करोति जथा मरकटह । अनिक सासन ताड़ंति जमदूतह । तव संगे अधमं नरह । दीन दुख भंजन दयाल प्रभु नानक सरब जीअ रख्या करोति ।। ४७ ।। हे लोभा लंपट संग सिरमोरह अनिक लहरी कलोलते । धावंत जीआ बहु प्रकारं अनिक भांति बहु डोलते । न च मित्रं न च इसटं न च बाधव न च मात पिता तव लजया । अकरणं करोति अखाद्यि खाद्यं असाज्यं साजि समजया । त्राहि त्राहि सरणि सुआमी बिग्याप्ति नानक हरि नरहरह ।। ४८ ।।

प्रभु की शरण संतरण है, व्यापक एवं शील रूप है । वह स्वयं सब कुछ करने योग्य, सर्व-समर्थ एवं दान देनेवाला पूर्णब्रह्म है । निराश को आशावान् करता है, वह समस्त पदार्थों का भण्डार है । गुरु नानक कहते हैं कि (ऐ जीव) उस गुणागार का स्मरण करो (उसी से माँगो), सब याचक उसी से माँगते हैं ।। ४३ ।। (हरि-कृपा से) दुर्गम स्थान सुगम हो जाते हैं, महा दुःख परमसुख में बदल जाते हैं । दुर्वचः, भ्रमादि भले हो जाते हैं, मायाधारी एवं चुग़लख़ोर लोग (उसकी कृपा से) सज्जन पुरुष बनते हैं । शोक हर्ष में स्थिर होता है, भयातुर निर्भय होता है । भयानक जंगल (संसार) एक बड़े आबाद नगर (सुख का स्थान) की तरह होता है —ये धर्म-लक्षण प्रभु-दया से मिलते हैं । गुरु नानक कहते हैं कि (ये सब परिवर्तन) सन्तों की संगति में प्रभु-नाम जपने और हरि-चरणों की शरण लेने से होते हैं ।। ४४ ।। हे अजय शूरवीर (मोह को सम्बोधन है), तुम बड़े बलशाली एवं शत्रु का मर्दन करने में समर्थ हो । तुमने देवताओं के गणों, गंधर्वों, देवों, मनुष्यों, पशु-पंखियों तक को मोह लिया है; (मैं तुमसे बचने के लिए) गुरु नानक कहते हैं, हरि की शरण लेता एवं जगदीश्वर को प्रणाम करता हूँ ।। ४५ ।। हे नरक में विश्राम दिलानेवाले काम, तुम अनेक योनियों में भ्रमाते हो । तुम चित्त को हरनेवाले, तीनों लोकों को प्रभावित करनेवाले, जन का जप-तप नाश करने में समर्थ हो । तुम अल्पकालीन सुख देते हो, लोगों को धन-हीन, चंचल करनेवाले एवं ऊँच-नीच को एक समान दुःख पहुँचानेवाले हो । गुरु नानक कहते हैं कि तुम्हारे भय से छुटकारा पाने के लिए मैं साधुजन की संगति और प्रभु-

शरण की ओट लेता हूँ ।। ४६ ।। हे कलह-मूल क्रोध, तुम्हें कभी दया नहीं आती, तुमने विषयी जीवों को वश में किया है और वे तुम्हारे सम्मुख बंदर की तरह नाचते हैं। आगे यमदूत कई प्रकार के दण्ड देते हैं, तुम्हारी संगति में (भले लोग भी) नीच हो जाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि (तुम्हारे विरुद्ध) दीनों के दुःख दूर करनेवाले प्रभु ही सब जीवों की रक्षा करें ।। ४७ ।। हे लोभी, तुमने बड़े-बड़े लोगों को फँसाया है, और जीव अनेक लहरों में कल्लोल करते हैं। अनेक प्रकार से जीव तुम्हारी ओर भागते और कई तरह तुम्हारे लिए डोलते फिरते हैं। मित्रों, इष्टों, सम्बन्धियों, माता-पिता आदि में से तुम्हें किसी का लिहाज़ नहीं है। तुम न करने योग्य को करवाते, न खाने योग्य को खिलाते एवं न बनने योग्य को बलात् बनवाते हो। गुरु नानक कहते हैं कि वे इससे (क्रोध से) डरकर परमात्मा की शरण में त्राहि-त्राहि (बचाओ-बचाओ) की विनती करते हैं ।। ४८ ।।

हे जनम मरण मूलं अहंकारं पापातमा। मित्रं तजंति सत्रं द्रिड़ंति अनिक माया बिस्तीरनह। आवंत जावंत थकंत जीआ दुख सुख बहु भोगणह। भ्रम भयान उदिआन रमणं महा बिकट असाध रोगणह। बैद्यं पारब्रहम परमेस्वर आराधि नानक हरि हरि हरे।।४९।। हे प्राण नाथ गोबिंदह क्रिपा निधान जगद्गुरो। हे संसार ताप हरणह करुणा मै सभ दुख हरो। हे सरणि जोग दयालह दीनानाथ मया करो। सरीर स्वस्थ खीण समए सिमरंति नानक राम दामोदर माधवह ।। ५० ।। चरण कमल सरणं रमणं गोपाल कीरतनह। साध संगेण तरणं नानक महा सागर भै दुतरह ।। ५१ ।। सिर मस्तक रख्या पारब्रहमं हस्त काया रख्या परमेस्वरह। आतम रख्या गोपाल सुआमी धन चरण रख्या जगदीस्वरह। सरब रख्या गुर दयालह भै दूख बिनासनह। भगति वछल अनाथ नाथे सरणि नानक पुरख अचुतह ।। ५२ ।। जेन कला धारिओ आकासं बैसंतरं कासट बेसटं। जेन कला ससि सूर नख्यत्र जोतिह सासं सरीर धारणं। जेन कला मात गरभ प्रतिपालं नह छेदंत जठर रोगणह। तेन कला असथंभं सरोवरं नानक नह छिजंति तरंग तोयणह ।। ५३ ।। गुसांई गरिस्ट रूपेण सिमरणं सरबत्र जीवणह। लबध्यं संत संगेण नानक स्वछ मारग हरि भगतणह ।। ५४ ।।

ऐ जन्म-मरण के मूल अहंकार, तुम पापी हो। तुम मित्रों से छुड़ाते

हो, शत्रुता दृढ़ करते हो, और अनेक प्रकार के मायावी प्रपंच बनाते हो। जीव तुम्हारे ही कारण आवागमन में थकते और बहुत सुख-दुःख भोगते हैं। लोग (तुमसे प्रभावित होकर) भ्रम के महा भयानक जंगल में विचरते, अति कठिन और असाध्य रोगों से पीड़ित होते हैं। तुम्हारा इलाज केवल परब्रह्म परमेश्वर रूपी वैद्य के पास ही है, अतः गुरु नानक कहते हैं कि उसी प्रभु का नाम जपो ॥ ४९ ॥ हे प्राणनाथ, से कृपा-निधान, हे जगद्गुरु, हे संसार के संताप को दूर करनेवाले करुणामय प्रभु, मेरे सब दुःख दूर करो। हे शरण देने योग्य दयालु प्रभु, मुझ पर दया करो। हे हरि, (नानक) शरीर के सुखों तथा दुःखों, दोनों समय तुम्हारा स्मरण करता रहे! ॥५०॥ मैं प्रभु के चरण-कमलों की शरण लूँ और परमात्मा का कीर्ति-गान करता रहूँ। यह दुस्तर महासागर, गुरु नानक कहते हैं, केवल साधुजनों की संगति में ही तिरा जा सकता है ॥ ५१ ॥ हे परब्रह्म, मेरे सिर-मस्तक पर अपना वरद हस्त रखो (ताकि वे दुष्कर्मों की ओर न प्रवृत्त हों), मेरी काया की रक्षा करो, हे प्रभु, (ताकि वह पथ-भ्रष्ट न हो)। हे स्वामी, मेरी आत्मा को संरक्षण दो (ताकि वह कुप्रवृत्ति से बचे); हे जगदीश्वर, मेरे धन और चरणों को बचाओ (ताकि मैं ग़लत रास्ते चलता हुआ धन का अनुचित प्रयोग न करूँ)। हे दयालु गुरु, भय और दुःख को नाश करनेवाले, मेरी सर्व-रक्षा करो। गुरु नानक कहते हैं, हे भक्त-वत्सल, अनाथों के नाथ, हे अच्युत पुरुष (स्थिर पुरुष), मुझे शरण दो ॥ ५२ ॥ जिसने अपनी शक्ति से आकाश को धारण किया है और लकड़ी में अग्नि को प्रविष्ट किया है। जिसकी शक्ति से चन्द्र, सूर्य, नक्षत्र को ज्योति प्राप्त है और शरीर में श्वास चलती है। जिसकी शक्ति से माता के गर्भ में रक्षा होती एवं पेट की विकट अग्नि से बचाव रहता है। गुरु नानक कहते हैं कि उसी की शक्ति से संसार-सागर स्थिर है, जिसकी उत्ताल और विकट तरंगें भी हमें तोड़ती नहीं अर्थात् सागर में जल-तरंगों की चंचलता हमें प्रभु की शक्ति के कारण प्रभावित नहीं करती ॥ ५३ ॥ हमारा स्वामी महनीय है, उसका स्मरण सबका जीवन है। वह या तो सन्तों की संगति में मिलता है या हरि-भक्ति में प्राप्त है ॥ ५४ ॥

मसकं भगनंत सैलं करदमं तरंत पपीलकह। सागरं लंघंति पिंगं तम परगास अंधकह। साध संगेणि सिमरंत गोबिंद। सरणि नानक हरि हरि हरे ॥ ५५ ॥ तिलक हीणं जथा बिप्रा। अमर हीणं जथा राजनह। आवध हीणं जथा सूरा। नानक धरम हीणं तथा बैस्नवह ॥ ५६ ॥ न संखं न चक्रं न गदा न सिआमं। अस्चरज रूपं रहंत जनमं। नेत नेत कथंति बेदा। ऊच मूच अपार गोबिंदह। बसंति साध रिदयं

अचुत । बुझंति नानक बडभागीअह ।। ५७ ।। उदिआन बसनं संसारं सनबंधी स्वान सिआल खरह । बिखम स्थान मन मोह मदिरं महां असाध पंच तसकरह । हीत मोह भै भरम भ्रमणं अहं फांस तीख्यण कठिनह । पावक तोअ असाध घोरं अगम तीर नह लंघनह । भजु साध संगि गुोपाल नानक हरि चरण सरण उधरण क्रिपा ।। ५८ ।। क्रिपा करंत गोबिंद गोपालह सगल्यं रोग खंडणह । साध संगेणि गुण रमत नानक सरणि पूरन परमेसुरह ।। ५९ ।। सिआमलं मधुर मानुख्यं रिदयं भूमि वैरणह । निवंति होवंति मिथिआ चेतनं संत स्वजनह ।। ६० ।।

मच्छर-सरीखा निःशक्त जीव पत्थर को तोड़ दे, चींटी कीचड़ में से पार हो जाय, पिंगला सागर तर जाय और अन्धे को प्रकाश मिल जाय —यह सब सत्संगति में प्रभु-स्मरण का प्रताप हो सकता है। गुरु नानक कहते हैं कि तुम इसलिए हरि की शरण लो ।। ५५ ।। जैसे तिलक के बिना ब्राह्मण हो या अधिकार के बिना राजा हो, शस्त्र के बिना जैसे शूरवीर हो, गुरु नानक कहते हैं कि वैसे ही धर्म के बिना वैष्णव होता है ।। ५६ ।। परमात्मा शंख, चक्र, गदा या श्याम वर्ण में नहीं है, वह आश्चर्य-रूप और योनि-रहित है। वेदों ने उसे नेति-नेति कहा है, वह अपार तथा ऊँचे से ऊँचा है, वह साधुजन के हृदय में अच्युत रूप में विराजता है, गुरु नानक के मतानुसार कोई भाग्यशाली ही उसे जान पाता है ।। ५७ ।। संसार एक जंगल की तरह है। सब सम्बन्धी इसमें स्यार, कुत्ते और गधों की तरह हैं। यह स्थान विषम है, मन मोह के नशे में बावरा है और इसमें पाँच महादुष्ट तस्कर रहते हैं। मोह, प्यार के भ्रम इसमें मौजूद हैं और तीक्ष्ण और कठोर अहंकार को फाँसें लगी हैं। इसमें असाध्य जल एवं घोर अग्नि व्याप्त है, इसका किनारा हमारी पहुँच से परे है। गुरु नानक कहते हैं कि इस सबसे बचने के लिए ऐ जीव, सन्तजनों की संगति में हरि-चरणों की शरण लो और प्रभु-नाम जपो। उसकी कृपा में ही उद्धार है ।। ५८ ।। गोबिंद प्रभु की कृपा होती है, सब रोग दूर हो जाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि साधुजन की संगति में प्रभु का स्मरण करो और परमेश्वर की शरण लो ।। ५९ ।। मनुष्य चाहे सुन्दर हो, व्यवहार का मधुर है किन्तु हृदय में वैर रखता हो, तो उसकी विनम्रता मिथ्या होती है, ऐ सन्तो, उससे ख़बरदार रहो ।। ६० ।।

अचेत मूड़ा न जाणंत घटंत सासा नितप्रते । छिजंत महा सुंदरी कांइआ काल कंनिआ ग्रासते । रचंति पुरखह कुटंब

लीला अनित आसा बिखिआ बिनोद। भ्रमंति भ्रमंति बहु जनम हारिओ सरणि नानक करुणामयह ।। ६१ ।। हे जिहबे हे रसगे मधुर प्रिआ तुयं। सत हतं परम बादं अवरत एथह सुध अछरण। गोबिंद दामोदर माधवे ।। ६२ ।। गरबंति नारी मदोन मतं। बलवंत बलातकारणह। चरन कमल नह भजंत त्रिण समानि धिगु जनमनह। हे पपीलका ग्रसटे गोबिंद सिमरण तुयं धने। नानक अनिक बार नमो नमह ।। ६३ ।। त्रिणंत मेरं सहकंत हरीअं। बूडंत तरीअं ऊणंत भरीअं। अंधकार कोटि सूर उजारं। बिनवंत नानक हरि गुर दयारं ।।६४।। ब्रहमणह संगि उधरणं ब्रहम करम जि पूरणह। आतम रतं संसार गहंते नर नानक निहफलह ।। ६५ ।। परदरब हिरणं बहु विघन करणं उचरणं सरब जीअ कह। लउ लई त्रिसना अतिपति मन माए करम करत स सूकरह ।। ६६ ।। मतेसमेव चरणं उधरणं भै दुतरह। अनेक पातिक हरणं नानक साधसंगम न संसयह ।। ६७ ।।

असावधान मूढ़ मनुष्य नहीं जानता कि श्वास नित्यप्रति घटते हैं। महा सुन्दर शरीर भी जर्जरित होता है, काल की कन्या अर्थात् बुढ़ापा सबको ग्रस लेता है। मनुष्य कुटुम्ब की लीला रचता है, अनित्य पदार्थों की आशा रखता और विनोद-मग्न रहता है। गुरु नानक कहते हैं कि इसी प्रकार भ्रमते-भ्रमते अनेक जन्म गँवा दिये, अब तो करुणामय की शरण लो ।। ६१ ।। हे रसों को जाननेवाली जिह्वा, तुम्हें मीठे पदार्थ अधिक प्रिय हैं, तुम सत्य की हत्या करती हो, अनेक वादों में संलग्न हो, क्योंकि गोविंद, दामोदर, माधव जैसे पवित्र शब्दों का उच्चारण करती हो! ।। ६२ ।। सुन्दर नारी की मस्ती में उन्मत्त गर्व करता है, बलवान बल के कारण अहंकारी है, प्रभु के चरण-कमल की आराधना नहीं करता, तो उसका जन्म तृण के समान धिक् है। हे चींटीवत् विनम्रता वाले जीव, तुम अधिक सशक्त हो, क्योंकि तुम्हारे पास हरिनाम रूपी धन है। गुरु नानक तुम्हें अनेक बार प्रणाम करते हैं ।। ६३ ।। (जिसकी कृपा से) तृण से पर्वत और सूखे से हरा हो जाता है; डूबता हुआ तिर जाता है, खाली भर जाता है; अन्धकार में करोड़ों सूर्यों का उजाला हो जाता है, गुरु नानक (उसी) दयालु हरि-प्रभु से विनती करते हैं ।। ६४ ।। ब्राह्मण की संगति में उद्धार होता है, किन्तु ब्राह्मण वह हो जो ब्राह्मण-कर्मों में पूर्ण हो। जो ब्राह्मण संसार में आत्म-रत हैं, गुरु नानक कहते हैं, वे लोग निष्फल रहते हैं ।। ६५ ।। जो पराया धन चुराते हैं; अनेक प्रकार के

विघ्न लगाते हैं और अपनी जीविका के लिए सबको उपदेश देते हैं; 'यह ले लूँ', 'वह ले लूँ' करते हैं, जो तृष्णा के कारण कभी संतुष्ट नहीं होते, उनका मन माया में रहता है और वे सूअरों वाले कर्म (गंदगी-भक्षण) करते हैं ।। ६६ ।। (इनके विपरीत) जो निश्चिन्त भाव से हरि-चरणों में समाते हैं, वे भयानक संसार-सागर से बच निकलते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि साधुजन की संगति में अनेक पापों का नाश होता है, इसमें कोई संशय नहीं है ।। ६७ ।।

महला ५ गाथा*

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। करपूर पुहप सुगंधा परस मानुख्य देहं मलीणं । मजा रुधिर द्रुगंधा नानक अथि गरबेण अग्यानणो ।। १ ।। परमाणो परजंत आकासह दीप लोअ सिखंडणह । गछेण नैण भारेण नानक बिना साधू न सिध्यते ।। २ ।। जाणो सति होवंतो मरणो द्रिसटेण मिथिआ । कीरति साथि चलंथो भणंति नानक साध संगेण ।। ३ ।। माया चित भरमेण इसट मित्रेखु बांधवह । लबध्यं साध संगेण नानक सुख असथानं गोपाल भजणं ।। ४ ।।

कर्पूर, पुष्प एवं सुगंधियाँ मनुष्य-देह के स्पर्श से मलिन हो जाती हैं। गुरु नानक कहते हैं कि मनुष्य-शरीर मज्जा, रक्त एवं दुर्गन्ध से पूर्ण है, फिर भी मनुष्य अज्ञानवश गर्व करता है ।। १ ।। जीव यदि परमाणुओं की तरह सूक्ष्म बनकर गगनन्तर लोकों-खण्डों-सहित चक्षु-स्फुरण में जाकर भी लौट आने की शक्ति रखता हो, तो भी गुरु नानक कहते हैं कि संतों की संगति के बिना उसकी मुक्ति सम्भव नहीं ।। २ ।। ऐ भाई, मृत्यु को सत्य मानो, दृश्यमान् सब मिथ्या है। गुरु नानक कहते हैं कि साधु-संगति में प्राप्त प्रभु-कीर्तन ही साथ देता है अर्थात् परमात्मा का गुणगान ही जीव का परलोक में भी साथ देता है ।। ३ ।। माया ने इष्ट मित्रों एवं बन्धु-बान्धवों में जीव का चित भ्रमा रखा है। गुरु नानक कहते हैं कि साधु-संगति एवं प्रभु-भजन से ही परमसुख का स्थान प्राप्त होता है ।। ४ ।।

मैलागर संगेण निमु बिरखसि चंदनह । निकटि बसंतो बांसो नानक अहंबुधि न बोहते ।। ५ ।। गाथा गुंफ गोपाल कथं । मथं मान मरदनह । हतं पंच सत्रेण । नानक

* यहाँ पुरानी बोली या प्रकृत को 'गाथा' कहा गया है।

हरि बाणे प्रहारणह ।। ६ ।। बचन साध सुख पंथां लहंथा बड करमणह । रहंता जनम मरणेन रमणं नानक हरि कीरतनह ।।७।। पत्र भुरिजेण झड़ीथं नह जड़ीअं पेड संपता । नाम बिहूण बिखमता नानक बहंति जोनि बासरोरैणी ।। ८ ।।

मलयगिरि पर चन्दन की संगति में नीम का पेड़ भी चन्दन-सी गंध देने लगता है, किन्तु गुरु नानक कहते हैं कि वहीं समीप रहनेवाला बाँस (ऊँचा होने के) अहंकार के कारण सुवासित नहीं हो पाता ।। ५ ।। इस 'गाथा' में परमात्मा की यश-कथा गुंफित है, जिस पर विचार करने से अहंकार का नाश होता है, काम-क्रोधादि पाँच शत्रुओं का हनन होता है। गुरु नानक कहते हैं कि ऐसा हरि रूपी बाण के प्रहार से सम्भव होता है ।। ६ ।। सन्तों के वचनों से भाग्यशाली जीवों को सुख का मार्ग मिलता है; गुरु नानक कहते हैं कि हरि-सिमरन तथा कीर्तन से उनका जन्म-मरण का चक्र शमित हो जाता है ।। ७ ।। ज्यों पेड़ के पत्र क्षुरित होकर झड़ते हैं और पुनः शाख के साथ नहीं लग सकते, वैसे ही, गुरु नानक कहते हैं कि नाम-विहीन जीव दुःख पाता एवं रात-दिन योनियों में भ्रमण करता है ।।८।।

भावनी साध संगेण लभंतं बडभागणह । हरिनाम गुण रमणं नानक संसार सागर नह बिआपणह ।। ९ ।। गाथा गूड़ अपारं समझणं बिरला जनह। संसार काम तजणं। नानक गोबिंद रमणं साध संगमह ।। १० ।। सुमंत्र साध बचना कोटि दोख बिनासनह । हरि चरण कमल ध्यानं नानक कुल समूह उधारणह ।।११।। सुंदर मंदर सैणह । जेण मध्य हरि कीरतनह । मुकते रमण गोबिंदह । नानक लबध्यं बड भागणह ।। १२ ।।

सन्तों की संगति में भाग्यशाली जीव को ही श्रद्धा प्राप्त होती है। गुरु नानक कहते हैं कि हरिनाम का गुण गानेवाले को संसार-सागर की विषमता व्याप्त नहीं होती ।। ९ ।। 'गाथा' (पुरातन कथा, यहाँ अध्यात्म कथा) अत्यन्त गूढ़ तथा अपार है, कोई विरला जन ही इसे समझता है। वह सांसारिक कामना त्याग देता है। गुरु नानक कहते हैं कि वह जन साधु-संगति में गोविंद-गुण गाता है ।।१०।। सन्तों के उत्तम मन्त्र के समान होते हैं, सब दोषों का निराकरण कर देते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि हरि चरण-कमलों का ध्यान करनेवाला समूचे कुल का उद्धार कर लेता है ।। ११ ।। वही मन्दिर (घर) सुन्दर है, जहाँ अनूठा हरि-कीर्तन-गान होता है। जो प्रभु का स्मरण करते हैं, वे मुक्त होते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि (सिमरन) बड़े भाग्य से मिलता है ।। १२ ।।

हरि लबधो मित्र सुमितो । बिदारण कदे न चितो । जा का असथलु तोलु अमितो । सुोई नानक सखा जीअ संगि कितो ।। १३ ।। अपजसं मिटंत सत पुत्रह । सिमरतब्य रिदै गुरमंत्रणह । प्रीतम भगवान अचुत । नानक संसार सागर तारणह ।। १४ ।। मरणं बिसरणं गोबिदह । जीवणं हरिनाम ध्यावणह । लभणं साध संगेण । नानक हरि पूरबि लिखणह ।। १५ ।। दसन बिहून भुयंगं मंत्रं गारुड़ी निवारं । ब्याधि उपाड़ण संतं । नानक लबध करमणह ।। १६ ।।

परमात्मा सुमित्र रूप में प्राप्त होता है, वह कभी किसी का दिल नहीं तोड़ता । जिसका स्थान अतुलनीय एवं अमित है, गुरु नानक कहते हैं कि उसी को हमने दिल से दोस्त बनाया है ।। १३ ।। जैसे सुपुत्रों के जन्म से अपयश मिटता है, गुरु की मन्त्रणा से प्रभु का नाम जपने से सुख उपजता है । गुरु नानक कहते हैं कि वैसे ही अच्युत प्रियतम प्रभु का नाम संसार-सागर से पार उतारता है ।। १४ ।। हरि-प्रभु को विस्मृत करना मृत्यु के समान है, हरिनाम का ध्यान करना ही जीवन है । गुरु नानक कहते हैं कि इसकी प्राप्ति पूर्व लिखे अनुसार साधु-संगति में होती है ।।१५।। जसे गारुड़ी मन्त्र द्वारा सर्प का विष निवारण करता एवं उसे दन्त-विहीन कर देता है, गुरु नानक कहते हैं कि वैसे ही उत्तम भाग्य से सन्तजन जीव के बंधन तोड़ देते हैं ।। १६ ।।

जथ कथ रमणं सरणं सरबत्र जीअणह । तथ लगणं प्रेम नानक । परसादं गुर दरसनह ।। १७ ।। चरणारबिंद मन बिध्यं । सिध्यं सरब कुसलणह । गाथा गावंति नानक भब्यं परा पूरबणह ।। १८ ।। सुभ बचन रमणं गवणं साध संगेण उधरण । संसार सागरं नानक पुनरपि जनम न लभ्यते ।। १९ ।। बेद पुराण सासत्र बीचारं । एकंकार नाम उरधारं । कुलह समूह सगल उधारं । बडभागी नानक को तारं ।। २० ।।

जहाँ कहीं भी वह प्रभु रमण करता है (सर्व-व्यापक है) और सब जीवों को शरण देता है । गुरु नानक कहते हैं कि गुरु-दर्शन एवं कृपा से उसके संग प्रेम उपजता है ।। १७ ।। उस परमात्मा के चरण-कमल से मन बिंध गया है और पूर्ण कल्याण हुआ है । गुरु नानक कहते हैं कि परम्परा से ही श्रेष्ठजन उसकी प्रेम-कथा गाते आए हैं ।। १८ ।। शुभ वचनों का सिमरन एवं गान साधुजनों की संगति में उद्धार करता है । गुरु नानक कहते हैं कि ऐसे लोगों को संसार-सागर में पुनः जन्म नहीं

मिलता ॥ १९ ॥ वेद, पुराण, शास्त्र आदि का विचार करो; एक परमात्मा को हृदय में धारण करो; इससे समूचे कुल का उद्धार होगा। गुरु नानक कहते हैं कि कोई भाग्यशाली ही (इस प्रकार से) मुक्त होता है ॥ २० ॥

सिमरणं गोबिंद नामं उधरणं कुल समूहणह। लबधिअं साध संगेण नानक वडभागी भेटंति दरसनह ॥ २१ ॥ सरब दोख परंतिआगी सरब धरम द्रिड़ंतणः। लबधेणि साध संगेणि नानक मसतकि लिख्यणः ॥ २२ ॥ होयो है होवंतो हरण भरण संपूरणः। साधू सतम जाणो नानक प्रीति कारणं ॥ २३ ॥ सुखेण बैण रतनं रचनं कसुंभ रंगणः। रोग सोग बिओगं नानक सुखु न सुपनह ॥ २४ ॥

गोविंद-नाम-स्मरण से समूचे कुल का उद्धार होता है। गुरु नानक कहते हैं कि ऊँचे भाग्य से ही साधु-संगति में कोई प्रभु-दर्शन करता है ॥ २१ ॥ (विरक्त जीव) सब प्रकार के दोषों का त्याग करते हैं, समस्त धर्मों का दृढ़ पालन करते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि वे मस्तक पर की भाग्य-रेखाओं के अनुसार सन्तों की संगति में प्रभु को पा जाते हैं ॥ २२ ॥ जो सबके नाश एवं प्रतिपालन का कारण है, था और रहेगा; निश्चय ही, गुरु नानक के मतानुसार, साधु-शरण ही उससे प्रीति का आधार होती है ॥ २३ ॥ सुख पहुँचानेवाले शब्द, माया के कच्चे रंगों में खचित मूल्यवान प्राप्तियाँ, गुरु नानक के मतानुसार रोग, शोक, वियोग आदि का कारण होते हैं, उनसे सपने में भी सुख प्राप्य नहीं है ॥ २४ ॥

फुनहे* महला ५

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ हाथि कलंम अगंम मसतकि लेखावती। उरझि रहिओ सभ संगि अनूप रूपावती। उसतति कहनु न जाइ मुखहु तुहारीआ। मोही देखि दरसु नानक बलिहारीआ ॥ १ ॥ संत सभा महि बैस कि कीरति मै कहां। अरपी सभु सीगारु एहु जीउ सभु दिवा। आस पिआसी सेज सु कंति विछाईऐ। हरिहां मसतकि होवै भागु त साजनु पाईऐ ॥ २ ॥ सखी काजल हार तंबोल सभै किछु साजिआ।

---

* पंजाबी के एक छंद का नाम है, जिसमें कोई एक शब्द बार-बार (पुनः) दोहराया जाता है। यहाँ जैसे 'हरिहां' (हे हरि)।

सोलह कीए सीगार कि अंजनु पाजिआ। जे घरि आवै कंतु त सभु किछु पाईऐ। हरिहां कंतै बाझु सीगारु सभु बिरथा जाईऐ ॥ ३ ॥ जिसु घरि वसिआ कंतु सा वडभागणे। तिसु बणिआ हभु सीगारु साई सोहागणे। हउ सुती होइ अचिंत मनि आस पुराईआ। हरिहां जा घरि आइआ कंतु त सभ किछु पाईआ ॥ ४ ॥

हे अगम प्रभु, तुम्हारे हाथ क़लम है और तुम सबके मस्तक पर भाग्य-लेख लिख रहे हो। हे अनुपम रूपवान स्वामी, तुम सबके भीतर विराजते हो। मुख से तुम्हारी अनुपम स्तुति कही नहीं जा सकती। गुरु नानक कहते हैं कि वे तुम पर क़ुर्बान हैं, उन्हें दर्शन दिखाओ ॥ १ ॥ सन्तों की सभा में बैठकर मैं प्रभु की कीर्ति कहती हूँ, मैं अपना समूचा श्रृंगार एवं प्राण तक उस पर न्योछावर करती हूँ (जीवात्मा कहती है); उसके दर्शनों की प्यास में विह्वल होकर मैंने प्रभु-पति के लिए सेज बिछाई है; हे हरि, मस्तक पर भाग्य लिखा हो, तो साजन आन मिलेंगे (अर्थात् कर्मों में हुआ तो प्रभु-कृपा होगी) ॥ २ ॥ (कंत को पाने के लिए जीवात्मा-स्त्री श्रृंगार करती है।) ऐ सखी, मैंने उसके आने की आशा में काजल लगाया है, ओठों की लाली के लिए पान चबाया एवं हार-श्रृंगार किया है, सोलह श्रृंगार किए हैं, आँखों में अंजन भी लगाया है। यदि प्रभु-पति घर आ जाय तो सब कुछ करना सफल है, किन्तु हे हरि, कंत के बिना यह सब श्रृंगार वृथा हो जायगा। (इसके विपरीत यदि प्रभु-पति सदैव हृदय में बसे तो बाहरी शोभा-श्रृंगार की अपेक्षा ही नहीं रहती।) ॥ ३ ॥ जिसके घर प्रभु-पति पहले से ही विराजता है, वह महा भाग्यशाली है; उसे प्रभु की उपस्थिति में ही सब श्रृंगार प्राप्त है, वही सुहागिन है। अब मैं निश्चिन्त होकर सोई हूँ, मेरी आशा पूर्ण हो गयी है। हे हरि, मुझे मेरा प्रियतम मिल गया है, मैंने सब कुछ पा लिया है ॥ ४ ॥

आसाइती आस कि आस पुराईऐ। सतिगुर भए दइआल त पूरा पाईऐ। मै तनि अवगण बहुतु कि अवगण छाइआ। हरिहां सतिगुर भए दइआल त मनु ठहराइआ ॥५॥ कहु नानक बेअंतु बेअंतु धिआइआ। दुतरु इहु संसारु सतिगुरू तराइआ। मिटिआ आवागउणु जां पूरा पाइआ। हरिहां अंम्रितु हरि का नामु सतिगुर ते पाइआ ॥ ६ ॥ मेरै हाथि पदमु आगनि सुख बासना। सखी मोरै कंठि रतंनु पेखि दुखु नासना। बासउ संगि गुपाल सगल सुख रासि हरि। हरिहां

रिधि सिधि नवनिधि बसहि जिसु सदा करि ॥ ७ ॥ परत्रिअ रावणि जाहि सेई ता लाजीअहि । नितप्रति हिरहि परदरबु छिद्र कत ढाकीअहि । हरिगुण रमत पवित्र सगल कुल तारई । हरिहां सुनते भए पुनीत पारब्रहमु बीचारई ॥ ८ ॥

हे प्रभु-पति, मुझे मिलने की इतनी आशा है, इसे पूरा करो। सतिगुरु दयालु हो जायँ, तो मेरी आशा पूर्ण हो जायगी। मैं पूर्णपरमेश्वर को पा लूँगी। मुझमें अनेक अवगुण हैं, मैं अवगुणों से भरपूर हूँ। हे हरि, सतिगुरु की दया हुई है, तो मन को स्थिरता प्राप्त हो सकी है ॥ ५ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि हमने अनन्त प्रभु को पा लिया है; इस दुस्तर संसार-सागर से सतिगुरु ही पार लगाता है। पूर्णप्रभु की प्राप्ति से मेरा आवागमन मिट गया; हे हरि, मुझे सतिगुरु से हरि का अमृत-नाम प्राप्त हुआ है ॥ ६ ॥ मेरे हाथ प्रभु के चरणारविंद लगे हैं, अब मेरे आँगन में सुख आन बसा है। हे सखी, अब मेरे कण्ठ में हरिनाम रूपी रत्न (तावीज़) है, जिसे देखकर ही दुःख भाग जाता है। अब मैं परमात्मा-पति के साथ रहती हूँ, वह समस्त सुखों की राशि है; हे हरि, समस्त ऋद्धि-सिद्धि उसी प्रभु के हाथ रहती हैं ॥ ७ ॥ जो पर-स्त्री-गमन करते हैं, उन्हें सदा लज्जित होना पड़ता है; जो सदा पर-धन हरण करते हैं, उनके पाप क्योंकर ढके जा सकते हैं! हरि के गुण स्मरण करने से पवित्रता मिलती है, जीव अपने सहित समूचे कुल का उद्धार करता है। हे हरि, परब्रह्म का गुणगान सुननेवाले भी पवित्र हो जाते हैं ॥ ८ ॥

ऊपरि बनै अकासु तलै धर सोहती । दहदिस चमकै बीजुलि मुख कउ जोहती । खोजत फिरउ बिदेसि पीउ कत पाईऐ । हरिहां जे मसतकि होवै भागु त दरसि समाईऐ ॥ ९ ॥ डिठे सभे थाव नही तुधु जेहिआ । बधोहु पुरखि बिधातै तां तू सोहिआ । वसदी सघन अपार अनूप रामदास पुर । हरिहां नानक कसमल जाहि नाइऐ रामदास सर ॥ १० ॥ चात्रिक चित सुचित सु साजनु चाहीऐ । जिसु संगि लागे प्राण तिसै कउ आहीऐ । बनु बनु फिरत उदास बूंद जल कारणे । हरिहां तिउ हरिजनु मांगै नामु नानक बलिहारणे ॥ ११ ॥ मित का चितु अनूपु मरंमु न जानीऐ । गाहक गुनी अपार सु ततु पछानीऐ । चितहि चितु समाइ त होवै रंगु घना । हरिहां चंचल चोरहि मारि त पावहि सचु धना ॥ १२ ॥

ऊपर आकाश बना है, नीचे सुन्दर धरती है। प्राकृतिक दृश्यों के कारण शोभती है। चारों ओर बिजली की चमक में मैं अपने प्यारे का मुँह देखती हूँ। (आकांक्षिणी आत्मा प्रिय की खोज में है, वर्षा ऋतु का अन्धकार है, बीच-बीच में बिजली की चौंध में वह प्रभु-प्रिय को खोजती है।) जगह-जगह मैं प्रिय को खोजती फिरती हूँ, नहीं जानती कि प्रिय को क्योंकर पा सकती हूँ ! हे हरि, यदि मस्तक में सौभाग्य हो, तभी प्रियतम के दर्शनों में समा सकूँगी ।। ९ ।। मैंने सब स्थान देखे हैं, किन्तु हे प्रियतम, जहाँ तुम बसे हो, उस स्थान-सा दूसरा कोई स्थान नहीं। (अमृतसर की शोभा का वर्णन है।) तुम्हें स्वयं कर्ता-पुरुष अर्थात् मेरे प्रिय ने बनाया है, इसीलिए तू शोभता है। इस रामदासपुर (अमृतसर) में तुम्हारी घनी संगति रहती है (खूब आबादी है) और हे हरि, तुम्हारे दर्शन-सरोवर (रामदास-सर) में स्नान करने से सब पाप धुल जाते हैं ।। १० ।। चातक की तरह सजग मन से प्रभु-प्रिय को चाहें; जिसके संग प्राण लगे हैं, उसी की खोज करें। पपीहा ज्यों स्वाति-बूँद के लिए बन-बन में उदास फिरता है, गुरु नानक कहते हैं, वैसे ही हरिजन हरिनाम के लिए विह्वल होते हैं, मैं उन पर बलिहार जाता हूँ ।। ११ ।। प्रिय का मन अनुपम है, उसका भेद कोई नहीं जानता। केवल गुणों के ग्राहक ही गुण पहचानते हैं। अपने हृदय से प्रिय का हृदय मिल जाय, तो खूब रंगीनी होती है। हे हरि, यदि कोई काम-क्रोधादि चंचल चोरों को मारे तो वह हरि-धन को पा सकता है। (अर्थात् प्रियतम हरि के गुणों को जानने एवं उससे दिल मिलाने के लिए अपने में गुण उजागर करने की अपेक्षा होती है।) ।।१२।।

सुपनै ऊभी भई गहिओ की न अंचला। सुंदर पुरख बिराजित पेखि मनु बंचला। खोजउ ताके चरण कहहु कत पाईऐ। हरिहां सोई जतंनु बताइ सखी प्रिउ पाईऐ ।। १३ ।। नैण न देखहि साध सि नैण बिहालिआ। करन न सुनही नादु करन मुंदि घालिआ। रसना जपै न नामु तिलु तिलु करि कटीऐ। हरिहां जब बिसरै गोबिद राइ दिनो दिनु घटीऐ ।। १४ ।। पंकज फाथे पंक महा मद गुंफिआ। अंग संग उरझाइ बिसरते सुंफिआ। है कोऊ ऐसा मीतु जि तोरै बिखम गांठि। नानक इकु स्रीधर नाथु जि टूटे लेइ सांठि ।। १५ ।। धावउ दसा अनेक प्रेम प्रभ कारणे। पंच सतावहि दूत कवन बिधि मारणे। तीखण बाण चलाइ नामु प्रभ ध्याईऐ। हरिहां महां बिखादी घात पूरन गुरु पाईऐ ।। १६ ।।

प्रियतम के स्वप्न से मैं जग गई (और उसे सामने देखकर ठगी-सी रह गयी), किन्तु मैंने उसका दामन क्यों न पकड़ा ? (स्वयं ही कारण कहते हैं—) प्रियतम के रूप-सौंदर्य की चकाचौंध में मैं इतना खो गई कि दामन पकड़ने का ध्यान ही नहीं रहा। अब मैं उसके चरण खोजती हूँ, कोई बताये कहाँ मिलेंगे। हे हरि, मुझे कोई वह यत्न बता दे, जिससे मैं प्रिय को पा लूँ ॥ १३ ॥ नयन जब प्रिय को नहीं देखते, तो बेहाल हो जाते हैं। कान जब प्रभु का शब्द नहीं सुनते, तो ऐसे कान बंद कर देना चाहिए। जो जिह्वा प्रभु का नाम न जपे, तिल-तिल कर काट देनी चाहिए। हे हरि, प्रभु जब विस्मृत हो, तो दिनोदिन जीवन क्षय हो जाता है ॥ १४ ॥ जैसे भँवरे के पंख कमल-पुष्प में उसके पराग की मस्ती में फँस जाते हैं और वह उसकी सुन्दरता में आत्म-विस्मृत-सा वहीं फँसा रह जाता है। कोई ऐसा परम मित्र है जो जुदाई की कठोर गाँठों को तोड़ दे। गुरु नानक कहते हैं कि एक वाहिगुरु ही ऐसा है, जो टूटे को पुनः जोड़ देता है ॥ १५ ॥ प्रभु के प्रेम के लिए अनेक दिशाओं में भागा फिरता हूँ; काम-क्रोधादि पंचदूत मुझे दुःखी करते हैं, इन्हें मारने की चिन्ता है। प्रभु का नाम-ध्यान ही वह तीक्ष्ण बाण है, जिससे हे हरि, पूरा गुरु मिल जाने पर दुःखदायी चोरों को मारना सीखते हैं ॥ १६ ॥

सतिगुर कीनी दाति मूलि न निखुटई। खावहु भुंचहु सभि गुरमुखि छुटई। अंम्रितु नामु निधानु दिता तुसि हरि। नानक सदा अराधि कदे न जांहि मरि ॥ १७ ॥ जिथै जाए भगतु सु थानु सुहावणा। सगले होए सुख हरिनामु धिआवणा। जीअ करनि जैकारु निंदक मुए पचि। साजन मनि आनंदु नानक नामु जपि ॥ १८ ॥ पावन पतित पुनीत कतह नही सेवीऐ। झूठै रंगि खुआरु कहां लगु खेवीऐ। हरि चंदउरी पेखि काहे सुखु मानिआ। हरिहां हउ बलिहारी तिन जि दरगहि जानिआ ॥ १९ ॥ कीने करम अनेक गवार बिकार घन। महा द्रुगंधत वासु सठ का छारु तन। फिरतउ गरब गुबारि मरणु नह जानई। हरिहां हरि चंदउरी पेखि काहे सचु मानई ॥ २० ॥

सतिगुरु ने ऐसी कृपा की है कि हमारा मूल (हरिनाम-राशि) कभी नहीं घटता। गुरु के द्वारा हरिनाम का भोग करने से ही मुक्ति मिलती है। हरिनाम की अमृत-समान निधि हरि ने कृपा-पूर्वक हमें दी है। गुरु नानक कहते हैं कि यदि हम सदा उसकी आराधना करते रहें, तो वह (हरिनाम) कभी समाप्त नहीं होता ॥ १७ ॥ जहाँ भक्तजन उठते-बैठते

हैं, वह स्थान सुहाना होता है। हरिनाम जपने से सब सुख हस्तामलक-सम हो जाते हैं। समस्त जीव उस प्रभु का जय-जयकार करते हैं, किन्तु निन्दक जीव सड़ मरते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि हरिनाम जपने से आनन्ददायी साजन हृदय में ही बसता है ॥ १८ ॥ पतितों को पवित्र करनेवाले प्रभु को हम नहीं जपते, आखिर माया के मिथ्या रंगों में कहाँ तक निर्वाह होगा ? मृगतृष्णा-जैसी कल्पित हरिश्चन्द्र-नगरी को देखकर क्यों प्रसन्न होते हो ! हे हरि, मैं तो उन पर बलिहार हूँ, जो परमात्मा को जान लेते हैं ॥ १९ ॥ जीव मूर्खतापूर्ण विकारयुक्त अनेक कर्म करता है, महा दुर्गन्धपूर्ण स्थान में रहता है (अर्थात् घृणित दशा को भोगता है) और अन्ततः शठ का शरीर बेकार हो जाता है (जर्जरित हो जाता है)। गँवार अभिमान से फूला फिरता है, मृत्यु को नहीं पहचानता। हे हरि, यह मूर्ख जीव हरिश्चन्द्र-नगरी (मृग-तृष्णा के क्षितिज) को देखकर उसे ही सत्य मान बैठता है। (कहते हैं कि राजा हरिश्चन्द्र अपनी नगरी-सहित वैकुण्ठ में चले गए थे और अब भी वह नगरी बादलों के पार आभासित होती रहती है, इसी कल्पित छाया को 'हरिचंदौरी' कहा है।) ॥ २० ॥

जिस की पूजै अउध तिसै कउणु राखई। बैदक अनिक उपाव कहां लउ भाखई। एको चेति गवार काजि तेरै आवई। हरिहां बिनु नावै तनु छारु ब्रिथा सभु जावई ॥ २१ ॥ अउखधु नामु अपारु अमोलकु पीजई। मिलि मिलि खावहि संत सगल कउ दीजई। जिसै परापति होइ तिसै ही पावणे। हरिहां हउ बलिहारी तिन्ह जि हरिरंगु रावणे ॥ २२ ॥ वैदा संदा संगु इकठा होइआ। अउखद आए रासि विचि आपि खलोइआ। जो जो ओना करम सु करम होइ पसरिआ। हरिहां दूख रोग सभि पाप तन ते खिसरिआ ॥ २३ ॥

जिसकी आयु पूर्ण हो जाती है, उसे कौन बचा सकता है, वैद्यजन उसके कितने इलाज-उपाव बता सकते हैं ? ऐ मूर्ख, अब उसी एक ब्रह्म का स्मरण कर, तुम्हारे काम लगेगा। हे हरि, प्रभु-नाम के बिना दैहिक प्राप्तियाँ राख-समान हैं, सब नष्ट हो जायँगी ॥ २१ ॥ हरिनाम की अपार औषध का पान करो। यह सन्तों की संगति में प्राप्त होती है, वे सत्संगति में सबको देते हैं (बाँटते हैं)। जिसे सत्संगति प्राप्त है, उसे ही हरिनाम-औषध भी मिलती है। हे हरि, मैं तो उन पर क़ुर्बान हूँ जो परमात्मा के रंग में रमण करते हैं ॥ २२ ॥ सन्त रूपी वैद्यों की संगति एकत्र हुई है; प्रभु स्वयं उनमें विराजता है, इसलिए उनकी दी हरिनाम की औषध ठीक लगती है (मुआफ़िक़ आती है)। जो-जो वे सन्त रूपी वैद्य

करते हैं, वे कर्म सुन्दर हैं। हे हरि, (उनकी औषध के प्रभाव से) सब दुःख, रोग, पाप आदि दूर हो गए हैं ॥ २३ ॥

चउबोले* महला ५

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ संमन जउ इस प्रेम की दम क्यिहु होती साट। रावन हुते सु रंक नहि जिनि सिर दीन्हे काटि ॥१॥ प्रीति प्रेम तनु खचि रहिआ बीचु न राई होत। चरन कमल मनु बेधिओ बूझनु सुरति संजोग ॥२॥ सागर मेर उदिआन बन नवखंड बसुधा भरम। मूसन प्रेम पिरंम कै गनउ एक करि करम ॥ ३ ॥ मूसन मसकर प्रेम की रही जु अंबरु छाइ। बीधे बाधे कमल महि भवर रहे लपटाइ ॥ ४ ॥

ऐ सम्मन (शाहबाजपुर का एक शिष्य), यदि प्रेम का व्यापार धन से हो सकता होता, तो रावण-सरीखे व्यक्ति रंक तो नहीं थे, जिसने अपने सिर काट-काटकर शिव को बलि चढ़ा दिए थे ॥ १ ॥ प्रेम-प्रीति तो ऐसी एकता है कि शरीर प्यारे के संग खिच जाता है, बीच में राई-भर भी अन्तराल नहीं रहता। प्रिय के चरण-कमल में मन बिंध जाता है और आत्मा प्यार में मग्न होकर चिर-जाग्रत् हो जाती है ॥ २ ॥ सागर, पर्वत, उद्यान एवं बन, नवखण्ड धरती सब भ्रम हैं। हे मूसन (सम्मन का पुत्र, गुरु-शिष्य), यदि प्यारे के साथ पूर्ण प्रेम है, तो ये सब (सागर, पर्वतादि) एक क़दम-भर भी नहीं, नगण्य हैं। (सच्चा प्रेमी सब कठिनाइयों को लाँघकर प्रिय के निकट पहुँच जाता है।) ॥ ३ ॥ हे मूसन, जिनके हृदय रूपी गगन में प्रेम की चाँदनी छाई है। वे गुँथे हुए कमल में भँवरे की तरह बिंधकर भी वहीं चिपके रहते हैं ॥ ४ ॥

जप तप संजम हरख सुख मान महत अरु गरब। मूसन निमखक प्रेम परि वारि वारि देंउ सरब ॥ ५ ॥ मूसन मरमु न जानई मरत हिरत संसार। प्रेम पिरंम न बेधिओ उरझिओ मिथ बिउहार ॥ ६ ॥ घबु दबु जब जारीऐ बिछुरत प्रेम बिहाल। मूसन तब ही मूसीऐ बिसरत पुरख दइआल ॥७॥

---

* 'चउबोले' एक प्रकार का छंद ही है, जिसमें चार व्यक्तियों (सम्मन, मूसन, जमाल और पतंग) के प्रति कहे गए वचन हैं। इसीलिए 'चार को बोले' शाब्दिक अर्थ देते हैं।

जा को प्रेम सुआउ है चरन चितव मन माहि । नानक बिरही ब्रहम के आन न कतहू जाहि ॥ ८ ॥

हे मूसन, निमिष-मात्र प्रेम पर सब जप, तप, संयम, खुशियाँ, सुख, मान, बड़ाई और अभिमान आदि सबको क़ुर्बान कर दो ॥ ५ ॥ हे मूसन, यह संसार मृत्यु को प्राप्त होता और ठगा जा रहा है, किन्तु प्यारे के मर्म को नहीं समझता । प्रेम-प्रीति के बन्धन को नहीं पहचानता, बेकार के मिथ्या व्यवहार में उलझा रहता है ॥ ६ ॥ यह मनुष्य घर-धन उजड़ जाने पर, उनके प्रेम के कारण विह्वल हो उठता है । किन्तु ऐ मूसन, असल में तो यह तभी ठगा जाता है, जब प्रभु से विरत होता है ॥ ७ ॥ जिन्हें प्रेम का स्वाद पड़ जाता है, वे सदा उसी के चरण मन में धारता है (अर्थात् उसी के प्यार में खोया रहता है) । गुरु नानक कहते हैं कि वह ब्रह्म के प्यार में विरहीजन की तरह व्याकुल रहता है, उसे और कोई ठिकाना नहीं होता ॥ ८ ॥

लख घाटीं ऊंचौ घनो चंचल चीत बिहाल । नीच कीच निम्रित घनी करनी कमल जमाल ॥ ९ ॥ कमल नैन अंजन सिआम चंद्रबदन चित चार । मूसन मगन मरंम सिउ खंड खंड करि हार ॥ १० ॥ मगनु भइओ प्रिअ प्रेम सिउ सूध न सिमरत अंग । प्रगटि भइओ सभ लोअ महि नानक अधम पतंग ॥११॥

यह चित्त चंचल है, अहंकार-वश अनेक घाटियाँ ऊपर चढ़ता है और दुःखी होता रहता है । इसके विपरीत ऐ जमाल (एक शिष्य), कीचड़ नीचा है, अति विनम्र है (कोई भी उसे रौंद सकता है), इसी विनम्र करनी के कारण उसमें से कमल उपजते हैं ॥ ९ ॥ मेरा प्रिय कमल-समान नेत्रों वाला, जिनमें काला अंजन लगाया है, वह चन्द्रमुख है और अति स्निग्ध चित्त वाला है । हे मूसन, मैं उसके प्यार में मग्न होकर अपने हार को टुकड़े-टुकड़े कर दूं (अर्थात् गले मिलते समय यह माला के मनकों का अन्तराल भी क्यों रहे ?) ॥ १० ॥ प्रिय के प्रेम में मग्न हूँ, उसके स्मरण में मुझे अपने अंगों की सुध नहीं रहती, जैसे साधारण पतंगा अपने को जला लेता है, किन्तु दीपक से विमुख नहीं होता और उसकी यह बड़ाई जगत-प्रसिद्ध है । ('पतंग' एक शिष्य का नाम भी है ।) ॥ ११ ॥

सलोक भगत कबीर जीउ के

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ कबीर मेरी सिमरनी रसना ऊपरि रामु । आदि जुगादी सगल भगत ताको सुखु बिस्रामु ॥१॥

कबीर मेरी जाति कउ सभु को हसनेहारु। बलिहारी इस जाति कउ जिह जपिओ सिरजनहारु ॥ २ ॥ कबीर डगमग किआ करहि कहा डुलावहि जीउ। सरब सूख को नाइको राम नाम रसु पीउ ॥ ३ ॥ कबीर कंचन के कुंडल बने ऊपरि लाल जड़ाउ। दीसहि दाधे कान जिउ जिन्ह मनि नाही नाउ ॥ ४ ॥

कबीर जी कहते हैं कि जिह्वा से प्रभु का नाम जपना ही मेरी माला है। युग-युग से जितने भी भक्तजन हुए हैं, यही माला (प्रभु-नाम-स्मरण) उन्हें सुख और विश्राम देती रही है ॥ १ ॥ कबीर जी कहते हैं कि मेरी जाति पर सब कोई हँस देता है, किन्तु मैं तो इस जाति पर क़ुर्बान हूँ जो इसमें रहकर मैंने सृजनहार परमात्मा का नाम जपा है। (कबीर जी जुलाहा जाति के थे जो कि नीची समझी जाती थी। यहाँ एक संकेत है कि नीची-ऊँची जाति से नहीं, प्रभु-सिमरन से मनुष्य ऊँचा होता है।) ॥२॥ कबीर जी कहते हैं कि ऐ जीव, तुम डगमगाते क्यों हो, असमंजस में क्यों पड़ते हो, रामनाम समस्त सुखों का सिरमौर है, उसी का रसपान करो ॥३॥ कबीर कहते हैं कि जो लोग मणि-जटित स्वर्ण-कुण्डल पहनकर बनते-सँवरते हैं, वे भी तब तक मलिन, सड़ियल कान-समान दीख पड़ते हैं, जब तक उनके मन में प्रभु-नाम विद्यमान नहीं ॥ ४ ॥

कबीर ऐसा एकु आधु जो जीवत मिरतकु होइ। निरभै होइ कै गुन रवै जत पेखउ तत सोइ ॥ ५ ॥ कबीर जा दिन हउ मूआ पाछै भइआ अनंदु। मोहि मिलिओ प्रभु आपना संगी भजहि गुोबिंदु ॥ ६ ॥ कबीर सभ ते हम बुरे हम तजि भलो सभु कोइ। जिनि ऐसा करि बूझिआ मीतु हमारा सोइ ॥ ७ ॥ कबीर आई मुझहि पहि अनिक करे करि भेस। हम राखे गुर आपने उनि कीनो आदेसु ॥ ८ ॥

कबीर जी कहते हैं कि कोई विरला ही ऐसा होता है, जो जीवित ही मृतक-समान होता है, अर्थात् जीवन्मुक्त कोई एकाध ही होता है, जो निर्भय-भाव से परमात्मा के गुणों का स्मरण करता है। मैं जिधर देखता हूँ, वही दीख पड़ता है अर्थात् परमात्मा का सर्वव्याप्ति का गुण वह अर्जित कर लेता है— परमात्मा के ही समान हो जाता है ॥ ५ ॥ कबीर जी कहते हैं कि जिस दिन जीव का अहंभाव मर जाता है, पीछे मात्र आनन्द ही आनन्द रह जाता है। सत्संगति में रहकर प्रभु-भजन करने से मुझे परमात्मा मिल गया है (यही परमानन्द का स्रोत है) ॥ ६ ॥ कबीर जी कहते हैं कि

हम सबसे बुरे हैं, हमारे अतिरिक्त अन्य सब भले हैं। जो ऐसा जान लेता है (अर्थात् अहंभाव को पूर्णतः त्याग देता है), वही हमारा मित्र है ।। ७ ।। कबीर जी कहते हैं कि माया अनेक वेषों में हमारे ढिग आई, किन्तु हमारा संरक्षक तो गुरु है (वह हमें प्रभावित नहीं कर सकी), इसलिए हमें प्रणाम करके लौट गई ।। ८ ।।

कबीर सोई मारीऐ जिह मूऐ सुखु होइ। भलो भलो सभु को कहै बुरो न मानै कोइ ।। ९ ।। कबीर राती होवहि कारीआ कारे ऊभे जंत। लै फाहे उठि धावते सि जानि मारे भगवंत ।। १० ।। कबीर चंदन का बिरवा भला बेढ़िओ ढाक पलास। ओइ भी चंदनु होइ रहे बसे जु चंदन पासि ।। ११ ।। कबीर बांसु बडाई बूडिआ इउ मत डूबहु कोइ। चंदन कै निकटे बसै बांसु सुगंधु न होइ ।। १२ ।।

कबीर जी कहते हैं कि उस (अहंभाव) को मारना चाहिए, जिसके मरने से सर्वदा सुख उपजे। उसके मारे जाने पर सब भला-भला ही कहते, कोई बुरा नहीं मानता। (यों भी संसार में जब कोई दुष्ट हानिकारक तत्त्व नष्ट होता है, कोई बुरा नहीं मानता, सब उसकी पुष्टि करते हैं ।। ९ ।। कबीरजी कहते हैं कि काली रातों में जो काले कर्म करनेवाले व्यक्ति (चोर आदि) सेंध आदि लगाने का सामान लेकर घूमते हैं, यही समझिए कि वे शुरू से ही परमात्मा के मारे हुए हैं ।। १० ।। कबीर जी कहते हैं कि चन्दन का पेड़ भले ढाक-पलास आदि पेड़ों से घिरा हुआ हो; चन्दन के निकट रहने के कारण वे भी चन्दन की तरह सुगन्धित हो जाते हैं ।। ११ ।। कबीर जी कहते हैं कि बाँस अपने बड़प्पन (अहम्) में डूबा रहता है, ऐसा अहंभाव नहीं पालना चाहिए। (अन्यथा उसकी दशा भी बाँस-जैसी होगी, जो) चन्दन के निकट तो रहता है, किन्तु अन्य पेड़ों की तरह कभी सुगन्धित नहीं हो पाता ।। १२ ।।

कबीर दीनु गवाइआ दुनी सिउ दुनी न चाली साथि। पाइ कुहाड़ा मारिआ गाफलि अपुनै हाथ ।। १३ ।। कबीर जह जह हउ फिरिओ कउतक ठाओ ठाइ। इक राम सनेही बाहरा ऊजरु मेरैं भांइ ।। १४ ।। कबीर संतन की झुंगीआ भली भठि कुसती गाउ। आगि लगउ तिह धउलहर जिह नाही हरि को नाउ ।। १५ ।। कबीर संत मूए किआ रोईऐ जो अपुने ग्रिहि जाइ। रोवहु साकत बापुरे जु हाटै हाट बिकाइ ।। १६ ।।

कबीर जी कहते हैं कि प्रायः लोग दुनिया के लिए दीन गँवाते हैं

(अर्थात् सांसारिक लाभ लेने या दुनिया को प्रसन्न करने के लिए सत्याचरण का भी त्याग कर देते हैं), किन्तु दुनिया उनके साथ भी नहीं चलती (दुनिया एक ऐसी संस्था है कि कभी किसी की नहीं बनती)। वे असावधानी के कारण अपने पाँव स्वयं कुल्हाड़ा मार बैठते हैं। (अर्थात् उनके पास न दीन रहता है, न दुनिया।) ॥१३॥ कबीर जी कहते हैं कि जहाँ-जहाँ मैं गया हूँ, जगह-जगह मैंने प्रभु की लीला देखी है, किन्तु मेरी जान में तो राम से प्रेम करने के अतिरिक्त सब लीलाएँ व्यर्थ हैं, ऊजड़ हैं ॥ १४ ॥ कबीर जी कहते हैं कि सन्तों की झोंपड़ी दुराचारियों के समूचे गाँव से भली है। उन ऊँचे सम्पन्न मकानों में आग लगे, जहाँ प्रभु का नाम नहीं बसता (अर्थात् धन का चश्मा व्यक्ति को प्रभु-नाम से विमुख करता है, कबीर उसका विरोध करते हुए उस सम्पन्नता को जला देने योग्य मानते हैं।) ॥ १५ ॥ कबीर जी कहते हैं कि सन्तों की मृत्यु पर क्या रोना ! वह तो मरकर अपने असली घर अर्थात् प्रभु-विलीनता को पा लेते हैं। रोना तो उन मायावी जीवों पर आता है, जिन्हें मरकर भी शांति नहीं, बार-बार जन्म-मरण के चक्र में पड़े रहते हैं ॥ १६ ॥

कबीर साकतु ऐसा है जैसी लसन की खानि। कोने बैठे खाईऐ परगट होइ निदान ॥ १७ ॥ कबीर माइआ डोलनी पवनु झकोलनहारु। संतहु माखनु खाइआ छाछि पीऐ संसारु ॥ १८ ॥ कबीर माइआ डोलनी पवनु वहै हिवधार। जिनि बिलोइआ तिनि खाइआ अवर बिलोवनहार ॥ १९ ॥ कबीर माइआ चोरटी मुसि मुसि लावै हाटि। एकु कबीरा ना मुसै जिनि कीनी बारह बाट ॥ २० ॥

कबीर जी कहते हैं कि मायावी की स्थिति लहसुन खाने जैसी है, कहीं छिपकर भी खा लो, तो आखिर प्रकट हो ही जाती है (अर्थात् छिपकर किया या मायावी पापाचार अन्ततः प्रकट हो जाता है) ॥ १७ ॥ कबीर जी कहते हैं कि माया बर्तन के समान है (यह शरीर) और इसमें के श्वास मथनी के समान हैं। सन्तजन इसको युक्तिपूर्वक चलाते और नवनीत-भोग करते हैं, शेष सब संसार के हाथ तो छाछ मात्र ही लगती है ॥ १८ ॥ कबीर जी कहते हैं कि सन्तों के लिए माया के बर्तन में श्वास की शीतलता है (अर्थात् शांति है), वे इस प्रकार मंथन करते हैं (शांति-पूर्वक जीवन चेतना पाते हैं), अतः मक्खन (सार-तत्त्व) का भोग करते हैं, अन्य सब केवल मथनियाँ ही हैं (अर्थात् उनके पल्ले कुछ नहीं पड़ता) ॥ १९ ॥ कबीर जी कहते हैं कि माया बड़ी चोर है, सबको ठग-ठगकर लाती है। कबीर उसकी ठगी में नहीं आते, उन्होंने तो उसे काटकर टुकड़े-टुकड़े कर दिया है ॥ २० ॥

कबीर सूखु न एंह जुग करहि जु बहुतै मीत । जो चितु राखहि एक सिउ ते सुखु पावहि नीत ।। २१ ।। कबीर जिसु मरने ते जगु डरै मेरे मन आनंदु । मरने ही ते पाईऐ पूरनु परमानंदु ।। २२ ।। राम पदारथु पाइकै कबीरा गांठि न खोल्ह । नही पटणु नही पारखू नही गाहकु नही मोलु ।। २३ ।। कबीर तासिउ प्रीति करि जाको ठाकुरु रामु । पंडित राजे भूपती आवहि कउने काम ।। २४ ।।

कबीर जी कहते हैं कि इस संसार में अधिक मित्र बनाने का कोई सुख नहीं । यदि जीव केवल एक से ही (प्रभु से) गहरी मित्रता बना ले, तो उसे नित्य सुख ही सुख प्राप्त हो ।। २१ ।। कबीर जी कहते हैं कि जिस मरने से संसार डरता है, मुझे उस मृत्यु में भी आनन्द है । मरने से ही (प्रभुनाम-स्मरण वाला जीवन जीने के बाद) पूर्णपरमानन्द परमात्मा मिलता है ।। २२ ।। कबीर जी कहते हैं कि एक बार प्रभु से संयोग हो जाय, तो (संयोग की) गाँठ मत खोलो । यहाँ उस गुणागार का मोल करनेवाला न ग्राहक है, न पारखी है और न ही कोई व्यापार केन्द्र है । अर्थात् गुण-निधि परमात्मा को जहाँ पहचाना न जाय, वहाँ (उसे प्रकट भी न करो) उसकी गाँठ नहीं खोलो ।। २३ ।। कबीर जी कहते हैं कि उन सब जीवों से प्रीति लगाओ, जिनके स्वामी स्वयं परमात्मा हैं । बड़े-बड़े पण्डित, राज्याधिकारी, भूमि-पति हमारे किस काम आएँगे ? (अभिप्राय सम्पन्नता नहीं, भक्ति ही प्रीति का आधार होना चाहिए ।) ।। २४ ।।

कबीर प्रीति इक सिउ कीए आन दुबिधा जाइ । भावै लांबे केस करु भावै घररि मुडाइ ।। २५ ।। कबीर जगु काजल की कोठरी अंध परे तिस माहि । हउ बलिहारी तिन कउ पैसि जु नीकसि जाहि ।। २६ ।। कबीर इहु तनु जाइगा सकहु त लेहु बहोरि । नांगे पावहु ते गए जिन के लाख करोरि ।। २७ ।। कबीर इहु तनु जाइगा कवनै मारगि लाइ । कै संगति करि साध की कै हरि के गुन गाइ ।। २८ ।।

कबीर जी कहते हैं कि एक प्रभु से प्रीति लगाने से अन्य सब दुविधाएँ नष्ट हो जाती हैं । (यह नियम सब पर लागू है) चाहे कोई लम्बी जटाओं वाला साधु हो, चाहे मूँड़ा संन्यासी हो ।। २५ ।। कबीर जी कहते हैं कि संसार काजल की कोठरी है, उसमें रहनेवाले अन्धे-मूर्ख हैं । हम उस पर क़ुर्बान हैं जो इसमें पड़कर भी साफ़ निकल जाते हैं (अर्थात् जगत की कालिमा से अप्रभावित रहते हैं) ।। २६ ।। कबीर जी कहते हैं कि यह

शरीर तो नश्वर है, हर हालत में इसका पतन होगा, कोई रोक सकता हो तो प्रयत्न करके देख लो। इस मार्ग पर लाखों-करोड़ों नंगे पाँव पहले भी जा चुके हैं (अर्थात् करोड़ों शरीर समय-समय पर नष्ट हो चुके हैं) ।।२७।। कबीर जी कहते हैं कि यह शरीर तो नश्वर है, इसे किसी न किसी राह लगाओ; चाहे साधुजन की संगति करो, या प्रभु का नाम जपो ।। २८ ।।

कबीर मरता मरता जगु मूआ मरि भी न जानिआ कोइ। ऐसे मरने जो मरै बहुरि न मरना होइ ।। २९ ।। कबीर मानस जनमु दुलंभु है होइ न बारैबार। जिउ बन फल पाके भुइ गिरहि बहुरि न लागहि डार ।। ३० ।। कबीरा तुही कबीरु तू तेरो नाउ कबीरु। राम रतनु तब पाईऐ जउ पहिले तजहि सरीरु ।। ३१ ।। कबीर झंखु न झंखीऐ तुमरो कहिओ न होइ। करम करीम जु करि रहे मेटि न साकै कोइ ।। ३२ ।।

कबीर जी कहते हैं कि मरते-मरते सब जगत मर रहा है, फिर भी मरने का रहस्य किसी ने नहीं जाना (मरने से पहले जीवित ही मरना)। यदि कोई उस ढंग से मरे तो दोबारा मरने से उसका छुटकारा हो जाय (मुक्ति मिल जाय और बार-बार के मरने अर्थात् आवागमन से छुटकारा हो) ।। २९ ।। कबीर जी कहते हैं कि मनुष्य-जन्म दुर्लभ है, यह बार-बार नहीं मिलता, जैसे बन में फल पक-पककर एक बार धरती पर गिर जाय, तो दोबारा पेड़ पर नहीं लग सकता। (वैसे ही मनुष्य-जन्म एक बार गँवा बैठें तो दोबारा नहीं मिलता।) ।। ३० ।। कबीर जी कहते हैं कि कबीर और परमात्मा में अभेद है। यह अभेदता (राम-रत्न) तभी मिलती है, जब पहले माया का शरीर त्याग दिया जाय ।। ३१ ।। कबीर जी कहते हैं कि बातें बघारने से कुछ नहीं होता, बातें न बघारो। वह कृपालु परमात्मा जो भी कर रहा है, उसे कोई रोक नहीं सकता ।। ३२ ।।

कबीर कसउटी राम की झूठा टिकै न कोइ। राम कसउटी सो सहै जो मरि जीवा होइ ।। ३३ ।। कबीर ऊजल पहिरहि कापरे पान सुपारी खाहि। एकस हरि के नाम बिनु बाधे जमपुरि जांहि ।। ३४ ।। कबीर बेड़ा जरजरा फूटे छेंक हजार। हरूए हरूए तिरि गए डूबे जिन सिर भार ।। ३५ ।। कबीर हाड जरे जिउ लाकरी केस जरे जिउ घासु। इहु जगु जरता देखि कै भइओ कबीरु उदासु ।। ३६ ।।

कबीर जी कहते हैं कि रामनाम की कसौटी पर परखने से झूठ की पोल खुल जाती है। झूठा व्यक्ति इस कसौटी पर नहीं टिक सकता।

केवल मरजीवा (अहंभाव के प्रति मरकर सही जीवन जीनेवाला) ही इस कसौटी पर खरा उतरता है ।। ३३ ।। कबीर जी कहते हैं कि उज्ज्वल कपड़े पहननेवाले, पान-सुपारी खानेवाले (अर्थात् सम्पन्न लोग) भी बाँधकर यमपुरी ही ले जाये जायँगे, यदि उनके पास सच्चे हरिनाम की दौलत नहीं ।। ३४ ।। कबीर जी कहते हैं कि जीवन रूपी बेड़ा पुराना एवं सहस्रों छिद्रों से युक्त हो गया है (इसे तो अब डूबना है), इसमें जो हौले अर्थात् निर्मल जीव हैं, वे तो तैरकर पार हो जायँगे, किन्तु जिनके सिर पर पापों का बोझ लदा है, वे डूब जायँगे ।। ३५ ।। कबीर जी कहते हैं कि संसार के जीव अन्ततः जलकर राख हो रहे हैं; हड्डियाँ लकड़ी की तरह और बाल घास की तरह जल जाते हैं। कबीर इस प्रकार सबको जलता देखकर उदास हैं अर्थात् इस सोच में हैं कि क्या यही जीवन का अन्त है ? मनुष्य भविष्य के लिए क्यों प्रभु-नाम की सम्पदा एकत्र नहीं करता! ।।३६।।

कबीर गरबु न कीजीऐ चाम लपेटे हाड । हैवर ऊपर छत्र तर ते फुनि धरनी गाड ।। ३७ ।। कबीर गरबु न कीजीऐ ऊचा देखि अवासु । आजु कालिह भुइ लेटणा ऊपरि जामै घासु ।। ३८ ।। कबीर गरबु न कीजीऐ रंकु न हसीऐ कोइ । अजहु सु नाउ समुद्र महि किआ जानउ किआ होइ ।। ३९ ।। कबीर गरबु न कीजीऐ देही देखि सुरंग । आजु कालिह तजि जाहुगे जिउ कांचुरी भुयंग ।। ४० ।।

कबीर जी कहते हैं कि हड्डियों पर चमड़ी लपेटकर (शरीर) घमंड नहीं करना चाहिए । (शरीर नश्वर है, इसका क्या भरोसा ?) जो लोग सम्पन्नता की दृष्टि से घोड़ों पर चढ़ते और सिर पर छत्र धारण करते थे, अन्ततः वे भी धरती में गाड़ दिए गए (अर्थात् नष्ट हो गए) ।। ३७ ।। कबीर जी कहते हैं कि रहने के लिए ऊँचे महल देखकर भी गर्व नहीं करना चाहिए । (महलों में रहनेवाले भी) आज या कल धरती में लेटते हैं (मरते हैं) और उन पर घास जम आती है (धरती पर क़ब्रों के ऊपर घास पैदा होने लगती है) ।। ३८ ।। कबीर जी कहते हैं कि घमण्ड न करो, न ही किसी ग़रीब का मज़ाक़ उड़ाओ; अभी तो हमारी नौका समुद्र में है, जाने क्या हो जाय ! (अर्थात् जीवन अभी शेष है, क्या जाने हम भी रंक हो जायँ) ।। ३९ ।। कबीर जी कहते हैं कि सुन्दर शरीर का भी घमंड न करो, कुछ ही दिनों में इसे भी त्यागना पड़ता है, जैसे सर्प केंचुली त्याग देता है ।। ४० ।।

कबीर लूटना है त लूटि लै राम नाम है लूटि । फिरि पाछै पछुताहुगे प्रान जाहिंगे छूटि ।। ४१ ।। कबीर ऐसा कोई न

जनमिओ अपने घर लावै आगि। पांचउ लरिका जारि कै रहै राम लिव लागि ॥ ४२ ॥ को है लरिका बेचई लरिकी बेचै कोइ। साझा करै कबीर सिउ हरि संगि बनजु करेइ ॥४३॥ कबीर इह चेतावनी मत सहसा रहि जाइ। पाछै भोग जु भोगवे तिन को गुड़ु लै खाहि ॥ ४४ ॥

कबीर जी कहते हैं कि जगत में राम-नाम की लूट पड़ी है, साहस करके जितना सम्भव हो, लूट लो। इस अवसर पर चूक गए, तो अन्तकाल में प्राण छूट जायँगे, आप पछताते रह जाओगे। (अभिप्राय यह कि जीते-जी परमात्मा का नाम जप लो, मृत्यूपरांत यह सम्भव नहीं होगा) ॥ ४१ ॥ कबीर जी कहते हैं कि संसार में ऐसा कोई नहीं पैदा हुआ, जो अपने घर (अहंभाव) में आग लगाकर अपने पाँचों लड़कों (काम-क्रोधादि पाँच वृत्तियाँ) को जला डाले और फिर स्वयं निर्विकार भाव से राम-नाम में लीन हो जाय ॥ ४२ ॥ कौन है, जो अपने लड़के और लड़कियों को बेच दे (मन रूपी लड़के और आशा तृष्णा रूपी लड़कियों का मोह त्यागे) और तब कबीर के साथ साझेदारी में हरिनाम का व्यापार करे! (अर्थात् ऐसे कोई विरले लोग ही होंगे, जो मन का अनुसरण त्याग कर और आशा-तृष्णा को छोड़कर प्रभु-नाम में चित्त लगा लें) ॥ ४३ ॥ कबीर जी चेतावनी देते हैं, कहीं किसी को कोई संशय नहीं रह जाना चाहिए। पीछे जो भोग-विलास किया, उसका अब कोई मोल नहीं। उनका तो गुड़ ख़रीदकर खाओ (अर्थात् दूकान पर जाकर बेचो, तो उसका गुड़ भी न मिले!) ॥ ४४ ॥

कबीर मै जानिओ पड़िबो भलो पड़िबे सिउ भल जोगु। भगति न छाडउ राम की भावै निंदउ लोगु ॥ ४५ ॥ कबीर लोगु कि निंदै बपुड़ा जिह मनि नाही गिआनु। राम कबीरा रवि रहे अवर तजे सभ काम ॥ ४६ ॥ कबीर परदेसी कै घाघरै चहुदिसि लागी आगि। खिथा जलि कोइला भई तागे आंच न लाग ॥ ४७ ॥ कबीर खिथा जलि कोइला भई खापरु फूट मफूट। जोगी बपुड़ा खेलिओ आसनि रही बिभूति ॥४८॥

कबीर जी कहते हैं कि पहले मैंने पढ़ना (ज्ञानार्जन) उत्तम समझा, फिर पढ़ने से योगाभ्यास को श्रेष्ठ जाना; अन्ततः अब भक्ति की सर्वोत्तमता में विश्वास हो गया है। अब चाहे लोग कितनी भी निन्दा करें, मैं राम-भक्ति नहीं छोड़ूंगा ॥ ४५ ॥ कबीर जी कहते हैं कि बेचारे लोग भी क्या निन्दा करेंगे? उनमें ज्ञान का अभाव है। कबीर तो सदैव राम-नाम

का सिमरन करता है, अन्य सब कार्य त्याग दिए हैं (कबीर की बला से, कोई क्या कहता है !) ॥ ४६ ॥ कबीर जी कहते हैं कि जीव रूपी परदेसी के जीवन रूपी घघरे में चारों ओर आग लगी है। शरीर रूपी अँगरखा पूर्णतः जलकर कोयला हो गया है, फिर भी जीवात्मा रूपी जीवन-सूत्र की आँच नहीं आती ॥ ४७ ॥ कबीर जी कहते हैं कि योगी (जीव) की कफ़नी जल गई है, खप्पर टूट गया है अर्थात् योगी का वेष पूर्णतः मिट गया है। वह अपना खेल समाप्त कर चला गया है, अब तो आसन पर केवल थोड़ी विभूति ही रह गई है। अर्थात् मनुष्य अन्ततः संसार में अपनी लीला समाप्त करके चल देता है, पीछे मुट्ठी-भर राख ही बचती है) ॥ ४८ ॥

कबीर थोरै जलि माछुली झीवर मेलिओ जालु । इह टोघनै न छूटसहि फिरि करि समुंदु सम्हालि ॥ ४९ ॥ कबीर समुंदु न छोडीऐ जउ अति खारो होइ । पोखरि पोखरि ढूढते भलो न कहिहै कोइ ॥ ५० ॥ कबीर निगुसांएं बहि गए थांघी नाही कोइ । दीन गरीबी आपुनी करते होइ सु होइ ॥ ५१ ॥ कबीर बैसनउ की कूकरि भली साकत की बुरी माइ । ओहु नित सुनै हरिनाम जसु उह पाप बिसाहन जाइ ॥ ५२ ॥

कबीर जी कहते हैं कि मनुष्य थोड़े जल की मछली (छोटे-मोटे सहारे खोजनेवाला) है, यम का जाल बड़ा विस्तृत है (थोड़े जल में रहने वाली मछली उससे बच नहीं सकती)। ये थोड़े जल के (छोटे-मोटे आश्रय = देवी-देवताओं के सहारे) मनुष्य को छुड़ा नहीं सकते। अतः मनुष्य को हरिनाम के समुद्र का सहारा लेना चाहिए (जहाँ यमदूतों के विस्तृत जाल में भी वह पकड़ा नहीं जा सकता) ॥ ४९ ॥ कबीर जी कहते हैं कि हरिनाम-समुद्र को कभी मत छोड़ो, चाहे उसमें कुछ कष्ट भी आएँ। पोखरों की खोज (छोटे सहारों की तलाश) करनेवाले को कोई भला नहीं कहता ॥५०॥ कबीर जी कहते हैं कि निगुरे (बे-सहारा) जीव नष्ट हो गए, उन्हें थामनेवाला (सहारा देनेवाला) कोई नहीं था। मनुष्य को अपनी चादर में रहना चाहिए अर्थात् अपने साधनों में जीना चाहिए। उस पर जो प्रभु करे, वह स्वीकार कर लो (भला मानकर स्वीकार कर लो) ॥ ५१ ॥ कबीर जी कहते हैं कि वैष्णव जीव की कुतिया भी मायाधारी की माँ से भली है। वह नित्य हरिनाम का उच्चारण तो सुनती है, जबकि मायाधारी जीव की माँ पुत्र के अस्तित्व में पाप का व्यापार देखती है ॥ ५२ ॥

कबीर हरना दूबला इहु हरीआरा तालु । लाख अहेरी

एकु जीउ केता बंचउ कालु ।। ५३ ।। कबीर गंगा तीर जु घरु करहि पीवहि निरमल नीरु। बिनु हरि भगति न मुकति होइ इउ कहि रमे कबीर ।। ५४ ।। कबीर मनु निरमलु भइआ जैसा गंगा नीरु । पाछै लागो हरि फिरै कहत कबीर कबीर ।।५५।। कबीर हरदी पीअरी चूंनां ऊजल भाइ । राम सनेही तउ मिलै दोनउ बरन गवाइ ।। ५६ ।।

कबीर जी कहते हैं कि इस कमज़ोर हिरण (साधारण जीव) को दोलायित करने के लिए कितने ही ललचौहें पदार्थ इस धरती पर हैं (हरा-भरा ताल से ललचानेवाले पदार्थ अभिप्रेत हैं) । बेचारा वह अकेला जीव है, लाखों शिकारी उसे फाँसने को जाल बिछाए हुए हैं, वह कब तक बच पाएगा ? ।। ५३ ।। कबीर जी कहते हैं कि यदि कोई गंगा के किनारे ही अपना घर बना ले, तो नित्य-प्रति निर्मल नीर का पान कर सकता है (अर्थात् हरि-भक्ति में मग्न जीव नित्य उसका मधुर आस्वादन करता है) । हरि-भक्ति के बिना किसी की मुक्ति नहीं होती, यह उपदेश देकर कबीर चलते बने ।। ५४ ।। कबीर जी कहते हैं कि मन जब गंगा-जल की तरह निर्मल हो जाता है, तो स्वयं परमात्मा जीव को पुकारता हुआ उसके पीछे-पीछे घूमता है ।। ५५ ।। कबीर जी कहते हैं कि हल्दी पीली होती है, चूना सफ़ेद होता है, किन्तु जो इन दोनों वर्णों से इतर होता है, वही राम के प्यार में लीन हो पाता है । (अर्थात् रंग-भेद की नीति, जाति के ऊँच-नीच के अभिमान, पीले-सफ़ेद कपड़ों के सम्प्रदायों से अतीत हो जानेवाला निर्मल-चित्त जीव ही प्रभु का प्यार प्राप्त कर सकता है ।) ।। ५६ ।।

कबीर हरदी पीरतनु हरै चून चिहनु न रहाइ । बलिहारी इह प्रीति कउ जिह जाति बरनु कुलु जाइ ।। ५७ ।। कबीर मुकति दुआरा संकुरा राई दसएं भाइ । मनु तउ मैगलु होइ रहिओ निकसो किउ कै जाइ ।। ५८ ।। कबीर ऐसा सतिगुरु जे मिलै तुठा करे पसाउ । मुकति दुआरा मोकला सहजे आवउ जाउ ।। ५९ कबीर ना मोहि छानि न छापरी ना मोहि घरु नही गाउ । मत हरि पूछै कउनु है मेरे जाति न नाउ ।। ६० ।।

कबीर जी कहते हैं कि यदि हल्दी अपना पीलापन छोड़ दे, चूना अपनी सफ़ेदी से दूर हो, तभी प्रीति मुकम्मल होती है । जिस प्रेम में जाति, वर्ण, कुल की सीमाओं को बाद कर दिया जाता है, उसी पर कबीर बलिहार

हैं। (अर्थ यों भी लगता है कि हल्दी के पीले-पन में चूना अपना चिह्न भी नहीं रखता, अर्थात् प्रीति में पूर्णतः प्रेमिक के रंग में रँगा जाता है। ऐसी प्रीति पर कबीर क़ुर्बान हैं, जिसमें कुल, वर्ण या जाति को विलीन कर दिया जाता है।) ॥ ५७ ॥ कबीर जी कहते हैं कि मुक्ति का द्वार अत्यन्त सँकरा है, राई के दसवें भाग के बराबर छोटा है। मन अहंकार में हाथी की तरह फूल रहा है, भला उस तंग द्वार से क्योंकर निकल सकेगा (अर्थात् क्योंकर मुक्ति पाएगा) ॥ ५८ ॥ कबीर जी कहते हैं कि यदि सतिगुरु हमसे सन्तुष्ट होकर कृपा कर दे, तो मुक्ति का द्वार खुला हो सकता है। तब जीव उसमें से आसानी से निकल सकता है (अर्थात् गुरु की प्राप्ति से सहज में ही मुक्ति मिल जाती है) ॥ ५९ ॥ कबीर जी कहते हैं कि मेरा कोई झोंपड़ी, छप्पर, घर या गाँव नहीं है। मैंने अपनी कोई जाति या नाम भी नहीं रखा, ताकि हरि कौन है ? कहकर कुछ न पूछे (अर्थात् वे हरि में ऐसी विलीनता चाहते हैं कि विलगता का कोई चिह्न भी न बचे।) ॥ ६० ॥

कबीर मुहि मरने का चाउ है मरउ त हरि कै दुआर। मत हरि पूछै कउनु है परा हमारै बार ॥ ६१ ॥ कबीर ना हम कीआ न करहिगे ना करि सकै सरीरु। किआ जानउ किछु हरि कीआ भइओ कबीरु कबीरु ॥ ६२ ॥ कबीर सुपनै हू बरड़ाइकै जिह मुख निकसै रामु। ताके पग की पानही मेरे तन को चामु ॥ ६३ ॥ कबीर माटी के हम पूतरे मानसु राखिओ नाउ। चारि दिवस के पाहुने बड बड रूंधहि ठाउ ॥ ६४ ॥

कबीर जी कहते हैं कि मुझे मरने का चाव तो हैं, लेकिन मैं परमात्मा के द्वार पर ही मरना चाहता हूँ। शायद कभी प्रभु पूछ बैठे कि यह हमारे द्वार पर कौन पड़ा है ! ॥ ६१ ॥ कबीर जी कहते हैं कि न तो यह शरीर हमने बनाया है, न बनाएँगे और न ही बनाने में समर्थ हैं। जो कुछ भी है परमात्मा ने बनाया है और कबीर का वर्तमान रूप कबीर कहलवा सका है ॥ ६२ ॥ कबीर जी कहते हैं कि सपने में भी यदि बड़बड़ाने से किसी के मुँह से 'राम' का उच्चारण होता हो, तो मेरे शरीर के चमड़े से उसके पाँव का जूता बना लो (अर्थात् राम उच्चारनेवाले व्यक्ति की पूर्णदासता की कामना करते हैं) ॥ ६३ ॥ कबीर जी मनुष्य की नश्वरता और क्षण-भंगुरता बताते हुए कहते हैं कि हम मिट्टी के पुतले हैं, हमारा नाम मनुष्य धर दिया गया है। यहाँ हम चार दिन के मेहमान हैं, बेकार बढ़-बढ़कर बड़ी जगह पर अधिकार जमाते फिरते हैं ॥ ६४ ॥

कबीर महिदी करि घालिआ आपु पीसाइ पीसाइ। तै

सह बात न पूछीऐ कबहु न लाई पाइ ॥ ६५ ॥ कबीर जिह दर आवत जातिअहु हटकै नाही कोइ । सो दरु कैसे छोडीऐ जो दरु ऐसा होइ ॥ ६६ ॥ कबीर डूबा थापै उबरिओ गुन की लहरि झबकि । जब देखिओ बेड़ा जरजरा तब उतरि परिओ हउ फरकि ॥ ६७ ॥ कबीर पापी भगति न भावई हरि पूजा न सुहाइ । माखी चंदनु परहरै जह बिगंध तह जाइ ॥ ६८ ॥

कबीर जी कहते हैं कि स्वयं पीस-पीसकर मैंने मँहिदी तैयार की है (अनेक तप-साधना की है), तो भी स्वामी ने मेरी बात नहीं पूछी और मँहिदी पाँव में नहीं लगाई (अर्थात् तप-साधना से नहीं, प्रभु निर्मल प्यार से मिलता है) ॥ ६५ ॥ कबीर जी कहते हैं कि जिस द्वार पर आने-जाने पर कोई रोकता नहीं, वह द्वार क्योंकर छोड़ें ? (ऐसा द्वार प्रभु का द्वार है, उसी पर पड़ा रहने में कुशल है।) ॥ ६६ ॥ कबीर जी कहते हैं कि मैं तो डूबने को ही था कि शीघ्र ही गुणों की तरंग से किनारे पर आ लगा। जीवन रूपी बेड़ा जर्जरित देखा तो मैं अहम् का बोझ त्यागकर जल्दी से वहाँ से उतर गया (अर्थात् जीवन को निर्मल बनाकर बच गया) ॥ ६७ ॥ कबीर जी कहते हैं कि पापी जीव को भक्ति और पूजा नहीं सुहाती, जैसे मक्खी चन्दन को छोड़ती है, दुर्गन्ध पर जाती है (वैसे ही पापी भक्ति-पूजा की अपेक्षा अनीति में सुख पाता है) ॥ ६८ ॥

कबीर बैदु मूआ रोगी मूआ मूआ सभु संसारु । एकु कबीरा ना मूआ जिह नाही रोवनहारु ॥ ६९ ॥ कबीर रामु न धिआइओ मोटी लागी खोरि । काइआ हांडी काठ की ना ओहु चहै बहोरि ॥ ७० ॥ कबीर ऐसी होइ परी मन को भावतु कीनु । मरने ते किआ डरपना जब हाथि सिधउरा लीन ॥ ७१ ॥ कबीर रस को गांडो चूसीऐ गुन कउ मरीऐ रोइ । अवगुनीआरे मानसै भलो न कहिहै कोइ ॥ ७२ ॥

कबीर जी कहते हैं कि वैद्य, रोगी और शेष सब संसार मरता है। केवल कबीर नहीं मरता, क्योंकि उसे रोनेवाला कोई नहीं। (अर्थात् माया में फँसा सारा संसार नष्ट हो गया, निर्लिप्त भक्त जीव स्थिर है) ॥ ६९ ॥ कबीर जी कहते हैं कि राम का नाम न जपने की यह बुरी आदत पड़ गई है। याद रखो (यदि अब प्रभु-नाम नहीं जपोगे तो) यह काठ की हाँड़ी-जैसा शरीर दुबारा नहीं चढ़नेवाला (पुनः मानव-जन्म नहीं मिलेगा) ॥ ७० ॥ कबीर जी कहते हैं कि जब सब मन-मर्जी से किया है, तो कैसा भी परिणाम हो ! डरने का क्या काम है, जब हाथ में

सिंदूर-लगा नारियल ले ही लिया (तो सती होने से क्या डरना ! सती होनेवाली स्त्री जब सिंदूर-लगा नारियल उठा लेती थी, तो वह पति की चिता में जलने से कभी मुँह न मोड़ती थी) ।। ७१ ।। कबीर जी कहते हैं कि जैसे रस के लिए गन्ने को चूसा जाता है, वैसे ही गुणों के लिए गन्ने की तरह पिराना होता है (क़ुर्बानी देनी होती है), अवगुणी मनुष्य को संसार में कोई नहीं पूछता (कोई भला नहीं कहता) ।। ७२ ।।

कबीर गागरि जल भरी आजु कालिह जैहै फूटि । गुरु जु न चेतहि आपनो अधमाझ लीजहिगे लूटि ।। ७३ ।। कबीर कूकरु राम को मुतीआ मेरो नाउ । गले हमारे जेवरी जह खिचै तह जाउ ।। ७४ ।। कबीर जपनी काठ की किआ दिखलावहि लोइ । हिरदै रामु न चेतही इह जपनी किआ होइ ।। ७५ ।। कबीर बिरहु भुयंगमु मन बसै मंतु न मानै कोइ । राम बिओगी ना जीऐ जीऐ त बउरा होइ ।। ७६ ।।

कबीर जी कहते हैं कि यह शरीर रूपी जल की गगरी आज या कल अन्ततः तो टूटने की ही है । हे जीव, यदि तुम गुरु की सेवा नहीं करोगे, तो बीच में ही लुट जाओगे (अर्थात् गुरु की खोज ही शरीर धारण करने की उपलब्धि है) ।। ७३ ।। कबीर जी कहते हैं कि मैं अपने प्रभु का कुत्ता हूँ, मुझे मेरा स्वामी मोती कहकर पुकारता है । मेरे गले में स्वामी की ज़ंजीर है, वह जिधर खींचता है, उधर ही मैं जाता हूँ (अर्थात् यहाँ कबीर अत्यन्त विनम्र भाव से स्वामी प्रभु को आत्म-समर्पण कर रहे हैं) ।। ७४ ।। कबीर ललकारकर झूठे साधुओं से कहते हैं कि यह लकड़ी के मनकों की जपमाला लोगों को क्या दिखाते हो ! हृदय से तुम राम का स्मरण नहीं करते, यह माला तुम्हें क्या दे सकेगी ? ।। ७५ ।। कबीर जी कहते हैं कि प्रभु-विरह का सर्प जब अन्तर्मन को डस लेता है, तो उस पर कोई मन्त्रोपचार नहीं चलता । प्रभु के विरह में जीव जी ही नहीं पाता, यदि जी जाय अर्थात् मरने से बच भी जाय तो पगला जाता है— राम के विरह में अपनी सुध-बुध खो बैठता है ।। ७६ ।।

कबीर पारस चंदनै तिन्ह है एक सुगंध । तिह मिलि तेऊ ऊतम भए लोह काठ निरगंध ।। ७७ ।। कबीर जम का ठेंगा बुरा है ओहु नही सहिआ जाइ । एकु जु साधू मोहि मिलिओ तिन्ह लीआ अंचलि लाइ ।। ७८ ।। कबीर बैदु कहै हउ ही भला दारू मेरै वसि । इह तउ बसतु गुपाल की जब भावै लेइ

खसि ।। ७९ ।। कबीर नउबति आपनी दिन दस लेहु बजाइ । नदी नाव संजोग जिउ बहुरि न मिलहै आइ ।। ८० ।।

कबीर जी कहते हैं कि पारस और चन्दन में एक समान स्वभाव है। इन्हें मिलकर लोहा स्वर्ण बनता एवं साधारण लकड़ी चन्दन-जैसी सुगन्धित हो जाती है ।। ७७ ।। कबीर जी कहते हैं कि यमदूत का धक्का बुरा है, सहा नहीं जा सकता। मुझे तो एक साधु (गुरु) मिल गया है, जिसने मुझे अपने दामन की ओट दी है (भाव गुरु की खोज करो) ।। ७८ ।। कबीर जी कहते हैं, वैद्य अपने को बड़ा समझता है, कि उसके पास दवा मौजूद है; किन्तु यह जीवन प्रभु की रहन है, दवा पर नहीं चलता, जब वह चाहे इसे छीन लेता है ।। ७९ ।। कबीर जी कहते हैं कि तुम दस दिन अपना डंका बजा लो। पुनः तो नदी की नाव के मुसाफ़िरों की भाँति कहाँ दोबारा मेल होने की कोई सम्भावना होती है ।। ८० ।।

कबीर सात समुंदहि मसु करउ कलम करउ बनराइ । बसुधा कागदु जउ करउ हरिजसु लिखनु न जाइ ।। ८१ ।। कबीर जाति जुलाहा किआ करै हिरदै बसे गुपाल । कबीर रमईआ कंठ मिलु चूकहि सरब जंजाल ।। ८२ ।। कबीर ऐसा को नही मंदर देइ जराइ । पांचउ लरिके मारि कै रहै राम लिउ लाइ ।। ८३ ।। कबीर ऐसा को नही इह तन देवै फूकि । अंधा लोगु न जानई रहिओ कबीरा कूकि ।। ८४ ।।

कबीर जी कहते हैं कि यदि सातों समुद्रों की स्याही घोल ली जाय, समस्त वनस्पति की क़लमें घड़ ली जायँ और समूची धरती को काग़ज बना लिया जाय, तो भी परमात्मा की कीर्ति-गाथा लिखी नहीं जा सकती ।। ८१ ।। कबीर जी कहते हैं कि जब हृदय में प्रभु आन बसे हों तो जुलाहा की जाति होने से क्या होता है ? राम और कबीर ने गले मिलकर समस्त दुनियावी बंधनों को भुला दिया है ।। ८२ ।। कबीर जी कहते हैं कि ऐसा कोई नहीं, जो अपना घमण्ड रूपी घर जला दे और पाँचों लड़कों (काम-क्रोधादि) को मारकर राम में तल्लीन रहे ।। ८३ ।। कबीर जी कहते हैं कि ऐसा कोई नहीं (कोई विरला ही होता है), जो अपनी देह फूंककर (सत्य की खोज करे); कबीर चीख़-चीख़कर समझा रहा है, किन्तु अज्ञान के कारण अन्धे लोग नहीं समझते ।। ८४ ।।

कबीर सती पुकारै चिह चड़ी सुनुहो बीर मसान । लोगु सबाइआ चलि गइओ हम तुम कामु निदान ।। ८५ ।। कबीर मनु पंखी भइओ उडि उडि दहदिस जाइ । जो जैसी संगति

मिलै सो तैसो फलु खाइ ।। ८६ ।। कबीर जाकउ खोजते पाइओ सोई ठउरु । सोई फिरि कै तू भइआ जाकउ कहता अउरु ।। ८७ ।। कबीर मारी मरउ कुसंग की केले निकटि जु बेरि । उह झूलै उह चीरीऐ साकत संगु न हेरि ।। ८८ ।।

कबीर जी कहते हैं कि चिता पर बैठी सती पुकारती है कि ऐ भाई श्मशान, सुनो ! सब लोग चले गए हैं, अन्ततः अब मेरा-तुम्हारा ही साथ रह गया है (अर्थात् चार दिन की प्रशंसा का महत्त्व नहीं, जीवन के पार तो मनुष्य की गुणयुत कमाई ही साथ देती है) ।। ८५ ।। कबीर जी कहते हैं कि मन पक्षी बनकर दसों दिशाओं में उड़ता-फिरता है। जहाँ जैसी संगति मिलती है, वहाँ वैसा फल प्राप्त करता है (अर्थात् मनुष्य को संगति का फल अवश्य मिलता है) ।। ८६ ।। कबीर जी कहते हैं कि जीव जिसे जगह-जगह खोजता था, अब वह ठिकाना पा गया है। जिस प्रभु को पहले अपने से अलग समझता था, अब उसी का रूप हो गया है ।। ८७ ।। कबीर जी कुसंगति के कुफल का संकेत करते हुए कहते हैं कि कुसग मारक है, जैसे केले की संगति बेरी से हो। बेरी खुशी से झूमती है तो बेचारा केले का पेड़ चिरता चला जाता है। अतः कभी साकत (मायाधारी, कुटिल) की संगति न करो ।। ८८ ।।

कबीर भार पराई सिर चरै चलिओ चाहै बाट । अपने भारहि ना डरै आगै अउघट घाट ।।८९।। कबीर बन की दाधी लाकरी ठाढी करै पुकार । मति बसि परउ लुहार के जारै दूजी बार ।। ९० ।। कबीर एक मरंते दुइ मूए दोइ मरंतह चारि । चारि मरंतह छह मूए चारि पुरख दुइ नारि ।। ९१ ।। कबीर देखि देखि जगु ढूंढिआ कहूं न पाइआ ठौरु । जिनि हरि का नामु न चेतिओ कहा भुलाने अउर ।। ९२ ।।

कबीर जी कहते हैं कि यह मनुष्य दूसरों के उत्तरदायित्वों को अपने सिर उठाकर चलना चाहता है। आगे कठिन रास्ता है, अपनी ज़िम्मावारियों का बोझ ही पर्याप्त होगा (दूसरों का बोझ कैसे ढोया जायगा) ।। ८९ ।। कबीर जी कहते हैं कि बन की जली हुई लकड़ी पुकारती है कि कहीं लोहार के वश पड़ गई तो दूसरी बार फिर जलना पड़ेगा। (अर्थात् बुराई के वश में बार-बार हानि उठानी पड़ती है।) ।। ९० ।। कबीर जी कहते हैं कि एक को मारो तो दो मरते हैं, दो को मारो तो चार मरते हैं। चार मारो तो छः जन, दो स्त्रियाँ और चार पुरुष मारे जाते हैं (भाव यह कि अहंभाव को मारो तो राग-द्वेष दोनों भी

मारे जाते हैं। अहम् के साथ यदि अभिमान भी मार दो तो मन भी मर जाता है अर्थात् राग, द्वेष, अभिमान और मन चारों मर जाते हैं। जब ये चारों मारे जायँ तो आशा-तृष्णा भी नष्ट हो जाती हैं। इनमें पूर्व चार पुंलिग हैं और आशा-तृष्णा स्त्रीलिंग हैं) ॥ ९१ ॥ कबीर जी कहते हैं कि देख-देखकर मैंने सारा संसार ढूँढ़ लिया है, कहीं आश्रय नहीं मिला। परमात्मा का नाम-स्मरण नहीं किया, अन्य कार्यों में भूले फिरने से क्या लाभ ? ॥ ९२ ॥

कबीर संगति करीऐ साध की अंति करै निरबाहु। साकत संगु न कीजीऐ जा ते होइ बिनाहु ॥ ९३ ॥ कबीर जग महि चेतिओ जानि कै जग महि रहिओ समाइ। जिन हरि का नामु न चेतिओ बादहि जनमें आइ ॥ ९४ ॥ कबीर आसा करीऐ राम की अवरै आस निरास। नरकि परहि ते मानई जो हरिनाम उदास ॥ ९५ ॥ कबीर सिख साखा बहुते कीए केसो कीओ न मीतु। चाले थे हरि मिलन कउ बीचै अटकिओ चीतु ॥ ९६ ॥

कबीर जी कहते हैं कि साधुजन की संगति करो, जो अन्त तक निर्वाह करता है। ऐसे मायाधारी की संगति नहीं करनी चाहिए, जिससे विनाश हो ॥ ९३ ॥ कबीर जी कहते हैं कि परमात्मा को संसार में सर्वव्यापक जानकर उसका स्मरण करो। जिसने इस प्रकार प्रभु का स्मरण नहीं किया, संसार में उसका जन्म ही व्यर्थ है ॥ ९४ ॥ कबीर जी कहते हैं कि प्रभु-नाम की आशा करो, अन्य सब पर की आशा तो निराशा के समान होती है। जो जन हरिनाम के प्रति उदासीन रहते हैं, उन्हें नरक में पड़े के समान समझो ॥ ९५ ॥ कबीर जी कहते हैं कि प्रभु-मिलन की इच्छा लेकर चलनेवाले साधु-महात्मा भी बीच में ही अटक जाते हैं, जब वे अपने शिष्य-सेवक बनाने में भटकते हैं, परमात्मा से सच्ची मित्रता स्थापित नहीं करते ॥ ९६ ॥

कबीर कारनु बपुरा किआ करै जउ रामु न करै सहाइ। जिह जिह डाली पगु धरउ सोई मुरि मुरि जाइ ॥ ९७ ॥ कबीर अवरह कउ उपदेसते मुख मै परिहै रेतु। रासि बिरानी राखते खाया घर का खेतु ॥ ९८ ॥ कबीर साधू की संगति रहउ जउ की भूसी खाउ। होनहारु सो होइहै साकत संगि न जाउ ॥ ९९ ॥ कबीर संगति साध की दिन दिन दूना हेतु। साकत कारी कांबरी धोए होइ न सेतु ॥ १०० ॥

कबीर जी कहते हैं कि बेचारा उद्यम क्या करेगा, यदि परमात्मा ही

सहयोग न देगा ! जिस-जिस शाख पर पाँव धरेगा, वही मुड़ जायगी (अर्थात् यदि प्रभु-कृपा न हो, तो मनुष्य जिस कार्य में हाथ डालेगा, वहीं असफल रहेगा) ॥ ९७ ॥ कबीर जी कहते हैं कि मूर्ख-गँवार लोग औरों को उपदेश देते हैं, अपने को नहीं सुधारते। उनके मुँह में धूल ही पड़ती है। ऐसे लोग दूसरों के खेत-खलिहान की रक्षा करते-करते अपने खेत उजाड़ बैठते हैं ॥ ९८ ॥ कबीर जी उपदेश देते हैं कि ऐ लोगो, सन्तजनों की संगति में रहो, चाहे जौ की ही रोटी प्राप्त हो (निर्धनता और सादगी में रहो), किन्तु कभी मायाधारियों की संगति मत करो। वस्तुस्थिति को परमात्मा पर छोड़ दो, जो होना होगा, हो जायगा (किसी विशेष लक्ष्य के लिए साकत-संगति अनुचित है) ॥ ९९ ॥ कबीर जी कहते हैं कि साधुजन की संगति में दिनोदिन प्रभु-प्रीति बढ़ती है। मायाधारी जीव तो काले कम्बल-जैसे होते हैं, जिसे धोने से भी सफ़ेदी नहीं आती। (अर्थात् कुटिल मायाधारियों की संगति न करो।) ॥ १०० ॥

कबीर मनु मूंडिआ नही केस मुंडाए कांइ। जो किछु कीआ सु मन कीआ मूंडा मूंडु अजांइ ॥ १०१ ॥ कबीर रामु न छोडीऐ तनु धनु जाइ त जाउ। चरन कमल चितु बेधिआ रामहि नामि समाउ ॥ १०२ ॥ कबीर जो हम जंतु बजावते टूटि गईं सभ तार। जंतु बिचारा किआ करै चले बजावनहार ॥१०३॥ कबीर माइ मूंडउ तिह गुरू की जा ते भरमु न जाइ। आप डुबे चहु बेद महि चेले दीए बहाइ ॥ १०४ ॥

कबीर जी सिर मुँड़ाकर संन्यासियों का आडम्बर करनेवालों पर व्यंग्य करते हुए कहते हैं कि मन नहीं मुँड़ाते (मन की बुराइयाँ दूर नहीं करते), तो सिर क्यों मुँड़ाते हो ? जो कुछ भला-बुरा करता है, वह मन करता है, सिर तो व्यर्थ में ही मूँड़ दिया जाता है ॥ १०१ ॥ कबीर जी कहते हैं कि हरिनाम नहीं छोड़ो, तन और धन यदि गँवाना भी पड़े, तो कोई अंदेशा नहीं। प्रभु के चरण-कमलों से हार्दिक प्रीति करो और राम के नाम में ही लीन हो जाओ ॥ १०२ ॥ कबीर जी कहते हैं कि जो यन्त्र हम बजाते हैं (जिस शरीर को भोगते थे), उसके सब तार टूट गए हैं (वह जर्जरित हो गया है)। यन्त्र बेचारे की क्या बिसात, जबकि बजानेवाला ही उठकर चल दिया हो (अर्थात् शरीर के भीतर की आत्मिक शक्ति ही उसे छोड़ जाती है) ॥ १०३ ॥ कबीर जी कहते हैं कि ऐसे गुरु का होना व्यर्थ है, जिससे मनुष्य का भ्रम न दूर हो सके ('माइ मूंडउ' से अभिप्राय है कि उसकी माँ को मूँड़ दो; एक प्रकार से गाली दी गई है)। वह स्वयं तो अस्वस्थ ज्ञान में डूबा होता है, शिष्यों को भी उसी प्रवाह में बहा देता है ॥ १०४ ॥

कबीर जेते पाप कीए राखे तलै दुराइ। परगट भए निदान सभ जब पूछे धरमराइ ॥ १०५ ॥ कबीर हरि का सिमरनु छाडि कै पालिओ बहुतु कुटंबु। धंधा करता रहि गइआ भाई रहिआ न बंधु ॥ १०६ ॥ कबीर हरि का सिमरनु छाडि कै राति जगावन जाइ। सरपनि होइ कै अउतरै जाए अपुने खाइ ॥ १०७ ॥ कबीर हरि का सिमरनु छाडि कै अहोई राखै नारि। गदही होइ कै अउतरै भारु सहै मन चारि ॥ १०८ ॥

कबीर जी कहते हैं कि मनुष्य जितने भी पाप करता है, उन्हें समाज से छिपाकर रखता है। किन्तु अन्तकाल जब धर्मराज हिसाब-किताब करता है तो सब प्रकट हो जाते हैं (अर्थात् पाप छिपते नहीं, उनका फल अवश्य मिलता है) ॥ १०५ ॥ कबीर जी कहते हैं कि लोग परमात्मा का सिमरन छोड़कर परिवार के भरण-पोषण में व्यस्त रहते हैं। अन्ततः सब भाई-बन्धु बिछुड़ जाते हैं और मनुष्य अपने पार्थिव धंधों में मग्न बना रह जाता है ॥ १०६ ॥ कबीर जी कहते हैं कि जो स्त्री प्रभु-भजन छोड़कर रात्रि में श्मशान जगाती फिरती है, वह सर्प-योनि में अवतरित होती एवं अपने ही जन्म दिए बच्चों को खाती है ॥ १०७ ॥ जो स्त्री परमात्मा का भजन छोड़कर होई का व्रत-उपवास (कार्तिक में पड़नेवाला एक व्रत) करती है, वह गधी की योनि में जन्मती और कई-कई मन बोझ उठाती है ॥ १०८ ॥

कबीर चतुराई अति घनी हरि जपि हिरदै माहि। सूरी ऊपरि खेलना गिरै त ठाहर नाहि ॥ १०९ ॥ कबीर सोई मुखु धंन्हि है जा मुख कहीऐ रामु। देही किस की बापुरी पवित्रु होइगो ग्रामु ॥ ११० ॥ कबीर सोई कुल भली जा कुल हरि को दासु। जिह कुल दासु न ऊपजै सो कुल ढाकु पलासु ॥ १११ ॥ कबीर है गइ बाहन सघन घन लाख धजा फहराहि। इआ सुख ते भिख्या भली जउ हरि सिमरत दिन जाहि ॥ ११२ ॥

कबीर जी कहते हैं कि हृदय में हरि को जपना भी महत्त्वपूर्ण और प्रतिष्ठा योग्य बात है। यह सब सूली पर खेल रचाने के बराबर है, जहाँ से गिरने पर फिर कोई ठिकाना नहीं रह जाता (अर्थात् हरि-भक्ति से विमुख जीव का कोई प्रश्रय नहीं) ॥ १०९ ॥ कबीर जी कहते हैं कि जिस मुख से प्रभु का नाम लिया जाता है, वह धन्य है। मुख से सम्बद्ध शरीर तो क्या, समूचा गाँव ही धन्य हो जाता है ॥ ११० ॥ कबीर जी

कहते हैं कि वह वंश भला है, जिसमें प्रभु-प्रीति करनेवाला कोई भक्तजन उत्पन्न होता है। जिस कुल में ऐसा प्रभु-भक्त नहीं उपजता, वह कुल तो ढाक-पलास-सा फलहीन होता है ॥ १११ ॥ कबीर जी कहते हैं कि घोड़े-हाथियों की सवारी एवं लाखों जगह पताका फहरती हो, तो भी उस सुख की अपेक्षा दिन-रात प्रभु-भजन करने से मिलनेवाला सुख बड़ा है ॥११२॥

कबीर सभु जगु हउ फिरिओ मांदलु कंध चढाइ। कोई काहू को नही सभ देखी ठोकि बजाइ ॥ ११३ ॥ मारगि मोती बीथरे अंधा निकसिओ आइ। जोति बिना जगदीस की जगतु उलंघे जाइ ॥ ११४ ॥ बूडा बंसु कबीर का उपजिओ पूतु कमालु। हरि का सिमरनु छाडि कै घरि ले आया मालु ॥११५॥ कबीर साधू कउ मिलने जाईऐ साथि न लीजै कोइ। पाछै पाउ न दीजीऐ आगै होइ सु होइ ॥ ११६ ॥

कबीर जी कहते हैं कि मैं तो कन्धे पर ढोल रखकर सारा जगत घूमकर देख चुका हूँ (सबके सम्मुख प्रत्यक्ष रहकर) और अन्ततः इसी निर्णय पर पहुँचा हूँ कि कोई किसी का नहीं ॥ ११३ ॥ जीवन-मार्ग में अध्यात्म के मोती बिखरे पड़े हैं, किन्तु जगत को ज्ञान की आँखें नहीं मिलीं। कबीर जी कहते हैं कि प्रभु-नाम की ज्योति के बग़ैर वे मोतियों को उलंघते जा रहे हैं, अज्ञानांध हैं ॥ ११४ ॥ कबीर जी अपने पुत्र कमाल की लालसा को संकेत करते हुए कहते हैं कि मेरा तो वंश ही डूब गया जो ऐसा कमाल पुत्र पैदा हुआ (पुत्र का नाम कमाल है)। हरि-सिमरन का पावन कृत्य छोड़कर वह धन-माल जोड़ने में लग गया है ॥ ११५ ॥ कबीर जी कहते हैं कि सन्तजनों के दर्शनों के लिए जाते हुए अपना सामर्थ्य पहचानो (किसी पर आश्रित न रहो)। क़दम-क़दम बढ़ाते हुए चलो, पीछे न फिरो, आगे जो होगा, देखा जायगा ॥ ११६ ॥

कबीर जगु बाधिओ जिह जेवरी तिह मत बंधहु कबीर। जैहहि आटा लोन जिउ सोन समानि सरीरु ॥ ११७ ॥ कबीर हंसु उडिओ तनु गाडिओ सोझाई सैनाह। अजहु जीउ न छोडई रंकाई नैनाह ॥ ११८ ॥ कबीर नैन निहारउ तुझ कउ स्रवन सुनउ तुअ नाउ। बैन उचरउ तुअ नाम जी चरन कमल रिद ठाउ ॥ ११९ ॥ कबीर सुरग नरक ते मै रहिओ सतिगुर के परसादि। चरन कमल की मउज महि रहउ अंति अरु आदि ॥ १२० ॥

कबीर जी कहते हैं कि सारा संसार जिस रस्सी से बँधा है, तुम उसमें

मत बँधो। (बँधने पर) तुम्हारा स्वर्ण-सा कंचन-शरीर पिसते हुए आटे में नमक की तरह क्षय हो जायगा, पता भी नहीं चलेगा ॥ ११७ ॥ कबीर जी कहते हैं कि मनुष्य का जीवात्मा उड़नेवाला और शरीर क़ब्र में दफ़नाया जानेवाला है (अर्थात् मृत्यु निकट है), फिर भी वह इशारों से समझाना और आँखों की अनैतिकता नहीं छोड़ता ॥ ११८ ॥ कबीर जी कहते हैं कि हे प्रभु, मैं नेत्रों से तुम्हीं को देखूँ, तुम्हारा नाम ही कानों से सुनूँ, तुम्हारे ही नाम का उच्चारण करूँ और अपने हृदय में सदा तुम्हारे चरण-कमलों को धारण करके रखूँ ॥ ११९ ॥ कबीर जी कहते हैं कि सतिगुरु की कृपा से मैं नरक-स्वर्ग के चक्र से बचा हूँ। सदा से आद्यंत मैं प्रभु के चरण-कमलों की प्रीति में सुख पाता हूँ ॥ १२० ॥

कबीर चरन कमल की मउज को कहि कैसे उनमान। कहिबे कउ सोभा नही देखा ही परवानु ॥ १२१ ॥ कबीर देखि कै किह कहउ कहे न को पतीआइ। हरि जैसा तैसा उही रहउ हरखि गुन गाइ ॥ १२२ ॥ कबीर चुगै चितारै भी चुगै चुगि चुगि चितारे। जैसे बचरहि कूंज मन माइआ ममता रे ॥१२३॥ कबीर अंबर घनहरु छाइआ बरखि भरे सरताल। चात्रिक जिउ तरसत रहै तिन को कउनु हवालु ॥ १२४ ॥

कबीर जी कहते हैं कि चरण-कमलों में विचरने का सही अनुमान नहीं होता, उसको कहने में शोभा नहीं बनती, साक्षात् आँखों से देखने से ही उस सुख का निश्चय हो पाता है ॥ १२१ ॥ कबीर जी कहते हैं कि उस तत्त्व के सम्बन्ध में क्या बताया जा सकता है ? और फिर बताने से विश्वास भी क्यों होगा ? प्रभु जैसा है, अनुपम है, प्रसन्नता-पूर्वक उसका गुण गाने में ही सुख है ॥ १२२ ॥ कबीर जी कहते हैं कि जिस प्रकार कूंज पक्षी इधर-उधर दाना चुगता और पीछे घोंसले में छोड़े अपने बच्चों को याद भी करता है, वैसे ही जीव माया की ममता में फँसा विचरता है ॥ १२३ ॥ कबीर जी कहते हैं कि आकाश में घोर घटाएँ छाकर खूब बरसती हैं, सब सरोवर-ताल भर जाते हैं; किन्तु फिर भी यदि कोई पपीहे की तरह तरसता रहे, तो उसका क्या किया जाय ? (अर्थात् प्रभु-नाम सबके लिए उपलब्ध है, यदि कोई उसे न ले, तो किसी का क्या दोष ?) ॥ १२४ ॥

कबीर चकई जउ निसि बीछुरै आइ मिलै परभाति। जो नर बिछुरे राम सिउ ना दिन मिले न राति ॥ १२५ ॥ कबीर रैनाइर बिछोरिआ रहु रे संख मझूरि। देवल देवल धाहड़ी देसहि

उगवत सूर ॥ १२६ ॥ कबीर सूता किआ करहि जागु रोइ भै दुख । जा का बासा गोर महि सो किउ सोवै सुख ॥ १२७ ॥ कबीर सूता किआ करहि उठि कि न जपहि मुरारि । इक दिन सोवनु होइगो लांबे गोड पसारि ॥ १२८ ॥

कबीर जी कहते हैं कि चकवा-चकवी रात में बिछुड़ते हैं तो प्रातःकाल उनका पुनर्मिलन हो जाता है। किन्तु जो लोग परमात्मा से बिछुड़ जाते हैं वे पुनः न दिन को मिल पाते हैं, न रात को ॥ १२५ ॥ ऐ शंख, तू समुद्र में ही बना रहे तो सुखी होगा, अन्यथा यहाँ से बिछुड़कर प्रतिदिन सूर्योदय के समय मन्दिर-मन्दिर में चिल्लाएगा, किन्तु प्रिय से नहीं मिल पाएगा (अर्थात् प्रिय से बिछुड़कर करुण प्रलाप के अतिरिक्त कुछ हाथ नहीं आता) ॥ १२६ ॥ कबीर जी कहते हैं कि ऐ जीव, तू क्यों ग़ाफ़िल है, यमदूतों के भय से होनेवाले दुःख से सावधान हो जाओ, अन्ततः तुम्हारा वास क़ब्र में होनेवाला है (मृत्यु होनेवाली है), तुम सुख से क्योंकर सो सकते हो ? (अभिप्राय यह कि नश्वर संसार में सबको परमात्मा का नाम सिमरन करना चाहिए ॥ १२७ ॥ कबीर जी जीवों को सावधान करते हुए कहते हैं कि तुम क्यों ग़फ़लत की नींद सोते हो ? क्यों नहीं जगकर प्रभु का नाम जपते ? आख़िर तो एक दिन ऐसा आनेवाला ही है, जब तुम्हें घुटने पसार कर सो जाना है (अर्थात् स्थायी निद्रा = मृत्यु में लीन होना है) ॥ १२८ ॥

कबीर सूता किआ करहि बैठा रहु अरु जागु । जाके संग ते बीछुरा ताही के संग लागु ॥ १२९ ॥ कबीर संत की गैल न छोडीऐ मारगि लागा जाउ । पेखत ही पुंनीत होइ भेटत जपीऐ नाउ ॥ १३० ॥ कबीर साकत संगु न कीजीऐ दूरहि जाईऐ भागि । बासनु कारो परसीऐ तउ कछु लागै दागु ॥१३१॥ कबीरा रामु न चेतिओ जरा पहूंचिओ आइ । लागी मंदिर दुआर ते अब किआ काढिआ जाइ ॥ १३२ ॥

कबीर जी कहते हैं कि ऐ जीव, सोकर क्यों समय नष्ट करते हो, उठो और जागकर बैठो। जिसके साथ से बिछुड़ गए हो (प्रभु की शरण से भटके हो), पुनः उसी का दामन थाम लो ॥ १२९ ॥ कबीर जी कहते हैं कि सन्तों की संगति और समीपता कभी मत त्यागो। उनकी समीपता में दर्शनों से पावनता मिलती है और भेंट होने से प्रभु-नाम से प्रीति उपजती है ॥ १३० ॥ कबीर जी कहते हैं कि मायोन्मुखी जीवों की संगति नहीं करनी चाहिए, उनसे दूर रहना ही उपयुक्त है। वे ऐसे काले बर्तन-समान होते हैं, जिन्हें छूने से भी दाग़ लग जाता है (अर्थात् मायोन्मुखी जीव

कलंकी होते हैं और सम्पर्क में आनेवाले साधु व्यक्ति को भी कलंकित कर देते हैं) ॥ १३१ ॥ कबीर जी कहते हैं कि आयु-भर प्रभु-नाम सिमरन नहीं किया और अब बुढ़ापे की अग्नि शरीर-मन्दिर के द्वार तक आ गई है (अर्थात् शरीर रूपी मन्दिर बुढ़ापे की आग में घिर गया है), अब उसमें से क्या कुछ निकाला जा सकता है? (अर्थात् कुछ बचाया नहीं जा सकता) ॥ १३२ ॥

कबीर कारनु सो भइओ जो कीनो करतार। तिस बिनु दूसर को नही एकै सिरजनहारु ॥ १३३ ॥ कबीर फल लागे फलनि पाकन लागे आंब। जाइ पहूचहि खसम कउ जउ बीचि न खाही कांब ॥ १३४ ॥ कबीर ठाकुरु पूजहि मोलि ले मन हठ तीरथ जाहि। देखा देखी स्वांगु धरि भूले भटका खाहि ॥१३५॥ कबीर पाहनु परमेसुरु कीआ पूजै सभु संसारु। इस भरवासे जो रहे बूडे काली धार ॥ १३६ ॥

कबीर जी कहते हैं कि परमातमा सबका कारण है, वही सब कुछ करता है, जो कुछ किया है, उसी ने किया है। उसके बिना कोई और नहीं ॥ १३३ ॥ कबीर जी कहते हैं कि पेड़ों पर फल लगे हैं, फल पकने सृजनहार भी शुरू हो गए हैं, किन्तु उद्यान के स्वामी को फल खाने का सौभाग्य तभी होगा, यदि मार्ग में ही कौवे उन फलों को चट न कर जायँ! (अभिप्राय यह कि जीवात्मा सही तौर पर तभी स्वामी के निकट पहुँचती है, यदि मार्ग में भटक न जाय) ॥ १३४ ॥ कबीर जी कहते हैं कि लोग तीर्थों पर जाकर परमात्मा की मूर्तियाँ ख़रीद-ख़रीदकर पूजते हैं। अन्य लोग भी उनकी देखा-देखी स्वाँग बनाते और सही पथ से भटक जाते हैं ॥ १३५ ॥ मूर्ति-पूजा का विरोध करते हुए कबीर कहते हैं कि लोग पत्थर के परमात्मा को पूजते हैं। यदि पत्थर के भरोसे रहोगे, तो निश्चय ही काल की धारा में बह जाओगे (अर्थात् सुमार्ग नहीं पा सकोगे) ॥ १३६ ॥

कबीर कागद की ओबरी मसु के करम कपाट। पाहन बोरी पिरथमी पंडित पाड़ी बाट ॥ १३७ ॥ कबीर कालि करंता अबहि करु अब करता सुइताल। पाछै कछू न होइगा जउ सिर पर आवै कालु ॥ १३८ ॥ कबीर ऐसा जंतु इकु देखिआ जैसी धोई लाख। दीसै चंचलु बहु गुना मतिहीना नापाक ॥ १३९ ॥ कबीर मेरी बुधि कउ जमु न करै तिसकार। जिनि इहु जमूआ सिरजिआ सु जपिआ परविदगार ॥ १४० ॥

कबीर जी कहते हैं कि पंडितों ने मार्ग ही रूँध दिया है, काग़ज़ की कोठरी में कर्मकाण्ड के ताले लगाकर उन्होंने जनता को भटका दिया है (काग़ज़ की कोठरी से वेद-शास्त्रों एवं उनमें लिखी व्यवस्था से द्वारों का अभिप्राय है)। मूर्ति-पूजा की बात करते हैं, जिससे सारी धरती डूबती हुई रसातल में जा रही है ॥ १३७ ॥ कबीर जी जन साधारण को समझाते हैं कि तुमको जो कल करना हो, वह आज ही कर लो और जो आज करने की बात हो, वह अभी सम्पन्न कर लो। कोई नहीं जानता कब काल (मृत्यु) आ पहुँचेगा ? और फिर कार्य करने का अवसर ही नहीं मिलेगा ॥१३८॥ कबीर जी कहते हैं कि यह मन ऐसा पाखण्डी है कि जैसी धुली लाख हो। (ऊपर से निर्मल और चमकीली, भीतर से गंदी, दुर्गंधपूर्ण और टूटने योग्य।) यह बड़ा चंचल, बुद्धिहीन और नापाक है (इसका कोई विश्वास मत करो) ॥ १३९ ॥ कबीर जी कहते हैं कि मैंने यमदूतों के भी सृजन-कर्ता परवरदिगार को मन में धारण किया है, इसलिए यमदूत भी मेरी अवज्ञा नहीं कर सकते ॥ १४० ॥

कबीरु कसतूरी भइआ भवर भए सभ दास। जिउ जिउ भगति कबीर की तिउ तिउ राम निवास ॥१४१॥ कबीर गहगचि परिओ कुटंब कै कांठै रहि गइओ रामु। आइ परे धरमराइ के बीचहि धूमा धाम ॥ १४२ ॥ कबीर साकत ते सूकर भला राखै आछा गाउ। उहु साकतु बपुरा मरि गइआ कोइ न लैहै नाउ ॥ १४३ ॥ कबीर कउडी कउडी जोरि कै जोरे लाख करोरि। चलती बार न कछु मिलिओ लई लंगोटी तोरि ॥१४४॥

कबीर जी कहते हैं कि परमात्मा कस्तूरी के समान है और उसके सेवक सुगन्ध लेनेवाले भँवरे हैं। ज्यों-ज्यों वे उस सुवासित हरि का संग करते हैं, त्यों-त्यों उनका अन्तर्मन सुगन्धित होता है (अर्थात् वे हरि-प्रेम में रँग जाते हैं।) ॥ १४१ ॥ कबीर कहते हैं कि कुटुम्ब की पकड़ चूने की तरह मज़बूत है, हरिनाम-स्मरण एक ओर ही पड़ा रह जाता है और इसी प्रकार एक दिन जीव धर्मराज के पास पकड़कर ले जाया जाता है, सारी रौनक़ यों ही धरी रह जाती है। (अर्थात् दुनिया-धन्धे समाप्त नहीं होते, मौत आ जाती है) ॥ १४२ ॥ कबीर जी कहते हैं कि मायोन्मुखी जीव की अपेक्षा तो एक सूअर अच्छा है, जो मलिनता-भक्षण द्वारा कम से कम गाँव को तो साफ़ रखता है। मायोन्मुखी जीव तो जब मरता है, दोबारा कोई उसका नाम भी नहीं लेता ॥ १४३ ॥ कबीर जी कहते हैं कि माया-मोह में बँधकर मनुष्य कौड़ी-कौड़ी जोड़कर लाखों-करोड़ों एकत्रित करता है। किन्तु मृत्यु के समय उसे कुछ भी नहीं मिलता,

लँगोटी तक भी उतार ली जाती है। (फिर भला माया जोड़ने का क्या लाभ ?) ॥ १४४ ॥

कबीर बैसनो हूआ त किआ भइआ माला मेलीं चारि। बाहरि कंचनु बारहा भीतरि भरी भंगार ॥ १४५ ॥ कबीर रोड़ा होइ रहु बाट का तजि मन का अभिमानु। ऐसा कोई दासु होइ ताहि मिलै भगवानु ॥ १४६ ॥ कबीर रोड़ा हूआ त किआ भइआ पंथी कउ दुखु देइ। ऐसा तेरा दासु है जिउ धरनी महि खेह ॥ १४७ ॥ कबीर खेह हूई तउ किआ भइआ जौ उडि लागै अंग। हरिजनु ऐसा चाहीऐ जिउ पानी सरबंग ॥ १४८ ॥

कबीर जी वैष्णव कहलानेवाले जीवों का पोल खोलते हुए कहते हैं कि वैष्णव बनने से क्या मिला, चार मालाएँ पहन लीं ! बाहर से शुद्ध सोना हो और भीतर लाख (व्यर्थ तत्त्व) भरा हो, तो वह अमूल्य आभूषण तो नहीं हो सकता ॥ १४५ ॥ कबीर उपदेश देते हैं कि ऐ मनुष्य, मन का अभिमान त्यागकर मार्ग का रोड़ा (अति विनम्र) बन जा। कबीर जी कहते हैं कि ऐसे ही विनम्र सेवक को भगवान मिलता है ॥ १४६ ॥ पुनः कहते हैं कि यदि मार्ग का रोड़ा भी बन गया, तो उससे राह चलने वालों को दुःख होगा (पैरों में चुभेगा); प्रभु का दास तो इतना विनम्र होना चाहिए, जैसे पथ की धूल होती है ॥ १४७ ॥ कबीर जी विचार करते हुए पुनः कहते हैं कि नहीं, धूल भी उड़-उड़कर लोगों के अंग-वस्त्र मलिन करती है। परमात्मा का सेवक तो ऐसा होना चाहिए, जैसा सबमें घुल-मिल जानेवाला जल होता है ॥ १४८ ॥

कबीर पानी हूआ त किआ भइआ सीरा ताता होइ। हरिजनु ऐसा चाहीऐ जैसा हरि ही होइ ॥ १४९ ॥ ऊच भवन कनकामनी सिखरि धजा फहराइ। ता ते भली मधूकरी संत संग गुन गाइ ॥ १५० ॥ कबीर पाटन ते ऊजरु भला राम भगत जिह ठाइ। राम सनेही बाहरा जम पुरु मेरे भांइ ॥ १५१ ॥ कबीर गंग जमुन के अंतरे सहज सुंन के घाट। तहा कबीरै मटु कीआ खोजत मुनि जन बाट ॥ १५२ ॥

कबीर कहते हैं कि नहीं, हरिजन को जल भी नहीं होना चाहिए; जल ठण्डा-गर्म होता रहता है। साधु तो स्वभाववश स्थिर होता है, इसलिए हरिजन को स्वयं हरि के ही समान गुणों वाला होना चाहिए ॥ १४९ ॥ ऊँचे महल हों, महलों की शिखर पर ध्वजा फहरती हो, कंचन के भण्डार और सुन्दर स्त्री भी हो, किन्तु इन सबसे संतों की

संगति में रहकर भीख माँग लेना और प्रभु-गुणगान करना अधिक उपयुक्त है ।। १५० ।। कबीर जी कहते हैं कि नगर की अपेक्षा वह ऊजड़ गाँव भला है, जहाँ राम के भक्त रहते हों । राम के प्रिय सेवकों के बिना मेरे लिए कोई भी जगह यमपुरी के समान है ।। १५१ ।। कबीर जी कहते हैं कि उन्होंने तो इड़ा और पिंगला के बीच सुषुम्ना के भीतर सहजावस्था में अपने को स्थिर कर लिया है, अन्य मुनिजन तो अभी मार्ग खोज रहे हैं (अर्थात् कबीर ने मंज़िल पा ली है, अन्य साधु-संन्यासी खोजते फिरते हैं ।) ।। १५२ ।।

कबीर जैसी उपजी पेड ते जउ तैसी निबहै ओड़ि । हीरा किस का बापुरा पुजहि न रतन करोड़ि ।। १५३ ।। कबीरा एकु अचंभउ देखिओ हीरा हाट बिकाइ । बनजनहारे बाहरा कउडी बदलै जाइ ।। १५४ ।। कबीरा जहा गिआनु तह धरमु है जहा झूठु तह पापु । जहा लोभु तह कालु है जहा खिमा तह आपि ।। १५५ ।। कबीर माइआ तजी त किआ भइआ जउ मानु तजिआ नही जाइ । मान मुनी मुनिवर गले मानु सभै कउ खाइ ।। १५६ ।।

कबीर जी कहते हैं कि जैसे पेड़ से उपजनेवाला तत्त्व तभी ग्राह्य होता है जब वहाँ पक जाता है, वैसे ही भक्ति जिस रौ में पैदा होती है, उसी में निभ जाय तो सुयोग्य कही जाती है । उस प्रकार की भक्ति करनेवाले के मुक़ाबले हीरा तो क्या लाखों-करोड़ों रत्न भी नहीं हो सकते ।। १५३ ।। कबीर कहते हैं कि हमने एक अचम्भा देखा है, हीरा दुकान पर बिकता है, किन्तु सही पारखी के बग़ैर कौड़ियों के मोल जा रहा है अर्थात् हरिनाम रूपी हीरा पण्डितों की दूकानों पर बिकता है, तो नाम के सही पारखी के बग़ैर कौड़ी मोल पाता है ।।१५४।। कबीर जी कहते हैं कि जहाँ ज्ञान होता है, वहाँ धर्मानुसार आचरण होता है, झूठ के कारण पाप उपजता है, लोभ मृत्यु का कारण बनता है, किन्तु जहाँ क्षमा की वृत्ति मौजूद है, वहाँ परमात्मा स्वयं रहता है ।। १५५ ।। कबीर जी कहते हैं कि माया का त्याग करने से भी तब तक कोई लाभ नहीं होता, जब तक कि मन से मान का भी त्याग न कर दिया जाय । मान ऐसा सबल तत्त्व है कि बड़े श्रेष्ठ मुनिजन भी इसके कारण उठाते संताप रहे ।। १५६ ।।

कबीर साचा सतिगुरु मै मिलिआ सबदु जु बाहिआ एकु । लागत ही भुइ मिलि गइआ परिआ कलेजे छेकु ।। १५७ ।।

कबीर साचा सतिगुरु किआ करै जउ सिखा महि चूक । अंधे एक न लागई जिउ बांसु बजाईऐ फूक ।। १५८ ।। कबीर है गै बाहन सघन घन छत्रपती की नारि । तासु पटंतर ना पुजै हरि जन की पनिहारि ।। १५९ ।। कबीर त्रिप नारी किउ निंदीऐ किउ हरि चेरी को मानु । ओहु मांग सवारै बिखै कउ ओहु सिमरै हरि नामु ।। १६० ।।

कबीर जी कहते हैं कि मुझे सच्चा सतिगुरु मिला और उसने उपदेश का अमोघ बाण मुझ पर छोड़ दिया। बाण के लगते ही मैं अमर हो गया, कलेजे में छेद बन गया (अर्थात् मैं परमात्मा के प्यार में बिंध गया) ।।१५७।। कबीर कहते हैं कि सतिगुरु तब क्या कर सकता है, जब शिष्य में ही चूक हो (शिष्य-उपदेशानुसार अपने को न बदले)। अज्ञानांध को कभी नहीं सूझता, जैसे बाँस में फूंककर कितना भी बजा लो (वह चेतन नहीं हो जाता) ।। १५८ ।। यदि कोई घोड़े, हाथियों, रथों आदि वाले महाराजा की महारानी भी हो, तो भी वह हरि-जन की दासी के समान नहीं हो सकती ।। १५९ ।। कबीर जी कहते हैं कि हम महारानी को क्यों निन्दनीय कहते और दासी को मान दे रहे हैं? स्वयं ही उत्तर देते हैं कि वह (महारानी) विषय-विकारों के लिए शृंगार करती है और दूसरी (दासी) सब समय प्रभु का नाम जपती है ।। १६० ।।

कबीर थूनी पाई थिति भई सतिगुर बंधी धीर । कबीर हीरा बनजिआ मान सरोवर तीर ।। १६१ ।। कबीर हरि हीरा जन जउहरी ले कै मांडै हाट । जब ही पाईअहि पारखू तब हीरन की साट ।। १६२ ।। कबीर काम परे हरि सिमरीऐ ऐसा सिमरहु नित । अमरापुर बासा करहु हरि गइआ बहोरै बित ।। १६३ ।। कबीर सेवा कउ दुइ भले एकु संतु इकु रामु । रामु जु दाता मुकति को संतु जपावै नामु ।। १६४ ।।

कबीर जी कहते हैं कि स्तम्भ (प्रभु-नाम रूपी) मिला, तो उसके सहारे मैं स्थिर हो गया; सतिगुरु ने धैर्य बँधाने में सहायता की और मैंने मानसरोवर के किनारे (सत्संगति में) हीरे का (हरिनाम का) व्यापार सम्पन्न कर लिया ।। १६१ ।। कबीर जी कहते हैं कि हरि रूपी हीरे को हरिभक्त रूपी जौहरी ही परखते हैं और लेकर अपने अन्तर्मन की दुकान पर सजा लेते हैं। जब-जब कोई दूसरा पारखी मिलता है, वे उसका भाव-तोल करने लगते हैं (अर्थात् साधु-साधु के हरि-चर्चा करता है) ।। १६२ ।। कबीर जी कहते हैं कि यदि हम काम पड़ने पर ईश्वर-स्मरण को छोड़कर

नित्य सिमरन करना सीख लें, तो हमें प्रभु के निकट रहने का अवसर भी हो और खोया हुआ हरि-धन पुनः प्राप्त हो जाय ॥ १६३ ॥ कबीर जी कहते हैं कि सेवा ही करनी हो तो केवल राम तथा सन्त की करो। राम मुक्ति-दाता है तो सन्त हरिनाम का सिमरन करवाता है ॥ १६४ ॥

कबीर जिह मारगि पंडित गए पाछै परी बहीर। इक अवघट घाटी राम की तिह चड़ि रहिओ कबीर ॥ १६५ ॥ कबीर दुनीआ के दोखे मूआ चालत कुल की कानि। तब कुलु किस का लाजसी जब ले धरहि मसानि ॥ १६६ ॥ कबीर डूबहिगो रे बापुरे बहु लोगन की कानि। पारोसी के जो हूआ तू अपने भी जानु ॥ १६७ ॥ कबीर भली मधूकरी नाना बिधि को नाजु। दावा काहू को नही बडा देसु बड राजु ॥ १६८ ॥

पंडितजन जिस मार्ग पर चलते हैं, उस मार्ग का रस्मी अनुसरण आम लोग भी कर लेते हैं। (यह अनुसरण मन, वचन, कर्म से न होकर दिखावे का होता है), प्रभु-नैकट्य-प्राप्ति का मार्ग सर्वाधिक कठिन है, उस पर केवल कबीर (या कबीर-सरीखे सन्तजन) ही चल पाए हैं ॥ १६५ ॥ कबीर जी कहते हैं कि मनुष्य कुल की चिन्ता में संसार के दुःखों में मर जाता है। (यह नहीं सोचता कि) जब श्मशान में ले जाकर उसे फूंक दिया जायगा, तब कुल की लाज कौन बचायगा ! (अर्थात् व्यर्थ के मिथ्या बन्धनों में मरने से क्या हासिल ? प्रभु-नाम में मग्न रहो) ॥ १६६ ॥ कबीर समझाते हुए कहते हैं, ऐ गँवार जीव, व्यर्थ की लोक-लाज में तू अवश्य ही मारा जायगा (डूबेगा), जो कुछ पड़ोसियों (अन्य लोगों) के साथ बीत चुका है, वैसा ही परिणाम तुम्हारे साथ आनेवाला है, (अभी से क्यों सावधान नहीं हो जाता) ॥ १६७ ॥ कबीर जी कहते हैं कि भीख में प्राप्त मधुकरी (रोटी) बड़े-बड़े राज्यों और अधिकारों से भली है। उसमें नाना प्रकार का अनाज शामिल होता है (अर्थात् उसमें विनम्रता, दया, प्रेम आदि अनाज मिले होते हैं) ॥ १६८ ॥

कबीर दावै दाझनु होतु है निरदावै रहै निसंक। जो जनु निरदावै रहै सो गनै इंद्र सो रंक ॥ १६९ ॥ कबीर पालि समुहा सरवरु भरा पी न सकै कोई नीरु। भाग बडे तै पाइओ तूं भरि भरि पीउ कबीर ॥ १७० ॥ कबीर परभाते तारे खिसहि तिउ इहु खिसै सरीरु। ए दुइ अखर ना खिसहि सो गहि रहिओ कबीरु ॥ १७१ ॥ कबीर कोठी काठ की दहदिसि लागी आगि। पंडित पंडित जलि मूए मूरख उबरे भागि ॥ १७२ ॥

कबीर जी उपदेश देते हुए कहते हैं कि दावे करने में दु:ख होता है, दावा न करने में ही नि:शंक जीवन का सुख है। अत: जो लोग दावा नहीं करते, अर्थात् नि:शंक रहते हैं, वे इन्द्र और रंक को एक समान समझते हैं ॥ १६९ ॥ कबीर जी कहते हैं कि हरिनाम रूपी सरोवर किनारे तक भरा पड़ा है, किन्तु सब कोई उसमें से आचमन नहीं कर सकते। उत्तम भाग्य (प्रारब्ध) से ही कबीर उस सरोवर में से भर-भरकर पयपान कर रहा है (अर्थात् प्रारब्ध से ही हरिनाम की प्राप्ति होती है) ॥ १७० ॥ कबीर जी कहते हैं कि यह शरीर उसी प्रकार से मिट जानेवाला है, जैसे प्रभात वेला में सितारे मिट जाते हैं। केवल 'राम' के दो अक्षर स्थिर हैं, इसीलिए मैंने उन्हें पकड़ रखा है (राम-नाम का स्मरण ही एकमात्र स्थायी सहारा है) ॥ १७१ ॥ कबीर जी कहते हैं कि इस संसार रूपी लकड़ी की कोठरी में चारों ओर माया और अहंकार की आग लगी है। अपने को पंडित कहलवानेवाले विद्या के अहंकारी लोग उसी में जलकर मर रहे हैं, जबकि गँवार कहलवानेवाले विनम्र जीव भागकर उस अग्नि से बचने की व्यवस्था कर लिया करते हैं (अर्थात् अहंकार जलता है, विनम्रता बचती है) ॥ १७२ ॥

कबीर संसा दूरि करु कागद देह बिहाइ। बावन अखर सोधि कै हरि चरनी चितु लाइ ॥ १७३ ॥ कबीर संतु न छाडै संतई जउ कोटिक मिलहि असंत। मलिआगरु भुयंगम बेढिओ त सीतलता न तजंत ॥ १७४ ॥ कबीर मनु सीतलु भइआ पाइआ ब्रहम गिआनु। जिनि जुआला जगु जारिआ सु जन के उदक समानि ॥ १७५ ॥ कबीर सारी सिरजनहार की जानै नाही कोइ। कै जानै आपन धनी कै दासु दीवानी होइ ॥१७६॥

कबीर जी कहते हैं कि ऐ मनुष्य, चित्त के संशयों को दूर कर, बेकार के ग्रंथ-पोथियों के रटने से संशय-मुक्ति नहीं मिलती। उन ग्रंथों-पोथियों के सार-तत्त्व (बावन अक्षर) को समझकर प्रभु के चरणों में चित्त लगाओ ॥ १७३ ॥ कबीर जी कहते हैं कि करोड़ों दुष्टों की संगति में भी सन्त-स्वभाव का व्यक्ति अपनी भली प्रवृत्ति को नहीं छोड़ता। जैसे मलयगिरि पर चन्दन के वृक्षों के साथ भले ही भयंकर सर्प लिपटे रहें, फिर भी चन्दन की शीतलता में कोई अन्तर नहीं पड़ता ॥ १७४ ॥ कबीर जी कहते हैं कि ब्रह्म-ज्ञान पाकर मन शीतल हो जाता है। जिस तृष्णा-अग्नि में सारा संसार जलता है, भक्तजन के लिए वह भी जल के समान शीतल हो जाती है ॥ १७५ ॥ कबीर जी कहते हैं कि संसार के इस खेल को केवल खिलाड़ी ही जानता है, अन्य कोई नहीं जानता। या तो इसे स्वयं

स्वामी प्रभु ही जानता है, या उसके निकट रहनेवाला प्रभु का भक्त ही जान सकता है ॥ १७६ ॥

कबीर भली भई जो भउ परिआ दिसा गईं सभ भूलि । ओरा गरि पानी भइआ जाइ मिलिओ ढलि कूलि ॥ १७७ ॥ कबीरा धूरि सकेलि कै पुरीआ बांधी देह । दिवस चारि को पेखना अंति खेह की खेह ॥ १७८ ॥ कबीर सूरज चांद कै उदै भई सभ देह । गुर गोबिंद के बिनु मिले पलटि भई सभ खेह ॥ १७९ ॥ जह अनभउ तह भै नही जह भउ तह हरि नाहि । कहिओ कबीर बिचारि कै संत सुनहु मन माहि ॥१८०॥

कबीर जी कहते हैं कि प्रभु-प्रीति लगने से भला हुआ, जो जाति-पाँति के गर्वाभिमान मिट गए । ओला गलकर पानी हो गया और ढाल पाकर प्रवाह में बह गया । (अर्थात् जल-जल में अभेद है— आत्मा-परमात्मा में अभेद है । अज्ञानवश प्रभु-प्रीति से रहित मनुष्य ओले की तरह अपने को पानी से अलग समझता है । प्रीति की आँच पाकर ओला पिघलता है और जल जल में मिल जाता है) ॥ १७७ ॥ कबीर जी कहते हैं कि मिट्टी इकट्ठी करके यह शरीर रूपी पुड़िया बँधी है । चार दिन का दिखावा है, अन्ततः तो मिट्टी को मिट्टी में मिल जाना है । (अर्थात् शरीर एक अस्थायी रचना है, इससे क्या लगाव ?) ॥१७८॥ कबीर जी कहते हैं कि सूर्य और चाँद के उदय-काल में (अर्थात् दिन अथवा रात के समयों में) ही सब शरीरों का निर्माण होता है, इनका गुमान क्या ? गुरु और परमात्मा की प्राप्ति के बिना उलटकर पुनः वह मिट्टी हो जाते हैं (शरीर धरे का वास्तविक गुण गुरु और गोबिंद की खोज है, अन्यथा मिट्टी का कोई मूल्य नहीं) ॥ १७९ ॥ कबीर कहते हैं कि जिसके हृदय में निर्भीक प्रभु-ज्ञान उपजता है, उसे कोई भय नहीं रह जाता । जहाँ सांसारिक भय विचरण करते हैं, वहाँ प्रभु नहीं होता । कबीर यह बात अनुभवजन्य ज्ञान से कह रहे हैं, ऐ भले लोगो, मन में इसे विचारो (और लाभ उठाओ) ॥ १८० ॥

कबीर जिनहु किछू जानिआ नही तिन सुख नीद बिहाइ । हमहु जु बूझा बूझना पूरी परी बलाइ ॥ १८१ ॥ कबीर मारे बहुतु पुकारिआ पीर पुकारै अउर । लागी चोट मरंम की रहिओ कबीरा ठउर ॥ १८२ ॥ कबीर चोट सुहेली सेल की लागत लेइ उसास । चोट सहारै सबद की तासु गुरू मै दास ॥ १८३ ॥

कबीर जी उपदेश देते हुए कहते हैं कि दावे करने में दुःख होता है, दावा न करने में ही निःशंक जीवन का सुख है। अतः जो लोग दावा नहीं करते, अर्थात् निःशंक रहते हैं, वे इन्द्र और रंक को एक समान समझते हैं ॥ १६९ ॥ कबीर जी कहते हैं कि हरिनाम रूपी सरोवर किनारे तक भरा पड़ा है, किन्तु सब कोई उसमें से आचमन नहीं कर सकते। उत्तम भाग्य (प्रारब्ध) से ही कबीर उस सरोवर में से भर-भरकर पयपान कर रहा है (अर्थात् प्रारब्ध से ही हरिनाम की प्राप्ति होती है) ॥ १७० ॥ कबीर जी कहते हैं कि यह शरीर उसी प्रकार से मिट जानेवाला है, जैसे प्रभात वेला में सितारे मिट जाते हैं। केवल 'राम' के दो अक्षर स्थिर हैं, इसीलिए मैंने उन्हें पकड़ रखा है (राम-नाम का स्मरण ही एकमात्र स्थायी सहारा है) ॥ १७१ ॥ कबीर जी कहते हैं कि इस संसार रूपी लकड़ी की कोठरी में चारों ओर माया और अहंकार की आग लगी है। अपने को पंडित कहलवानेवाले विद्या के अहंकारी लोग उसी में जलकर मर रहे हैं, जबकि गँवार कहलवानेवाले विनम्र जीव भागकर उस अग्नि से बचने की व्यवस्था कर लिया करते हैं (अर्थात् अहंकार जलता है, विनम्रता बचती है) ॥ १७२ ॥

कबीर संसा दूरि करु कागद देह बिहाइ। बावन अखर सोधि कै हरि चरनी चितु लाइ ॥ १७३ ॥ कबीर संतु न छाडै संतई जउ कोटिक मिलहि असंत। मलिआगरु भुयंगम बेढिओ त सीतलता न तजंत ॥ १७४ ॥ कबीर मनु सीतलु भइआ पाइआ ब्रहम गिआनु। जिनि जुआला जगु जारिआ सु जन के उदक समानि ॥ १७५ ॥ कबीर सारी सिरजनहार की जानै नाही कोइ। कै जानै आपन धनी कै दासु दीवानी होइ ॥१७६॥

कबीर जी कहते हैं कि ऐ मनुष्य, चित्त के संशयों को दूर कर, बेकार के ग्रंथ-पोथियों के रटने से संशय-मुक्ति नहीं मिलती। उन ग्रंथों-पोथियों के सार-तत्त्व (बावन अक्षर) को समझकर प्रभु के चरणों में चित्त लगाओ ॥ १७३ ॥ कबीर जी कहते हैं कि करोड़ों दुष्टों की संगति में भी सन्त-स्वभाव का व्यक्ति अपनी भली प्रवृत्ति को नहीं छोड़ता। जैसे मलयगिरि पर चन्दन के वृक्षों के साथ भले ही भयंकर सर्प लिपटे रहें, फिर भी चन्दन की शीतलता में कोई अन्तर नहीं पड़ता ॥ १७४ ॥ कबीर जी कहते हैं कि ब्रह्म-ज्ञान पाकर मन शीतल हो जाता है। जिस तृष्णा-अग्नि में सारा संसार जलता है, भक्तजन के लिए वह भी जल के समान शीतल हो जाती है ॥ १७५ ॥ कबीर जी कहते हैं कि संसार के इस खेल को केवल खिलाड़ी ही जानता है, अन्य कोई नहीं जानता। या तो इसे स्वयं

स्वामी प्रभु ही जानता है, या उसके निकट रहनेवाला प्रभु का भक्त ही जान सकता है ॥ १७६ ॥

कबीर भली भई जो भउ परिआ दिसा गईं सभ भूलि। ओरा गरि पानी भइआ जाइ मिलिओ ढलि कूलि ॥ १७७ ॥ कबीरा धूरि सकेलि कै पुरीआ बांधी देह। दिवस चारि को पेखना अंति खेह की खेह ॥ १७८ ॥ कबीर सूरज चांद कै उदै भई सभ देह। गुर गोबिंद के बिनु मिले पलटि भई सभ खेह ॥ १७९ ॥ जह अनभउ तह भै नही जह भउ तह हरि नाहि। कहिओ कबीर बिचारि कै संत सुनहु मन माहि ॥१८०॥

कबीर जी कहते हैं कि प्रभु-प्रीति लगने से भला हुआ, जो जाति-पाँति के गर्वाभिमान मिट गए। ओला गलकर पानी हो गया और ढाल पाकर प्रवाह में बह गया। (अर्थात् जल-जल में अभेद है— आत्मा-परमात्मा में अभेद है। अज्ञानवश प्रभु-प्रीति से रहित मनुष्य ओले की तरह अपने को पानी से अलग समझता है। प्रीति की आँच पाकर ओला पिघलता है और जल जल में मिल जाता है) ॥ १७७ ॥ कबीर जी कहते हैं कि मिट्टी इकट्ठी करके यह शरीर रूपी पुड़िया बँधी है। चार दिन का दिखावा है, अन्ततः तो मिट्टी को मिट्टी में मिल जाना है। (अर्थात् शरीर एक अस्थायी रचना है, इससे क्या लगाव ?) ॥१७८॥ कबीर जी कहते हैं कि सूर्य और चाँद के उदय-काल में (अर्थात् दिन अथवा रात के समयों में) ही सब शरीरों का निर्माण होता है, इनका गुमान क्या ? गुरु और परमात्मा की प्राप्ति के बिना उलटकर पुनः वह मिट्टी हो जाते हैं (शरीर धरे का वास्तविक गुण गुरु और गोबिंद की खोज है, अन्यथा मिट्टी का कोई मूल्य नहीं) ॥ १७९ ॥ कबीर कहते हैं कि जिसके हृदय में निर्भीक प्रभु-ज्ञान उपजता है, उसे कोई भय नहीं रह जाता। जहाँ सांसारिक भय विचरण करते हैं, वहाँ प्रभु नहीं होता। कबीर यह बात अनुभवजन्य ज्ञान से कह रहे हैं, ऐ भले लोगो, मन में इसे विचारो (और लाभ उठाओ) ॥ १८० ॥

कबीर जिनहु किछू जानिआ नही तिन सुख नीद बिहाइ। हमहु जु बूझा बूझना पूरी परी बलाइ ॥ १८१ ॥ कबीर मारे बहुतु पुकारिआ पीर पुकारै अउर। लागी चोट मरंम की रहिओ कबीरा ठउर ॥ १८२ ॥ कबीर चोट सुहेली सेल की लागत लेइ उसास। चोट सहारै सबद की तासु गुरू मै दास ॥ १८३ ॥

कबीर मुलां मुनारे किआ चढहि सांई न बहरा होइ। जा कारनि तूं बांग देहि दिल ही भीतरि जोइ ॥ १८४ ॥

कबीर जी कहते हैं कि विचारहीन जन निश्चिन्त निद्रा-मग्न अपना अमूल्य समय बर्बाद कर देते हैं। हमने जानने योग्य तथ्य को जाना है, अतः हमारी सब बलाएँ दूर हुई हैं (समय का सदुपयोग किया है) ॥१८१॥ कबीर जी कहते हैं कि मनुष्य ज्यों-ज्यों दुनिया की चोटें खाता है, त्यों-त्यों पीड़ा से दुःखी होकर पुकारता है। किन्तु जब किसी के मर्म पर चोट लगती है, प्रभु-प्रेम की चोट पहुँचती है, तो वहीं रह जाता है (मर्म पर चोट पहुँचने से मनुष्य मर जाता है), कुछ पुकारने में असमर्थ हो जाता है ॥ १८२ ॥ कबीर जी कहते हैं कि बर्छी की चोट सह लेना आसान है, लगने से साँस तो चलती रहती है, किन्तु शब्द की चोट बड़ी करारी होती है। कबीर कहते हैं कि जो शब्द-ब्रह्म की चोट सहन कर सकता हो, वह मेरा गुरु है, मैं उसका दास हूँ ॥ १८३ ॥ कबीर मुल्ला को समझाते हुए कहते हैं कि तुम मीनार पर क्यों चढ़ते हो, परमात्मा बहरा नहीं है। जिसे तुम ऊँचे स्वर से पुकारते हो, उसे भीतर मन में ही देखो ॥ १८४ ॥

सेख सबूरी बाहरा किआ हज काबे जाइ। कबीर जा की दिल साबति नही ताकउ कहां खुदाइ ॥ १८५ ॥ कबीर अलह की करि बंदगी जिह सिमरत दुखु जाइ। दिल महि सांई परगटै बुझै बलंती नांइ ॥ १८६ ॥ कबीर जोरी कीए जुलमु है कहता नाउ हलालु। दफतरि लेखा मांगीऐ तब होइगो कउनु हवालु ॥ १८७ ॥ कबीर खूबु खाना खीचरी जामहि अंम्रितु लोनु। हेरा रोटी कारने गला कटावै कउनु ॥ १८८ ॥

सन्तोष-रहित शेख का हज्ज करने के लिए क़ाबा जाना व्यर्थ है। कबीर जी कहते हैं कि जिसका मन निर्मल नहीं, उसे कहीं भी ख़ुदा नहीं मिल सकता ॥ १८५ ॥ कबीर कहते हैं कि परमात्मा की बंदगी करो, उसके सिमरन से सब दुःख दूर हो जाते हैं। प्रभु-स्मरण से परमात्मा हृदय में ही प्रकट हो जाता है और हरिनाम अमृत-जल से सांसारिकता की अग्नि बुझ जाती है ॥१८६॥ कबीर जी कहते हैं कि बल-प्रयोग अत्याचार है, केवल प्रभु-नामोच्चारण ही हलाल है। (यदि हलाल कमाई नहीं करोगे तो) जब धर्मराज के दीवान में हिसाब माँगा जायगा, तो क्या हाल होगा ? ॥ १८७ ॥ कबीर जी मांसाहार-विरोध में कहते हैं कि खिचड़ी खाकर पेट भर लेना उत्तम है, जिसमें अमृत-समान सलूना होता है। मांस-मसाले के साथ जीभ के आस्वाद के लिए रोटी खाकर आगे मिलने वाले दण्ड को कौन सहन करे ? (अकारण क्यों गला कटावे ?) ॥१८८॥

कबीर गुरु लागा तब जानीऐ मिटै मोहु तन ताप। हरख सोग दाझै नही तब हरि आपहि आप ॥ १८९ ॥ कबीर राम कहन महि भेदु है तामहि एकु बिचारु। सोई रामु सभै कहहि सोई कउतकहार ॥ १९० ॥ कबीर रामै राम कहु कहिबे माहि बिबेक। एकु अनेकहि मिलि गइआ एक समाना एक ॥ १९१ ॥ कबीर जा घर साध न सेवीअहि हरि की सेवा नाहि। ते घर मरहट सारखे भूत बसहि तिन माहि ॥ १९२ ॥

कबीर कहते हैं कि गुरु-मिलन की स्थिति तभी मानी जाती है, जब मोह और तन की पीड़ाएँ मिट जाती हैं। ऐसे में परमात्मा सर्वत्र अनुभव होता है और मनुष्य को हर्ष-शोक कुछ प्रभावित नहीं करता ॥ १८९ ॥ कबीर जी कहते हैं कि 'राम' कहने में भेद है, ध्यानपूर्वक एक विचार को जान लो कि 'राम' बोलनेवाले दशरथ-सुत श्रीराम के लिए भी उच्चारते हैं और सब जगत के रचयिता के लिए भी यही शब्द बोला जाता है (मैं रचयिता, सर्वव्यापक को राम कहता हूँ) ॥१९०॥ कबीर जी कहते हैं कि ऐ मनुष्य, राम ही राम का उच्चारण करो, किन्तु इसके कहने में भी विवेक से काम लो। एक वह राम है जो एक होकर भी सबमें रमण करता है और एक वह राम है जो केवल अपने ही एक शरीर में रमता है (दशरथ-पुत्र) ॥ १९१ ॥ कबीर जी कहते हैं कि जिस घर में साधु की सेवा नहीं होती, परमात्मा का नाम नहीं जपा जाता, वह घर मरघट के समान है, वहाँ भूतों का निवास होता है (उसमें रहनेवालों में मानवीय तत्त्व का अभाव होता है।) ॥ १९२ ॥

कबीर गूंगा हूआ बावरा बहरा हूआ कान। पावहु ते पिंगुल भइआ मारिआ सतिगुर बान ॥ १९३ ॥ कबीर सतिगुर सूरमे बाहिआ बानु जु एकु। लागत ही भुइ गिरि परिआ परा करेजे छेकु ॥ १९४ ॥ कबीर निरमल बूंद अकास की परि गई भूमि बिकार। बिनु संगति इउ मांनई होइ गई भठ छार ॥१९५॥ कबीर निरमल बूंद अकास की लीनी भूमि मिलाइ। अनिक सिआने पचि गए ना निरवारी जाइ ॥ १९६ ॥

कबीर जी कहते हैं कि जो जीव सतिगुरु के प्रभु-प्रेम रूपी बाण की चोट से आहत होता है, वह दीवाना गूँगा, बहरा, पिंगला हो जाता है अर्थात् वह मुँह से कुछ और नहीं बोलता, कानों से प्रभु-नाम के अतिरिक्त कुछ और नहीं सुनता और पाँवों से प्रभु-पथ पर चलने की अपेक्षा वह कहीं और नहीं चलता ॥ १९३ ॥ कबीर जी कहते हैं कि सतिगुरु-सूरमा ने

प्रभु-प्रीति का ऐसा बाण मारा है कि उसकी चोट से वे गिर पड़े और उनके कलेजे में छेद हो गया (अर्थात् बाण के लगते ही अभिमान गिर पड़ा और हृदय प्रभु-प्रेम में विभोर हो गया) ॥ १९४ ॥ कबीर जी कहते हैं कि यदि मलिन हृदय रूपी धरती पर गुरु-शिक्षा रूपी वर्षण हो, तो व्यर्थ हो जाती है। यों मानो कि सत्संगति के बिना प्राप्त शिक्षा जलती भट्ठी में पड़कर राख हो गई ॥ १९५ ॥ कबीर कहते हैं कि आकाश की निर्मल बूंद (प्रभु-प्रीति) यदि धरती पर पड़कर बेकार हो जाय तो चाहे कितने भी विद्वान् प्रयास करते रहें, तो वे उस विनष्ट तत्त्व को पुनर्जीवित नहीं कर सकते ॥ १९६ ॥

कबीर हज काबे हउ जाइ था आगै मिलिआ खुदाइ। सांई मुझ सिउ लरि परिआ तुझै किन्हि फुरमाई गाइ ॥१९७॥ कबीर हज काबै होइ होइ गइआ केती बार कबीर। सांई मुझ महि किआ खता मुखहु न बोलै पीर ॥१९८॥ कबीर जीअ जु मारहि जोरु करि कहते हहि जु हलालु। दफतरु दई जब काढिहै होइगा कउनु हवालु ॥ १९९ ॥ कबीर जोरु कीआ सो जुलमु है लेइ जबाबु खुदाइ। दफतर लेखा नीकसै मार मुहै मुहि खाइ ॥२००॥

कबीर परमात्मा की सर्व-व्यापकता दर्शाते हुए कहते हैं कि वे हज्ज करने के लिए क़ाबा को चले, तो आगे से स्वयं ख़ुदा ने टोका। वह स्वामी मुझसे लड़ते हुए बोला, तुम्हें यह किसने कहा है कि मैं केवल क़ाबा में ही हूँ (और जगहों पर नहीं) ॥ १९७ ॥ कबीर हज्ज के लिए क़ाबे में बार-बार गया, किन्तु न जाने क्या भूल हुई कि कभी क़ाबा का पीर (परमात्मा) उससे सम्बोधित नहीं हुआ। (अर्थात् वह भी चेतन न हो पाया) ॥ १९८ ॥ कबीर कहते हैं कि जो अपने को बलात् संयत करते हैं (अपने पर ही अत्याचार करते हैं) और अपने कृत्य को हलाल (नैतिक) मानते हैं, उनका आगे क्या हाल होगा, जब विधाता के दीवान में उनके कर्मों का हिसाब-किताब जाँचा जायगा ! (अर्थात् बलपूर्वक किया संयम भी प्रभु-प्राप्ति का सुखद पथ नहीं है) ॥१९९॥ कबीर कहते हैं कि अध्यात्म-पथ पर बल का प्रयोग ज़ुल्म है, ख़ुदा इसका जवाब माँगेगा। उसके दीवान में जब कर्मों का निर्णय होगा, तो बराबर सज़ा मिलेगी ॥ २०० ॥

कबीर लेखा देना सुहेला जउ दिल सूची होइ। उसु साचे दीबान महि पला न पकरै कोइ ॥ २०१ ॥ कबीर धरती अरु आकास महि दोइ तूंबरी अबध। खट दरसन संसे परे अरु चउरासीह सिध ॥ २०२ ॥ कबीर मेरा मुझ महि किछु नही जो

किछु है सो तेरा। तेरा तुझ कउ सउपते किआ लागै मेरा ।। २०३ ।। कबीर तूं तूं करता तू हूआ मुझ महि रहा न हूं। जब आपा पर का मिटि गइआ जत देखउ तत तू ।।२०४।।

कबीर कहते हैं कि यदि मन में पवित्रता हो तो लेखा देना सहज होता है। प्रभु के दरबार में सच्चाई का ही महत्त्व होता है, वहाँ कोई दूसरा सहायक नहीं होता ।। २०१ ।। कबीर कहते हैं कि धरती और आकाश के बीच दो अविच्छिन्न तूंबड़ियाँ हैं। इस सम्बन्ध में समूची सृष्टि में द्वन्द्व पड़ा है। चौरासी सिद्ध एवं छः शास्त्र भी संशय में पड़े हैं ।।२०२।। कबीर जी प्रभु से कहते हैं कि मुझमें मेरा कुछ नहीं, सब कुछ तुम्हारी ही देन है। यदि तुम्हारी दी चीज़ तुम्हें लौटानी हो, तो मेरी क्या हानि है (अर्थात् प्रभु जो देता है, उसे लौटाने में क्यों दुःख हो ?) ।। २०३ ।। कबीर जी कहते हैं कि हे प्रभु, तुम्हारा गुणगान करते-करते मैं स्वयं तुम्हारा ही रूप हो गया हूँ, मुझमें मेरापन (अहम्) नहीं रहा। हे प्रभु, मेरा अपने-पराए का भेद मिट गया है; जिधर भी मेरी दृष्टि उठती है, अब तुम ही तुम दीख पड़ते हो ।। २०४ ।।

कबीर बिकारह चितवते झूठे करते आस। मनोरथु कोइ न पूरिओ चाले ऊठि निरास ।। २०५ ।। कबीर हरि का सिमरनु जो करै सो सुखीआ संसारि। इत उत कतहि न डोलई जिस राखै सिरजनहार ।। २०६ ।। कबीर घाणी पीड़ते सतिगुर लीए छडाइ। परा पूरबली भावनी परगटु होई आइ ।। २०७ ।। कबीर टालै टोलै दिनु गइआ बिआजु बढंतउ जाइ। ना हरि भजिओ न खतु फटिओ कालु पहूंचो आइ ।। २०८ ।।

कबीर जी कहते हैं कि जो लोग केवल विकारों को ही देखते हैं, वे झूठी आशाओं-तृष्णाओं में घिरे रहते हैं। अन्तकाल तक उनका कोई मनोरथ पूरा नहीं होता, आखिर वे निराश जीवन ही यहाँ से चल देते हैं ।। २०५ ।। कबीर जी कहते हैं कि हरि-सिमरन करनेवाले लोग संसार में सर्वाधिक सुखी होते हैं। जिनको सृजनहार का संरक्षण प्राप्त होता है, वे यहाँ-वहाँ, कहीं भी दोलायित नहीं होते ।। २०६ ।। कबीर जी कहते हैं कि अतीव कष्ट पाते हुए जीवों को सतिगुरु छुड़वा लेते हैं। (उनका सहारा भी तभी मिलता है) यदि पूर्व-कर्मों में ऐसा बदा हो, तभी उनसे साक्षात्कार होता है ।। २०७ ।। कबीर जी कहते हैं कि टाल-मटोल में दिन निकलते जाते हैं और मंदे कर्मों रूपी ब्याज बढ़ता जाता है। हरि-नाम का भजन नहीं किया, इसलिए क़र्ज़े के लेखे का कागज़ नहीं फटता

और तब तक काल आन पहुँचता है (भाव यह कि प्रभु-नाम-स्मरण से ही मन्दे कर्मों का अन्त होता है, जीवन-काल में हरिनाम-भजन अनिवार्य है) ।। २०८ ।।

।। महला ५ ।। कबीर कूकरु भउकना करंग पिछै उठि धाइ । करमी सतिगुरु पाइआ जिनि हउ लीआ छडाइ ।। २०९ ।। ।। महला ५ ।। कबीर धरती साध की तसकर बैसहि गाहि । धरती भारि न बिआपई उन कउ लाहू लाहि ।।२१०।। महला ५ ।। कबीर चावल कारने तुख कउ मुहली लाइ । संगि कुसंगी बैसते तब पूछै धरमराइ ।। २११ ।। नामा माइआ मोहिआ कहै तिलोचनु मीत । काहे छीपहु छाइलै राम न लावहु चीतु ।। २१२ ।।

कबीर जी कहते हैं कि मन रूपी कुत्ता बराबर भौंकता है और मुर्दार खाने के लिए मोह में बँधा चलता है। प्रभु की कृपा हो तो सतिगुरु से भेंट होती है, जो मन को मोह के बंधनों से छुड़ाकर मुक्त कर देते हैं ।। २०९ ।। ।। महला ५ ।। कबीर जी कहते हैं कि साधु की धरती पर (सत्संगति में) यदि पामर लोग आ बैठें, तो धरती को तो बोझ नहीं लगता, हाँ चोरों को लाभ ही लाभ मिलता है (अर्थात् यदि गुरुमुखों की संगति में चोर-ठग आ बैठें तो सत्संग का तो कुछ नहीं बिगड़ता, दुष्टों को लाभ ही लाभ होता है) ।। २१० ।। महला ५ ।। कबीर जी कहते हैं, जैसे चावल की प्राप्ति के लिए भूसी को भी मूसल से पीटा जाता है, ठीक ऐसे ही कुसंगति में रहनेवाला व्यक्ति धर्मराज के सम्मुख जवाबदार हो जाता है ।। २११ ।। महात्मा त्रिलोचन सन्त नामदेव से कहते हैं कि मोह-माया में क्यों फँसे हो, इन कपड़ों को छींबने में अनुरक्त हो, प्रभु में चित्त क्यों नहीं लगाते ? ।। २१२ ।।

नामा कहै तिलोचना मुख ते रामु संम्हालि । हाथ पाउ करि कामु सभु चीतु निरंजन नालि ।।२१३।। महला ५ ।। कबीरा हमरा को नही हम किसहू के नाहि । जिनि इहु रचनु रचाइआ तिस ही माहि समाहि ।। २१४ ।। कबीर चीकड़ि आटा गिरि परिआ किछू न आइओ हाथ । पीसत पीसत चाबिआ सोई निबहिआ साथ ।। २१५ ।। कबीर मनु जानै सभ बात जानत ही अउगनु करै । काहे की कुसलात हाथ दीपु कूए परै ।।२१६।।

सन्त नामदेव उत्तर देते हैं, हे त्रिलोचन, मुख से हरिनाम का स्मरण करो। हाथ-पाँव धंधे में संलग्न भी हों तो मन प्रभु में रमाकर

रखो ।। २१३ ।। महला ५ ।। कबीर जी कहते हैं कि हमारा कोई नहीं, हम किसी के नहीं है । हमें तो उसी में समा जाना है, जिसने सारी सृष्टि की यह रचना की है ।। २१४ ।। कबीर जी कहते हैं कि कीचड़ में आटा गिर जाने से कुछ हाथ नहीं आता । पीसते-पीसते जितना खाया जा सके, वही साथ निभता है, अर्थात् जीवन के अन्त में हरिनाम जपने की इच्छा सम्भव है कि कीचड़ में आटा गिर जाने की तरह व्यर्थ हो जाय । जीवन के दैनिक धर्म-कर्म करते हुए जितना नाम जप लिया गया, वही लाभ दे सकता है ।। २१५ ।। कबीर जी कहते हैं कि मन को सब मालूम होते हुए भी वह अवगुणों में पड़ता है— भला ऐसे व्यक्ति की कुशलता क्या होगी, जो हाथ में दीपक लेकर भी कुएँ में गिर पड़ता है ! ।। २१६ ।।

कबीर लागी प्रीति सुजान सिउ बरजै लोगु अजानु । ता सिउ टूटी किउ बनै जा के जीअ परान ।। २१७ ।। कबीर कोठे मंडप हेतु करि काहे मरहु सवारि । कारजु साढे तीनि हथ घनी त पउने चारि ।। २१८ ।। कबीर जो मै चितवउ ना करै किआ मेरे चितवे होइ । अपना चितविआ हरि करै जो मेरे चित न होइ ।। २१९ ।। म० ३ ।। चिंता भि आपि कराइसी अचिंतु भि आपे देइ । नानक सो सालाहीऐ जि सभना सार करेइ ।।२२०।।

कबीर कहते हैं कि सज्जन (साधुजन) से प्रीति लगी है, अज्ञानी लोग टोकते-रोकते हैं । वे क्या जानें कि यदि उससे टूट गई, जिसका सब जीव-प्राण है, तो फिर कभी बन नहीं सकेगी ? ।। २१७ ।। कबीर जी कहते हैं कि महलों-मकानों से प्रेम करके क्यों बंधनों में मरते हो ? तुम्हारे हाथ तो अन्ततः साढ़े-तीन हाथ धरती लगेगी, बहुत ले लोगे तो पौने चार हाथ मिल जायगी (फिर अधिक से अधिक संग्रह करने में तल्लीन रहने का क्या लाभ ?) ।। २१८ ।। कबीर जी कहते हैं कि यदि मैं चिन्ता करूँ भी, तो मेरी चिन्ता से क्या होता है ! मेरी चिन्ता तो स्वयं परमात्मा करता है, और जो मेरे लिए उपयुक्त होता है, वैसी व्यवस्था कर देता है । वह सब मेरे किए नहीं हो सकता ।। २१९ ।। म० ३ ।। चिन्ता भी उसी की देन है, जी में आता है, तो वह स्वयं निश्चिन्त भी कर देता है । गुरु नानक कहते हैं, जो सबका संरक्षक है, उसी का गुण गाओ । (जैसा उचित होगा, वह अपने-आप करेगा) ।। २२० ।।

।। म० ५ ।। कबीर रामु न चेतिओ फिरिआ लालच माहि । पाप करंता मरि गइआ अउध पुनी खिन माहि ।। २२१ ।। कबीर काइआ काची कारबी केवल काची धातु । साबतु रखहि त राम

भजु नाहि त बिनठी बात ॥ २२२ ॥ कबीर केसो केसो कूकीऐ न सोईऐ असार। राति दिवस के कूकने कबहू के सुनै पुकार ॥ २२३ ॥ कबीर काइआ कजली बनु भइआ मनु कुंचरु मयमंतु। अंकसु ग्यानु रतनु है खेवटु बिरला संतु ॥ २२४ ॥

॥ म० ५ ॥ कबीर कहते हैं, मनुष्य लोभ में बावरा हुआ रहता है, राम-नाम का स्मरण नहीं करता। पाप करते-करते आयु शीघ्र ही पूरी हो जाती है और इसी दौड़-भाग में वह मर जाता है। प्रभु जपने को अवसर ही नहीं निकाल पाता ॥ २२१ ॥ कबीर जी कहते हैं कि शरीर मिट्टी के कच्चे बर्तन के समान है, बहुत ही कच्ची धातु का बना है। यदि इसे बचाए रखना है तो प्रभु-नाम का सिमरन करो, अन्यथा इसे नाश तो हो ही जाना है ॥ २२२ ॥ कबीर जी कहते हैं कि बेफ़िक्र होकर मत सोओ, निरन्तर प्रभु की पुकार (केशव-केशव) का पहरा दो। रात-दिन पुकार करने से कभी तो प्रभु स्वयं हमारी पुकार सुन लेगा ॥ २२३ ॥ कबीर जी कहते हैं कि शरीर कदली-बन के समान है, मन मस्त हाथी की तरह इसे कुचल रहा है। इस पर केवल प्रभु-नाम का अंकुश सम्भव है, जो किसी पूर्ण सन्त रूपी पार लगानेवाले के पास होता है ॥ २२४ ॥

कबीर राम रतनु मुखु कोथरी पारख आगै खोलि। कोई आइ मिलैगो गाहकी लेगो महगे मोलि ॥२२५॥ कबीर राम नामु जानिओ नही पालिओ कटकु कुटंबु। धंधे ही महि मरि गइओ बाहरि भई न बंब ॥ २२६ ॥ कबीर आखी केरे माटुके पलु पलु गई बिहाइ। मनु जंजालु न छोडई जम दीआ दमामा आइ ॥ २२७ ॥ कबीर तरवर रूपी रामु है फल रूपी बैरागु। छाइआ रूपी साधु है जिनि तजिआ बादु बिबादु ॥ २२८ ॥

कबीर जी कहते हैं कि प्रभु-रत्न को धारण करनेबाली मुख रूपी थैली किसी पारखी के सामने ही खोलो। यदि कोई ठीक गाहकी आ मिली, तो यह रत्न-पदार्थ महँगे मोल पर बिकेगा ॥ २२५ ॥ कबीर जी कहते हैं कि मनुष्य परिवार की सेना पालता मर जाता है, परमात्मा का नाम जपने का समय ही उसको नहीं मिलता। इसी धंधे में लगा-लगा चुक जाता है, बाहर पता भी नहीं चलता कि मनुष्य ने कुछ किया भी या नहीं ॥ २२६ ॥ कबीर जी कहते हैं कि मनुष्य की आयु आँख के स्फुरण में पल-पल कर बीत जाती है। मन दुनिया के जंजाल से मुक्त नहीं हो पाता और यमराज की ओर से निमन्त्रण आ पहुँचता है ॥ २२७ ॥ कबीर जी कहते हैं कि राम पेड़ के समान है और वैराग्य उस पेड़ का फल है। साधुजन पेड़ की छाया

हैं, जो सब वाद-विवाद छोड़कर राम रूपी पेड़ का फल चखते और उसी की शरण में पड़े रहते हैं ॥ २२८ ॥

कबीर ऐसा बीजु बोइ बारह मास फलंत । सीतल छाइआ गहिर फल पंखी केल करंत ॥ २२९ ॥ कबीर दाता तरवरु दया फलु उपकारी जीवंत । पंखी चले दिसावरी बिरखा सुफल फलंत ॥ २३० ॥ कबीर साधू संगु परापती लिखिआ होइ लिलाट । मुकति पदारथु पाईऐ ठाक न अवघट घाट ॥ २३१ ॥ कबीर एक घड़ी आधी घरी आधी हूं ते आध । भगतन सेती गोसटे जो कीने सो लाभ ॥ २३२ ॥

कबीर जी कहते हैं कि ऐसा बीज बोओ, जिससे बारहमासी फल प्राप्त हो (अर्थात् जीवन सदा सुखी रहे)। बीजे पेड़ की छाया शीतल हो, गहन फल हो और नित्य उस पर पक्षी कल्लोल करते रहें। (अर्थात् ज़िन्दगी सब दिशाओं में सुन्दर हो सके) ॥ २२९ ॥ कबीर जी कहते हैं कि सतिगुरु दाता रूपी पेड़ को दया का फल लगता है, जो जीवों पर उपकार के नाते दिया जाता है। हे सतिगुरु, तुम सदा इसी फल से फले रहो; तुम्हारे सेवक तुमसे फल पा-पाकर दूर-दूर तक इस फल को बाँटने चल देते हैं (अर्थात् एक सन्त रूपी दीपक से नित्य अनेक दीपक जल उठते हैं ॥ २३० ॥ कबीर जी कहते हैं कि भाग्य में वदा हो, तभी साधु-संगति प्राप्त होती है। साधु-संगति में मुक्ति रूपी अमूल्य पदार्थ प्राप्त होता है और कठिन राह पर कोई रुकावट नहीं आती ॥ २३१ ॥ कबीर जी कहते हैं कि भक्तजनों की संगति में सदा लाभ ही लाभ है, अन्तराल चाहे एक घड़ी का हो, आधी या आधी से भी आधी घड़ी का समय हो; प्रभु-चर्चा सदा लाभप्रद है ॥ २३२ ॥

कबीर भांग माछुली सुरापानि जो जो प्रानी खांहि । तीरथ बरत नेम कीए ते सभै रसातल जांहि ॥ २३३ ॥ नीचे लोइन करि रहउ ले साजन घट माहि । सभ रस खेलउ पीअ सउ किसी लखावउ नाहि ॥ २३४ ॥ आठ जाम चउसठि घरी तुअ निरखत रहै जीउ । नीचे लोइन किउ करउ सभ घट देखउ पीउ ॥ २३५ ॥ सुनु सखी पीअ महि जीउ बसै जीअ महि बसै कि पीउ । जीउ पीउ बूझउ नही घट महि जीउ कि पीउ ॥२३६॥

कबीर स्पष्ट शब्दों में मांस-मदिरा का विरोध करते हुए कहते हैं कि जो लोग मांस खाते और भाँग-मदिरा आदि पीते हैं, वे चाहे कितने भी

तीर्थ-व्रत करें, नियमित जीवन जीयें, निश्चय ही उन्हें रसातल में जाना है (वे नरक में जाते हैं) ॥ २३३ ॥ प्रियतम को अपने हृदय में छिपाकर नयन नीचे (विनम्रतापूर्वक) करके रहो। अपने प्रभु-प्रिय से सब प्रकार का रस-भोग करो, किन्तु किसी पर प्रकट न होने दो ॥ २३४ ॥ पुनः कबीर कहते हैं कि आठों पहर, चौसठ घड़ी, मेरे प्राण तो तुम्हें देखते रहते हैं। मैं नेत्र नीचे करूँ क्योंकर करूँ, मेरे नेत्र तो सर्वत्र अपना प्रियतम ही देखते हैं (अर्थात् मेरी आँखें प्रभु को सर्व-व्यापक देखती हैं, इसलिए मुझे क्या छिपाना है ?) ॥ २३५ ॥ ऐ सखी, मेरे प्राण प्रियतम में बसते हैं और प्रियतम प्राणों में बसता है। अब तो यह दशा हो गई है कि मुझे यह नहीं पता चलता कि मेरे अन्तर् में प्राण बसे हैं या प्रियतम बसा है। (अर्थात् प्रेमी-प्रेमिक में अभेद हो गया है) ॥ २३६ ॥

कबीर बामनु गुरू है जगत का भगतन का गुरु नाहि। अरझि उरझि कै पचि मूआ चारउ बेदहु माहि ॥ २३७ ॥ हरि है खांडु रेतु महि बिखरी हाथी चुनी न जाइ। कहि कबीर गुरि भली बुझाई कीटी होइ कै खाइ ॥ २३८ ॥ कबीर जो तुहि साध पिरंम की सीसु काटि करि गोइ। खेलत खेलत हाल करि जो किछु होइ त होइ ॥ २३९ ॥ कबीर जउ तुहि साध पिरंम की पाके सेती खेलु। काची सरसउं पेलि कै ना खलि भई न तेलु ॥ २४० ॥

कबीर जी कहते हैं कि ब्राह्मण जगत का गुरु हो सकता है, किन्तु भक्तों का गुरु बनने का गुण उसमें नहीं। वह तो चारों वेदों के ज्ञानाभिमान में उलझकर मर रहा है-- भक्तों को क्या दे सकता है ? ॥२३७॥ परमात्मा चीनी का रूप है, जो संसार की रेत में सर्वत्र बिखरा पड़ा है। हाथी होकर (अहंकारपूर्वक) कोई रेत में बिखरी इस चीनी को एकत्र नहीं कर सकता। केवल सच्चा गुरु ही वह ज्ञान बता सकता है, जिससे मनुष्य चींटी बनकर (विनम्रतापूर्वक) उस चीनी का स्वाद लेता है ॥ २३८ ॥ कबीर जी कहते हैं कि यदि तुम्हें प्रभु-प्रेम की इच्छा है, तो शीश काटकर (अहम्-त्याग) गेंद बना लो और उस गेंद से खेलते-खेलते बेहाल हो जाओ। फिर जो होना होगा, होने दो (प्रभु पर छोड़ दो) ॥ २३९ ॥ कबीर जी कहते हैं कि यदि तुम्हें प्रभु-प्रेम की इच्छा है तो (सच्चे) पक्के गुरु के सहारे यह खेल खेलो। कच्ची सरसों को पेरने से न तेल निकलता है, न खली ही बनती है (अर्थात् कच्चा खेल न प्रेमल होता है, न फलदायी) ॥ २४० ॥

ढूंढत डोलहि अंध गति अरु चीनत नाही संत। कहि नामा किउ पाईऐ बिनु भगतहु भगवंतु ॥ २४१ ॥ हरि सो हीरा छाडि कै करहि आन की आस। ते नर दोजक जाहिगे सति भाखै रविदास ॥ २४२ ॥ कबीर जउ ग्रिहु करहि त धरमु करु नाही त करु बैरागु। बैरागी बंधनु करै ताको बडो अभागु ॥ २४३ ॥

अज्ञानी जन अन्धों की तरह टटोलते हैं, किन्तु सच्चे सन्त को नहीं पहचानते। नामदेव कहते हैं कि ऐसे में भक्त के बिना भगवान को क्योंकर पाया जा सकता है ? ॥ २४१ ॥ जो मनुष्य प्रभु-सा हीरा छोड़ कर अन्य जन की आशा करते हैं, वे निश्चय ही दोज़ख़ (नरक) में जायँगे। सन्त रविदास ने ऐसा कथन सत्य ही किया है ॥ २४२ ॥ कबीर जी कहते हैं कि यदि गृहस्थी जीवन को अपनाया है, तो धर्म-कर्म करो अन्यथा वैराग्य-जीवन को अपना लो। जो वैरागी होकर भी बंधन पालता है, वह तो दुर्भाग्यशाली है ही ॥ २४३ ॥

सलोक सेख फरीद के

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ जितु दिहाड़ै धन वरी साहे लए लिखाइ। मलकु जि कंनी सुणीदा मुहु देखाले आइ। जिंदु निमाणी कढीऐ हडा कू कड़काइ। साहे लिखे न चलनी जिंदू कूं समझाइ। जिंदु वहुटी मरणु वरु लै जासी परणाइ। आपण हथी जोलि कै कै गलि लगै धाइ। वालहु निकी पुरसलात कंनी न सुणीआइ। फरीदा किड़ी पवंदीई खड़ा न आपु मुहाइ ॥१॥ फरीदा दर दरवेसी गाखड़ी चलां दुनीआं भति। बंन्हि उठाई पोटली किथै वंञा घति ॥२॥ किझु न बुझै किझु न सुझै दुनीआ गुझी भाहि। सांईं मेरै चंगा कीता नाही त हंभी दझां आहि ॥ ३ ॥ फरीदा जे जाणां तिल थोड़ड़े संमलि बुकु भरी। जे जाणा सहु नंढड़ा तां थोड़ा माणु करी ॥ ४ ॥

फ़रीद जी कहते हैं, जिस दिन मनुष्य रूपी स्त्री का विवाह है, वह मुहूर्त (लग्न) निश्चित है (अर्थात् मनुष्य के जन्म लेते ही उसकी मौत का दिन भी निश्चित होता है)। जिस मृत्यु के दूत के बारे में कानों से सुना होता है, वह आकर मुँह दिखाता है (जैसे स्त्री ने अपने वर के सम्बन्ध में

बातें सुनी होती हैं, विवाह के दिन वह उसका मुँह देखती है)। बेचारी जीवात्मा को हड्डियों को खड़खड़ाकर शरीर से अलग किया जाता है। (इस अवसर के लिए पहले से ही) जीवात्मा को समझा लो कि मुहूर्त नहीं टलता, यथावसर चलना ही होगा (जैसे माता पिता कन्या को विवाह की बात बताते और मानसिक तौर से तैयार करते हैं)। जीवात्मा रूपी दुलहिन को यमदूत रूपी दूल्हे को निश्चित ही ब्याहकर ले जाना है। अपने हाथों जीवात्मा को विदा करके (यह शरीर) फिर दौड़कर किसके गले लगेगा? (उसमें की सत्या जाने के बाद क्या वह किसी की शरण ले सकता है?) ऐ मनुष्य, क्या तुमने कानों से नहीं सुना कि नरक की अग्नि पर बना पुल (पुलसरात = पुल सिरात) बाल से भी सूक्ष्म है। (नीचे कानों में नरक की) आवाज़ें आती हैं। फ़रीद जी कहते हैं कि इसलिए, ऐ मनुष्य, तुम अपने को यहाँ खड़े-खड़े न लुटाओ (अर्थात् भोग-विलास में पड़कर आत्म-नाश न करो) ॥ १ ॥ फ़रीद जी कहते हैं कि परमात्मा के द्वार पर दरवेश (फ़क़ीर) बनना बड़ा कठिन है, मैं तो संसार की भाँति चल रहा हूँ। मैंने सांसारिकता की गठरी बाँधकर उठा रखी है, अब मैं इसे कहाँ और कैसे छोड़ जाऊँ? (अर्थात् दुनियादारी से छुटकारा कैसे पाऊँ?) ॥ २ ॥ यह संसार तो छिपी अग्नि की तरह कुछ सुझाई-बुझाई ही नहीं पड़ता। मेरे स्वामी (परमात्मा) ने अच्छा ही किया (जो मेरे में वैराग्य पैदा कर दिया, अन्यथा) मैं भी भूल से इस आग में जल जाता ॥ ३ ॥ फ़रीद जी कहते हैं कि यदि मुझे पता हो कि (श्वास रूपी) तिल कम हैं, तो मैं सावधानी से मुट्ठी भरूँ (अर्थात् सावधानी-पूर्वक जीवन बिताऊँ)। यदि मुझे पता हो कि मेरा पति-परमेश्वर अप्रौढ़ (बे-परवाह) है, तो मैं उसके सम्मुख अपनी जवानी का मान न करूँ (अर्थात् बे-परवाह परमात्मा के सामने अभिमान नहीं, समर्पण अपेक्षित है) ॥ ४ ॥

जे जाणा लड़ु छिजणा पीडी पाईं गंढि। तै जेवडु मै नाहि को सभु जगु डिठा हंढि ॥ ५ ॥ फरीदा जे तू अकलि लतीफु काले लिखु न लेखु। आपनड़े गिरीवान महि सिरु नींवां करि देखु ॥ ६ ॥ फरीदा जो तै मारनि मुकीआं तिन्हा न मारे घुंमि। आपनड़ै घरि जाईऐ पैर तिन्हा दे चुंमि ॥ ७ ॥ फरीदा जां तउ खटण वेल तां तू रता दुनी सिउ। मरग सवाई नीहि जां भरिआ तां लदिआ ॥ ८ ॥

यदि मुझे विदित होता कि दामन कमज़ोर है (फट जायगा), तो मैं मज़बूत गाँठ लगाता (प्रभु से प्रेम का दामन पकड़कर उसे मज़बूती से अपना लेता), क्योंकि मैंने घूम-फिरकर सब संसार परख लिया है कि

वास्तव में (हे प्रभु) तुमसे बड़ा अन्य कोई नहीं है ॥ ५ ॥ ऐ फ़रीद, यदि तुम अक़्ल-लतीफ़ (सूक्ष्म-बुद्धि) हो, तो काले लेख न लिखो (अर्थात् जीवन में अज्ञान का अँधेरा न होने दो)। (बल्कि) अपने आँचल में मुँह छिपाकर और गर्दन झुकाकर देखो (कि तुम्हारे कर्म कैसे हैं?) ॥ ६ ॥ फ़रीद जी अपने को सम्बोधन करते हुए कहते हैं कि यदि कोई तुम्हें मुक्के भी मारे, तो बदले में तुम उसे मत मारो। बल्कि उनके पैर चूमकर अपने घर लौट आओ। (भाव यह कि बदले की चेतना की जगह विनम्रता अपना लो) ॥ ७ ॥ फ़रीद जी कहते हैं कि जब कमाई करने का समय था (अच्छे कर्मों की कमाई), तब तुम दुनियादारी के चक्र में रहे (मोह-माया में फँसे रहे)। अब तो मौत की नींव पक्की हो गई है, (अर्थात् श्वास पूरे हो गए हैं), तैयारी पूरी है, बस अब तो चल ही देना है (अर्थात् मर जाना है, इसके बाद क्या कर सकोगे?) ॥ ८ ॥

देखु फरीदा जु थीआ दाड़ी होई भूर। अगहु नेड़ा आइआ पिछा रहिआ दूरि ॥ ६ ॥ देखु फरीदा जि थीआ सकर होई विसु। सांई बाझहु आपणे वेदण कहीऐ किसु ॥ १० ॥ फरीदा अखी देखि पतीणीआं सुणि सुणि रीणे कंन। साख पकंदी आईआ होर करेंदी वंन ॥११॥ फरीदा कालीं जिनी न राविआ धउली रावै कोइ। करि सांई सिउ पिरहड़ी रंगु नवेला होइ ॥ १२ ॥

ऐ फ़रीद, देखो तुम्हारे साथ क्या बीती है, दाढ़ी सफ़ेद हो गई है। आगे मृत्यु समीप आ रही है, जीवन का आरम्भ (कुछ कर सकने के अवसर) दूर रह गए हैं (अर्थात् मृत्यु निकट है, अब भी कोई पुण्य-कर्म कर लो) ॥ ९ ॥ ऐ फ़रीद, देखो तुम्हारे साथ क्या बीती है, तुम्हारे लिए शक्कर भी विष-समान हो गई है। (अर्थात् भोग-विलास की मिठाई अब विष के समान कटु और मारक हो गई है— बुढ़ापा आ गया है।) बुढ़ापे का यह दुःख मैं अपने स्वामी प्रभु के बिना किसे कहूँ? ॥ १० ॥ फ़रीद जी कहते हैं कि मेरी आँखों की ज्योति देख-देखकर (दुनियावी चीज़ों को) मंद पड़ गई है, कानों की श्रवण-शक्ति सुन-सुनकर (दुनिया की बातें) बुझ गई है। यह शरीर रूपी खेती अब पक रही है, तभी तो धीरे-धीरे अपना पूरा रंग ही बदल रही है ॥ ११ ॥ फ़रीद जी कहते हैं कि जिसने यौवन में (काले बालों से) इश्क़ (प्यार) नहीं किया, वह बुढ़ापे में क्या प्रेम करेगा (अर्थात् जवानी में प्रभु-नाम नहीं जपा तो अब बुढ़ापे में क्या सम्भव है?) अच्छा है यदि तुम स्वामी से प्रीति करो, उसी के परिणाम से अब भी नित्यनवीन आनन्द मिलेगा। (परमात्मा से प्यार करनेवाला नित्य

नवीनता अनुभव करता है, उस पर बुढ़ापे का निराशाजनक प्रभाव नहीं होता) ॥ १२ ॥

॥ म० ३ ॥ फरीदा काली धउली साहिबु सदा है जे को चिति करे। आपणा लाइआ पिरमु न लगई जे लोचै सभु कोइ। एहु पिरमु पिआला खसम का जै भावै तै देइ ॥ १३ ॥ फरीदा जिन्ह लोइण जगु मोहिआ से लोइण मै डिठु। कजल रेख न सहदिआ से पंखी सूइ बहिठु ॥ १४ ॥ फरीदा कूकेदिआ चांगेदिआ मती देदिआ नित। जो सैतानि वंञाइआ से कित फेरहि चित ॥ १५ ॥ फरीदा थीउ पवाही दभु। जे सांई लोड़हि सभु। इकु छिजहि बिआ लताड़ीअहि। तां साई दै दरि वाड़ीअहि ॥ १६ ॥

इस पद में फ़रीद के उपयुक्त (१२वें श्लोक) की ध्वनि पर टिप्पणी करते हुए म० ३, गुरु अमरदास कहते हैं, ऐ फ़रीद, यदि मनुष्य दिल लगाकर परमात्मा से प्यार करे तो काले-सफ़ेद बालों (जवानी-बुढ़ापे की अवस्थाओं) का कोई महत्त्व नहीं। (परमात्मा उसे सदा मिल सकता है) किन्तु प्रेम अपने लगाए नहीं लगता, ऐसी आकांक्षा तो सभी करते हैं। (वास्तव में) प्रेम का रंग परमात्मा की अपनी देन है, जिसे चाहे, उसे देता है (अर्थात् प्रभु-प्रेम के लिए कोई अवस्था निर्धारित नहीं और न ही इस पर किसी का विशेष दावा है ॥ १३ ॥ फ़रीद जी कहते हैं कि जगत को मोह लेने की शक्ति रखनेवाले नेत्रों को मैंने देखा है। जो कभी अंजन की मामूली चुभन सहन नहीं करते थे, वहाँ आज पक्षी बच्चे दिए बैठे हैं (अर्थात् संसार की सुन्दर वस्तुओं का अन्त बड़ा भयंकर होता है, ऐसा फ़रीद जी का अनुभव है) ॥ १४ ॥ फ़रीद कहते हैं कि चिल्लाते, पुकारते और समझाते हुए भी जिन लोगों को शैतान ने बिगाड़ रखा है, वे अपनी बुद्धि को क्योंकर स्थिर कर सकते हैं, अर्थात् मोह-माया में फँसे जीवों का वहाँ से निकलना बड़ा कठिन होता है ॥ १५ ॥ फ़रीद कहते हैं कि ऐ मनुष्य, यदि तुम अपने स्वामी परमात्मा से मिलन चाहते हो, तो मार्ग की दूब की तरह बन जाओ। दूब को पहले काटा जाएगा, फिर पैरों तले रौंदा जाता है, तब कहीं वह परमात्मा के द्वार में प्रवेश पा सकने के योग्य होती है। (अर्थात् दूब की तरह विनम्र होकर ही प्रभु पाया जाता है) ॥ १६ ॥

फरीदा खाकु न निंदीऐ खाकू जेडु न कोइ। जीवदिआ पैरा तलै मुइआ उपरि होइ ॥ १७ ॥ फरीदा जा लबु ता नेहु

किआ लबु त कूड़ा नेहु । किचरु झति लघाईऐ छपरि तुटै मेहु ॥ १८ ॥ फरीदा जंगलु जंगलु किआ भवहि वणि कंडा मोड़ेहि । वसी रबु हिआलीऐ जंगलु किआ ढूढेहि ॥ १९ ॥ फरीदा इनी निकी जंघीऐ थल डूंगर भविओम्हि । अजु फरीदै कूजड़ा सै कोहां थीओमि ॥ २० ॥

ऐ फ़रीद, मिट्टी की निन्दा क्यों की जाय, मिट्टी के बराबर तो कुछ भी नहीं । मनुष्य जब जीवित होता है, यह मिट्टी उसके पाँव तले होती है (अर्थात् उसे खड़ा रहने की शक्ति देती है) और मरने पर उसके ऊपर हो जाती है (अर्थात् पशु-पक्षियों से मृत शरीर की भी रक्षा करती है) ॥ १७ ॥ ऐ फ़रीद, जहाँ लोभ हो, क्या वहाँ प्यार हो सकता है ? यदि लोभ है तो प्यार निश्चय ही मिथ्या होगा । आखिर वर्षा के दिनों में टूटे छप्पर के नीचे कब तक समय बिताया जा सकता है ! (टूटा छप्पर यहाँ लोभ का प्रतीक है, उसके नीचे हमेशा निभाना असम्भव होता है।) ॥ १८ ॥ फ़रीद कहते हैं, ऐ मनुष्य, तुम जंगल-जंगल में, वनस्पति और नदी-तटों पर घूमते हुए क्या खोज रहे हो ? परमात्मा तो तुम्हारे भीतर हृदय में बसा हुआ है, तुम जंगलों में भला क्यों फिरते हो (उसे पाना है तो अन्तर्मन में ही पा लो) ॥ १९ ॥ फ़रीद कहते हैं कि (जवानी में) इन छोटी टाँगों से मैंने सब मरुस्थलों-पहाड़ों को नाप डाला, किन्तु आज (बुढ़ापे में) निकट रखी मिट्टी की घटिका सौ कोसों पर रखी दीख पड़ती है (अर्थात् बुढ़ापे में कुछ कर सकने का सामर्थ्य नहीं रह गया) ॥२०॥

फरीदा राती वडीआं धुखि धुखि उठनि पास । धिगु तिन्हा दा जीविआ जिना विडाणी आस ॥ २१ ॥ फरीदा जे मै होदा वारिआ मिता आइड़िआं । हेड़ा जलै मजीठ जिउ उपरि अंगारा ॥ २२ ॥ फरीदा लोड़ै दाख बिजउरीआं किकरि बीजै जटु । हंढै उंन कताइदा पैधा लोड़ै पटु ॥ २३ ॥ फरीदा गलीए चिकड़ु दूरि घरु नालि पिआरे नेहु । चलात भिजै कंबली रहां त तुटै नेहु ॥ २४ ॥

ऐ फ़रीद, (प्रियतम की वियोगावस्था में) रातें लम्बी हो गई हैं, और शरीर दर्द करने लगा है (सो-सोकर) । किन्तु उनके जीवन पर धिक्कार है, जो पर-आशा करने लगते हैं (अर्थात् अपने प्रियतम को भुला कर रात की रंगरलियाँ दूसरों से करने लगते हैं) ॥ २१ ॥ फ़रीद जी कहते हैं कि यदि मैं (अपने घर आए हुए) मित्रों से कोई चोरी रखूँ, कोई बात छिपाऊँ, तो मेरा शरीर मजीठ-रंग के अंगारों (धधकते अंगारों) में

जल जाए। (भाव यह है कि सज्जन लोगों के पधारने पर समर्पण का मार्ग ही सही है, आडम्बर नहीं चलता) ॥ २२ ॥ फ़रीद कहते हैं कि यदि कृषक बबूल बीजकर अंगूर खाने की आशा करे, तो उसकी स्थिति उस व्यक्ति के समान होगी, जो जीवन-भर ऊन कातता है किन्तु रेशमी पहनने की इच्छा करता है ॥ २३ ॥ फ़रीद अपनी प्रेममयी स्थिति का वर्णन करते हुए कहते हैं कि गलियों में कीचड़ है, (प्रियतम का) घर दूर है, किन्तु उसके साथ प्यार गहरा है। (प्रियतम को मिलने जाऊँ तो) मेरी ओढ़नी (वर्षा के कारण) भीगती है और यदि (इस कठिनाई के कारण) नहीं जाता, तो प्यार को लाज लगती है, नेह टूटता है। (अभिप्राय यह कि प्रेम मार्ग के विघ्नों का कोई महत्त्व नहीं मानता— अगले दोहे में यह बात स्पष्ट की है।) ॥ २४ ॥

भिजउ सिजउ कंबली अलह वरसउ मेहु। जाइ मिला तिना सजणा तुटउ नाही नेहु ॥ २५ ॥ फरीदा मै भोलावा पग दा मतु मैली होइ जाइ। गहिला रूहु न जाणई सिरु भी मिटी खाइ ॥ २६ ॥ फरीदा सकर खंडु निवात गुड़ु माखिओु मांझा दुधु। सभे वसतू मिठीआं रब न पूजनि तुधु ॥ २७ ॥ फरीदा रोटी मेरी काठ की लावणु मेरी भुख। जिना खाधी चोपड़ी घणे सहनिगे दुख ॥ २८ ॥

ओढ़नी भीगती है, तो भीग जाय, किन्तु प्रभु-प्रियतम की ओर से बरसाया मेंह बरसता रहे, इसमें भी आनन्द है। मैं तो निश्चित ही अपने प्रियतम को जा मिलूंगा, ताकि मेरा प्रेम अमर बना रहे ॥ २५ ॥ फ़रीद कहते हैं कि मुझे अपनी पगड़ी की चिन्ता है कि कहीं मैली न हो जाय! किन्तु मूर्ख जीव नहीं जानता कि (मरणोपरांत) पगड़ी तो क्या सिर भी मिट्टी ही खा जाती है ॥ २६ ॥ फ़रीद कहते हैं (कि यह सच है) कि शक्कर, चीनी, मिश्री, गुड़, शहद एवं भैंस का दूध, सब वस्तुएँ मीठी होती हैं, किन्तु इनमें से कोई भी वस्तु जीव को परमात्मा की ओर प्रवृत्त नहीं करतीं (अर्थात् बेकार हैं) ॥ २७ ॥ फ़रीद जी कहते हैं कि मेरी रोटी लकड़ी की तरह कठोर है और मेरी भूख उसके संग ग्रहण करनेवाली सब्ज़ी है। (अभिप्राय यह कि भूख को मैंने संयत कर रखा है, काठ की कठोर रोटी मुझे सांसारिक भोग-विलास से मुक्त रखती है); जो लोग घी आदि से चुपड़ी रोटी खाते हैं (अर्थात् विषय-विकारों में पड़ते हैं) वे ही दुःख सहन करेंगे ॥ २८ ॥

रुखी सुखी खाइ कै ठंढा पाणी पीउ। फरीदा देखि पराई चोपड़ी ना तरसाए जीउ ॥ २९ ॥ अजु न सुती कंत सिउ अंगु

मुड़े मुड़ि जाइ। जाइ पुछहु डोहागणी तुम किउ रैणि बिहाइ ॥ ३० ॥ साहुरै ढोई ना लहै पेईऐ नाही थाउ। पिरु वातड़ी न पुछई धन सोहागणि नाउ ॥ ३१ ॥ साहुरै पेईऐ कंत की कंतु अगंमु अथाहु। नानक सो सोहागणी जु भावै बे परवाह ॥ ३२ ॥

ऐ फ़रीद, अपनी रूखी-सूखी रोटी खाकर शीतल जल ग्रहण करो (अर्थात् सादेपन का जीवन जिओ); पराये लोगों की चुपड़ी रोटी देखकर मन को क्यों तरसाते हो (अर्थात् दूसरे यदि विलासिता में जीते हैं, तो भी तुम मन को उधर से विरक्त रखो) ॥ २९ ॥ फ़रीद जी कहते हैं कि मैं तो केवल आज ही एक दिन के लिए प्रियतम की सेज से अलग सोई हूँ, और मेरे शरीर का अंग-अंग पीड़ा कर रहा है— (भला वे वियोगिनियाँ क्योंकर जीवित हैं, जो सदैव प्रियतम से अलग हैं) चलकर विरहिणी से पूछो कि वह रात्रि क्योंकर गुज़ारती है ! (अभिप्राय यह कि सच्चा प्यार एक दिन की विलगता नहीं सहन कर सकता, बेचारी विरहिणी जीवात्माएँ कैसे जीवन गुज़ारती होंगी ?) ॥ ३० ॥ जो जीव-स्त्री ससुराल (परलोक) में प्रतिष्ठित नहीं, पीहर (इहलोक) में जिसकी कोई क़द्र नहीं और प्रियतम (प्रभु) उसकी बात नहीं पूछता, भला उसे 'सुहागिन' की संज्ञा देना कहाँ तक उचित है ? ॥ ३१ ॥ (३२वें श्लोक में बाबा फ़रीद की उपरोक्त धारणा पर गुरु नानक टिप्पणी करते हैं—) ऐ नानक, जीव-स्त्री ससुराल या पीहर (परलोक या इहलोक), दोनों जगह अपने पति (परमेश्वर) की है और वह निपट बे-परवाह है। जो ऐसे बे-परवाह प्रभु-पति को रुचती है, वही स्त्री (जीव) वास्तब में सुहागिन होती है ॥ ३२ ॥

नाती धोती संबही सुती आइ न चिंदु। फरीदा रही सु बेड़ी हिंङु दी गई कथूरी गंधु ॥ ३३ ॥ जोबन जांदे न डरां जे सह प्रीति न जाइ। फरीदा कितीं जोबन प्रीति बिनु सुकि गए कुमलाइ ॥ ३४ ॥ फरीदा चिंत खटोला वाणु दुखु बिरहि विछावण लेफु। एहु हमारा जीवणा तू साहिब सचे वेखु ॥३५॥ बिरहा बिरहा आखीऐ बिरहा तू सुलतानु। फरीदा जितु तनि बिरहु न ऊपजै सो तनु जाणु मसानु ॥ ३६ ॥

जीवात्मा-स्त्री यदि प्रियतम की प्रतीक्षा में नहा-धोकर सजधज-पूर्ण बैठी और भ्रमावर्त होकर पुनः निद्रा-मग्न हो गई। (परिणामतः प्रभु-प्रियतम आकर लौट गए अर्थात्) कस्तूरी की गंध तो उड़ गई, थोड़ी शेष

बची दुर्गंध पल्ले पड़ी (अभिप्राय आध्यात्मिक प्रेम का रंग तो नीरस हो गया, विषय-वासना की दुर्गंध शेष बची) ।। ३३ ।। ऐ फ़रीद, यदि परमात्मा-पति से मेरा प्यार अटूट बना रहे, तो यौवन के बीत जाने की भी मुझे कोई चिन्ता नहीं। पति-प्रियतम के प्रेम के बिना कितने ही यौवन सूख गए या कुम्हलाकर रह गए हैं ।। ३४ ।। फ़रीद कहते हैं कि प्रभु को पाने की इच्छा ही हमारी चारपाई है, वह दुःख रूपी पट्टी से बुनी गई है और उस पर विरह का बिछावन तथा रज़ाई मौजूद है। इस प्रकार की विरह-स्थिति में हम जी रहे हैं, हे सच्चे स्वामी, हमारी अव्यवस्थित स्थिति को देखो (और कृपा करो) ।। ३५ ।। विरह-विरह की रट सभी लगाते हैं, यह विरह की अनुभूति तो बादशाह की तरह सम्माननीय है। जिसके शरीर में विरह की अनुभूति नहीं उपजती, उनका शरीर श्मशान के समान समझो ।। ३६ ।।

फरीदा ए विसु गंदला धरीआं खंडु लिवाड़ि। इकि राहेदे रहि गए इकि राधी गए उजाड़ि ।।३७।। फरीदा चारि गवाइआ हंढि कै चारि गवाइआ संमि। लेखा रबु मंगेसीआ तू आंहो केहें कंमि ।। ३८ ।। फरीदा दरि दरवाजै जाइ कै किउ डिठो घड़ीआलु। एहु निदोसां मारीऐ हम दोसां दा किआ हालु ।। ३९ ।। घड़ीए घड़ीए मारीऐ पहरी लहै सजाइ। सो हेड़ा घड़ीआल जिउ डुखी रैणि विहाइ ।। ४० ।।

ऐ फ़रीद, यह संसार (अत्यन्त गहरा एवं अनुदार है।) विष-लिपटे साग के समान है, किन्तु ऊपर चीनी की पाग दे रखी है। कुछ लोग इस विषैले साग का सेवन करते रह गए, जबकि कुछ ऐसे भी होते हैं जो इस विषैली उपज को उजाड़कर चले जाते हैं (विरक्त हो जाते हैं) ।। ३७ ।। फ़रीद कहते हैं कि ऐ मनुष्य, तुमने चार पहर (दिन) तो घूम-फिरकर आनन्द में बिता दिए, शेष चार पहर (रात्रि) सोकर खो दिए। मृत्युपरांत परमात्मा तुससे हिसाब माँगेगा कि तुम्हें क्या काम सौंपा गया था और तुम क्या कार्य करते रहे ! ।। ३८ ।। ऐ मनुष्य, क्या तुमने कभी सम्पन्न लोगों के द्वार पर रखा घड़ियाल नहीं देखा ? (उस पर हर पहर चोट लगाई जाती है। उसी को इंगित करते हैं कि) जब वह निर्दोष घड़ियाल नित्य पिटता है, तो वह दोषयुक्त जीवों का क्या होगा ? (अभिप्राय यह कि फ़रीद लोगों को आह्वान कर रहे हैं, ताकि वे अपने दोषों का विश्लेषण कर सकें) ।। ३९ ।। (उस घड़ियाल पर) हर घड़ी, हर पहर चोट लगाई जाती है, उसे अकारण कष्ट पहुँचाया जाता है। शरीर की स्थिति भी

इसी घड़ियाल की नाईं है, इसकी आयु रूपी रात्रि भी दुःखों में व्यतीत होती है ॥ ४० ॥

बुढा होआ सेख फरीदु कंबणि लगी देह। जे सउ वरिआ जीवणा भी तनु होसी खेह ॥ ४१ ॥ फरीदा बारि पराइऐ बैसणा सांई मुझै न देहि। जे तू एवै रखसी जीउ सरीरहु लेहि ॥ ४२ ॥ कंधि कुहाड़ा सिरि घड़ा वणि कै सरु लोहारु। फरीदा हउ लोड़ी सहु आपणा तू लोड़हि अंगिआर ॥ ४३ ॥ फरीदा इकन्हा आटा अगला इकन्हा नाही लोणु। अगै गए सिञापसनि चोटां खासी कउणु ॥ ४४ ॥

फ़रीद कहते हैं कि मनुष्य जब वृद्ध होता है, तो शरीर काँपने लगता है (जर्जरित हो जाता है) यदि जीवन की अवधि सौ वर्ष की भी हो, अन्ततः तो मिट्टी में ही मिलना है। (अभिप्राय यह कि वृद्धावस्था और मृत्यु अवश्यम्भावी हैं, जीवन कितना भी भोग लो, आखिर तो मरना निश्चित है) ॥ ४१ ॥ फ़रीद जी कहते हैं, ऐ प्रभु, मुझे और के द्वार का याचक न बना (बैठने न दो, अपनी ही शरण में रखो)। यदि तुमको ऐसा ही रखना हो तो कृपया मेरे शरीर से प्राण अलग कर लो (ताकि मुझे जीवित होने के नाते पर-वशता महसूस न हो) ॥ ४२ ॥ पेड़ के संदर्भ में बाबा फ़रीद लोहार से कहते हैं कि तुम कंधे पर कुल्हाड़ी लिये हुए हो, सिर पर पानी का घड़ा रखा है और पेड़ को काटना चाहते हो (पेड़ के सिर पर सवार हो)। (मैं इस पेड़ के नीचे बैठकर) प्रभु-नाम लेता और परमात्मा को खोजता हूँ और तुम इसे काट-जलाकर अंगारे सुलगाते हो (अभिप्राय यह कि लक्ष्य भिन्न होने से यह तथ्य चिन्तनीय है) ॥ ४३ ॥ फ़रीद जी कहते हैं कि कुछ लोगों के पास सम्पन्नता रूपी आटा पर्याप्त है और कुछ लोगों के पास समृद्धि आटे में नमक के समान भी नहीं है। परलोक में जाने पर वास्तविक स्थिति का ज्ञान होगा, कि अधिक दण्ड किसे मिलता है ! ॥ ४४ ॥

पासि दमामे छतु सिरि भेरी सडो रड। जाइ सुते जीराण महि थीए अतीमा गड ॥ ४५ ॥ फरीदा कोठे मंडप माड़ीआ उसारेदे भी गए। कूड़ा सउदा करि गए गोरी आइ पए ॥ ४६ ॥ फरीदा खिंथड़ि मेखा अगलीआ जिंदु न काई मेख। वारी आपो आपणी चले मसाइक सेख ॥ ४७ ॥ फरीदा दुहु दीवी बलंदिआ मलकु बहिठा आइ। गड़ु लीता घटु लुटिआ दीवड़े गइआ बुझाइ ॥ ४८ ॥

जिनके समीप नगाड़े बजते थे, सिर पर छत्र झूलते थे और चारण जन जिनकी कीर्ति गाते थे (जो ऐसे सम्पन्न लोग थे), वे भी अन्ततः क़ब्रों में जाकर सो गए। अनाथों की नाईं वे धरती में गड़े पड़े हैं ॥ ४५ ॥ फ़रीद कहते हैं कि मकान, मंडप और बड़े-बड़े भवन बना लेनेवाले भी (संसार से) उठ गए। वास्तव में वे संसार में मिथ्या व्यापार करते रहे हैं— अन्ततः क़ब्रों में दफ़ना दिए गए ॥४६॥ फ़रीद कहते हैं कि (परमात्मा ने) शरीर रूपी खिथा (क़फ़नी) को बनाए रखने के लिए बहुत सी नाड़ियों की सीनें लगाई हुई हैं, किन्तु जीव (को शरीर के साथ बनाए) रखने के लिए कोई सीन नहीं। अपनी-अपनी बारी से सब साधक और शेख चले जाते हैं (संसार से उठ जाते हैं) ॥ ४७ ॥ फ़रीद कहते हैं कि दोनों नेत्रों के दीपक जलते रहने पर भी यमराज आकर बैठ गया है। उसने शरीर रूपी क़िले पर अधिकार करके अन्तरात्मा को लूट लिया है। जाते-जाते दोनों दीपक भी बुझा गया है (शरीर प्राण-विहीन बना गया है) ॥ ४८ ॥

फरीदा वेखु कपाहै जि थीआ जि सिरि थीआ तिलाह। कमादै अरु कागदै कुंने कोइलिआह। मंदे अमल करेदिआ एह सजाइ तिनाह ॥ ४९ ॥ फरीदा कंनि मुसला सूफु गलि दिलि काती गुड़ु वाति। बाहरि दिसै चानणा दिलि अंधिआरी राति ॥ ५० ॥ फरीदा रती रतु न निकलै जे तनु चीरै कोइ। जो तन रते रब सिउ तिन तनि रतु न होइ ॥ ५१ ॥ ॥ म० ३ ॥ इहु तनु सभो रतु है रतु बिनु तंनु न होइ। जो सह रते आपणे तितु तनि लोभु रतु न होइ। भै पइऐ तनु खीणु होइ लोभु रतु विचहु जाइ। जिउ बैसंतरि धातु सुधु होइ तिउ हरि का भउ दुरमति मैलु गवाइ। नानक ते जन सोहणे जि रते हरि रंगु लाइ ॥ ५२ ॥

फ़रीद कहते हैं कि देखो कपास पर क्या बीती है, तिलों पर भी मुसीबत आई है और वही दशा गन्ने, काग़ज़, मिट्टी की हण्डिया और कोयलों की भी हुई है (भाव यह कि सबको कष्ट सहना पड़ा है, सब दण्ड भोगते हैं— कपास बेलने में, तिल कोल्हू में, गन्ना और काग़ज़ भी वहीं डाल-डालकर पिराए जाते हैं; हण्डिया और कोयलों को नित्य जलना होता है, सबकी एक ही दशा है)। संसार में बुरे कर्म करनेवालों को इसी तरह दण्ड सहना पड़ता है ॥ ४९ ॥ फ़रीद पाखण्डियों को इंगित करते हुए कहते हैं कि उनके कन्धे पर चटाई और गले में ऊनी कफ़नी है। मुँह में गुड़ (अर्थात् मीठा बोलते हैं), किन्तु दिल में ईर्ष्या-द्वेष की छुरी है। ऐसे लोग बाहर से तो उजले दिखते हैं, किन्तु उनके मन में रात की स्याही भरी

रहती हैं ।। ५० ।। फ़रीद कहते हैं कि भगवद्-रत जीवों का शरीर यदि कोई चीरे, तो उसमें से रक्त नहीं मिलेगा, क्योंकि प्रभु के रंग में लीन होने के कारण (उनका रक्त विरहाग्नि में जल जाता है, इसलिए) उनमें रक्त नहीं रह जाता ।। ५१ ।। म० ३ ।। (बावनवाँ श्लोक, फ़रीद के ५१वें श्लोक पर गुरु अमरदास जी की टिप्पणी है ।) वे कहते हैं कि यह शरीर रक्त का ही बना हुआ है, रक्त के बिना शरीर खड़ा नहीं रह सकता । जो अपने प्रभु-प्रियतम के प्रेम में लीन होते हैं, उनमें लाभ रूपी रक्त नहीं होता । परमात्मा के भय में रहने के कारण उनका शरीर क्षीण होता है, लोभ-रक्त निकल जाता है । जिस प्रकार अग्नि में डालने से धातु शुद्ध हो जाती है, वैसे ही हरि का भय दुर्मति रूपी मलिनता साफ़ कर देता है । गुरु नानक कहते हैं कि वे भक्तजन, जो हरि-रंग में मस्त हैं, सुन्दर दीखते हैं ।। ५२ ।।

फरीदा सोई सरवरु ढूढि लहु जिथहु लभी वथु । छपड़ि ढूढै किआ होवै चिकड़ि डुबै हथु ।। ५३ ।। फरीदा नंढी कंतु न राविओ वडी थी मुईआसु । धन कूकेंदी गोर में तै सह ना मिलीआसु ।। ५४ ।। फरीदा सिरु पलिआ दाड़ी पली मुछां भी पलीआं । रे मन गहिले बावले माणहि किआ रलीआं ।। ५५ ।। फरीदा कोठे धुकणु केतड़ा पिर नीदड़ी निवारि । जो दिह लधे गाणवे गए विलाड़ि विलाड़ि ।। ५६ ।।

फ़रीद जी कहते हैं कि (सत्संगति रूपी) सरोवर में ढूंढ़ो, वहीं बहुमूल्य रत्न (हरिनाम) हाथ लगेगा । (सांसारिक कुसंगति रूपी) जोहड़ में हाथ बोरने का क्या लाभ ? वहाँ तो (लोभ-मोह रूपी) कीचड़ ही हाथ लगेगा ।। ५३ ।। जिस जीवात्मा-स्त्री ने जवानी में (सुअवसरानुसार) प्रभु-पति से रमण नहीं किया और वृद्धावस्था में मर गई । वह क़ब्र में भी सदा बिलखती रहेगी कि क्यों वह परमात्मा रूपी प्रियतम से रमण नहीं कर सकी (अर्थात् उसे क़ब्र में भी शांति नहीं मिल सकती) ।। ५४ ।। शेख फ़रीद कहते हैं कि (वृद्ध वस्था आ गई है) सिर, दाढ़ी और मूंछें पक गई हैं अर्थात् बाल सफ़ेद हो गए हैं । ऐ असावधान, गँवार जीव, क्या तुम अब भी रंगरलियाँ मना रहे हो ? (अर्थात् अब तो विषय-वासनाओं का त्याग कर प्रभु में चित्त लगाओ) ।। ५५ ।। फ़रीद जी कहते हैं कि मकान की छत पर कहाँ तक दौड़ा जा सकता है (अर्थात् जीवन मकान की छत की तरह सीमित है), अतः परमात्मा-पति के प्रति (ऐ असावधान स्त्री) अपनी उपेक्षा रूपी नींद का त्याग कर । आयु रूपी जो गिनती के दिन मिले हैं, वे (सांसारिक लीलाओं में) बीतते जा रहे हैं ।। ५६ ।।

फरीदा कोठे मंडप माड़ीआ एतु न लाए चितु। मिटी पई अतोलवी कोइ न होसी मितु ॥ ५७ ॥ फरीदा मंडप मालु न लाइ मरग सताणी चिति धरि। साई जाइ सम्हालि जिथै ही तउ वंञणा ॥ ५८ फरीदा जिन्ही कंमी नाहि गुण ते कंमड़े विसारि। मतु सरमिंदा थीवही सांई दै दरबारि ॥ ५९ ॥ फरीदा साहिब दी करि चाकरी दिल दी लाहि भरांदि। दरवेसां नो लोड़ीऐ रुखां दी जीरांदि ॥ ६० ॥

हे प्राणी, इन कोठियों, प्रासादों एवं उद्यानों में मन नहीं लगाना चाहिए, (मृत्यूपरांत क़ब्र में) तुम पर अतुल मिट्टी पड़ेगी, तब कोई तुम्हारा मित्र नहीं होगा ॥ ५७ ॥ फ़रीद जी दुनिया के लोगों को समझाते हुए कहते हैं कि धन-सम्पत्ति एवं महलों-मंडपों में मन न लगाओ। कष्ट पहुँचानेवाली मृत्यु को सदैव याद रखो और उस जगह (परलोक) को भी याद रखो, जहाँ अन्ततः सबको जाना है ॥ ५८ ॥ हे फ़रीद, जिन कर्मों से जीवात्मा को किसी गुण की प्राप्ति नहीं होती, वे कर्म त्याग दो। ऐसा न हो कि प्रभु के दरबार में तुम्हें उन (निकृष्ट) कर्मों के लिए लज्जित होना पड़े ॥ ५९ ॥ फ़रीद जी कहते हैं कि परमात्मा रूपी स्वामी की सेवा-सुश्रूषा करो और मन के भ्रमों का निवारण करो। फ़क़ीरों को चाहिए कि वे पेड़ों की नाईं सहनशील रहें ॥ ६० ॥

फरीदा काले मैडे कपड़े काला मैडा वेसु। गुनही भरिआ मै फिरा लोकु कहै दरवेसु ॥ ६१ ॥ तती तोइ न पलवै जे जलि टुबी देइ। फरीदा जो डोहागणि रब दी झूरेदी झूरेइ ॥ ६२ ॥ जां कुआरी ता चाउ वीवाही तां मामले। फरीदा एहो पछोताउ वति कुआरी न थीऐ ॥ ६३। कलर केरी छपड़ी आइ उलथे हंझ। चिंजू बोड़न्हि ना पीवहि उडण संदी डंझ ॥ ६४ ॥

फ़रीद विनम्रता दर्शाते हुए कहते हैं कि मेरे कपड़े काले है, मेरा वेष भी काला (पाखण्डपूर्ण) है। मैं पापों से भरा फिरता हूँ, फिर भी लोग मुझे दरवेश (साधु) कहते हैं (अर्थात् मैं तो इस योग्य नहीं कि दरवेश कहलवा सकूँ) ॥ ६१ ॥ ज्यों एक बार सड़ी हुई खेती दोबारा नहीं खिलती, चाहे उसे अत्यधिक पानी में डुबा ही क्यों न दिया जाय, त्योंही फ़रीद कहते हैं, परमात्मा से विमुख हुई जीवात्मा-स्त्री सदैव वियोग-दुःख से पीड़ित रहती है (उसे दोबारा कभी संयोग-सुख नहीं मिलना।) ॥६२॥ जब तक कन्या कुँआरी होती है, उसके मन में (विवाह का) चाव बना रहता है। विवाहोपरांत सैकड़ों झंझट खड़े हो जाते हैं, फ़रीद जी कहते हैं,

तब वह पश्चात्ताप करती है, (और सोचती है कि) क्या दोबारा कुँआरी कन्या नहीं बन सकती? (भाव यह कि जीवात्मा को प्रभु-पति से मिलने का प्रबल चाव होता है, किन्तु प्रभु के घर में अपेक्षित गुणों के अभाव में उसे आदर-सत्कार नहीं मिलता, तो वह पुनः जीवन प्राप्त कर अपेक्षित गुणों को अर्जित करना चाहती है ॥ ६३ ॥ संसार रूपी खारी जोहड़ के किनारे (सन्त रूपी) हंस आए हैं, किन्तु वे इसके मलिन-खारे पानी में चोंच भी नहीं डुबाते (अर्थात् सांसारिक विषय-वासनाओं से विरक्त रहते हैं)। उनके मन में सदा वहाँ से उड़ जाने की प्रबल इच्छा रहती है (अर्थात् वे संसार से सत्लोक को चले जाना चाहते हैं) ॥ ६४ ॥

हंसु उडरि कोध्रै पइआ लोकु विडारणि जाइ । गहिला लोकु न जाणदा हंसु न कोध्रा खाइ ॥ ६५ ॥ चलि चलि गईआं पंखीआ जिन्ही वसाए तल । फरीदा सरु भरिआ भी चलसी थके कवल इकल ॥ ६६ ॥ फरीदा इट सिराणे भुइ सवणु कीड़ा लड़िओ मासि । केतड़िआ जुग वापरे इकतु पइआ पासि ॥६७॥ फरीदा भंनी घड़ी सवंनवी टुटी नागर लजु । अजराईलु फरेसता कै घरि नाठी अजु ॥ ६८ ॥

हंस उड़कर कोधरे (एक प्रकार का अन्न) के खेत में जा बैठा है, लोग उसे उड़ाने जाते हैं (अर्थात् सन्त रूपी हंस ससार में अवतरित होते हैं और संसार की मलिनता में क्रियाशील दीख पड़ते हैं)। फ़रीद कहते हैं, मूर्ख लोग यह नहीं जानते कि हंस कभी कोधरे का अन्न नहीं खाता (अर्थात् संत संसार के विषय-वासनाओं में नहीं पड़ते) ॥ ६५ ॥ बाबा फ़रीद कहते हैं कि संसार रूपी सरोवर को जिन पक्षियों ने बसेरा बना रखा था, वे अपनी-अपनी बारी से चले गए हैं (अर्थात् संसार में रहनेवाले सब जीवों को चले जाना है)। अन्त में यह संसार (सरोवर) भी नष्ट हो जाने का है (प्रलय में, या नाम-रूपात्मक संसार का अन्त ज्ञानार्जन के बाद स्वयमेव हो जाता है), केवल सरोवर में उत्पन्न (सन्त रूपी) कमल ही अकेले स्थिर रहेंगे (सरोवर सूखेगा तो भी कीचड़ में कमल बने रहेंगे) ॥६६॥ ऐ फ़रीद, (क़ब्र में लेटे मृत शरीर के) सिरहाने ईंट होगी, धरती का बिछावन होगा और मांस को कीड़े खा रहे होंगे। इस प्रकार कितने ही युग एक ही पार्श्व में पड़े-पड़े (क़ियामत कि प्रतीक्षा में) बीत जायँगे ॥ ६७ ॥ फ़रीद जी मृत्यु की व्यापकता बताते हुए कहते हैं कि शरीर रूपी सुन्दर घट टूट गया है, (श्वासों) की सुष्ठु डोरी टूट गई है। आज इज़राईल (मौत का फ़िरिश्ता) किसके घर का अतिथि है (अर्थात् चलो-चलो के इस मेले में आज मृत्यु की संगति कौन करनेवाला है?) ॥ ६८ ॥

फरीदा भंनी घड़ी सवंनवी टुटी नागर लजु। जो सजण भुइ भारु थे से किउ आवहि अजु ॥ ६९ ॥ फरीदा बेनिवाजा कुतिआ एह न भली रीति। कबही चलि न आइआ पंजे वखत मसीति ॥७०॥ उठु फरीदा उजू साजि सुबह निवाज गुजारि। जो सिरु सांई ना निवै सो सिरु कपि उतारि ॥७१॥ जो सिरु साई ना निवै सो सिरु कीजै कांइ। कुंने हेठि जलाईऐ बालण संदै थाइ ॥ ७२ ॥

मृत्यु की व्यापकता पर पुनः बल देते हुए कहते हैं कि शरीर रूपी सुन्दर घट टूट गया है, (श्वासों) की सुष्ठु डोरी टूट गई है। जो लोग मंदे कर्मों के कारण पहले ही भूमि-भार होकर रहते थे, भला वे पुनः आज की स्थिति (मनुष्य-जन्म) में क्योंकर आ सकेंगे ? ॥ ६९ ॥ फ़रीद नमाज़ न पढ़नेवालों को धिक्कारते हुए कहते हैं कि ऐ बे-नमाजी, कुत्ते (पुरुष), यह भली रीति नहीं कि पाँच समय की नमाज़ में तुम कभी भी मस्जिद की ओर चलकर नहीं आते ॥ ७० ॥ ऐ फ़रीद, उठो और मुँह-हाथ धोकर प्रातःकालीन नमाज़ पढ़ो। जो सिर अपने स्वामी के सामने नहीं झुकता, उसे काटकर फेंक दो। (फरीद यहाँ नमाज़ पढ़ने तथा प्रभु के सम्मुख समर्पित होने की चर्चा करते हैं।) ॥ ७१ ॥ जो सिर स्वामी के सम्मुख नहीं झुकता (अभिमानी है), उसका क्या किया जाय ? (पुनः स्वयं फ़रीद उत्तर देते हैं) उसे तो ईंधन की जगह हण्डिया के नीचे जला देना चाहिए ॥ ७२ ॥

फरीदा किथै तैडे मापिआ जिन्ही तू जणिओहि। तै पासहु ओइ लदि गए तूं अजै न पतीणोहि ॥ ७३ ॥ फरीदा मनु मैदानु करि टोए टिबे लाहि। अगै मूलि न आवसी दोजक संदी भाहि ॥ ७४ ॥ महला ५ ॥ फरीदा खालकु खलक महि खलक वसै रब माहि। मंदा किस नो आखीऐ जां तिसु बिनु कोई नाहि ॥ ७५ ॥ फरीदा जि दिहि नाला कपिआ जे गलु कपहि चुख। पवन्हि न इती मामले सहां न इती दुख ॥ ७६ ॥

फ़रीद कहते हैं कि (ध्यानपूर्वक देखो), तुम्हारे माता-पिता कहाँ हैं, जिन्होंने तुम्हें जन्म दिया था। वे तुमसे दूर चले गए हैं और तुम्हें अभी भी विश्वास नहीं हुआ (कि संसार नश्वर है, सबको चले जाना है) ॥ ७३ ॥ हे प्राणी, मन रूपी धरती के संकल्प-विकल्प रूपी ऊँची-नीची अवस्था को दूर करके उसे समतल कर लो। (ऐसा करने पर मरणोपरान्त) तुम्हारे सम्मुख नरकाग्नि बिलकुल नहीं आएगी (अर्थात्

दोज़ख से बचोगे) ।। ७४ ।। महला ५ ।। (७५वाँ श्लोक गुरु अर्जुन देव द्वारा लिखी फ़रीद-कथन पर टिप्पणी है ।) ऐ फ़रीद ! सृष्टि परमात्मा में और परमात्मा सृष्टि में बसता है; (परमात्मा सर्व-व्यापक है), उसके बिना अन्य कोई नहीं, तो फिर बुरा किसे कहा जाय ? ।।७५।। फ़रीद जी कहते हैं कि जिस दिन (धाय ने) पोषक नलिका काटी थी (जन्म के समय रक्त-पोशी नाड़ी काट दी जाती है), तभी यदि वह गला भी काट देती, तो न इतने झंझट पड़ते और न ही इतने दुःख सहन करने पड़ते ।।७६ ।।

चबण चलण रतंन से सुणी अर बहि गए । हेड़े मुती धाह से जानी चलि गए ।।७७।। फरीदा बुरे दा भला करि गुसा मनि न हढाइ । देही रोगु न लगई पलै सभु किछु पाइ ।। ७८ ।। फरीदा पंख पराहुणी दुनी सुहावा बागु । नउबति वजी सुबह सिउ चलण का करि साजु ।। ७९ ।। फरीदा राति कथूरी वंडीऐ सुतिआ मिलै न भाउ । जिन्हा नैण नींद्रावले तिन्हा मिलणु कुआउ ।। ८० ।।

फ़रीद जी कहते हैं कि चबानेवाले (दाँत), चलानेवाली (टाँगें), चमकनेवाले रत्न (आँखें) तथा सुननेवाले (कान) बेकार हो गए हैं। (इस अवस्था में) शरीर ने ऊँचा पुकारकर कहा कि मेरे तो सब मित्र (काम-क्रोधादि) चले गए हैं ।। ७७ ।। फ़रीद जी कहते हैं कि अपने साथ बुरा करनेवाले का भी भला करो, मन में क्रोध न बढ़ाओ । ऐसा करने से शरीर में रोग नहीं लगता और सब पदार्थों की प्राप्ति होती है ।। ७८ ।। फ़रीद कहते हैं कि यह संसार एक सुहाना बाग़ है, तथा जीव रूपी पंछी इसमें मेहमान है । जन्म-काल से ही (प्रातः से ही) चलने का नगाड़ा बज रहा है (चलने की तैयारी कर लो) ।। ७९ ।। ऐ फ़रीद, आयु की रात्रि में हरि-भक्ति रूपी कस्तूरी बाँटी जाती है । (मोह-माया में रत होकर) निद्रा-मग्न जीवों को कस्तूरी का भाग नहीं मिल सकता । जिनके नेत्र मोह-वश में निद्रालस रहते हैं, उनको (हरि-भक्ति रूपी) कस्तूरी क्योंकर प्राप्त हो सकती है ? (अर्थात् ऐसा नहीं हो सकता) ।। ८० ।।

फरीदा मै जानिआ दुखु मुझ कू दुखु सबाइऐ जगि । ऊचे चड़ि कै देखिआ तां घरि घरि एहा अगि ।। ८१ ।। ।। महला ५ ।। फरीदा भूमि रंगावली मंझि विसूला बाग । जो जन पीरि निवाजिआ तिन्हा अंच न लाग ।।८२।। महला ५ ।। फरीदा उमर सुहावड़ी संगि सुवंनड़ी देह । विरले केई पाईअनि जिन्हा

पिआरे नेह ॥८३॥ कंधी वहण न ढाहि तउ भी लेखा देवणा। जिधरि रब रजाइ वहणु तिदाऊ गंउ करे ॥ ८४ ॥

फ़रीद जी कहते हैं, मैं तो यही समझता था कि केवल मुझे दुःख है, किन्तु दुःख तो समस्त संसार में फैला हुआ है। (अपने स्व) से ऊपर उठकर देखने पर पता चला कि दुःख की अग्नि घर-घर में जल रही है ॥ ८१ ॥ महला ५ ॥ (यह श्लोक पाँचवे गुरु अर्जुनदेव की फ़रीद के ८१वें श्लोक पर टिप्पणी है।) ऐ फ़रीद, यह धरती बड़ी सुहानी है, इसमें विषय-वासनाओं के विषैले बगीचे लगे हैं। किन्तु जिन सेवकजनों पर गुरु-कृपा होती है, उन्हें संसार के विष में भी कोई आँच नहीं आती (वे अप्रभावित रहते हैं) ॥ ८२ ॥ महला ५ ॥ (म० ५ का श्लोक पूर्वश्लोक को विस्तार देता है।) ऐ फ़रीद, यह जीवन और सुन्दर स्वस्थ शरीर, दोनों बड़े सुहाने हैं (इनके भोग से मुँह नहीं मोड़ना है); किसी विरले को ही यह स्थिति प्राप्त होती है, जिसका अपने प्रभु से प्यार है (वही जीवन सुख भोगते हुए भी निर्विकार रह सकते हैं) ॥ ८३ ॥ फ़रीद दुष्ट-अत्याचारी को सम्बोधित करते हुए कहते हैं कि ऐ नदिया, अपने किनारों (समीप के लोगों) को न गिरा (हानि न पहुँचा), आख़िर तुम्हें भी आगे हिसाब-किताब देना पड़नेवाला है। (तभी प्रभु-इच्छा पर समर्पित होते हुए कहते हैं) जिधर प्रभु की इच्छा है, प्रवाह को उधर ही तो बहना है (बहता रहे) ॥ ८४ ॥

फरीदा डुखा सेती दिहु गइआ सूलां सेती राति। खड़ा पुकारे पातणी बेड़ा कपर वाति ॥ ८५ ॥ लंमी लंमी नदी वहै कंधी केरै हेति। बेड़े नो कपरु किआ करे जे पातण रहै सुचेति ॥ ८६ ॥ फरीदा गलीं सु सजण वीह इकु ढूंढेदी न लहां। धुखां जिउ मांलीह कारणि तिन्हा मापिरी ॥ ८७ ॥ फरीदा इहु तनु भउकणा नित नित दुखीऐ कउणु। कंनी बुजे दे रहां किती वगै पउणु ॥ ८८ ॥

फ़रीद कहते हैं कि दिन दुःखों में और रात्रि शूल चुभने-सी पीड़ा में व्यतीत होती है (अर्थात् जीवन दुःखों में बीत रहा है)। किनारे पर खड़ा गुरु रूपी मल्लाह पुकार रहा है (उपदेश देता है) कि तुम्हारा जीवन-बेड़ा अब भयानक तूफ़ान (विषय-वासनाओं) में फँस गया है (इसे प्रभु-नाम की भक्ति से बचा लो) ॥ ८५ ॥ दुःख की बड़ी नदी (गुण रूपी) किनारों को गिरा रही है। तो भी यदि गुरु रूपी मल्लाह सावधान है तो जीवन-बेड़े का कुछ नहीं बिगड़ता। (अभिप्राय यह कि गुरु के आश्रय

दु:ख-भरे संसार में भी जीवन-अवधि शान्ति से व्यतीत होती है) ॥ ८६ ॥ फ़रीद जी कहते हैं कि बातों में सहानुभूति दिखानेवाले बीसियों सज्जन मिलते हैं, किन्तु (वास्तविक मित्र) ढूँढ़ने से भी नहीं मिलता। उन सज्जन-मित्रों (के न मिल सकने) के कारण मैं उपलों के चूर्ण (मालीह) की तरह धधक रहा हूँ (धीरे-धीरे निरन्तर जल रहा हूँ) ॥ ८७ ॥ बाबा फ़रीद कहते हैं कि यह शरीर अब भौंकनेवाला (व्यर्थ की माँगे करनेवाला) बन गया है, अत: कौन (इसकी माँगें पूरी करने के लिए) नित्य दु:खी होता रहे ? इसीलिए मैंने अब अपने कानों में रोक लगा ली है (विरक्ति), यह कितना भी पुकारे, मैं नहीं सुनता (निर्विकार रहता हूँ) ॥ ८८ ॥

फरीदा रब खजूरी पकीआं माखिअ नई वहंन्हि । जो जो वंञै डीहड़ा सो उमर हथ पवंनि ॥ ८९ ॥ फरीदा तनु सुका पिंजरु थीआ तलीआं खूंडहि काग । अजै सु रबु न बाहुड़िओ देखु बंदे के भाग ॥ ९० ॥ कागा करंग ढढोलिआ सगला खाइआ मासु । ए दुइ नैना मति छुहउ पिर देखन की आस ॥ ९१ ॥ कागा चूंडि न पिंजरा बसै त उडरि जाहि । जितु पिंजरै मेरा सहु वसै मासु न तिदू खाहि ॥ ९२ ॥

फ़रीद (परमात्मा की दी नियामतों में मस्त रहनेवाले लोगों को संकेत करते हुए) कहते हैं कि (भौतिक पदार्थादि) पकी हुई खजूरें या शहद की नदियाँ हैं (मीठी लगनेवाली चीज़ें हैं)। किन्तु इसमें रत जो-जो दिन बीतता है, वह (मनुष्य को मिली) आयु घटती जा रही है। (यहाँ फ़रीद जी ने सावधान किया है कि सांसारिक मस्ती में ही उम्र घट रही है— कुछ परमात्मा का नाम लो) ॥ ८९ ॥ हे फ़रीद, यह शरीर सूखकर पिंजर हो गया है (साधना करते-करते), अभी भी वासनाओं रूपी कौए पैरों के तलवों में चोंच मारते हैं, किन्तु अब तक रक्षक-रूप में (परमात्मा) नहीं आया— मनुष्य का भाग्य ही इतना बुरा है। (अर्थात् कर्मों में न हो तो साधना भी व्यर्थ है) ॥ ९० ॥ फ़रीद जी प्रभु-प्रतीक्षा और विरहावस्था की चर्चा करते हुए कहते हैं, ऐ कौए, तुमने ढूँढ़-ढूँढ़कर मेरे शरीर का सारा मांस खा लिया है, अब इन दो नेत्रों को मत खाना, मुझे अभी भी अपने प्रिय से मिलने की आशा है ॥ ९१ ॥ ऐ कौए, मेरे शरीर के पिंजर में चोंचें मत मारो, सम्भव हो तो यहाँ से उड़ जाओ। जिस पिंजर में मेरा स्वामी परमात्मा बसता है, उसका मांस तुम मत खाओ ॥ ९२ ॥

फरीदा गोर निमाणी सडु करे निघरिआ घरि आउ ।

सरपर मैथै आवणा मरणहु ना डरिआहु ।। ९३ ।। एनी लोइणी देखदिआ केती चलि गई । फरीदा लोकां आपो आपणी मै आपणी पई ।। ९४ ।। आपु सवारहि मै मिलहि मै मिलिआ सुखु होइ । फरीदा जे तू मेरा होइ रहहि सभु जगु तेरा होइ ।।९५।। कंढी उतै रुखड़ा किचरकु बंनै धीरु । फरीदा कचै भांडैर खीऐ किचरु ताई नीरु ।। ९६ ।।

फ़रीद जी कहते हैं कि बेचारी क़ब्र पुकारती है कि बे-घरे (मनुष्य) अपने स्थायी घर (क़ब्र) में चला आ। अन्ततः तो मेरे पास ही आना है, मरने से क्यों डरता है? ।। ९३ ।। इन आँखों के देखते-देखते कितनी ही सृष्टि नष्ट हो गई। सब लोगों को अपनी-अपनी पड़ी है, फ़रीद कहते हैं, ऐसे में मुझे अपनी पड़ी है (फ़रीद सन्त हैं, उन्हें 'अपनी पड़ी है' से आध्यात्मिक प्राप्तियों की ओर संकेत है) ।। ९४ ।। परमात्मा की ओर से सम्बोधन करते हैं, ऐ फ़रीद, यदि तुम अपने को सुधार लो तो मुझे मिल सकोगे, मुझे मिलने पर तुम्हे सुख होगा। यदि तुम मेरे ही बन जाओ (अर्थात् परमात्मा में ही विलीन हो जाओ), तो सारा संसार तुम्हारा हो जाएगा ।। ९५ ।। फ़रीद कहते हैं कि नदी किनारे का पेड़ कब तक धीर धरेगा (अर्थात् कब तक खड़ा रह सकेगा)? इसी प्रकार मिट्टी के कच्चे बर्तन में कब तक जल संग्रह किया जा सकता है? (शरीर = जीवन की ओर संकेत है— कब किनारे के पेड़ या कच्ची मिट्टी के घड़े की तरह टूट जाय, कौन जानता है!) ।। ९६ ।।

फरीदा महल निसखण रहि गए वासा आइआ तलि । गोरां से निमाणीआ बहसनि रूहां मलि । आखीं सेखां बंदगी चलणु अजु कि कलि ।। ९७ ।। फरीदा मउतै दा बंना एवै दिसै जिउ दरीआवै ढाहा । अगै दोजक तपिआ सुणीऐ हूल पवै काहाहा । इकना नो सभ सोझी आई इकि फिरदे वेपरवाहा । अमल जि कीतिआ दुनी विचि से दरगह ओगाहा ।। ९८ ।। फरीदा दरीआवै कंन्है बगुला बैठा केल करे । केल करेदे हंझ नो अचिंते बाज पए । बाज पए तिसु रब दे केलां विसरीआं । जो मनि चिति न चेते सनि सो गाली रब कीआं ।। ९९ ।। साढे त्रै मण देहुरी चलै पाणी अंनि । आइओ बंदा दुनी विचि वति आसूणी बंनि । मलकल मउत जां आवसी सभ दरवाजे भंनि । तिन्हा पिआरिआ भाईआं अगै दिता बंनि । वेखहु

बंदा चलिआ चहु जणिआ दै कंन्हि। फरीदा अमल जि कीते दुनी विचि दरगह आए कंमि ॥ १०० ॥

(मृत्यु के कारण) महल सूने हो गए, (उनमें रहनेवालों को) धरती के नीचे क़ब्रों में स्थान मिला। उन बेचारी क़ब्रों में अब आत्माएँ रहने लगी हैं। ऐ शेख़ फ़रीद, (इस स्थिति को देखकर) तुम प्रभु की आराधना करो, क्योंकि तुम्हें भी तो आज या कल अब चलना है (मृत्यु तुम पर भी आनी है) ॥ ९७ ॥ फ़रीद जी कहते हैं कि मृत्यु बाँध ऐसा है जैसे नदी का कटा हुआ किनारा (जो कभी भी नदी में गिर सकता है)। (विषय-विकारों में पड़े जीवों के लिए आगे) नरक की तप्त अग्नि है, जिसमें पापियों का हाहाकार सुनाई देता है। कुछ लोगों को इस तथ्य का ज्ञान हुआ है, कुछ अभी भी बे-परवाह फिरते हैं। (वास्तव में) संसार में किए गए कर्म ही परमात्मा के दरबार में साक्षी बनते हैं ॥ ९८ ॥ नदी किनारे बैठे बगले की नाईं (मनुष्य संसार में) क्रीड़ा करता है। उस क्रीड़ा करते हुए हंस को अचानक मौत रूपी सचान दबोच लेता है। जब प्रभु-इच्छा से मौत का बाज़ झपटता है, तो सब लीलाएँ भूल जाती हैं। परमात्मा का व्यवहार कुछ ऐसा ही है कि जो मनुष्य के ध्यान में नहीं होता, अकस्मात् वही हो जाता है ॥ ९९ ॥ साढ़े तीन मन (पुराना तोल) का यह मनुष्य-शरीर अन्न-पानी से चलता है। मनुष्य दुनिया में अनेक प्रकार की आशाओं को लेकर आता है, (किन्तु आशाएँ पूरी होने से पूर्व ही) यमराज सब द्वार तोड़कर आ जाता है और मनुष्य के भाई-बन्धु ही उसे आगे भेजने को अरथी पर बाँध देते हैं। फ़रीद कहते हैं, देखो वह मनुष्य चार साथियों के कन्धों पर जा रहा है (क़ब्र में दफ़नाया जाने के लिए)। जो कर्म संसार में उसने किए हैं, वे ही परमात्मा के दरबार में काम आएँगे ॥ १०० ॥

फरीदा हउ बलिहारी तिन्ह पंखीआ जंगलि जिन्हा वासु। ककरु चुगनि थलि वसनि रब न छोडनि पासु ॥१०१॥ फरीदा रुति फिरी वणु कंबिआ पत झड़े झड़ि पाहि। चारे कुंडा ढूंढीआ रहणु किथाऊ नाहि ॥ १०२ ॥ फरीदा पाड़ि पटोला धजकरी कंबलड़ी पहिरेउ। जिन्ही वेसी सहु मिलै सेई वेस करेउ ॥ १०३ ॥ म० ३ ॥ काइ पटोला पाड़ती कंबलड़ी पहिरेइ। नानक घर ही बैठिआ सहु मिलै जे नीअति रासि करेइ ॥ १०४ ॥

ऐ फ़रीद, मैं उन पक्षियों पर क़ुर्बान हूँ, जो जंगलों में रहते हैं, मरुस्थलों में रहकर चाहे कंकर चुकते हैं, फिर भी परमात्मा का आश्रय

नहीं छोड़ते । (अर्थात् परमात्मा के सहारे रहनेवाले को कोई अभाव नहीं खलता) ॥ १०१ ॥ फ़रीद मनुष्य-जीवन के सम्बन्ध में कहते हैं कि आयु रूपी ऋतु में परिवर्तन आ गया है, शरीर रूपी पेड़ काँपने लगा है तथा केश रूपी पत्ते गिरने लगे हैं । मैंने चारों ओर खोजकर देख लिया है, कहीं भी स्थायी तौर से नहीं रहा जा सकता (संसार नश्वर है) ॥१०२॥ फ़रीद कहते हैं कि मैं रेशमी कपड़े को फाड़कर धज्जियाँ कर दूँ और उसकी जगह कफ़नी पहन लूँ । मैं प्रत्येक वह वेष बनाने को तैयार हूँ, जिसमें परमात्मा के मिलने की सम्भावना हो ॥ १०३ ॥ म० ३ ॥ (यह श्लोक म० ३ की टिप्पणी है ।) ऐ सखी, रेशमी वस्त्र को फाड़कर धज्जियाँ करने की क्या ज़रूरत है, कफ़नी भी क्यों पहनती हो ? गुरु नानक कहते हैं कि यदि मन पवित्र है, तो घर बैठे ही प्रभु रूपी पति-प्रियतम आन मिलते हैं ॥ १०४ ॥

॥ म० ५ ॥ फरीदा गरबु जिन्हा वडिआईआ धनि जोबनि आगाह । खाली चले धणी सिउ टिबे जिउ मीहाहु ॥ १०५ ॥ फरीदा तिना मुख डरावणे जिना विसारिओनु नाउ । ऐथै दुख घणेरिआ अगै ठउर न ठाउ ॥ १०६ ॥ फरीदा पिछल राति न जागिओहि जीवदड़ो मुइओहि । जे तै रबु विसारिआ त रबि न विसरिओहि ॥ १०७ ॥ म० ५ ॥ फरीदा कंतु रंगावला वडा वेमुहताजु । अलह सेती रतिआ एहु सचावां साजु ॥ १०८ ॥

॥ म०५ ॥ (१०५वाँ श्लोक म०५ का है, गुरुजी की टिप्पणी है ।) ऐ फ़रीद, प्रतिष्ठा, धन, यौवन आदि के गर्वीले प्रभु-पति-विहीन ही संसार से चले जाते हैं, जिस प्रकार अति-वृष्टि में भी टीले पानी भरने से वंचित रहते हैं । (पानी टीलों पर नहीं रुकता, इधर-उधर बह जाता है ।) ॥ १०५ ॥ फ़रीद जी कहते हैं कि जो जीव हरिनाम को भुला देते हैं, उनके मुँह भयानक हैं (अर्थात् वे मुँह लगने योग्य नहीं) । वे इस लोक में दुःख सहन करते हैं, उन्हें परलोक में भी ठौर-ठिकाना नहीं मिलता ॥ १०६ ॥ ऐ मनुष्य, यदि प्रभात वेला में जगकर (तुमने प्रभु-भक्ति नहीं की, तो) तुम जीते-जी मृत व्यक्ति के समान हो । (याद रखो) तुमने तो परमात्मा को भुला दिया है, परमात्मा ने तुम्हें नहीं भुलाया (वह तुम्हारे कर्मों को बराबर देख रहा है) ॥ १०७ ॥ म० ५ ॥ (आगे १०८ से १११ श्लोक तक म० ५ के श्लोक हैं, जिनमें फ़रीद के १०७वें श्लोक पर टिप्पणी की गई है ।) बाबा फ़रीद को गुरु अर्जुन सम्बोधित करते हैं, ऐ शेख फ़रीद, परमात्मा रूपी पति बड़ा रसिक और स्वाश्रित है । (उसकी प्राप्ति के लिए) वास्तविक शृंगार परमात्मा में ही प्रेम-पूर्वक लीन हो जाने का है ॥ १०८ ॥

॥ म० ५ ॥ फरीदा दुखु सुखु इकु करि दिल ते लाहि विकारु। अलह भावै सो भला तां लभी दरबारु ॥ १०९ ॥ ॥ म० ५ ॥ फरीदा दुनी वजाई वजदी तूं भी वजहि नालि । सोई जीउ न वजदा जिसु अलहु करदा सार ॥ ११० ॥ ॥ म० ५ ॥ फरीदा दिलु रता इसु दुनी सिउ दुनी न कितै कंमि । मिसल फकीरां गाखड़ी सु पाईऐ पूर करंमि ॥ १११ ॥ पहिले पहिरै फुलड़ा फलु भी पछा राति । जो जागंन्हि लहंनि से साई कंनो दाति ॥ ११२ ॥

॥ म० ५ ॥ ऐ फ़रीद, सुख-दुःख को समान समझकर मन से विकारों को दूर कर दो । परमात्मा की इच्छा ही सर्वोपरि मान लेने से तुम्हें प्रभु-दरबार में सम्मान मिल सकता है ॥ १०९ ॥ म० ५ ॥ ऐ फ़रीद, यह संसार (माया का) बजाया बजता है, तुम भी इसी के संग बजते (चलते) हो । किन्तु जिसे परमात्मा का संरक्षण प्राप्त होता है, वह सच्चा जीव (माया से) अप्रभावित रहता है ॥११०॥ म० ५ ॥ ऐ फ़रीद, (जीव का) हृदय दुनिया-धन्धों में लिप्त है, किन्तु यह दुनिया (आध्यात्मिक दृष्टि से) किसी काम की नहीं । फ़क़ीरों या साधकों वाला जीवन बड़ा कठिन है । वह उच्च कर्मों के परिणाम-स्वरूप प्राप्त होता है ॥ १११ ॥ फ़रीद जी कहते हैं कि रात्रि के प्रथम प्रहर में की गई प्रार्थना फूल के समान है और रात्रि के अन्तिम प्रहर (प्रभात वेला) में की गई बन्दगी फल के समान है । जो साधक उस समय जागते हैं, वे ही परमात्मा से वह प्राप्ति करते हैं ॥ ११२ ॥

दाती साहिब संदीआ किआ चलै तिसु नालि । इकि जागंदे ना लहन्हि इकन्हा सुतिआ देइ उठालि ॥ ११३ ॥ ढूढेदीए सुहाग कू तउ तनि काई कोर । जिन्हा नाउ सुहागणी तिन्हां झाक न होर ॥ ११४ ॥ सबर मंझ कमाण ए सबरु का नीहणो । सबर संदा बाणु खालकु खता न करी ॥ ११५ ॥ सबर अंदरि साबरी तनु एवै जालेन्हि । होनि नजीकि खुदाइ दै भेतु न किसै देनि ॥ ११६ ॥

(११३वाँ श्लोक गुरु नानक द्वारा रचा हुआ है । फ़रीद के ११२वें श्लोक के भाव को स्पष्ट करने के लिए दिया गया है— पहले भी गुरुग्रन्थ साहिब के पृ० ८३ पर आ चुका है ।) समस्त उपलब्धियाँ परमात्मा की अपनी हैं, उन पर किसी का कोई अंकुश नहीं (जिसे चाहे देता है); कुछ ऐसे जीव हैं, जो जागकर भी प्रभु की देन को नहीं पा सकते और कुछ

जीवों को वह स्वयं जगाकर देता है। (विषयों में रत जीवों को भी कभी स्वेच्छा से वह बदल डालता है) ॥ ११३ ॥ परमात्मा रूपी सुहाग की खोज करनेवाली (जीवात्मा-स्त्री), शायद तुम्हारे में कोई अभाव है (जो अभी तक तुम्हें प्रभु-पति नहीं मिला)। सच्ची सुहागिनों को तो कभी किसी दूसरे की (परमात्मा से इतर) टेक होती ही नहीं। (अर्थात् वे तन-मन-प्राण से प्रभु-पति पर समर्पित होती हैं।) ॥ ११४ ॥ फ़रीद जी कहते हैं कि यदि मन में सन्तोष (सब्र) की कमान हो, उस पर सन्तोष का चिल्ला चढ़ाया गया हो और सन्तोष का ही तीर उस पर रखा जाय, तो परमात्मा उस तीर को निशाने से चूकने नहीं देता ॥११५॥ सन्तोषी जी सन्तोष में रहकर तन जलाते हैं (साधना करते हैं)। (क्योंकि) जो जीव प्रभु का सामीप्य पा लेते हैं, वे अपना भेद किसी को नहीं बताते ॥ ११६ ॥

सबर एहु सुआउ जे तूं बंदा दिड़ु करहि। वधि थीवहि दरीआउ टुटि न थीवहि वाहड़ा ॥ ११७ ॥ फरीदा दरवेसी गाखड़ी चोपड़ी परीति। इकनि किनै चालीऐ दरवेसावी रीति ॥११८॥ तनु तपै तनूर जिउ बालणु हड बलंन्हि। पैरी थकां सिरि जुलां जे मूं पिरी मिलंन्हि ॥ ११९ ॥ तनु न तपाइ तनूर जिउ बालणु हड न बालि। सिरि पैरी किआ फेड़िआ अंदरि पिरी निहालि ॥ १२० ॥

(पूर्वश्लोक पर बल देते हुए) बाबा फ़रीद कहते हैं, सन्तोष का यही स्वभाव है। हे प्राणी, यदि तुम इसे हृदय में धारण करोगे, तो श्रेष्ठता की नदी बन जाओगे, उससे विलग होकर कभी तुच्छ नाली नहीं बनोगे ॥ ११७ ॥ ऐ फ़रीद, साधना बड़ी कठिन है, मनुष्य की प्रीति चुपड़ी हुई (आडम्बरयुक्त) है (इसीलिए वह जीव शीघ्र ही परमात्मा को नहीं पा सकता)। कोई विरला जीव ही दरवेशी-मार्ग पर (सही साधना-पथ पर) चल सकता है ॥ ११८ ॥ यदि मुझे परमात्मा रूपी पति मिले तो मैं अपने शरीर को तन्दूर की तरह तपाऊँ, हड्डियों का ईंधन बना दूँ; पाँव चलते हुए थके तो सिर के बल चलूँ (अभिप्राय यह कि परमात्मा को पाने के लिए जो भी करना हो, मैं करने को तत्पर हूँ) ॥ ११९ ॥ (१२०वाँ श्लोक गुरु नानकदेव की फ़रीद के पूर्वश्लोक पर टिप्पणी है।) ऐ फ़रीद, शरीर को तन्दूर की तरह तपाने एवं हड्डियों का ईंधन करने का कोई लाभ नहीं (ऐसा न करो)। सिर-पैरों ने क्या बिगाड़ा है (जो इन्हें दण्डित करना चाहते हो), परमात्मा तो तुम्हारे भीतर है, उसे वहीं देखो ॥ १२० ॥

हउ ढूढेदी सजणा सजणु मैडे नालि। नानक अलखु न

लखीऐ गुरमुखि देइ दिखालि ॥१२१॥ हंसा देखि तरंदिआ बगा आइआ चाउ। डुबि मुए बग बपुड़े सिरु तलि उपरि पाउ ॥ १२२ ॥ मै जाणिआ वडहंसु है तां मै कीता संगु। जे जाणा बगु बपुड़ा जनमि न भेड़ी अंगु ॥ १२३ ॥ किआ हंसु किआ बगुला जा कउ नदरि धरे। जे तिसु भावै नानका कागहु हंसु करे ॥ १२४ ॥

(१२१वाँ श्लोक गुरु रामदास का है। आदि ग्रंथ के पृ० १३१८ पर आ चुका है।) गुरु नानक कहते हैं कि मैं (जीव-स्त्री) प्रभु-पति को बाहर खोज रही हूँ, किन्तु मेरा साजन तो मेरे साथ ही है। परमात्मा स्वयं अदृश्य है (सामान्यतः उसे देखा नहीं जा सकता), कोई गुरुमुख व्यक्ति (गुरु) ही उसे दिखला सकता है (उससे भेंट करवा सकता है) ॥ १२१ ॥ (१२२वाँ श्लोक गुरु अमरदास का है, आदि ग्रंथ पृ० ५८५ पर आ चुका है।) गुरु नानक कहते हैं कि हंसों को तैरता देखकर बगलों को भी तैरने का चाव हुआ, किन्तु बेचारे बगले डूब मरे— उनका सिर नीचे और पैर ऊपर हो गए। [तात्पर्य यह कि (हंस रूपी) सन्तों को संसार-सागर में तैरता देखकर (बगले रूपी) विषयी जनों को भी तैरने की सूझी है। किन्तु वे माया-मोह के भँवरों में फँसकर डूब गए।] ॥ १२२ ॥ (१२३वाँ श्लोक भी आदि ग्रंथ के पृ० ५८५ पर दिया गया गुरु अमरदास जी का है।) गुरु नानक कहते हैं कि मैंने उसे श्रेष्ठ साधक रूपी हंस माना है, तभी तो उसकी संगति की, यदि मुझे पता होता कि वह दंभी बगला है, तो कभी उसे अंग भी स्पर्श न करने देता। (अर्थात् दम्भी-पाखण्डी जनों से बचने का संकेत है) ॥ १२३ ॥ (१२४वाँ श्लोक गुरु नानकदेव का है, आदि ग्रंथ पृ० ९१ पर आ चुका है।) गुरु नानक कहते हैं कि हंस और बगले की बात परमात्मा के लिए कुछ भी नहीं (अर्थात् उसके लिए ऊँचा-नीचा व्यक्ति कुछ नहीं)। जिस पर उसकी कृपा-दृष्टि उठ जाती है (वही उच्च होता है)। उसकी इच्छा हो तो वह कौवे को हंस बना देता है ॥ १२४ ॥

सरवर पंखी हेकड़ो फाहीवाल पचास। इहु तनु लहरी गडु थिआ सचे तेरी आस ॥ १२५ ॥ कवणु सु अखरु कवणु गुणु कवणु सु मणीआ मंतु। कवणु सु वेसो हउ करी जितु वसि आवै कंतु ॥ १२६ ॥ निवणु सु अखरु खवणु गुणु जिहबा मणीआ मंतु। ए त्रै भैणे वेस करि तां वसि आवी कंतु ॥१२७॥ मति होदी होइ इआणा। ताण होदे होइ निताणा। अणहोदे आपु वंडाए। को ऐसा भगतु सदाए ॥ १२८ ॥

बाबा फ़रीद कहते हैं कि (संसार रूपी) सरोवर में (जीव रूपी) पक्षी अकेला पड़ गया है, इसे फँसानेवाले (विषय-विकारमयी वृत्तियाँ) पचासों हैं। शरीर (संकल्पों की) लहरों में फँसा है (इससे बचने के लिए) अब सत्यस्वरूप परमात्मा का ही आश्रय है ॥ १२५ ॥ जीवात्मा-स्त्री की ओर से फ़रीद कहते हैं, वह कौन-सा शब्द है, कैसा गुण है, कौन-सा ऐसा मन्त्र या वेष है, (जिसके क्रमशः पुकारने, अर्जित करने, जपने या बनाने से) मेरा प्रभु-पति मेरे वश हो सकता है ? (अर्थात् जीवात्मा प्रभु-पति को पाने के लिए कुछ भी करने को तत्पर है) ॥ १२६ ॥ (उत्तर है—) ऐ बहिन, यदि नम्रता का शब्द पुकारो, क्षमा का गुण अर्जित करो, मधुर वचन रूपी मन्त्रों का उच्चारण करो, ये तीनों वेष बना लेने से परमात्मा रूपी पति वश में आ सकता है ॥ १२७ ॥ बाबा फ़रीद भक्त के लक्षण बताते हुए कहते हैं कि जो व्यक्ति बुद्धि होते हुए भी अपने को बुद्धिहीन मानता है, बल रहते भी अपने को निर्बल बताता है अपने भाग की वस्तु दूसरों में (ज़रूरतमंदों में) बाँट देता है; कोई ऐसा ही व्यक्ति भक्त कहलाने का अधिकारी है। (अर्थात् वह निर्विकार होता है) ॥१२८॥

इकु फिका ना गालाइ सभना मै सचा धणी। हिआउ न कैही ठाहि माणक सभ अमोलवे ॥ १२९ ॥ सभना मन माणिक ठाहणु मूलि मचांगवा। जे तउ पिरीआ दी सिक हिआउ न ठाहे कहीदा ॥ १३०॥

बाबा फ़रीद कहते हैं कि किसी को भी फीका वचन (कटु वचन) न बोलो, क्योंकि सबमें सत्यस्वरूप प्रभु (स्वामी) विद्यमान है। किसी के हृदय को दुःखी न करो, क्योंकि प्रत्येक जीव एक बहुमूल्य रत्न है ॥ १२९ ॥ हे प्राणी, सबका हृदय माणिक्य-समान है, अतः किसी के मन को दुखाना अच्छा नहीं। यदि तुम परमात्मा-पति को मिलना चाहते हो तो कभी किसी का दिल न दुखाओ ॥ १३० ॥

१ ओं सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥

सवये स्री मुख बाक्य महला ५

आदि पुरख करतार करण कारण सभ आपे। सरब रहिओ भरपूरि सगल घट रहिओ बिआपे। व्यापतु देखीऐ जगति

जानै कउनु तेरी गति सरब की रख्या करै आपे हरि पति। अबिनासी अबिगत आपे आपि उतपति। एकै तूही एकै अन नाही तुम भति। हरि अंतु नाही पारावारु कउनु है करै बीचारु जगत पिता है स्रब प्रान को अधारु। जनु नानकु भगतु दरि तुलि ब्रहम समसरि एक जीह किआ बखानै। हां कि बलि बलि बलि बलि सद बलिहारि ॥ १ ॥

हे आदिपुरुष, हे सृजनहार, तुम सब कुछ स्वयं करनेवाले हो, करने में समर्थ हो। तुम्हीं समस्त स्थानों पर मौजूद हो और सब घटों (शरीरों) में व्याप्त हो। तुम्हें समूचे विश्व में व्याप्त देखते हैं, तुम्हारी गति कोई नहीं जानता, तुम सबकी रक्षा करते हो और सबके स्वामी हो। तुम अविनाशी और अव्यक्त हो, तुमने स्वयं अपनी रचना की है (स्वयंभू हो)। तुम एकमात्र तुम्हीं हो, तुम्हारी भाँति कोई अन्य नहीं है। हे प्रभु, तुम्हारा कोई ओर-छोर नहीं, कौन तुम्हारी स्थिति पर पूर्ण विचार कर सकता है? तुम जगत-पिता हो, समस्त प्राणियों के आधार हो। दास नानक तुम्हारे द्वारा स्वीकृत एवं अभेद हुए भक्त का बखान एक जीभ से क्योंकर कर सकता है? हाँ, मैं तो तुम पर सदा-सदा बलिहार जाता हूँ ॥ १ ॥

अंम्रित प्रवाह सरि अतुल भंडार भरि परै ही ते परै अपर अपार परि। आपुनो भावनु करि मंत्रि न दूसरो धरि ओपति परलौ एकै निमखतु घरि। आन नाही समसरि उजीआरो निरमरि कोटि पराछत जाहि नाम लीए हरि हरि। जनु नानकु भगतु दरि तुलि ब्रहम समसरि एक जीह किआ बखानै। हां कि बलि बलि बलि बलि सद बलिहारि ॥ २ ॥

तुम्हारे घर अमृत का प्रवाह बहता है, अखुट भण्डार परे से परे अलभ्य अपरंपार पदार्थों के भरे पड़े हैं। तुम अपनी इच्छा करते हो, किसी से मन्त्रणा करने नहीं जाते, तुम्हारे घर उत्पत्ति और प्रलय निमिष-मात्र में हो जाता है। तुम्हारे समान अन्य कोई नहीं, तुम परम उज्ज्वल हो, तुम्हारा नाम लेने से करोड़ों पाप धुल जाते हैं। दास नानक तुम्हारे द्वारा स्वीकृत एवं अभेद हुए भक्त का बखान एक जीभ से क्योंकर कर सकता है? हाँ, मैं तो तुम पर सदा-सदा क़ुर्बान हूँ ॥ २ ॥

सगल भवन धारे एक थें कीए बिस्थारे पूरि रहिओ स्रब महि आपि है निरारे। हरिगुन नाही अंत पारे जीअ जंत सभि थारे सगल को दाता एकै अलख मुरारे। आप ही धारन धारे

कुदरति है देखारे बरनु जिहनु नाही मुख न मसारे । जनु नानकु भगतु दरि तुलि ब्रहम समसरि एक जीह किआ बखानै । हां कि बलि बलि बलि बलि सद बलिहारि ।। ३ ।।

सृष्टि के समस्त भुवन तुम्हीं ने बनाए हैं, तुम्हारे में से ही निकल कर सब ओर बिखरे हैं । तुम्हीं सबमें व्याप्त हो और फिर निर्लिप्त भी हो । हे हरि, मुझमें तुम्हारे अन्त पाने का गुण नहीं, जगत के सब जीव-जन्तु तुम्हारे हैं, तुम सारे संसार के पालक हो, सबके रक्षक हो । अपने-आप तुम सबके धारक हो, प्रकृति को दिखाते हो, किन्तु तुम्हारा अपना कोई रंग, रूप, चक्र, चिह्न नहीं है, मुख-माथा कुछ नहीं— (फिर भी सारा दृश्य जगत तुम्हीं में है) । दास नानक तुम्हारे द्वारा स्वीकृत एवं अभेद हुए भक्त का बखान एक जीभ से क्योंकर कर सकता है ? हाँ, मैं तुम पर सदा क़ुर्बान हूँ ।। ३ ।।

सरब गुण निधानं कीमति न गियानं ध्यानं ऊचे ते ऊचौ जानीजै प्रभ तेरो थानं । मनु धनु तेरो प्रानं एकै सूति है जहानं । कवन उपमा देउ बडे ते बडानं । जानै कउनु तेरो भेउ अलख अपार देउ अकलकला है प्रभ सरब को धानं । जनु नानकु भगतु दरि तुलि ब्रहम समसरि एक जीह किआ बखानै । हां कि बलि बलि बलि बलि सद बलिहारि ।। ४ ।।

तुम समस्त गुणों के भण्डार हो, तुम्हारे ज्ञान-ध्यान का कोई अन्त नहीं । हे प्रभु, तुम्हारा स्थान ऊँचे से ऊँचा है । मेरा मन, प्राण, धन, सब तुम्हारा है, सारा जहान तुम्हारे एक सूत्र में पिरोया हुआ है । हे बड़ों से भी बड़े, मैं तुम्हें क्या उपमा दूँ ? हे अलख, अपार, देवाधिदेव, तुम्हारे भेद कौन जानता है ? तुम्हारी शक्ति अवर्णनीय है, जिससे तुम सबमें प्रवेश करते हो (सबका ध्यान करते हो) । दास नानक तुम्हारे द्वारा स्वीकृत एवं अभेद हुए भक्त का बखान एक जीभ से क्योंकर कर सकता है ? हाँ, मैं तो तुम पर सदा-सदा बलिहार जाता हूँ ।। ४ ।।

निरंकारु आकार अछल पूरन अबिनासी । हरखवंत आनंत रूप निरमल बिगासी । गुण गावहि बेअंत अंतु इकु तिलु नही पासी । जाकउ होंहि क्रिपाल सु जनु प्रभ तुमहि मिलासी । धंनि धंनि ते धंनि जन जिह क्रिपालु हरि हरि भयउ । हरि गुरु नानकु जिन परसिअउ सि जनम मरण दुह थे रहिओ ।। ५ ।।

हे प्रभु, तुम आकार-रहित आकार वाले हो, न छले जानेवाले पूर्ण

अविनाशी हो। तुम्हारा स्वरूप नित्य प्रफुल्लित, अनन्त (असंख्य रूप जिसमें शामिल हों), निर्मल एवं सुविकसित है। हम तुम्हारे अनन्त गुणों को गाते हैं, क्षण-भर के लिए भी तुम कभी बन्धन-युक्त नहीं हुए। जिस पर, हे प्रभु, तुम कृपा करते हो, वह व्यक्ति तुम्हीं में लीन हो जाता है। वे जन धन्य है, जिन पर हरि स्वयं कृपालु है। गुरु नानक कहते हैं कि जो हरि-गुरु से भेंट कर लेता है, वह जन्म-मरण दोनों से मुक्त हो जाता है ॥ ५ ॥

सति सति हरि सति सति सते सति भणीऐ। दूसर आन न अवरु पुरखु पऊरातनु सुणीऐ। अंम्रितु हरि को नामु लैत मनि सभ सुख पाए। जेह रसन चाखिओ तेह जन त्रिपति अघाए। जिह ठाकुरु सुप्रसंनु भयो सतसंगति तिह पिआरु। हरि गुरु नानकु जिन्ह परसिओ तिन्ह सभ कुल कीओ उधारु॥६॥

परमात्मा सत्य है, परमसत्य है, उसी को सदैव सत्यस्वरूप कहते हैं। दूसरा अन्य तुम्हारी तुलना में कोई नहीं, तुम पुरातन पुरुष हो अर्थात् सर्वप्रथम पुरुष हो। हे हरि, तुम्हारा नाम अमृत के समान है, उसके जपनेवाले को सब सुख प्राप्त होते हैं। जिन्होंने तुम्हारा अमृतनाम जीभ से चखा है (जपा है), वे तृप्त हुए हैं। हे स्वामी, जिस पर तुम प्रसन्न होते हो, वह सत्संगति में प्रेम करता है। गुरु नानक कहते हैं कि जिसने तुम्हारे महत् गुणों को पा लिया, उसने अपने सहित समूचे कुल का उद्धार कर लिया ॥ ६ ॥

सचु सभा दीबाणु सचु सचे पहि धरिओ। सचै तखति निवासु सचु तपावसु करिओ। सचि सिरज्यिउ संसारु आपि आभुलु न भुलउ। रतन नामु अपारु कीम नहु पवै अमुलउ। जिह क्रिपालु होयउ गोुबिंदु सरब सुख तिन हू पाए। हरि गुरु नानकु जिन्ह परसिओ ते बहुड़ि फिरि जोनि न आए ॥ ७ ॥

तुम सत्यस्वरूप हो, तुम्हारा दीवान सत्य है और तुमने अपनी मिलन-व्यवस्था सच्चे गुरु पर रखी है। तुमने सदा सत्य के सिंहासन पर बैठकर सत्य न्याय किया है। सच्चे का बनाया संसार भी सत्य है, वह कभी नहीं भूलता। उसका नाम अमूल्य रत्न के समान है, उसका मोल डालने में कोई समर्थ नहीं। जिस पर, हे गोविन्द, तुम कृपालु होते हो, उसे समस्त सुख मिलते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि जिसने एक बार हरि से भेंट कर ली, वह कभी दोबारा योनि-चक्र में नहीं पड़ता ॥ ७ ॥

कवन जोगु कउनु ग्यानु ध्यानु कवन बिधि उस्तति करीऐ। सिध साधिक तेतीस कोरि तिरु कीम न परीऐ। ब्रहमादिक सनकादि सेख गुण अंतु न पाए। अगहु गहिओ नही जाइ पूरि स्रब रहिओ समाए। जिह काटी सिलक दयाल प्रभि सेइ जन लगे भगते। हरि गुरु नानकु जिन्ह परसिओ ते इत उत सदा मुकते॥ ८॥

हे दाता, हम तुम्हारी स्तुति किस युक्ति, ज्ञान-ध्यान या किस विधि से करें। सब सिद्ध, साधक और तेंतीस करोड़ देवता तुम्हारा मोल नहीं डाल सके (तुम्हारा भेद नहीं समझ पाए)। स्वयं ब्रह्मा एवं सनक-सनन्दन आदि ब्रह्मा-पुत्र, शेषनाग आदि तुम्हारे गुणों का अन्त नहीं पा सके। तुम पहुँच से परे हो, इसलिए पकड़े नहीं जाते, तो भी सर्वत्र व्याप्त हो। हे प्रभु, तुमने दयावश जिनकी मोह-फाँस काट दी, वे ही जन तुम्हारी भक्ति में लीन होते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि जिसने एक बार प्रभु से भेंट कर ली, वह यहाँ-वहाँ सर्वदा मुक्त है॥ ८॥

प्रभ दातउ दातार पर्यिउ जाचकु इकु सरना। मिलै दानु संत रेन जेह लगि भउजलु तरना। बिनति करउ अरदासि सुनहु जे ठाकुर भावै। देहु दरसु मनि चाउ भगति इहु मनु ठहरावै। बलिओ चरागु अंध्यार महि सभ कलि उधरी इक नाम धरम। प्रगटु सगल हरि भवन महि जनु नानकु गुरु पारब्रहम॥ ९॥

हे प्रभु, तुम दाताओं के भी दाता हो, मैं याचक रूप में तुम्हारी शरण में पड़ा हूँ। मुझे सन्तों की चरण-धूलि का दान दो, जिसके सहारे मुझे यह भव-सागर पार करना है। मैं विनती करता हूँ, तुम्हें इच्छा हो तो मेरी प्रार्थना सुनते हो। हे प्रभु, मेरे मन में दर्शन की उत्कट अभिलाषा है, दर्शन दो और (शक्ति दो कि) मेरा मन तुम्हारी भक्ति में स्थिर रह सके। तुम्हारा नाम अँधेरे में दीपक की नाईं है, जिसे पाकर कलिकाल की जनता का उद्धार हुआ है और केवल हरिनाम के आश्रय (उन्हें जीवन मिलता है)। गुरु नानक कहते हैं कि हे परब्रह्म, तुम समस्त भुवनों में गुरु के द्वारा प्रकट होते हो॥ ९॥

सवये स्री मुख बाक्य महला ५

१ ओं सतिगुर प्रसादि॥ काची देह मोह फुनि बांधी सठ

कठोर कुचील कुगिआनी। धावत भ्रमत रहनु नही पावत पारब्रहम की गति नही जानी। जोबन रूप माइआ मद माता बिचरत बिकल बडौ अभिमानी। परधन पर अपवाद नारि निंदा यह मीठी जीअ माहि हितानी। बल बंच छपि करत उपावा पेखत सुनत प्रभ अंतरजामी। सील धरम दया सुच नास्ति आइओ सरनि जीअ के दानी। कारण करण समरथ सिरीधर राखि लेहु नानक के सुआमी ॥ १ ॥

एक तो मेरा शरीर पहले से ही कच्चा (अस्थिर) है, फिर मोह का बँधा है। (सूझ-बूझ की दृष्टि से) मैं मूर्ख, कठोर, मलिन और अज्ञानी हूँ। मन भटकता है, टिकता नहीं और न ही परब्रह्म की गति को समझता है। यौवन, रूप की माया के नशे में उन्मत्त मैं अहंकार में व्याकुल हुआ फिरता हूँ। पर-धन, पर-दारा, पर-निन्दा एवं व्यर्थ अपवाद आदि बातें मेरे मन को मीठी और रुचिकर लगती हैं। मैं छिप-छिपकर अनेक प्रपंच रचता हूँ, अन्तर्यामी प्रभु सब कुछ देखता-सुनता है। मुझमें शील, धर्म, दया आदि गुण नहीं हैं, मैं तो, हे जीव-प्राण देनेवाले प्रभु, तुम्हारी शरण में आया हूँ। हे करने-कराने में समर्थ प्रभु, हे नानक के स्वामी, मेरी रक्षा करो ॥ १ ॥

कीरति करन सरन मन मोहन जोहन पाप बिदारन कउ। हरि तारन तरन समरथ सभै बिधि कुलह समूह उधारन उस। चित चेति अचेत जानि सत संगति भरम अंधेर मोहिओ कत धंउ। मूरत घरी चसा पलु सिमरन राम नाम रसना संग लउ। होछउ काजु अलप सुख बंधन कोटि जनंम कहा दुख भंउ। सिख्या संत नामु भजु नानक राम रंगि आतम सिउ रंउ ॥ २ ॥

मनमोहन प्रभु की कीर्ति कहना एवं उसकी शरण में आना, ये दोनों बातें पापों को दबाने और मिटाने के लिए हैं। परमात्मा स्वयं सब करने-करानेवाला, सब प्रकार से समर्थ और सब कुलों का उद्धार करनेवाला है। ऐ अचेत मन, सत्संगति में ज्ञान-लाभ करके हरि का सिमरन करो, क्यों मोह के अँधेरे में भटक रहे हो ? जिह्वा से प्रभु-नाम का उच्चारण घड़ी, पल, चसा या मुहूर्त के लिए ही करो; माया के कर्म अल्प सुख देनेवाले हैं, इनके लिए करोड़ों जन्मों के दुःख क्यों अपना लिये जायँ ! गुरु नानक कहते हैं कि सन्तों की शिक्षा-अनुसार हरिनाम-भजन करो और प्रभु के प्यार में आत्मा के चाव से उसका सिमरन करो ॥ २ ॥

रंचक रेत खेत तनि निरमित दुरलभ देह सवारि धरी।

खान पान सोंधे सुख भुंचत संकट काटि बिपति हरी। मात पिता भाई अरु बंधप बूझन को सभ सूझ परी। बरधमान होवत दिनप्रत नित आवत निकटि बिखंम जरी। रे गुन हीन दीन माइआ क्रिम सिमरि सुआमी एक घरी। करु गहि लेहु क्रिपाल क्रिपानिधि नानक काटि भरंम भरी ॥ ३ ॥

माता के गर्भ रूपी क्षेत्र में थोड़ा-सा वीर्य-बीज डालकर यह दुर्लभ शरीर बनाया और सँवारा है। खान, पान, सुगन्धि, सुख-भोग आदि दिए, संकटों को दूर करके विपत्तियाँ हरण कर लीं। धीरे-धीरे माता-पिता, भाई-बन्धु आदि को पहचानने का सामर्थ्य मिला। नित्यप्रति (मनुष्य) बड़ा होने लगा और धीरे-धीरे विषमतापूर्ण बुढ़ापा निकट आने लगा। ऐ गुणहीन, माया के कीड़े, अब तो घड़ी-भर के लिए प्रभु का सिमरन करो। गुरु नानक कहते हैं कि कृपानिधि, कृपालु प्रभु तुम्हारा हाथ थामकर दुःखों-भ्रमों का बोझ हल्का कर देंगे ॥ ३ ॥

रे मन मूस बिला महि गरबत करतब करत महां मुघनां। संपत दोल झोल संग झूलत माइआ मगन भ्रमत घुघना। सुत बनिता साजन सुख बंधप तासिउ मोहु बढिओ सु घना। बोइओ बीजु अहं मम अंकुरु बीतत अउध करत अघनां। मिरतु मंजार पसारि मुखु निरखत भुंचत भुगति भूख भुखना। सिमरि गुपाल दइआल सतसंगति नानक जगु जानत सुपना ॥ ४ ॥

ऐ मन, तुम बिल में बैठे चूहे की तरह गर्व करते और मूर्खों जैसे कृत्य करते हो। माया के झूले पर मगन होकर झूलते हो और उल्लू की तरह इधर-उधर भटकते हो। पुत्र, पत्नी के सुख में बँधे हो, उनसे खूब मोह बढ़ा रखा है। अहम् के बीज बो रखे हैं, ममता के अंकुर फूट रहे हैं और आयु पाप करते बीत रही है। मृत्यु रूपी बिलाव मुँह पसारकर तुम्हें देख रहा है (मन रूपी चूहे को) और तुम खाते-भोगते भी तृष्णा के कारण नित्य भूखे बने हो। गुरु नानक कहते हैं कि संसार को स्वप्नवत् मानकर सत्संगति में विचरते हुए प्रभु का नाम-सिमरन करो ॥ ४ ॥

देह न गेह न नेह न नीता माइआ मत कहा लउ गारहु। छत्र न पत्र न चउर न चावर बहती जात रिदै न बिचारहु। रथ न अस्व न गज सिंघासन छिन महि तिआगत नांग सिधारहु। सूर न बीर न मीर न खानम संगि न कोऊ द्रिसटि निहारहु। कोट न ओट न कोस न छोटा करत बिकार दोऊ कर झारहु।

मित्र न पुत्र कलत्र साजन सख उलटत जात बिरख की छांरहु। दीन दयाल पुरख प्रभ पूरन छिन छिन सिमरहु अगम अपारहु। स्री पति नाथ सरणि नानक जन हे भगवंत क्रिपा करि तारहु ।।५।।

देह, घर, प्यार आदि चीजें स्थायी नहीं हैं, माया में उन्मत्त हुआ आखिर इन पर कब तक गर्व करते रहोगे ? शाही आडम्बर के ये छत्र, परवाणे, चँवर और चँवर झुलानेवाले नहीं रहेंगे, आयु नदी की नाईं बहती जा रही है, क्यों हृदय में नहीं सोचते ? ये रथ, घोड़े, हाथी, सिंहासनादि क्षण में ही त्यागकर खाली हाथ जाना होगा। कोई शूर, वीर, शासक या अधिकारी, तुम्हारे साथ चलनेवाला दीख नहीं पड़ता। दुर्गों की ओट नहीं रहेगी, कोष-धन न होगा, विकारों से भी नहीं छूटोगे तो अन्ततः दोनों हाथ झाड़कर जाना होगा। मित्र, पुत्र, पत्नी, सज्जन बंधुओं आदि का सुख वृक्ष की छाँव की तरह विलीन हो जायगा। पूर्णपुरुष दीन-दयालु प्रभु अगम अपार है, प्रति-क्षण उसका सिमरन करो। गुरु नानक कहते हैं कि हे श्रीपति, मैं तुम्हारी शरण में हूँ, कृपा करके मेरा उद्धार करो ।।५।।

प्रान मान दान मग जोहन हीतु चीतु दे ले ले पारी। साजन सैन मीत सुत भाई ताहू ते ले रखी निरारी। धावन पावन कूर कमावन इह बिधि करत अउध तन जारी। करम धरम संजम सुच नेमा चंचल संगि सगल बिधि हारी। पसु पंखी बिरख असथावर बहु बिधि जोनि भ्रमिओ अति भारी। खिनु पलु चसा नामु नही सिमरिओ दीनानाथ प्रान पति सारी। खान पान मीठ रस भोजन अंत की बार होत कत खारी। नानक संत चरन संगि उधरे होरि माइआ मगन चले सभि डारी ।। ६ ।।

प्राण लगाकर, प्रतिष्ठा की बलि देकर, दूसरों से दान लेकर, छीनकर आदि अनेक विधियों से मन लगाकर माया जोड़ी है। सज्जनों-मित्रों, सगे सम्बन्धियों से उसे छिपा-छिपाकर रखा है। भटकते, दौड़ते, झूठ की कमाई करते-करते सारी आयु बिता दी। कर्म, धर्म, संयम, निर्मलता, नियमितता आदि सद्‌गुणों को माया की संगति में गँवा दिया। परिणामतः पशु, पक्षियों, स्थावर वृक्षों आदि की अनेक योनियों में भटकता रहा। समस्त सृष्टि के स्वामी दीनानाथ प्रभु का नाम घड़ी-पल के लिए भी सिमरन नहीं किया। खान-पान, सरस भोजन और भोग-विलास अन्त समय सब कड़वे हो जाते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि सन्तों के चरणों में ही उद्धार होता है, मायावी जीव तो सब कुछ गँवाकर चले जाते हैं ।। ६ ।।

ब्रहमादिक सिव छंद मुनीसुर रसकि रसकि ठाकुर गुन

गावत। इंद्र मुनिंद्र खोजते गोरख धरणि गगन आवत फुनि धावत। सिध मनुख्य देव अरु दानव इकु तिलु ताको मरमु न पावत। प्रिअ प्रभ प्रीति प्रेम रस भगती हरि जन ता कै दरसि समावत। तिसहि तिआगि आन कउ जाचहि मुख दंत रसन सगल घसि जावत। रे मन मूड़ सिमरि सुखदाता नानक दास तुझहि समझावत ॥ ७ ॥

ब्रह्मा, शिव, वेद, मुनीश्वर आदि सब रस ले-लेकर प्रभु का गुण गाते हैं। इन्द्र, विष्णु आदि उसको खोजते हैं, कभी धरती पर आते और कभी पुनः गगन की ओर भागते हैं। सिद्ध, मनुष्य, देवता और दानव तिल-भर के लिए भी उस प्रभु का मर्म नहीं पाते। प्रियतम के प्रेम-रस में मग्न, हरि-भक्ति में लीन जन उसी के दर्शनों में समाए रहते हैं और तुम उसे छोड़ कर और से याचना करते हो, याचना करते हुए तुम्हारा मुँह, दाँत, जीभ घिस जाते हैं (मिलता फिर भी कुछ नहीं)। गुरु नानक समझाते हैं कि ऐ मूढ़ मन, उस सुख-दाता प्रभु का स्मरण करो ॥ ७ ॥

माइआ रंग बिरंग करत भ्रम मोह कै कूपि गुबारि परिओ है। एता गबु अकासि न मावत बिसटा अस्त क्रिमि उदरु भरिओ है। दहदिस धाइ महा बिखिआ कउ परधन छीनि अगिआन हरिओ है। जोबन बीति जरा रोगि ग्रसिओ जमदूतन डंनु मिरतु मरिओ है। अनिक जोनि संकट नरक भुंचत सासन दूख गरति गरिओ है। प्रेम भगति उधरहि से नानक करि किरपा संतु आपि करिओ है ॥ ८ ॥

ऐ मूढ़, माया के रंग बे-रंग हो जाते हैं और भ्रम के कारण मोह के कुएँ में गिरना पड़ता है। तुम इतना गर्व करते हो कि आकाश में नहीं समाता और बीच में हो क्या? विष्टा, हड्डियों और कीड़ों से पेट भरा पड़ा है। अज्ञान द्वारा छला हुआ मनुष्य दसों दिशाओं में भ्रमता, विषय-विकारों में लीन दूसरों का धन छीनने का उपक्रम करता है। यौवन ऐसे बीतता है, बुढ़ापा और रोग ग्रस लेता है, यमदूत दण्ड देते हैं— ऐसी मौत मर जाता है। अनेक योनियों में दुःख और नरक भोगता एवं यमों के द्वारा पहुँचाए जानेवाले कष्टों के गढ़े में गलता है। गुरु नानक कहते हैं कि जो प्रेम-भक्ति करता है, उस पर स्वयं ही प्रभु कृपा करके सन्तों से उसकी भेंट करवा देता है ॥ ८ ॥

गुण समूह फल सगल मनोरथ पूरन होई आस हमारी।

अउखध मंत्र तंत्र परदुख हर सरब रोग खंडण गुणकारी। काम क्रोध मद मतसर त्रिसना बिनसि जाहि हरिनामु उचारी। इसनान दान तापन सुचि किरिआ चरण कमल हिरदै प्रभ धारी। साजन मीत सखा हरि बंधप जीअ धान प्रभ प्रान अधारी। ओट गही सुआमी समरथह नानक दास सदा बलिहारी ॥ ९ ॥

(प्रभु-कृपा हो तो) सर्वगुणों की प्राप्ति और सब आशाओं की पूर्ति हुई है। हरिनाम-ओषधि मन्त्र-तन्त्र की तरह दुःखों को दूर करती है, हर प्रकार के रोग के लिए लाभदायी है। हरिनाम-उच्चारण से काम, क्रोध, अहंकार, ईर्ष्या, तृष्णा आदि सब दूर हो जाते हैं। प्रभु के चरण-कमलों को हृदय में धारण करने की क्रिया ही स्नान, दान, तपस्या आदि है। प्रभु ही मेरा साजन, मीत, सखा, बंधु, जीवनाधार और प्राणाश्रय है। गुरु नानक कहते हैं कि उस समर्थ परमात्मा की ओट मैंने ग्रहण की है, और मैं उस पर सदा-सदा बलिहार जाता हूँ ॥ ९ ॥

आवध कटिओ न जात प्रेम रस चरन कमल संगि। दावनि बंधिओ न जात बिधे मन दरस मगि। पावक जरिओ न जात रहिओ जन धूरि लगि। नीरु न साकसि बोरि चलहि हरि पंथ पगि। नानक रोग दोख अघ मोह छिदे हरि नाम खगि ॥ १ ॥ १० ॥

जिसने प्रभु-चरणों का प्रेम-रस प्राप्त किया है, वह शास्त्रों से भी काटा नहीं जाता। जिसका मन हरि-दर्शन के राह पर बिंधा हुआ है, वह रस्सियों से भी बाँधा नहीं जा सकता। जो प्रभु की चरण-धूलि में रम जाते हैं, उन्हें अग्नि भी नहीं जला सकती। जिसके चरण नित्य हरि-पथ पर चलते हैं, उसे जल भी डुबा नहीं सकता। गुरु नानक कहते हैं कि हरिनाम रूपी खड्ग से रोग, दोष, पाप, मोह आदि सब कट जाते है ॥ १ ॥ १० ॥

उदमु करि लागे बहु भाती बिचरहि अनिक सासत्र बहु खटूआ। भसम लगाइ तीरथ बहु भ्रमते सूखम देह बंधहि बहु जटूआ। बिनु हरि भजन सगल दुख पावत जिउ प्रेम बढाइ सूत के हटूआ। पूजा चक्र करत सोम पाका अनिक भांति थाटहि करि थटूआ ॥ २ ॥ ११ ॥ २० ॥

लोग अनेक प्रकार के उद्यम करते हैं; कुछ लोग छः शास्त्रों को ख़ूब विचारते हैं। अनेक जन शरीर में भस्म लगाकर तीर्थों में भ्रमते हैं, कुछ

अन्न-पानी छोड़कर शरीर को सुखाते और कुछ अन्य लम्बी जटाएँ बाँधते हैं। हरि-भजन के बिना वे ऐसे दुःख पाते हैं, जैसे मकड़ी अन्ततः अपने ही तन्तुओं में फँस जाती है। वे पूजा, चक्र, सोमपाक आदि प्रवृत्तियों के अनेक आडम्बर रचते हैं (किन्तु सब विफल है) ॥ २ ॥ ११ ॥ २० ॥

सवईए महले पहिले के १*

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ इक मनि पुरखु धिआइ बरदाता। संत सहारु सदा बिखिआता। तासु चरन ले रिदै बसावउ। तउ परम गुरू नानक गुन गावउ ॥ १ ॥ गावउ गुन परम गुरू सुख सागर दुरत निवारण सबद सरे। गावहि गंभीर धीर मति सागर जोगी जंगम धिआनु धरे। गावहि इंद्राद भगत प्रहिलादिक आतम रसु जिनि जाणिओ। कबि कल सुजसु गावउ गुर नानक राजु जोगु जिनि माणिओ ॥ २ ॥

(ये दस सवैये भाट कलसहार के गुरु नानक-स्तुति में कहे गए हैं।) मन में वरदान देने में समर्थ उस परमपुरुष का ध्यान करके, जो सन्तों का आश्रय तथा प्रत्यक्ष दीख पड़नेवाला है, उसके चरण हृदय में बसा लो और परमगुरु नानकदेव के गुण गाओ ॥ १ ॥ सुखों के सागर परमगुरु के गुण गाओ, जो पापों को दूर करनेवाला एवं वाणी का सरोवर है। गम्भीर, धैर्यशील तथा बुद्धि-विशाल लोग उसी के गुण गाते हैं, बड़े-बड़े योगी तथा संन्यासी उसी का ध्यान धरते हैं। आतम-रस को जाननेवाले इन्द्रादि देवता एवं प्रह्लाद आदि भक्तजन उसी का गुण गाते हैं। 'कल' नाम का कवि कहता है कि मैं उस गुरु नानक का यशोगान करता हूँ, जिसने राजयोग (परमयोग— हठयोग, मन्त्रयोग, लययोग से ऊपर) को अपनाया था ॥ २ ॥

गावहि जनकादि जुगति जोगेसुर हरि रस पूरन सरब कला। गावहि सनकादि साध सिधादिक मुनि जन गावहि अछल छला। गावै गुण धोमु अटल मंडलवै भगति भाइ रसु जाणिओ। कबि कल सुजसु गावउ गुर नानक राजु जोगु जिनि माणिओ ॥ ३ ॥ गावहि कपिलादि आदि जोगेसुर अपरंपर अवतार वरो। गावै जमदगनि परसरामेसुर कर

* भाट या चारण लोग गुरुओं के दरबारों में रहा करते थे। हम इनकी रचना का परिणाम प्रथम सँची की भूमिका में बता चुके हैं। इन लोगों ने गुरुओं की स्तुति में पद कहे हैं, जोकि गुरु अर्जुनदेव ने आदि ग्रंथ में संकलित कर लिये हैं।

कुठारु रघु तेजु हरिओ। उधौ अक्रूरु बिदरु गुण गावै सरबातमु जिनि जाणिओ। कबि कल सुजसु गावउ गुर नानक राजु जोगु जिनि माणिओ ॥ ४ ॥

हरि-रसयुक्त एवं समस्त शक्तियों से मण्डित (गुरु नानक का) गुण राजा जनक आदि एवं युक्ति-प्रवीण अन्य योगेश्वर भी गाते हैं। सनक-सनन्दनादि, सिद्ध-साधकादि, मुनिजन, सभी उस मायातीत ब्रह्मस्वरूप नानक के गुण गाते हैं। धौम्य ऋषि एवं भक्ति-भाव द्वारा स्थिर पद पाने वाला ध्रुव भी, जिन्होंने परमरस को प्राप्त किया था, उसी के गुण गाते हैं। 'कल' कवि कहता है कि मैं भी उसी गुरु नानक का यशोगान करता हूँ, जिसने राजयोग को अपनाया था ॥ ३ ॥ कपिल आदि योगेश्वर ऋषि उस अनन्त ब्रह्म के श्रेष्ठ अवतार (गुरु नानक) के स्तोत्र गाते हैं। जमदग्नि का पुत्र परशुराम भी उसी का गुण गाता है, जिसने स्वयं हाथ में परशु लेकर श्रीराम को निस्तेज कर दिया था। उद्धव, अक्रूर, विदुर सब उसी (गुरु नानक) के गुण गाते हैं, जिसने सर्वात्म (ब्रह्म) को जान लिया था। कवि 'कल' भी उसी गुरु नानक का यश गाता है, जिसने राजयोग का पथ अपनाया था ॥ ४ ॥

गावहि गुण बरन चारि खट दरसन ब्रहमादिक सिमरंथि गुना। गावै गुण सेसु सहस जिहबा रस आदि अंति लिव लागि धुना। गावै गुण महादेउ बैरागी जिनि धिआन निरंतरि जाणिओ। कबि कल सुजसु गावउ गुर नानक राजु जोगु जिनि माणिओ ॥ ५ ॥ राजु जोगु माणिओ बसिओ निरवैरु रिदंतरि। स्रिसटि सगल उधरी नामि ले तरिओ निरंतरि। गुण गावहि सनकादि आदि जनकादि जुगह लगि। धंनि धंनि गुरु धंनि जनमु सकयथु भलौ जगि। पाताल पुरी जैकार धुनि कबि जन कल वखाणिओ। हरि नाम रसिक नानक गुर राजु जोगु तै माणिओ ॥ ६ ॥

चारों वर्ण, छः शास्त्र, ब्रह्मादि स्वयं, सब गुरु नानक के गुण गाते हैं (गुणों का स्मरण करते हैं)। शेषनाग भी अपनी हज़ारों जीभों से सदैव (आदि-अन्त) प्रेम-रस-मग्न (गुरु नानक के) गुण गाता है। जिस (गुरु नानक) ने अकालपुरुष में निरन्तर ध्यान लगाया है, उसकी स्तुति वैरागी शिव-शंकर भी गाते हैं। कवि 'कल' कहता है कि मैं उस गुरु नानक के गुण गाता हूँ, जिसने राजयोग को अपनाया है ॥ ५ ॥ (गुरु नानक ने) राजयोग को अपनाया है, स्वयं निर्वैर प्रभु उनके हृदय में बसता है।

उन्होंने हरिनाम जपकर स्वयं मोक्ष पाया है और समूची सृष्टि को भी तार लिया है। सनकादि ब्रह्मा-पुत्र एवं जनकादि राजर्षि युग-युग से (गुरु नानक के) गुण गाते हैं। वह गुरु नानक धन्य है, जगत में उसका जन्म लेना सफल है। कवि 'कल' कहता है कि (हे गुरु नानक) पातालपुरी से भी तुम्हारी जयकार हो रही है, तुम हरिनाम-रसिक एवं राजयोग को अपनानेवाले हो ॥ ६ ॥

सतजुगि तै माणिओ छलिओ बलि बावन भाइओ। त्रेतै तै माणिओ रामु रघुवंसु कहाइओ। दुआपुरि क्रिसन मुरारि कंसु किरतारथु कीओ। उग्रसैण कउ राजु अभै भगतह जन दीओ। कलिजुगि प्रमाणु नानक गुरु अंगदु अमरु कहाइओ। स्री गुरू राजु अबिचलु अटलु आदि पुरखि फुरमाइओ ॥ ७ ॥ गुण गावै रविदासु भगतु जैदेव त्रिलोचन। नामा भगतु कबीरु सदा गावहि सम लोचन। भगतु बेणि गुण रवै सहजि आतम रंगु माणै। जोग धिआनि गुर गिआनि बिना प्रभ अवरु न जाणै। सुखदेउ परीख्यतु गुण रवै गोतम रिखि जसु गाइओ। कबि कल सुजसु नानक गुर नित नवतनु जगि छाइओ ॥ ८ ॥

(हे नानक) सतयुग में भी तुमने राजयोग-पथ अपनाया था और तब राजा बलि को छलने के लिए बावन अवतार धारण करना तुम्हें रुचा था। त्रेतायुग में भी तुम ही थे, जो राम रघुवंशी कहलाए थे। द्वापर-युग में कृष्ण मुरारी के रूप में (तुम्हीं ने) कंस को कृतार्थ किया (मुक्ति दी) और उग्रसेन को सिंहासन पर बिठाया तथा भक्तजन का अभयदान दिया था। हे नानक, कलियुग में भी तुम्हीं प्रामाणिक हो और कभी नानक, कभी गुरु अंगद, गुरु अमरदास कहलाए हो। यह तो अकालपुरुष की ही आज्ञा है कि गुरु नानक का राज्य अविचल और अटल (चारों युगों में) है ॥७॥ रविदास भक्त सदा उसके (गुरु नानक के) गुण गाता है, जयदेव, त्रिलोचन, नामदेव, कबीर आदि भक्त और सन्त सदा एक-वृत्ति होकर (समलोचन) गुरु नानक के गुण गाते हैं। भक्त बेनी भी उसी गुरु नानक के परमगुण गाता है, जो सहज भाव में अडोल अवस्था में रमण करता तथा गुरु-ज्ञान द्वारा दृढ़ समाधिस्थ रहकर परमात्मा के अतिरिक्त और किसी को नहीं मानता। शुकदेव, परीक्षित तथा गौतम ऋषि, सब उसी (गुरु नानक) के गुणों में विचरते हैं। कवि 'कल' भी उसी गुरु नानक का यशोगान करता है, जिसकी नित्यनवीन शोभा सदा संसार को प्रभावित कर रही है ॥ ८ ॥

गुण गावहि पायालि भगत नागादि भुयंगम । महादेउ गुण रवै सदा जोगी जति जंगम । गुण गावै मुनि ब्यासु जिनि बेद ब्याकरण बीचारिअ । ब्रहमा गुण उचरै जिनि हुकमि सभ स्रिसटि सवारीअ । ब्रहमंड खंड पूरन ब्रहमु गुण निरगुण सम जाणिओ । जपु कल सुजसु नानक गुर सहजु जोगु जिनि माणिओ ।। ९ ।। गुण गावहि नव नाथ धंनि गुरु साचि समाइओ । मांधाता गुण रवै जेन चक्रवै कहाइओ । गुण गावै बलि राउ सपत पातालि बसंतौ । भरथरि गुण उचरै सदा गुर संगि रहंतौ । दूरबा परूरउ अंगरै गुर नानक जसु गाइओ । कबि कल सुजसु नानक गुर घटि घटि सहजि समाइओ ।। १० ।।

पाताललोक में भी भुजंगादि भक्त (शेषनागादि) उसके (गुरु नानक के) गुण गाते हैं । शिवजी उसी का नाम जपते हैं, योगी-संन्यासी-यती, सब उसके गुण गाते हैं । मुनि व्यासदेव, जिसने वेदों और व्याकरण का पारायण किया है, गुरु नानक के गुण गाता है । जिसके हुकुम से समूची सृष्टि रूपायित हुई है, वह ब्रह्मा भी उसके (नानक के) गुणों का उच्चारण करता है । जिस गुरु नानक ने ब्रह्माण्ड में पूर्णब्रह्म को निर्गुण एवं सगुण रूपों में एक समान पहचाना है और सहजयोग (प्रभु-नाम-जाप द्वारा प्राप्त मोक्ष-पद्धति) को स्वीकार किया है, कवि 'कल' उसी के गुण गाता है ।। ९ ।। नौ नाथ योगी (गोरखनाथ, मच्छन्दरनाथ आदि) गुरु नानक के गुण गाते हुए उसे सत्यस्वरूप में जुड़ा हुआ मानकर धन्य-धन्य पुकारते हैं । चक्रवर्ती कहलानेवाला मान्धाता भी उसके गुण गाता है । सातवें पाताल में बसनेवाला राजा बलि भी (गुरु नानक के) गुण गाता है; सदा अपने गुरु के संग विचरण करते हुए भरथरी (योगी) गुरु नानक के गुण उच्चारता है । दुर्वासा ऋषि, पुरुरवा महीपति एवं अंगिरा मुनि ने भी (गुरु नानक का) यश गाया है । कवि 'कल' भी घट-घट में स्थिर भाव से व्याप्त गुरु नानक का यश गाता है ।। १० ।।

सवईए महले दूजे के २*

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। सोई पुरखु धंनु करता कारण करतारु करण समरथो । सतिगुरू धंनु नानकु मसतकि

* ये सवैये दूसरे गुरु अंगददेव जी की स्तुति में कहे गए हैं ।

तुम धरिओ जिनि हथो। त धरिओ मसतकि हथु सहजि। अमिउ वुठउ छजि सुरि नर गण मुनि बोहिय अगाजि। मारिओ कंटकु कालु गरजि धावतु लीओ बरजि पंच भूत एक घरि राखि ले समजि। जगु जीतउ गुरदुआरि खेलहि समत सारि रथु उनमनि लिव राखि निरंकारि। कहु कीरति कलसहार सपत दीप मझार लहणा जगत्र गुरु परसि मुरारि ॥ १ ॥ जाकी द्रिसटि अंम्रितधार कालुख खनि उतारतिमर अग्यान जाहि दरस दुआर। ओइ जु सेवहि सबदु सारु गाखड़ी बिखम कार ते नर भव उतारि कीए निरभार। सतसंगति सहज सारि जागीले गुर बीचारि। निमरीभूत सदीव परम पिआरि। कहु कीरति कलसहार सपत दीप मझार लहणा जगत्र गुरु परसि मुरारि ॥ २ ॥

कर्ता-पुरुष, सृष्टि का सर्जक, समर्थ स्वामी धन्य है, वह सतिगुरु नानक भी धन्य है, (हे गुरु अंगद) जिसने तुम्हारे माथे हाथ रखा है। गुरु नानक ने जब सहज ही तुम्हारे मस्तक पर हाथ रखा तो (ऐ गुरु अंगद) तुम्हारे हृदय में अमृत-वर्षण हुआ। अमृत की बौछारों से देवता, मनुष्य, मुनिगण, ऋषि आदि सब प्रत्यक्षतः भीग गए। तुमने (ऐ गुरु अंगद) कष्टप्रद काल को मारकर भगा दिया; भटकते हुए (मन) को संयत कर लिया एवं काम-क्रोधादि पाँचों दुष्टों को एकाग्र कर लिया। हे गुरु अंगद, तुमने गुरु नानक के द्वार पर समर्पित होकर जगत को जीत लिया, तुम समता की बाज़ी खेल रहे हो। उन्मनि अवस्था में तुमने अपनी वृत्ति सदा निरंकार में जोड़ रखी है। कवि 'कलसहार' कहता है कि भाई लहणे (बाद में गुरु अंगद) की कीर्ति गुरु-चरणों का स्पर्श कर (गुरु नानक की सेवा में आकर) सारे संसार में (सप्त दीप में) फैल गई है ॥ १ ॥ जिसकी दृष्टि अमृत की धारा के समान पापों को खोदकर दूर कर देने में समर्थ है, उसके द्वार का दर्शन करने मात्र से अज्ञानादि अँधेरा दूर हो जाता है। जो लोग उसके शब्द का जपने का कठिन कार्य सहर्ष करते हैं, उन्हें उसने मुक्त कर दिया है, उनके बोझ दूर हुए हैं; वे सत्संगति में सहजावस्था का महत्त्व जान लेते हैं, गुरु के वचनों से जाग्रतावस्था को प्राप्त होते हैं और वे सदा विनम्रता एवं प्रेम से रहते हैं। कवि 'कलसहार' कहता है कि भाई लहणे की (बाद में गुरु अंगद) कीर्ति गुरु-चरणों का स्पर्श कर (गुरु नानक की सेवा में आकर) सारे संसार (सप्त द्वीप में) फैल गई है ॥ २ ॥

तै तउ द्रिड़िओ नामु अपारु। बिमल जासु बिथारु साधिक सिध सुजन जीआ को अधारु। तू ता जनिक राजा अउतारु सबदु संसारि सारु रहहि जगत्र जल पदम बीचार। कलिप तरु रोग बिदारु संसार ताप निवारु आतमा त्रिबिधि तेरै एक लिवतार। कहु कीरति कलसहार सपत दीप मझार लहणा जगत्र गुरु परसि मुरारि ॥ ३ ॥ तै ता हदरथि पाइओ मानु सेविआ गुरु परवानु साधि अजगरु जिनि कीआ उनमानु। हरि हरि दरस समान आतमा वंत गिआन जाणीअ अकलगति गुर परवान। जाकी द्रिसटि अचल ठाण बिमल बुधि सुथान पहिरि सील सनाहु सकति बिदारि। कहु कीरति कलसहार सपत दीप मझार लहणा जगत्र गुरु परसि मुरारि ॥ ४ ॥

(हे गुरु अंगद) तुमने अपार हरिनाम को हृदय में स्थिर किया है, तुम्हारी निर्मल शोभा सुविस्तृत है और तुम साधकों, सिद्धों और सन्तजनों का जीवनाश्रय हो। हे गुरु अंगद, तुम तो राजा जनक के अवतार हो (निर्लिप्त), तुम्हारा वचन संसार में श्रेष्ठतर है और तुम संसार में, जल में कमल-समान (निर्लिप्त) रहते हो। तुम कल्पतरु के समान समस्त कष्टों को दूर करनेवाले, संसार के त्रयताप को दूर करनेवाले हो। संसार के त्रिविध (त्रिगुणात्मक) जीव सब तुम्हारे चरणों में लग्न लगाते हैं। कवि 'कलसहार' कहता है कि भाई लहणे की (बाद में भाई लहणा ही गुरु अंगद कहलाए) कीर्ति गुरु नानक के चरण-स्पर्श से सारे संसार में (सप्त द्वीप में) फैल गई ॥ ३ ॥ तुम्हें प्रभु के दरबार में प्रतिष्ठा प्राप्त है, तुम जाने-माने गुरु नानक के सेवक हो, तुमने अजगर-समान मन को साधकर अन्तर्मुखी कर लिया है। तुम्हारा दर्शन हरि-दर्शन के समान है, तुम आत्मवान् ज्ञानी हो, तुमने सर्वकाल सार्वजनीन स्थिरचित्त ऐसे गुरु का दामन पकड़ा है, जिसकी दृष्टि प्रभु-रूप पर टिकी है, जिसकी बुद्धि स्थिर सुस्थान पर दृढ़ है और जो शील का कवच धारण कर माया का नाश करता है। (ये गुण गुरु नानकदेव के बताए गए हैं, जिनकी शरण गुरु अंगद ने ली थी।) कवि 'कलसहार' कहता है कि भाई लहणे की कीर्ति गुरु नानक के चरण-स्पर्श से सारे संसार में (सप्त द्वीप में) फैल गई है ॥ ४ ॥

द्रिसटि धरत तम हरन दहन अघ पाप प्रनासन। सबद सूर बलवंत काम अरु क्रोध बिनासन। लोभ मोह वसि करण सरण जाचिक प्रतिपालण। आतम रत संग्रहण कहण

अंम्रित कल ढालण। सतिगुरू कल सतिगुर तिलकु सति लागै सो पै तरै। गुरु जगत फिरण सीह अंगरउ राजु जोगु लहणा करै ॥ ५ ॥ सदा अकल लिव रहै करन सिउ इछा चारह। द्रुम सपूर जिउ निवै खवै कसु बिमल बीचारह। इहै ततु जाणिओ सरबगति अलखु बिडाणी। सहज भाइ संचिओ किरणि अंम्रित कल बाणी। गुर गमि प्रमाणु तै पाइओ सतु संतोखु ग्राहजि लयौ। हरि परसिओ कलु समुलवै जन दरसनु लहणे भयौ ॥ ६ ॥

हे गुरु अंगद, तुम्हारे दृष्टि उठाते ही अज्ञान रूपी अँधेरा नष्ट हो जाता है, तुम पापों को जला देनेवाले एवं पाप-विनाशक हो। तुम शब्द-ब्रह्म को पहचाननेवाले सच्चे शूरवीर हो, तुमने काम, क्रोधादि को नष्ट कर दिया है। तुम लोभ-मोह को वश करनेवाले हो और शरण की याचना करनेवाले के प्रतिपालक हो। तुमने आत्मिक शक्ति का भण्डार एकत्रित किया है और तुम्हारे वचन अमृत के स्रोत हैं। कवि 'कलसहार' कहता है कि गुरु अंगद शिरोमणि गुरु है। जो मनुष्य उसके सत्य में विश्वास लाता है, वह पार हो जाता है। जगत का गुरु, फिरण सिंह (बाबा फेरू) का सुपुत्र लहणा गुरु अंगद बनकर राजयोग भोगता है ॥ ५ ॥ तुम्हारी लग्न सदा मायातीत ब्रह्म में लगी रहती है, तुम्हारी करनी स्वतन्त्र और चारु है। अपने निर्मल विचारों के ही कारण तुम फलों से लदे पेड़ की तरह झुकते और लोगों की भीड़ सहारते हो! तुमने इस तत्त्व को पा लिया है कि ब्रह्म आश्चर्ययुक्त (लीलाधर) तथा अदृश्य होते हुए भी सर्वव्यापक है। तुमने अपनी सुन्दर वाणी रूपी किरणों के अमृत द्वारा (सब जीवों को) सहज भाव से खींच दिया है। तुमने, ऐ गुरु अंगद, अपने गुरु (नानक) वाला स्थान पा लिया है और सत्य, सन्तोष को ग्रहण किया है। कवि 'कलसहार' कहता है कि जिन जनों को भाई लहणे के दर्शन हुए हैं, वे परमात्मा का स्पर्श कर गए हैं ॥ ६ ॥

मनि बिसासु पाइओ गहरि गहु हदरथि दीओ। गरल नासु तनि नठयो अमिउ अंतरगति पीओ। रिदि बिगासु जागिओ अलखि कल धरी जुगंतरि। सतिगुरु सहज समाधि रविओ सामानि निरंतरि। उदारउ चित दारिद हरन पिखंतिह कलमल त्रसन। सद रंगि सहजि कलु उचरै जसु जंपउ लहणे रसन ॥ ७ ॥ नामु अवखधु नामु आधारु अरु नामु समाधि सुखु सदा नाम नीसाणु सोहै। रंगि रतौ नाम सिउ कल नामु

सुरि नरह बोहै । नाम परसु जिनि पाइओ सतु प्रगटिओ रवि लोइ । दरसनि परसिऐ गुरू कै अठसठि मजनु होइ ॥ ८ ॥

तुम्हारे मन में (गुरु के लिए) परम विश्वास जगा है, स्वयं गुरु नानक ने तुम्हें गम्भीरता प्रदान की है (हरि तक रसाई दी है)। तुम्हारे शरीर से विनाशक विष (मोह-माया) दूर हो गया है और तुम्हारी अन्तरात्मा ने हरिनामामृत-पान कर लिया है। जिस अदृश्य परमात्मा ने युग-युग तक अपनी शक्ति को स्थायी बना रखा है, उसका प्रकाश तुम्हारे (गुरु अंगद के) हृदय में जाग्रत् हुआ है। जो वाहिगुरु एक समान सबमें व्याप्त है, उसी के ध्यान में सतिगुरु अंगद की नित्य समाधि लगी रहती है। जो (गुरु अंगद) उदार-चित्त है, निर्धनता-निवारक है तथा जिसे देखते ही पाप त्रस्त हो जाते हैं, कवि 'कलसहार' कहता है कि वह सदा सप्रेम सहज भाव से अपनी जिह्वा से उसी गुरु अंगद का यश गाता है ॥ ७ ॥ हरिनाम (सब रोगों की) औषध है, हरिनाम ही सबका आधार है और नाम की समाधि ही सुख का स्रोत है; हरिनाम की पताका सदा लहराती रहती है। कवि 'कलस' कहता है कि हरिनाम के प्यार में ही गुरु अंगद की सत्ता है—देवता और मनुष्य सभी हरिनाम से सुगंधित हैं। जिसने भी गुरु अंगद से हरिनाम-रस प्राप्त किया है, उसका सत्याचरण सूर्य के समान प्रकाशित है। ऐसे गुरु (अंगद) के दर्शन और स्पर्श में अठसठ तीर्थों में स्नान के समान पावन है ॥ ८ ॥

सचु तीरथु सचु इसनानु अरु भोजनु भाउ सचु सदा सचु भाखंतु सोहै । सचु पाइओ गुर सबदि सचु नामु संगती बोहै । जिसु सचु संजमु वरतु सचु कबि जन कल वखाणु । दरसनि परसिऐ गुरू कै सचु जनमु परवाणु ॥ ९ ॥ अमिअ द्रिसटि सुभ करै हरै अघ पाप सकल मल । काम क्रोध अरु लोभ मोह वसि करै सभै बल । सदा सुखु मनि वसै दुखु संसारह खोवै । गुरु नव निधि दरीआउ जनम हम कालख धोवै । सु कहु टल गुरु सेवीऐ अहिनिसि सहजि सुभाइ । दरसनि परसिऐ गुरू कै जनम मरण दुखु जाइ ॥१०॥

(गुरु अंगद के लिए) सत्य ही तीर्थ है, सत्य ही स्नान है और उसका भोजन भी सत्य ही है, वह सदैव सत्य-स्वरूप प्रभु का नामोच्चारण करता हुआ शोभता है। गुरु अंगद ने अकालपुरुष का सत्यनाम अपने गुरु नानक से प्राप्त किया है, इस सच्चे नाम की सुगंधि समूची सत्संगति में प्रसारित है। कवि 'कलस' कहता है कि जिस (गुरु अंगद) का संयम-व्रत सब कुछ सत्य-स्वरूप परमात्मा ही है, उस गुरु अंगद के दर्शन और स्पर्श से जन का जन्म

सफल हो जाता है, उसे हरिनाम की प्रीति प्राप्त होती है ॥ ९ ॥ (गुरु अंगद की) अमृतमयी दृष्टि सबका कल्याण करती है, समस्त पापों की मलिनता दूर करती है और जिस गुरु (अंगद ने) अपने बल से काम, क्रोध, लोभ, मोहादि को वश में कर रखा है; जिसके मन में सदा सुख बसता है और जो संसार के दुःखों को दूर करता है, वह गुरु (अंगद) नव-निधियों का दरिया है, जिसमें हम सब अपने जीवन की कालिमा धो लेते हैं। कवि 'कलसहार' (या टल्ल अथवा कल्ल —ये एक ही भाट के नाम माने जाते हैं) कहता है कि सहजावस्था में स्थिर होकर गुरु की सेवा करो। उसके (गुरु अंगद के) दर्शन और स्पर्श से जन्म-मरण (आवागमन) के दुःखों का अन्त हो जाता है ॥ १० ॥

सवईए महले तीजे के ३*

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सोई पुरखु सिवरि साचा जा का इकु नामु अछलु संसारे। जिनि भगत भवजल तारे सिमरहु सोई नामु परधानु। तितु नामि रसिकु नानकु लहणा थपिओ जेन स्रब सिधी। कवि जन कल्य सबुधी कीरति जन अमरदास बिस्तरीया। कीरति रवि किरणि प्रगटि संसारह साख तरोवर मवलसरा। उतरि दखिणहि पुबि अरु पस्चमि जै जैकार जपंथि नरा। हरि नामु रसनि गुरमुखि बरदायउ उलटि गंग पस्चमि धरीआ। सोई नामु अछलु भगतह भव तारणु अमरदास गुर कउ फुरिआ ॥ १ ॥ सिमरहि सोई नामु जख्य अरु किंनर साधिक सिध समाधि हरा। सिमरहि नख्यत्र अवर ध्रू मंडल नारदादि प्रहलादि वरा। ससीअरु अरु सूरु नामु उलासहि सैल लोअ जिनि उधरिआ। सोई नामु अछलु भगत भव तारनु अमरदास गुर कउ फुरिआ ॥ २ ॥

संसार में जिस सत्पुरुष का नाम मायातीत है, उसका स्मरण करो। जिस नाम के जपने से भक्त-जन संसार से पार हो जाते हैं, उस प्रधान नाम को जपो। गुरु नानक उसी नाम के रसिक थे; भाई लहणा भी उसी नाम द्वारा स्थापित हुआ (गुरु अंगद बना) और उसने अनेक सिद्धियाँ प्राप्त कीं। कवि कल्ल कहता है कि उसी नाम की बदौलत सुबुद्ध गुरु अमरदास की शोभा सब ओर फैल रही है। (गुरु अमरदास की) कीर्ति

* ये सवैये गुरु अमरदास जी की स्तुति में उच्चरित हैं।

रूपी सूर्य की किरणें संसार में प्रकट होकर मौलश्री के पेड़ की शाखाओं की तरह उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम, सब ओर कीर्ति-सुगंध फैलातीं और लोगों में जय-जयकार करवाती हैं। जो हरिनाम गुरु (नानकदेव) ने उच्चारण किया था और सांसारिक जीवों की वृत्ति ही उलट दी थी, वही छल-रहित प्रभु-नाम, जो भक्तों को संसार-सागर से पार लगाता है, गुरु अमरदास जी के अन्तर्मन में प्रकट हुआ है ॥ १ ॥ यक्ष, किन्नर, सिद्ध-साधक एवं समाधिस्थ शिव भी उसी नाम का स्मरण करते हैं; नक्षत्र और ध्रुव-मंडल, नारदादि मुनि एवं प्रह्लाद आदि भक्त भी उसी नाम का उच्चारण करता है। चन्द्र और सूर्य भी उसी नाम के आकांक्षी हैं, जिसने पत्थरों के ढेर मुक्त कर दिए। भक्तों को संसार-सागर से पार लगानेवाला वही छल-रहित प्रभु-नाम गुरु अमरदास के अन्तर्मन में प्रकट हुआ है ॥ २ ॥

सोई नामु सिवरि नवनाथ निरंजनु सिव सनकादि समुधरिआ। चवर सीह सिध बुध जितु राते अंबरीक भवजलु तरिआ। उधउ अक्रूरु तिलोचनु नामा कलि कबीर किलविख हरिआ। सोई नामु अछलु भगतह भवतारणु अमरदास गुर कउ फुरिआ ॥ ३ ॥ तितु नामि लागि तेतीस धिआवहि जती तपी सुर मनि वसिआ। सोई नामु सिमरि गंगेव पितामह चरण चित अंम्रित रसिआ। तितु नामि गुरू गंभीर गरूअ मति सत करि संगति उधरीआ। सोई नामु अछलु भगतह भवतारणु अमरदास गुर कउ फुरिआ ॥ ४ ॥

उसी पवित्र हरिनाम का सिमरन करने से नौ नाथ, शिवजी, सनक-सनन्दनादि तिर गए हैं। चौरासी सिद्ध तथा अन्य ज्ञानवान् जीव उसी नाम के प्यार में रँगे हुए हैं और अंबरीष (उसी हरिनाम की बदौलत) संसार से मुक्त हुआ है। उसी नाम को उद्धव, अक्रूर, त्रिलोचन और नामदेव जैसे भक्तों ने सिमरन किया है, उसी ने कलियुग में कबीर के पापों का हरण किया है और अब वही भक्तों को तारनेवाला छल-रहित हरिनाम गुरु अमरदास के अन्तर्मन में प्रकट हुआ है ॥ ३ ॥ उसी प्रभु-नाम से प्रेम करते हुए तेंतीस कोटि देवता ध्यान लगाते हैं, यती-तपीश्वरों के मन में वही पवित्र नाम बसता है। उसी नाम-स्मरण द्वारा प्रभु-चरणों में जुड़ने के लिए भीष्मपितामह के हृदय में अमृत-धार स्रवित हुई थी। उसी नाम में लग्न लगाने से गम्भीर एवं सुबुद्ध सतिगुरु के द्वारा शरण में आनेवाले शिष्य मुक्त हो रहे हैं। वही भक्तों को पार लगानेवाला छल-रहित हरिनाम गुरु अमरदास के अन्तर्मन में प्रकट हुआ है ॥ ४ ॥

नाम किति संसारि किरणि रवि सुर तर साखह। उतरि दखिणि पुबि देसि पस्चमि जसु भाखह। जनमु त इहु सकयथु जितु नामु हरि रिदै निवासै। सुरि नर गण गंधरब छिअ दरसन आसासै। भलउ प्रसिधु तेजो तनौ कल्य जोड़ि कर ध्याइअउ। सोई नामु भगत भवजल हरणु गुर अमरदास तै पाइओ ॥ ५ ॥ नामु धिआवहि देव तेतीस अरु साधिक सिध नर नामि खंड ब्रहमंड धारे। जह नामु समाधिओ हरखु सोगु सम करि सहारे। नामु सिरोमणि सरब मै भगत रहे लिव धारि। सोई नामु पदारथु अमरगुर तुसि दीओ करतारि ॥ ६ ॥

जैसे सुर-तरु (कल्पवृक्ष) की शाखाएँ (बिखरकर) लोगों की कामना-पूर्ति करती हैं, वैसे ही संसार में हरिनाम-कीर्ति रूपी सूर्य की किरणें उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम, सब ओर (प्रकाश कर रही हैं) और लोग हरिनाम का उच्चारण करते हैं। उसी का जन्म सफल है, जिसके हृदय में हरि-प्रभु का पावन नाम निवसित है। देवता, मनुष्य, गण, गन्धर्व तथा छः वेष (सम्प्रदाय), सब इसी पवित्र नाम के आकांक्षी हैं। कल्ल कवि श्री तेजभान के सुपुत्र तथा भल्ला कुलोत्पन्न (गुरु अमरदास को) हाथ जोड़कर प्रार्थना करता है कि हे गुरु, भक्तों का जन्म-मरण काटनेवाला परमात्मा का नाम तुम्हें प्राप्त हुआ है ॥ ५ ॥ तेंतीस कोटि देवता वही नाम सिमरते हैं, सिद्ध, साधक, नर-मुनि आदि खंडों-ब्रह्माण्डों में प्रभु-नाम को धारण किए हुए हैं। जो उस नाम में लग्न लगाता है, वह हर्ष-शोक को समान मानने लगता है। सर्व-व्यापक हरि का नाम-पदार्थ ही सर्वोतम है, भक्तजन इसी में लीन रहते हैं। हे गुरु अमरदास परमात्मा ने स्वयं वही हरिनाम-पदार्थ आपको बख़्शा है ॥ ६ ॥

सति सूरउ सीलि बलवंतु सत भाइ संगति सघन गरूअ मति निरवैरि लीणा। जिसु धीरजु धुरि धवलु धुजा सेति बैकुंठ बीणा। परसहि संत पिआरु जिह करतारह संजोगु। सतिगुरू सेवि सुखु पाइओ अमरि गुरि कीतउ जोगु ॥ ७ ॥ नामु नावणु नामु रस खाणु अरु भोजनु नाम रसु सदा चाय मुखि मिस्ट बाणी। धनि सतिगुरु सेविओ जिसु पसाइ गति अगम जाणी। कुल संबूह समुधरे पायउ नाम निवासु। सकयथु जनमु कल्युचरै गुरु परस्यिउ अमर प्रगासु ॥ ८ ॥

(गुरु अमरदास) सत्य का सूर्य हैं, शील में शिरोमणि हैं, शांत

स्वभाव के हैं, उनके शिष्यों की बड़ी संख्या है, गम्भीर बुद्धि और निर्वैर भाव से परमात्मा में लीन हैं। जिस (गुरु अमरदास) के धैर्य की धवल पताका वैकुण्ठ-द्वार पर फहरती और लोगों का मार्ग-दर्शन करती है अर्थात् लोग उनके धैर्य से शिक्षा पाते हैं। जिसका प्रभु के संग संयोग हुआ है, उस प्रेम रूपी गुरु (अमरदास) को समस्त सन्तजन चाहते हैं और सतिगुरु की सेवा में सुख पाते हैं— क्योंकि गुरु अमरदास ने स्वयं उन्हें इस योग्य बना दिया है ॥ ७ ॥ (गुरु अमरदास के लिए) नाम ही स्नान है, नाम ही सरस खान-पान है, नाम-रस ही उनका मुख्य चाव है और नाम-वचन ही उनके मुँह मीठे लगते हैं। उनका सतिगुरु (गुरु अंगददेव) भी धन्य है, जिसकी कृपा से उन्होंने (गुरु अमरदास ने) अगम गति को पहचान लिया है। कई कुलों का उद्धार हुआ है, हृदय में हरि का नाम बसा है। कवि कल्ल कहता है कि जिन्होंने गुरु अमरदास की शरण ली है, उनका जन्म सफल हुआ है ॥ ८ ॥

बारिजु करि दाहिणै सिधि सनमुख मुखु जोवै। रिधि बसै बांवांगि जु तीनि लोकांतर मोहै। रिदै बसै अकहीउ सोइ रसु तिनही जातउ। मुखहु भगति उचरै अमरु गुरु इतु रंगि रातउ। मसतकि नीसाणु सचउ करमु कल्य जोड़ि कर ध्याइअउ। परसिअउ गुरू सतिगुर तिलकु सरब इछ तिनि पाइअउ ॥ ९ ॥ चरण त परसकयथ चरण गुर अमर पवलिरय। हथ त परसकयथ हथ लगहि गुर अमर पय। जीह त परसकयथ जीह गुर अमरु भणिजै। नैण त परसकयथ नयणि गुरु अमरु पिखिजै। स्रवण त परसकयथ स्रवणि गुरु अमरु सुणिजै। सकयथु सु हीउ जितु हीअ बसै गुर अमरदासु निज जगत पित। सकयथ सु सिरु जालपु भणै जु सिरु निवै गुर अमर नित ॥ १ ॥ १० ॥

उनके (गुरु अमरदास के) दाहिने हाथ में पद्म विद्यमान है, सम्मुख होकर सिद्धियाँ उनका मुख ताका करती हैं। ऋद्धियाँ वामांग पर विराजती हैं, जो तीनों लोकों को मोहित करती हैं। उनके हृदय में अकथनीय परमात्मा बसता है, इस आनन्द को उन्होंने (गुरु अमरदास ने) ही पहचाना है। वे मुख से भक्ति उच्चारते हैं और नित्य (गुरु अमरदास) इसी रंग में लीन रहते हैं। उनके माथे पर सच्चे प्रभु की कृपा का निशान है, कल्ल कवि हाथ जोड़कर कहता है जिसने भी इस सतिगुरु-शिरोमणि का प्रसाद पाया है, उसकी समस्त कामनाएँ पूर्ण हो गई हैं ॥ ९ ॥ वे चरण सफल हैं जो गुरु (अमरदास) के पथ पर चलते हैं, वे हाथ भी सफल हैं, जो गुरु के चरणों का स्पर्श करते हैं। वही जीभ सफल है, जिससे गुरु

अमरदास का गुणगान हो और वे ही नेत्र सफल हैं, जो गुरु अमरदास का दर्शन करते हैं। वे ही कान सफल हैं, जो गुरु अमरदास के वचन सुनते हैं। वही हृदय सार्थक है, जिसमें जगत्-पिता सर्वप्रिय गुरु अमरदास बसते हैं। जालप भाट कहता है कि वही सिर सार्थक है, जो सदा गुरु अमरदास जी के चरणों में झुकता है ॥ १ ॥ १० ॥

ति नर दुख नह भुख ति नर निधन नहु कहीअहि। ति नर सोकु नहु हूऐ ति नर से अंतु न लहीअहि। ति नर सेव नहु करहि ति नर सय सहस समपहि। ति नर दुलीचै बहहि ति नर उथपि बिथपहि। सुख लहहि ति नर संसार महि अभै पटु रिप मधि तिह। सकयथ ति नर जालपु भणै गुर अमरदासु सुप्रसंनु जिह ॥ २ ॥ ११ ॥ तै पढिअउ इकु मनि धरिअउ इकु करि इकु पछाणिओ। नयणि बयणि मुहि इकु इकु दुहु ठांइ न जाणिओ। सुपनि इकु परतखि इकु इकस महि लीणउ। तीस इकु अरु पंजि सिधु पैतीस न खीणउ। इकहु जि लाखु लखहु अलखु है इकु इकु करि वरनिअउ। गुर अमरदास जालपु भणै तू इकु लोड़हि इकु मंनिअउ ॥ ३ ॥ १२ ॥

वे मनुष्य दुःख-भूख से अतीत होते हैं, उन्हें कोई निर्धन नहीं कह सकता; उन मनुष्यों को कोई शोक नहीं होता; उन मनुष्यों का अन्त (भेद) नहीं पाया जा सकता। वे मनुष्य किसी पर आश्रित नहीं रहते, वे सहस्रों पदार्थ दूसरों को प्रदान करते हैं, वे लोग राज भोगते हैं, वे मनुष्य अवगुणों को दूर करके गुणों को स्थापित करते हैं। वे मनुष्य संसार में सुख भोगते हैं, शत्रुओं में भी निर्भय बने रहते हैं। जालप भाट कहता है कि उन मनुष्यों का ही जीवन सफल होता है, जिन पर गुरु अमरदास प्रसन्न होते हैं (कृपा करते हैं) ॥ २ ॥ ११ ॥ (हे गुरु अमरदास) तुमने एक प्रभु की सत्ता जानी है, मन में एक ईश्वर का ध्यान किया है, केवल एक ब्रह्म को पहचाना है, तुम्हारे नेत्रों में एक ही की छवि तथा तुम्हारे वचनों में एक ही का नाम सदैव बना रहता है— तुमने कभी द्वैत को नहीं अपनाया। स्वप्न में भी (गुरु अमरदास ने) एक ब्रह्म को ही महसूस किया है, प्रत्यक्ष में भी वे उसी के दीवाने हैं, एक प्रभु में ही उन्होंने लग्न लगाई है। (महीने के) तीस दिनों, पाँच तत्त्वों एवं पैंतीस अक्षरों में उसी एक की महिमा विद्यमान है (अर्थात् गुरु अमरदास ने सदैव उसकी महिमा गाई है, पैंतीस अक्षरों द्वारा लिखित बाणी में तथा सृष्टि के पाँचों तत्त्वों में ब्रह्म को व्याप्त देखा है)। एक प्रभु से लाखों बने हैं और फिर भी वह उन लाखों के लिए अलक्ष्य है, उसी एक को एक-ओंकार-रूप में

(गुरु अमरदास ने) वर्णित किया है। जालप भाट कहता है कि ऐ गुरु अमरदास, तुम केवल एक प्रभु की कामना करते हो और उसी एक में विश्वास रखते हो ॥ ३ ॥ १२ ॥

जि मति गही जैदेवि जि मति नामै संमाणी। जि मति त्रिलोचन चिति भगत कंबीरहि जाणी। रुकमांगद करतूति रामु जंपहु नित भाई। अंमरीकि प्रहलादि सरणि गोबिंद गति पाई। तै लोभु क्रोधु त्रिसना तजी सुमति जल्य जाणी जुगति। गुरु अमरदासु निज भगतु है देखि दरसु पावउ मुकति ॥ ४ ॥ १३ ॥ गुरु अमरदासु परसीऐ पुहमि पातिक बिनासहि। गुरु अमरदासु परसीऐ सिध साधिक आसासहि। गुरु अमरदासु परसीऐ धिआनु लहीऐ पउ मुकिहि। गुर अमरदासु परसीऐ अभउ लभै गउ चुकिहि। इकु बिनि दुगण जु तउ रहै जासु मंत्रि मानवहि लहि। जालपा पदारथ इतड़े गुर अमरदासि डिठै मिलहि ॥ ५ ॥ १४ ॥

(प्रभु-नाम जपने की) जो सूझ जैदेव ने पाई थी, जो सूझ नामदेव में थी, जो सूझ त्रिलोचन भक्त के मन में घर किए हुए थी, और जो प्रभु-नाम की सूझ कबीर को मिली थी, राजा रुक्मांगद भी नित्य उसी मतानुसार कर्म करता (नाम जपता) था और दूसरों को राम-नाम जपाता था। अंबरीष, प्रह्लाद आदि भक्तों ने उसी निर्मल बुद्धि से परमात्मा की शरण में गति पाई है। जल्ल (जालप) कवि कहता है कि तुमने (गुरु अमरदास ने) उसी निर्मल विवेक के कारण लोभ, क्रोध-तृष्णा आदि का त्याग किया है। गुरु अमरदास वाहिगुरु का प्रिय भक्त है, उसके दर्शन-मात्र से मुक्ति प्राप्त होती है ॥ ४ ॥ १३ ॥ ऐ भाइयो, आओ, गुरु अमरदास के (चरण) स्पर्श करें, इससे धरती पर के सब पाप नष्ट होते हैं। गुरु अमरदास के चरण छूने को तो सिद्ध-साधक भी व्याकुल हैं। गुरु अमरदास के चरण-स्पर्श से प्रभु में ध्यान लगता है, गुरु अमरदास के चरण छूने से मनुष्य निर्भय होता तथा उसका आवागमन चुक जाता है। जब मनुष्य गुरु-मन्त्र में विश्वास लाकर एक प्रभु की सत्ता को पहचानता है, द्वैत-भाव तभी नष्ट होता है। जालप कवि कहता है कि उपर्युक्त सब पदार्थ गुरु अमरदास जी के दर्शनों से प्राप्त हो जाते हैं ॥ ५ ॥ १४ ॥ (ऊपर ९ सवैये कवि कलसहार के थे और आगे के पाँच कवि जालप या ज़ल्ल के थे। आगे आनेवाले ४ सवैये कवि कीरत के, दो भिक्खे के, एक सल्ल का और एक भल्ल का हैं। गुरु अमरदास की कीर्ति में इस प्रकार कुल २२ सवैये लिखे गए हैं।)

सचु नामु करतारु सुद्रिड़ु नानकि संग्रहिअउ। ताते अंगदु लहणा प्रगटि तासु चरणह लिव रहिअउ। तितु कुलि गुर अमरदासु आसा निवासु तासु गुण कवण वखाणउ। जो गुण अलख अगम तिनह गुण अंतु न जाणउ। बोहिथउ बिधातै निरमयौ सभ संगति कुल उधरण। गुर अमरदास कीरतु कहै त्राहि त्राहि तुअ पा सरण ॥ १ ॥ १५ ॥ आपि नराइणु कला धारि जग महि परवरियउ। निरंकारि आकारु जोति जग मंडलि करियउ। जह कह तह भरपूरु सबदु दीपकि दीपायउ। जिह सिखह संग्रहिओ ततु हरि चरण मिलायउ। नानक कुलि निंमलु अवतरि्उ अंगद लहणे संगि हुअ। गुर अमरदास तारण तरण जनम जनम पा सरणि तुअ ॥ २ ॥ १६ ॥

परमात्मा का सच्चा तथा स्थायी नाम गुरु नानकदेव ने संग्रहण किया था, उनसे भाई लहणा गुरु अंगद बने, जिन्होंने सदा अपने गुरु के चरणों में वृत्ति लगाई। उसी कुल में आशा-पूरक गुरु अमरदास (प्रकट हुए)। उनके कौन-से गुणों का बखान करूँ ? जो गुण अदृश्य तथा अपहुँच हैं, (मैं) उन गुणों का अन्त नहीं जानता। (गुरु अमरदास के रूप में) विधाता ने सारी संगति (शिष्य-मंडल) के उद्धार के लिए (संसार-सागर से पार लगाने के लिए) जहाज़ तैयार किया है। कीरत कवि कहता है, 'हे गुरु अमरदास, मेरी रक्षा करो, मैं तुम्हारी शरण में पड़ा हूँ' ॥१॥१५॥ (गुरु अमरदास के रूप में) स्वयं परमात्मा अपनी शक्ति से संसार में प्रवृत्त हुआ है, जैसे मायातीत ब्रह्म ने आकर धारण कर संसार में ज्योति प्रदीप्त की हो ! परमात्मा ने अपने सर्व-व्यापक (जहाँ, कहाँ, तहाँ) नाम की ज्योति (गुरु अमरदास रूपी) दीपक में प्रकट की है। जिन शिष्यों ने इसे ग्रहण किया है, वे तुरंत हरि-चरणों में समा गए हैं। भाई लहणे अर्थात् गुरु अंगद की संगति पाकर यह (गुरु अमरदास) नानक-कुल में अवतरित हुआ है। हे तारन-तरण (संसार-सागर से पार लगानेवाले जहाज़) गुरु अमरदास, जन्म-जन्म तक मैं तुम्हारे चरणों की शरण में रहूँ ॥ २ ॥ १६ ॥

जपु तपु सतु संतोखु पिखि दरसनु गुर सिखह। सरणि परहि ते उबरहि छोडि जम पुर की लिखह। भगति भाइ भरपूरु रिदै उचरै करतारै। गुरु गउहरु दरीआउ पलक डुबंत्यह तारै। नानक कुलि निंमलु अवतर्यिउ गुण करतारै उचरै। गुरु अमरदासु जिन्ह सेविअउ तिन्ह दुखु दरिद्रु परहरि परै ॥३॥१७॥

चिति चितवउ अरदासि कहउ परु कहि भि न सकउ। सरब चिंत तुझु पासि साध संगति हउ तकउ। तेरै हुकमि पवै नीसाणु तउ करउ साहिब की सेवा। जब गुरु देखै सुभ दिसटि नामु करता मुखि मेवा। अगम अलख कारण पुरख जो फुरमावहि सो कहउ। गुर अमरदास कारण करण जिव तू रखहि तिव रहउ॥ ४॥ १८॥

गुरु के शिष्यों को (गुरु अमरदास के) दर्शन पाकर जप, तप, सत्य-सन्तोष, सब प्राप्त हो जाते हैं। जो जीव ऐसे गुरु (अमरदास) की शरण पड़ते हैं, वे यमपुरी की लीक से आगे बढ़ जाते हैं। उनके (गुरु अमरदास के) हृदय में प्रभु-प्रेम की अथाह भक्ति भरी पड़ी है, और वे परमात्मा के नाम का उच्चारण करते हैं। वे गहिर-गम्भीर तथा उदारता के सागर हैं। डूबते जीवों को पल-भर में ही तार देते हैं। वे (गुरु अमरदास) नानक-कुल के निर्मल अवतार हैं और नित्य कर्तार का गुण-गान करते हैं। जिन शिष्यों ने गुरु अमरदास की शरण ली है, उनके सब दुःख-दारिद नष्ट हो गए हैं॥ ३॥ १७॥ (हे गुरु अमरदास) मैं मन में सोचता हूँ कि तुमसे एक विनती करूँ, किन्तु कहने का साहस नहीं पड़ता। मेरी समूची चिन्ता तुम्हें ही तो है, मैं तो केवल सत्संगति का आसरा चाहता हूँ। यदि तुम्हारी (गुरु अमरदास की) इच्छा से स्वीकृति मिल जाय तो मैं भी परमात्मा की सेवा करूँ; जब गुरु की कृपा-दृष्टि होती है, तो परमात्मा का नाम रूपी मेवा (खाने के लिए) मुख में पड़ता है। हे अगम, अलख परमात्मा-रूप (गुरु अमरदास), जो तुम्हारी आज्ञा होती है, मैं वही करता हूँ; और हे सृष्टि के कारण-रूप (गुरु अमरदास), जैसे तुम रखो, वैसे ही रहता हूँ॥ ४॥ १८॥

॥ भिखे के॥ गुरु गिआनु अरु धिआनु तत सिउ ततु मिलावै। सचि सचु जाणीऐ इक चितह लिव लावै। काम क्रोध वसि करै पवणु उडंत न धावै। निरंकार कै वसै देसि हुकमु बुझि बीचारु पावै। कलि माहि रूपु करता पुरखु सो जाणै जिनि किछु कीअउ। गुरु मिलियउ सोइ भिखा कहै सहज रंगि दरसनु दीअउ॥ १॥ १९॥ रहिओ संत हउ टोलि साध बहुतेरे डिठे। संनिआसी तपसीअह मुखहु ए पंडित मिठे। बरसु एकु हउ फिरिओ किनै नहु परचउ लायउ। कहतिअह कहती सुणी रहत को खुसी न आयउ। हरिनामु छोडि दूजै लगे तिन्ह के

गुण हउ किआ कहउ। गुरु दयि मिलायउ भिखिआ जिव तू रखहि तिव रहउ ॥ २ ॥ २० ॥

गुरु (अमरदास) ज्ञान एवं ध्यान-रूप हैं (अर्थात् नित्य हरि में ध्यान लगाने और परम का ज्ञान रखनेवाले), उन्होंने अपनी आत्म-ज्योति को परमात्म-ज्योति के संग मिला लिया है। (अतः) उनके स्वरूप को सत्य-स्वरूप परमात्मा का ही रूप जानो, वे एकाग्र मन से (प्रभु में) लीन रहते हैं। उन्होंने (गुरु अमरदास ने) काम, क्रोध को वश में किया है, उनका मन हवा के संग (प्रवृत्तियों के वश में) इधर-उधर भटकता नहीं, वे मायातीत ब्रह्म के देश में स्थिर-चित्त हैं, उन्होंने परमात्मा के हुकुम को पहचानकर ज्ञान प्राप्त किया है। वे (गुरु अमरदास) कलियुग में कर्ता-पुरुष का रूप हैं, यह तथ्य केवल भक्तजन (जिन्होंने साधना की होती है) ही जानते हैं। भिक्खा कवि कहता है, मुझे वही परमगुरु प्राप्त हुआ है, उसने सहज रंग में (पूर्ण उल्लास-सहित) मुझे दर्शन दिया है ॥ १ ॥ १९ ॥ मैं सच्चे सन्त की खोज करता हूँ, अनेक साधु, संन्यासी, तपस्वी मैंने देखे हैं, मीठी-मीठी बातें करनेवाले पण्डित भी देखे हैं। एक वर्ष तक मैं (खोज में) भटकता रहा हूँ, किसी ने मुझे विश्वास नहीं दिलाया। कहने-सुननेवाले (अनेक देखे), किन्तु किसी की रहनी (दैनिक जीवन) देखकर मुझे खुशी नहीं हुई। जो स्वयं हरिनाम छोड़ द्वैत-भाव में लगे हैं, मैं उनके क्या गुण बताऊँ! अब भीखा को सच्चा गुरु (अमरदास) मिल गया है, वह जैसे रखे, मैं रहूँगा ॥ २ ॥ २० ॥

पहिरि समाधि सनाहु गिआनि है आसणि चड़िअउ। ध्रंम धनखु कर गहिओ भगत सीलह सरि लड़िअउ। भै निरभउ हरि अटलु मनि सबदि गुर नेजा गडिओ। काम क्रोध लोभ मोह अपतु पंच दूत बिखंडिओ। भलउ भूहालु तेजो तना न्रिपति नाथु नानक बरि। गुर अमरदास सचु सल्य भणि तै दलु जितउ इव जुधु करि ॥ १ ॥ २१ ॥ घनहर बूंद बसुअ रोमावलि कुसम बसंत गनंत न आवै। रवि ससि किरणि उदरु सागर को गंग तरंग अंतु को पावै। रुद्र धिआन गिआन सतिगुर के कबि जन भल्य उनह जुो गावै। भले अमरदास गुण तेरे तेरी उपमा तोहि बनि आवै ॥ १ ॥ २२ ॥ ६ ॥ १६ ॥ ६०॥

(गुरु अमरदास) समाधि रूपी कवच धारण कर ज्ञान के घोड़े पर आसन लगाए हुए है। उसके हाथ में धर्म का धनुष है और वह भक्तों जैसे शील के तीरों से (काम-क्रोधादि मायावी ताक़तों से) लड़ रहे हैं।

वे (गुरु अमरदास) परमात्मा के भय के कारण निर्भय हैं, उन्होंने मन में अटल भाव से हरि को धारण किया है, मानो गुरु-शब्द का भाला गाड़ रखा हो; (और इस प्रकार) काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, पाँचों वैरियों को मार गिराया है। हे तेजभान जी के तनय (पुत्र, गुरु अमरदास) तुम भले लोगों में शिरोमणि हो और गुरु नानक से वर प्राप्त कर चक्रवर्ती हो गए हो। सल्ल कवि कहता है, हे गुरु अमरदास, तुमने इस प्रकार युद्ध (पंच विकारों के विरुद्ध) जीत लिये हैं ॥१॥२१॥ बादलों की बूंदों, वसुधा की वनस्पति, वसन्त में खिलनेवाले फूलों की कोई गिनती नहीं। सूर्य-चन्द्र की किरणों, सागर के उदर, तथा गंगा की तरंगों का अन्त नहीं पाया जाता। शिवजी (रुद्र) की तरह ध्यान लगाकर सच्चे गुरु की ज्ञान-शक्ति से, भल्ल कवि कहता है, यदि कोई उन पर विचार करे, तो भी, हे गुरु अमरदास, तुम्हारे गुण अगम्य हैं, तुम अपने उपमान स्वयं ही हो (तुम्हारी किसी से कोई सादृश्यता नहीं, अपने जैसे आप ही हो) ॥ १ ॥ २२ ॥ ९ ॥ १९ ॥ ६० ॥

सवईए महले चउथे के ४*

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ इक मनि पुरखु निरंजनु धिआवउ। गुर प्रसादि हरि गुण सद गावउ। गुन गावत मनि होइ बिगासा। सतिगुर पूरि जनह की आसा। सतिगुरु सेवि परम पदु पायउ। अबिनासी अबिगतु धिआयउ। तिसु भेटे दारिद्रु न चंपै। कल्यसहारु तासु गुण जंपै। जंपउ गुण बिमल सुजन जन केरे। अमिअ नामु जाकउ फुरिआ। इनि सतिगुरु सेवि सबद रसु पाया नामु निरंजन उरिधरिआ। हरिनाम रसिकु गोबिंद गुण गाहकु चाहकु तत समत सरे। कवि कल्य ठकुर हरदास तने गुर रामदास सर अभर भरे ॥ १ ॥ छुटत परवाह अमिअ अमरापद अंम्रित सरोवर सद भरिआ। ते पीवहि संत करहि मनि मजनु पुब जिनहु सेवा करीआ। तिन भउ निवारि अन भै पदु दीना सबद मात्र ते उधर धरे। कवि कल्य ठकुर हरदास तने गुर रामदास सर अभर भरे ॥ २ ॥

---

* गुरु रामदास जी की स्तुति में कहे गए सवैये। ये कुल ६० सवैये हैं। इनमें प्रथम १३ सवैये कवि कलसहार के हैं, कवि नल्ह के १६ हैं, गयंद के १३, मथुरा के ७, बल्ह के ५, कीरत के ४ तथा मल्ह के २ हैं। इस प्रकार कुल १३+१६+१३+७+५+४+२=६० हैं।

मैं एकाग्रचित्त होकर निरंजन परमात्मा का ध्यान करूँ, गुरु की कृपा से सदा हरि के गुण गाता रहूँ, (इस प्रकार) गुण गाते हुए मेरा मन विकसित हो जाय, हे सतिगुरु, अपने दास की यह आशा पूरी कर दो। जिसने (चौथे गुरु रामदास ने) अपनी सतिगुरु (तीसरे गुरु अमरदास) की सेवा में रहकर परमपद प्राप्त किया है और जो सदैव अविनाशी, अविगत प्रभु का ध्यान करता है, उसके मिल जाने से किसी को दरिद्रता नहीं चिपटती, अत: कवि कलसहार उसके गुण गाता है। मैं उस सज्जन (गुरु रामदास) के विमल गुणों का गान करता हूँ, जिसने अमृतमय हरिनाम की स्पष्ट अनुभूति प्राप्त की है। इन्होंने अपने गुरु (गुरु अमरदास) की सेवा में रहकर शब्द (ब्रह्म) का रस-पान किया है तथा परमात्मा का नाम हृदय में धारण किया है। ये हरि-नाम के रसिया हैं, परमात्मा के गुणों के ग्राहक हैं, तत्त्व-दर्शन के इच्छुक एवं सम-द्रष्टा हैं। कवि कलसहार कहता है, ठाकुर हरदास जी के सुपुत्र (गुरु) रामदास (जन-हृदय रूपी) खाली सरोवरों को (हरिनाम-जल से) भरनेवाले हैं ॥ १ ॥ (गुरु अमरदास) अमृत-सरोवर की तरह सदा भरा हुआ है, जिसमें से अमरपद प्रदान करनेवाले अमृत के स्रोत फूट रहे हैं। इस अमृत को वे सन्तजन पीते और इसमें मन से स्नान करते हैं, जिन्होंने पूर्वजन्म में कोई प्रभु-सेवा की होती है। उनके भय दूर करके उन्हें निर्भय पद दिया है तथा अपने उपदेश द्वारा उनका (उक्त सन्तजनों का) उद्धार किया है। कवि कलसहार कहता है, ठाकुर हरदास जी के सुपुत्र (गुरु) रामदास (जनहृदय रूपी) खाली सरोवरों को (हरिनाम-जल) से भरनेवाले हैं ॥ २ ॥

सतगुर मति गूढ़ बिमल सतसंगति आतमु रंगि चलूलु भया। जाग्या मनु कवलु सहजि परकास्या अभै निरंजनु घरहि लहा। सतगुरि दयालि हरि नामु द्रिढ़ाया तिसु प्रसादि वसि पंच करे। कवि कल्य ठकुर हरदास तने गुर रामदास सर अभर भरे ॥ ३ ॥ अनभउ उनमानि अकल लिव लागी पारसु भेटिआ सहज घरे। सतगुर परसादि परम पदु पाया भगति भाइ भंडार भरे। मेटिआ जनमांतु मरण भउ भागा चितु लागा संतोख सरे। कवि कल्य ठकुर हरदास तने गुर रामदास सर अभर भरे ॥ ४ ॥

सतिगुरु (रामदास) का विवेक गहन है, उनकी संगति निर्मल है, उनकी आत्मा परमात्मा के प्यार के गूढ़े रंग में रँगी हुई है; उनका मन जाग्रत् है, हृदय-कमल सहज ही सुविकसित है और उन्होंने निर्भय हरि को घर में ही (अन्तर् में ही) पा लिया है। उनके सतिगुरु ने (गुरु अमरदास

ने) दया करके उन्हें (गुरु रामदास को) हरिनाम दृढ़ करवाया है, जिसकी कृपा से उन्होंने पंच-विकारों (काम-क्रोधादि) को वश में किया है। कवि कलसहार कहता है, 'ठाकुर हरदास जी के सुपुत्र (गुरु) रामदास (जन-हृदय रूपी) ख़ाली सरोवरों को हरिनाम-जल से) भरनेवाले हैं' ।।३।। अनुभव, अभ्यास तथा विवेक द्वारा उन्होंने (गुरु रामदास ने) ज्ञान प्राप्त किया है; माया-रहित ब्रह्म में उनकी वृत्ति जुड़ी हुई है। उन्हें पारस (गुरु अमरदास) का स्पर्श मिला है, इसलिए वे सहज पद को प्राप्त कर गए हैं। उन्हें अपने गुरु (गुरु अमरदास) की कृपा से अमर पद मिला है और भक्ति तथा प्यार से अनेक ख़ज़ाने भरे पड़े हैं। उनका जन्म-मरण चूक गया है, मौत उन्हें नहीं डरा सकती, क्योंकि उनका हृदय परम सन्तोष के आकर परब्रह्म में जुड़ा है। कवि कलसहार कहता है, ठाकुर हरदास जी के सुपुत्र गुरु रामदास (जन-हृदय रूपी) ख़ाली सरोवरों को (हरिनाम-जल से) भरने वाले हैं ।। ४ ।।

अभर भरे पायउ अपारु रिद अंतरि धारिओ। दुख भंजनु आतम प्रबोधु मनि ततु बीचारिओ। सदा चाइ हरि भाइ प्रेम रसु आपे जाणइ। सतगुर कै परसादि सहज सेती रंगु माणइ। नानक प्रसादि अंगद सुमति गुरि अमरि अमरु बरताइओ। गुर रामदास कल्युचरै तैं अटल अमर पदु पाइओ ।। ५ ।। संतोख सरोवरि बसै अमिअ रसु रसन प्रकासै। मिलत सांति उपजै दुरतु दूरंतरि नासै। सुख सागरु पाइअउ दितु हरि मगि न हुटै। संजमु सतु संतोखु सील संनाहु मफुटै। सतिगुरु प्रमाणु बिध नै सिरिउ जगि जस तूरु बजाइअउ। गुर रामदास कल्युचरै तै अभै अमर पदु पाइअउ ।। ६ ।।

(गुरु रामदास ने) ख़ाली सरोवरों को भर देने में समर्थ परमात्मा को पाया है और उसे हृदय में धारण किया है। दुःखों को दूर करनेवाले, आत्मा को जागृति प्रदान करनेवाले प्रभु को (गुरु रामदास ने) मन में सदा विचारा (स्मरण किया) है। उन्हें (गुरु रामदास को) सदा उल्लास बना रहता है, हरि के प्यार में वे स्वयं ही उस रस का आस्वादन जानते हैं। सतिगुरु (गुरु अमरदास) की कृपा से वे (गुरु रामदास) नित्य सहजावस्था में ख़ुशियाँ मनाते हैं। कवि कलसहार कहता है कि गुरु नानक की कृपा तथा गुरु अंगद की सम्पत्ति से गुरु अमरदास की आज्ञा है कि गुरु रामदास अब अटल परमपद को पा गए हैं ।। ५ ।। (गुरु रामदास) सन्तोष के सरोवर में निवास करते हैं, अपनी जिह्वा से अमृत-रस प्रकट करते हैं, उनके दर्शनों से शांति उपजती है और पाप दूर से ही नष्ट हो जाते

हैं। विचारपूर्वक (गुरु रामदास ने) सुख-सागर परमात्मा को प्राप्त किया है, (इसीलिए) वे हरि-पथ से कभी विचलित नहीं होते। उनके संयम, सत्य, संतोष, शील आदि गुण कभी शेष नहीं होते। परमात्मा ने गुरु रामदास को उनके गुरु (अमरदास) के ही समान बनाया है, संसार में उनके यश की तुरी बजती है। कलसहार कहता है कि हे गुरु रामदास, तुमने हरि के समान अमरपद प्राप्त किया है ॥ ६ ॥

जगु जितउ सतिगुर प्रमाणि मनि एकु धिआयउ। धनि धनि सतिगुर अमरदासु जिनि नामु द्रिड़ायउ। नवनिधि नामु निधानु रिधि सिधि ता की दासी। सहज सरोवरु मिलिओ पुरखु भेटिओ अबिनासी। आदि ले भगत जितु लगि तरे सो गुरि नामु द्रिड़ाइअउ। गुर रामदास कल्युचरै तै हरि प्रेम पदारथु पाइअउ ॥ ७ ॥ प्रेम भगति परवाह प्रीति पुबली न हुटइ। सतिगुर सबदु अथाहु अमिअ धारा रसु गुटइ। मति माता संतोखु पिता सरि सहज समायउ। आजोनी संभविअउ जगतु गुर बचनि तरायउ। अबिगत अगोचरु अपर परु मनि गुर सबदु वसाइअउ। गुर रामदास कल्युचरै तै जगत उधारणु पाइअउ ॥ ८ ॥

जिस (गुरु रामदास) ने अपने गुरु के समान (गुरु अमरदास के समान) संसार को जीत लिया है और मन में एक प्रभु का ही ध्यान किया है। गुरु अमरदास धन्य हैं, जिन्होंने (गुरु रामदास को) प्रभु-नाम का दृढ़ सिमरन करवाया है। (उसे गुरु रामदास को) हरिनाम के ख़ज़ाने के तौर पर नौ निधियाँ प्राप्त हैं, ऋद्धि-सिद्धियाँ उनकी दासियाँ हैं, वे सहजावस्था में एकाग्र रहते हैं और उन्होंने अविनाशी पुरुष परमात्मा को पाया है। आज तक भक्तजन जिस आश्रय से तरे हैं, वही हरिनाम गुरु ने (अमरदास) तुम्हें (रामदास को) दृढ़ करवाया है। कलसहार कहता है कि हे गुरु रामदास, तुमने हरि-प्रेम रूपी अमूल्य पदार्थ प्राप्त किया है ॥ ७ ॥ प्रेम-भक्ति का प्रवाह एवं पूर्वजन्म की प्रीति कभी नहीं टूटती। गुरु रामदास के पास गुरु अमरदास का अथाह और अमर उपदेश है, जिसके कारण वे नित्य नामामृत-रस-धाराओं को गट-गट पीते और स्वाद में उन्मत्त रहते हैं। (गुरु रामदास) विवेक और सन्तोष सरीखे ऊँचे गुणों में जन्मे-पले हैं (बुद्धि इनकी माता है, सन्तोष पिता) और पूर्णस्थिर अवस्थावाले सरोवर में नित्य समाधिस्थ रहते हैं। आप अजूनी एवं स्वयम्भू हो, आपने संसार को प्रभु-शब्द द्वारा तार दिया है। अपने मन में आपने (गुरु रामदास ने) अविगत, अगोचर एवं अपरम्पर गुरु का शब्द बसा रखा है। कलसहार कहता है

कि हे गुरु रामदास, तुमने जगत का उद्धार करनेवाला परमात्मा पा लिया है ।। ८ ।।

जगत उधारणु नव निधानु भगतह भवतारणु । अंम्रित बूंद हरिनामु बिसु की बिखै निवारणु । सहज तरोवर फलिओ गिआन अंम्रित फल लागे । गुर प्रसादि पाईअहि धंनि ते जन बडभागे । ते मुकते भए सतिगुर सबदि मनि गुर परचा पाइअउ । गुर रामदास कल्यचरै तै सबद नीसानु बजाइअउ ।। ६ ।। सेज सधा सहजु छावाणु संतोखु सराइचउ सदा सील संनाहु सोहै । गुर सबदि समाचरिओ नामु टेक संगादि बोहै । आजोनीउ भल्यु अमलु सतिगुर संगि निवासु । गुर रामदास कल्युचरै तुअ सहज सरोवरि बासु ।। १० ।।

जगत के उद्धार के लिए, नौ-निधि-कोष, भक्तों को भव से मुक्त करनेवाले परम हरिनाम की अमृत-बूंद (गुरु रामदास के पास है) संसार के समूचे विष को दूर करती है । सहज (तुरीया पद) का पेड़ फला है, इस पर ज्ञान का फल लगा है । जो लोग गुरु की कृपा से इस फल को पा लेते हैं, वे भाग्यशाली हैं । वे सेवक सतिगुरु के शब्द पर आचरण करते हुए मन में गुरु से ऐक्य पाकर मुक्त हो जाते हैं । कलसहार कहता है कि उक्त ब्रह्म-शब्द का डंका गुरु रामदास ने ही बजाया है ।। ९ ।। (गुरु रामदास ने परमात्मा के लिए) श्रद्धा की सेज बिछाई है, हृदय का स्थायी शामिआना खड़ा किया है, उसके गिर्द सन्तोष की क़नातें लगी हैं और सदैव शील स्वभाव का वहाँ पहरा बिठाया है । (वहाँ बैठकर) गुरु के उपदेश द्वारा हरिनाम की कमाई की है और गुरु का सहारा आपके साथियों को भी सुगंधित कर रहा है (अर्थात् वे भी गुरु की शरण लेने लगे हैं) । तुम (हे गुरु रामदास) अयोनि, उत्तम, निर्मल तथा सतिगुरु की संगति में रहने वाले हो । कलसहार कहता है कि आत्मिक स्थिरता के सरोवर में तुम्हारा निवास है ।। १० ।।

गुरु जिन कउ सु प्रसंनु नामु हरि रिदै निवासै । जिन्ह कउ गुरु सु प्रसंनु दुरतु दूरंतरि नासै । गुरु जिन्ह कउ सु प्रसंनु मानु अभिमानु निवारै । जिन्ह कउ गुरु सु प्रसंनु सबदि लगि भवजलु तारै । परचउ प्रमाणु गुर पाइअउ तिन सकयथउ जनमु जगि । स्री गुरू सरणि भजु कल्य कबि भुगति मुकति सभ गुरू लगि ।। ११ ।। सतिगुरि खेमा ताणिआ जुग जूथ

समाणे। अनभउ नेजा नामु टेक जितु भगत अघाणे। गुरु नानकु अंगदु अमरु भगत हरि संगि समाणे। इहु राज जोग गुर रामदास तुम्ह हू रसु जाणे ॥ १२ ॥ जनकु सोइ जिनि जाणिआ उनमनि रथु धरिआ। सतु संतोखु समाचरे अभरा सरु भरिआ। अकथ कथा अमरा पुरी जिसु देइ सु पावै। इहु जनक राजु गुर रामदास तुझ ही बणिआवै ॥ १३ ॥

जिन सेवकों पर गुरु संतुष्ट होता है, उनके हृदय में परमात्मा का नाम बसा देता है। जिन पर गुरु की प्रसन्नता है, पाप उन्हें देखकर दूर से ही भागते हैं। जिन पर गुरु की कृपा होती है, उनका मान-अभिमान वह दूर कर देता है; जिन पर सतिगुरु का वरद हस्त है, वे शब्द-संतरण में बैठ कर भव-सागर से पार हो जाते हैं। जगत में जिन्होंने प्रमाणित गुरु (गुरु रामदास) से उपदेश पाया है, उनका जन्म सफल हो गया। कवि कलसहार कहता है कि ऐ जीव, तुम भी श्री गुरु रामदास की शरण लो, भुक्ति एवं मुक्ति सब उसी के चरणों में प्राप्य है ॥ ११ ॥ सतिगुरु (रामदास) ने चँदोआ लगाया है, युग-युग के दुखियों के समूह उसकी छाया में समा रहे हैं। उसके (गुरु रामदास के) हाथ में ज्ञान का भाला है, मन में हरिनाम का आसरा है, जिसके कारण सब भक्त संतोष-लाभ कर रहे हैं। (हरिनाम के सहारे) गुरु नानक, गुरु अंगद, गुरु अमरदास तथा अन्य भक्तजन परब्रह्म में लीन हो गए हैं। हे गुरु रामदास, इस राजयोग का सही रस तुम्हीं जानते हो ॥ १२ ॥ सच्चा भक्त वह है जिसने परमात्मा को जान लिया है, अपनी मनोवृत्ति को स्थिर कर लिया है; सत्य-सन्तोष का आचरण करता है और जिसने नित्य असन्तुष्ट रहनेवाले मन को संयत कर लिया है। यह अवर्णनीय निश्चल अवस्था उसी को प्राप्त होती है, जिसे परमात्मा स्वयं देता है। हे गुरु रामदास, इस प्रकार का जन का (भक्त का) राज्य तुम्हें ही सुशोभित होता है अर्थात् तुम्हीं ऐसे परम भक्त कहलाने के अधिकारी हो ॥ १३ ॥ (यहाँ कलसहार के १३ सवैये पूरे हुए।)

सतिगुर नामु एक लिव मनि जपै द्रिढ़ु तिन्ह जन दुख पापु कहु कत होवै जीउ। तारण तरण खिन मात्र जाकउ द्रिस्टि धारै सबदु रिद बीचारै कामु क्रोधु खोवै जीउ। जीअन सभन दाता अगम ग्यान बिख्याता अहि निसि ध्यान धावै पलक न सोवै जीउ। जाकउ देखत दरिद्रु जावै नामु सो निधानु पावै गुरमुखि ग्यानि दुरमति मैलु धोवै जीउ। सतिगुर नामु एक लिव मनि जपै द्रिढ़ु तिन जन दुख पाप कहु कत होवै जीउ ॥ १ ॥ धरम करम

पूरै सतिगुरु पाई है। जाकी सेवा सिध साध मुनि जन सुरि नर जाचहि सबद सारु एक लिव लाई है। फुनि जानै को तेरा अपारु निरभउ निरंकारु अकथ कथनहारु तुझहि बुझाई है। भरम भूले संसार छुटहु जूनी संघार जम को न डंड काल गुरमति ध्याईहै। मन प्राणी मुगध बीचारु अहिनिसि जपु धरम करम पूरै सतिगुरु पाईहै ॥ २ ॥

जो मनुष्य दृढ़ चित्त से एकाग्रवृत्ति होकर सतिगुरु का नाम जपता है, भला उस व्यक्ति को दुःख-पाप क्योंकर छू सकते हैं ? वह भवसागर तरने के जहाज़-समान सतिगुरु जिस पर क्षण-भर भी कृपा-दृष्टि डालता है, वह परमात्मा को हुकुम को मन में धारण करता तथा काम-क्रोधादि से मुक्त हो जाता है। वह सतिगुरु (रामदास) समस्त जीवों का दाता है, अगम ज्ञान का व्याख्याता है, रात-दिन वह प्रभु के ध्यान में लीन रहता है, पल-भर ही असावधान नहीं होता। जिसके दर्शन मात्र से दरिद्रता दूर होती है, हरिनाम का ख़ज़ाना प्राप्त होता है। गुरुमुख जीव उसके दिए ज्ञान-जल से दुर्मति रूपी मैल धो डालते हैं। ऐसे सतिगुरु रामदास का नाम दृढ़ चित्त से एकाग्रवृत्ति होकर जो जपता है, भला उस व्यक्ति को दुःख-पाप क्योंकर छू सकते हैं ॥ १ ॥ पूरे सतिगुरु (रामदास) से भेंट होने पर समस्त धर्म-कर्म सम्पन्न हो जाते हैं, सिद्ध, साधक, मुनिजन, देवता और मनुष्य सब जिसकी सेवा की याचना करते हैं और जिसने वाहिगुरु के शब्द में अपनी वृत्ति एकाग्र कर रखी है। पुनः (हे रामदास) कौन तुम्हारा भेद पा सकता है ? तुम अपार, निर्भय और मायातीत हो। अकथनीय ब्रह्मज्ञान का कथन करने का सामर्थ्य तुम्हीं में है। ऐ भ्रम में पड़े हुए संसार, गुरु रामदास की मति (ज्ञान-उपदेश) पाकर (प्रभु-नाम स्मरण द्वारा) जन्म-मरण से छूटोगे और यमदूतों की सज़ा से बच जाओगे। हे मुग्ध प्राणी, मन में ध्यानपूर्वक विचार करके देखो कि रात-दिन प्रभु-नाम जपने एवं सतिगुरु-मिलाप से ही समस्त धर्म-कर्म सम्पन्न हो जाते हैं ॥ २ ॥

हउ बलि बलि जाउ सतिगुर साचे नाम पर। कवन उपमा देउ कवन सेवा सरेउ एक मुख रसना रसहु जुग जोरि कर। फुनि मन बच क्रम जानु अनत दूजा न मानु नामु सो अपारु सारु दीनो गुरि रिद धर। नल्य कवि पारस परस कच कंचना हुइ चंदना सुबासु जासु सिमरत अनतर। जा के देखत दुआरे काम क्रोध ही निवारे जी हउ बलि बलि जाउ सतिगुर साचे नाम पर ॥ ३ ॥ राजु जोगु तखतु दीअनु गुर रामदास। प्रथमे

नानक चंदु जगत भयो आनंदु तारनि मनुख्य जन कीअउ प्रगास। गुर अंगद दीअउ निधानु अकथ कथा गिआनु पंच भूत बसि कीने जमत न त्रास। गुर अमरु गुरू स्री सति कलिजुग राखी पति अघन देखत गतु चरन कवल जास। सभ बिधि मान्यिउ मनु तब ही भयउ प्रसंनु राजु जोगु तखतु दीअनु गुर रामदास ॥ ४ ॥

मैं अपने प्यारे सच्चे सतिगुरु (गुरु रामदास) के नाम पर क़ुर्बान जाता हूँ। मैं उसे क्या उपमा दूँ (वह निरुपम है), उसकी क्या सेवा करूँ? केवल दोनों हाथ जोड़कर मुख में जीभ से उसका नाम-रस ही ले पाता हूँ। पुनः, मन, वचन, कर्म से उसकी सता स्वीकारता हूँ, किसी दूसरे का महत्त्व नहीं मानता। मेरे गुरु (रामदास) ने हरिनाम जैसी अपार सम्पदा मेरे हृदय में स्थित कर दी है। नल्ह कवि कहता है कि वह (गुरु रामदास रूपी) पारस को छूकर कंचन हो गया है, जैसे चन्दन को छूकर अन्य पेड़ सुवासित हो जाते हैं। जिस (परमगुरु रामदास) के द्वार का दर्शन करने से भी काम, क्रोधादि दूर हो जाते हैं, उसी सतिगुरु के नाम पर मैं पुनःपुनः क़ुर्बान हूँ ॥ ३ ॥ परमात्मा ने स्वयं गुरु रामदास को राजयोग के सिंहासन पर बिठाया है। सर्वप्रथम गुरु नानक चन्द्र के समान प्रकट हुए, जिससे जगत को आनन्द हुआ; उन्होंने मनुष्यों को तारने के लिए चाँदनी का प्रकाश किया। पुनः गुरु अंगद नौ-निधि बनकर आए, उन्होंने अकथनीय ज्ञान का गान किया, पाँचों विकारों को वश करके यमदूतों के त्रास से सबको मुक्ति दिलाई। फिर गुरु अमरदास ने श्री सत्यस्वरूप को पहचाना और कलियुग में जन की लाज रखी। उनके चरण-कमल को देखकर ही सेवकों के पाप दूर हो गए। सब प्रकार से जब (गुरु अमरदास के) मन को विश्वास हो गया, तब वे सन्तुष्ट हुए और उन्होंने गुरु रामदास को राजयोग के सिंहासन पर बिठाया ॥ ४ ॥

॥ रड ॥ जिसहि धार्यिउ धरति अरु विउमु अरु पवणु ते नीर सर अवर अनल अनादि कीअउ। ससि रिखि निसि सूर दिनि सैल तरूअ फल फुल दीअउ। सुरि नर सपत समुद्र किअ धारिओ त्रिभवण जासु। सोई एकु नामु हरिनामु सति पाइओ गुर अमर प्रगासु ॥ १ ॥ ५ ॥ कचहु कंचनु भइअउ सबदु गुर स्रवणहि सुणिओ। बिखु ते अंम्रितु हुयउ नामु सतिगुर मुखि भणिअउ। लोहउ होयउ लालु नदरि सतिगुरु जदि धारै। पाहण माणक करै गिआनु गुर कहिअउ बीचारै। काठहु स्रीखंड

सतिगुरि कीअउ दुख दरिद्र तिन के गइअ। सतिगुरू चरन जिन्ह परसिआ से पसु परेत सुरि नर भइअ ॥ २ ॥ ६ ॥

जिस परब्रह्म ने धरती और व्योम को धारण किया है; पवन, जल, सरोवर, पवन तथा अन्नादि बनाए हैं, रात्रि में चन्द्र और सितारे एवं दिन में सूर्य चढ़ता है; पर्वत बनाए हैं तथा पेड़ों में फल-फूल दिए हैं। जिसने सुर, नर, सातों सागर बनाए हैं और त्रिभुवन को सहारा दे रखा है, उसी सत्यस्वरूप हरि का सच्चा नाम (गुरु रामदास का) अपने गुरु (अमरदास) से प्राप्त हुआ है ॥ १ ॥ ५ ॥ गुरु का उपदेश कानों से सुननेवाला मानो काँच से कंचन हो जाता है, और सतिगुरु का पावन नाम मुख से उच्चारण करनेवाला मानो विष से अमृत हो जाता है। सच्चे गुरु की कृपा-दृष्टि पड़ते ही सेवक लोहे से लाल हो जाता है और गुरु-शब्द को विचारकर ज्ञानोपार्जन करनेवाला जीव पत्थर से माणिक्य हो जाता है। वे लोग साधारण लकड़ी से सुवासित चन्दन हो गए हैं, उनके सब दुःख-दरिद्र दूर हुए हैं, जिन्होंने सतिगुरु (गुरु रामदास) के चरण छुए हैं, वे पशु-प्रेत आदि योनियों से देवता और मनुष्य बन गए हैं ॥ २ ॥ ६ ॥

जामि गुरू होइ वलि धनहि किआ गारवु दिजइ। जामि गुरू होइ वलि लख बाहे किआ किजइ। जामि गुरू होइ वलि गिआन अरु धिआन अनन परि। जामि गुरू होइ वलि सबदु साखी सु सचह घरि। जो गुरू गुरू अहिनिसि जपै दासु भटु बेनति कहै। जो गुरू नामु रिद महि धरै सो जनम मरण दुह थे रहै ॥ ३ ॥ ७ ॥ गुर बिनु घोरु अंधारु गुरू बिनु समझ न आवै। गुर बिनु सुरति न सिधि गुरू बिनु मुकति न पावै। गुरु करु सचु बीचारु गुरू करु रे मन मेरे। गुरु करु सबद सपुंन अघन कटहि सभ तेरे। गुरु नयणि बयणि गुरु गुरु करहु गुरू सति कवि नल कहि। जिनि गुरू न देखिअउ नहु कीअउ ते अकयथ संसार महि ॥ ४ ॥ ८ ॥

जब सतिगुरु (गुरु रामदास) किसी के पक्ष में होता है तो धन भी उसे गर्वित नहीं करता, और जब गुरु किसी के पक्ष में हो तो लाखों बाहें (सेनाएँ) भी उसका क्या बिगाड़ सकती हैं ? गुरु रामदास जिसके पक्ष में हों, वह ज्ञान और ध्यान प्राप्त कर लेने पर अन्य सब त्याग देता है; गुरु के पक्ष में होने पर जीव को शब्द-ब्रह्म का साक्षात् होता एवं उसे प्रभु-दरबार में स्थिरता मिलती है। दास नल्ह भाट विनती करता है कि रात-दिन गुरु-गुरु जपनेवाला तथा गुरु का नाम हृदय में धारण करनेवाला जन्म

और मरण, दोनों से सुरक्षित रहता है ॥ ३ ॥ ७ ॥ गुरु (गुरु रामदास) के बिना संसार में घोर अज्ञानान्धकार छाया है, गुरु के बिना कुछ समझ नहीं पड़ती, गुरु के बिना आत्मा की सिद्धि नहीं और गुरु के बिना किसी की मुक्ति नहीं। इसलिए, ऐ मेरे मन, तुम भी सतिगुरु (गुरु रामदास) की शरण लो, यही सच्चा विवेक है। गुरु की शरण लेने से जीव शब्द-सम्पन्न होता है एवं उसके सब पाप कट जाते हैं। गुरु को नयनों में धरो, वचन से गुरु-गुरु का उच्चारण करो, नल्ह कवि कहता है कि गुरु ही एक-मात्र सत्य है। जिन्होंने गुरु की शरण नहीं ली, न ही उसके दर्शन किए, उनका संसार में जन्म लेना ही व्यर्थ है ॥ ४ ॥ ८ ॥

गुरू गुरू गुरु करु मन मेरे। तारण तरण समथु कलजुगि सुनत समाधि सबद जिसु केरे। फुनि दुखनि नासु सुखदायकु सूरउ जो धरत धिआनु बसत तिह नेरे। पूरउ पुरखु रिदै हरि सिमरत मुखु देखत अघ जाहि परेरे। जउ हरि बुधि रिधि सिधि चाहत गुरू गुरू गुरु करु मन मेरे ॥ ५ ॥ ९ ॥ गुरू मुखु देखि गरू सुखु पायो। हुती जु पिआस पिऊस पिवंन की बंछत सिधि कउ बिधि मिलायउ। पूरन भो मन ठउर बसो रस बासन सिउ जु दहंदिसि धायउ। गोबिंदवालु गोबिंद पुरी सम जल्यन तीरि बिपास बनायउ। गयउ दुखु दूरि बरखन को सु गुरू मुखु देखि गरू सुखु पायउ ॥ ६ ॥ १० ॥

ऐ मेरे मन, गुरु-गुरु-नाम (गुरु रामदास का स्मरण) जपो, वही कलियुग में मुक्ति-दाता और सर्वांग समर्थ है। गुरु की वाणी सुनने-मात्र से जीव समाधिस्थ हो जाता है। पुनः जीव के दुःख नाश हो जाते हैं और सुख देनेवाले सूर्य का उदय होता है। जो ऐसे सतिगुरु (रामदास) का ध्यान करता है, वह नित्य उसके अंग-संग रहता है। वह पूर्णपुरुष है और सदैव हृदय में हरि-प्रभु का सिमरन करता है। उसका दर्शन करने से सब पाप दूर हो जाते हैं। कवि कहता है कि ऐ जीव, यदि तुम्हें परमात्मा को प्राप्त करना हो एवं बुद्धि-विवेक, रिद्धि-सिद्धि आदि की चाहत हो, तो नित्य गुरु-गुरु-नाम जपा करो ॥ ५ ॥ ९ ॥ अपने गुरु (अमरदास) के दर्शन पाकर (गुरु रामदास को) बड़ा सुख प्राप्त किया है। (हरि-नाम रूपी) पीयूष (अमृत) पीने की जो अभिलाषा थी, परमात्मा ने उस मनोवांछा की सिद्धि के लिए गुरु मिला दिया है। सांसारिक रसों एवं वासनाओं से प्रताड़ित हुआ जो मन दसों दिशाओं में भागा फिरता था, अब (गुरु-मिलन से) पूर्ण होकर स्थिर हो गया है। जिस सतिगुरु (अमरदास) ने व्यास नदी के जल के किनारे स्वर्ग-सम गोबिंदवाल नगरी

बसाई है, उसका मुख देखकर (दर्शन करके, गुरु रामदास ने) 'गरुआ' सुख प्राप्त किया है, मानो वर्षों के दुःख मिट गए हैं ॥ ६ ॥ १० ॥

समरथ गुरू सिरि हथु धरिअउ । गुरि कीनी क्रिपा हरि नामु दीअउ जिसु देखि चरंन अघंन हर्यंउ । निसि बासुर एक समान धिआन सु नाम सुने सुतु भान डर्यंउ । भनि दास सु आस जगत्र गुरू की पारसु भेटि परसु कर्यंउ । रामदासु गुरू हरि सति कीयउ समरथ गुरू सिरि हथु धर्यंउ ॥ ७ ॥ ११ ॥ अब राखहु दास भाट की लाज । जैसी राखी लाज भगत प्रहिलाद की हरनाखस फारे कर आज । फुनि द्रोपती लाज रखी हरि प्रभ जी छीनत बसत्र दीन बहु साज । सोदामा अपदा ते राखिआ गनिका पढ़त पूरे तिह काज । स्री सतिगुर सुप्रसंन कलजुग होइ राखहु दास भाट की लाज ॥ ८ ॥ १२ ॥

समर्थ गुरु (अमरदास) ने उनके (गुरु रामदास के) सिर हाथ रखा है (शिष्य बनाया है), कृपा करके उन्हें परमात्मा का नाम दिया है। (अब) उनके चरणों के दर्शन करने मात्र से ही पाप नष्ट हो जाते हैं। वे रात-दिन एक प्रभु के ध्यान में रहते हैं, उनका नाम सुनकर सूर्य-पुत्र यमराज भी डरता है। दास नल्ह कवि कहता है, मुझे भी उसी जगद्-गुरु की आशा है, वह पारस (अमरदास) को भेंट कर स्वयं पारस (रामदास) हो गया है। गुरु रामदास ने परमात्मा के सत्य को अपनाया है, क्योंकि समर्थ गुरु अमदास ने उनके सिर पर हाथ रखा है। (संरक्षण प्रदान किया है) ॥ ७ ॥ ११ ॥ हे गुरुदेव, अब दास नल्ह भाट की लाज उसी प्रकार रख लीजिए, जैसे भक्त प्रह्लाद की लाज रखी थी और हिरण्यकशिपु को हाथों के नाख़ूनों से चीर दिया था। पुनः, हे प्रभु, तुमने द्रौपदी की लाज रखी और छिनता वस्त्र बहुत करके उसे दिया। सुदामा को विपत्तियों से उबारा था और गणिका तोता पढ़ाते-पढ़ाते ही मुक्त हो गई थी। कलियुग में सतिगुरु (रामदास) की सुप्रसन्नता में ही दास भाट (नल्ह) की लाज निहित है ॥ ८ ॥ १२ ॥

॥ झोलना ॥ गुरू गुरु गुरू गुरु गुरू जपु प्रानीअहु । सबदु हरि हरि जपै नामु नवनिधि अपै रसनि अहिनिसि रसै सति करि जानीअहु । फुनि प्रेम रंग पाईऐ गुरमुखहि धिआईऐ अंन मारग तजहु भजहु हरि ग्यानीअहु । बचन गुर रिदि धरहु पंच भू बसि करहु जनमु कुल उधरहु द्वारि हरि मानीअहु । जउ त सभ सुख

इत उत तुम बंछवहु गुरू गुरु गुरू गुरु गुरू जपु प्रानीअहु ॥१॥१३॥ गुरू गुरु गुरू गुरु गुरू जपि सति करि । अगम गुन जानु निधानु हरि मनि धरहु ध्यानु अहिनिसि करहु बचन गुर रिदै धरि । फुनि गुरू जल बिमल अथाह मजनु करहु संत गुरसिख तरहु नाम सच रंग सरि । सदा निरवैरु निरंकारु निरभउ जपै प्रेम गुर सबद रसि करत द्रिड़ु भगति हरि । मुगध मन भ्रमु तजहु नामु गुरमुखि भजहु गुरू गुरु गुरू गुरु गुरू जपु सति करि ॥ २ ॥ १४ ॥

ऐ प्राणियो, गुरु-गुरु-नाम जपो । (वह भी) हरि-हरि-नाम जपता और शरण में आनेवाले को हरिनाम का खज़ाना प्रदान करता है । सच मानो वह (गुरु रामदास) नित्य रात-दिन जीभ से प्रभु-नाम जपकर रस-सिक्त रहता है । पुनः, उस गुरु से उपदेश पाकर प्रेम-रंग में विभोर होते हैं । हे हरि का ज्ञान पानेवालो, अन्य सब सहारों को छोड़कर केवल हरि का नाम जपो । गुरु (रामदास) के वचनों को हृदय में धारण करो, पाँचों विकारों को वश में कर सकोगे । (ऐसा करने से) मनुष्य-जन्म एवं समूचे वंश का कल्याण होगा तथा परमात्मा के द्वार पर प्रतिष्ठा प्राप्त होगी । यदि तुम इहलोक और परलोक के सभी सुखों की वांछा रखते हो, तो ऐ प्राणियो (गुरु रामदास का नाम), सदा गुरु-गुरु जपो ॥१॥१३॥ ऐ सन्तजनो, नित्य गुरु-गुरु-नाम जपो । गुरु के नाम को सत्य मानकर जपो । हरि में अगम और अनन्य गुणों को पहचानकर उसे मन में धारण करो । रात-दिन उसका ध्यान करो और गुरु-आज्ञा का पालन करो । पुनः गुरु (रामदास) अथाह निर्मल जल का समुद्र है, उसमें स्नान करो । प्रभु के सच्चे नाम रूपी सरोवर में, ऐ गुरु के शिष्यो, प्रेम-पूर्वक तैराकी करो । (जो गुरु रामदास) नित्य निर्भय, निर्वैर और मायातीत ओंकार को जपते हैं; सतिगुरु के शब्द के प्रेम और आनन्द में प्रभु की भक्ति दृढ़ाते हैं; हे मुग्ध मन, उसी गुरु (रामदास) से हरिनाम पाकर तथा भ्रम की टाटी तोड़कर, तुम परमात्मा का भजन करो और गुरु-नाम को सत्य मानकर नित्य जपते रहो ॥ २ ॥ १४ ॥

गुरू गुरु गुरु करहु गुरू हरि पाईऐ । उदधि गुरु गहिर गंभीर बेअंतु हरिनाम नग हीर मणि मिलत लिव लाईऐ । फुनि गुरू परमल सरस करत कंचनु परस मैलु दुरमति हिरत सबदि गुरु ध्याईऐ । अम्रित परवाह छुटकंत सद द्वारि जिसु ग्यान गुर बिमल सर संत सिख नाईऐ । नामु निरबाणु निधानु हरि उरि धरहु गुरू गुरु गुरु करहु गुरू हरि पाईऐ ॥ ३ ॥ १५ ॥ गुरू

गुरु गुरू गुरु गुरू जपु मंन रे। जाकी सेव सिव सिध साधिक सुर असुर गण तरहि तेतीस गुर बचन सुणि कंन रे। फुनि तरहि ते संत हित भगत गुरु गुरु करहि तरिओ प्रहलादु गुर मिलत मुनि जंन रे। तरहि नारदादि सनकादि हरि गुरमुखहि तरहि इक नाम लगि तजहु रस अंन रे। दासु बेनति कहै नामु गुरमुखि लहै गुरू गुरु गुरू गुरु गुरू जपु मंन रे ॥ ४ ॥ १६ ॥ २९ ॥

ऐ जीवो, गुरु-गुरु नाम जपो। गुरु से ही हरि-प्रभु की प्राप्ति होती है। गुरु गहन अनन्त सागर की तरह गम्भीर है। इसमें ग़ोता लगाने से (लीन होने से) परमात्मा रूपी मोती, मणियाँ प्राप्त होती हैं। पुनः, गुरु सरस सुगंधि है (निकट आनेवाले को सुवासित करता है), पारस की तरह इससे छू जानेवाला कंचन हो जाता है। शब्द गुरु का ध्यान करने से समस्त दुर्मति रूपी मलिनता दूर हो जाती है। जिस गुरु के (रामदास के) द्वार पर नित्य अमृत का स्रोत फूटा करता है, जिस गुरु के ज्ञान रूपी निर्मल जलाशय में सन्तजन स्नान करते हैं। उसी गुरु (रामदास) के माध्यम से निर्वाण-दाता, नौ-निध-सम्पन्न परमात्मा का नाम हृदय में धारण करो। गुरु-गुरु-नाम जपो, गुरु से ही हरि प्राप्त होता है ॥ ३ ॥ १५ ॥ ऐ मन, गुरु-गुरु-नाम जपो। सब सिद्ध, साधक, शिवजी, देव-दैत्यगण गुरु की ही सेवा में लीन हैं, कानों से गुरु का उपदेश सुनकर तेंतीस करोड़ देवता भी मुक्त हो जाते हैं। पुनः जो सन्तजन तथा भक्तजन नित्य गुरु-गुरु-नाम पारायण करते हैं, वे प्रह्लाद के समान तिर जाते हैं तथा अन्य अनेक मुनिजनों की तरह गुरु-मिलन में (मुक्ति पा लेते हैं)। नारद, सनक-सनन्दनादि हरि रूपी गुरु के ही माध्यम से मोक्ष पा गए हैं, अन्य सब रस-भोगों का त्याग कर एक-मात्र हरिनाम-रस में लीन रहते हुए वे मुक्त हुए। दास नल्ह कवि की विनती है कि हरिनाम का स्रोत गुरु (रामदास) है, अतः ऐ मन, नित्य गुरु-गुरु-नाम जपा करो ॥ ४ ॥ १६ ॥ २९ ॥ (यहाँ नल्ह भाट के १६ सवैये समाप्त हुए, कुल २९ हुए।)

सिरी गुरू साहिबु सभ ऊपरि करी क्रिपा सतजुगि जिनि ध्रू परि। स्री प्रहलाद भगत उधरीअं हस्त कमल माथे पर धरीअं। अलख रूप जीअ लख्या न जाई। साधिक सिध सगल सरणाई। गुर के बचन सति जीअ धारहु। माणस जनमु देह निस्तारहु। गुरु जहाजु खेवटु गुरू गुर बिनु तरिआ न कोइ। गुरप्रसादि प्रभु पाईऐ गुर बिनु मुकति न होइ। गुरु नानकु निकटि बसै बनवारी। तिनि लहणा थापि जोति

जगि धारो। लहणै पंथु धरम का कीआ। अमरदास भले कउ दीआ। तिनि स्री रामदासु सोढी थिरु थप्यउ। हरि का नामु अखै निधि अप्यउ। अप्यउ हरि नामु अखै निधि चहु जुगि गुर सेवा करि फलु लहीअं। बंदहि जो चरण सरणि सुखु पावहि परमानंद गुरमुखि कहीअं। परतखि देह पारब्रहमु सुआमी आदि रूपि पोखण भरणं। सतिगुरु गुरु सेवि अलख गति जाकी स्री रामदासु तारण तरणं ।। १ ।। जिह अंम्रित बचन बाणी साधू जन जपहि करि बिचिति चाओ। आनंदु नित मंगलु गुर दरसनु सफलु संसारि। संसारि सफलु गंगा गुर दरसनु परसन परम पवित्र गते। जीतहि जम लोकु पतित जे प्राणी हरिजन सिव गुर ग्यानि रते। रघुबंसि तिलकु सुंदरु दसरथ घरि मुनि बंछहि जाकी सरणं। सतिगुरु गुरु सेवि अलख गति जा की स्री रामदासु तारण तरणं ।। २ ।।

जिस गुरु (रामदास) ने सतयुग में ध्रुव भक्त तथा प्रह्लाद भक्त का उद्धार किया था, उनके माथे हस्त-कमल रखकर उन्हें संरक्षण दिया था, उस गुरु ने समस्त जीवों पर कृपा की है। अलक्ष्य प्रभु के रूप (गुरु रामदास को) कोई परख नहीं सकता; सब साधक, सिद्धादि उसकी शरण लेते हैं। हे जीव, गुरु के वचन सत्य जानकर हृदय में स्थिर करो और (इस प्रकार) अपने मनुष्य-जन्म तथा देह का निस्तार कर लो। गुरु जहाज़ है, जहाज़ का मल्लाह भी गुरु ही है, गुरु के बिना आज तक कोई भवसागर से तिर नहीं पाया। गुरु की कृपा से ही परमात्मा मिलता है, गुरु बिना मुक्ति सम्भव नहीं है। गुरु नानक वाहिगुरु के निकट बसते थे, उन्होंने भाई लहणा को स्थिर करके संसार में आध्यात्मिक ज्योति जलाई। भाई लहणा ने (गुरु अंगद ने) धर्म की राह चलाई और अमरदास भल्ला को उत्तराधिकारी बनाया। उन्होंने रामदास सोढी को सिंहासन पर स्थित किया और उसे अक्षय निधि हरिनाम का दान दिया। उन्होंने आगे (गुरु रामदास ने) हरिनाम के अक्षय कोष चारों दिशाओं में बाँट दिया। जिन जीवों ने उस गुरु की सेवा की है, उन्हें फल प्राप्त हुआ है। जो उसके चरणों की वंदना करते हैं, वे शरण में सुख प्राप्त करते, परमानन्द पाते हैं और गुरमुख कहलाते हैं। वह (गुरु रामदास) प्रत्यक्ष देहधारी परब्रह्म परमात्मा है, (जोकि मूलतः) आदिरूप है, सबका पोषक है। अतः ऐ लोगो, उस परमगुरु (रामदास) की सेवा में तल्लीन रहो, जिसकी गति अलक्ष्य है और जो मुक्ति का जहाज़ है ।।१।। जिस गुरु (रामदास) के वचनामृत एवं वाणी को सन्तजन स्थिर-चित्त होकर जपते और पारायण

करते हैं, उसके पुनीत दर्शन से नित्य कल्याण होता एवं जन्म सफल हो जाता है। संसार में सच्चे गुरु का दर्शन गंगा की तरह पावन फल-दायी है; उसका (गुरु रामदास का) स्पर्श परमपवित्र गतिदायक है, पतित प्राणी भी (उस गुरु के दर्शनों से) यमलोक को जीत लेते हैं। समस्त हरिजन कल्याण रूपी गुरु का गुण गाते हैं। (यही गुरु रामदास त्रेता में) दशरथ के घर रघुवंश-तिलक सुन्दर राम के रूप में अवतरित हुए थे, जिनकी शरण समस्त मुनिजनों को प्रिय थी। अतः ऐ लोगो, सतिगुरु रामदास की सेवा में संलग्न रहो, जिनकी गति अलक्ष्य है और जो भवसागर-तरण के लिए जहाज-समान हैं॥ २॥

संसारु अगम सागरु तुलहा हरिनामु गुरू मुखि पाया। जगि जनम मरणु भगाइह आई हीऐ परतीति। परतीति हीऐ आई जिन जन कै तिन्ह कउ पदवी उच भई। तजि माइआ मोहु लोभु अरु लालचु काम क्रोध की ब्रिथा गई। अवलोक्या ब्रहमु भरमु सभु छुटक्या दिब्य द्रिस्टि कारण करणं। सतिगुरु गुरु सेवि अलख गति जाकी स्री रामदासु तारण तरणं॥ ३॥ परतापु सदा गुर का घटि घटि परगासु भया जसु जन कै। इकि पड़हि सुणहि गावहि परभातिहि करहि इस्नानु। इस्नानु करहि परभाति सुध मनि गुर पूजा बिधि सहित करं। कंचनु तनु होइ परसि पारस कउ जोति सरूपी ध्यानु धरं। जगजीवनु जगंनाथु जल थल महि रहिआ पूरि बहु बिधि बरनं। सतिगुरु गुरु सेवि अलख गति जा की स्री रामदासु तारण तरणं॥ ४॥

संसार अथाह समुद्र है, (उसमें से पार होने के लिए) हरिनाम कश्ती है जो कि गुरु के द्वारा प्राप्त होती है। संसार में जन्म-मरण छूट जाता है, जब हृदय में उपर्युक्त विश्वास पैदा होता है। जिन लोगों को यह विश्वास बन जाता है, उन्हें ऊँची पदवी मिलती है। वे माया, मोह, लोभ, काम-क्रोध आदि की पीड़ा से मुक्त हो जाते हैं। (गुरु रामदास के रूप में) जिसने ब्रह्म को देखा है, उसके सब भ्रम छूट गए हैं। वह (गुर-ब्रह्म) दिव्य-दृष्टि वाला, स्वयं कर्तापुरुष है। अतः ऐ मनुष्यो, सतिगुरु रामदास की सेवा में तल्लीन रहो, जिनकी गति अलक्ष्य है और जो भव-सागर-तरण के लिए जहाज-समान है॥ ३॥ गुरु (रामदास) का प्रताप घट-घट में प्रकट है, सेवकों के हृदय में उसका यश सर्वथा प्रकाशित है। लोग प्रभात-वेला में स्नान करके उसकी वाणी पढ़ते, सुनते, गाते हैं। (गुरु-यश रूपी सरोवर में) प्रभात-वेला में शुद्ध मन से स्नान करते एवं विधिवत् गुरु-पूजन करते हैं। वे पारस रूपी गुरु के स्पर्श से कंचन-समान

हो जाते हैं और ज्योति-स्वरूप गुरु का ध्यान करते हैं। परमात्मा जगत का जीवन, सृष्टि का स्वामी है, जल-थल में व्याप्त है, सन्तजनों ने अनेक-विधि उसका बखान किया है। उसी प्रभु के स्वरूप गुरु रामदास की सेवा में नित्य तल्लीन रहो, जिनकी गति अलक्ष्य है और जो भव-सागर-तरण के लिए जहाज़-समान है ॥ ४ ॥

जिनहु बात निस्चल ध्रूअ जानी तेई जीव काल ते बचा। तिन्ह तरिओ समुद्रु रुद्रु खिन इक महि जलहर बिंब जुगति जगु रचा। कुंडलनी सुरझी सतसंगति परमानंद गुरू मुखि मचा। सिरी गुरू साहिबु सभ ऊपरि मन बच क्रंम सेवीऐ सचा ॥ ५ ॥ वाहिगुरू वाहिगुरू वाहिगुरू वाहि जीउ। कवल नैन मधुर बैन कोटि सैन संग सोभ कहत मा जसोद जिसहि दही भातु खाहि जीउ। देखि रूपु अति अनूपु मोह महा मग भई किंकनी सबद झनतकार खेलु पाहि जीउ। काल कलम हुकमु हाथि कहहु कउनु मेटि सकै ईसु बंम्यु ग्यानु ध्यानु धरत हीऐ चाहि जीउ। सति साचु स्री निवासु आदि पुरखु सदा तुही वाहिगुरू वाहिगुरू वाहिगुरू वाहि जीउ ॥ १ ॥ ६ ॥

जिन लोगों ने गुरु के वचनों को ध्रुव सत्य जानकर स्वीकार कर लिया, वे काल-जाल से बच गए। उन्होंने क्षण-भर में ही संसार का विकराल सागर तिर लिया। संसार को उन्होंने बादल की छाया के समान रचा हुआ माना (अर्थात् वे जगत को मिथ्या मायावी मानने लगे)। सत्संगति में बैठने तथा गुरु के उपदेशों को धारण करने से उनकी आध्यात्मिक शक्तियाँ जाग्रत् हुईं और वे परमानन्द को प्राप्त हुए ॥ ५ ॥ वाह, हे परमप्रिय गुरु-परमेश्वर, मैं तुम्हारे बलिहारी जाता हूँ। तुम्हारे नेत्र कमल-से हैं, वचन मधुर हैं, करोड़ों जीवों के साथ तुम शोभते हो। तुम वही (श्रीकृष्ण) हो जिसे माँ यशोदा दही-भात खाने के लिए दुलराती थी, जिसका अति सुन्दर मुख देखकर वह मोहित हो जाती थी और जिसके खेल रचाने पर कटि-नूपुर झंकार-ध्वनि करते थे। काल की लेखनी तथा हुकुम, सब तुम्हारे ही हाथ है, उसे कौन मिटा सकता है। शिवजी, ब्रह्मा आदि भी तुम्हारे ही (गुरु रामदास के) दिए ज्ञान-ध्यान को हृदय में धारण करना चाहते हैं। तुम (हे गुरु रामदास) सत्यस्वरूप हो, लक्ष्मी तुम्हारी सेविका है और तुम स्वयं ही आदिपुरुष परब्रह्म हो। हे परमप्रिय गुरु-परमेश्वर, मैं तुम्हारे बलिहारी जाता हूँ ॥ १ ॥ ६ ॥

राम नाम परम धाम सुध बुध निरीकार बेसुमार सरबर

कउ काहि जीउ। सुथर चित भगत हित भेखु धरिओ हरनाखसु हरिओ नख बिदारि जीउ। संख चक्र गदा पदम आपि आपु कीओ छदम अपरंपर पारब्रहम लखै कउनु ताहि जीउ। सति साचु स्री निवासु आदि पुरखु सदा तुही वाहिगुरू वाहिगुरू वाहिगुरू वाहि जीउ ॥ २ ॥ ७ ॥ पीतबसन कुंद दसन प्रिआ सहित कंठ माल मुकटु सीसि मोर पंख चाहि जीउ। बे वजीर बडे धीर धरम अंग अलख अगम खेलु कीआ आपणै उछाहि जीउ। अकथ कथा कथी न जाइ तीनि लोक रहिआ समाइ सुतह सिध रूपु धरिओ साहन कै साहि जीउ। सति साचु स्री निवासु आदि पुरखु सदा तुही वाहिगुरू वाहिगुरू वाहिगुरू वाहि जीउ ॥३॥८॥

(हे गुरु रामदास) तुम्हारा ही नाम राम है, तुम्हारा स्थान परम है, तुम शुद्ध विवेकवान् एवं आकार-रहित हो। तुम अनन्त हो, तुम्हारे बराबर अन्य कौन है? गुरु रामदास स्थिरचित्त हैं और मूल में वही हैं, जिसने भक्त के लिए स्वरूप (नरसिंह) धारण किया था और हिरण्यकशिपु को नाख़ूनों से चीर दिया था। तुम्हीं शंख, चक्र, गदा, पद्म धारण करनेवाले देवाधिदेव हो और तुम्हीं राजा बलि को छलनेवाले वामन-रूप हो। तुम मूलतः अपरंपर परब्रह्म स्वयं हो, उसका मूल रूप कौन देख सकता है! तुम (हे गुरु रामदास) सत्यस्वरूप हो, लक्ष्मी तुम्हारी सेविका है और तुम स्वयं ही आदिपुरुष ब्रह्म हो। हे परमप्रिय गुरु-परमेश्वर, मैं तुम्हारे बलिहारी जाता हूँ ॥ २ ॥ ७ ॥ हे गुरु रामदास, तुम्हीं पीताम्बर (श्रीकृष्ण) हो, जिसके कुंदकलियों सरीखे सफ़ेद दाँत हैं, जो प्रिय राधा-संग विहार करता है और जिसने कण्ठ में विजयंतीमाला पहनी है, जिसने स्वेच्छा से माथे पर मोर-पंखों का मुकुट धारण कर रखा है। हे गुरु, तुम निःपरामर्श हो, धैर्यवान् हो, धर्म-स्वरूप हो, अलख, अगम हो और यह सारा खेल तुमने स्वेच्छा से रचा हुआ है। तुम्हारी व्याख्या अकथनीय है, तुम तीनों लोकों में व्याप्त हो; तुम शाहों के शाह हो और स्वयम्भू रूप धारण करनेवाले हो। (हे गुरु रामदास) तुम सत्यस्वरूप हो, लक्ष्मी तुम्हारी दासी है और तुम स्वयं ही आदिपुरुष परब्रह्म हो। हे परमप्रिय गुरु-परमेश्वर, मैं तुम्हारे बलिहारी जाता हूँ ॥ ३ ॥ ८ ॥

सतिगुरू सतिगुरू सतिगुरु गुबिंद जीउ। बलिहि छलन सबल मलन भगति फलन कान्ह कुअर निहकलंक बजी डंक चढ़ू दल रविंद जीउ। राम रवण दुरत दवण सकल भवण कुसल करण सरब भूत आपि ही देवाधि देव सहस मुख फनिंद जीउ।

जरम करम मछ कछ हुअ बराह जमुना कै कूलि खेलु खेलिओ जिनि गिंद जीउ। नामु सारु हीए धारु तजु बिकारु मन गयंद सतिगुरू सतिगुरू सतिगुर गुबिंद जीउ ॥ ४ ॥ ९ ॥ सिरी गुरू सिरी गुरू सिरी गुरू सति जीउ। गुर कहिआ मानु निज निधानु सचु जानु मंत्रु इहै निसि बासुर होइ कल्यानु लहहि परमगति जीउ। कामु क्रोधु लोभु मोहु जण जण सिउ छाडु धोहु हउमै का फंधु काटु साधसंगि रति जीउ। देह गेहु त्रिअ सनेहु चित बिलासु जगत एहु चरन कमल सदा सेउ द्रिड़ता करु मति जीउ। नामु सारु हीए धारु तजु बिकारु मन गयंद सिरी गुरू सिरी गुरू सिरी गुरू सति जीउ ॥ ५ ॥ १० ॥

(यहाँ कवि गयंद गुरु में ही समस्त रूपों को देखता और गुरु को ही सर्वस्व मानता है।) हे सतिगुरु, तुम सृष्टि के नियंता हो। तुम्हीं बलि को छलनेवाले वामनावतार हो, अहंकारियों को मर्दन करनेवाले, भक्ति-फल देनेवाले, स्वयं श्रीकृष्ण-रूप हो। तुम (हे गुरु रामदास) निःकलंक हो, तुम्हारा डंका चतुर्दिक् बज रहा है, (तुम्हारे ही लिए) रवि और चन्द्र के दल उदित होते हैं। सर्वव्यापक परब्रह्म का स्मरण करनेवाले हो, पापों को जलानेवाले हो; चौदह भुवन में मंगल-कल्याण तुम्हारी ही देन है, समस्त जीवों के (पोषक हो)। तुम स्वयं ही देवताओं के देव हो और सहस्र-मुखी शेषनाग भी तुम्हीं हो। तुम्हीं ने मच्छ, कच्छ रूप में अवतार लेकर अनेक कर्म किए। तुम्हीं ने यमुना-तट पर कन्दुक-क्रीड़ा की थी। गयंद कवि अपने मन को कहता है कि विकारों को त्यागकर तुम्हारे ही (गुरु के) नाम-तत्त्व को धारण करे, क्योंकि हे सतिगुरु (रामदास), तुम्हीं सृष्टि के नियंता (गोविंद) हो ॥४॥९॥ हे मन, श्री गुरु रामदास ही परम अटल हैं, सत्यस्वरूप हैं। तुम गुरु की आज्ञा का पालन करो, यही तुम्हारा साथ देनेवाली निधि है, इसी मूल मन्त्र को निश्चय करके स्वीकार करो। (इसे अन्तर् में धारण करने से) तुम्हें रात-दिन सुख होगा और तुम परमगति को पा सकोगे। काम, क्रोध, लोभ, मोह एवं जन-जन के साथ किया द्रोह त्याग दो; अहम् के फंदे को काटकर साधु-संगति में दिल लगाओ। यह शरीर, घर, स्त्री-प्रेम तथा यह संसार, सब मन का विलास (खेल) है, (इसकी उपेक्षा करके) दृढ़ विवेक द्वारा सदा गुरु रामदास के चरण-कमलों की सेवा में लीन रहो। हे गयंद-मन, विकारों को त्यागकर (गुरु के) नाम-तत्त्व को हृदय में धारण कर। श्री गुरु रामदास ही परम अटल और सत्यस्वरूप हैं ॥ ५ ॥ १० ॥

सेवक कै भरपूर जुगु जुगु वाहगुरू तेरा सभु सदका।

निरंकारु प्रभु सदा सलामति कहि न सकै कोऊ तू कदका। ब्रहमा बिसनु सिरे तै अगनत तिन कउ मोहु भया मन मदका। चवरासीह लख जोनि उपाई रिजकु दीआ सभहू कउ तदका। सेवक कै भरपूर जुगु जुगु वाहगुरू तेरा सभु सदका ॥ १ ॥ ११ ॥ वाहु वाहु का बडा तमासा। आपे हसै आपि ही चितवै आपे चंदु सूरु परगासा। आपे जलु आपे थलु थंम्हनु आपे कीआ घटि घटि बासा। आपे नरु आपे फुनि नारी आपे सारि आप ही पासा। गुरमुखि संगति सभै बिचारहु वाहु वाहु का बडा तमासा ॥ २ ॥ १२ ॥

हे सतिगुरु (रामदास), तुम धन्य हो, अपने सेवकों के हृदय में सदा प्रत्यक्ष हो, तुम्हारा ही समूचा प्रताप है। तुम निरंकार का रूप हो, सदा स्थायी हो, कोई तुम्हारा मूल नहीं खोज सकता। तुमने अगणित ब्रह्मा, विष्णु पैदा किए हैं, उन्हें अपने मन के अहंकार का मोह हो गया है। तुमने चौरासी लाख योनियाँ पैदा की हैं, और जबसे बनाई, तभी से उनका प्रतिपालन भी किया है। हे सतिगुरु, तुम्हारा ही सब प्रताप है, तुम अपने सेवकों के हृदय में साक्षात् हो ॥ १ ॥ ११ ॥ यह संसार वाह-वाह के योग्य (स्तुत्य) गुरु (रामदास) का ही खेल है। (सर्वव्यापक प्रभु-रूप गुरु रामदास) सब जगह हँसता, विचार करता और आप ही सूर्य-चाँद को भी प्रकाश दे रहा है। वह गुरु स्वयं ही जल है, वही धरती का आसरा है और उसने स्वयं ही प्रत्येक शरीर में अपना स्थान बना रखा है। (गुरु रामदास) स्वयं ही नर है, आप ही नारी है, वही गोटियाँ भी है और फेंका जानेवाला पाँसा भी स्वयं ही है। गुरु के द्वारा सत्संगति में रहते हुए, ऐ जीवो, सब ध्यान-पूर्वक विचारो कि यह स्तुत्य तमाशा गुरु का ही रचाया हुआ है ॥ २ ॥ १२ ॥

कीआ खेलु बड मेलु तमासा वाहिगुरू तेरी सभ रचना। तू जलि थलि गगनि पयालि पूरि रह्या अंम्रित ते मीठे जा के बचना। मानहि ब्रहमादिक रुद्रादिक काल का कालु निरंजन जचना। गुरप्रसादि पाईऐ परमारथु सत संगति सेती मनु खचना। कीआ खेलु बडमेलु तमासा वाहगुरू तेरी सभ रचना ॥ ३ ॥ १३ ॥ ४२ ॥

(हे गुरु रामदास) तुम धन्य हो, यह सृष्टि तुम्हारी ही रचना है, तुम्हीं ने (पाँच तत्त्वों के) मेल से यह तमाशा रचाया है। जल, थल, गगन, पाताल, सब जगह तुम व्याप्त हो और तुम्हारे वचन अमृत से भी

मीठे हैं। हे गुरु, ब्रह्मादि, रुद्रादि भी तुम्हारी सेवा में रहते हैं, तुम काल के भी काल हो, तुम मायातीत ब्रह्म हो, तुम्हीं से सब याचना करते हैं। गुरु-कृपा से ही परम-पद प्राप्त होता है और सत्संगति में मन जुड़ता है। हे गुरु रामदास, तुम धन्य हो, यह सृष्टि तुम्हारी रचना है, तुम्हीं ने (पाँच तत्त्वों के) मेल से यह तमाशा रचाया है ॥ ३ ॥ १३ ॥ ४२ ॥ (यहाँ गयंद कवि के १३ सवैये समाप्त हुए— अब कलसहार के १३, नल्ह के १६ तथा गयंद के १३, कुल ४२ सवैये हुए।)

अगमु अनंतु अनादि आदि जिसु कोइ न जाणै। सिव बिरंचि धरि ध्यानु नितहि जिसु बेदु बखाणै। निरंकारु निरवैरु अवरु नही दूसर कोई। भंजन गढ़ण समथु तरण तारण प्रभु सोई। नाना प्रकार जिनि जगु कीओ जनु मथुरा रसना रसै। स्री सतिनामु करता पुरखु गुर रामदास चितह बसै ॥ १ ॥ गुरू समरथु गहि करीआ ध्रुव बुधि सुमति सम्हारन कउ। फुनि ध्रंम धुजा फहरंति सदा अघ पुंज तरंग निवारन कउ। मथुरा जन जानि कही जीअ साचु सु अउर कछू न बिचारन कउ। हरिनामु बोहिथु बडौ कलि मै भवसागर पारि उतारन कउ ॥ २ ॥

(हे गुरु रामदास) अपहुँच, अनन्त, अनादि ब्रह्म, जिसका आरम्भ किसी को ज्ञात नहीं, शिव और ब्रह्मा भी जिसका ध्यान धरते हैं और वेद नित्य जिसका बखान करते हैं, वह निरंकार है, निर्वैर है, उसकी तुलना का कोई दूसरा वहाँ नहीं है; वह तोड़ने-बनाने (जन्म-मरण) की शक्ति वाला है और सबको मोक्ष दे सकने में समर्थ परमप्रभु है (तारने के लिए संतरण है)। जिसने यह सारा संसार अनेक-विध किया है और कवि मथुरा जिसे नित्य जिह्वा से जपता है, वह परब्रह्म, सत्यस्वरूप, गुरु रामदास के हृदय में सदैव बसता है ॥ १ ॥ गुरु समर्थ है, मैंने उसकी शरण ली है, ताकि मुझे उच्च विवेक उपलब्ध हो सके। उसकी धर्म-पताका सदा फहरती है, जिसने पापों की समूह-तरंगों का निवारण होता है। तुम्हारे सेवक मथुरा ने मन में भलीभाँति जान-समझकर यह 'सत्य' बात कही है, अब इसमें विचारने के लिए और कुछ नहीं रह गया है। कलियुग में भवसागर से पार उतरने के लिए हरिनाम का बड़ा जहाज़ (गुरु रामदास के द्वारा ही उपलब्ध्य है) ॥ २ ॥

संतत ही सत संगति संग सुरंग रते जसु गावत है। ध्रम पंथु धरिओ धरनीधर आपि रहे लिव धारि न धावत है। मथुरा भनि भाग भले उन्ह के मन इंछत ही फल पावत है।

रवि के सुत को तिन्ह त्रासु कहा जु चरंन गुरू चितु लावत है ।। ३ ।। निरमल नामु सुधा परपूरन सबद तरंग प्रगटित दिन आगरु । गहिर गंभीरु अथाह अति बड सुभरु सदा सभ बिधि रतनागरु । संत मराल करहि कंतूहल तिन जम त्रास मिटिओ दुख कागरु । कलजुग दुरत दूरि करिबे कउ दरसनु गुरू सगल सुख सागरु ।। ४ ।।

धरनी-धर (परमात्मा) ने स्वयं यह धर्म-पथ चलाया है कि नित्य सन्तों की संगति में रहनेवाले जो जीव एक रस परमात्मा के प्यार में रँगे जाकर उसका यश गाते तथा उसी में वृत्ति लगाए रहते हैं, वे कभी पथ-भ्रष्ट नहीं होते (भटकते नहीं) । मथुरा कवि कहता है कि उनका भाग्य बड़ा है, वे मनोवांछित फल को प्राप्त करते हैं । जिन्होंने गुरु (रामदास) के चरणों में चित्त लगाया है, उन्हें रवि-सुत (यमराज) का कोई भय नहीं होता ।। ३ ।। (गुरु रामदास एक पुनीत सरोवर है) जिसमें निर्मल हरिनामामृत भरा हुआ है, दिन के अग्र भाग में (प्रातःकाल) उसमें शब्द की तरंगें उठती हैं, जो अत्यन्त गहरा, अथाह और बड़ा है, सब प्रकार से परिपूर्ण और रत्नागार है । उस सरोवर में सन्त-हंस कलरव करते हैं, उनका यम-त्रास मिट जाता तथा दुःखों का खाता फट चुका होता है । कलियुग के सब पापों को दूर करने के लिए सतिगुरु (रामदास) का दर्शन ही सुखों का सागर है ।। ४ ।।

जा कउ मुनि ध्यानु धरै फिरत सकल जुग कबहु क कोऊ पावै आतम प्रगास कउ । बेद बाणी सहित बिरंचि जसु गावै जाको सिव मुनि गहि न तजात कबिलास कंउ । जाकौ जोगी जती सिध साधिक अनेक तप जटा जूट भेख कीए फिरत उदास कउ । सु तिनि सतिगुरि सुख भाइ क्रिपा धारी जीअ नाम की बडाई दई गुर रामदास कउ ।। ५ ।। नामु निधानु धिआन अंतर गति तेज पुंज तिहु लोग प्रगासे । देखत दरसु भटकि भ्रमु भजत दुख परहरि सुख सहज बिगासे । सेवक सिख सदा अति लुभित अलि समूह जिउ कुसम सुबासे । बिद्यमान गुरि आपि थप्यउ थिरु साचउ तखतु गुरू रामदासै ।। ६ ।।

सारे संसार में भटकते हुए मुनिजन जिसका ध्यान धरते हैं, किन्तु कभी-कभार ही किसी को आत्म-प्रकाश प्राप्त होता है । वेदों की वाणी सहित जिस (ब्रह्म) का यश गाता है और शिवजी कैलास पर्वत पर समाधि लगाते हैं, और उसे छोड़ते नहीं । जिस परमात्मा के लिए अनेक योगी,

यती, सिद्ध-साधक जटा-जूट रखकर वेषाडम्बर करते और वैरागी बने घूमते हैं, उसी परमात्मा के स्वरूप सतिगुरु अमरदास ने विशेष कृपा धारण करते हुए गुरु रामदास को हरिनाम की बड़ाई प्रदान की ॥ ५ ॥ (अब) गुरु रामदास हरिनाम के भण्डार हैं, अन्तर्मुखी ध्यान धरते हैं, तेजस्वी हैं और तीनों लोकों को आलोकित करते हैं। उनके दर्शन करने से सब भटकन और भ्रम दूर होते एवं दुःख छोड़ सुखों का सहज प्रकाश मिलता है। उकेन सेवक-शिष्य सब नित्य उन पर ऐसे लोभायमान रहते हैं, जैसे सुवासित पुष्प पर भँवरे मँड़राते हैं। प्रत्यक्ष गुरु (अमरदास) ने स्वयं गुरु रामदास का तख्त स्थापित किया है (अर्थात् स्वयं उन्हें अपने सिंहासन पर आसनी किया है) ॥ ६ ॥

तार्यउ संसारु माया मद मोहित अंम्रित नामु दीअउ समरथु। फुनि कीरतिवंत सदा सुख संपति रिधि अरु सिधि न छोडइ सथु। दानि बडौ अति वंतु महा बलि सेवकि दासि कहिओ इहु तथु। ताहि कहा परवाह काहू की जा कै बसीसि धरिओ गुरि हथु ॥ ७ ॥ ४६ ॥

माया-मद में तल्लीन संसार को समर्थ अमृत-हरिनाम देकर गुरु (रामदास) ने तार दिया है। वे (गुरु रामदास) कीर्तिवान् हैं, सुख-समृद्धि वाले हैं, ऋद्धि-सिद्धि कभी उनका संरक्षण त्यागकर इधर-उधर नहीं जातीं। मथुरादास कवि कहता है कि मैं यह तथ्य बताता हूँ कि गुरु (रामदास) बड़े दानी और अत्यन्त महाबली हैं। जिसके शीश पर गुरु ने संरक्षण का हाथ रख दिया है, उसे किसी की क्या परवाह रह जाती है ॥ ७ ॥ ४९ ॥ (यहाँ भाट मथुरा के ७ सवैये भी पूरे हुए। कुल जोड़ ४९ हुआ।)

तीनि भवन भरपूरि रहिओ सोई अपन सरसु कीअउ न जगत कोई। आपुन आपु आप ही उपायउ। सुरि नर असुर अंतु नही पायउ। पायउ नही अंतु सुरे असुरह नर गण गंध्रब खोजंत फिरे। अबिनासी अचलु अजोनी संभउ पुरखोतमु अपार परे। करण कारण समरथु सदा सोई सरब जीअ मनि ध्याइयउ। स्री गुर रामदास जयो जय जग महि तै हरि परम पदु पाइयउ ॥ १ ॥ सतिगुरि नानकि भगति करी इक मनि तनु मनु धनु गोबिंद दीअउ। अंगदि अनंत मूरति निज धारी अगम ग्यानि रसि रस्यउ हीअउ। गुरि अमरदासि करतारु कीअउ

बसि वाहु वाहु करि ध्याइयउ । स्री गुर रामदास जयो जय जग महि तैं हरि परम पदु पाइयउ ।। २ ।।

वह परमात्मा तीनों भुवनों में व्याप्त है, उसने अपने सदृश इस संसार में दूसरा कोई नहीं बनाया। उसने स्वयं अपने-आप को उत्पन्न किया है; मनुष्यों, देवताओं और असुरों को उसका सही रहस्य मालूम नहीं हो सका। देव, असुर, मनुष्य, गण-गन्धर्व सब उसे खोजते फिरे, किसी को भेद पता नहीं चला। वह पुरुषोत्तम अपरम्पर, अविनाशी, अचल, अयोनि तथा स्वयम्भू है। वह सब कुछ करने में समर्थ, समस्त जीवों ने मन में उसका ध्यान किया है। हे गुरु रामदास, जगत में आपकी जय-जयकार हो रही है, क्योंकि आपने उपर्युक्त गुणों वाले परमात्मा का पद प्राप्त कर लिया है ।। १ ।। सतिगुरु नानक ने एकाग्र-मन होकर साधना की तथा अपना तन-मन-धन सृष्टि के नियंता को अर्पित कर दिया। गुरु अंगद ने परममूर्ति प्रभु को हृदय में धारण किया है और परमज्ञान के ही कारण आपका हृदय प्रेम-रस में विभोर हो गया है। गुरु अमरदास ने स्वयं परमात्मा को वश में कर लिया, प्रभु को धन्य मानकर उन्होंने हरि-सिमरन किया। गुरु रामदास की जगत में जय-जयकार हो रही है, क्योंकि उन्होंने तो हरि-पद ही प्राप्त कर लिया है ।। २ ।।

नारदु ध्रू प्रहलादु सुदामा पुब भगत हरि के जु गणं। अंबरीकु जयदेव त्रिलोचनु नामा अवरु कबीरु भणं। तिन कौ अवतारु भयउ कलि भिंतरि जसु जगत्र परि छाइयउ। स्री गुर रामदास जयो जय जग महि तै हरि परम पदु पाइयउ ।। ३ ।। मनसा करि सिमरंत तुझै नर कामु क्रोधु मिटिअउ जु तिणं। बाचा करि सिमरंत तुझै तिन्ह दुखु दरिद्रु मिटयउ जु खिणं। करम करि तुअ दरस परस पारस सर बल्य भटु जसु गाइयउ। स्री गुर रामदास जयो जय जग महि तै हरि परमपदु पाइयउ ।।४।।

नारद, ध्रुव, प्रह्लाद, सुदामा आदि पूर्वगामी भक्त हरि-शरण में गिने जाते हैं। अंबरीष, जयदेव, त्रिलोचन, नामदेव और कबीर आदि भक्त कलियुग में अवतरित हुए हैं। उन सबका यश जगत में (भक्त होने के ही कारण) छाया है; किन्तु, हे गुरु रामदास, जगत में तुम्हारी जय-जयकार तो इसलिए होती है कि तुमने स्वयं हरि-ब्रह्म का पद पा लिया है ।। ३ ।। जो मनुष्य मनोयोगपूर्वक तुम्हारा स्मरण करते हैं, उनका काम-क्रोधादि दुर्गुण तुरन्त मिट जाता है। जो वाणी से एकाग्र होकर तुम्हारा सिमरन करते हैं, उनका दुःख-दरिद्र क्षण में ही दूर होता है। बल्ह भाट, हे गुरु (रामदास), तुम्हारा यश गाता है। जो मनुष्य कर्मेन्द्रियों

से तुम्हारा दर्शन तथा स्पर्श करते हैं, वे पारस-समान हो जाते हैं। हे श्री गुरु रामदास, जगत में तुम्हारी जय-जयकार हो रही है, क्योंकि तुमने स्वयं हरि-पद को प्राप्त कर लिया है ॥ ४ ॥

जिह सतिगुर सिमरंत नयन के तिमर मिटहि खिनु। जिह सतिगुर सिमरंथि रिदै हरि नामु दिनो दिनु। जिह सतिगुर सिमरंथि जीअ की तपति मिटावै। जिह सतिगुर सिमरंथि रिधि सिधि नव निधि पावै। सोई रामदासु गुरु बल्य भणि मिलि संगति धंनि धंनि करहु। जिह सतिगुर लगि प्रभु पाईऐ सो सतिगुरु सिमरहु नरहु ॥ ५ ॥ ५४ ॥

जिस गुरु रामदास का सिमरन करने से आँखों का अन्धकार क्षण-भर में दूर हो जाता है, जिस सतिगुरु के स्मरण से दिनोदिन हृदय में हरिनाम दृढ़ होता है, जिस गुरु रामदास का स्मरण जीव का संताप हरण करता है और जिस गुर के स्मरण से जीव को ऋद्धि-सिद्धि प्राप्त होती है, उसी गुरु रामदास, बल्ह कवि कहता है, की शरण में आकर प्रभु से मिला जा सकता है। हे मनुष्यो, उस सतिगुरु को धन्य-धन्य मानकर सिमरन करो ॥ ५ ॥ ५४ ॥ (यहाँ बल्ह भाट के पाँच सवैये पूर्ण हुए। कुल जोड़ हुआ ५४। गुरु रामदास की स्तुति में लिखे ६ सवैये और हैं, जिनमें से ४ कीरत भाट तथा २ सल्ह भाट के हैं।)

जिनि सबदु कमाइ परम पदु पाइओ सेवा करत न छोडिओ पासु। ताते गउहरु ग्यान प्रगटु उजीआरउ दुख दरिद्र अंध्यार को नासु। कवि कीरत जो संत चरन मुड़ि लागहि तिन्ह काम क्रोध जम को नही त्रासु। जिव अंगदु अंगि संगि नानक गुर तिव गुर अमरदास कै गुरु रामदासु ॥ १ ॥ जिनि सतिगुरु सेवि पदारथु पायउ निसि बासुर हरि चरन निवासु। ताते संगति सघन भाइ भउ मानहि तुम मलीआगर प्रगट सुबासु। ध्रू प्रहलाद कबीर तिलोचन नामु लैत उपज्यो जु प्रगासु। जिह पिखत अति होइ रहसु मनि सोई संत सहारु गुरू रामदासु ॥ २ ॥

जिस गुरु रामदास ने प्रभु-शब्द की कमाई करके परम-पद को प्राप्त किया है, अपने गुरु अमरदास के सेवा में रत रहते हुए जिसने कभी साथ नहीं छोड़ा; उसने अब ज्ञान-मणि का उजाला किया है, जिसके दुःख, दरिद्रता तथा ज्ञानांधकार का नाश होता है। कवि कीरत कहता है कि जो जीव सन्तों (गुरु रामदास) के चरणों में शरण लेते हैं, उन्हें काम, क्रोध एवं

यमराज का भी भय नहीं रहता। जैसे गुरु अंगद नित्यप्रति गुरु नानक की सेवा में रहते रहे, वैसे ही गुरु अमरदास की नित्य-सेवा में सतिगुरु रामदास बने रहे॥ १॥ जिस सतिगुरु की सेवा में हरिनाम-पदार्थ प्राप्त हुआ है और रात-दिन हरि-चरणों में निवास होता है, उस गुरु (रामदास) की शरण में आई अनन्त संगति प्रेम में विभोर होकर भय मानती है और उसे चन्दन-गिरि मानती है, जिसकी सुवास चतुर्दिक् प्रकट हो रही है। ध्रुव, प्रह्लाद, कबीर, त्रिलोचन आदि को हरिनाम जपने से ही प्रकाश मिला था, जिस हरि को देखने से मन में परमानन्द होता है, वह सन्तों का सहारा स्वयं गुरु रामदास ही हैं॥ २॥

नानकि नामु निरंजन जान्यउ कीनी भगति प्रेम लिव लाई। ताते अंगदु अंग संगि भयो साइरु तिनि सबद सुरति कीनी वरखाई। गुर अमरदास की अकथ कथा है इक जीह कछु कही न जाई। सोढी स्रिस्टि सकल तारण कउ अब गुर रामदास कउ मिली बडाई॥ ३॥ हम अवगुणि भरे एकु गुणु नाही अंम्रितु छाडि बिखै बिखु खाई। माया मोह भरम पै भूले सुत दारा सिउ प्रीति लगाई। इकु उतम पंथु सुनिओ गुर संगति तिह मिलंत जम त्रास मिटाई। इक अरदासि भाट कीरति की गुर रामदास राखहु सरणाई॥ ४॥ ५८॥

गुरु नानक ने हरिनाम को पहचान कर उसमें मन रमाया और प्रेम से भक्ति की। तब गुरु अंगददेव सागर की नाईं गुरु नानक में विलीन हुए और उन्होंने शब्द-सुरत-योग की विशिष्ट वर्षा की। गुरु अमरदास की कथा अकथनीय है, एक जीभ से उसका वर्णन नहीं किया जा सकता, तब समस्त सृष्टि को तारने के लिए गुरु रामदास को बड़ाई (प्रतिष्ठा) मिली॥ ३॥ हे गुरु रामदास, हम अवगुणों से भरे हैं, हममें एक भी गुण नहीं, हम हरि नामामृत छोड़कर विषयों का विष खा रहे हैं। मोह, माया, भ्रम आदि में भूले पड़े हैं, पुत्र-पत्नी आदि से प्रीति लगा रखी है। सुना है कि गुरु की संगति का मार्ग ही उत्तम है, उससे भेंट हो जाने पर यमदूत का भय भी नष्ट हो जाता है। कीरत भाट की एक प्रार्थना है, हे गुरु रामदास, मुझे अपनी शरण में रखो॥ ४॥ ५८॥ (यहाँ कीरत भाट के ४ सवैये समाप्त हुए, कुल जोड़ अब ५८ हो गया।)

मोहु मलि बिवसि कीअउ कामु गहि केस पछाड़्यउ। क्रोधु खंडि परचंडि लोभु अपमान सिउ झाड़्यउ। जनमु कालु कर जोड़ि हुकमु जो होइ सु मंनै। भव सागरु बंधिअउ सिख

तारे सु प्रसंनै। सिरि आतपतु सचौ तखतु जोग भोग संजुतु बलि। गुर रामदास सचु सल्य भणि तू अटलु राजि अभगु दलि ॥१॥ तू सतिगुरु चहु जुगी आपि आपे परमेसरु। सुरि नर साधिक सिध सिख सेवंत धुरह धुरु। आदि जुगादि अनादि कला धारी त्रिहु लोअह। अगम निगम उधरण जरा जंमिहि आरोअह। गुर अमरदासि थिरु थपिअउ परगामी तारण तरण। अघ अंतक बदै न सल्य कवि गुर रामदास तेरी सरण ॥२॥६०॥

(हे गुरु रामदास) तुमने मोह को मर्दन कर वशीभूत किया है, काम को बालों से पकड़कर धरती पर पछाड़ दिया है, प्रचण्ड क्रोध को खंडित किया है और लोभ का तिरस्कार करके उसे निकाल दिया है। जन्म और मरण दोनों हाथ जोड़े तुम्हारी आज्ञा में खड़े रहते हैं, तुमने भव-सागर को बाँध दिया और है सन्तुष्ट होकर अपने सिक्खों को तार दिया है। तुम्हारे सिर पर छत्र है, तुम्हारा सिंहासन सत्य का है तथा योग एवं भोग, दोनों को तुमने स्वीकारा है। सल्ह सच कहता है कि गुरु रामदास का राज्य अटल है और उसका दल अविनाशी है ॥१॥ हे गुरु रामदास, तुम चारों युग में स्थिर गुरु हो, तुम (मेरे लिए तो) स्वयम्भू परमेश्वर हो। शुरू से ही सुर, नर, मुनि नित्य तुम्हारी सेवा-रत रहे हैं। तुम आदि-अनादि हो, युगों के आरम्भ से हो, तीनों लोकों में तुम्हारी सत्ता विद्यमान है। मेरी दृष्टि में आप ही वेद-शास्त्रों के रक्षक हैं और बुढ़ापे एवं यमराज से निर्भीक हैं। तुम्हें गुरु अमरदास ने स्थापित किया है, तुम मुक्त हो तथा दूसरों को तारने के लिए जहाज़ हो। सल्ह भाट कहता है कि हे गुरु रामदास, जो तुम्हारी शरण आया है, वह पापों और यमराज को भी कुछ नहीं बदता ॥ २ ॥ ६० ॥ (यहाँ सल्ह कवि के दो सवैये भी पूर्ण हुए। गुरु रामदास की स्तुति में कहे गए कुल ६० सवैये हुए।)

सवईए महले पंजवे के ५

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सिमरं सोई पुरखु अचलु अबिनासी। जिसु सिमरत दुरमति मलु नासी। सतिगुर चरण कवल रिदि धारं। गुर अरजुन गुण सहजि बिचारं। गुर रामदास घरि कीअउ प्रगासा। सगल मनोरथ पूरी आसा। तै जनमत गुरमति ब्रहमु पछाणिओ। कल्य जोड़ि कर सुजसु वखाणिओ। भगति जोग कौ जैतवारु हरि जनकु उपायउ।

सबदु गुरू परकासिओ हरि रसन बसायउ । गुर नानक अंगद अमर लागि उतम पदु पायउ । गुरु अरजुनु घरि गुर रामदास भगत उतरि आयउ ।। १ ।। बडभागी उन मानिअउ रिदि सबदु बसायउ । मनु माणकु संतोखिअउ गुरि नामु द्रिढ़ायउ । अगमु अगोचरु पारब्रहमु सतिगुरि दरसायउ । गुरु अरजुनु घरि गुर रामदास अनभउ ठहरायउ ।। २ ।।

मैं निश्चल अकालपुरुष का स्मरण करता हूँ, जिसके सिमरन से कुमति की मैल धुल जाती है । मैं सतिगुरु के चरण-कमल हृदय में धारण करता हूँ और गुरु अर्जुन का गुणगान करता हूँ । ऐ गुरु अर्जुन, तुमने गुरु रामदास के घर में प्रकाश किया (जन्म लिया) और उनके समस्त मनोरथ और आशाएँ पूर्ण हुईं । जन्म से ही, ऐ गुरु अर्जुन, तुमने गुरुमति द्वारा ब्रह्म को पहचान लिया था । इसीलिए कल्ह कवि हाथ जोड़कर तुम्हारा ऐसा यश उच्चारता है । हे अर्जुन, तुमने भक्ति-योग पर पूर्ण विजय पाई है, हरि ने तुम्हें राजा जनक का ही रूप बनाया है (राजयोगी बनाया है) । तुमने गुरु-शब्द को प्रकट किया है और हरिनाम को जिह्वा पर धारण कर रखा है । गुरु नानक, गुरु अंगद, गुरु अमरदास के चरणों में लगकर गुरु रामदास ने उत्तम पद पाया है और उनके घर में भक्ति के मूर्त्त-रूप गुरु अर्जुन ने जन्म लिया है ।। १ ।। गुरु अर्जुनदेव भाग्यशाली है, पूर्ण सुविकसित-चित्त में उसने प्रभु-शब्द को बसा रखा है । अपने मन रूपी माणिक्य को सन्तुष्ट किया है और गुरु ने (गुरु रामदास ने) तुम्हें हरिनाम दृढ़ कराया है । सतिगुरु रामदास ने अगम, अगोचर, वाहिगुरु से आपका साक्षात्कार करवा दिया है । गुरु रामदास के घर में गुरु अर्जुनदेव को ज्ञान-रूप में स्थित किया गया है ।। २ ।।

जनक राजु बरताइआ सतजुगु आलीणा । गुर सबदे मनु मानिआ अपतीजु पतीणा । गुरु नानकु सचु नीव साजि सतिगुर संगि लीणा । गुरु अरजुनु घरि गुर रामदास अपरंपरु बीणा ।। ३ ।। खेलु गूढ़उ कीअउ हरि राइ संतोखि समाचर्यिओ बिमल बुधि सतिगुरि समाणउ । आजोनी संभविअउ सुजसु कल्य कवीअणि बखाणिअउ । गुरि नानकि अंगदु वर्यउ गुरि अंगदि अमर निधानु । गुरि रामदास अरजुनु वर्यउ पारसु परसु प्रमाणु ।। ४ ।।

राजर्षि जनक (गुरु अर्जुनदेव) ने ज्ञान-राज्य का प्रसार किया है, जिससे चतुर्दिक् सतयुग व्याप्त हो रहा है । तुम्हारा मन गुरु-शब्दों में

स्थिर हुआ है और सदैव अविश्वस्त रहनेवाला मन विश्वस्त हो गया है। गुरु नानक स्वयं सत्यस्वरूप नींव रखकर वर्तमान गुरु (गुरु अर्जुन) में लीन हुए हैं। गुरु रामदास के घर गुरु अर्जुन अपरंपार रूप बना बैठा है ॥३॥ प्रभु ने बड़ा आश्चर्यजनक खेल रचा है और गुरु अर्जुन सन्तोष में विचरण करने लगा। गुरु अर्जुन में निर्मल बुद्धि समाई है, वह अयोनि एवं स्वयम्भू है, (इसीलिए) कल्ह कवि उसका (गुरु अर्जुन का) बखान करता है। गुरु नानक ने अंगद को वरदान दिया, गुरु अंगद ने गुरु अमरदास को समस्त निधियाँ प्रदान कीं। गुरु रामदास ने अर्जुनदेव को वर दिया और उन्हें पारस-सरीखा स्पर्श हो जाने की शक्तियाँ दे दी है (अर्थात् उनका स्पर्श पारस के छूने के समान हो गया है) ॥ ४ ॥

सद जीवणु अरजुनु अमोलु आजोनी संभउ। भय भंजनु परदुख निवारु अपारु अनंभउ। अगह गहणु भ्रमु भ्रांति दहणु सीतलु सुखदातउ। आसंभउ उदविअउ पुरखु पूरन बिधातउ। नानक आदि अंगद अमर सतिगुर सबदि समाइअउ। धनु धंनु गुरू रामदास गुरु जिनि पारसु परसि मिलाइअउ ॥ ५ ॥ जै जै कारु जासु जग अंदरि मंदरि भागु जुगति सिव रहता। गुरु पूरा पायउ बडभागी लिवलागी मेदनि भरु सहता। भय भंजनु पर पीर निवारनु कल्यसहारु तोहि जसु बकता। कुलि सोढी गुर रामदास तनु धरम धुजा अरजुनु हरि भगता ॥ ६ ॥

गुरु अर्जुन चिरंजीवी है, अमूल्य, अयोनि एवं स्वयंभू है। वह भय दूर करनेवाला, दूसरों के दुःखों को नाश करनेवाला, असीम तथा ज्ञान-स्वरूप है। गुरु अर्जुन अपहुँच परमात्मा तक रसाई करनेवाला, भ्रम एवं भटकने से मुक्त करनेवाला, शीतल तथा सुख देनेवाला है। (ऐसा प्रतीत होता है) कि स्वयं अजन्मा पूर्णपुरुष प्रकट हो गया है। गुरु नानक, गुरु अंगद एवं गुरु अमरदास के प्रताप से सतिगुरु अर्जुन शब्द में लीन रहनेवाला है। गुरु रामदास धन्य हैं, जिन्होंने पारस के स्पर्श से उसे (गुरु अर्जुन को) अपने ही समान बना लिया है ॥ ५ ॥ जिस गुरु (अर्जुन) की जय-जयकार सारे संसार में हो रही है, जिसके भीतर भाग्योदय हुआ है तथा जो साक्षात् शिव (पूर्ण कल्याण-रूप परमात्मा) के साथ जुड़ा है तथा जिसे भाग्यशाली होने के कारण सच्चा गुरु मिला है, (जिसकी) वृत्ति परमात्मा में लगी है और जो समूची धरती का बोझ सहन कर रहा है। (वह गुरु अर्जुन) भय-भंजन तथा दूसरों के दुःखों को दूर करनेवाला है। कवि कलसहार उसका यशोगान करता है। गुरु अर्जुन गुरु रामदास के सुपुत्र, सोढी कुलदीपक, धर्म-ध्वजा वाले हरि-भक्त हैं ॥ ६ ॥

ध्रंम धीरु गुरमति गभीरु पर दुख बिसारणु। सबद सारु हरि सम उदारु अहंमेव निवारणु। महा दानि सतिगुर गिआनि मनि चाउ न हुटै। सतिवंतु हरि नामु मंत्रु नवनिधि न निखुटै। गुर रामदास तनु सरब मै सहजि चंदोआ ताणिअउ। गुर अरजुन कल्युचरै तै राज जोग रसु जाणिअउ॥ ७॥ भै निरभउ माणिअउ लाख महि अलखु लखायउ। अगमु अगोचर गति गभीरु सतिगुरि परचायउ। गुर परचै परवाणु राज महि जोगु कमायउ। धंनि धंनि गुरु धंनि अभर सर सुभर भरायउ। गुर गम प्रमाणि अजरु जरिओ सरि संतोख समाइयउ। गुर अरजुन कल्युचरै तै सहजि जोगु निजु पाइयउ॥ ८॥

(गुरु अर्जुन ने) धैर्य को ही धर्म बनाया है, वे गुरुमत में गहराई तक उतरे हैं, पर-दुःख दूर करनेवाले एवं श्रेष्ठ शब्द वाले हैं। गुरु का चित्त हरि के समान उदार एवं निरभिमान है। वे बड़े दानी हैं, उन्हें गुरु का ज्ञान प्राप्त है और उनके मन से प्रभु का चाव कभी नहीं घटता। वे बड़े सत्यवान्, उनके भण्डार में से नवनिधि-समान हरिनाम-मंत्र कभी कम नहीं पड़ता। गुरु रामदास के सुपुत्र सब जगह विद्यमान हैं, उन्होंने सहज-भाव का छत्र तान रखा है (स्थिर अवस्था में लीन हैं)। कल्ह कवि कहता है कि हे गुरु अर्जुन, तुम्हीं ने राजयोग का सही रस पाया है॥ ७॥ भय से इतर सदा निर्भय रहनेवाले परमात्मा को (गुरु अर्जुन ने) पा लिया है और जो स्वयं अदृश्य रूप में लाखों में रमता है (अपने सेवकों के अंग-संग रहता है)। सतिगुरु (गुरु रामदास) ने उसे (गुरु अर्जुन को) उस परमात्मा का साक्षात् करवाया है, जो अगम, अगोचर तथा अति गम्भीर गतिवाला है। अपने सतिगुरु के उपदेश के कारण (गुरु अर्जुन ने) राज-भोग में उदासीनता बना रखी है। धन्य हैं वे गुरु अर्जुनदेव, जिन्होंने ख़ाली हृदयों को हरिनामामृत से भर दिया है। गुरुपद पहुँचकर तुमने असह्य स्थितियों को भी सहन किया है और सदैव सन्तोष के सरोवर में लीन रहे हो। कवि कल्ह कहता है कि (हे गुरु अर्जुन) तुमने स्थिर-चित्त रहकर उच्चतर आध्यात्मिक अवस्था को पा लिया है॥ ८॥

अमिउ रसना बदनि बरदाति अलख अपार गुर सूर सबदि हउमै निवार्यउ। पंचाहरु निदलिअउ सुंन सहजि निज घरि सहार्यउ। हरिनामि लागि जग उधर्यउ सतिगुरु रिदै बसाइअउ। गुर अरजुन कल्युचरै तै जनकह कलसु दीपाइअउ॥ ९॥

हे अलक्ष्य, अपार, शूरवीर गुरु (अर्जुन), तुम जिह्वा से अमृत-वर्षण

करते हो (वचनामृत प्रदान करते हो) तथा मुख से वरदान देते हो। तुमने शब्द के द्वारा निरभिमानता को प्राप्त किया है। तुमने अज्ञान को नाश किया है, तथा शून्य में सहज समाधिस्थ रहकर अपने हृदय में (वाहिगुरु को) धारण किया है। तुम सदा हरिनाम में लीन हो, जगत का उद्धार करते हो और सतिगुरु रामदास को तुमने हृदय में बसाया है। कवि कल्ह कहता है कि हे गुरु अर्जुन, तुमने जनक के समान (ज्ञान का) कलश दीप्त किया है ॥ ९ ॥

॥ सोरठे ॥ गुरु अरजुनु पुरखु प्रमाणु पारथउ चालै नही। नेजा नाम नीसाणु सतिगुर सबदि सवारिअउ ॥ १ ॥ भवजलु साइरु सेतु नामु हरी का बोहिथा। तुअ सतिगुर संहेतु नामि लागि जगु उधर्यंउ ॥ २ ॥ जगत उधारणु नामु सतिगुर तुठै पाइअउ। अब नाहि अवर सरि कामु बारंतरि पूरी पड़ी ॥ ३ ॥ १२ ॥

गुरु अर्जुन पूर्णपुरुष अकाल के रूप हैं, अर्जुन की नाईं कभी दोलायित नहीं होते। सतिगुरु के उपदेश से तुमने हरिनाम का भाला धारण किया है (और काम-क्रोधादि शत्रुओं से निपट लिया है) ॥ १ ॥ संसार सागर है (इसे पार करने के लिए) परमात्मा का नाम पुल तथा जहाज़ के समान है। तुम्हारा (हे गुरु अर्जुन) सतिगुरु से प्यार है, अतः (तुमने) हरिनाम के सहारे जगत का उद्धार किया है ॥ २ ॥ गुरु के सन्तुष्ट होने पर ही तुमने जगत का उद्धार करनेवाला हरिनाम प्राप्त किया है। अब हमें किसी अन्य से कोई काम नहीं, (गुरु अर्जुन के) द्वार पर ही हमारे सब कार्य सम्पन्न हो गए हैं ॥३॥१२॥ (यहाँ पाँचवे गुरु अर्जुनदेव की स्तुति में लिखे कवि कल्ह या कलसहार के ९ सवैये एवं ३ सोरठे पूर्ण होते हैं।)

जोति रूपि हरि आपि गुरू नानकु कहायउ। ताते अंगदु भयउ तत सिउ ततु मिलायउ। अंगदि किरपा धारि अमरु सतिगुरु थिरु कीअउ। अमरदासि अमरतु छत्रु गुर रामहि दीअउ। गुर रामदास दरसनु परसि कहि मथुरा अंम्रित बयण। मूरति पंच प्रमाण पुरखु गुरु अरजुनु पिखहु नयण ॥ १ ॥ सति रूपु सतिनामु सतु संतोखु धरिओ उरि। आदि पुरखि परतखि लिख्यउ अछरु मसतकि धुरि। प्रगट जोति जगमगै तेजु भूअ मंडलि छायउ। पारसु परसि परसु परसि गुरि गुरू कहायउ।

मनि मथुरा मूरति सदा थिरु लाइ चितु सनमुख रहहु। कलजुगि जहाजु अरजुनु गुरू सगल स्रिस्टि लगि बितरहु ॥ २ ॥

ज्योतिस्वरूप हरि स्वयं गुरु नानक के रूप में अवतरित हुआ। फिर उसी तत्त्व से नया तत्त्व-रूप गुरु अंगद हुआ। गुरु अंगद ने कृपा-पूर्वक गुरु अमरदास को स्थापित किया। गुरु अमरदास ने अमृत का यह छत्र रामदास (गुरु) को सौंपा। मथुरा कवि कहता है कि गुरु रामदास के दर्शन-स्पर्श से (गुरु अर्जुन के) वचन भी अमृत-समान (आध्यात्मिक जीवन देनेवाले) हो गए हैं। पाँचवे गुरु में अकालपुरुष के मूर्त्त-रूप को अपनी आँखों से देखो ॥ १ ॥ गुरु अर्जुन स्वयं सत्यस्वरूप हैं, उनका नाम अमृत-सम सत्य है और उन्होंने हृदय में सत्य-सन्तोष को धारण कर लिया है। आदि-पुरुष परमात्मा ने शुरू से ही उनके मस्तक पर ऐसा लेख लिखा है। (हे गुरु अर्जुन) तुम्हारे भीतर हरि की ज्योति जगमगाती है, जिसका आलोक समूची धरती पर छाया है। पारस गुरु (गुरु रामदास) के स्पर्श से तुम भी गुरु कहलवाए हो। मथुरा कवि कहता है कि (गुरु अर्जुन के) स्वरूप में चित्त लगाकर सदा उसके सम्मुख रहो। कलियुग में गुरु अर्जुन जहाज़-समान हैं, सब सृष्टि (उसके चरणों में) लगकर सुरक्षित पार हो जाओ ॥ २ ॥

तिह जन जाचहु जगत्र पर जानीअतु बासुर रयनि बासु जाको हितु नाम सिउ। परम अतीतु परमेसुर कै रंगि रंग्यौ बासना ते बाहरि पै देखीअतु धाम सिउ। अपर परंपर पुरख सिउ प्रेमु लाग्यौ बिनु भगवंत रसु नाही अउरै काम सिउ। मथुरा को प्रभु स्रब मय अरजुन गुरु भगति कै हेति पाइ रहिओ मिलि राम सिउ ॥ ३ ॥ अंतु न पावत देव सबै मुनि इंद्र महासिव जोग करी। फुनि बेद बिरंचि बिचारि रहिओ हरि जापु न छाड्यउ एक घरी। मथुरा जन को प्रभु दीन दयालु है संगति स्रिस्टि निहालु करी। रामदासि गुरू जग तारन कउ गुर जोति अरजुन माहि धरी ॥ ४ ॥

ऐ लोगो, उस (गुरु से) याचना करो, जो समस्त संसार में प्रकट है। रात-दिन जिसका प्यार तथा वास हरिनाम की संगति में होता है, जो पूर्णतः उदासीन तथा हरि के प्यार में भीगा है; जो समस्त वासनाओं से दूर है, किन्तु बाहरी रूप से जिसे गृहस्थ देखते हैं। जिस गुरु अर्जुन का प्रेम अकालपुरुष से लगा है और जिस भगवद्-रस के अतिरिक्त अन्य किसी रस से वास्ता नहीं, वही गुरु अर्जुनदेव मथुरा के लिए सर्व-व्यापक परमात्मा

है; वह हरि-भक्ति के लिए प्रभु-चरणों में नित्य जुड़ा रहता है ।। ३ ।। समस्त देवता, ऋषि-मुनि उसका अन्त नहीं जानते, (यद्यपि) इन्द्र तथा शिव योग की साधना करते रहे, ब्रह्मा वेदों का उपदेश देता रहा और घड़ी-भर के लिए भी हरि-जाप नहीं छोड़ा । सेवक मथुरा का स्वामी (गुरु अर्जुन) दीनों पर दया करनेवाला तथा अपने शिष्यों एवं समूची सृष्टि को निहाल करनेवाला है । गुरु रामदास ने संसार के उद्धार के लिए अपनी परम-ज्योति गुरु अर्जुन में स्थापित की है ।। ४ ।।

जग अउरु न याहि महा तम मै अवतारु उजागरु आनि कीअउ । तिन के दुख कोटिक दूरि गए मथुरा जिन्ह अंम्रित नामु पीअउ । इह पधति ते मत चूकहि रे मन भेदु बिभेदु न जान बीअउ । परतछि रिदै गुर अरजुन कै हरि पूरन ब्रहमि निवासु लीअउ ।। ५ ।। जब लउ नही भाग लिलार उदै तब लउ भ्रमते फिरते बहु धायउ । कलि घोर समुद्र मै बूडत थे कबहू मिटिहै नही रे पछुतायउ । ततु बिचारु यहै मथुरा जग तारन कउ अवतारु बनायउ । जप्यउ जिन्ह अरजुन देव गुरू फिरि संकट जोनि गरभ न आयउ ।। ६ ।।

इस संसार के महा अंधकार में (गुरु अर्जुन के अतिरिक्त) कोई अन्य रक्षक नहीं है । प्रभु ने स्वयं उसे प्रकट अवतार बनाया है । मथुरा कवि कहता है कि जिन (सेवकों ने) उसकी संगति में नामामृत का पान किया है, उनके करोड़ों दु:ख मिट गए हैं । ऐ मेरे मन, इस मार्ग से भटकना नहीं और न ही यह भेद मानना कि दूसरा है (हरि से अलग कोई और है) । गुरु अर्जुन के हृदय में प्रत्यक्ष पूर्णब्रह्म का निवास है ।। ५ ।। जब तक मस्तक पर भाग्य-लेख उदित नहीं थे, तब तक इधर-उधर भटकते और भागते फिरते थे; कलियुग के भयानक सागर में डूब रहे थे और सदा पछताया करते थे । किन्तु मथुरा कहता है कि अब सच्चा विचार यह है कि संसार को तारने के लिए (परमात्मा ने ही गुरु अर्जुन को) अवतार दिया है । जिन्होंने गुरु अर्जुनदेव का नाम जपा है, वे पुन: गर्भ-योनि के संकट में नहीं पड़े ।। ६ ।।

कलि समुद्र भए रूप प्रगटि हरि नाम उधारनु । बसहि संत जिसु रिदै दुख दारिद्र निवारनु । निरमल भेख अपार तासु बिनु अवरु न कोई । मन बच जिनि जाणिअउ भयउ तिह समसरि सोई । धरनि गगन नव खंड महि जोति स्वरूपी रहिओ

भरि। भनि मथुरा कछु भेदु नही गुरु अरजुनु परतख्य हरि ॥ ७ ॥ १९ ॥

कलियुग रूपी समुद्र से पार लगाने के लिए (गुरु अर्जुन) परमात्मा के नाम-रूप से प्रकट हुए हैं। तुम्हारे हृदय में सत् निवास करता है, तथा तुम (जन का) दु:ख-दारिद्र्य नाश करनेवाले हो। तुम हरि का निर्मल वेश हो, तुम्हारे सिवा अन्य कोई नहीं। जिसने मन-वचन से प्रभु को पहचाना है, वह प्रभु-जैसा ही हो गया है। धरती, आकाश, नव-खण्ड आदि में (गुरु अर्जुन ही) ज्योतिस्वरूप होकर बसा हुआ है। मथुरा कहता है कि हरि एवं गुरु अर्जुन में कोई भेद नहीं, वह प्रत्यक्ष हरि का ही रूप है ॥ ७ ॥ १९ ॥ (यहाँ मथुरा भाट के ७ सवैये पूर्ण हुए।)

अजै गंग जलु अटलु सिख संगति सभ नावै। नित पुराण बाचीअहि बेद ब्रहमा मुखि गावै। अजै चवरु सिरि ढुलै नामु अंम्रितु मुखि लीअउ। गुर अरजुन सिरि छत्रु आपि परमेसरि दीअउ। मिलि नानक अंगद अमर गुर गुरु रामदासु हरि पहि गयउ। हरि बंस जगति जसु संचर्यउ सु कवणु कहै स्री गुरु मुयउ ॥ १ ॥ देव पुरी महि गयउ आपि परमेस्वर भायउ। हरि सिंघासणु दीअउ सिरी गुरु तह बैठायउ। रहसु कीअउ सुर देव तोहि जसु जय जय जंपहि। असुर गए ते भागि पाप तिन्ह भीतरि कंपहि। काटे सु पाप तिन्ह नरहु के गुरु रामदासु जिन्ह पाइयउ। छत्रु सिंघासनु पिरथमी गुर अरजुन कउ दे आइयउ ॥२॥२१॥९॥११॥१०॥१०॥२२॥६०॥१२२॥

(गुरु अर्जुन के पास हरिनाम रूपी) अजय गंगा बह रही है, जिसमें शिष्यों के समुदाय स्नान करते हैं, पुराणों की गाथाएँ कही-सुनी जाती हैं और स्वयं ब्रह्मा वेदों का गान करता है। तुम्हारे (गुरु अर्जुन के) सिर पर अमर चँवर झुलता है तथा तुम अमृत-समान हरिनाम का उच्चारण करते हो। स्वयं परमेश्वर ने गुरु अर्जुन के सिर पर छत्र प्रदान किया है (अर्थात् परमात्मा ने उसे अपना प्रतिनिधि स्थापित किया हैं)। गुरु नानक, गुरु अंगद, गुरु अमरदास को मिलकर गुरु रामदास प्रभु में लीन हो गए हैं। हरि के कुल-दीपक, (यहाँ हरिबंस भट्ट भी हो सकता है) संसार में गुरु का यश संचरित हो रहा है, कौन कह सकता है कि गुरु (गुरु रामदास) मृत हो चुके हैं! ॥ १ ॥ गुरु रामदास देवपुरी (सचखण्ड) में गए हैं, परमात्मा की यही इच्छा थी। प्रभु ने उन्हें सिंहासन दिया है और गुरु (रामदास) को उस पर आसीन किया है। देवताओं ने हर्ष प्रकट

किया है, सब तुम्हारा यशोगान एवं जय-जयकार करते हैं। काम-क्रोधादि दैत्य सब वहाँ से भाग गए हैं, उनके अपने पाप भीतर ही भीतर काँप गए हैं। जिन्होंने गुरु रामदास की शरण प्राप्त की थी, उन मनुष्यों के सब पाप दूर हो गए हैं। गुरु (रामदास) धरती का छत्र और सिंहासन गुरु अर्जुन को दे आए हैं। (ये दोनों सवैये हरिबंस भट्ट के हैं)। ॥ २ ॥ २१ ॥ ९ ॥ ११ ॥ १० ॥ १० ॥ २२ ॥ ६० ॥ १२२ ॥

१ ओं सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥

सलोक वारां ते वधीक ॥ महला १ ॥ उतंगी पैओहरी गहिरी गंभीरी। ससुड़ि सुहीआ किव करी निवणु न जाइ थणी। गचु जि लगा गिड़वड़ी सखीए धउलहरी। से भी ढहदे डिठु मै मुंध न गरबु थणी ॥ १ ॥ सुणि मुंधे हरणाखीए गूड़ा वैणु अपारु। पहिला वसतु सिञाणि कै तां कीचै वापारु। दोही दिचै दुरजना मित्रां कूं जैकारु। जितु दोही सजण मिलनि लहु मुंधे वीचारु। तनु मनु दीजै सजणा ऐसा हसणु सारु। तिस सउ नेहु न कीचई जि दिसै चलणहारु। नानक जिन्ही इव करि बुझिआ तिन्हा विटहु कुरबाणु ॥ २ ॥ जे तूं तारू पाणि ताहू पुछु तिड़ंन्ह कल। ताहू खरे सुजाण वंञा एनी कपरी ॥ ३ ॥ झड़ झखड़ ओहाड़ लहरी वहनि लखेसरी। सतिगुर सिउ आलाइ बेड़े डुबणि नाहि भउ ॥ ४ ॥

['वारां ते वधीक' से वे श्लोक अभिप्रेत हैं, जो वारों के साथ मिलाकर नहीं दिए जा सके।] (सास बहू से कहती है—) उच्च पयोधरों वाली स्त्री (अर्थात् यौवन-मद में मस्त स्त्री), कुछ गम्भीरता ग्रहण करो। (बहू उत्तर देती है—) हे सास, भारी कुचों (यौवन-बोझ) के कारण मैं झुक नहीं पाती, तुम्हें नमस्कार कैसे करूँ? (अब गुरुजी निष्कर्ष देते हैं) बड़े-बड़े पक्के और पहाड़ से ऊँचे प्रासाद भी ढहते देखे हैं, मूर्ख स्त्री, तू कुचों का (यौवन का) गर्व न कर ॥ १ ॥ ऐ मृग-नयनी स्त्री, समझदारी से वचन बोल; पहले वस्तु की जाँच करके ही उसके व्यापार में पड़ना चाहिए। दुर्जनों की संगति को त्यागकर मित्रों-सज्जनों की जय-जयकार करो।

जिस प्रकार से सज्जनों से भेंट हो, हे स्त्री, उसी का विचार करो। अपना तन-मन सज्जन मित्रों को सौंप देने से जो प्रसन्नता होती है, वही श्रेष्ठ है। जो नश्वर है, उससे प्रेम मत करो। गुरु नानक कहते हैं कि जिन्होंने इस तथ्य को जान लिया है, मैं उन पर से क़ुर्बान हूँ ॥ २ ॥ यदि तुम्हें जल में तैरना है, तो उनसे पूछो, जिन्हें तैरने की सूझ है। वे ही लोग ज्ञानवान् हैं, जो (अनुभवी हैं) इन लहरों में से गुज़र चुके हैं ॥ ३ ॥ झड़-झंक्खड़ (आँधी-तूफ़ान) हो या बाढ़ की लहरों में लाखों की लड़ियाँ बह रही हों। (ऐसे में) यदि तुम सतिगुरु को पुकार लो, तो तुम्हें डूबने का भय नहीं रहेगा ॥ ४ ॥

नानक दुनीआ कैसी होई। सालकु मितु न रहिओ कोई। भाई बंधी हेतु चुकाइआ। दुनीआ कारणि दीनु गवाइआ ॥५॥ है है करि कै ओहि करेनि। गला पिटनि सिरु खोहेनि। नाउ लैनि अरु करनि समाइ। नानक तिन बलिहारै जाइ ॥ ६ ॥ रे मन डीगि न डोलीऐ सीधै मारगि धाउ। पाछै बाघु डरावणो आगै अगनि तलाउ। सहसै जीअरा परि रहिओ माकउ अवरु न ढंगु। नानक गुरमुखि छुटीऐ हरि प्रीतम सिउ संगु ॥ ७ ॥ बाघु मरै मनु मारीऐ जिसु सतिगुर दीखिआ होइ। आपु पछाणै हरि मिलै बहुड़ि न मरणा होइ। कीचड़ हाथु न बूडई एका नदरि निहालि। नानक गुरमुखि उबरे गुरु सरवरु सची पालि ॥ ८ ॥

गुरु नानक कहते हैं कि यह दुनिया कैसी है (विचित्र है ?), इसमें कोई सच्चा मित्र नहीं, भाई-बन्धुत्व एवं पारस्परिक हित की सब बातें चुक गई हैं और (सामान्यतः लोग) फिर भी दुनिया के लिए अपना दीन-ईमान गँवाते हैं ॥ ५ ॥ हा, हा, करके ओह-आह करने तथा गालों पर चपत लगाकर रोने तथा सिर पीटने की (अपेक्षा जो लोग) हरिनाम जपने का अभ्यास करते हैं, गुरु नानक कहते हैं कि वे नित्य उन पर बलिहार जाते हैं ॥ ६ ॥ ऐ मन, गिरने-डोलने की ज़रूरत नहीं, सीधे मार्ग चलते जाओ। पीछे हटने पर बाघ (दुनिया का भय) खाता है, आगे बढ़ने पर अग्नि का तालाब (तृष्णा) है; इसलिए मेरा जीव संशय में पड़ा है, क्योंकि मुझे (मुक्ति-प्राप्ति का) ढंग नहीं आता। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु के द्वारा हरि-प्रिय को पाकर ही उद्धार होता है ॥ ७ ॥ सतिगुरु की दीक्षा से मन मार लेने से बाघ (संसार का भय) अपने-आप मर जाता है। जीव यदि अपने को पहचानकर हरि-मिलन प्राप्त कर ले, तो दोबारा मरने की नौबत नहीं आती। कीचड़ में डूबने से बचने के लिए एक-चित्त दृष्टि को

प्रभु में लगाओ। गुरु नानक कहते हैं कि जो गुरु रूपी सरोवर में सत्य का तट बाँधकर उसके सहारे पार उतरे हैं, वे सफल हो गए हैं (उबर गए हैं) ॥ ८ ॥

अगनि मरै जलु लोड़ि लहु विणु गुरनिधि जलु नाहि। जनमि मरै भरमाईऐ जे लख करम कमाहि। जमु जागाति न लगई जे चलै सतिगुर भाइ। नानक निरमलु अमर पदु गुरु हरि मेलै मेलाइ ॥ ९ ॥ कलर केरी छपड़ी कऊआ मलि मलि नाइ। मनु तनु मैला अवगुणी चिंजु भरी गंधीआइ। सरवरु हंसि न जाणिआ काग कुपंखी संगि। साकत सिउ ऐसी प्रीति है बूझहु गिआनी रंगि। संत सभा जैकारु करि गुरमुखि करम कमाउ। निरमलु नावणु नानका गुरु तीरथु दरीआउ ॥ १० ॥ जनमे का फलु किआ गणी जां हरि भगति न भाउ। पैधा खाधा बादि है जां मनि दूजा भाउ। वेखणु सुनणा झूठु है मुखि झूठा आलाउ। नानक नामु सलाहि तू होरु हउमै आवउ जाउ ॥ ११ ॥ हैनि विरले नाही घणे फैल फकड़ु संसारु ॥ १२ ॥

अग्नि (तृष्णा) को बुझाना है, तो जल की (हरिनाम की) खोज करो, किन्तु यह हरिनाम रूपी निधि (जल) गुरु के बिना और कहीं प्राप्त नहीं होती। लाखों कर्म करने पर भी जन्म-मरण के चक्र में भटकते रहा जाता है, किन्तु यदि सतिगुरु के कथनानुसार चला जाय, तो यमदूत रूपी कराधिकारी कष्ट नहीं पहुँचाते। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु ही हरि से भेंट करवाकर अमर पद दिलवाता है ॥ ९ ॥ गंदे कीचड़-भरे जोहड़ में कौआ नहा भी ले, तो तन-मन अवगुणों में मैला होगा और चोंच गंदगी से भर जायगी (भाव दुर्मति जीव कुसंगति में पड़ेगा तो और अधिक गंदा होगा)। मनुष्य मूलतः हंस है, किन्तु कौओं (मनमुखी जीवों) की कुसंगति के कारण गुरु रूपी मानसरोवर को नहीं पहचानता। ऐ ज्ञानवान् जीव, प्रेमपूर्वक यह समझ लो कि मायाधारी लोगों से की गई प्रीति ऐसी (निकृष्ट) होती है। (इसलिए) तुम गुरुमुख जीवों की संगति में रहकर सन्तजनों का जय-जयकार करो। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु सर्वोत्तम तीर्थ है, वहाँ का स्नान सबको निर्मल कर देता है ॥ १० ॥ यदि हरि-भक्ति या प्रभु-प्रेम न मिले, तो जन्म लेने का क्या फल गिना जाय ! तुम्हारा खाना, पहनना व्यर्थ है, जब तक मन में द्वैत-भाव बना हुआ है। देखना, सुनना तथा मुख से कहे वचन भी मिथ्या हैं। गुरु नानक कहते हैं

कि तुम हरिनाम का यश गाओ, अन्यथा अहम्-भाव का एकमात्र परिणाम आवागमन होता है ।। ११ ।। संसार में (परमात्मा का नाम लेनेवाले) विरले ही हैं, अधिक नहीं; शेष संसार तो आडम्बर और बकवाद मात्र है ।। १२ ।।

नानक लगी तुरि मरै जीवण नाही ताणु । चोटै सेती जो मरै लगी सा परवाणु । जिस नो लाए तिसु लगै लगी ता परवाणु । पिरम पैकामु न निकलै लाइआ तिनि सुजाणि ।।१३।। भाडा धोवै कउणु जि कचा साजिआ । धातू पंजि रलाइ कूड़ा पाजिआ । भांडा आणगु रासि जां तिसु भावसी । परम जोति जागाइ वाजा वावसी ।। १४ ।। मनहु जि अंधे घूप कहिआ बिरदु न जाणनी । मनि अंधै ऊंधै कवल दिसनि खरे करूप । इकि कहि जाणनि कहिआ बुझनि ते नर सुघड़ सरूप । इकना नादु न बेदु न गीअ रसु रसु कसु न जाणंति । इकना सिधि न बुधि न अकलि सर अखर का भेउ न लहंति । नानक ते नर असलि खर जि बिनु गुण गरबु करंत ।। १५ ।। सो ब्रहमणु जो बिंदै ब्रहमु । जपु तपु संजमु कमावै करमु । सील संतोख का रखै धरमु । बंधन तोड़ै होवै मुकतु । सोई ब्रहमणु पूजण जुगतु ।। १६ ।।

मर्म की चोट (आध्यात्मिक लग्न) तो वह है, जिससे तुरन्त मृत्यु हो जाय (अहम्-भाव मर जाय) और जीवन का बल नष्ट हो जाय (अहम्-भाव वाले जीवन का बल) । जिस चोट से कोई ऐसे मर सके, वही चोट स्वीकार की जाती है (अर्थात् अध्यात्म-पथ पर वही लग्न मानी जाती है, जो दूसरे सब आकर्षणों से एकदम विमुख कर दे) । यह चोट परमात्मा स्वेच्छा से जिसे लगाता है, उसे ही स्वीकार होती है । यह तो ऐसा प्रेम-बाण है, जो लगने पर फिर निकलता नहीं (कुछ सुजान लोगों को ही लगता है) ।। १३ ।। (परमात्मा ने तो) इस शरीर रूपी बर्तन को कच्चा बनाया है (इसे साफ़ कौन करे) ? इसमें पाँच धातु (पंचतत्त्व) मिलाकर झूठा दिखावा किया है । यह बर्तन तो तभी सही हो सकेगा, (गुरु के द्वारा) जब प्रभु को स्वीकार होगा । तब (गुरु) इसमें प्रेम-ज्योति जला देगा और इसमें जीवन का सही बाजा बजने लगेगा ।। १४ ।। जो जीव मन से अन्धे हैं, वे अपने वचनों की भी लाज नहीं पालते । उनके मन में अज्ञान होने के कारण उनका हृदय-कमल उलट जाता है, वे अनाकर्षक होते हैं । जो लोग एक प्रभु को ही जानते हैं, गुरु का वचन

मानते हैं, वे बड़े समझदार और रूपवान होते हैं। जिनमें न नाद-रस है (योगी नहीं), न ज्ञान-विचार है (ज्ञानी नहीं), न राग का रस है (संगीतज्ञ नहीं) और न ही जो कड़वा-कसैला आदि रसों को जानते हैं। जिनमें न कोई सिद्धि है, न बुद्धि है और जो अक्षर का भेद भी नहीं जानते। गुरु नानक कहते हैं कि ऐसे लोग निरे गधे हैं, जो गुण के बिना ही गर्व करते हैं ॥ १५ ॥ वास्तविक ब्राह्मण वही है, जो ब्रह्म को जानता है; जप, तप, संयम आदि कर्मों से जीवन चलाता है, जो शील और संतोष का धर्म-पालन करता है। जो संसार के बन्धनों को तोड़कर मुक्त हो जाता है, वही ब्राह्मण पूजने योग्य है ॥ १६ ॥

खत्री सो जु करमा का सूरु। पुंन दान का करै सरीरु। खेतु पछाणै बीजै दानु। सो खत्री दरगह परवाणु। लबु लोभु जे कूड़ु कमावै। अपणा कीता आपे पावै ॥ १७ ॥ तनु न तपाइ तनूर जिउ बालणु हड न बालि। सिरि पैरी किआ फेड़िआ अंदरि पिरी सम्हालि ॥ १८ ॥ सभनी घटी सहु वसै सह बिनु घटु न कोइ। नानक ते सोहागणी जिन्हा गुरमुखि परगटु होइ ॥ १९ ॥ जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ। सिरु धरि तली गली मेरी आउ। इतु मारगि पैरु धरीजै। सिरु दीजै काणि न कीजै ॥ २० ॥

सच्चा क्षत्रिय वह है, जो सत्कर्मों का शूरवीर है, अपने जीवन को पुण्य-दान करनेवाला बनाता है; जो योग्य पात्र को पहचानकर दान का बीज डालता है, वह क्षत्रिय परमात्मा के दरबार में स्वीकार होता है। जो लोभ, लालच में पड़कर मिथ्या कर्म करता है, वह अपने कर्मों का फल पाता है ॥ १७ ॥ शरीर को तंदूर की तरह न गर्माओ और हड्डियों को लकड़ी की तरह न जलाओ। सिर तथा पैरों ने क्या बिगाड़ा है, (जो इन्हें कठोर साधनात्मक कर्मों में लगाते हो), अपने भीतर प्रभु को याद करो ॥ १८ ॥ सब शरीरों में हरि का वास है, हरि के वास के बिना कोई शरीर नहीं। गुरु नानक कहते हैं कि सुहागिन जीवात्मा वही है, जिसके भीतर निवसित प्रभु-प्रियतम गुरु के द्वारा प्रकट हो गया है ॥ १९ ॥ यदि तुम्हें प्रेम का खेल खेलने का चाव है, तो सिर को तली (हथेली) पर रखकर मेरी गली आओ। [परमात्मा से प्यार में सिर (अहम्) को कोई स्थान नहीं।] इस मार्ग पर पैर धरना हो, तो 'सिर' की बलि देने में कोई हिचकिचाहट नहीं होनी चाहिए ॥ २० ॥

नालि किराड़ा दोसती कूड़ै कूड़ी पाइ। मरणु न जापै

मूलिआ आवै कितै थाइ ॥ २१ ॥ गिआन हीणं अगिआन पूजा । अंध वरतावा भाउ दूजा ॥ २२ ॥ गुर बिनु गिआनु धरम बिनु धिआनु । सच बिनु साखी मूलो न बाकी ॥ २३ ॥ माणू घलै उठी चलै । सादु नाही इवेही गलै ॥ २४ ॥

कायर जीवों (मायावी लोभों के कारण कायर) से दोस्ती (लोभ के कारण) मिथ्या होती है, ऐ भूले, कोई नहीं जानता कि मौत कहाँ आ जायगी ! (यह श्लोक भाई भूले की मृत्यु पर कहा गया था। भूला बहुत समय गुरु नानक के साथ रहा, किन्तु घर के मोह के कारण एक बार उसने गुरु नानक को झूठा संदेश दिलवा दिया कि वह घर पर नहीं। स्वयं वह घर पर ही छिपा हुआ था, उसे अन्दर साँप ने काट लिया, जिससे वह मर गया) ॥ २१ ॥ ज्ञानहीन लोग अज्ञानता की ही पूजा करते हैं, उनके व्यवहार में अन्धापन एवं भाव में एक प्रभु को छोड़ अन्य किसी की खोज होती है। (भाव यह कि वे अज्ञानान्ध होने के कारण परमात्मा को नहीं पहचानते।) ॥ २२ ॥ गुरु के बिना ज्ञान का, धर्म के बिना प्रभु में ध्यान लगाने का, सत्य के बिना साक्षी भरने का कोई प्रभाव शेष नहीं रह जाता ॥ २३ ॥ मनुष्य जैसा भेजा गया, यदि वैसा ही मर जाय, तो इसका क्या मज़ा ? उसने सँवारा तो कुछ नहीं —बेकार गलने (कष्ट सहने) का क्या स्वाद ? ॥ २४ ॥

रामु झुरै दल मेलवै अंतरि बलु अधिकार । बंतर की सैना सेवीऐ मनि तनि जुझु अपारु । सीता लै गइआ दहसिरो लछमणु मूओ सरापि । नानक करता करणहारु करि वेखै थापि उथापि ॥ २५ ॥ मन महि झूरै रामचंदु सीता लछमण जोगु । हणवंतरु आराधिआ आइआ करि संजोगु । भूला दैतु न समझई तिनि प्रभ कीए काम । नानक वेपरवाहु सो किरतु न मिटई राम ॥ २६ ॥ लाहोर सहरु जहरु कहरु सवा पहरु ॥ २७ ॥ महला ३ ॥ लाहौर सहरु अंम्रितसरु सिफती दा घरु ॥ २८ ॥

राम ने सेना एकत्रित की, मन में अधिकार का बल भी पाया; बन्दरों की सेना उसकी सेवा में विद्यमान थी और तन-मन में जूझने की अपार शक्ति भी थी, फिर भी वह दुःखी ही हुआ। (क्योंकि) सीता को रावण ले गया था और लक्ष्मण अभिशाप के कारण मारा गया था। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा स्वयं सब कुछ करता है, करने योग्य है, वही सबको बनाता-उखाड़ता है ॥२५॥ रामचन्द्र मन में सीता और लक्ष्मण के

लिए दुःखी हुए। हनुमान को याद किया (हनुमान से सहायता माँगी), वह भी कर्म-संयोग से आन पहुँचा। भ्रम में पड़ा रावण नहीं समझ सका कि परमात्मा उनके काम बना रहा है। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु तो बे-परवाह है, किन्तु कर्मों का फल कभी नहीं मिटता ।। २६ ।। (बाबर के चौथे आक्रमण के समय) लाहौर शहर पर घृणित अत्याचार हुए, सवा प्रहर तक वहाँ प्रलय छाया रहा ।। २७ ।। महला ३ ।। वही लाहौर शहर (गुरु के आगमन से) अब अमृत का सरोवर और गणों का घर बन गया है ।। २८ ।।

।। महला १ ।। उदो साहै किआ नीसानी तोटि न आवै अंनी। उदोसीअ घरे ही वुठी कुड़िईं रंनी धंमी। सती रंनी घरे सिआपा रोवनि कूड़ी कंमी। जो लेवै सो देवै नाही खटे दंम सहंमी ।। २९ ।। पबर तूं हरीआवला कवला कंचन वंनि। कै दोखड़ै सड़िओहि काली होईआ देहुरी नानक मै तनि भंगु। जाणा पाणी ना लहां जै सेती मेरा संगु। जितु डिठै तनु परफुड़ै चड़ै चवगणि वंनु ।। ३० ।। रजि न कोई जीविआ पहुचि न चलिआ कोइ। गिआनी जीवै सदा सदा सुरती ही पति होइ। सरफै सरफै सदा सदा एवै गई विहाइ। नानक किस नो आखीऐ विणु पुछिआ ही लै जाइ ।। ३१ ।। दोसु न देअहु राइ नो मति चलै जां बुढा होवै। गलां करे घणेरीआ तां अंन्हे पवणा खाती टोवै ।। ३२ ।। पूरे का कीआ सभ किछु पूरा घटि वधि किछु नाही। नानक गुरमुखि ऐसा जाणै पूरे मांहि समांही ।। ३३ ।।

उत्साह-पूर्वक रहने की क्या निशानी है ? उत्साही जन को कभी अन्न की कमी नहीं होती (परिश्रम के कारण वह सदा कमाता है)। बहू-बेटियों की भरमार के कारण सारे घर में गहमागहमी रहती है। अधिक स्त्रियों के कारण घर में स्यापा (झगड़ा-संघर्ष) पड़ा रहता है। जो लेता है, वह देता नहीं, बड़ी कठिनाई से धन (माया) इकट्ठा होता है ।।२९।। (इस श्लोक में गुरुजी ने संसार के मिथ्या कृत्यों में संलग्न लोगों का एक शब्द-चित्र प्रस्तुत किया है।) ऐ कमल, तुम कोमल हो, तुम्हारा रंग स्वर्ण सरीखा उत्तम है। आखिर ऐसा कौन-सा दोष है कि तुम सड़े हो, शरीर काला पड़ गया है और गुरु नानक कहते हैं कि तना टूट रहा है (शक्ति नष्ट हो रही है) ? (कमल उत्तर देता है—) जिस जल के साथ सदा मेरी संगति है, मुझे वह जल नहीं मिला। जिस जल को देखकर मैं प्रफुल्लित

होता हूँ और मुझे चौगुणा रंग चढ़ जाता है (वह जल मुझे नहीं मिला) ॥ ३० ॥ न कोई अपनी सन्तुष्टि तक जीता है, न कोई समस्त कार्यों को निपटाकर मरता है। ज्ञानी का ध्यान सदा हरि में लगा रहता है, इसलिए वह सदैव जीता है। अन्यथा बेकार की बचतों में जीवन चुक जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि कुछ कहा नहीं जाता, वह तो पूछे बिना ही जीव निकाल ले जाता है (धर्मराज बिना पूछे मृत्यु को भेज देता है) ॥ ३१ ॥ अमीरों को क्या दोष दें, बुढ़ापे में बुद्धि भी साथ नहीं देती। बातें तो बहुत बनाते हैं, किन्तु अज्ञानता-वश गढ़े में गिरता है ॥३२॥ पूर्णपरमात्मा का तो सब कुछ पूर्ण ही होता है। गुरु नानक कहते हैं, गुरुमुख ऐसा होता है, जो पूर्णप्रभु में ही समा जाता है ॥ ३३ ॥

सलोक महला ३

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ अभिआगत एह न आखीअहि जिन कै मन महि भरमु। तिन के दिते नानका तेहो जेहा धरमु ॥ १ ॥ अभै निरंजन परम पदु ताका भीखकु होइ। तिस का भोजनु नानका बिरला पाए कोइ ॥ २ ॥ होवा पंडितु जोतकी वेद पड़ा मुखि चारि। नवा खंडा विचि जाणीआ अपने चज वीचार ॥ ३ ॥ ब्रहमण कैली घातु कंञका अणचारी का धानु। फिटक फिटका कोड़ु बदीआ सदा सदा अभमानु। पाहि एते जाहि वीसरि नानका इकु नामु। सभ बुधी जालीअहि इकु रहै ततु गिआनु ॥ ४ ॥

भिक्षुक श्रमण उन्हें नहीं कहा जा सकता, जिनके मन में नित्य भ्रम बना रहता हो। ऐसे व्यक्ति को दिए गए दान-पुण्य का लाभ भी तो वैसा ही होगा ! ॥१॥ जो अभय तथा माया से रहित उच्च पदासीन परमात्मा के द्वार का भिक्षुक है, उस प्रकार के भिक्षुक के लिए कोई विरला ही भोजन जुटा सकता है। (अर्थात् उसका भोजन हरिनाम होता है, कोई विरला सद्गुरु ही जुटा सकता है) ॥ २ ॥ पंडित, ज्योतिषी बनूं, वेदों को ब्रह्मा की नाईं पढ़ जाऊँ; अपने गुण, ज्ञान और विचार से नौ खंडों में प्रसिद्धि पा लूं (तो भी क्या ?) ॥ ३ ॥ ब्राह्मण, कपिला गाय तथा कन्याघातकों और अनाचारी का धान्य खानेवालों को फटकारता और अभिमानियों का तिरस्कार करता होऊँ, तो भी यदि मैं हरिनाम को भुला दूं, तो इतने सब (ब्राह्मण आदि को मारने) पापों का बोझ मुझ पर पड़ता है। (अतः

मैं चाहता हूँ कि) अन्य सब चतुराइयों का अन्त हो जाय और केवल तत्त्व-ज्ञान बना रहे ॥ ४ ॥

माथै जो धुरि लिखिआ सु मेटि न सकै कोइ । नानक जो लिखिआ सो वरतदा सो बूझै जिस नो नदरि होइ ॥ ५ ॥ जिनी नामु विसारिआ कूड़ै लालचि लगि । धंधा माइआ मोहणी अंतरि तिसना अगि । जिन्हा वेलि न तूंबड़ी माइआ ठगे ठगि । मनमुख बंन्हि चलाईअहि ना मिलही वगि सगि । आपि भुलाए भुलीऐ आपे मेलि मिलाइ । नानक गुरमुखि छुटीऐ जे चलै सतिगुर भाइ ॥ ६ ॥ सालाही सालाहणा भी सचा सालाहि । नानक सचा एकु दरु बीभा परहरि आहि ॥ ७ ॥ नानक जह जह मै फिरउ तह तह साचा सोइ । जह देखा तह एकु है गुरमुखि परगटु होइ ॥ ८ ॥

आरम्भ से जो मस्तक में लिखा है, उसे कोई नहीं मिटा सकता । गुरु नानक कहते हैं कि जो भी लिखा है, वही व्यवहृत होता है— यह तथ्य वही जानता है, जिस पर प्रभु की कृपा होती है ॥ ५ ॥ जिसने मिथ्या लोभ में पड़कर हरिनाम भुला दिया, मोहक माया के धंधे में लगा रहा और भीतर तृष्णा की अग्नि ज्वलित रही । जिनके भीतर न तो भक्ति रूपी बेल है और न ही ज्ञान रूपी फल है, और जो माया के द्वारा ठगे गए हैं । मनमुखों को बाँधकर ले जाया जाता है, गायों और कुत्तों का कोई मेल नहीं होता । प्रभु के अपने भुलाने पर ही हम भूलते हैं और उसी के मेल मिलाने से मिलते हैं । गुरु नानक कहते हैं कि इस समूची सांसारिकता से केवल वे गुरुमुख ही छूटते हैं, जो सतिगुरु की शरण में रहकर आज्ञानुसार आचरण करते हैं ॥ ६ ॥ सच्चे स्तुति योग्य प्रभु की स्तुति करनी चाहिए । गुरु नानक कहते हैं कि सत्य का द्वार एक ही है, अन्य सब त्याज्य हैं ॥ ७ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि मैंने जहाँ-जहाँ भी देखा है, वही एक सच्चा दीखा है । जहाँ तक मेरी दृष्टि का सामर्थ्य है, वही एक सत्यस्वरूप है, जो गुरु के द्वारा प्रत्यक्ष हो जाता है ॥ ८ ॥

दूख विसारणु सबदु है जे मंनि वसाए कोइ । गुर किरपा ते मनि वसै करम परापति होइ ॥ ९ ॥ नानक हउ हउ करते खपि मुए खूहणि लख असंख । सतिगुर मिले सु उबरे साचै सबदि अलंख ॥ १० ॥ जिना सतिगुरु इक मनि सेविआ तिन जन लागउ पाइ । गुर सबदी हरि मनि वसै माइआ की भुख

जाइ । से जन निरमल ऊजले जि गुरमुखि नामि समाइ । नानक होरि पतिसाहीआ कूड़ीआ नामि रते पातसाह ॥ ११ ॥ जिउ पुरखै घरि भगती नारि है अति लोचै भगती भाइ । बहु रस सालणे सवारदी खट रस मीठे पाइ । तिउ बाणी भगत सलाहदे हरिनामै चितु लाइ । मनु तनु धनु आगै राखिआ सिरु वेचिआ गुर आगै जाइ । भै भगती भगत बहु लोचदे प्रभ लोचा पूरि मिलाइ । हरि प्रभु वे परवाहु है कितु खाधै तिपताइ । सतिगुर कै भाणै जो चलै तिपतासै हरिगुण गाइ । धनु धनु कलजुगि नानका जि चले सतिगुर भाइ ॥ १२ ॥

परमात्मा का शब्द दुःखों का निवारक है, इसे मन में बसाओ । यह गुरु की कृपा से ही मन में बसता है और प्रभु की दया से प्राप्त होता है ॥ ९ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि अहम् और अभिमान में लाखों, असंख्यों, अनन्तों जीव खप गए । जिन्हें सतिगुरु की शरण प्राप्त हुई, वे अदृश्य हरि के शब्द संग उबर गए ॥ १० ॥ जिन्होंने दत्त-चित्त होकर सतिगुरु की सेवा की है, मैं उन लोगों के चरणों से लगता हूँ । गुरु के उपदेश से उनके मन में हरि विराजता है, जिससे उनकी माया की भूख दूर हो जाती है । वे लोग निर्मल और उज्ज्वल हैं, जो गुरु के द्वारा हरिनाम में समा जाते हैं । गुरु नानक कहते हैं कि अन्य सम्पन्नता-समृद्धियाँ सब झूठी हैं, केवल हरिनाम से प्यार करनेवाले ही सम्पन्न होते हैं ॥ ११ ॥ जिस प्रकार पुरुष के घर प्रिया स्त्री प्रेम की माँग करती है (परमपुरुष के घर प्रेम-भाव की माँग करनेवाली भक्ति रूपी नारी है) । (पति की प्रसन्नता के लिए) अति सरस सब्ज़ी बनाती और खूब खट्टे-मीठे रस डालती है । इसी प्रकार भक्तजन हरिनाम में मन लगाकर वाणी की सराहना करते हैं । वे मन, तन, धन सब प्रभु को अर्पित करते एवं सिर गुरु के हाथों बेच देते हैं । भक्तजन परमात्मा से भय-भक्ति की माँग करते हैं और प्रभु (न केवल) उनकी माँग पूरी करता है, बल्कि अपने संग मिला लेता है । हरि-प्रभु बे-परवाह है, वह किस प्रकार सतुष्ट होता है ? यदि जीव सतिगुरु की आज्ञानुसार आचरण करे, तो प्रभु संतुष्ट होता है । गुरु नानक कहते हैं कि कलियुग में वे ही जीव धन्य हैं, जो सतिगुरु की इच्छा से चलते हैं ॥१२॥

सतिगुरु न सेविओ सबदु न रखिओ उरधारि । धिगु तिना का जीविआ कितु आए संसारि । गुरमती भउ मनि पवै तां हरि रसि लगै पिआरि । नाउ मिलै धुरि लिखिआ जन नानक पारि उतारि ॥ १३ ॥ माइआ मोहि जगु भरमिआ घरु

मुसै खबरि न होइ। काम क्रोधि मनु हिरि लइआ मनमुख अंधा लोइ। गिआन खड़ग पंच दूत सघारे गुरमति जागै सोइ। नाम रतनु परगासिआ मनु तनु निरमलु होइ। नाम हीन नकटे फिरहि बिनु नावै बहि रोइ। नानक जो धुरि करतै लिखिआ सु मेटि न सकै कोइ ॥ १४ ॥ गुरमुखा हरि धनु खटिआ गुर कै सबदि वीचारि। नामु पदारथु पाइआ अतुट भरे भंडार। हरि गुण बाणी उचरहि अंतु न पारावारु। नानक सभ कारण करता करै वेखै सिरजनहारु ॥ १५ ॥ गुरमुखि अंतरि सहजु है मनु चड़िआ दसवै आकासि। तिथै ऊंघ न भुख है हरि अंम्रित नामु सुख वासु। नानक दुखु सुखु विआपत नही जिथै आतमराम प्रगासु ॥ १६ ॥

जिसने सतिगुरु की सेवा नहीं की, हृदय में उपदेशामृत धारण नहीं किया, उसके जीने को धिक्कार है, वह संसार में किसलिए आया है ? गुरु के मतानुसार प्रभु का भय मन में आता है और हरि के प्यार का रस मिलता है। गुरु नानक कहते हैं कि पूर्वलिखितानुसार हरिनाम मिलता है और सेवक संसार से पार उतर जाता है ॥ १३ ॥ मोह-माया में संसार भटक रहा है, घर लुट रहा है, जीव को ख़बर नहीं होती। दुनिया में मनमुख जीव अज्ञानान्ध है और काम-क्रोधादि से उनका मन चुरा लिया जाता है। जो जीव गुरुमति द्वारा जाग्रत् होते हैं, वे ज्ञान रूपी खड्ग से काम-क्रोधादि पाँचों दूतों का संहार कर देते हैं। उनके भीतर हरिनाम-रत्न का प्रकाश होता है और तन-मन निर्मल हो जाता है। हरिनाम-विहीन जीव अपमानित होते हैं, पछताते और रोते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि आरम्भ से ही प्रभु ने जिसके भाग्य में जो लिख दिया है, वह कोई मिटा नहीं सकता ॥ १४ ॥ गुरुमुख जीवों ने गुरु के उपदेश पर विचार करते हुए हरि-धन की कमाई की है। उन्हें हरिनाम-पदार्थ मिला है, जिससे उनके भण्डार भर गए हैं, उनमें कभी कमी नहीं आती। गुरु-वाणी हरि के गुणों का ही बखान करती है, उसका कोई पारावार नहीं। गुरु नानक कहते हैं कि सृजनहार स्वयं ही सब कुछ कर-करके देखता है ॥ १५ ॥ गुरु के उपदेशानुसार आचरण करनेवाला जीव सहजोन्मुखी होता है (परम स्थिर अवस्था में होता है), उसका मन दशम द्वार में प्रवेश कर जाता है। वहाँ हरि का अमृत-नाम बसता है, अतः कोई इच्छा या निद्रा (शिथिलता) नहीं रह जाती। गुरु नानक कहते हैं कि जहाँ आत्मा के स्वामी (परमात्मा) का आलोक होता है, वहाँ दुःख-सुख नहीं व्यापते ॥ १६ ॥

काम क्रोध का चोलड़ा सभ गलि आए पाइ। इकि

उपजहि इकि बिनसि जांहि हुकमे आवै जाइ। जंमणु मरणु न चुकई रंगु लगा दूजै भाइ। बंधनि बंधि भवाईअनु करणा कछू न जाइ ॥ १७ ॥ जिन कउ किरपा धारीअनु तिना सतिगुरु मिलिआ आइ। सतिगुरि मिले उलटी भई मरिजीविआ सहजि सुभाइ। नानक भगती रतिआ हरि हरि नामि समाइ ॥१८॥ मनमुख चंचल मति है अंतरि बहुतु चतुराई। कीता करतिआ बिरथा गइआ इकु तिलु थाइ न पाई। पुंन दानु जो बीजदे सभ धरमराइ कै जाई। बिनु सतिगुरू जमकालु न छोडई दूजै भाइ खुआई। जोबनु जांदा नदरि न आवई जरु पहुचै मरि जाई। पुतु कलतु मोहु हेतु है अंति बेली को न सखाई। सतिगुरु सेवे सो सुखु पाए नाउ वसै मनि आई। नानक से वडे वडभागी जि गुरमुखि नामि समाई ॥ १९ ॥ मनमुख नामु न चेतनी बिनु नावै दुख रोइ। आतमारामु न पूजनी दूजै किउ सुखु होइ। हउमै अंतरि मैलु है सबदि न काढहि धोइ। नानक बिनु नावै मैलिआ मुए जनमु पदारथु खोइ ॥ २० ॥

सब जीव काम-क्रोध का चोला पहनकर आते हैं। कोई उपजते हैं, कोई नष्ट होते हैं, उनका आवागमन प्रभु के हुकुमानुसार होता है। जब तक द्वैत-भाव से प्यार लगा रहता है, जन्म-मरण का चक्र समाप्त नहीं होता। (मोह के) बन्धन में बँधे सब भ्रमित हैं, उनका कुछ नहीं किया जा सकता ॥ १७ ॥ जिन पर प्रभु की कृपा होती है, उन्हें सतिगुरु से भेंट हो जाती है। सतिगुरु-मिलन से समूची गति ही उलट जाती है (संसारोन्मुखी जीव अन्तर्मुखी होता है) और जीव सहज-स्थिति में मर के जीने लगता है। गुरु नानक कहते हैं कि भक्ति से प्यार करनेवाले जीव हरि-हरि-नाम में समा जाते हैं ॥ १८ ॥ मनमुखी जीव चंचल-बुद्धि होते हैं, वे अपने को अधिक चतुर समझते हैं। उनका किया-कराया सब व्यर्थ जाता है, कुछ भी स्वीकृत नहीं होता। वे जो कुछ भी पुण्य-दान करते हैं, वह भी धर्मराज की कसौटी पर रखा जाता है (अर्थात् परखा जाता है कि स्वार्थपूर्ण था या निष्काम?)। सतिगुरु के बिना यमदूत नहीं छोड़ते, द्वैत-भाव में उनकी ख्वारी होती है। यौवन बीतते पता भी नहीं चलता, बुढ़ापा आ जाता है और वे मर जाते हैं। वे पुत्र, स्त्री के मोह में पड़े रहते हैं, अन्त में कोई सखा-सहायी नहीं होता। जो सतिगुरु की सेवा करते हैं, वे सुख पाते हैं, उनके हृदय में हरिनाम बसता है। गुरु नानक कहते हैं कि जो जीव गुरु के द्वारा हरिनाम में समा जाते हैं, वे भाग्यशाली होते हैं ॥ १९ ॥ मनमुख जीव हरिनाम का सिमरन

नहीं करते, हरिनाम के बिना दुःखी होकर रोते हैं। वे सर्वव्यापक वाहिगुरु को नहीं पहचानते, द्वैत-भाव में भला उन्हें क्या सुख मिल सकता है? उनके भीतर अहम्-भाव की मलिनता भरी रहती है, वे उसे शब्द के जल से धो नहीं पाते। गुरु नानक कहते हैं कि हरिनाम के बिना वे (मनमुखी जीव) मलिनता में ही मर जाते हैं, मनुष्य-जन्म रूपी अमूल्य पदार्थ व्यर्थ में खो देते हैं ॥ २० ॥

मनमुख बोले अंधुले तिसु महि अगनी का वासु । बाणी सुरति न बुझनी सबदि न करहि प्रगासु । ओना आपणी अंदरि सुधि नही गुरबचनि न करहि विसासु । गिआनीआ अंदरि गुरसबदु है नित हरि लिव सदा बिगासु । हरि गिआनीआ की रखदा हउ सद बलिहारी तासु । गुरमुखि जो हरि सेवदे जन नानकु ता का दासु ॥ २१ ॥ माइआ भुइअंगमु सरपु है जगु घेरिआ बिखु माइ । बिखु का मारणु हरिनामु है गुर गरुड़ सबदु मुखि पाइ । जिन कउ पूरबि लिखिआ तिन सतिगुरु मिलिआ आइ । मिलि सतिगुर निरमलु होइआ बिखु हउमै गइआ बिलाइ । गुरमुखा के मुख उजले हरि दरगह सोभा पाइ । जन नानकु सदा कुरबाणु तिन जो चालहि सतिगुर भाइ ॥ २२ ॥ सतिगुर पुरखु निरवैरु है नित हिरदै हरि लिव लाइ । निरवैरै नालि वैरु रचाइदा अपणै घरि लूकी लाइ । अंतरि क्रोधु अहंकारु है अनदिनु जलै सदा दुखु पाइ । कूड़ु बोलि बोलि नित भउकदे बिखु खाधे दूजै भाइ । बिखु माइआ कारणि भरमदे फिरि घरि घरि पति गवाइ । बेसुआ केरे पूत जिउ पिता नामु तिसु जाइ । हरि हरि नामु न चेतनी करतै आपि खुआइ । हरि गुरमुखि किरपा धारीअनु जन विछुड़े आपि मिलाइ । जन नानकु तिसु बलिहारणै जो सतिगुर लागे पाइ ॥ २३ ॥ नामि लगे से ऊबरे बिनु नावै जमपुरि जांहि । नानक बिनु नावै सुखु नही आइ गए पछुताहि ॥ २४ ॥

मनमुख जीव (आध्यात्मिकता के प्रति) अन्धे और बहरे होते हैं, उनके अन्तर्मन में तृष्णा रूपी अग्नि का वास होता है। वे आत्मा द्वारा गुरुवाणी को नहीं समझते और शब्द द्वारा अन्तर् में आलोक धारण नहीं करते। उन्हें अपना ज्ञान तो होता नहीं, वे गुरु-वचनों पर भी विश्वास नहीं करते। ज्ञानी जीवों के भीतर गुरु का उपदेश विराजता है, उनकी हरि

में लग्न लगी होती है और सदा उनका विकास होता है। परमात्मा ज्ञानी जीव की रक्षा करता है, मैं सदा उन पर क़ुर्बान हूँ। जो जीव गुरु के द्वारा हरि-सेवा में लीन रहते हैं, गुरु नानक उनकी दासता स्वीकार करते हैं ॥ २१ ॥ माया विषैला सर्प है, जगत को इस विषैले साँप ने घेर रखा है। विष का निदान हरिनाम है; जो गुरु रूपी गारुड़ि (साँप के दंश का इलाज करनेवाला) के द्वारा मुँह में डाला जाता है। जिनके कर्मों में पहले से ही लिखा है, उन्हें ही सतिगुरु से भेंट होती है। वे सतिगुरु से मिलकर निर्मल होते हैं और अहम्-भाव का विष समाप्त हो जाता है। गुरुमुख जीवों के मुख उज्ज्वल होते हैं, वे प्रभु के दरबार में शोभा पाते हैं। गुरु नानकदास कहते हैं कि वे सतिगुरु की इच्छानुसार आचरण करनेवालों पर नित्य क़ुर्बान जाते हैं ॥ २२ ॥ सतिगुरु अकाल-पुरुष की ही तरह निर्वैर-रूप है, उसके हृदय में नित्य हरि की लग्न रहती है। जो निर्वैर जीवों से वैर करते हैं, वे अपने घर में आग लगाते हैं। उनके मन में क्रोध और अहंकार रहता है, वे सदा इसी में जलते और दुःख उठाते हैं। वे सदा मिथ्या वचन कहते और द्वैत-भाव की विष खाते हैं। वे (मूढ़तावश) माया के विष के लिए भटकते हैं और घर-घर में अपमानित होते हैं। वेश्या-पुत्र के समान उनको पिता का नाम प्राप्त नहीं होता। वे हरिनाम का स्मरण नहीं करते, अपने-आप को ख्वार करते हैं। परमात्मा गुरु के माध्यम से कृपा धारण करके बिछुड़े जीवों को अपने संग मिला लेता है। गुरु नानक कहते हैं कि वे उन जीवों पर क़ुर्बान हैं, जो सतिगुरु के चरणों में शरण लेते हैं ॥ २३ ॥ जो हरिनाम में लीन होते हैं, वे उबरते हैं, हरिनाम के बिना यमपुरी में जाना होता है (अर्थात् अकल्याण होता है)। गुरु नानक कहते हैं कि हरिनाम के बिना सुख नहीं मिलता, वरन् आवागमन का पश्चात्ताप लगता है ॥ २४ ॥

चिंता धावत रहि गए तां मनि भइआ अनंदु। गुरप्रसादी बुझीऐ साधन सुती निचिंद। जिन कउ पूरबि लिखिआ तिन्हा भेटिआ गुर गोविंदु। नानक सहजे मिलि रहे हरि पाइआ परमानंदु ॥ २५ ॥ सतिगुरु सेवनि आपणा गुर सबदी वीचारि। सतिगुर का भाणा मंनि लैनि हरिनामु रखहि उरधारि। ऐथै ओथै मंनीअनि हरिनामि लगे वापारि। गुरमुखि सबदि सिञापदे तितु साचै दरबारि। सचा सउदा खरचु सचु अंतरि पिरमु पिआरु। जमकालु नेड़ि न आवई आपि बखसे करतारि। नानक नाम रते से धनवंत हैनि निरधनु होरु संसारु ॥ २६ ॥ जन की टेक हरिनामु हरि बिनु नावै ठवर न ठाउ। गुरमती

नाउ मनि वसै सहजे सहजि समाउ। वडभागी नामु धिआइआ अहिनिसि लागा भाउ। जन नानकु मंगै धूड़ि तिन हउ सद कुरबाणै जाउ ॥ २७ ॥ लख चउरासीह मेदनी तिसना जलती करे पुकार। इहु मोहु माइआ सभु पसरिआ नालि चलै न अंतीवार। बिनु हरि सांति न आवई किसु आगै करी पुकार। वडभागी सतिगुरु पाइआ बूझिआ ब्रहमु बिचारु। तिसना अगनि सभ बुझि गई जन नानक हरि उरिधारि ॥ २८ ॥

चिन्ता और भटकन समाप्त हुई, तो मन में आनन्द उपजा। गुरु की कृपा से ज्ञान पाकर जीवात्मा रूपी स्त्री निश्चिन्त निद्रा-मग्न रहती है (निर्भय जीवन जीती है)। जिनके भाग्य में पूर्व कर्मों का लेखा है, वे गुरु के द्वारा परमात्मा को मिलते हैं। गुरु नानक कहते हैं, वे सहजावस्था में स्थित होकर पूर्ण परमानन्द को प्राप्त होते हैं ॥ २५ ॥ जो गुरु के शब्दों पर विचार करते हुए सतिगुरु की सेवा में तल्लीन रहते हैं; सतिगुरु की इच्छा को शिरोधार्य करते एवं हरिनाम को हृदय में धारण करते हैं। वे यहाँ और वहाँ (इहलोक और परलोक), दोनों जगह प्रतिष्ठा पाते और हरिनाम का व्यापार करते हैं। वे गुरु के मतानुसार शब्द को पहचानते और प्रभु के सच्चे दरबार में (सम्मानित होते हैं)। उनका व्यापार सत्य का है, उनकी आय-व्यय सब सत्य है, उनके मन में हरि-प्रभु के लिए प्रेम-प्यार रहता है। परमात्मा स्वयं उन्हें बख़्शता है, यमदूत उनके निकट नहीं फटकते। गुरु नानक कहते हैं कि जो जीव हरिनाम में रत हैं, वे ही समृद्ध हैं, शेष सब संसार निर्धन है ॥ २६ ॥ सेवक का एकमात्र सहारा हरिनाम होता है, हरिनाम के बिना उन्हें कोई ठिकाना नहीं होता। गुरु-उपदेश द्वारा उनके मन में हरिनाम बसता है और वे सहज में ही तुरीया पद को प्राप्त कर लेते हैं। वे भाग्य-पूर्वक हरिनाम का ध्यान करते एवं रात-दिन प्रभु-प्रेम में तल्लीन रहते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि उन्हें ऐसे महापुरुषों की चरणधूलि मिले तो वे उन पर क़ुर्बान हो जायँ ॥ २७ ॥ चौरासी लाख योनियों वाली यह सृष्टि तृष्णा की अग्नि में जलती हुई पुकारती है कि यह सब मोह-माया का प्रसार है, मृत्यु-समय कुछ साथ नहीं जाता। हरि-प्रभु के बिना कहीं शान्ति नहीं, किसी अन्य के सम्मुख क्या पुकार करें। बड़े भाग्य से जिन्होंने सतिगुरु को पा लिया है, उन्हें ब्रह्म का ज्ञान प्राप्त हुआ है। गुरु नानक कहते हैं कि ज्योंही सेवक ने हरिनाम को हृदय में धारण किया, तृष्णा की सब अग्नि बुझ गई ॥ २८ ॥

असी खते बहुतु कमावदे अंतु न पारावारु। हरि किरपा

करि कै बखसि लैहु हउ पापी वड गुनहगारु। हरि जीउ लेखै वार न आवई तूं बखसि मिलावणहारु। गुर तुठै हरिप्रभु मेलिआ सभ किलविख कटि विकार। जिना हरि हरि नामु धिआइआ जन नानक तिन्ह जैकारु ॥ २९ ॥ विछुड़ि विछुड़ि जो मिले सतिगुर के भै भाइ। जनम मरण निहचलु भए गुरमुखि नामु धिआइ। गुर साधू संगति मिलै हीरे रतन लभंन्हि। नानक लालु अमोलका गुरमुखि खोजि लहंन्हि ॥ ३० ॥ मनमुख नामु न चेतिओ धिगु जीवणु धिगु वासु। जिस दा दिता खाणा पैनणा सो मनि न वसिओ गुणतासु। इहु मनु सबदि न भेदिओ किउ होवै घरवासु। मनमुखीआ दोहागणी आवण जाणि मुईआसु। गुरमुखि नामु सुहागु है मसतकि मणी लिखिआसु। हरि हरि नामु उरिधारिआ हरि हिरदै कमल प्रगासु। सतिगुरु सेवनि आपणा हउ सद बलिहारी तासु। नानक तिन मुख उजले जिन अंतरि नामु प्रगासु ॥ ३१ ॥ सबदि मरै सोई जनु सिझै बिनु सबदै मुकति न होई। भेख करहि बहु करम विगुते भाइ दूजै परज विगोई। नानक बिनु सतिगुर नाउ न पाईऐ जे सउ लोचै कोई ॥ ३२ ॥

हम लोग अत्यन्त पापी हैं, हमारी भूलों का कोई अन्त नहीं। हे प्रभु, कृपा करके मुझे क्षमा कर दो, मैं बड़ा गुनाहगार हूँ। हे हरि, हिसाब-किताब करने से तो मेरी कोई सामर्थ्य नहीं, हे कृपालु, तुम कृपापूर्वक (मेरे अपराधों को क्षमा करके) मुझे बख्श लो। गुरु ने संतुष्ट होकर हरि-प्रभु से मेरी भेंट करवा दी, जिससे मेरे सब किल्विष (पाप) धुल गए। गुरु नानक कहते हैं कि जिन जीवों ने हरिनाम का जाप किया है, वे उनका जय-जयकार करते हैं ॥ २९ ॥ सतिगुरु के भय और प्रेम के कारण जो बिछुड़कर भी मिल जाते हैं, उनका जन्म-मरण का चक्र समाप्त होता है, क्योंकि वे गुरु के द्वारा परमात्मा का ध्यान करते हैं। गुरु से तथा सत्संगति में (बैठकर) हरिनाम रूपी हीरे-रत्न प्राप्त होते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि गुरुमुख जन ही उस अमूल्य जवाहर (प्रभु) को खोज लेते हैं ॥ ३० ॥ मनमुखी जीव हरिनाम स्मरण नहीं करते, उनके जीवन और रहन-सहन पर धिक्कार है। जिसका दिया वे खाते-पहनते हैं, उसी गुणागार को उन्होंने कभी मन में नहीं बसाया। उनका हृदय शब्द द्वारा बिंधा नहीं है, अतः वे अपने असली घर (प्रभु के निकट) क्योंकर जा सकेंगे ? मनमुखी जीवात्माएँ सदैव परित्यक्ता स्त्रियों की नाईं

होती हैं, यों ही आती-जाती (आवागमन में) मर जाती हैं। गुरुमुख जीवों के माथे हरिनाम का सुहाग-चिह्न मौजूद है, यही उनका सौभाग्य है। वे हरिनाम को हृदय में धारण करती हैं और उनका हृदय-कमल खिल जाता है। वे अपने सतिगुरु प्रियतम की सेवा में रत रहती हैं, मैं उन पर सदा बलिहार हूँ। गुरु नानक कहते हैं कि ऐसी सन्नारी जीवात्माओं के मुख उज्ज्वल होते हैं एवं उनके हृदय में हरिनाम का प्रकाश होता है ॥ ३१ ॥ जो मनुष्य प्रभु के शब्द से जीवित मृत्यु को प्राप्त होता है, वही मुक्ति का अधिकारी है, शब्द के बिना मुक्ति नहीं मिलती। लोग वेशाडम्बर करते और अन्यथा कर्मों में फँसे रहते हैं, समूची सृष्टि द्वैत-भाव में कष्ट उठाती है। गुरु नानक कहते हैं कि कोई कितना भी चाहे, किन्तु सतिगुरु के बिना हरिनाम प्राप्त नहीं होता ॥ ३२ ॥

हरि का नाउ अति वड ऊचा ऊचीहू ऊचा होई। अपड़ि कोइ न सकई जे सउ लोचै कोई। मुखि संजम हछा न होवई करि भेख भवै सभ कोई। गुर की पउड़ी जाइ चड़ै करमि परापति होई। अंतरि आइ वसै गुर सबदु वीचारै कोइ। नानक सबदि मरै मनु मानीऐ साचे साची सोइ ॥ ३३ ॥ माइआ मोहु दुखु सागरु है बिखु दुतरु तरिआ न जाइ। मेरा मेरा करदे पचि मुए हउमै करत विहाइ। मनमुखा उरवारु न पारु है अध विचि रहे लपटाइ। जो धुरि लिखिआ सु कमावणा करणा कछू न जाइ। गुरमती गिआनु रतनु मनि वसै सभु देखिआ ब्रहमु सुभाइ। नानक सतिगुरि बोहिथै वडभागी चड़ै ते भउजलि पारि लंघाइ ॥ ३४ ॥ बिनु सतिगुर दाता को नही जो हरिनामु देइ आधारु। गुर किरपा ते नाउ मनि वसै सदा रहै उरिधारि। तिसना बुझै तिपति होइ हरि कै नाइ पिआरि। नानक गुरमुखि पाईऐ हरि अपनी किरपा धारि ॥ ३५ ॥ बिनु सबदै जगतु बरलिआ कहणा कछू न जाइ। हरि रखे से उबरे सबदि रहे लिव लाइ। नानक करता सभ किछु जाणदा जिनि रखी बणत बणाइ ॥ ३६ ॥

हरि-प्रभु का नाम बड़ा ऊँचा है, ऊँचे से भी ऊँचा है। कोई कितना भी चाहे, उस तक कोई नहीं पहुँच सकता। ज़बानी संयम-संयम करने से संयम नहीं होता, हर कोई वेषाडम्बर करके फिरता है। जो गुरु की सीढ़ी चढ़ता है, जोकि सौभाग्य से ही प्राप्त होती है, उसके अन्तर् में गुरु-शब्द के विचार करने से परमात्मा आ बसता है। गुरु नानक कहते हैं कि

शब्द द्वारा जीवित ही मरने से मन संयम होता और सच्ची शोभा होती है ॥ ३३ ॥ मोह-माया का यह विषम संसार-सागर दुस्तर है, तरा नहीं जाता। लोग मेरा-मेरा (अधिकार-भावना) करते मर जाते हैं, अहम् में भटकते रहते हैं। मनमुख जीवों के लिए इस संसार का कोई आर-पार नहीं, वे बीच में ही लपट रहते हैं। जो प्रभु-इच्छा से कर्मों में लिखा गया है, वही प्राप्य होता है, उस सम्बन्ध में कुछ कहा नहीं जा सकता। जब गुरु-मतानुसार आचरण से ज्ञान-रत्न उपलब्ध होता है, तब सहज ही प्रत्येक वस्तु ब्रह्मरूप दीख पड़ती है। गुरु नानक कहते हैं कि सतिगुरु जहाज़ है, कोई भाग्यशाली ही उस जहाज़ पर चढ़कर संसार-सागर से पार हो जाते हैं ॥ ३४ ॥ सतिगुरु के अतिरिक्त अन्य कोई ऐसा दाता नहीं, जो सहारे के तौर पर हरिनाम प्रदान करे। गुरु की कृपा से मन में हरिनाम का वास होता है और जीव उसे हृदय में धारण करता है। हरिनाम में प्यार होने से तृष्णा-अग्नि बुझ जाती है और जीव को परम-संतोष प्राप्त होता है। गुरु नानक कहते हैं कि यह हरिनाम प्रभु की कृपा से गुरु के द्वारा प्राप्त होता है ॥ ३५ ॥ शब्द के बिना जगत ऐसा व्याकुल है कि उसका अनुमान नहीं हो सकता। परमात्मा के संरक्षण में जो शब्द में लीन रहे, वे बच गए। गुरु नानक कहते हैं कि सृजनहार सब कुछ जानता है, जिसने यह सब व्यवस्था बना रखी है ॥ ३६ ॥

होम जग सभि तीरथा पढ़ि पंडित थके पुराण। बिखु माइआ मोहु न मिटई विचि हउमै आवणु जाणु। सतिगुर मिलिऐ मलु उतरी हरि जपिआ पुरखु सुजाणु। जिना हरि हरि प्रभु सेविआ जन नानकु सद कुरबाणु ॥३७॥ माइआ मोहु बहु चितवदे बहु आसा लोभु विकार। मनमुखि असथिरु ना थीऐ मरि बिनसि जाइ खिन वार। वडभागु होवै सतिगुरु मिलै हउमै तजै विकार। हरिनामा जपि सुखु पाइआ जन नानक सबदु वीचार ॥ ३८ ॥ बिनु सतिगुर भगति न होवई नामि न लगै पिआरु। जन नानक नामु अराधिआ गुर कै हेति पिआरि ॥३९॥ लोभी का वेसाहु न कीजै जेका पारि वसाइ। अंतिकालि तिथै धुहै जिथै हथु न पाइ। मनमुख सेती संगु करे मुहि कालख दागु लगाइ। मुह काले तिन्ह लोभीआं जासनि जनमु गवाइ। सतसंगति हरि मेलि प्रभ हरिनामु वसै मनि आइ। जनम मरन की मलु उतरै जन नानक हरिगुन गाइ ॥ ४० ॥

पंडितजन होम, यज्ञ, तीर्थयात्रा तथा पुराणाध्ययन से थक गए हैं।

माया-मोह का विषैला वातावरण फिर भी नहीं मिटा, अहम्-भाव में जन्म-मरण का चक्र बना रहा। सतिगुरु के मिलन से सब प्रकार की मलिनताएँ धुल जाती हैं और जीव समर्थ पुरुष हरि का नाम जपता है। गुरु नानक उन पर सदा क़ुर्बान हैं, जिन्होंने हरि-हरि-नाम जपा है ॥ ३७ ॥ ज़्यादा-तर माया-मोह में पड़े रहते हैं, आशाओं-लोभादि के विकारों से दूषित होते हैं। मनमुख स्थिर नहीं हो पाता, कुछ ही समय में मरकर नष्ट हो जाता है। यदि भाग्य शुभ हो, तो सतिगुरु से भेंट होती है, तब जीव अहम्-भाव के विकार को त्याग देता है। दास नानक कहते हैं कि तब शब्द-ज्ञान एवं हरिनाम-जाप से जीव को परमसुख की प्राप्ति होती है ॥ ३८ ॥ सतिगुरु के बिना भक्ति नहीं होती, न ही हरिनाम से प्रेम उपजता है। दास नानक कहते हैं कि हरिनाम की आराधना गुरु के पथ-प्रदर्शन में ही सम्भव होती है ॥ ३९ ॥ जहाँ तक सम्भव हो, लोभी का कभी विश्वास न करें। वह अन्ततः ऐसी जगह धोखा देता है, जहाँ बचाव का कोई साधन नहीं होता। मनमुखी जीव की संगति करने से मुख में कालिमा का दाग़ लग जाता है। ऐसे लोभी-जनों के मुँह काले हैं, वे जन्म गँवाकर जाते हैं। हे हरि-प्रभु, मुझे सतिसंग प्रदान करो, ताकि मन में हरिनाम आन बसे। दास नानक कहते हैं कि तब हरि-गुणगान करने से जन्म-मरण की मलिनता दूर होती है ॥ ४० ॥

धुरि हरि प्रभि करतै लिखिआ सु मेटणा न जाइ। जीउ पिंडु सभु तिसदा प्रतिपालि करे हरि राइ। चुगल निंदक भुखे रुलि मुए एना हथु न किथाऊ पाइ। बाहरि पाखंड सभ करम करहि मनि हिरदै कपटु कमाइ। खेति सरीरि जो बीजीऐ सो अंति खलोआ आइ। नानक की प्रभ बेनती हरि भावै बखसि मिलाइ ॥ ४१ ॥ मन आवण जाणु न सुझई ना सुझै दरबारु। माइआ मोहि पलेटिआ अंतरि अगिआनु गुबारु। तब नरु सुता जागिआ सिरि डंडु लगा बहु भारु। गुरमुखां करां उपरि हरि चेतिआ से पाइनि मोख दुआरु। नानक आपि ओहि उधरे सभ कुटंब तरे परवार ॥ ४२ ॥ सबदि मरै सो मुआ जापै। गुरपरसादी हरि रसि ध्रापै। हरि दरगहि गुर सबदि सिञापै। बिनु सबदै मुआ है सभु कोइ। मनमुखु मुआ अपुना जनमु खोइ। हरिनामु न चेतहि अंति दुखु रोइ। नानक करता करे सु होइ ॥ ४३ ॥ गुरमुखि बुढे कदे नाही जिन्हा अंतरि सुरति गिआनु। सदा सदा हरिगुण रवहि अंतरि सहज धिआनु।

ओइ सदा अनंदि बिबेक रहहि दुखि सुखि एक समानि। तिना नदरी इको आइआ सभु आतम रामु पछानु ॥ ४४ ॥

हरि-प्रभु ने जो कुछ आरम्भ से ही भाग्य में लिख दिया है, वह मिटाया नहीं जाता। ये आत्मा, प्राण और शरीर सब उसी के हैं, वही हरि उनका प्रतिपालक है। चुग़लख़ोर, निन्दक आदि दुर्गुणी भूखे मर जाते हैं, इन्हें कोई सहारा नहीं मिलता। बाहर ये लोग सब प्रकार के पाखण्ड करते हैं और हृदय में कपट रखते हैं। शरीर रूपी खेत में जिस प्रकार (पाप या पुण्य) का बीज बोओगे, अन्ततः वही प्रकट होता है। गुरु नानक विनती करते हैं कि हे प्रभु, कृपापूर्वक हमें अपने संग मिला लो ॥ ४१ ॥ मन में आवागमन नहीं सूझता, न ही प्रभु-दरबार की प्राप्ति की इच्छा होती है। जीव माया-मोह में लिपटा रहता है तथा उसके भीतर अज्ञान एवं गँवारूपन भरा है। जब अन्तकाल में सिर पर यमों का डंड लगता है, तभी मनुष्य अज्ञान-निद्रा से जागता है। गुरुमुख जीव अपने वर्तमान में ही हरि का चिन्तन करते हैं, अतः मोक्ष प्राप्त करते हैं। ऐसे (गुरुमुख) जीव स्वयं तो मुक्ति पाते ही हैं, अपने कुटुम्ब-परिवार का भी उद्धार कर लेते हैं ॥ ४२ ॥ मनुष्य की माया-वृत्ति शब्द से मरती है, गुरु की कृपा से हरि-नाम-रस के पान द्वारा वह तृप्त होता है। गुरु के उपदेश से ही हरि-दरबार की पहचान होती है। बिना शब्द के भी सब कोई मरते तो हैं, किन्तु मनमुख जन्म गँवाकर मरता है। वह हरि-नाम-जाप के बिना अन्त में दुःखी होकर रोता है। गुरु नानक कहते हैं कि होता वही है, जो कर्ता (प्रभु) करता है ॥ ४३ ॥ जिन गुरुमुखों को अन्तरात्मा का ज्ञान हो जाता है, वे कभी बूढ़े नहीं होते। वे अन्तर्मुखी होकर नित्य सहज ध्यान लगाए हरिगुणों का स्मरण करते हैं। वे सदा विचारवान्, आनन्दयुक्त रहते हैं, उनके लिए दुःख-सुख एक समान होता है। उनकी दृष्टि सदा एक परमात्मा पर स्थिर रहती है, वे व्यापक हरि को पहचान लेते हैं ॥ ४४ ॥

मनमुखु बालकु बिरधि समानि है जिना अंतरि हरि सुरति नाही। विचि हउमै करम कमावदे सभ धरमराइ कै जांही। गुरमुखि हछे निरमले गुर कै सबदि सुभाइ। ओना मैलु पतंगु न लगई जि चलनि सतिगुर भाइ। मनमुख जूठि न उतरै जे सउ धोवण पाइ। नानक गुरमुख मेलिअनु गुर कै अंकि समाइ ॥ ४५ ॥ बुरा करे सु केहा सिझै। आपणै रोहि आपे ही दझै। मनमुखि कमला रगड़ै लुझै। गुरमुखि होइ तिसु सभ किछु सुझै। नानक गुरमुखि मन सिउ लुझै ॥ ४६ ॥

जिना सतिगुरु पुरखु न सेविओ सबदि न कीतो वीचारु। ओइ माणस जूनि न आखीअनि पसू ढोर गावार। ओना अंतरि गिआनु न धिआनु है हरि सउ प्रीति न पिआरु। मनमुख मुए विकार महि मरि जंमहि वारोवार। जीवदिआ नो मिलै सु जीवदे हरि जगजीवन उरधारि। नानक गुरमुखि सोहणे तितु सचै दरबारि ॥ ४७ ॥ हरि मंदरु हरि साजिआ हरि वसै जिसु नालि। गुरमती हरि पाइआ माइआ मोह परजालि। हरि मंदरि वसतु अनेक है नव निधि नामु समालि। धनु भगवंती नानका जिना गुरमुखि लधा हरि भालि। वडभागी गड़ मंदरु खोजिआ हरि हिरदै पाइआ नालि ॥ ४८ ॥

मनमुखी बालक भी वृद्ध के समान है, जिसे अन्तर्मन में प्रभु की कोई सुधि नहीं होती। वे सब अहम् के अधीन कर्म करते हैं, इसलिए धर्मराज के यहाँ उनका निर्णय होता है। गुरुमुख जीव निर्मल होते हैं, वे गुरु के सहज शब्द को ग्रहण करते हैं। वे सतिगुरु के उपदेशानुसार चलते हैं, इसलिए उन्हें ज़रा भी मैल नहीं लगती, जबकि मनमुख की जूठन सौ बार धोने पर भी नहीं उतरती। गुरु नानक कहते हैं कि गुरुमुख जीव गुरु के अंक में समाए रहते हैं ॥ ४५ ॥ जो बुरा करता है, उसका क्या हाल होता है ? वह क्रोध के कारण अपने-आप में जलता है। मनमुख जीव रगड़े-झगड़े में दीवाना हुआ फिरता है, यदि वह गुरून्मुख हो जाय, तो उसे सब कुछ सूझने लगता है (ज्ञान मिल जाता है)। गुरु नानक कहते हैं कि गुरुमुख अपने मन से ही लड़ता है (मन पर विजय प्राप्त करता है) ॥४६॥ जिन जीवों ने कभी सतिगुरु की शरण नहीं ली (सेवा नहीं की), कभी गुरु के वचनों पर विचार नहीं किया, उन्हें मनुष्य नहीं कहा जा सकता, वे तो पशु व गँवार-समान होते हैं। उनके मन में कोई ज्ञान-ध्यान नहीं होता, न ही वे हरि से प्रीति-प्यार रखते हैं। वे मनमुख विकारों में मरते एवं बार-बार आवागमन का चक्र भोगते हैं। जो लोग गुरुमुखों को मिलते हैं, वे हरि को हृदय में धारण करके जीते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि गुरुमुख प्रभु के दरबार में सुशोभित होते हैं ॥ ४७ ॥ परमात्मा ने इस शरीर रूपी मन्दिर का निर्माण किया है और स्वयं इसमें उसका निवास है। माया-मोह को त्यागकर गुरु के उपदेशों से हरि प्राप्त होता है। इस हरि-मन्दिर में अनेक वस्तुएँ हैं, स्वयं हरिनाम का सिमरन नव-निधि के समान है। वह भाग्यशाली धन्य है, जिन्हें गुरुमुखों से भेंट के पुरस्कार-स्वरूप परमात्मा मिल गया है। गुरु नानक कहते हैं कि हृदय के भीतर खोजने एवं हृदय में ही हरि को पा लेनेवाले भाग्यशाली हैं ॥ ४८ ॥

मनमुख दहदिसि फिरि रहे अति तिसना लोभ विकार। माइआ मोहु न चुकई मरि जंमहि वारोवार। सतिगुर सेवि सुखु पाइआ अति तिसना तजि विकार। जनम मरन का दुखु गइआ जन नानक सबदु बीचारि ॥ ४९ ॥ हरि हरि नामु धिआइ मन हरि दरगह पावहि मानु। किलविख पाप सभि कटीअहि हउमै चुकै गुमानु। गुरमुखि कमलु विगसिआ सभु आतम ब्रहमु पछानु। हरि हरि किरपा धारि प्रभ जन नानक जपि हरि नामु ॥ ५० ॥ धनासरी धनवंती जाणीऐ भाई जां सतिगुर की कार कमाइ। तनु मनु सउपे जीअ सउ भाई लए हुकमि फिराउ। जह बैसावहि बैसह भाई जह भेजहि तह जाउ। एवडु धनु होरु को नही भाई जेवडु सचा नाउ। सदा सचे के गुण गावां भाई सदा सचे कै संगि रहाउ। पैनणु गुण चंगिआईआ भाई आपणी पति के साद आपे खाइ। तिस का किआ सालाहीऐ भाई दरसन कउ बलि जाइ। सतिगुर विचि वडीआ वडिआईआ भाई करमि मिलै तां पाइ। इकि हुकमु मंनि न जाणनी भाई दूजै भाइ फिराइ। संगति ढोई ना मिलै भाई बैसणि मिलै न थाउ। नानक हुकमु तिना मनाइसी भाई जिना धुरे कमाइआ नाउ। तिन्ह विटहु हउ वारिआ भाई तिन कउ सद बलिहारै जाउ ॥ ५१ ॥ से दाड़ीआं सचीआ जि गुर चरनी लगंन्हि। अनदिनु सेवनि गुरु आपणा अनदिनु अनदि रहंन्हि। नानक से मुह सोहणे सचै दरि दिसंन्हि ॥ ५२ ॥

मनमुख जीव तृष्णा-लोभ के विकारों से युक्त होकर दसों दिशाओं में भटकते फिरते हैं; उनका माया-मोह नहीं टूटता, बार-बार मरते-जन्मते रहते हैं। तृष्णा एवं विकारों को त्यागकर यदि वे सतिगुरु की सेवा में आएँ, तो परमसुख को पा लें। गुरु नानक कहते हैं कि जिसने गुरु के वचनों पर विचार किया, उसका जन्म-जन्म का दुःख नष्ट हो गया ॥ ४९ ॥ ऐ मन, हरि-हरि-नाम का भजन करो, तभी हरि के सम्मुख सम्मान प्राप्त होगा। इससे अहम्-भाव तथा अभिमान चुक जायगा तथा सब पाप-विकार दूर होंगे। गुरु के द्वारा जिसका हृदय रूपी कमल विकसित हुआ है, वे व्यापक हरि को पहचानते हैं। दास नानक कहते हैं कि जब हरि की कृपा होती है, तो जीव हरिनाम जप पाता है ॥ ५० ॥ गुरु के वचनानुसार कर्म करनेवाली जीवात्मा-स्त्री ही धनवंती है। मन से अपना तन-मन गुरु को सौंप दे और उसके हुकुम में फेरियाँ भरता रहे। जहाँ बिठाए, वहाँ बैठे

और जहाँ भेजे वहाँ जाय। जितना बड़ा धन सच्चा नाम है, इतना बड़ा धन अन्य कोई नहीं। (इसलिए) ऐ भाई, मैं तो सदा सच्चे परमात्मा के गुण गाता और सदा सच्चे के संग रहता हूँ। वह तो गुणों-अच्छाइयों का बानिक पहनता एवं हरि के हुजूर में पैदा किए अपने सम्मान का स्वाद चखता है (अर्थात् गुरु-भजन द्वारा उसने परमात्मा के दरबार में जो भी दर्जा पाया है, उसके अनुसार रस भोगा है)। उसकी क्या प्रशंसा करें, हे भाई, उसके तो दर्शनों पर हम बलिहार जाते हैं। सतिगुरु में बहुत बड़े गुण हैं, प्रभु की कृपा हो तो ऐसा सतिगुरु प्राप्त होता है। कई ऐसे हैं जो हुकुम मानना नहीं जानते और द्वैत-भाव में भटकते रहते हैं। ऐसे लोगों को संगति का सहारा नहीं होता, वे बैठने को भी कहीं जगह नहीं पाते। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु का हुकुम वे ही मानते हैं, जिन्होंने परमात्मा के सम्मुख हरिनाम की कमाई की होती है। ऐसे जीवों पर मैं क़ुर्बान हूँ, मैं तो ऐ भाई, उन पर सदा बलिहार जाता हूँ ॥५१॥ वे दाढ़ियाँ सच्ची हैं, जो गुरु के चरणों का स्पर्श करती हैं (अर्थात् लम्बी दाढ़ी की प्रतिष्ठा नहीं, गुरु के चरण का स्पर्श करनेवाली दाढ़ी इसलिए सच्ची है कि उसमें अभिमान का तिरोभाव हो जाता है)। वे रात-दिन अपने गुरु की सेवा में रहतीं और सदा प्रफुल्लित रहती हैं। गुरु नानक कहते हैं कि सच्चे प्रभु के द्वार पर दिखनेवाले मुख सुन्दर लगते हैं (अर्थात् प्रभु के द्वार पर आनेवाले जीव सुशोभित होते हैं)॥ ५२॥

मुख सचे सचु दाड़ीआ सचु बोलहि सचु कमाहि। सचा सबदु मनि वसिआ सतिगुर मांहि समांहि। सची रासी सचु धनु उतम पदवी पांहि। सचु सुणहि सचु मंनि लैनि सची कार कमाहि। सची दरगह बैसणा सचे माहि समाहि। नानक विणु सतिगुर सचु न पाईऐ मनमुख भूले जांहि ॥५३॥ बाबीहा प्रिउ प्रिउ करे जल निधि प्रेम पिआरि। गुर मिले सीतल जलु पाइआ सभि दूख निवारणहारु। तिस चुकै सहजु ऊपजै चूकै कूक पुकार। नानक गुरमुखि सांति होइ नामु रखहु उरिधारि॥५४॥ बाबीहा तूं सचु चउ सचे सउ लिव लाइ। बोलिआ तेरा थाइ पवै गुरमुखि होइ अलाइ। सबदु चीनि तिख उतरै मंनि लै रजाइ। चारे कुंडा झोकि वरसदा बूंद पवै सहजि सुभाइ। जल ही ते सभ ऊपजै बिनु जल पिआस न जाइ। नानक हरि जलु जिनि पीआ तिसु भूख न लागै आइ॥ ५५॥ बाबीहा तूं सहजि बोलि सचै सबदि सुभाइ। सभ किछु तेरै नालि है सतिगुरि दीआ दिखाइ।

आपु पछाणहि प्रीतमु मिलै वुठा छहबर लाइ। झिमि झिमि अंम्रितु वरसदा तिसना भुख सभ जाइ। कूक पुकार न होवई जोती जोति मिलाइ। नानक सुखि सवन्हि सोहागणी सचै नामि समाइ ॥ ५६ ॥

उनके मुख सच्चे हैं, दाढ़ी सच्ची है, वे सत्य बोलते और सच्ची करनी करते हैं। उनके हृदय में सच्चा शब्द बसता है और वे अपने सतिगुरु में समाए रहते हैं। उनका मूलधन सत्य है, उनकी पूँजी और कमाई सत्य की है, वे सच्ची जगह बैठते और सच्चे में समाए रहते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि सतिगुरु के बिना सत्य के तत्त्व की सही प्राप्ति नहीं हो सकती, मनमुख जीव बेकार भ्रम में भटकते हैं ॥ ५३ ॥ पपीहा (जिज्ञासु जीव) प्रेम-प्यार के सागर में भी प्रिय-प्रिय को पुकारता है; गुरु के मिलन में दुःखों को निवारण कर देनेवाला हरिनाम रूपी शीतल जल प्राप्त होता है। उससे सहजावस्था प्राप्त होती है और कूक-पुकार (मिलनाकुलता) समाप्त हो जाती है। गुरु नानक कहते हैं कि तब हरिनाम उर-धारण करने से गुरुमुख को शान्ति प्राप्त हो जाती है ॥ ५४ ॥ ऐ जिज्ञासु जीव, तुम सच बोलो और सच्चे परमात्मा के साथ लग्न लगा लो। तुम्हारा वचन व्यर्थ नहीं होगा, तुम गुरु के द्वारा मार्ग पाकर बचन कहो। गुरु का शब्द जान लेने तथा आज्ञानुसार चलने से तृष्णा शान्त होती है। तब चारों ओर कृपा-वृष्टि होती है और सहज-स्वाभाविक ही स्वाति-बूंद (नाम-जल) पपीहे (जिज्ञासु) के मुख में भी पड़ती ही है। जल से ही तो सब उपजता है, जल के बिना किसी की प्यास नहीं बुझती। गुरु नानक कहते हैं कि जिसने हरिनाम-जल को ग्रहण किया है, उसे कोई भूख (इच्छा) नहीं रह जाती ॥ ५५ ॥ ऐ पपीहे, तुम पूर्ण स्थिरता एवं अडोल अवस्था में गुरु-वचनों को ग्रहण करो। सब कुछ तुम्हारे भीतर ही है, जोकि सतिगुरु ने तुम्हें दिखा दिया है। अपने-आप को पहचानने से ही प्रियतम मिलता है, तभी वह एक-रसधार होकर बरसता है। तब रिम-झिम हरि-नामामृत की वर्षा होती है और जिज्ञासु की सब भूख-प्यार दूर हो जाती है। फिर कोई चीख़-चिल्लाहट नहीं होती, ज्योति (जीवात्मा) परमज्योति (परमात्मा) में मिल जाती है। गुरु नानक कहते हैं कि सच्चे हरिनाम में लीन रहनेवाली सुहागिन जीवात्मा सुख-निंद्रा में मग्न रहती हैं ॥ ५६ ॥

धुरहु खसमि भेजिआ सचै हुकमि पठाइ। इंदु वरसै दइआ करि गूढ़ी छहबर लाइ। बाबीहे तनि मनि सुखु होइ जां ततु बूंद मुहि पाइ। अनु धनु बहुता उपजै धरती सोभा पाइ।

अनदिनु लोकु भगति करे गुर कै सबदि समाइ। आपे सचा बखसि लए करि किरपा करै रजाइ। हरि गुण गावहु कामणी सचै सबदि समाइ। भै का सहजु सीगारु करिहु सचि रहहु लिवलाइ। नानक नामो मनि वसै हरि दरगह लए छडाइ ॥५७॥ बाबीहा सगली धरती जे फिरहि ऊडि चड़हि आकासि। सतिगुरि मिलिऐ जलु पाईऐ चूकै भूख पिआस। जीउ पिंडु सभु तिस का सभु किछु तिस कै पासि। विणु बोलिआ सभु किछु जाणदा किसु आगै कीचै अरदासि। नानक घटि घटि एको वरतदा सबदि करे परगास ॥ ५८ ॥ नानक तिसै बसंतु है जि सतिगुरु सेवि समाइ। हरि वुठा मनु तनु सभु परफड़ै सभु जगु हरीआवलु होइ ॥ ५९ ॥ सबदे सदा बसंतु है जितु तनु मनु हरिआ होइ। नानक नामु न वीसरै जिनि सिरिआ सभु कोइ ॥ ६० ॥

(परमात्मा) स्वामी ने मूल से ही हुकुम भिजवाकर बुलाया है। गुरु रूपी इन्द्र दयापूर्वक रिम-झिम बरस रहा है। (किन्तु) पपीहे (जिज्ञासु) को तभी तन-मन से प्रसन्नता होती है, जब तत्त्व-बूँद (स्वाति-बूंद) उसके मुँह में पड़ती है (अर्थात् जब जिज्ञासु को ज्ञान होता है), तब (गुरु रूपी जलद के बरसने पर) धरती की शोभा बढ़ती है एवं अन्न-धन अधिक होता है। लोग नित्य भक्ति करते एवं गुरु के वचनों में लीन रहते हैं। सत्यस्वरूप परमात्मा इच्छानुसार अपने-आप अपना लेता है; अतः हे जीवात्मा-स्त्री, हरि-प्रियतम के गुण गाओ और उसके सच्चे शब्द में मग्न रहो। तुम प्रियतम के भय से उपजी सहजावस्था को अपना शृंगार बनाओ। गुरु नानक कहते हैं कि तब हरिनाम मन में बस जाएगा और प्रभु के निकट मुक्ति लाभ हो सकेगी ॥ ५७ ॥ ऐ पपीहे, यदि तुम समूची धरती पर घूमकर फिर लो और उड़कर आकाश पर भी चक्र लगा लो, किन्तु सतिगुरु से भेंट होने पर ही तुम्हें स्वाति-जल मिल सकता है (जिज्ञासु को ज्ञान मिल सकता है। पपीपा जिज्ञासु का प्रतीक है) और तब तुम्हारी सब भूख-प्यार (आशा-तृष्णा) शमित हो सकती है। यह प्राण-शरीर सब उसका (प्रभु का) है, सब उसी के पास है। वह तो बिना बताए ही सब कुछ जानता है, फिर प्रार्थना किसके सामने करें? गुरु नानक कहते हैं कि प्रत्येक शरीर में वही व्याप्त है और अपने शब्द द्वारा सबको भीतर से आलोकित कर रहा है ॥ ५८ ॥ गुरु नानक कहते हैं कि वही जीवात्मा-स्त्री बसन्त का पर्व मनाती है, जो सतिगुरु की सेवा में रत है। प्रियतम हरि के सन्तुष्ट होने पर तन-मन प्रफुल्लित होता एवं सारा संसार सुविकसित हो जाता है ॥ ५९ ॥ परमात्मा के शब्द से ही बसन्त की

बहार है, जिससे तन-मन खिल जाता है। गुरु नानक कहते हैं कि जिसने सबको उत्पन्न किया है, उसका नाम कभी विस्मृत न हो ॥ ६० ॥

नानक तिना बसंतु है जिना गुरमुखि वसिआ मनि सोइ। हरि वुठै मनु तनु परफड़ै सभु जगु हरिआ होइ ॥ ६१ ॥ वडड़ै झालि झलुं भलै नावड़ा लईऐ किसु। नाउ लईऐ परमेसरै भंनण घड़ण समरथु ॥ ६२ ॥ हरहट भी तूं तूं करहि बोलहि भली बाणि। साहिबु सदा हदूरि है किआ उची करहि पुकार। जिनि जगतु उपाइ हरि रंगु कीआ तिसै विटहु कुरबाणु। आपु छोडहि तां सहु मिलै सचा एहु वीचारु। हउमै फिका बोलणा बुझि न सका कार। वणु त्रिणु त्रिभवणु तुझै धिआइदा अनदिनु सदा विहाण। बिनु सतिगुर किनै न पाइआ करि करि थके वीचार। नदरि करहि जे आपणी तां आपे लैहि सवारि। नानक गुरमुखि जिन्ही धिआइआ आए से परवाणु ॥ ६३ ॥ जोगु न भगवी कपड़ी जोगु न मैले वेसि। नानक घरि बैठिआ जोगु पाईऐ सतिगुर कै उपदेसि ॥ ६४ ॥

गुरु नानक कहते हैं कि गुरु के द्वारा जिनके मन में वह (प्रभु) बस गया है, उन्हें बसन्त की ख़ुशियाँ प्राप्त हैं। प्रभु के संतुष्ट होने पर मन-तन सुविकसित होता एवं सारा संसार गंधा जाता है ॥ ६१ ॥ बड़े समय (प्रातःकाल) किसके दर्शन करें ? किसका नाम लें (स्वयं ही प्रश्न का उत्तर देते हैं—) उस परमेश्वर का नाम लें, जो बनाने-मिटाने का सामर्थ्य रखता है ॥ ६२ ॥ हे रहट, तुम भी तो तू-तू करते हो और मीठी लगने वाली यह अनुगूंज देते रहते हो। परमात्मा तो सदा प्रत्यक्ष है, ऊँचे-ऊँचे पुकार क्यों को जाय ? जिस परमात्मा ने जगत को उत्पन्न करके प्यार दिया है, उस पर से मैं क़ुर्बान हूँ। अपने-आप (स्व, अहम्) को छोड़ें तो प्रियतम मिलता है, यह एक सच्चाई है। अहम् का व्यापार फीका है, उसके कर्मों को कोई नहीं जानता। समूची प्रकृति, त्रिभुवन सब तुम्हारा ध्यान करते हैं, रात-दिन मेरा समय इसी प्रकार (तुम्हारे ध्यान में) गुज़रता है। कितना भी विचार कर-करके थकते रहो, सतिगुरु के बिना कोई उस प्रभु को नहीं पा सकता। वह कृपा-दृष्टि कर दे, तो स्वयं ही सबको सँवार ले। गुरु नानक कहते हैं कि जिन जीवों ने गुरु के द्वारा प्रभु का जाप किया है, वे सच्चे कोष में स्वीकार हो गए हैं ॥ ६३ ॥ योग की उपलब्धि न तो केसरिया कपड़ों में है और न ही मलिन वेश बनाए रखने में है। गुरु नानक कहते हैं कि सतिगुरु के उपदेश से तो घर बैठे ही योग प्राप्त हो जाता है ॥ ६४ ॥

चारे कुंडा जे भवहि वेद पड़हि जुग चारि। नानक साचा भेटै हरि मनि वसै पावहि मोखदुआर ।। ६५ ।। नानक हुकमु वरतै खसम का मति भवी फिरहि चलचित। मनमुख सउ करि दोसती सुख कि पुछहि मित। गुरमुख सउ करि दोसती सतिगुर सउ लाइ चितु। जंमण मरण का मूलु कटीऐ तां सुखु होवी मित ।। ६६ ।। भुलिआं आपि समझाइसी जा कउ नदरि करे। नानक नदरी बाहरी करणपलाह करे ।। ६७ ।।

चाहे कोई चारों दिशाओं की यात्रा कर ले, चारों युगों तक वेदों का अध्ययन करता रहे। (किन्तु) गुरु नानक कहते हैं कि जब सच्चा गुरु मिले, तभी परमात्मा मन में बसता और मोक्ष-द्वार की प्राप्ति होती है ।।६५।। गुरु नानक कहते हैं कि तुम्हारी बुद्धि विकृत हो गई है और चित्त चंचल हो गया है, तो भी स्वामी (हरि) का हुकुम व्याप्त है। मनमुख से मैत्री करके अब सुख क्या पूछते हो ? (अर्थात् मनमुख की संगति में कोई सुख नहीं)। गुरुमुख से मित्रता बनाओ और सतिगुरु में मन रमाओ; तब जन्म-मरण का चक्र मिट जाएगा, इसी में, ऐ मित्र, सुख निहित है ।।६६।। यदि वह कृपा-दृष्टि डाले, तो भूले हुओं को भी समझ आ जाती है। गुरु नानक कहते हैं कि उसकी कृपा-दृष्टि से रहित जीव सदा करुण प्रलाप करता रह जाता है ।। ६७ ।।

सलोक महला ४

१ ओं सतिगुर प्रसादि ।। वडभागीआ सोहागणी जिन्हा गुरमुखि मिलिआ हरिराइ। अंतरि जोति परगासीआ नानक नामि समाइ ।। १ ।। वाहु वाहु सतिगुरु पुरखु है जिनि सचु जाता सोइ। जितु मिलिऐ तिख उतरै तनु मनु सीतलु होइ। वाहु वाहु सतिगुरु सतिपुरखु है जिस नो समतु सभ कोइ। वाहु वाहु सतिगुरु निरवैरु है जिसु निंदा उसतति तुलि होइ। वाहु वाहु सतिगुरु सुजाणु है जिसु अंतरि ब्रहमु वीचारु। वाहु वाहु सतिगुरु निरंकारु है जिसु अंतु न पारावारु। वाहु वाहु सतिगुरू है जि सचु दिड़ाए सोइ। नानक सतिगुर वाहु वाहु जिस ते नामु परापति होइ ।। २ ।। हरिप्रभ सचा सोहिला गुरमुखि नामु गोविंदु। अनदिनु नामु सलाहणा हरि जपिआ मनि आनंदु। वडभागी हरि पाइआ पूरन परमानंदु। जन नानक नामु सलाहिआ बहुड़ि

न मनि तनि भंगु ॥३॥ मूं पिरीआ सउ नेहु किउ सजण मिलहि पिआरिआ । हउ ढूढेदी तिन सजण सचि सवारिआ । सतिगुरु मैडा मितु है जे मिलै त इहु मनु वारिआ । देंदा मूं पिरु दसि हरि सजणु सिरजणहारिआ । नानक हउ पिरु भाली आपणा सतिगुर नालि दिखालिआ ॥ ४ ॥

वे भाग्यशाली जीवात्मा-स्त्रियाँ सुहागिन हैं, जिन्हें गुरु के द्वारा परमात्मा-पति प्राप्त हुआ है। उनके भीतर, नानक कहते हैं, आलोक प्रकट होता है और वे हरिनाम में समा जाती हैं ॥ १ ॥ सतिगुरु परम समर्थ पुरुष है, उसने सत्य का ज्ञान पा लिया है। उसे मिलने से सब तृष्णा नष्ट होती एवं तन-मन शीतल हो जाता है। वह सतिगुरु आश्चर्यजनक और सत्यस्वरूप है, वह सबको समान रूप देखता है। सतिगुरु महान और निर्वैर है, उसे निन्दा-स्तुति दोनों एक समान हैं। सतिगुरु परम सुजान है, उसके भीतर आत्म-ज्ञान मौजूद होता है। सतिगुरु निरंकार ब्रह्म ही है, उसके अन्त की कोई सीमा नहीं। सतिगुरु वाहवा (उच्च) है, वह सत्य को दृढ़ करवाता है। गुरु नानक कहते हैं कि सतिगुरु से हरिनाम प्राप्त होता है, इसलिए वह महान है ॥ २ ॥ प्रभु का नाम ही गुरुमुख जीवों के लिए परमात्मा-कोटि का यश है। वे रात-दिन हरिनाम की श्लाघा करते, नाम जपते और आनन्द-मन रहते हैं। भाग्यशाली जीव हरि-मिलन में परमानन्द का रस लेते हैं। दास नानक कहते हैं कि जो हरिनाम की आराधना करते हैं, उन्हें कभी तन-मन का विघ्न नहीं होता ॥ ३ ॥ मेरा अपने साजन से प्यार है, मेरी उस प्यारे से क्योंकर भेंट होगी ? मैं अपने सत्य से सँवारे हुए साजन (गुरु) को ढूँढ़ती फिरती हूँ। सतिगुरु ही मेरा मित्र (साजन) है, वह मिल सके तो मैं अपना मन उस पर क़ुर्बान कर दूं। मेरा साजन मुझे सृजनहार हरि के दर्शन करा देता है। गुरु नानक कहते हैं कि मैं अपने प्रिय पति को ढूँढ़ती हूँ, जो सतिगुरु के सम्पर्क में ही दीख पड़ता है ॥ ४ ॥ (यहाँ गुरु और हरि में अभेद का दृष्टिकोण है।)

हउ खड़ी निहाली पंधु मतु मूं सजणु आवए । को आणि मिलावै अजु मै पिरु मेलि मिलावए । हउ जीउ करी तिस विटउ चउखंनीऐ जो मै पिरी दिखावए । नानक हरि होइ दइआलु तां गुरु पूरा मेलावए ॥ ५ ॥ अंतरि जोरु हउमै तनि माइआ कूड़ी आवै जाइ । सतिगुर का फुरमाइआ मंनि न सकी दुतरु तरिआ न जाइ । नदरि करे जिसु आपणी सो चलै सतिगुर भाइ । सतिगुर का दरसनु सफलु है जो इछै सो फलु पाइ ।

जिनी सतिगुरु मंनिआं हउ तिन के लागउ पाइ। नानकु ता का दासु है जि अनदिनु रहै लिव लाइ॥ ६॥ जिना पिरी पिआरु बिनु दरसन किउ त्रिपतीऐ। नानक मिले सुभाइ गुरमुखि इहु मनु रहसीऐ॥ ७॥ जिना पिरी पिआरु किउ जीवनि पिर बाहरे। जां सहु देखनि आपणा नानक थीवनि भी हरे॥ ८॥

मैं खड़ी राह देखती हूँ, शायद मेरा साजन आ जाय। कोई आज मुझे मेरे प्रियतम से आन मिलाए। जो मुझे प्रियतम दिखा दे, मैं उस पर अपने प्राण चार टुकड़े करके क़ुर्बान कर दूँ। गुरु नानक कहते हैं कि हरि की दया हो, तभी पूरे गुरु से भेंट होती है॥ ५॥ अन्तर्मन में अहम् का दबाव है, शरीर में मिथ्या माया है, इसी कारण आवागमन बना हुआ है। सतिगुरु का वचन नहीं माना, तो यह दुस्तर संसार-सागर पार नहीं होता। जिस पर परमात्मा अपनी कृपा-दृष्टि करता है, वह सतिगुरु की इच्छानुसार आचरण करने लगता है। सतिगुरु का दर्शन फलदायी है, मनोवांछित फल मिलता है। जो सतिगुरु की शरण में हैं, मैं उनके चरणों का स्पर्श करता हूँ। जो नित्य गुरु में लीन रहता है, नानक उनका सेवक है॥ ६॥ जिन्हें प्रियतम से प्यार है, वे (जीवात्माएँ) उसे देखे बिना कभी सन्तुष्ट नहीं हो सकतीं। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु के द्वारा उन्हें प्रभु की लीनता मिलती है, उनका मन प्रफुल्लित हो जाता है॥ ७॥ जिन्हें प्रियतम से प्यार है, वे (जीवात्माएँ) उसके बिना नहीं जी सकतीं। वह ज्योंही अपने प्रियतम का दर्शन करती हैं, निश्चय ही सुविकसित हो जाती हैं॥ ८॥

जिना गुरमुखि अंदरि नेहु तै प्रीतम सचै लाइआ। राती अतै डेहु नानक प्रेमि समाइआ॥ ९॥ गुरमुखि सची आसकी जितु प्रीतमु सचा पाईऐ। अनदिनु रहहि अनंदि नानक सहजि समाईऐ॥ १०॥ सचा प्रेम पिआरु गुर पूरे ते पाईऐ। कबहू न होवै भंगु नानक हरिगुण गाईऐ॥११॥ जिन्हा अंदरि सचा नेहु किउ जीवन्हि पिरी विहूणिआ। गुरमुखि मेले आपि नानक चिरी विछुंनिआ॥ १२॥

गुरु ने जिनके मन में सच्चे प्रियतम (प्रभु) के साथ प्रेम जाग्रत् कर दिया है, गुरु नानक कहते हैं कि वे रात-दिन उसी प्रेम में लीन रहते हैं॥ ९॥ गुरु के द्वारा जिसने सच्चे प्रियतम से आशिक़ी (अनुराग) की है। गुरु नानक कहते हैं कि उन्हें रात-दिन आनन्द होता है, वे सहजावस्था में समा जाते हैं॥ १०॥ पूर्णगुरु से सच्चा प्रेम-प्यार

प्राप्त होता है। गुरु नानक कहते हैं कि वह (प्रेम-प्यार) कभी भंग नहीं होता, (ऐसा प्रेम करनेवाले) नित्य हरि-प्रभु के गुण गाते हैं ॥ ११ ॥ जिनके भीतर सच्चा प्रेम है, वे जीव-स्त्रियाँ प्रियतम (प्रभु) के बिना जी नहीं पातीं। गुरु नानक कहते हैं कि ऐसी चिर-बिछुड़ी (जीवात्माओं को) गुरु के द्वारा पुनर्मिलन प्राप्त होता है ॥ १२ ॥

जिन कउ प्रेम पिआरु तउ आपे लाइआ करमु करि। नानक लेहु मिलाइ मै जाचक दीजै नामु हरि ॥ १३ ॥ गुरमुखि हसै गुरमुखि रोवै। जि गुरमुखि करे साई भगति होवै। गुरमुखि होवै सु करे वीचारु। गुरमुखि नानक पावै पारु ॥१४॥ जिना अंदरि नामु निधानु है गुरबाणी वीचारि। तिन के मुख सद उजले तितु सचै दरबारि। तिन बहदिआ उठदिआ कदे न विसरै जि आपि बखसे करतारि। नानक गुरमुखि मिले न विछुड़हि जि मेले सिरजणहार ॥ १५ ॥ गुर पीरां की चाकरी महां करड़ी सुख सारु। नदरि करे जिसु आपणी तिसु लाए हेत पिआरु। सतिगुर की सेवै लगिआ भउजलु तरै संसारु। मन चिंदिआ फलु पाइसी अंतरि बिबेक बीचारु। नानक सतिगुर मिलिऐ प्रभु पाईऐ सभु दूख निवारणहारु ॥ १६ ॥

जिन्हें प्रेम-प्यार होता है, हे प्रभु, तुम स्वयं कृपा-पूर्वक उन्हें अपने संग मिला लेते हो। गुरु नानक कहते हैं कि मुझ याचक को हरिनाम-दान देकर अपने में लीन कर लो ॥ १३ ॥ गुरुमुख जीव ही वास्तव में हँसता-रोता है (आध्यात्मिक सुख के कारण हँसता और पर-पीड़न के परिताप से रोता है)। गुरुमुख जो करता है, वही भक्ति है। इस तथ्य पर कोई गुरुमुख ही विचार कर सकता है, गुरु नानक के मतानुसार केवल गुरुमुख (गुरु-वचनानुसार आचरण करनेवाला) ही परम का भेद जान पाता है ॥ १४ ॥ जिन जीवों के भीतर गुरुवाणी का ज्ञान एवं हरिनाम रूपी निधि मौजूद है, उनके मुख नित्य उज्ज्वल होते हैं और वे सच्चे दरबार में सम्मानित होते हैं। उन्हें परमात्मा स्वयं बखशता है, इसलिए उठते-बैठते वे कभी उसे विस्मृत नहीं करते। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु के द्वारा प्रभु-मिलन पाकर पुनः कभी वियोग नहीं होता ॥ १५ ॥ गुरु-पीरों की सेवा बड़ी कठिन है, किन्तु श्रेष्ठ सुखदायक है। जिस पर उस प्रभु की दया होती है, उसी के अन्तर् में प्यार जगता है; सतिगुरु की सेवा में संलग्न होने पर संसार-सागर से मुक्ति मिलती है। मनोवांछित फल मिलता है और हृदय में ज्ञान का आलोक प्रकट होता है। गुरु नानक

कहते हैं कि सतिगुरु के मिलन में ही समस्त दुःखों को दूर करनेवाले प्रभु की प्राप्ति होती है ।। १६ ।।

मनमुख सेवा जो करे दूजै भाइ चितु लाइ । पुतु कलतु कुटंबु है माइआ मोहु वधाइ । दरगहि लेखा मंगीऐ कोई अंति न सकी छडाइ । बिनु नावै सभु दुखु है दुखदाई मोह माइ । नानक गुरमुखि नदरी आइआ मोह माइआ विछुड़ि सभ जाइ ।। १७ ।। गुरमुखि हुकमु मने सह केरा हुकमे ही सुखु पाए । हुकमो सेवे हुकमु अराधे हुकमे समै समाए । हुकमु वरतु नेमु सुच संजमु मन चिंदिआ फलु पाए । सदा सुहागणि जि हुकमै बुझै सतिगुरु सेवै लिव लाए । नानक क्रिपा करे जिन ऊपरि तिना हुकमे लए मिलाए ।। १८ ।। मनमुखि हुकमु न बुझे बपुड़ी नित हउमै करम कमाइ । वरत नेमु सुच संजमु पूजा पाखंडि भरमु न जाइ । अंतरहु कुसुधु माइआ मोहि बेधे जिउ हसती छारु उडाए । जिनि उपाए तिसै न चेतहि बिनु चेते किउ सुखु पाए । नानक परपंचु कीआ धुरि करतै पूरबि लिखिआ कमाए ।। १९ ।। गुरमुखि परतीति भई मनु मानिआ अनदिनु सेवा करत समाइ । अंतरि सतिगुरु गुरू सभ पूजे सतिगुर का दरसु देखै सभ आइ । मंनीऐ सतिगुर परम बीचारी जितु मिलिऐ तिसना भुख सभ जाइ । हउ सदा सदा बलिहारी गुर अपुने जो प्रभु सचा देइ मिलाइ । नानक करमु पाइआ तिन सचा जो गुर चरणी लगे आइ ।।२०।।

मनमुख जीव (हरि के अतिरिक्त) द्वैत-भाव में मन रमाकर सेवा-रत होता है । स्त्री, पुत्र, कुटुम्ब आदि से मोह बढ़ाता है । किन्तु जब धर्मराज के दरबार में हिसाब माँगा जाता है, तो उसे कोई नहीं छुड़ा पाता । हरिनाम के बिना सब दुःख ही दुःख है, मोह-माया दुखद ही होती है । गुरु नानक कहते हैं कि यदि गुरु की कृपा-दृष्टि उस पर हो जाय, तो सब मोह-माया छूट जाती है ।। १७ ।। गुरमुख जीव अपने स्वामी की आज्ञा-पालन करता है, आज्ञा-पालन में ही सुख प्राप्त करता है । वह परमात्मा के हुकुम में सेवा-रत होता और हुकुम की ही आराधना करता है । हुकुम में लीन होता एवं दूसरों को भी लीन करता है । उसके लिए सब व्रत, नियम, संयम प्रभु का हुकुम ही है, इसी से वह मनोवांछित फल प्राप्त कर लेता है । जो (जीवात्मा-स्त्री) हुकुम को पहचानती है, वह अपने सतिगुरु में लीन रहती और सच्ची सुहागिन होती है । गुरु नानक कहते हैं कि जिन पर परमात्मा कृपा करता है, उन्हें हुकुमानुकूल अपने में ही लीन कर

लेता है ॥ १८ ॥ बेचारी मनमुखी (जीवात्मा) हुकुम को नहीं पहचानती, अहम्-भाव में लिप्त कर्म कमाती है। उसमें व्रत, नियम, संयम, पूजा, पाखण्ड आदि के भ्रम बने रहते हैं। वे अन्तर्मन से मलिन, मोह-माया के बींधे हुए होते, वे हाथी की तरह (अपने पर तथा अपने चारों ओर) मिट्टी-धूल उड़ाते हैं। जिसने उन्हें पैदा किया है, वे उसका स्मरण नहीं करते और स्मरण के बिना सुख क्योंकर मिल सकता है! गुरु नानक कहते हैं कि यह सब प्रभु का अपना खेल है, सब पूर्व-कर्मानुसार फल प्राप्त करते हैं ॥ १९ ॥ गुरुमुख जीव का विश्वास दृढ़ होता है, मन प्रभु में लीन हो जाता है और वह नित्य प्रभु में सेवा-रत रहता है। अन्तर्मन में वह सतिगुरु का दर्शन-आराधन करता है और सतिगुरु को ऐसा परम विचारवान् मानता है कि जिसके दर्शन मात्र से सब भूख-प्यास (आशा-तृष्णा) नष्ट हो जाती है। मैं अपने गुरु पर सदा क़ुर्बान हूँ, जो सच्चे प्रभु से मिला देता है। गुरु नानक कहते हैं कि उनका भाग्य उन्नत है, जो गुरु की शरण में आ गए हैं ॥ २० ॥

जिन पिरीआ सउ नेहु से सजण मै नालि। अंतरि बाहरि हउ फिरां भी हिरदै रखा समालि ॥ २१ ॥ जिना इक मनि इक चिति धिआइआ सतिगुर सउ चितु लाइ। तिन की दुख भुख हउमै वडा रोगु गइआ निरदोख भए लिवलाइ। गुण गावहि गुण उचरहि गुण महि सवै समाइ। नानक गुर पूरे ते पाइआ सहजि मिलिआ प्रभु आइ ॥ २२ ॥ मनमुखि माइआ मोहु है नामि न लगै पिआरु। कूड़ु कमावै कूड़ु संघरै कूड़ि करै आहारु। बिखु माइआ धनु संचि मरहि अंति होइ सभु छारु। करम धरम सुचि संजमु करहि अंतरि लोभु विकार। नानक मनमुखि जि कमावै सु थाइ न पवै दरगह होइ खुआरु ॥ २३ ॥ सभना रागां विचि सो भला भाई जितु वसिआ मनि आइ। रागु नादु सभु सचु है कीमति कही न जाइ। रागै नादै बाहरा इनी हुकमु न बूझिआ जाइ। नानक हुकमै बूझै तिना रासि होइ सतिगुर ते सोझी पाइ। सभ किछु तिस ते होइआ जिउ तिसै दी रजाइ ॥ २४ ॥

जिस प्रियतम से मुझे प्यार है, वह मेरा साजन नित्य मेरे अंग-संग है। मैं अन्दर-बाहर घूमते-फिरते सदा उसे सँभालकर रखती हूँ (हृदय में बनाए रखती हूँ) ॥ २१ ॥ जिन्होंने अपने सतिगुरु से एक-चित्त होकर मन लगाया है, वे गुरु के प्यार के कारण दुःख, भूख, अहम् आदि रोगों से

मुक्त होकर निर्दोष हो गए हैं। वे प्रभु के गुण गाते, गुण उच्चारते एवं गुणों में स्वयं लीन रहते तथा दूसरों को लीन करते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि गुरु-मिलन से परमात्मा सहज ही आन मिलता है ॥ २२ ॥ मनमुख जीव मोह-माया में लिप्त रहता है, हरिनाम में उसका प्यार नहीं लगता। वह मिथ्या कमाता, मिथ्या खाता एवं मिथ्या ही संकलित करता है। वह माया के विषैले विकारों एवं धन-संग्रह में लगा ही मर जाता है, अन्ततः राख उसके पल्ले पड़ती है। कर्म-धर्म, छूतछात, संयम आदि की बातें करता है, (किन्तु) व्यावहारिक जीवन में लोभी और विकारग्रस्त होता है। गुरु नानक कहते हैं कि मनमुख जीव जो कर्म कमाता है, उनसे लाभान्वित नहीं होता, प्रभु के द्वार पर वह अपमानित होता है ॥ २३ ॥ सब रागों में वही संगीत उत्तम है, जिसके द्वारा प्रभु हृदय में आ बसे। राग और नाद (अनाहत ध्वनि का संगीत-श्रवण) श्रेष्ठ सत्य है, वह अमूल्य है। सांसारिक राग-नाद से प्रभु ऊपर है, इन रागों आदि से उसके हुकुम का ज्ञान नहीं होता। गुरु नानक कहते हैं कि जो हुकुम पहचानते एवं सतिगुरु से ज्ञान पा लेते हैं, (ये राग-नाद) उन्हीं को रास आते हैं। सब कुछ उसी के द्वारा (परमात्मा द्वारा) होता और उसी की इच्छा में विचरता है ॥ २४ ॥

सतिगुर विचि अंम्रित नामु है अंम्रितु कहै कहाइ। गुरमती नामु निरमलु निरमल नामु धिआइ। अंम्रित बाणी ततु है गुरमुखि वसै मनि आइ। हिरदै कमलु परगासिआ जोती जोति मिलाइ। नानक सतिगुरु तिन कउ मेलिओनु जिन धुरि मसतकि भागु लिखाइ ॥ २५ ॥ अंदरि तिसना अगि है मनमुख भुख न जाइ। मोहु कुटंबु सभु कूडु है कूड़ि रहिआ लपटाइ। अनदिनु चिंता चिंतवै चिंता बधा जाइ। जंमणु मरणु न चुकई हउमै करम कमाइ। गुर सरणाई उबरै नानक लए छडाइ ॥ २६ ॥ सतिगुर पुरखु हरि धिआइदा सतसंगति सतिगुर भाइ। सत संगति सतिगुर सेवदे हरि मेले गुरु मेलाइ। एहु भउजलु जगतु संसारु है गुरु बोहिथु नामि तराइ। गुरसिखी भाणा मंनिआ गुरु पूरा पारि लंघाइ। गुरसिखां की हरि धूड़ि देहि हम पापी भी गति पांहि। धुरि मसतकि हरि प्रभ लिखिआ गुर नानक मिलिआ आइ। जम कंकर मारि बिदारिअनु हरि दरगह लए छडाइ। गुर सिखा नो साबासि है हरि तुठा मेलि मिलाइ ॥२७॥ गुरि पूरै हरिनामु दिड़ाइआ जिनि विचहु भरमु चुकाइआ। राम

नामु हरि कीरति गाइ करि चानणु मगु देखाइआ। हउमै मारि एक लिव लागी अंतरि नामु वसाइआ। गुरमती जमु जोहि न सकै सचै नाइ समाइआ। सभु आपे आपि वरतै करता जो भावै सो नाइ लाइआ। जन नानकु नाउ लए तां जीवै बिनु नावै खिनु मरि जाइआ॥ २८॥

सतिगुरु में हरिनामामृत विराजता है, वह स्वयं नाम जपता और दूसरों को जपाता है। गुरु के वचनानुसार हरिनाम निर्मल है, उसी निर्मल नाम को जपता है। गुरु के द्वारा यह अमृत ज्ञान मन में वास करता है, जिससे हृदय रूपी कमल विकसित होता एवं आत्म-ज्योति परम-ज्योति में लीन होती है। गुरु नानक कहते हैं कि सतिगुरु उसी को मिलता है, पूर्व-कर्मानुसार जिसके मस्तक में भाग्य लिखा रहता है॥ २५॥ मनमुख जीव के भीतर तृष्णा की अग्नि रहती है, उसकी इच्छाओं-आशाओं का कोई अन्त नहीं। कुटुम्बादि का मोह सब मिथ्या है, वह (मनमुख) इसी मिथ्या से लिपटा रहता है। वह नित्य अनेकानेक चिन्ताओं में पड़ा, चिन्ताओं में ही बँधा रहता है। वह अहम् में लिप्त कर्म करता है, इसलिए उसका जन्म-मरण कभी समाप्त नहीं होता। गुरु नानक कहते हैं कि केवल गुरु ही उसे छुड़ा सकता है, उसी की शरण में उसका उद्धार सम्भव है॥ २६॥ परमपुरुष सतिगुरु की इच्छा से ही हरि का ध्यान एवं सत्संगति का सम्पर्क मिलता है। सत्संगति मिले तो गुरु-सेवा हो सकती है और गुरु ही प्रभु से मिला देता है। यह संसार सागर के समान है, इसमें गुरु जहाज है और हरिनाम पार-उतराई (मुक्ति) है। गुरु की मुक्तेच्छा को अविकल रूप से स्वीकारना ही गुरु-सिक्खी है, तभी पूर्णगुरु शिष्य को पार लँघाता है (अर्थात् मुक्ति दिलाता है)। परमात्मा हमें ऐसे गुरु-सिक्खों की चरण-धूलि दिलवा दे, तो हम पापियों की भी सद्गति हो। गुरु नानक कहते हैं कि पूर्व-कर्मानुसार जिसके मस्तक में प्रभु ने लिखा है, उन्हें सहज ही गुरु मिल जाता है। उसको पकड़ने आए यमदूतों को भी मारकर भगा दिया जाता है और प्रभु की दरगाह में गुरु उन्हें छुड़ा लेता है। ऐसे गुरु-सिक्ख शाबाश के योग्य हैं, जिन्हें हरि स्वयं सन्तुष्ट होकर अपने में लीन कर लेता है॥ २७॥ पूर्णगुरु हरि का नाम जपाता और अन्तर् से व्यर्थ के भ्रमों को चुका देता है। रामनाम जपने एवं प्रभु का यशोगान करने से अध्यात्म-पथ प्रकाशित होता है। जीव का अहम्-भाव दूर होता और अन्तर् में हरिनाम से अनुरक्ति बनती है। वह गुरु-उपदेशानुसार सच्चे हरिनाम में समा जाता है, यमदूत उसकी ओर दृष्टि भी नहीं उठा सकते। परमात्मा सब स्वयं ही सृजनहार है, जिसे चाहता है, उसे हरिनाम में लीन कर लेता है। दास नानक भी

हरिनाम जपकर ही जीवित है, नाम के बिना वह मृत-समान है (अर्थात् हरिनाम में ही दास नानक के प्राण बसते हैं) ॥ २८ ॥

मन अंतरि हउमै रोगु भ्रम भूले हउमै साकत दुरजना । नानक रोगु गवाइ मिलि सतिगुर साधू सजणा ॥२९॥ गुरमती हरि हरि बोले । हरि प्रेमि कसाई दिनसु राति हरि रती हरि रंगि चोले । हरि जैसा पुरखु न लभई सभु देखिआ जगतु मै टोले । गुर सतिगुरि नामु दिड़ाइआ मनु अनत न काहू डोले । जन नानकु हरि का दासु है गुर सतिगुर के गुल गोले ॥ ३० ॥

जिसके मन में अहम् का रोग विकसित है, जो भ्रम में भटकते हैं और मायाधारी, दुर्जन जीव हैं, वे भी, गुरु नानक कहते हैं, यदि सच्चे गुरु अथवा साधुजनों की संगति करें, तो उनके सब रोग निरस्त हो सकते हैं ॥ २९ ॥ (जो जीवात्मा) गुरु-उपदेशानुसार नित्य हरि-हरिनाम जपती है; हरि के प्रेम में खिंची, दिन-रात अपने चोले (पहनने) को हरि के प्यार में रँगती है (वह परमासक्त है)। हरि जैसा प्रियतम कहीं नहीं मिलता, मैंने सब जगत ढूंढ़कर देख लिया है। मेरे सतिगुरु ने मुझे हरिनाम दृढ़ कराया है, अतः मेरा मन अब कहीं और नहीं डोलता। दास नानक हरि का दास है और सतिगुरु के दासों का भी दास (है) ॥ ३० ॥

सलोक महला ५

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ रते सेई जि मुखु न मोड़ंन्हि जिन्ही सिञाता साई । झड़ि झड़ि पवदे कचे बिरही जिन्हा कारि न आई ॥ १ ॥ धणी विहूणा पाट पटंबर भाही सेती जाले । धूड़ी विचि लुडंदड़ी सोहां नानक तै सह नाले ॥ २ ॥ गुर कै सबदि अराधीऐ नामि रंगि बैरागु । जीते पंच बैराईआ नानक सफल मारू इहु रागु ॥ ३ ॥ जां मूं इकु त लख तउ जिती पिनणे दरि कितड़े । बामणु बिरथा गइओ जनंमु जिनि कीतो सो विसरे ॥ ४ ॥

जो स्वामी को पहचानते हैं, वे उसमें आसक्त हैं, कभी मुँह नहीं मोड़ते। जिनका प्यार कच्चा है, वे ही दोलायित होते हैं, उन्हें प्रेम-पथ पर सही चलना नहीं आता ॥ १ ॥ पति की अनुपस्थिति में रेशमी सुन्दर श्रृंगार

के कपड़े अग्नि में जलाने योग्य हैं। गुरु नानक कहते हैं कि मैं तो हे प्रियतम, तुम्हारी संगति में धूल में लोटती भी शोभा पाती हूँ। (जीवात्मा-स्त्री प्रभु-पति के बिना शृंगार हेय समझती है, प्रभु की संगति में निम्नावस्था भी उसे शोभनीय प्रतीत होती है) ॥ २ ॥ गुरु-वचनानुसार जो परमात्मा की आराधना करते एवं हरिनाम के प्यार में वैराग्य प्राप्त करते हैं, गुरु नानक कहते हैं कि (उनके लिए) यह मारू राग सफल है, जिससे वे पाँचों काम-क्रोधादि शत्रुओं को जीत लेते हैं ॥ ३ ॥ हे ब्राह्मण, मुझे एक परमात्मा ही लाखों के समान है, जिसके द्वार पर तुम सरीखे कितने ही याचक याचना करते हैं। तुम्हारा ब्राह्मण-जन्म व्यर्थ है, जो तुमने अपने बनानेवाले को ही भुला दिया है ॥ ४ ॥

सोरठि सो रसु पीजीऐ कबहू न फीका होइ। नानक राम नाम गुन गाईअहि दरगह निरमल सोइ ॥ ५ ॥ जो प्रभि रखे आपि तिन कोइ न मारई। अंदरि नामु निधानु सदा गुण सारई। एका टेक अगंम मनि तनि प्रभु धारई। लगा रंगु अपारु को न उतारई। गुरमुखि हरिगुण गाइ सहजि सुखु सारई। नानक नामु निधानु रिदै उरिहारई ॥ ६ ॥ करे सु चंगा मानि दुयी गणत लाहि। अपणी नदरि निहालि आपे लैहु लाइ। जन देहु मती उपदेसु विचहु भरमु जाइ। जो धुरि लिखिआ लेखु सोई सभ कमाइ। सभ कछु तिसदै वसि दूजी नाहि जाइ। नानक सुख अनद भए प्रभ की मनि रजाइ ॥ ७ ॥ गुरु पूरा जिनि सिमरिआ सेई भए निहाल। नानक नामु अराधणा कारजु आवै रासि ॥ ८ ॥

सोरठ राग के माध्यम से वह रस-पान करो, जो कभी फीका नहीं होता। गुरु नानक कहते हैं कि राम-नाम का गुणगान करने से प्रभु-दरबार में जीव की शोभा होती है ॥ ५ ॥ प्रभु स्वयं जिनका रक्षक है, उन्हें कोई नहीं मार सकता। उनके अन्तर्मन में हरिनाम की निधि है, वे सदैव प्रभु-गुणों को धारण करते हैं। वे सदैव उस अगम हरि का एकमात्र सहारा लेते हैं। उन्हें प्रभु से अपार प्रेम होता है, प्रेम का यह रंग कोई नहीं उतार सकता। गुरु के द्वारा वे हरि-गुण गाते और सहजानन्द का सुख भोगते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि हरिनाम-निधान उनकी हृदय रूपी ग्रीवा में माला के समान सुशोभित होता है ॥ ६ ॥ द्वैत-भावी उपागम को दूर करके, हरि के किए को उत्तम करके स्वीकार करो। (यह भी प्रार्थना करो कि हे प्रभु !) अपनी कृपा-दृष्टि डालकर

स्वयं ही अपने चरणों में शरण दो; ऐसा उपदेश दो कि बुद्धि स्थिर हो और भीतर के सब भ्रम दूर हो जायँ। मूल से ही जो लेख कर्मों में लिखा है, उसी के अनुकूल सब कर्म कमाते हैं। सब कुछ उसके (परमात्मा के) हाथ है, दूसरी कोई जगह नहीं। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु-इच्छा स्वीकारने से सब सुख-आनन्द होता है ॥ ७ ॥ जिन जीवों ने पूर्णगुरु का सिमरन किया है, वे निहाल हुए हैं। गुरु नानक कहते हैं कि हरिनाम की आराधना करने से सब कार्य सम्पन्न हो जाते हैं ॥ ८ ॥

पापी करम कमावदे करदे हाए हाइ। नानक जिउ मथनि माधाणीआ। तिउ मथे ध्रमराइ ॥ ९ ॥ नामु धिआइनि साजना जनम परदाथु जीति। नानक धरम ऐसे चवहि कीतो भवनु पुनीत ॥ १० ॥ खुभड़ी कुथाइ मिठी गलणि कुमंत्रीआ। नानक सेई उबरे जिना भागु मथाहि ॥ ११ ॥ सुतड़े सुखी सवंन्हि जो रते सह आपणे। प्रेम विछोहा धणी सउ अठे पहर लवंन्हि ॥ १२ ॥

पाप कर्म करनेवाले हाय-हाय करते हैं। धर्मराज उन्हें मथनी से मथे गए समान मथ डालता है ॥ ९ ॥ हे सज्जनो, हरिनाम की आराधना द्वारा जन्म-पदार्थ पर विजय पा लेनेवाले, गुरु नानक कहते हैं, ऐसी धर्माधारित बातें करते हैं कि उनसे सारा संसार पवित्र हो जाता है ॥१०॥ ग़लत परामर्श देनेवालों की बातें मीठी जानकर मैं उसमें फँस गई हूँ (जीवात्मा कहती है); गुरु नानक कहते हैं, उद्धार उन्हीं का होता है, जिनके मस्तक पर भाग्य-रेखा विद्यमान होती है ॥ ११ ॥ जो अपने स्वामी में परमासक्ति रखती हैं, वे निद्रा में सुख से सोती हैं। जिनका अपने पति-प्रभु से प्रेम टूट जाता है, वे आठों पहर दुःखी होती हैं ॥ १२ ॥

सुतड़े असंख माइआ झूठी कारणे। नानक से जागंन्हि जि रसना नामु उचारणे ॥ १३ ॥ म्रिग तिसना पेखि भुलणे वुठे नगर गंध्रब। जिनी सचु अराधिआ नानक मनि तनि फब ॥ १४ ॥ पतित उधारण पारब्रहमु संम्रथ पुरखु अपारु। जिसहि उधारे नानका सो सिमरे सिरजणहारु ॥ १५ ॥ दूजी छोडि कुवाटड़ी इकस सउ चितु लाइ। दूजै भावीं नानका वहणि लुढ़ंदड़ी जाइ ॥ १६ ॥

झूठी माया के कारण असंख्य जीव अज्ञान की निद्रा में सो रहे हैं। गुरु नानक कहते हैं कि वे (जीव ही) जाग्रत् हैं, जिनकी जिह्वा हरिनामोच्चारण करती है ॥ १३ ॥ (जीव) मृग-तृष्णा एवं गन्धर्वनगर

(दोनों कल्पित एवं अनस्तित्व वाले शब्द हैं) देखकर भ्रम में भटकते हैं। (किन्तु) गुरु नानक कहते हैं कि जिसने सत्यस्वरूप प्रभु की आराधना की है, वे तन-मन से सुशोभित हैं ॥ १४ ॥ परब्रह्म परमपुरुष, अपार सामर्थ्य वाला एवं पतितों का उद्धारक है। गुरु नानक कहते हैं कि वह जिसका उद्धार करता है (जिस पर कृपा करता है), वही उस सृजनहार की आराधना करता है ॥ १५ ॥ द्वैत-भाव का ग़लत रास्ता छोड़कर एक परमात्मा में ही मन रमाओ। गुरु नानक कहते हैं कि द्वैत-भाव में जीने वाली जीवात्मा नदी के प्रवाह में बह रही वस्तु के समान है ॥ १६ ॥

तिहटड़े बाजार सउदा करनि वणजारिआ। सचु वखरु जिनी लदिआ से सचड़े पासार ॥ १७ ॥ पंथा प्रेम न जाणई भूली फिरै गवारि। नानक हरि बिसराइ कै पउदे नरकि अंध्यार ॥ १८ ॥ माइआ मनहु न वीसरै मांगै दंमां दंम। सो प्रभु चिति न आवई नानक नही करंमि ॥ १९ ॥ तिचरु मूलि न थुड़ींदो जिचरु आपि क्रिपालु। सबदु अखुटु बाबा नानका खाहि खरचि धनु मालु ॥ २० ॥

(सामान्यतः ये जीव) त्रिगुणमयी माया में विचरते और जीवन-व्यापार करते हैं; सच्चे पंसारी वे ही हैं, जिन्होंने सच्चाई का सौदा लाद लिया है ॥ १७ ॥ प्रेम का सही मार्ग (जीवात्मा) नहीं जानती, गँवार व्यर्थ में भूली फिरती है। गुरु नानक कहते हैं कि परमात्मा का नाम भुलाकर वह (जीवात्मा) घोर नरक में पड़ती है ॥ १८ ॥ मन से माया का प्रभाव नहीं छूटता, बराबर अधिकाधिक धन की माँग होती है। गुरु नानक कहते हैं कि भाग्य में ही न होने के कारण वह परमात्मा कभी (उनके) मन में नहीं आता ॥ १९ ॥ जब तक प्रभु की कृपा बनी है, कभी कोई घाटा नहीं; गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु का शब्द ऐसा धन-माल है, जिसे कितना भी खाओ-ख़र्चो, कभी घटता नहीं ॥ २० ॥

खंभ विकांदडे जे लहां घिना सावी तोलि। तंनि जड़ांई आपणै लहां सु सजणु टोलि ॥ २१ ॥ सजणु सचा पातिसाहु सिरि सांहां दै साहु। जिसु पासि बहिठिआ सोहीऐ सभनां दा वेसाहु ॥ २२ ॥

जो मुझे बिकते हुए पंख मिल जायँ, तो मैं उन्हें ठीक मोल पर ख़रीद लूँ और अपने शरीर पर जोड़कर अपने साजन को खोज निकालूँ (अर्थात् उड़कर अपने प्रभु-पति को खोजूँ और उससे जा मिलूँ) ॥ २१ ॥ मेरा साजन सच्चा बादशाह है, वह शाहों-सम्राटों से भी उच्च शाह है।

(अर्थात् मेरा परमात्मा सर्वोच्च है।) मैं उसकी शरण में सुशोभित हूँ, मुझे उसी की कृपा का आश्रय है ॥ २२ ॥

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सलोक महला ९ ॥ गुन गोबिंद गाइओ नही जनमु अकारथ कीन। कहु नानक हरि भजु मना जिहि बिधि जल कौ मीन ॥ १ ॥ बिखिअन सिउ काहे रचिओ निमख न होहि उदास। कहु नानक भजु हरि मना परै न जम की फास ॥ २ ॥ तरनापो इउ ही गइओ लीओ जरा तनु जीति। कहु नानक भज हरि मना अउध जातु है बीति ॥ ३ ॥ बिरधि भइओ सूझै नही कालु पहूचिओ आन। कहु नानक नर बावरे किउ न भजै भगवान ॥ ४ ॥ धनु दारा संपति सगल जिनि अपुनी करि मानि। इन मै कछु संगी नही नानक साची जानि ॥ ५ ॥ पतित उधारन भै हरन हरि अनाथ के नाथ। कहु नानक तिह जानीऐ सदा बसतु तुम साथ ॥ ६ ॥ तनु धनु जिह तो कउ दीओ ता सिउ नेहु न कीन। कहु नानक नर बावरे अब किउ डोलत दीन ॥ ७ ॥ तनु धनु संपै सुख दीओ अरु जिह नीके धाम। कहु नानक सुनु रे मना सिमरत काहि न राम ॥ ८ ॥

हे जीव, यदि तुमने परमात्मा का स्तुति-गान नहीं किया, तो तुम्हारा जन्म-व्यर्थ हो गया है। गुरु नानक का कथन है कि ऐ मन, हरि को इस प्रकार नित्य भजो, जैसे मछली जल को भजती है (अर्थात् जल ही मछली का प्राण है, वैसे ही हरिनाम में अपने प्राण टिका लो) ॥ १ ॥ ऐ जीव, तुम क्यों विषय-विकारों में रत हो, क्षण-भर भी उनसे विरत नहीं होते! गुरु नानक कहते हैं कि ऐ मन, हरि-भजन करो, यमराज की फाँसी से बच जाओगे ॥ २ ॥ यौवन यों ही बीत गया, बुढ़ापे ने अब तुम्हारे शरीर पर अधिकार जमा लिया है। गुरु नानक कहते हैं कि ऐ मन, आयु यों ही बीती जा रही है, हरि का भजन कर लो ॥ ३ ॥ वृद्धावस्था आ गई, कुछ सूझ नहीं पड़ा; अन्ततः काल भी आ पहुँचा। गुरु नानक कहते हैं कि ऐ मुग्ध मनुष्य, तुम अभी भी क्यों भगवान का भजन नहीं करते? ॥ ४ ॥ जिसने धन, स्त्री, सकल सम्पत्ति आदि को अपना करके मान लिया है, उसे उद्बोधन करते हुए गुरु नानक कहते हैं कि सच्ची बात यह है कि इनमें से कोई भी तुम्हारा सच्चा साथी नहीं है ॥ ५ ॥ परमात्मा पतितों का उद्धार करनेवाला, भय का निवारक एवं अनाथों का नाथ है। गुरु नानक

कहते हैं कि उसे इस प्रकार पहचानो कि वह सदा तुम्हारे अंग-संग बसता है ।। ६ ।। जिस प्रभु ने तुम्हें तन दिया है, समृद्धि दी है, तुमने उसके साथ कभी प्यार नहीं किया । गुरु नानक का कथन है कि ऐ मूर्ख मनुष्य, अब दीन-हीन होकर क्यों डोलता है (अर्थात् जब धन देनेवाले की तुम्हें क़द्र नहीं, तो धन-हीन अवस्था में स्थिरता क्यों गँवाते हो ?) ।। ७ ।। जिस प्रभु ने तन, धन, सम्पत्ति तथा सुन्दर भवन दिए हैं; गुरु नानक कहते हैं कि ऐ मन, उसी प्रभु का नाम नित्य स्मरण क्यों नहीं करते ? ।। ८ ।।

सभ सुख दाता रामु है दूसर नाहिन कोइ । कहु नानक सुनि रे मना तिह सिमरत गति होइ ।। ९ ।। जिह सिमरत गति पाईऐ तिहि भजु रे तै मीत । कहु नानक सुन रे मना अउध घटत है नीत ।। १० ।। पांच तत को तनु रचिओ जानहु चतुर सुजान । जिह ते उपजिओ नानका लीन ताहि मै मान ।। ११ ।। घटि घटि मै हरि जू बसै संतन कहिओ पुकारि । कहु नानक तिह भजु मना भउ निधि उतरहि पारि ।। १२ ।। सुखु दुखु जिह परसै नही लोभु मोहु अभिमानु । कहु नानक सुन रे मना सो मूरति भगवान ।। १३ ।। उसतति निंदिआ नाहि जिहि कंचन लोह समानि । कहु नानक सुनु रे मना मुकति ताहि तै जानि ।। १४ ।। हरख सोग जा कै नही बैरी मीत समान । कहु नानक सुनि रे मना मुकति ताहि तै जान ।। १५ ।। भै काहू कउ देत नहि नहि भै मानत आनि । कहु नानक सुन रे मना गिआनी ताहि बखानि ।। १६ ।। जिहि बिखिआ सगली तजी लीओ भेख बैराग । कहु नानक सुन रे मना तिह नर माथै भाग ।। १७ ।।

सब सुखों को देनेवाला प्रभु राम है, दूसरा अन्य कोई नहीं । गुरु नानक-कथन है, ऐ मन सुनो ! उसी के सिमरन से गति सम्भव है ।। ९ ।। ऐ मित्र, जिसके स्मरण से उद्धार होता है, तुम उसी का भजन करो । गुरु नानक कहते हैं कि ऐ मन, सुनो ! तुम्हारी आयु नित्यप्रति घटती जा रही है (समय रहते भजन कर लो) ।। १० ।। ऐ चतुर मनुष्य, यह जान लो कि तुम्हारा शरीर पाँच तत्त्वों से बनाया गया है । गुरु नानक कहते हैं कि तुम भलीभाँति समझ लो कि जहाँ से उपजे हो, अन्ततः वहीं लीन भी होना है ।। ११ ।। सन्तजन पुकारकर कहते हैं कि प्रत्येक शरीर में स्वयं हरि बसते हैं । गुरु नानक कहते हैं कि उसी हरि का भजन करो, संसार-सागर से पार उतर जाओगे ।। १२ ।। (जिस जीव को) सुख-दुःख

स्पर्श नहीं करते (विचलित नहीं करते), जिसे लोभ, मोह, अभिमान कुछ भी नहीं; गुरु नानक कहते हैं कि ऐ मन, सुनो ! वह जीव तो साक्षात् भगवान् का मूर्त्त रूप है ।। १३ ।। जो स्तुति-निन्दा में रुचि नहीं रखता, जिसके लिए लोहा और सोना बराबर हैं; गुरु नानक कहते हैं कि ऐ मन, सुनो, उसी से मुक्ति की प्राप्ति सम्भव मानो । (वही मुक्तात्मा है, वही दूसरों को मुक्ति दिलाने में समर्थ है ।) ।। १४ ।। जिसे कोई हर्ष-शोक विचलित नहीं करता, जिसके लिए वैरी और मित्र एक समान हैं; गुरु नानक मन को सम्बोधित करते हुए कहते हैं कि उसी से मुक्ति मिल सकती है ।। १५ ।। जो किसी को भय नहीं देता (डराता नहीं) और न ही अन्य किसी का भय मानता है; गुरु नानक कहते हैं कि ऐ मन, सुनो ! उसी को ज्ञानी कहो (निर्भय और निर्वैर व्यक्ति ही ज्ञानी होता है) ।। १६ ।। जिसने सब विषय-विकारों का त्याग कर दिया है और त्याग-भावना धारण कर ली है; गुरु नानक कहते हैं कि ऐ मन, सुनो ! उस मनुष्य के मस्तक में समुज्ज्वल भाग्य मानो ।। १७ ।।

जिहि माइआ ममता तजी सभ ते भइओ उदासु । कहु नानक सुन रे मना तिहि घटि ब्रहम निवासु ।। १८ ।। जिहि प्रानी हउमै तजी करता राम पछान । कहु नानक वहु मुकति नरु इह मन साची मान ।। १९ ।। भै नासन दुरमति हरन कलि मै हरि को नाम । निस दिन जो नानक भजै सफल होहि तिह काम ।। २० ।। जिहबा गुन गोबिंद भजहु करन सुनहु हरि नाम । कहु नानक सुन रे मना परहि न जम कै धाम ।।२१।। जो प्रानी ममता तजै लोभ मोह अहंकार । कहु नानक आपन तरै अउरन लेत उधार ।। २२ ।। जिउ सुपना अरु पेखना ऐसे जग कउ जानि । इन मै कछु साचो नही नानक बिनु भगवान ।। २३ ।। निस दिन माइआ कारने प्रानी डोलत नीत । कोटन मै नानक कोऊ नाराइन जिह चीत ।। २४ ।। जैसे जल ते बुदबुदा उपजै बिनसै नीत । जग रचना तैसे रची कहु नानक सुन मीत ।। २५ ।।

जिस जीव ने माया-ममता त्याग दी है, सब ओर से विरत हो गया है, गुरु नानक कहते हैं कि ऐ मन, उसके भीतर परब्रह्म निवास करता है ।। १८ ।। जिस प्राणी ने अभिमान त्यागकर सृजनहार हरि को पहचान लिया है, गुरु नानक-कथन है कि वह मनुष्य मुक्त है । ऐ मन, यह बात सच्ची करके मानो (अर्थात् इसे स्वीकार करो) ।। १९ ।। कलियुग में

हरि का नाम भय को नाश करनेवाला एवं दुर्मति को दूर करनेवाला है। गुरु नानक-कथन है कि जो उस नाम को रात-दिन भजता है, उसके सब काम सफल हो जाते हैं ॥ २० ॥ जिह्वा से परमात्मा के गुण गाओ, कानों से हरिनाम सुनो। गुरु नानक कहते हैं कि ऐ मन, सुनो (ऐसा करने से) यम के स्थान पर नहीं पड़ोगे, अर्थात् नरक नहीं जाओगे ॥२१॥ जो प्राणी लोभ, मोह, ममता और अभिमान का त्याग करता है, गुरु नानक कहते हैं कि वह स्वयं तो मुक्त होता ही है, अन्यों का भी उद्धार करता है ॥ २२ ॥ जैसे स्वप्न या तमाशा होता है, इस संसार को भी ऐसा ही जानो। गुरु नानक कहते हैं कि प्रभु को सिवा इसमें और कुछ भी सत्य नहीं है ॥ २३ ॥ माया के कारण रात-दिन नित्यप्रति प्राणी डोलता रहता है। गुरु नानक-मत है कि करोड़ों में कोई विरला ही ऐसा होता है, जिसके हृदय में परमात्मा बसता है ॥ २४ ॥ जैसे पानी के गिरने से नित्य बुलबुले उपजते और नष्ट होते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि ऐ मित्र, सुनो! इस संसार की रचना वैसी ही हुई है (वह भी पानी के बुलबुले की तरह बनता-टूटता रहता है) ॥ २५ ॥

प्रानी कछू न चेतई मदि माइआ कै अंध। कहु नानक बिनु हरि भजन परत ताहि जम फंध ॥ २६ ॥ जउ सुख कउ चाहै सदा सरनि राम की लेह। कहु नानक सुन रे मना दुरलभ मानुख देह ॥ २७ ॥ माइआ कारनि धावही मूरख लोग अजान। कहु नानक बिनु हरि भजनि बिरथा जनमु सिरान ॥ २८ ॥ जो प्रानी निसि दिनि भजै रूप राम तिह जानु। हरि जनि हरि अंतरु नही नानक साची मानु ॥ २९ ॥ मनु माइआ मै फधि रहिओ बिसरिओ गोबिंद नाम। कहु नानक बिनु हरि भजन जीवन कउने काम ॥ ३० ॥ प्रानी राम न चेतई मद माइआ कै अंध। कहु नानक हरि भजन बिनु परत ताहि जम फंध ॥ ३१ ॥ सुख मै बहु संगी भए दुख मै संगि न कोइ। कहु नानक हरि भजु मना अंति सहाई होइ ॥ ३२ ॥ जनम जनम भरमत फिरिओ मिटिओ न जम को त्रासु। कहु नानक हरि भजु मना निरभै पावहि बासु ॥ ३३ ॥

हे प्राणी, तुम माया के अन्धे मद के कारण कुछ भी होश नहीं करते। गुरु नानक-कथन है कि हरि-भजन के बिना तुम्हें यमदूतों के फन्दे में पड़ना होगा। (अर्थात् जो माया-मद से नहीं उबरता, वह यमदूतों के दण्ड का अधिकारी होता है।) ॥ २६ ॥ यदि पूर्ण सुख चाहते हो, तो प्रभु की शरण लो। गुरु नानक कहते हैं कि ऐ मन, सुनो! यह मनुष्य-शरीर

दुर्लभ है (इसी में प्रभु-भजन की सम्भावना है) ॥ २७ ॥ मूर्ख, अज्ञानी लोग माया के पीछे दौड़ते हैं। गुरु नानक कहते हैं कि हरि-भजन के बिना उनका समूचा मनुष्य-जन्म ही निरर्थक बीतता है ॥ २८ ॥ जो प्राणी रात-दिन परमात्मा का भजन करता है, उसे राम का ही मूर्त्त-रूप समझो। गुरु नानक कहते हैं कि हरि तथा हरि के सेवकों में कोई अन्तर नहीं होता, यह बात सच्ची मानो ॥ २९ ॥ मन माया के बन्धनों में फँसा है, हरिनाम विस्मृत हुआ पड़ा है। गुरु नानक पूछते हैं कि हरिनाम-भजन के बिना ऐसा जीवन किस काम का है? ॥ ३० ॥ हे प्राणी, तुम माया-मद के कारण रामनाम का स्मरण नहीं करते; गुरु नानक कहते हैं कि हरि-भजन के बिना ऐसे प्राणी को यम का फंदा लगता है ॥ ३१ ॥ सुख में अनेक साथी-संगी बन जाते हैं, दुःख में कोई साथ नहीं देता। गुरु नानक कहते हैं कि ऐ मन! हरि-भजन करो, वही अन्त में तुम्हारा सहायक होगा ॥ ३२ ॥ जीव जन्म-जन्म से भ्रम में पड़ा है, किन्तु उसको यमों का भय दूर नहीं हुआ। गुरु नानक कथन है कि ऐ मन, तुम हरि-भजन करो, पूर्णतः निर्भय हो जाओगे ॥ ३३ ॥

जतन बहुतु मै करि रहिओ मिटिओ न मन को मानु। दुरमति सिउ नानक फधिओ राखि लेहु भगवान ॥ ३४ ॥ बाल जुआनी अरु बिरध फुनि तीनि अवसथा जानि। कहु नानक हरि भजन बिनु बिरथा सभ ही मान ॥ ३५ ॥ करणो हुतो सु ना कीओ परिओ लोभ कै फंध। नानक समिओ रमि गइओ अब किउ रोवत अंध ॥३६॥ मनु माइआ मै रमि रहिओ निकसत नाहिन मीत। नानक मूरति चित्र जिउ छाडित नाहनि भीत ॥ ३७ ॥ नर चाहत कछु अउर अउरै की अउरै भई। चितवत रहिओ ठगउर नानक फासी गलि परी ॥ ३८ ॥ जतन बहुत सुख के कीए दुख को कीओ न कोइ। कहु नानक सुन रे मना हरि भावै सो होइ ॥ ३९ ॥ जगतु भिखारी फिरतु है सभ को दाता राम। कहु नानक मन सिमरु तिह पूरन होवहि काम ॥ ४० ॥ झूठै मानु कहा करै जगु सुपने जिउ जान। इन मै कछु तेरो नही नानक कहिओ बखान ॥ ४१ ॥

मैंने बहुत यत्न किए हैं, किन्तु मन का अभिमान दूर नहीं हुआ; नानक कहते हैं कि जीव दुर्मति से बँधा है, हे भगवान्, उसकी रक्षा करो ॥ ३४ ॥ बचपन, यौवन और फिर बुढ़ापा, ये तीन अवस्थाएँ जानो, (किन्तु) गुरु नानक कहते हैं कि हरि-भजन के बिना ये तीनों व्यर्थ हैं ॥ ३५ ॥ (ऐ जीव) तुम्हें जो करना चाहिए था, वह तुमने लोभ

के फन्दे में पड़ने के कारण नहीं किया। गुरु नानक कहते हैं कि अवसर बीत गया, (ऐ अन्धे जीव) अब क्यों रोते हो ? ॥ ३६ ॥ ऐ मित्र, तुम्हारा मन मायावी बातों में रमा है, निकलता ही नहीं। गुरु नानक कहते हैं कि (तुम्हारी स्थिति ऐसी है) जैसे चित्र-लिखी मूर्ति दीवार को नहीं छोड़ती (अर्थात् जैसे मूर्ति दीवार नहीं छोड़ पाती, वैसे ही तुम भी माया को नहीं छोड़ पाते) ॥ ३७ ॥ मनुष्य कुछ चाहता है, हो कुछ और का और जाता है; दूसरों को ठगने की योजनाएँ बनाते-बनाते, गुरु नानक कहते हैं, अपने ही गले में फन्दा पड़ जाता है ॥ ३८ ॥ मनुष्य सुख प्राप्त करने के बहुत यत्न करता है, दुःख पाने की आशंका वाली भी कोई बात वह नहीं करता। (किन्तु) गुरु नानक कहते हैं कि ऐ मन, सुनो ! होता वही है, जो परमात्मा को स्वीकार होता है ॥ ३९ ॥ सारा संसार भिक्षुक है और सबका दाता राम है। गुरु नानक कहते हैं कि नित्य मन में उसी का स्मरण करो, सब कार्य पूर्ण हो जायँगे ॥ ४० ॥ झूठा अभिमान क्यों करते हो, इस संसार को सपना-मात्र समझो। इस संसार में तुम्हारा कुछ भी नहीं, गुरु नानक का ऐसा कथन है ॥ ४१ ॥

गरबु करतु है देह को बिनसै छिन मै मीति। जिहि प्रानी हरि जसु कहिओ नानक तिहि जगु जीति ॥ ४२ ॥ जिह घटि सिमरनु राम को सो नरु मुकता जानु। तिहि नर हरि अंतरु नही नानक साची मानु ॥ ४३ ॥ एक भगति भगवान जिह प्रानी कै नाहि मन। जैसे सूकरु सुआन नानक मानो ताहि तन ॥ ४४ ॥ सुआमी को ग्रिहु जिउ सदा सुआन तजत नही नित। नानक इह बिधि हरि भजउ इक मनि हुइ इकि चित ॥ ४५ ॥ तीरथ बरत अरु दान करि मन मै धरै गुमानु। नानक निहफल जात तिहि जिउ कुंचर इसनानु ॥ ४६ ॥ सिरु कंपिओ पग डगमगै नैन जोति ते हीन। कहु नानक इह बिधि भई तऊ न हरि रस लीन ॥ ४७ ॥ निज करि देखिओ जगतु मै को काहू को नाहि। नानक थिरु हरि भगति है तिह राखो मन माहि ॥ ४८ ॥ जग रचना सभ झूठु है जानि लेहु रे मीत। कहि नानक थिरु ना रहै जिउ बालू की भीत ॥ ४९ ॥

ऐ मित्र, शरीर का क्या गुमान करते हो, यह तो क्षण-भर में ही विनष्ट हो जायगी। गुरु नानक कहते हैं कि जिस प्राणी ने प्रभु का यशोगान किया है, (समझो कि) उसने जगत को जीत लिया है ॥ ४२ ॥ जिसके अन्तर्मन में प्रभु राम का स्मरण होता है, उस मनुष्य को मुक्त समझो। गुरु नानक कहते हैं, सच मानो कि ऐसे मनुष्य तथा स्वयं हरि

में कोई अन्तर नहीं होता ।। ४३ ।। जिस प्राणी के मन में एक भगवान् की भक्ति नहीं है, गुरु नानक-मतानुसार उस व्यक्ति का शरीर कुत्ते और सूअर के समान है ।। ४४ ।। जैसे कुत्ता स्वामी का द्वार कभी नहीं छोड़ता, गुरु नानक-मतानुसार, वैसे ही मनुष्य को भी एक-मन, दत्त-चित्त होकर हरि का भजन करना चाहिए ।। ४५ ।। तीर्थ, व्रत और दानादि करके जो जीव मन में अभिमान धारण करता है; गुरु नानक कहते हैं कि (उसके वे धर्म-कर्म) उसके लिए वह सब ऐसे ही निष्फल रहते हैं, जैसे हाथी द्वारा किया स्नान ! (हाथी स्नान करने के बाद धूल-मिट्टी उड़ाकर अपने शरीर पर डाल लेता है) ।। ४६ ।। (वृद्धावस्था में) मनुष्य का सिर काँपने लगता है, पाँव डगमगाते हैं, नयनों में ज्योति नहीं रह जाती । गुरु नानक कहते हैं कि यह अवस्था आ गई, तो भी (मनुष्य ने) हरि-रस का पान नहीं किया । (अर्थात् बुढ़ापा आ गया, किन्तु मनुष्य फिर भी भजन नहीं करता ।) ।। ४७ ।। मैंने संसार को अपना बनाकर भी देखा, किन्तु कोई किसी का नहीं (ऐसा परिणाम प्रतीत हुआ) । गुरु नानक कहते हैं कि एकमात्र हरि-भक्ति स्थिर है, उसी को हृदय में धारण किए रहो ।। ४८ ।। ऐ मित्र, भलीभाँति समझ लो कि संसार की रचना मिथ्या है, नानक-मतानुसार यह बालू की दीवार की नाईं कभी स्थिर नहीं रह सकती ।। ४९ ।।

राम गइओ रावनु गइओ जा कउ बहु परवार । कहु नानक थिरु कछु नही सुपने जिउ संसारि ।। ५० ।। चिंता ताकी कीजीऐ जो अनहोनी होइ । इहु मारगु संसार को नानक थिरु नही कोइ ।। ५१ ।। जो उपजिओ सो बिनसिहै परो आजु कै काल । नानक हरि गुन गाइ ले छाडि सगल जंजाल ।। ५२ ।। ।। दोहरा ।। बलु छुटकिओ बंधन परे कछू न होत उपाइ । कहु नानक अब ओट हरि गज जिउ होहु सहाइ ।। ५३ ।। बलु होआ बंधन छुटे सभु किछु होत उपाइ । नानक सभु किछु तुमरै हाथ मै तुम ही होत सहाइ ।। ५४ ।। संग सखा सभि तजि गए कोउ न निबहिओ साथ । कहु नानक इह बिपत मै टेक एक रघनाथ ।।५५।। नामु रहिओ साधू रहिओ रहिओ गुरु गोबिंद । कहु नानक इह जगत मै किन जपिओ गुरमंतु ।। ५६ ।। राम नामु उरि मै गहिओ जाकै सम नही कोइ । जिह सिमरत संकट मिटै दरसु तुहारो होइ ।। ५७ ।। १ ।।

राम भी चल बसे, रावण भी मृत्यु को प्राप्त हुआ, इनके बड़े-बड़े परिवार थे । (इसी प्रकार) गुरु नानक-मतानुसार इस संसार में कुछ भी

स्थायी नहीं, यह तो स्वप्नवत् संसार है ।। ५० ।। चिन्ता उस बात की होनी चाहिए, जो अनहोनी है (अर्थात् होता तो सब होनहार है, फिर चिन्ता क्यों हो ?); गुरु नानक कहते हैं कि यह संसार-पथ ऐसा ही है, इस पर कोई स्थिर नहीं रह पाया ।। ५१ ।। (इस संसार में) जो पैदा हुआ है, वह नाश को प्राप्त होता है; वह आज या कल गिरने ही वाला है अर्थात् नश्वर है । अतः गुरु नानक कहते हैं कि समस्त सांसारिक जंजाल को त्यागकर एकाग्र भाव से हरि-गुणगान कर लो ।। ५२ ।। दोहरा ।। बल छूट गया है, बंधन पड़े हैं, अब कोई उपाय कारगर नहीं हो रहा है । गुरु नानक कहते हैं कि अब केवल हरि का ही सहारा है, जो गज को ग्राह से संरक्षण देने के लिए आए थे (मुझे भी वही बचा सकेंगे) । (कहते हैं कि यह दोहा गुरु तेग़बहादुर ने मुग़ल-क़ैद में से गुरु गोविंद के पास भेजा था । इसमें निराशा का स्वर ध्वनित है, किन्तु हमारा मत है कि कवि ने इस दोहे में तत्कालीन स्थिति का चित्र प्रस्तुत किया है और साथ वाले अगले दोहे में स्वयं ही [जिसे लोग दशमेश का दोहा मानते हैं] प्रभु की शक्ति में विश्वास जगाते हुए निर्बलता को निकाल फेंकने का संदेश दिया है) ।। ५३ ।। बल भी मिल जाता है, बंधन छूट जाते हैं, सब प्रकार की निराशा में भी उपाय दीख पड़ते हैं । गुरु नानक-कथन है कि हे प्रभु, सब कुछ तुम्हारे हाथ है, तुम्हीं सबके सहायक हो (कोई विपरीत परिस्थिति तुम्हारे संरक्षण के विरुद्ध किसी का कुछ नहीं बिगाड़ सकती) ।। ५४ ।। संगी-साथी तो बीच में ही छोड़ जाते हैं, कोई साथ नहीं निभाता । गुरु नानक कहते हैं कि विपत्तियों में एकमात्र प्रभु राम का ही सहारा होता है ।। ५५ ।। न नाम जपते हैं, न सत्संगति करते हैं, गुरु और प्रभु का नाम भी रह गया है; गुरु नानक का कथन है कि कोई विरला ही गुरु-मन्त्र जपता है (शेष सबके लिए तो उक्त तत्त्व रह गए अर्थात् व्यर्थ हैं) ।। ५६ ।। (मैंने) रामनाम को हृदय में धारण किया है, जिसके समान (रामनाम के समान) जगत में कुछ नहीं अर्थात् (मैंने) अद्वितीय राम-नाम को हृदय में धारण किया है । इसके (रामनाम के) स्मरण से सब संकट मिटते तथा प्रभु के दर्शन होते हैं ।। ५७ ।। १ ।।

मुंदावणी* महला ५

थाल विचि तिनि वसतू पईओ सतु संतोखु वीचारो । अंम्रित नामु ठाकुर का पइओ जिस का सभसु अधारो । जे को

* "मुंदावणी" समाप्ति को कहते हैं । यह पद एक पहेली जैसा है । एक थाल है, उसमें सत्य, सन्तोष और विवेक नाम की तीन वस्तुएँ हैं........आदि । बताओ वह थाल कौन-सा है ?

खावै जे को भुंचै तिस का होइ उधारो। एह वसतु तजी नह जाई नित नित रखु उरिधारो। तम संसारु चरन लगि तरीऐ सभु नानक ब्रहम पसारो ॥१॥ सलोक महला ५ ॥ तेरा कीता जातो नाही मैनो जोगु कीतोई। मै निरगुणिआरे को गुणु नाही आपे तरसु पइओई। तरसु पइआ मिहरामति होई सतिगुरु सजणु मिलिआ। नानक नामु मिलै तां जीवां तनु मनु थीवै हरिआ ॥ १ ॥

एक थाल में सत्य, सन्तोष और ज्ञान नाम की तीन वस्तुएँ पड़ी हैं। (उन सबको मिलाकर भोजन बनाने के लिए पानी की जगह) अमृत-समान हरिनाम डाला गया है, जिसका सबको आसरा होता है। (जैसे जल बिना जीवन नहीं रहता, हरिनाम के बिना भी आध्यात्मिक जीवन नहीं होता।) (इस प्रकार तैयार किए गए भोजन को) यदि कोई खाता है, भोगता है, तो उसकी गति हो जाती है, उद्धार होता है। (अन्य भोजनों के बिना गुज़र चल सकती है, किन्तु) यह भोजन (वस्तु) छोड़ा नहीं जा सकता, नित्य हृदय में इसको धारण किया जाता है (सदैव इसी का भोजन किया जाता है)। इस अंधकारमय संसार को, हे प्रभु, तुम्हारे ही चरणों से लगकर तरा जा सकता है (उक्त भोजन के भोग से ही मुक्ति होती है), गुरु नानक कहते हैं, तब सब ओर ब्रह्म का आलोक प्रकट होता है। (यह भोजन जिस थाल में बना है, वह कौन सा थाल है? उत्तर है—गुरुवाणी का यह ग्रंथ, जिसे पढ़ने और मनन करने से सत्य, सन्तोष, ज्ञान और नामामृत प्राप्त होता है।) ॥१॥ सलोक महला ५ ॥ तुम्हारा किया पता नहीं चलता, (किन्तु) मुझे तुम्हीं ने सामर्थ्य दिया है, मैं तुम्हारी ही शक्ति से कुछ कर सका हूँ (ग्रंथ-रचना की है)। मुझ निर्गुणी (गुण-हीन) में कोई गुण नहीं, तुमने स्वयं तरस खाकर, दया-वश (मुझसे करवा लिया है)। तुम्हारी दया हुई, अत्यन्त कृपा से मुझे सच्चा गुरु मिल गया। गुरु नानक कहते हैं कि हरिनाम में ही मेरे प्राण हैं, उसी से मेरा तन-मन हरा हो जाता है (मुझमें कोई कर्तृ-शक्ति पैदा होती है) ॥ १ ॥

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ राग माला* ॥ राग एक संगि पंच बरंगन। संगि अलापहि आठउ नंदन। प्रथम राग भैरउ

* "रागमाला" के लेखक के सम्बन्ध में अनेक मत हैं। ग्रंथ-समाप्ति के बाद की यह रचना केवल रागों की कथा कहती है। सम्पूर्ण वाणी रागों में लिखी गई थी, इसलिए 'रागमाला' में रागों का ब्यौरा समझाने की खातिर यहाँ इसे जोड़ने की सहमति दी गई प्रतीत होती है।

वै करही। पंच रागनी संगि उचरही। प्रथम भैरवी बिलावली। पुनिआ की गावहि बंगली। पुनि असलेखी की भई बारी। ए भैरउ की पाचउ नारी। पंचम हरख दिसाख सुनावहि। बंगालम मधु माधव गावहि ॥ १ ॥ ललत बिलावल गावही अपुनी अपुनी भांति। असट पुत्र भैरव के गावहि गाइन पात्र ॥ १ ॥ दुतीआ मालकउसक आलापहि। संगि रागिनी पाचउ थापहि। गोंडकरी अरु देव गंधारी। गंधारी सी हुती उचारी। धनासरी ए पाचउ गाई। माल राग कउसक संग लाई। मारू मसतअंग मेवारा। प्रबल चंड कउसक उभारा। खउ खट अउ भउरानद गाए। असट माल कउसक संग लाए ॥ १ ॥ पुनि आइअउ हिंडोलु पंच नारि संगि असट सुत। उठहि तान कलोल गाइन तार मिलावही ॥ १ ॥ तेलंगी देवकरी आई। बसंती संदूर सुहाई। सरस अहीरी लै भारजा। संग लाई पांचउ आरजा। सुरमानंद भासकर आए। चंद्र बिब मंगलन सुहाए। सरसबान अउ आहि बिनोदा। गावहि सरस बसंत कमोदा। असट पुत्र मैं कहे सवारी। पुनि आई दीपक की बारी ॥ १ ॥ कछेली पटमंजरी टोडी कही अलापि। कामोदी अउ गूजरी संग दीपक के थापि ॥ १ ॥ कालंका कुंतल अउ रामा। कमल कुसम चंपक के नामा। गउरा अउ कानरा कल्याना। असट पुत्र दीपक के जाना ॥ १ ॥ सभ मिलि सिरी राग वै गावहि। पांचउ संग बरंगन लावहि। बैरारी करनाटी धरी। गवरी गावहि आसावरी। तिह पाछै सिंधवी अलापी। सिरी राग सिउ पांचउ थापी ॥ १ ॥ सालू सारग सागरा अउर गोंड गंभीर। असट पुत्र स्री राग के गुंड कुंभ हमीर ॥ १ ॥ खसटम मेघ राग वै गावहि। पांचउ संगि बरंगन लावहि। सोरठि गोंड मलारी धुनी। पुनि गावहि आसा गुन गुनी। ऊचै सुरि सूहउ पुनि कीनी। मेघ राग सिउ पाचउ चीनी ॥ १ ॥ बैराधर गजधर केदारा। जबली धर नट अउ जलधारा। पुनि गावहि संकर अउ सिआमा। मेघ राग पुत्रन के नामा ॥ १ ॥ खसट राग उनि गाए संगि रागनी तीस। सभै पुत्र रागंन के अठारह दस बीस ॥ १ ॥ १ ॥

एक राग है, उसकी पाँच स्त्रियाँ (रागिनियां) साथ-साथ रहती हैं (मूलतः राग एक ही है, उसके सुर अलग हैं), उन्हीं के साथ राग के आठ पुत्र हैं। पहला राग भैरउ है। इसके साथ पाँच रागिनियाँ के स्वर हैं। ये भैरवी, बिलावली, पुंनिआकी, बंगली और असलेखी हैं। ये पाँचों रागिनियाँ क्रमवार गाई जाती हैं और पाँचों भैरउ राग की पत्नियाँ हैं। (उसके आठ पुत्र) पंचम, हर्ष, विषाद, बंगालम, मधु, माधव, ललित तथा विलावल आदि अपने-अपने ढंग से गाए जाते हैं। भैरउ के इन आठ पुत्रों को रागी लोग गाते हैं ॥ १ ॥ दूसरा राग मालकउस (मालकौस) नाम से अलापा जाता है। इसके साथ भी पाँच रागिनियाँ मौजूद हैं। गोंडकी, देवगांधारी, गंधारी, सीहुती, धनासरी, ये पाँचों गाई जाती हैं। राग कौशक के साथ ये रागिनियाँ माल (क्रम) लगाती हैं। मारू, मस्त, अंगमेवार, प्रबलचंड, कौशक, उभारा, खउखट, भौरानद गाए जाते हैं। ये आठों मालकौस के साथ लगे हैं ॥ १ ॥ पुनः राग हिण्डोल अपनी पाँचों रागिनियों एवं आठ पुत्रों-सहित आता है। इसमें तार-यन्त्र को मिलाकर तान उठाई जाती है ॥ १ ॥ इसकी रागिनियाँ तेलंगी, देवकरी, बसंती, संदूरी, अहीरी हैं। ये पाँचों नित्य हिण्डोल के साथ रहती हैं। इनके पुत्र सुरमानन्द, भास्कर, चन्द्रबिंब, मंगलन, सरसबान, बिनोद, बसंत और कमोद हैं। ये आठों पुत्र हिंडोल राग में सँवारे जाते हैं। इसके बाद दीपक राग का नाम है ॥ १ ॥ कछेली, पटमंजरी, टोड़ी, कामोदी, गूजरी, ये पाँचों दीपक राग के संग स्थापित रागिनियाँ हैं ॥ १ ॥ कालंका, कुन्तल, रामा, कमलकुसुम, चंपक, गौरा, कानड़ा, कलिआन (कल्याण) —ये आठों दीपक राग के पुत्र हैं ॥ १ ॥ सिरी राग सब मिलकर गाते हैं। इसके संग भी पाँच स्त्रियाँ हैं— बैरागी, करनाटी, गवरी, आसावरी तथा सिंधवी। ये पाँचों सिरी राग के संग स्थापित हैं ॥ १ ॥ सालू, सारंग, सागरा, गौंड, गंभीर गुंड, कुंभ, हमीर, ये आठों सिरी राग के पुत्र हैं ॥ १ ॥ छठवाँ राग मेघ नाम से गाया जाता है। इसके साथ भी पाँच रागिनियाँ हैं— सोरठी, गोंड, मलारी, आसा, सूही। ये पाँचों मेघ राग के संग अलापी जाती हैं ॥१॥ बैराधर, गजधर, केदारा, जबलीधर, नट, जलधारा, संकर, सियामा —ये आठों मेघ राग के पुत्रों के नाम हैं ॥१॥ इस प्रकार (संगीतकारों ने) छः राग गाए गए, उनकी तीस रागिनियों के साथ उन्हें गाया गया। सब रागों के कुल पुत्र अड़तालीस हैं (अठारह+दस+वीस= अड़तालीस) ॥ १ ॥ १ ॥